

080311



080311

८५०

आयुर्वेदीय मानसांकके सम्बन्धमें विद्वानोंकी

कुछ सम्मतियाँ

महोदय,

आपका भेजा हुआ मानसांक विशेषांक मिला। एतदर्थ धन्यवाद। आयुर्वेदमें यत्रतत्र विद्विप्त मानस रोग सम्बन्धी बचनोंको एकत्रित कर वैद्य संसारका बहुत बड़ा उपकार किया है। श्री स्वामीजी महाराजके लगाये हुए पौधाको पुष्पित एवं फलान्वित देखकर चित्त अतीव प्रसन्न होता है। आप जैसे योग्य विद्वानों द्वारा कृत प्रयास इस पौधेको अधिक विकसित करता है। अशांति भविष्यमें आप इसी प्रकार अन्य विशेषांक निकालकर जनता एवं वैद्य संसारको लाभान्वित करते रहें। मेरी शुभकामना स्वीकार करें।

वैद्य मणिराम शर्मा

संस्थापक-श्री धन्वन्तरि मन्दिर

श्वासरोग चिकित्सा केन्द्र रतनगढ़ (राजस्थान)

‘स्वास्थ्य’ का विशेषांक “मानसांक” यथा समय प्राप्त हुआ और आद्योपान्त अवलोकन कर हार्दिक प्रसन्नता हुई। इस विशेषांककी उपादेयता, सुन्दरता, अपने विषयमें पूर्णता अभिनन्दनीय एवं प्रशंसनीय है। इसमें मानस जैसे जटिल विषयका बड़े सुन्दर और सरल ढंगसे विवेचन किया गया है। अतः यह अंक वैद्य बन्धुओं और विशेषतः मानस विषयका अध्ययन करने वाले छात्रोंके लिए अतीव उपयोगी है। सब दृष्टियोंसे सर्वाङ्गसुन्दर इस प्रकारके विशेषांकके लिए सम्पादक और प्रकाशक दोनों निश्चय ही बधाई के पात्र हैं।

भवदीय-

आचार्य पं० ओङ्कारनाथ शास्त्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सरदारशहर (राजस्थान)

महोदय,

आपके द्वारा प्रेषित स्वास्थ्य पत्रका आयुर्वेदीय मानसांक प्राप्त हुआ। वास्तवमें आपका विषय वस्तु निर्वाचन एवं सम्पादन एक स्तुत्य प्रयास है। मानस रोगपर न केवल गवेषणा पूर्ण निबन्ध ही लिखे गये हैं अपितु यथा स्थान आयुर्वेदीय औषधियोंके नाम एवं निर्माण विधि प्रस्तुत कर सामान्य पाठकोंके हृदयके आयुर्वेदीय विज्ञानकी ओर आकर्षित होनेकी पर्याप्त सामग्री मिल जाती है। विशेषतः मन रहस्य कार्य दवायें, जागृत स्वप्न सुषुप्ति मनकी स्थिति आदि निबन्ध अत्यन्त ही उपयोगी प्रतीते हुए और इन सब ऊपर विविध लेखकोंके रूपमें प्रकाशित आपका विशाल दर्शनमय उत्साह है जिसने प्रतिकाको समृद्ध बनाने कोई कसर उठा नहीं रखी है। आपके इस असीम उत्साहसे निर्वाध रूपसे पत्रका सम्पादन होता रहेगा ऐसी अदृढ़ आस्थाके साथ। आपका

वैद्य सोहनलाल

प्रिसिपल-आयुर्वेद विश्व भारती
(सरदारशहर राजस्थान)

सम्माननीय श्री सम्पादक महोदय

आपका मानस रोगांक आद्योपान्त पढ़ा विशेषांक वस्तुतः उत्तम है। कहीं कहीं छपाईकी अशुद्धियें अवश्य रह गई हैं। किन्तु विषयकी उत्तमता देख लिये वे नगण्य हैं। आप द्वारा लिखित विषय भी ध्यान से पढ़े। आपकी योग्यता दार्शनिक दृष्ट्या हमें प्रशंसनीय प्रतीत हुई।

विनीत—

लक्ष्मीस्वरूप शुक्ल

श्री धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अ. ग.)

मुझे मानसांक मिला और उलट-पुलट कर देखा
मानसांक बहुत सुन्दर निकाला गया इस अंकमें गंभीर
अध्ययन अधिक श्रम और आयुर्वेदके प्रति अटूट निष्ठा
के दर्शन हो रहे थे ।

आपको और संस्थाको साधुवाद एवं बधाई ।

आपका
भवानीशंकर वैद्य
नीमकुंज - उदयपुर

आप द्वारा संपादित स्वास्थ्यका आयुर्वेदीय मान-
सांक प्राप्त हुआ । लेखोंका चयन अच्छा है । बधाई ।

आपका
डा० अम्बालाल जोशी
जोधपुर

श्री कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवनव्यवस्थापकान्तिके
सादरमावेद्यते यच्छ्रीमत्प्रहितं स्वास्थ्यदर्शकं मननीय-
आयुर्वेदीय मानसांक विशेषांकम् । तमवलोक-
मानस्य मम चेतोऽतीव प्रसीदति उत्तराम् । भारतीय
वक्तृत्वा विज्ञानस्य वा, आयुर्वेदीय दर्शनशास्त्रस्य
सारभूतमंशं नवीनया सरलया च सरण्या जनतायाः
पुरस्तादुपस्थापयितं । सोऽऽयं यत्नः श्रीस्वामी कृष्णानन्द
महाराजस्य प्रमोद भरसम्भृतहृदा समभिनन्द्यतेऽति-
गरामेव ।

स्वास्थ्यस्योपयोगिता सर्वत्रैव दृश्यते । अतएवोक्तं
महाकविना कालिदासेन—

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् ।

अतो यथा विद्याध्ययनादिकमावश्यकम्, तथैव
स्वास्थ्यरक्षाऽपि संसारे अतीववश्यकं विद्यते ।

सर्वैश्वर्यसमन्विताः, धनधान्यपरिपूर्णा अपि जनाः
स्वास्थ्यस्याभावे स्वकीयस्यैश्वर्यस्य सुखं नानुभवितुं
शक्नुवन्ति । अतः सर्वैरपि स्वास्थ्य लाभाय नीरोग-
तायै च स्वास्थ्य दर्शकमिदं कृष्णगोपाल आयुर्वेद
भवनस्य मासिकपत्रं विशेषांकमवश्यं अवलोकनीयम् ।

अहमेतस्य मानसांकस्य सर्वात्तमस्या तुमोदनं
समर्थनं च करोमि । कृष्णगोपाल आयुर्वेद भव-
नस्याऽयं प्रयत्नस्समेधतां, स चैतद्विशेषांकस्याग्रिमान्
भागानि स्वमेव चारु समाकलयन्ति ।

भवतां शुभचिन्तकः श्री सीतारामदास शास्त्री
एस० बी० । महन्त श्री चतुर्भुज नारायण मन्दिर
अध्यक्ष—जिला आयुर्वेद सभा टोंक
दि० ८-१२-१९६४ई० (राजस्थान)

स्वास्थ्यका विशेषांक मानसांक जनसाधारण व
वैद्य समाजके ध्यानको आकर्षित करते हुये कालेड़ा
कृष्णगोपालकी आयुर्वेदीय प्रतिष्ठान द्वारा प्रकाशित
होने वाले "स्वास्थ्य" मासिकके बारहवें वर्षका चतुर्थ
अंक "मानसांक" विशेषांक हमारे सामने है । इस अंक
में लेखोंका जो चयन किया गया है तथा पत्रका संपा-
दन संपादक महोदयने जिस मनो योगसे किया है
वह स्तुत्य है ।

युग धर्मानुसार रोगोंमें अदला बदली होती रहती
है । हेतु सन्दर्भके कारण कभी शारीरिक रोगोंका कभी
मानसिक रोगोंका प्राचल्य होता रहता है । शारीरिक
रोगोंकी अपेक्षा मानसिक रोग दुर्लभ होते हैं । शरीर
तथा मनका नित्य सम्बन्ध है । हमारे रहन सहन
खानपान व मनो भावोंके कारण सावधानी न रखनेसे
कैसे कैसे मानसिक रोग हो सकते हैं । उन मानस
रोगोंके लाक्षणिक रूप क्या हैं ? तथा उनके निवारण
का क्या उपाय करने चाहिये । ये सभी विषय इस
अंकमें प्रस्तुत किये गये हैं ।

आध्यात्मिक व दार्शनिक क्षेत्रमें मनका बहुत
विशद विवेचन है । सहर्षि आत्रेयने भी दार्शनिक
भावनासे मनका चरकमें पर्याप्त विवेचन किया है ।

स्वास्थ्यके इस विशेषांकमें मनपर पर्याप्त विस्तार
से विचार किया गया है । कई लेख विषयकी गंभीरता
को देखते हुये अतीव उपादेय है । संपादक ने अतीव
प्रयास किया है कि यह अंक पाठकोंको इस विषयका
अच्छा ज्ञान करा सके । इस प्रयासमें संपादक सहो-
दयने अच्छी सफलता प्राप्त की है । पाठक गण इस
अंकको पढ़कर मन तथा तत् सम्बन्धी रोग व उपचार
की पर्याप्त जानकारी कर सकेंगे । प्रतिष्ठानके कार्य-
कर्त्ताओंको धन्यवाद है कि उनने जन सेवामें पत्र द्वारा
प्रशंसनीय भाग लिया है । पत्रका अधिकाधिक प्रचार
हो, ताकि जन साधारण अपनेको रोगोंके आक्रमणसे
बचा सकें ।

मङ्गलदास स्वामी

श्रीश्री महाविद्यालय मोतीझंगरी, जयपुर



स्वास्थ्य



(स्वास्थ्य, सुखति और सुख शान्ति का मार्ग दर्शाता है)

च

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः ।
यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

प्रधान संपादक—
वैद्य सीताराम शर्मा जोशी

सह संपादक—
वैद्य बद्रीनारायण

वर्ष १२. अङ्क ५] कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर) [जनवरी

कर्तव्य है
की चिन्ता
है।

करें, उन
इकी व

ते हों
को लाभ

सकेंगे

त हो

विद्वत्ता सौजन्य है गुरुता चाटत धून

मन सक्षम सर्वज्ञ है त्रिकालज्ञ अमरत्व ।
वीतराग शिव सत्य चिद् केवल ज्ञान प्रभुत्व ॥

मानस वाणी

लेखक—वैद्य कपूरचन्द विद्यार्थी दमोह (म० प्र०)

— १ —

सकल दोष गुण सिद्धिका मन उद्गमऽस्थान ।
बिन मन साधे नहीं सधे स्व परलोक कल्याण ॥

— २ —

मनके साधे तन सधे तन सधते हर साध ।
साधे मन सत्संगसे हरत विषम अपराध ॥

— ३ —

बाँध सका मन बावरा जो संयमकी फाँस ।
मेढ सका जग जननकी कोटि कोटि घन व्याध ॥

— ४ —

जाके जिय संयम सबल बाँध सका मन मत्त ।
साध सका शिव साधना चिदानंद मय चित्त ॥

— ५ —

तनके तपसी बहुत हैं मनका विरला कोय ।
जो मन साँचा तप तपे जन्म मरण रुज खोय ॥

— ६ —

मन मौजी राजी रहे रजा रहे सब त
विषम व्यथा व्यापे नहीं मौजी मनके औ प्रयास
सकेंगे

— ७ —

साध साध मन बावरे संयम सत् संग सा सहय
विषम भवोदधि तरनको एकहि सुगम उपा

— ८ —

मनकी गति अनंत है तनकी गतिका औत
तनकी गति लख गति करत आयुष इच्छा वंत ज

— ९ —

खोवत मन जब संतुलन उपजत विपदा शूल क
विद्वत्ता सौजन्य है गुरुता चाटत धून

— १० —

मन सक्षम सर्वज्ञ है त्रिकालज्ञ अमरत्व ।
वीतराग शिव सत्य चिद् केवल ज्ञान प्रभुत्व ॥

आह्वान

रचयिता—आचार्य श्री प्रभुदयालजी “वाशिष्ठ” भिषगाचार्य प्रधान चिकित्सक—राजकीय आयुर्वेदिक
चिकित्सालय चेराई (जोधपुर) राजस्थान

वैद्यों ! आगे आना ।

संघर्ष करते जाना, मिलकर आवाज लगाना ।

वैद्यों ! आगे आना ।

हम वैद्योंने जब भी कभी मिलकर आवाज लगाई है ।

रोगोंने रस्ता छोड़ा मृत्युने शीश झुकाई है ।

अमृत है औषधियाँ अपनी वैज्ञानिक सब विधियाँ ।

हम चाहें तो पैदा कर दें कायाकल्पकी विधियाँ ।

आपसमें सब मिलकर यह गान है गाते जाना ।

वैद्यों ! आगे आना ।

संघर्ष अपने लेखकी रेखा मृत्युसे क्या डरना ।

पैथी कई निकाल दर्द इन पैथियोंसे क्या डरना ।

विज्ञानकी पैथी नई नहीं है अनुकरण है सब इसका ।

बू आई परदेशी इसमें मान नहीं है इसका ।

अपनी ही औषध है भली ध्येय यही अपना ।

वैद्यों ! आगे आना ।

अपने वेदमें बहुत हैं विधियाँ एक-एकसे बढ़कर ।

नव नूतन अन्वेषण इसमें एकसे एक है बढ़कर ।

काया कल्प है जीवन दाता पंचकर्मका गाना ।

बाजीकरण है दृढ संतति कर स्नेह स्वेदनका ताना ।

इक इक सबके मधुर मिलनसे बनता देहका बाना ।

वैद्यों ! आगे आना ।

चरकसे हम योग निकालें सुश्रुतसे सारा शल्य ।

जो कुछ भी विज्ञान है सारा ऋषियोंका है बल्य ।

कब तक इस विज्ञानके आगे पनप सकेगी ये पैथी ।

हाथ उठाकर आवाज लगाओ दूर हटो ए पैथी ।

स्वस्थ बनेगी मानवता फिर जय जय कहकर गाना ।

वैद्यों ! आगे आना ।

संघर्ष करते जाना, मिलकर आवाज लगाना ।

वैद्यों ! आगे आना ।



सुधार और रिसर्च

— का — दिग्दर्शन

एलोपैथी चिकित्साका प्रचार अधिकाधिक बढ़ रहा है। हम ईर्ष्या करें इसके गुणोंमें दोष निकालें और आयुर्वेदीय चिकित्साकी बड़ाई किया करें। उधर डाक्टर भी ऐसा ही करने लगें। यहां तक कि एक दूसरे सम्प्रदायको गाली गलौज भी देते रहें तो क्या दोनों तरफ सुधार हो सकता है। नहीं।

सुधार तभी हो सकता है दोनों तरफ जन कल्याण की भावना जागृत हो, निःस्वार्थ और विवेकसे दोनों काम लें, तभी दोनों तरफसे सुधार हो सकता है।

अभिमान वश डा० यह मान बैठें, कि हम तो पहलेसे ही अत्युन्नत हैं, हम तो सुधरे हुये ही हैं, हमारा प्रभाव और प्रचार छोटे छोटे गाँवोंमें भी फैल गया है, हम तो सर्वथा पूर्ण हैं, कोई कर्तव्य शेष नहीं तो यह भी उनकी भूल ही है। इससे जनताका कल्याण नहीं हो सकता न वे स्वयं अपना ही कल्याण कर सकते हैं।

उनको भी इन्जेक्शनोंमेंसे व्यापदें निकाल देनी हैं। जो नित नई व्यापदें नजर आती हैं, तथा एक रोग उरपन्नकर ही दूसरे रोगको उनकी दवा मिटाती है उसमें भी सुधार करना होगा।

मैडिशनोंमें सुधार करना होगा, गरीबोंको भी दवाइयाँ सुलभ हो सकें, कीमत कम पड़े, देशका पैसा देशमें रहे, दवाइयाँ देशमें ही बनें, बाहरसे न मंगानी पड़े, इत्यादि सुधार उनके लिए भी अपेक्षित है।

इसके अतिरिक्त उनकी न ता इसीमें है कि वे मनोमेंसे राग पै न निकाल दें, दोनों ही एकसे होनेसे

तो विशेषता क्या रही।

रोगी और जनताके प्रति उनका क्या कर्तव्य है किस प्रकारसे गरीब भारतीय जनता उनकी चिकित्सा सुलभ कर सके, यह उन्हें भी सोचना है। वैद्योंके प्रति—

वैद्योंको चाहिये कि अनुसन्धान चालू करें, उन पास अनुसन्धेय द्रव्य बहुत हैं। बहुत तरहकी वस्तुतियाँ हैं खनिज हैं रसशास्त्रके द्रव्य हैं।

अथवा—जिस रोगको वे ठीक समझते हों उस पर विचार करें, रिसर्च करें। तथा जनताको लाभान्वित करें।

यदि वैद्य लोग ऐसा करेंगे, तो थोड़े ही प्रयास पहलेसे जमी हुई उनकी प्रतिष्ठा स्थिर हो सकेगी सिर्फ द्वेष और अहंकारके त्याग मात्रसे, सबके सहयोग से शीघ्र ही सुधार हो सकेगा।

यद्यपि अनुसन्धान करो अनुसन्धान हो चाहिये, सभी कहते रहते हैं, परन्तु ऐसा प्रतीत रहा है कि न डा० अनुसन्धान करनेका मार्ग जानते हैं, और न वैद्य ही जानते हैं।

यदि जानते होते तो भारतीय डा० भी कुछ कर दिखलाते। और वैद्य यदि जानते तो उन्हें भी दिन नहीं देखना पड़ता, कुछ करके वे भी जनता सामने रखते।

विदेशोंमें विदेशी सरकारने इस कामको बड़ा हाथमें ले रक्खा था। इसपर विपुल धन खर्च किया गया और तीव्र लगनसे स्थानीय वैज्ञानिकोंने नि

निःसंकोचसे इस कामको किया, जिसका रूप आप लोग देख रहे हैं।

ऐसा सुना जाता है कि विज्ञान वेत्ताओंका सारा जीवनोपयोगी भार सरकार स्वयं वहन करती थी। इस कारण बहुत कालसे यह आविष्कार और उन्नति दिखाई दी है।

यदि अब यहाँ भी सरकार ध्यान दे तो भारतमें विद्वानोंकी कमी नहीं है थोड़े ही समयमें बहुत अधिक विज्ञान आविष्कृत हो सकता है।

कई आदमियोंकी तो यह भी मान्यता है कि कोई उन्नति नहीं हुई, सिर्फ आभास मात्र है, रूपान्तर है उन्नति जैसी दिखाई दे रही है।

वास्तवमें सोचें तो अस्त्र शस्त्रोंका विस्तार एक रूपान्तर मात्र है, छेद्य, भेद्य, लेख्य, वेध्य, एष्य, आहार्यादि क्रियाएँ जैसी पहले भी होती थी अब भी होती हैं। औजारोंके नाम पहले संस्कृतमें थे, अब इंग्लिश भाषामें हैं। यह तो रूपान्तर ही हुआ तात्त्विक सुधार क्या हुआ? नया कुछ नहीं। हो भी कैसे, अनादि परम्परासे सब काम होते आये हैं; बल्कि पहले ये क्रियाएँ बाह्याडम्बरके बिना सरल और सस्ती होती थी अब कठिन और दुर्लभ हो रही है।

इस बातको डा० स्व० गणनाथसेनजीने भी स्पष्ट किया है।

भारतीय ज्ञान तो सदासे अपौरुषेय ज्ञान है। वेद ज्ञानके आधारपर विस्तृत व पल्लवित हुआ है। यहाँ तो अपूर्णता व शोधकी गुञ्जायश ही नहीं। इसका तो समझना ही कठिन है। वही ज्ञान रूपान्तर हो गया है। नाना देशवासियोंने अपना अपना अलग कर मान लिया है। यह विपरीत बुद्धि ही कही जा सकती है। ज्ञान सब एकके लिए नहीं, एक देशके लिए नहीं। भारतीय ज्ञान तो विश्वका ज्ञान था, इसीलिए यह जगद्गुरु माना जाता था।

भारतीय ज्ञानको सभी विदेशियोंने लिया, और अपनी अपनी भाषामें उसका अनुवाद कर डाला, और अपना बना लिया, यह उनका काम स्वाभाविक था। अपनी भाषामें अनुगम होना कोई विपरीत बुद्धि

नहीं समझी जा सकती। अपना स्वार्थ सुख सभी चाहते हैं।

पहले भारतीय संस्कृति संस्कृतमें थी संस्कृतमें ही उसका सारा साहित्य था।

जब समयने करवट बदली, और विदेश वासियों ने ज्ञानपर आक्रमण किया, पराई वस्तुको अपने नाम से प्रकाशित किया, तब भेद भाव फैला, तभीसे यह द्वैत चल पड़ा और भीतर ही भीतर सांप्रदायिकता संचित होने लगी, देश विदेशकी बदबू फैल गई।

आश्चर्य तो यह है कि भारतवासी भी अभारतीयताको अपनी मानने लगे, और उनमें भी विपरीत बुद्धिने प्रभाव जमा लिया। फल यह हुआ, ऐंग्लो-इण्डियन पैदा हो गये, जिससे द्वेष फैल गया, इस द्वेषके कारण दोनोंकी ही रिसर्च करनेकी फुरसत नहीं मिली, लड़ाईके सिवाय कुछ भी हाथ न लगा। दोनों ही सुधारकी बातें तो लम्बी लम्बी करते हैं पर होता कुछ नहीं।

रिसर्च रिसर्च जो बारम्बार घोषणा होती रहती है उसका स्वरूप क्या है?

जहाँ तक सुना है, नई खोजका नाम रिसर्च है यह तो ठीक है नये आविष्कारका नाम अनुसन्धान है, रिसर्च है, परंतु नयी खोज क्या हो सकती है? क्या ब्रह्माकी सृष्टिसे और नई सृष्टि की जावे? अथवा वनस्पति आदिके गुण कर्म जो प्रचलित थे इस समय लुप्त हैं? आजकल प्रकाशमें नहीं आये हुए हैं उनको खोजा जावे?

अथवा—ऋषियोंकी खोजसे आगे खोज की जावे। न्यायमें १६ पदार्थ माने हैं, वैशेषिकने सात, सांख्य योगने २४, वेदान्तियोंमें भी नवीन वेदान्ती प्राचीन वेदान्ती द्वैत अद्वैत आदि भिन्न भिन्न तत्त्व मानते हैं। जो हमें मालूम नहीं कितने मत और तत्त्व हैं। श्री मद्भागवत ११ वें स्कन्धमें इनकी संख्या भेद और समाधान है। कहनेका तात्पर्य यह है कि पुराने द्रव्योंको ही पुनः समझना है या नये तत्त्वोंकी खोज करना रिसर्च है।

इस विषयमें जिसे मन सदा है कि—नासतो विद्यते

भावो नाभावो विद्यतेऽसतः इस त्रैकालाबाधित सिद्धान्तानुसार नई वस्तु तो कोई प्राप्त होने वाली नहीं है।

रही अव्यक्त या लुप्त द्रव्यकी बात, जो पहले थी अब नहीं है, छिपी पड़ी है, उसे वापिस सामने लाना है।

उसका सीधा साधा उपाय यही है कि अविज्ञात तत्त्वमें अन्वय व्यतिरेक व्याप्तिव्या प्रियमाण होती है। यह सर्वसाधारण व्याप्ति है। कार्यसे कारणका अनुमान अथवा कारणसे कार्यका अनुमान इससे होता है। यही रिसर्च हमारी समझमें आती है। क्योंकि तात्त्विकज्ञान ही सच्चा ज्ञान है, वही सबको अभीष्ट है, तो रिसर्च भी इसीको कहेंगे। ज्ञान ही प्रमाण होता है।

यद्यपि ज्ञानसाधन भी प्रमाण ज्ञानविषय और ज्ञाता ज्ञेय सभी प्रमाण संग्रहमें आजाते हैं जैसे चक्षुरिन्द्रिय भी प्रत्यक्ष प्रमाण है, चाक्षुष बुद्धि भी प्रमाण है, और विषय भी प्रत्यक्ष प्रमाण कहलाता है। इन्द्रियार्थ सन्निकर्षोत्पन्न ज्ञान 'आयतन' विषय सभी प्रमाकरण है और प्रमाण हैं, ऐसे ही रिसर्चके विषय, उसके उपकरण बुद्ध्यादि ज्ञान, सभी रिसर्च हैं। फल भी उसका रिसर्च ही कहलाता है।

जैसे प्रत्यक्ष प्रमाण है, प्रत्यक्षकी तरह अनुमान शब्द ये भी प्रमाण हैं। इनसे भी रिसर्च होता है। अर्थात् इनसे भी यथार्थज्ञान, तत्त्वज्ञान, वस्तुस्वरूपकी पहचान हो जाती है। यह सब ऋषिप्रणीतरिसर्च पहले हुई हुई है।

आप जानते हैं कि सदहेतु ही साध्यको सिद्ध कर सकता है। जैसे अनुमानके दूषणमें असदहेतु या हेत्वाभास पड़ते हैं, जिससे अनुमान ठीक नहीं हो पाता।

हम रोगोंपर रिसर्च करते हैं परन्तु ज्ञानकी गहराई के कारण हम सफल नहीं हो रहे हैं। आयुर्वेदीय पद्धतिसे रिसर्च बहुत मुश्किल पड़ता है। लिङ्गलिङ्गी ज्ञानको लेकर सद्हेतुसे साध्यसिद्ध करना रिसर्च कहलाता है। सन्निपातमें जब क्षण क्षणमें अवस्था बदल रही हों, सब लक्षण एकाकार हो रहे हों, तब रोगोंके अनेक लक्षणोंमेंसे अव्यभिचारी लक्षण, असाधारण लिङ्ग, सहचारी लिङ्गका निर्णय करना, बड़ी

कठिन बात होजाती है। अमुक नाम सन्निपातका अमुक अव्यभिचारी लिङ्ग है यह कहना मुश्किल पड़ रहा है। इस ज्ञानकी गहराई से रिसर्चमें आगे मार्ग भी नहीं मिल रहा है। सामने हेत्वाभास वा असद्हेतु उपस्थित होजाते हैं। पदार्थ (रोग) के असाधारण धर्मका पता लगाना, उस समय निरुपाधिक हेतु लिङ्ग (लक्षण) को खोज लेना बुद्धिका काम है।

व्यवच्छेदक या भेदक चिह्नोंकी तलाश करनी चाहिये। जलमीनवत् परिवर्तमान लक्षणोंमें लक्ष्यवेध की तरह गुरुपदिष्ट ज्ञानके आश्रयसे यह यही रोग है साध्य है, या असाध्य है, निःसंशय निर्णय देना रिसर्च कहलाता है।

महर्षियोंने इसरिसर्चको ध्यानमें रखकर इसकी दुरुद्धता देखकर लिखा है कि-दोषा ह्यते सहस्रंशो विचिन्त्य माना विमलविपुल बुद्धेरपि बुद्धिमाकुली-कुर्युर्किंपुनरल्पबुद्धेः। यह हमारा प्राचीन रोगोंपर रिसर्चका मार्ग है।

इसी तरह शाब्दज्ञान भी शब्द बोध कराकर अर्थ ज्ञान करानेमें प्रबल प्रमाण है। यह पूर्वोक्त रिसर्चने भी ऊपरकी रिसर्च है। शब्दकी शक्तिको समझना साधारण बात नहीं।

एक तरफ प्रत्यक्षमल्पमनल्पमप्रत्यक्षम्, यह कहा गया है, इसमें करीब करीब सारा ही विषय अनुमानगम्य होजाता है।

इसके अतिरिक्त शब्द ज्ञानका गाम्भीर्य भी रिसर्च की दुर्बोधताको बताता है।

इसका तात्पर्य यह है कि यह रोग नहीं, यह शब्द इस रोग (अर्थ) का बोधक है, यहाँ इस शब्दसे यह रोग नहीं, लिया है, लक्षणासे इसकी यहाँ संगति ठीक है। तात्पर्यानुपपत्तिसे ऐसा नहीं, ऐसा ही हो सकता है। गङ्गायांघोषवत्। यह रिसर्च और भी कठिन है। प्रतितंत्र सिद्धान्तको जाननेके लिए उसका तत्त्वतः बोध करनेके लिए आचार्योंने तंत्र युक्तियां लिखी हैं। बाद मार्ग भी रिसर्चके लिए ही चरकने लिखे हैं।

तत्त्वज्ञान, यथार्थज्ञान, सबको अभीष्ट है। परन्तु

इस रिसर्चके लिए ऋषियोंने यह कभी नहीं कहा कि एक ही ज्ञान एक ही रिसर्च सबके लिए सर्वदा उपयुक्त हो सकती है।

ग्रन्थ कर्ताकी विवक्षाका ज्ञान सदा करते रहना चाहिये, और जैसे द्रव्य द्रव्यत्वेन नित्य है, एक है, उसकी अवस्थाएँ परिवर्तनशील है। ज्ञाताको एक स्थिररत्नको ध्यानमें रखकर उसका स्थिरत्व भी समझना चाहिये, और परिवर्तनशील धर्म (अस्थिरत्व) को भी जानना चाहिये। आयुर्वेदमें कोई पेटेण्ट दवा नहीं है। इसका कारण यह है कि सब द्रव्य सब अवस्थाओंमें सबके उपयोगी नहीं होते।

किन्तु अवस्थान्तरोंका ज्ञान, परिवर्तनशील लिङ्गोंमें एक लक्ष्यका ज्ञान, उसे अवश्य चाहिये। जैसे हमें अनेक लक्षण उत्पन्न होनेपर, या बदलते रहनेपर, भी रोग प्रभाव व वातादि दोषके असाधारण रूपको सदा ध्यानमें रखकर ही चिकित्सा करनी चाहिये।

वास्तवमें आजकलकी रिसर्च रिसर्च नहीं है। जो सिद्धान्त आज है कल फिर बदल दिया जाता है, क्या यह रिसर्च है? रिसर्च निःसंशय ज्ञानको कहते हैं। और यह बुद्धि वैभवसे सम्भाषासे अभ्याससे होता है।

एक द्रव्यमें अनेक धर्म रहते हैं, कोई एक दो चार गुण जानकर यह कहदे कि इसमें इतने गुण है। यह उसका सच्चा ज्ञान नहीं। ज्ञानावयवका ज्ञान है। सम्पूर्ण पदार्थका ज्ञान तो आप्तोपदेशसे ही प्राप्त होता है। जिसपर विश्वास रक्खा जाता है, वहाँ मीमांसा नहीं चलती।

चरक लिखते हैं कि-त्रिविधेन खल्वनेन ज्ञान समुदायेन पूर्वं परीक्ष्य रोगं सर्वथा सर्वमुत्तर कालमध्यवसानमदोषं भवति। नहिंज्ञानावयवेन कुरुते ज्ञेये ज्ञानमुत्पद्यते। थोड़ेसे गुणधर्म जान लेनेसे सब ज्ञान ज्ञात नहीं हो जाता, और सब ज्ञान ज्ञात हुए बिना, पदार्थको सब तरहसे सर्वात्मना जाने बिना, उसका असली स्वरूप भी नहीं जाना जा सकता। तब अधूरा संशयात्मक ज्ञान अज्ञान ही रहा। ऐसी रिसर्च ठीक नहीं।

आजकल लोग मनमानी वस्तुको लेकर मनमाने ढंगसे परीक्षण करने लग जाते हैं। उल्टा सीधा द्रव्योंका संयोगकर रूपान्तर देखकर रिसर्च होगया ऐसा मान लेते हैं, अपनेको धन्यमान लेते हैं।

दूसरे अनभिज्ञ लोग उनका अनुमोदन कर देते हैं। बहुत अच्छा किया, आपने नया आविष्कार निकाल लिया। वास्तवमें यह रिसर्च नहीं, यह तो मनमानी तरङ्गोंका फल है।

रिसर्च किसी आप्तोपदेशके आधारपर शुरू करनी चाहिये। आप्तोपदेशके बिना प्रत्यक्षादि प्रमाण भी कहाँ और कैसे व्यापृत हों, कोई क्या परीक्षा करे, किसकी करे, कैसे करे। पहले कोई साध्य तो होवे। फिर उसके साधनोंका ज्ञान हो, बादमें रिसर्च शुरू हो सकती है। स्वर्गमें देव हैं, तिलोंमें तेल है, ऐसा पहले सुनलें तब ही तो आगे स्वर्गकी अनुमानादि प्रमाणोंसे सिद्ध करें।

अनुपदिष्ट विषयमें परीक्षा नहीं होती। पहले शास्त्र के आधारको प्रमाणोंसे सिद्ध करें, तभी यथार्थ रूपमें रिसर्च हो सकेगी। लिखा भी है—

त्रिविधेत्वस्मिन् ज्ञानसमुदाये पूर्वमाप्तोपदेशात्ज्ञानं ततः प्रत्यक्षानुमानाभ्यां परीक्षोपपद्यते। किञ्चानुपदिष्टे पूर्वं प्रत्यक्षानुमानाभ्यांपरीक्षमाणोविद्यात्। तस्मात् द्विविधा, परीक्षा ज्ञानवतां प्रत्यक्षमनुमानंचेति। त्रिविधावासहोपदेशेन।

कहनेका तात्पर्य यह है कि—

जैसे अनुमानमें प्रतिज्ञा, हेतूदाहरण उपनय निगमन इनके परामर्शसे या व्याप्य व्यापक परामर्शसे पूर्वज्ञान को वर्तमान ज्ञानमें मिलाकर अनुमान किया जाता है साध्य निश्चय किया जाता है। तथा उदाहरण प्रत्युदाहरण देकर शिष्यका ज्ञान सुदृढ किया जाता है वैसे ही आचार्योंने वातादि दोषोंको कारण, (सब्रुतु) और व्याधियोंको कार्य मानकर निदान पूर्वरूप रूप सम्प्राप्ति उपशयादिसे भूयो भूयो विमर्श करके रोगोंको सिद्ध किया है। क्या यह रिसर्चकी दिशा नहीं है। यदि वर्तमान उपलब्ध पूर्वरूप या रूप उस व्याधिका सिद्धि नहीं, हेतुमात्र है तो, उससे उसका साध्य रूप

भी कैसे निर्णीत व सिद्ध किया जा सकता है। जिससे हम यह कह सकें कि यही रोग है।

परंतु जब प्रमाणोंका ज्ञान ही न होवे, तब प्रमाण प्रमेय की सिद्धि भी कैसे कर सकते हैं।

औजार ही भूँटे हों, कुण्ठित हों तो, उनसे छिद्रि क्रिया भी ठीक तरह कैसे सम्पन्न हो सकती है।

इसलिए वैद्योंको चाहिये कि ऋषियोंके बतलाए हुए अनुसन्धान मार्गका अवलम्बन करें।

रिसर्च आरम्भ करनेसे पहले आप्तोपदेश (शास्त्र) या गुरुपदेशसे, पदार्थके असाधारण धर्मका बोध करना चाहिये। शाब्द ज्ञानको लेकर (अर्थका) वस्तुके परिवर्तनशील गुण धर्मोंका भी ज्ञान करना चाहिये। फिर परीक्षासे उसे तात्त्विक निर्णय करें अलग विवेक ख्याति प्राप्तकर एक तात्त्विक लक्षण समझना चाहिये यह रिसर्च है।

ऐसा किये बिना व्यवच्छेदक धर्मके बोध

बिना रोग ज्ञान सच्चा नहीं कहा जा सकता। ऐसे ही द्रव्य गुण शास्त्रमें प्रमाणोंसे प्रभावादि जाने जा सकते हैं।

यदि मिलकर रिसर्च करना हो जैसे सन्धाय सम्भाषासे हो सकता है, पुनः क्रिया पुनर्ज्ञान, पुनः क्रिया, पुनः कर्म, ऐसा करते करते भी ज्ञान और क्रिया का एक रूप प्राप्त हो सकता है।

यदि मार्ग न मिले तो धीरे धीरे चलें। चलना शुरू करें।

अनुगन्तुंसतां वर्त्म कर्तुं यदि न शक्यते।

स्वल्पमप्यनुगन्तव्यं मार्गस्थो नावसीदति।

भगवान् गीतामें कहते हैं—

असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मतिः।

वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः॥ इति॥

और विद्वानोंका दानसन्मानादिसे पूजन कर उपयोग करना चाहिये। अग्निवेश कहते हैं सेव्या-अलम्।

आजके डालडा युगमें जो अनेकानेक बीमारियाँ अकस्मात् पैदा हो जाती हैं, उन सभी को कृष्ण-गोपाल की गम्भीर चुनौता

पाचन सुधा

उदर की ऊष्मा, तज्जनित उदरस्थ अवयवों की अव्यवस्थिततामें होने वाली समस्त

बीमारियाँ इसके सेवनसे भाग खड़ी होती हैं। जैसे—

मलावरोध ही से—

★ बवासीर

★ यकृत-प्लीहावृद्धि

★ गुल्म

★ आमग्रहणी

★ अजीर्ण

★ आम्रातिसार

— एवं —

पेटमें गैस की उत्पत्ति होती है, उन सबों को 'सुधा' की तरह 'पाचन सुधा' दूर कर देती है।

परीक्षा प्रार्थनीय है।

शराब और सिगरेट

लेखक-वैद्य स्वामी श्रीसुखानन्दजी इन्दौर निवासी रजि० नं० ६४० वी. आई. एम्. लखनऊ
श्रीअखण्ड कृपसुखेश्वर आयु० औषधालय मौ. खडोही जारका जङ्गल
पो. छानी (रगौल) जि. हमीरपुर (उ. प्र.)

शराबके गुण—गिलासोंमें जो डूबे फिर न उबरे जिन्दगानीमें ।

अर्थात् जिसने एक बार भी शराबके गिलासमें जिह्वा डुबो दी-रस ले लिया, वह उसीके लिए घरका जेवर बेचकर भी शराब पीकर ही चैन लेगा । अन्तमें शराबमें सर्वस्व खोकर अपनी जिन्दगी बरबाद कर देगा । वह उससे छूट नहीं सकती । उसीमें डूब जावेगा इस जिन्दगीमें उबर नहीं सकता ।

एक हरिजन व्यक्ति था उसके बड़ा परिवार था, ६ लड़के थे । स्त्री पुत्री भाई आदि से सम्पन्न था और करीब दो हजार सालानाकी आय थी ।

उसको उसके दोस्तोंने त्यौहारके दिनोंमें होली और धूलएडी दो दिन शराब पिलाई । और उसका गाने बजानेमें दिन बिताया । उसे बड़ा आनन्दका अनुभव हुआ ।

दोस्त चले गये परन्तु वह तो शराबकी दुकानपर जाकर थोड़ी-थोड़ी एकान्तरसे पीने लगा । फिर कई दिनों तक ऐसे करता रहा । (रोटी भी अच्छी लगे, भूख भी) शरीर भी चञ्चल रहने लगा । धीरे धीरे उसका ऐसा अभ्यास हो गया कि सारे घरकी रकम (आमदनी) समाप्त होने लगी । पहले एकान्तरसे पीता था फिर प्रतिदिन पीने लगा, और फिर दिनमें दोबार । न पीवे उसी दिन पेट दूखे, शिरदर्द हो जावे, शरीरमें हाथ पांवोंमें सनप (वात वेदना) चलने लगे । स्वयं पीवे और दोस्तोंको भी पिलावे । नौकरी जाना बन्द हो गया उससे नौकरीपर काम होवे नहीं । आय बन्द हो गई, खर्चा बढ गया । घर वालोंने बहुत समझाया नहीं माना । फिर श्वास रुकने लगा, घर वालोंने पैसा देना बन्द कर दिया, बेचारी स्त्री उसकी दशा देखकर छिपकर पैसा देने लगी । नहीं पीता है तो श्वास शिरः शूल, भूख बन्द अशक्ति होते हैं । धीरे-धीरे स्त्रीके जेवर भी बिक गये । फिर उधर रुपये लेकर छिपकर पीता

शुरू हुआ । जब ५०० रुपये कर्ज हो गये तब उसके लड़कों ने सर्वत्र कहलादिया कि इसे उधार कोई न दे, हम न चुकावेगें । चाहे मर जावे । थोड़े दिनों बाद कभी मिली कभी न मिली वह हरिजन शराबके न मिलनेसे मर गया । घर भी तबाह हुआ और स्वयं भी बुरी तरह मौतके मुंहमें गया ।

यह है शराबी दोस्तोंके संगतका फल ।

ऐसे ही दूसरे नश्वर सिगरेट है-सिगरेट पीना एक बीमारी बुलाना है, या मौतको न्यौता देना है । यह वह विमारी है, जिसे लोग पैसा देकर खरीदते हैं । जिसे सुन्दर डिब्बेमें बन्द कर बेचा जाता है । करोड़ों रुपयोंकी सिगरेट भारतमें बिकती है ।

जिसका प्रचार ढोल बजाकर रेडियों, डिब्बियों, रंगीत चाटों, पोस्टर तथा कई प्रकारके आकर्षक विज्ञापनों द्वारा किया जाता है ।

छोटी उमरके बच्चे पीना सीख जाते हैं, और जवानों तक उनके शरीरमें इसका विष रम जाता है ।

युवावस्थामें स्वाभाविक बल रहनेसे खानपान ठीक मिलनेसे यह बीमारी चलती रहती है । परन्तु वृद्धावस्थामें हृदय रोग, श्वास-कास आदि भयंकर रोग इससे उत्पन्न हो जाते हैं । त्वचारोग-खाज भी इससे होती है । फुफ्फुस, हृदय और आमाशय इसकी धूवाँके कारण कठिन पड़ जाते हैं । ओज नष्ट हो रहता है । हार्टफैल, ब्लडप्रेसर कैंसर जैसे भयानक रोग इसकी देन हैं ।

सिगरेट पीने वाला उच्छिष्ट सिगरेट दूसरोंकी लेता है । इस युगमें यह सभ्यता समझी जाने लगी । पर हर बुद्धिमान मनुष्य या सैनिक इससे दूर रहता है । जनतासे स्वामी दया भावसे पिघलकर निवेदन करता है कि इन दोनोंसे बचकर सुखसे जीवें ।

★ स्वास्थ्य और सौन्दर्य के लिये टहलिये ★

लेखिका:—श्रीमती सुमित्रा देवी अग्रवाल, "विहारद"

एक कहावत है "पहला सुख निरोगी काया।" इस कहावतका भावार्थ यह है कि शरीर दृष्ट-पुष्ट, स्वस्थ और निरोग है, तो सही मानेमें मनुष्य सुखी है। स्वास्थ्य एवं सौन्दर्यको प्राप्त करनेके लिए चिकित्साशास्त्रियोंने अनेक उपयोगी एवं बहुमूल्य उपाय बताए हैं। शरीरको स्वस्थ रखनेके लिए एक ओर जहां पुष्टिकारक पदार्थ जैसे घी, दूध, मेवा और फलोंका प्रयोग किया जाता है, वहीं दूसरी ओर सूखा चना खाकर भी स्वास्थ्यको बनाए रखा जा सकता है? इसीलिए कहा भी गया है कि "खाय चना सो रहे बना।" चना खाकर भी मनुष्य स्वस्थ एवं सुन्दर क्यों बना रहता है, इसका भी एक रहस्य है। बिना व्यायाम किए न तो मनुष्य निरोग रह सकता है और न उसके सौन्दर्यमें ही वृद्धि हो सकती है।

शरीरको स्वस्थ एवं निरोग रखनेके लिए विभिन्न प्रकारके व्यायाम तथा कसरतें की जाती हैं। एक ही प्रकारका व्यायाम सभीके लिए उपयुक्त नहीं होता। विभिन्न प्रकारकी मानसिक तथा शारीरिक अवस्था वाले नर-नारियोंके लिए व्यायाम भी अलग होते हैं। कोई पहलवानी करता है, कुछ लोग कुश्ती लड़ते हैं, कुछ लोग तैरनेमें रुचि दिखाते हैं और कुछ लोग दौड़ने या खेलने-कूदनेको ही व्यायाम समझते हैं।

सही मानेमें वही सच्चा व्यायाम है, जिसे प्रत्येक अवस्थाके स्त्री पुरुष कर सकें और अपना स्वास्थ्य बनाए रखें। इस प्रकारका व्यायाम टहलना है। टहलना एक प्रकारका ऐसा सुविधाजनक व्यायाम है जो इस युगके बुद्धिजीवी लोगोंके लिए हर प्रकारसे उपयोगी है। शरीर रक्षाके लिए नियमित व्यायाम करना भी उतना आवश्यक है जितना कि भोजन करना।

व्यायाम वह क्रिया है, जिससे व्यायाम करने वाले स्त्री-पुरुष बालक, युवा, वृद्ध सभीके शरीरके अंग-प्रत्यङ्ग गतिशील बनें, जिससे शरीरके अन्दरका विकार निकल सकें। व्यायाम करनेसे रक्त शुद्धिका कार्य सुचारुरूपसे चलता रहता है और पाचन क्रियामें तनिक भी बाधा न पड़नेसे कब्ज आदि भयंकर रोग नहीं होने पाते।

जो लोग व्यायाम या कसरत संबंधी शारीरिक

श्रम नहीं करते और परिश्रम न करनेके कारण प्रतिदिन जिनके शरीरसे पर्याप्त मात्रामें पसीना नहीं निकलता, ऐसे लोगोंका न तो शरीर ही स्वस्थ रह पाता है और न सौन्दर्य ही स्थायी रूपसे रह पाता है।

व्यायामके विभिन्न स्वरूपोंमें जैसे दंड, बैठक लगाना, कुश्ती कबड्डी आदि भारतीय उपयोगी व्यायाम हैं। फिर भी सभीके लिए ये समान रूपसे सुविधाजनक नहीं कहे जा सकते। कुछ व्यायाम ऐसे हैं, जिन्हें लोग अपनी पोजीशन या मान-मर्यादा न बिगड़ने देनेके भयसे नहीं करते जैसे कुश्ती लड़ना। कुछ व्यायाम ऐसे होते हैं, जिनके प्रति लोगोंकी हीन भावना होती है।

तेजीसे टहलना और पूरी थकान जब तक न आ जाय, तब तक टहलते रहना व्यायामका एक बहुत ही सरल और सभ्य तरीका है। शहरोंमें बसनेवाले सभी वर्गके स्त्री पुरुषोंके लिए इस व्यायामका समान रूपसे महत्व है। जो लोग नित्य प्रति इस व्यायामको करते हैं, उनका अनुभव इस बातका सच्ची है कि टहलनेसे शरीरको स्वस्थ रखनेमें पर्याप्त सहायता मिलती है। जो लोग इस व्यायामको अधिक उपयोग बनाना चाहते हैं, ऐसे लोगोंको चाहिए कि टहलनेसे व्यायामको तेजीसे दौड़नेमें बदल दें।

बहुतसे लोग जो मोटी तोंदवाले हैं अथवा जिनमें सदा अपचकी शिकायत रहती है, ऐसे लोगोंके लिए टहलना ही सौ दवाओंकी एक गुणकारी दवा है। रोग विशेषज्ञोंका तो यहां तक कहना है और डाक्टरोंकी भी यही राय है कि जिन लोगोंको प्रमेह ऐसा भयङ्कर रोग हो जाय, उन्हें नियमित रूपसे प्रतिदिन टहलना चाहिए, प्रमेह रोगको दूर करनेमें टहलने जितना लाभ होता है, उतना लाभ सैकड़ों दवाओंकी दवाइयां खानेसे नहीं होता। सच बात तो यह है कि जब तक प्रमेह रोगमें टहलनेका अभ्यास नहीं किया जाता, तब तक दवाइयां भी व्यर्थ ही सिद्ध होती हैं।

युग पुरुष राष्ट्रपिता महात्मा गांधीके दैनिक जीवनमें प्रार्थनाके साथ साथ टहलना भी एक आवश्यक कार्य था और वे बिना नागा प्रतिदिन टहलते थे। प्रतिदिन टहलनेसे यह लाभ होता है कि भू

धुलकर लगती है, कब्ज नहीं होने पाता और मान-सक विकार सदाके लिए दूर हो जाते हैं। जिन नव-युवकोंको अवस्था आनेपर काम वासना अधिक आता हो, ऐसे नवयुवकोंके लिए मेरी यह राय है कि उनके मनमें जैसे ही काम वासना या मैथुनका विचार उत्पन्न हो, उसी क्षण टहलनेके लिए निकल जायें, और इतनी तेजीसे टहलें कि शरीर पानी पानी हो जाय। आप देखेंगे कि वासना, कामेच्छा अथवा मैथुनकी विनाशकारी आंधी जो अभी अभी आपके मनमें उठी थी, वह गायब हो गई। उसकी जगह आपके मनमें सुहावने बागकी वहारका आनन्द आता आ दिलाई पड़ेगा। जिन लोगोंको प्रतिदिन टहलनेकी आदत पड़ जाती है, उन लोगोंका तो यहां तक कहना कि यदि किसी कारणवश बीचमें टहलना बन्द कर दिया जाय तो इन दिनों शरीरमें और मन दोनोंमें ही अस्ती रहती है और किसी भी प्रकारका काम करनेमें न नहीं लगता।

हमारे देशके पढ़े लिखे लोगोंमें अधिकांश लोगों का पेशा कलम घिसना है, चाहे वे किसी आफिसमें क्लर्क हों अथवा दिन रात बैठे-बैठे साहित्यकी सेवामें लगे हों। ऐसे बुद्धिजीवियों और मोटी तोंद वाले भारी भरकम शरीर वालोंको हिम्मत करके प्रतिदिन कुछ-कुछ टहलनेकी आदत डालनी चाहिए। इस प्रकारका अभ्यास करनेपर ऐसे लोग कुछ ही दिनोंमें यह अनुभव करेंगे कि उनमें ताजगी आ रही है, उनका स्वास्थ्य बढ़ रहा है और दिनों दिन सौन्दर्यमें वृद्धि आ रहा है।

जिस समय आप टहलनेके लिए निकलें, उस समय शरीरमें कमसे कम कपड़े रहने चाहिए। शरीरमें या तो देशी हलके जूते अथवा कपड़ेके बने हुए जूते वाले जूते पहनना चाहिए। जब आप घरसे टहलनेके लिए बाहर निकल पड़े, उस समय आप मनमें घर अथवा दुनियांकी किसी भी चिन्ताको न निकलें। सभी प्रकारकी चिन्ताओंका बंडल आप घरपर छोड़कर निकलें। सदा प्रसन्नचित्त होकर टहलनेकी आदत डालनी चाहिए। टहलने के लिए यदि आपका कोई ऐसा साथी है, जो आपकी पसन्द व आपके ही विचारोंवाला हो तो उत्तम रहेगा। ऐसे साथीके अभावमें अकेले ही टह-

लनेकी आदत डालनी चाहिए।

जब आप मैदानमें पहुंच रहे हों उस समय सीना तानकर पूरी तेजीसे चलना आवश्यक है। दोनों हाथ पूरी तरहसे हिलाने रहना चाहिए मुँह बन्द करके नाकसे श्वास लेना लाभदायक है। टहलनेका क्रम यह है कि पहले पन्द्रह-बीस मिनिट तेजीसे घूमिए, फिर पांच दस मिनिटका आराम लेकर घरके लिए धीरे धीरे वापस चल दें टहलनेका उद्देश्य यही है कि शरीरके प्रत्येक अंगकी कसरत हो जाये और रोमके छिद्र खुल जायें, जिससे पसीना आ जाय और शरीर हलका हो जाये। एक साधारण आदमी एक घण्टेमें दो-तीन मील घूम सकता है और इतनी घुमाईसे पसीना आकर शरीर ताजा हो जाता है। टहलनेके साथ ही साथ धीरे-धीरे दौड़नेका अभ्यास करना चाहिए।

टहलनेका सबसे उत्तम समय प्रातःकाल एवं सायंकाल माना गया है। प्रातः सूर्य निकलनेके कुछ पहले और सायं सूर्य अस्तके समय जिस समय आप टहलने निकलें, उस समय पेटमें किसी वस्तुका भार नहीं होना चाहिए। खाली पेट बिना कुछ खाए टहलना लाभदायक होता है। प्रातःकाल एवं सायंकाल का वातावरण एवं वायुमंडल प्राणप्रद होता है। इस समय न तो धूल ही उड़ती और न भड़-भाड़ होती है। प्रातः ५ बजे और शामके समय साढ़े पांच बजेके लगभग घूमने निकल जाना चाहिए। टहलनेके स्थानका चुनाव ऐसा करें जहां हरे हरे पेड़-पौधे या बाग बगीचे हों और जमीन भी समतल हो। समतल जमीनमें टहलनेसे गिरने अथवा चोट लगनेका भय नहीं रहता और वातावरण सुखद होनेसे मन प्रसन्न रहता है।

शहरोंमें अनेक पार्क व बाग-बगीचे होते हैं ऐसे मनोरम स्थान टहलनेके लिए चुनना चाहिए। गांवोंमें आबादीसे बाहर खेतोंकी तरफ टहलनेके लिए निकल जाना चाहिए। इस प्रकार यदि आप नियमित रूपसे टहलना प्रारंभ कर चुके हैं, तब आप यह देखेंगे कि नित्य ही आपके स्वास्थ्यकी वृद्धि हो रही है। आपका मन विकार रहित होगा और निःसन्देह आपके सौन्दर्यमें भी वृद्धि होगी प्रत्येकको प्रतिदिन टहलनेका अभ्यास करना चाहिए।

पुरीषवह स्रोतस की व्याधियां

लेखक—शिवचरणजी ध्यानी जामनगर

पुरीषवह स्रोतस्का क्षेत्र उण्डुक (Ileo-Caecum) से प्रारम्भ होकर गुदातक जाता है। आहार रसके शोषणके पश्चात् पक्वाशयस्थ मलधराकला मल और मूत्रका विभाजन करती है। वह मल पक्वाशयसे आगे जाता हुआ मलाशयमें जाता है जहांसे वह गुदाके रास्ते वेगके समय बाहर निकलता है।

प्राकृत अवस्थामें पुरीष संहत (Well Formed) और एक विशिष्ट वर्णका होता है। पुरीषका प्राकृत वर्ण पित्तके द्वारा होता है और जब पित्त किसी कारणसे आन्त्रोंमें नहीं आ पाता तब पुरीष अप्राकृतिक वर्णका होजाता है, यथा शाखाश्रित कामलामें श्वेतवर्णका या तिलपिष्टके समान पुरीष होता है, पुरीषकी विकृतिसे अन्य भी कई रोगोंकी विचारणा होती है। पुरीषकी निम्नलिखित विकृतियाँ मिल सकती हैं—

१. पुरीषका द्रव होना। इससे अग्निधराकला, मलधराकला, अग्निमांश, कृमि, आमदोष, इन बातोंपर ध्यान जाता है।

२. पुरीषका विकृत वर्णका होना। इससे पित्त, रक्त, श्लेष्मा-इनकी ओर ध्यान जाता है। पुरीष श्वेतवर्णका, अतिपीतवर्णका, हरित एवं हारिद्र वर्णका, रक्तवर्णका तथा अतिश्वेत वर्णका मिल सकता है। अतः पित्त, रक्त और श्लेष्माकी दुष्टिपर ध्यान जाता है।

३. पुरीषकी दुर्गन्धिता। अस्यन्त दुर्गन्धियुक्त पुरीषकी अवस्थामें रोगीका आहार (पलाण्डु, लहसुनयुक्त), अग्निमांश तथा त्रिबन्धकी ओर ध्यान देना चाहिए।

संक्षेपतः पुरीषकी प्रवृत्ति, गंध, वर्ण, मात्रा एवं संघटन और संहतताको देखकर विभिन्न बातोंका ज्ञान होता है। पुरीषवह स्रोतोंके मूल हैं—पक्वाशय और स्थूलगुद, (च. वि. ५।११) पुरीषकी अति प्रवृत्ति तथा कष्टसे प्रवृत्ति या अप्रवृत्तिको देखकर पुरीषवह स्रोतोदुष्टिका अनुमान करना चाहिए।

पुरीषवह स्रोतोदुष्टिके कारण—(च. वि. ५।२९)

१. वेगको रोकनेसे।
२. अधिक भोजन करनेसे।
३. अजीर्ण से।
४. अध्यशन से।
५. मन्दाग्नि और कृशता से।

पुरीषवह स्रोतोगत वायु-विकार

पुरीषवह स्रोतोमूल पक्वाशय वातका प्रधान स्थान है। जब वातका प्रकोप तथा स्थान संशय पुरीषवह स्रोतसमें ही होता है तब विभिन्न प्रकारके लक्षणों या रोगोंकी उत्पत्ति होती है जिनका वर्ण संक्षेपतः किया जा रहा है,

‘पक्वाशयस्थ वात’ के लक्षण

१. आन्त्रोंमें गुडगुड़ाहट
२. आन्त्र शूल
३. आटोप
४. मल एवं मूत्रकी अप्रवृत्ति
५. आनाह
६. त्रिक प्रदेशमें पीड़ा

गुदस्थित वातके लक्षण

१. मल, मूत्र एवं अपान वायुकी अप्रवृत्ति

२. आध्मान एवं शूल ।

३. जंघा, त्रिक, पैर और पृष्ठमें पीड़ा व शोष ।

पित्तावृत्त अपानके लक्षण

१. मूत्र दाह ।

२. मूत्र अति उष्ण होता है ।

३. मूत्रमें रक्त आता है ।

कफावृत्त अपानके लक्षण

१. शरीरका अधोभाग भारी ।

२. शरीरका अधोभाग शीतल ।

'तूनी' के लक्षण

वात प्रकोपसे एक प्रकारकी पीड़ा मलाशय और मूत्राशयसे प्रारम्भ होकर नीचेकी ओर गुदा और मूत्रेन्द्रियका भेदन-सा करती हुई प्रतीत होती है । इसे तूनी रोग कहते हैं ।

प्रतितूनीके लक्षण

वात प्रकोपसे एक प्रकारकी पीड़ा गुदा और उपर्यसे प्रारम्भ होकर ऊपरकी ओर वेगोंके रूपमें पक्वाशयको जाती है । उसे प्रतितूनी कहते हैं ।

आध्मानके लक्षण

जिन वात निरोधजन्य व्याधियोंमें उदरमें आटोप (गुडगुड़ाहट), अत्यधिक पीड़ा तथा फुलाव हो, उसे आध्मान कहते हैं । यह एक आशुकारी व्याधि है ।

प्रत्याध्मानके लक्षण

इस अवस्थामें कफ वायुको आवृत कर देता है । पार्श्व और हृदयको छोड़कर आध्मानके लक्षण जब आमाशयमें मिलते हैं तब उसे प्रत्याध्मान कहते हैं ।

वातोदावर्तके लक्षण

अपान वायुके वेगको रोकनेसे वायु, मूत्र तथा पुरीष रुक जाते हैं, पेट फूल जाता है, शरीरमें सुस्ती तथा पीड़ा होती है । इसके अतिरिक्त अन्य वातिक रोग (आमाशय-पक्वाशयगत) होते हैं ।

पुरीषोदावर्तके लक्षण

पुरीषके वेगका धारण करनेसे आटोप, शूल, परि-
कृत्तिका, मलकी अप्रवृत्ति एवं डकार अधिक आते हैं ।

आनाहके लक्षण

आनाह उस अवस्थाको कहते हैं जिसमें आमरस अथवा पुरीष आमाशय अथवा पक्वाशयमें क्रमशः संचित होते रहते हैं और विगुण वातसे अवरुद्ध होकर अपने यथोचित मार्गसे नहीं निकल पाते हैं ।

आमरसजन्य आनाहमें—

१. प्यास ।

२. प्रतिश्याय ।

३. शिरो विदाह ।

४. आमाशयमें शूल तथा भारीपन ।

५. हृदयका जकड़ा हुआ रहना ।

६. डकार न आना ।

पुरीषज आनाहमें—

१. कटि और पृष्ठ अकड़ जाते हैं ।

२. मल तथा मूत्रकी अप्रवृत्ति ।

३. रोगी मूर्च्छित हो जाता है ।

४. कभी कभी मलका वमन भी हो जाता है ।

५. श्वास तथा अलसकृते भी इसमें कुछ लक्षण मिलते हैं ।

'सन्निरुद्ध गुद' के लक्षण

मल एवं अपान वायुके वेग धारण करनेसे वायु का प्रकोप होता है । वह प्रकुपित वायु गुदामें पहुँचकर आन्त्रके मार्गको सूक्ष्म करदेता है । मार्गके संकीर्ण होजानेसे मल कठिनतासे निकलता है यह आशुकारी एवं भयानक रोग है ।

अहिपूतनके लक्षण

बालककी गुदाको यदि साफ न रखा जाय तो उसमें मलसूलसे गुदाके चारों ओर फुनिसियाँ होती हैं । इसीको अहिपूतन कहते हैं ।

आटोप, आध्मान और आनाह ये एक ही अवस्था के तीन भेद समझने चाहिये । आटोपमें आंतोंमें गुडगुड़ाहट होती है, आध्मानमें कम गुडगुड़ाहट होती है, आनाहमें नहीं होती । आटोपकी अपेक्षा आध्मानमें वायुका अधिक प्रकोप और अवरोध होता है और आनाहमें आध्मानकी अपेक्षा अधिक । इस प्रकार ये तीन क्रमशः उत्तरोत्तर अवस्थाएँ हैं ।

चिकित्सा

१. पक्वाशयस्थ वात, गुदस्थित वात, तूनी, प्रतितूनी, आध्मान, प्रत्याध्मान, वातोदावर्त, आनाह, पुरीषोदावर्त—इनमें प्रायः समान चिकित्सा की जाती है। सभीमें वात शामक एवं अपानवायुकी प्रवृत्त्यात्मक चिकित्सा की जाती है, यथा—

२. स्नेहन और स्वेदन करना चाहिए।

३. किसी दीपन-पाचन तथा वातशामक एवं वातानुलोमक औषधका प्रयोग किया जा सकता है।

४. हिंगु, त्रिकटु, वत्सनाभ, कुष्ठ, पुष्करमूल, लवण, जीरक, रास्ना, लहशुन, हरड़—इनका प्रयोग उपरोक्त अवस्था विशेषोंमें किया जाता है।

५. वात निरोध या पुरीष निरोधमें आवश्यकता पड़नेपर वस्ति एवं गुदवर्तियोंका भी प्रयोग करते हैं।

६. हिंम्वष्टक चूर्ण, नाराच रस, पञ्चकोल चूर्ण, गंधक वटी, चाङ्गेरी घृत, कुमार्यासव, हरीतक्यादि चूर्णका प्रयोग अवस्थानुसार कर सकते हैं।

७. आवृत वायुकी चिकित्सामें वातशामक औषधिके साथ आवरक दोषको शान्त करने वाली

औषधिका मिश्रण करके दिया जाता है।

८. सन्निरुद्ध गुदकी चिकित्सा उदररोगोंके प्रकरणमें लिखेंगे। सन्निरुद्ध गुदमें बिना ठीक परीक्षा किये विरेचन देना बहुत बड़ी भूल होती है।

९. योग—हिंम्वष्टक चूर्ण, लशुनादि वटी, अभयारिष्ट, खंसन चूर्ण, अग्नितुण्डी रस, विषतिन्दुक वटी, शंखवटी, वातविध्वंसन, इनमें किसीका प्रयोग अवस्थानुसार करना चाहिए।

१०. आटोपकी अवस्थामें रोगीको अग्निमांश और पेटमें गुड़गुड़ा होती है। इस अवस्थामें हिंम्वष्टक चूर्णको घृतके साथ देना चाहिए।

११. आध्मानमें आन्त्रोंमें वायु एकत्रित होजाता है। इस अवस्थामें शङ्खवटी २ गोली + वातविध्वंसन रत्ती + सर्पगंधा चूर्ण ४ रत्तीकी मात्रामें देना चाहिए।

१२. आनाहमें लशुनादि वटी, चत्रिकासव और अभयारिष्टका प्रयोग लाभप्रद है।

विशेष अध्ययनार्थ पढ़िये—

१. 'आवृत वात विज्ञानीयम्'—पोस्ट ग्रेजुएट थ्रीसिस, ज्ञान भास्कर पाण्डेय, जामनगर।

कृष्ण-गोपालकी गैसहर वटी

आजकल अनेक मनुष्योंके पेटमें मन्दाग्नि, अर्जाण तथा आंतोंमें सड़ान होनेसे गैस (वायु) बना करती है जिससे पेटका फूलना, उदरशूल, खट्टी या वादीकी डकारें आना तथा घबराहट आदि अनेक लक्षण उत्पन्न होते हैं। इस रोगका उपचार न करनेसे आगे चलकर आंतमें कैंसर जैसे घातक रोग उत्पन्न होते देखे गये हैं। भयनने अपने ३० वर्षके अनेक रोगियोंपर अनुभव करके जनहितार्थ इस महारोगसे पिण्ड छुड़ानेके लिये इन गोलियोंका निर्माण किया है।

जब भी पेटमें गैस उत्पन्न हो १ या २ गोली जलानुपानसे ले लेनेपर तुरन्त अपानवायु नीचेके मार्गसे खुलकर पूर्ण शान्ति प्राप्त होगी। भोजनोत्तर दोनों समय वटी ले लेनेसे अन्नपाचन सुखपूर्वक होता है, शौच साफ हो जाता है तथा यकृतकी खराबी दूर होकर स्वास्थ्यवृद्धि होती है।

मूल्य—१० ग्राम, ०-९०। ५ ग्राम, ०-५५।

संग्रहणीकी अनुभूत आयुर्वेदिक एवं एलोपैथिक चिकित्सा

लेखक—वैद्य सुरेशचन्द्रजी शर्मा "गौड़"

प्रधान चिकित्सक—राजकीय आयुर्वेदिक औषधालय, मोहनगढ़ (जैसलमेर)

कारण—रोगाः सर्वेऽपि मन्दाग्नेऽनौ सुतरामुदरगणि च ।
अजीर्णान्मलिनैश्चानैर्जायन्ते मल सञ्चयात् ॥

यों तो प्रायः सभी रोग अग्निके मन्द होनेपर होते हैं, परन्तु संग्रहणी आदि उदर रोग विशेषकर मन्दाग्निसे ही होते हैं । अजीर्ण मलिन अन्न, अनमेल की चीजें, बिना भूख खाना, वासी, सड़ा, बदबुदार, चीनी, आईसक्रिम और अन्य बाजारु वक्त वे वक्त खानेसे संग्रहणी हो जाती है । यह रोग प्रायः अतिसारके बाद ही होता है, जैसा कि कहा है—

अतिसारे निवृत्तेऽपि मन्दाग्नेरहिताग्निः ।

भूयः सन्दूषितो वह्निर्ग्रहणीमभिदूषयेत् ॥

अर्थात् उपरोक्त कारण अग्निको मन्द करके ग्रहणी अङ्गको बिगाड़ देते हैं । जिससे रोगीका खाया हुआ अन्न परिपाक नहीं होता, शरीर रूक्ष रहता है, शरीर का जलांशीय भाग दस्तोंद्वारा निकल जानेसे तृषा अधिक लगती है, यही इसके मुख्य चिह्न हैं । आंखमें भांख, कानमें आवाज, पसलियों एवं सन्धियोंमें शूल, हृदयमें पीड़ा, निर्वलता, गुदाद्वार पर चीरने जैसी पीड़ा, खारे और खट्टे रसपर प्रीति, किसी समय पतला किसी समय सूखा कष्टके साथ या बिना कष्टके दस्त, हाथ पैरोंमें सूजन इसके प्रमुख लक्षण हैं ।

पार्श्वमें शूल, मल निकलते समय घड़ा खाली होने जैसी आवाज, टैम्परेचर रहना, सुस्ती, लेटे रहनेकी इच्छा ये सब कष्टसाध्य लक्षण हैं ।

पथ्यापथ्य—इसके रोगीको स्नान नहीं करना चाहिये, यदि आवश्यकता हो तो कम-कम थोड़े गरम

पानीसे करावें । पानीके स्थानपर छाछ पिलानी चाहिये । चिकने पदार्थ, बाजारकी मिठाईयां, खाण्डकी चीजें नहीं खाने दें । जो-जो खुराक रोगी लेता है, वह वैसे ही मलद्वारा बाहर निकल जाती है । अतः इस रोगके रोगीको पतली, हल्की, दीपन, वात, पित्त, कफ नाशक खुराक देनी चाहिये । आमाशयमें पचन हो ऐसा रस पान करावें । आन्त्रमें पाचन हो ऐसा कोई पदार्थका सेवन वर्ज्य है । घीमें जीरा और हींग डालकर अग्निसे पकाकर इससे छाछको बघार देकर उसमें थोड़ा सैन्धानीन, अदरक, हरा धनियां, मीठा नीम डालकर देनी चाहिये ।

इस रोगमें वायु पित्त और कफमें जिस दोष की प्रबलता हो उसका ध्यान रखकर भी चिकित्सक बन्धु औषधका अनुपान दें । औषधसे लाभ प्रतीत होने पर थोड़ा-थोड़ा भात कड़ी मूंगका पानी देना चाहिये ।

एलोपैथिक चिकित्सा

(१) एन्टीडैस्टीयो Tablet. (२) B. Vitam. in (AD) Tab. (३) कैरौफिल Tab. इन तीनों की १-१ टैब्लेट दिनमें ३ बार छाछसे दें । यदि रोगी को टैम्परेचर हो तो छाछसे न देकर दूधको फटकड़ी से फाड़कर उसके ऊपरके पानी से दें । और भूख लगने पर भी यही पानी दिया जावें । टैम्परेचर २-३ दिन तक नार्मल रहनेपर छाछका प्रयोग शुरु करावें । लिवर एक्सट्रेट विट् फोलि एसिड २ सी. सी. प्रतिदिन मांसपेश्यान्तरगत दें । इस प्रकारकी चिकित्सासे प्रायः दूसरे अथवा तीसरे सप्ताहमें रोगीकी दशा सुधरने लगती है । अतः क्षुधा लगने पर अंगूर, अनाग, मौसम

आदिका रस देना चाहिये । इनके अभावमें मूंगकी दालका यूष दें । गन्नेका रस भी इस रोगमें लाभदायक है । और जब तक रोग निर्मूल न हो जावे तब तक यही चिकित्सा एवं पथ्य सुचारु रूपसे चलते रहें । और जब रोग निर्मूल हो जावे, तब इन्जैक्शन और एन्टीडैस्टीयों टैबलैट्स बन्द कर दें । और भोजनोपरान्त ५-६ सप्ताह तक छाछसे अथवा पानीसे फैरोफिल और B. Vitamin की टैबलैट देते रहें । ताकि रोग का पुनरावर्तन न होवे ।

(२) वैसीटोन कैप्सूल ४ प्रतिदिन देने एवं उपरोक्त पथ्य एवं अनुपानके परिपालनसे भी संग्रहणी शीघ्र ठीक हो जाती है ।

संग्रहणीकी प्रत्येक दशाकी चिकित्सामें कैल्सियम सैन्डोज विट विटामिन सी १०% १० सी. सी. अथवा कैल्सियम ग्लुकोनेट प्लेनके इन्ट्राविनसके प्रयोगसे रोग शीघ्र निर्मूल हो जाता है । एवं शक्तिभी शीघ्र आ जाती है, दूसरे रोगका पुनरावर्तन भी नहीं हो पाता । मेरे अनुभवमें तो कैल्सियमका प्रयोग अत्यन्त ही लाभदायक सिद्ध हुआ है । किन्तु रोगकी अधिक गम्भीरतामें जैसे नाड़ीका लोप होना, बेहोशी, सर्वाङ्ग शीतता, अथवा अत्यन्त शक्तिहीन होनेपर तो उपरोक्त इन्जैक्शन अनिवार्य हो जाता है । ऐसी स्थितिमें ग्लुकोज एवं कोरामिन का ५० से ७५ सी.सी. तकका भी प्रयोग कर सकते हैं ।

इससे भी अधिक अवस्था गम्भीर होनेपर जब कि रोगीके मलकी रक्षा ही नहीं अपितु प्राण रक्षा भी अनिवार्य हो जाती है, अथवा संग्रहणीकी दशामें निमोनिया आदि उपद्रव हो जानेपर Reverin (रैवेरीन) हुचैटका प्रयोग इन्ट्राविनस उपरोक्त चिकित्सा क्रमके साथ करना चाहिये । इस इन्जैक्शनका पूर्णवय रोगी की १ मात्रा का मूल्य ११ रुपये है । अर्थात् ११ रुपये का एक एम्पुलबाजार में मिलता है । यह इन्जैक्शन २४ घण्टेमें एक ही देना चाहिये । २-३ इन्जैक्शनोंसे स्थिति सुधर जाती है । अतएव ३-४ से अधिक इन्जैक्शन नहीं देने चाहिये । रोगकी गम्भीरताकी दशा में साधारण लिवर एक्सट्रैक्टके स्थानपर न्योरोक्सिन B₁₂ (कैडीला) का प्रयोग करना चाहिये । इसकी भी

११ रुपयेकी १० सी.सी. का १ व्यवस्था की । प्रतिदिन इन्ट्रामस्क्युलरमें दें । रोग प्रारम्भिक दशा में कैल्सियम ग्लुकोनेट ५ कैल्सियम सैन्डोज विट विटामिन सी. १०% १० सी. सी. का प्रयोग करें । स्थिति सुधर जानेपर प्लेनका प्रयोग कर सकते हैं ।

इस पैथीसे अमीर मनुष्य ही चिकित्सा करवा सकते हैं । जो कि पथ्यापथ्य अधिक नहीं रख सकते हों और चिरकाल तक चिकित्सा करवा सकते हों । किन्तु इतनेपर भी कभी-कभी इस रोगमें इस पैथीसे पूर्णतया लाभ नहीं होता । जब तक चिकित्सा चलती है तब तक आगम रहता है फिर वैसी ही दशा हो जाती है । अथवा चिकित्सा कालमें भी रोग बढ़ता ही रहता है जैसा कि अक्सर देखनेमें आता है । ऐसी स्थितिमें भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सासे पूर्णतया लाभ होता है । विशेषकर इस रोगमें तो जिनना श्रेय आयुर्वेदिक चिकित्साको है, उतना ऐलोपैथी चिकित्साको नहीं हो सकता चूंकि आयुर्वेदिक चिकित्सा अमीर गरीब सभी करवा सकते हैं ।

आयुर्वेदिक चिकित्सा:—

यों तो आयुर्वेदज्ञोंने इस विषयपर यत्र तत्र काफी लिखा है । किन्तु इस लेखमें इस रोग हेतु एक ऐसा अनुभूत योग दिया जा रहा है जो कि संग्रहणीकी प्रत्येक दशाके रोगीको ठीक कर देता है और पुनरावर्तन भी नहीं होता । सस्ता एवं सुलभ योग है । न किसी कल्पकी आवश्यकता है और न किसी रस भस्म की आवश्यकता है । चूंकि आजका विज्ञान बहुत आगे बढ़ रहा है अतएव यह योग छुपाना उचित न समझ कर प्रस्तुत है । यह योग एक महारमाजीसे बड़ी कठिनाईसे मुझको प्राप्त हुआ है । तदुपरान्त अनेक जटिल रोगियोंपर सफलता पानेके बाद प्रकाशित है ।

योग:— (१) कूड़ेकी वकली ५ सेर पकी (आयुर्वेदमें इसको कुटज, कोड़ा, कोरय्याके नामसे कहा है) (२) सूठ (३) मोचरस (४) इन्द्रजौ (५) अजवायन (६) गोखरू (७) पुराना गुड़-२-२ तोला ।

विधि:—कूड़ेकी वकलीका चूर्ण कर तिगुने पानीमें ३ दिन तकके लिये भिगो दें। उसको दिनमें ५-६ बार लकड़ीसे हिलाते रहें। फिर उसको छान लेवें। चूर्ण को भी हाथोंसे दबाकर जल शून्य करके फेंक दें। फिर दुबारा मोटे कपड़ेसे छान कर कड़ाहीमें डालकर मन्दाग्निसे पकाना प्रारम्भ करें और कौंचेसे चलाते जावे, और जब चतुर्थांश रह जावे तब इसमें अवशेष औषधियोंका चूर्ण एवं गुड़ मिला दें। जब गोली बनाने लायक हो जावे तब उतार कर भाड़ी वेर प्रमाण गोली बनाकर सुखा लें।

सेवन विधि:—२ गोली सुबह शामको छाछसे दें। क्षुधा लगनेपर भी छाछ ही पीनेको दें और पानी के स्थानपर भी छाछ ही दें। लाभ प्रतीत होनेपर पूर्वोक्त बताये पथ्यका अनुसरण करावे। पथ्यमें अन्न देनेके पश्चात् द्राक्षासव १ तो० दें। और जब तक रोग बिल्कुल निर्मूल न हो जावे तब तक औषध एवं पथ्य चलाते रहें। रोग निर्मूलताके लक्षण:—

यस्योच्चारं विना मूत्रं सम्यग्वायुश्च गच्छति।
दीप्ताग्नेर्लघु कोष्ठस्य स्थितस्तस्योदरामयः॥

अर्थात् इस रोगमें पेटकी सब पानीदार चीजें पाखानेके ही रास्तेसे निकलती हैं, अतः मूत्र मालूम होनेपर भी मूत्र न होकर गुदाके रास्तेसे निकल जाता है। यदि होता भी है तो पखाना पेशाब और हवा एक साथ ही होता है। अतएव जब ये बातें न हों, पखाना, पेशाब और हवा अलग जाय, अग्नि दीप्त और पेट हल्का हो तो समझना चाहिये कि रोग निर्मूल हो गया है। रोग निर्मूलताके एक सप्ताह तक औषध सेवन कराते रहें। औषध बन्द करनेके पश्चात् भी भोजनोत्तर द्राक्षासवका प्रयोग ५-६ सप्ताह तक कराते रहें। और छाछका प्रयोग भी साथ चलाते रहें।

संप्रहणीकी बिगड़ी हुई दशमें २ गोली सुबह २ दोपहर २ सायं दें। यह औषध इस रोगमें प्रथम दिन ही आगम देती है। यह मेरा निजी अनुभव है। और जिस महानुभावसे यह योग प्राप्त हुवा था, वे ४० दिन तक रोगका प्रत्येक दशमें ३ गोली प्रतिदिन देते थे।

पथ्यमें केवल बेसनी रोटीके अलावा कुछ नहीं देते थे। मैंने इस प्रकारके पथ्यमें भी अनेक रोगियोंको पूर्णतया लाभ पहुँचाया है। इस प्रकारका औषध सेवन उन रोगियोंको हितावह है, जो कि कारणवश समय-समयपर चिकित्सकके पास पहुँचनेमें असमर्थ हों। अथवा द्राक्षासवका व्यय वहन न कर सकते हों। किन्तु इस पथ्यमें १ बार भी अपथ्य नहीं होना चाहिये। दूसरे इस प्रकारके पथ्यमें नमक अथवा किसी वस्तुके लिये एकाएक स्वभावतः इच्छा नहीं होती है। यह औषधिकी दूसरी विशेषता है। दोनों तरहके पथ्योंसे रोगका पुनरावर्तन नहीं होता यह भी एक बड़ी विशेषता है। चिकित्सक बन्धु दोनों तरह के पथ्योंके परिपालनसे अनेक हताश रोगियोंको ठीक करके इस लघु योगका चमत्कार देख सकते हैं।

॥ इत्यलम् ॥

कृष्ण गोपाल का



दन्त रोगों को दूर कर
दांतों को मोती समान
स्वच्छ बनाता है।

दन्त प्रभाकर मंजन

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा, कृष्ण गोपाल (भजमेर)

जन्म और जाति स्मरण

लेखक—लक्ष्मीस्वरूप शुक्ल 'शास्त्री' 'आयुर्वेदाचार्य' मन्धता, कानपुर

'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः' की उक्तिके अनुसार मन ही जीवात्माके बन्धनमें प्रधान कारण है। मानसिक गतिके अनुसार ही जन्म होना शास्त्र-सम्मत विषय है। 'सत्त्वमात्मा शरीरं च त्रयमेतत् त्रिदणवत्। लोकस्तिष्ठति संयोगात्तत्र सर्व प्रतिष्ठितम्'। इस आयुर्वेदके कथनमें सत्त्व (मन) की प्रधानताके कारण ही प्रथम उसका पाठ है। मृत्युके पश्चात् मातृ पितृज शरीरका अन्त होकर मनः प्रधान सूक्ष्म शरीरका अस्तित्व रह जाता है। मन अचेतन* है किन्तु आत्माके संयोगसे चेतनवत् प्रतीत होता है। मानसिक प्रवाह इस शरीरमें ही नहीं मृत्युके पश्चात् एवं जन्मान्तरमें भी इसीप्रकार निरन्तर गति शील बना रहता है। रज और तम ये मानसिक दोष हैं इनके अभावमें जब मन शुद्ध सत्त्व गुण विशिष्ट रह जाता है। तब मोक्षकी ÷ प्राप्ति होजाती है। सत्त्व गुण विशिष्ट मन तो परमार्थ स्वरूप ही है।

मरणके पश्चात् जन्म स्वाभाविक संशय-हीन सब मान्य विषय है। मरण देह-परिवर्तनकी एक साधारण प्रक्रिया है जिसमें जीवात्मा जीर्ण शरीरका परित्याग कर अन्य नवीन शरीरको ग्रहण करता है। मरण कालके पूर्व जिस समय प्राणी अपने शरीरमें असह्य वेदनाका अनुभव करता है उस समय समस्त मानसिक वृत्तियाँ अन्तर्मुखी होकर उसे बाह्य-जगतसे विमुख कर देती हैं। आयुर्वेदमें मृत्युके समय ज्वरके

मोह (तम +) रूपमें उपस्थित होनेकी बातका उल्लेख है। मृत्युके समय जन्मभरकी बीती हुई बातोंके स्मरण चित्र बड़ी तेजीसे मनुष्य अपने मानस पटल पर चित्र भरमें देखकर अत्यन्त ग्लान्तिका अनुभव करते हुये सूक्ष्म शरीरमें परिवर्तित हो जाता है।

इस स्थूल शरीरको त्याग देनेके पश्चात् वह सूक्ष्म शरीर अपनेमें बहुत हल्के पनका अनुभव करता है। मृत्युके पश्चात्कालीन शरीरमें इस जन्मका तथा मरण कालीन कष्टका भी स्मरण रहता है। मानसिक बोझ कम हो जानेके कारण पिछले कई जन्मोंका स्मरण भी इस स्थितिमें होना स्वाभाविक बात है।

यद्यपि जीवात्मा बन्धनसे हीन है तथापि मानसिक गतिसे विवश हो संस्कार वश उसे बन्धनमें पड़ना ही पड़ता है। संस्कारका तात्पर्य आदतसे है। जिस प्रकार एक चोर चोरी द्वारा प्राप्त हुये कष्ट भोग कर भी चोरीकी आदतको नहीं छोड़ता है शराबी अनेक कष्ट सहकर भी शराब पीनेके लिये ही लाला-यित रहता है। इसी प्रकार पिछली आदतोंके कारण जीवात्मा पुनर्जन्मके बन्धनमें पड़कर निज स्वतन्त्रता से विमुक्त हो जाता है। जिस समय गर्भमें जीवात्मा का वास होता है उसे अपने पूर्व जन्मका पूर्ण स्मरण रहा करता है। वह इस समय बद्ध होनेके कारण अत्यन्त कष्टका अनुभव करता रहता है। जन्मके समय जब गर्भाशयकी वायुसे वह गर्भ चला प्रगट होता है तब उसे मरण कालके कष्टसे भी कहीं अधिक कष्टका अनुभव प्राप्त होता है। इसी समय कष्टके कारण उसकी वह पूर्वजन्मकी स्मृति विस्मृत हो जाती है। आयुर्वेदमें जन्मके समय भी ज्वरकी उपस्थितिसे

* अचेतनं क्रियावच्च मनश्चेतयिता परः।

युक्तस्य मनसा तस्य निर्दिश्यन्ते विभोः क्रियाः ॥

(चरक शारी० स्थान अ. १)

÷ मोक्षो रजस्तमोऽभावात्.....। (चरकशा. अ. १)

श्लोक १४२)

+जन्मादौ निधने च महत्तमः।

(चरक चिकित्सा स्थान अ. ३ श्लोक २६)

विमोहित हो जानेकी बातका वर्णन है।

जाति-स्मरणका अर्थ जनन कालीन तथा तज्जन्म से पूर्वकी स्मृतिसे है। स्मरण एक मानसिक गति है। स्मृतिमें मन ही कारण है, और वह मन सदैव साथ ही रहा करता है। जो मन इस जन्ममें है वही पूर्व जन्ममें था और अग्रिम जन्ममें भी वही बना रहेगा। जब मन वही है तब भी पूर्व स्मृतियोंके न होने का कारण मानसिक अशुद्धि है। शुद्ध मन ही जाति स्मरणमें कारण है यह बात चरक संहिताके शारीर स्थानमें स्पष्ट तथा लिखी गई है। शुद्ध मन अपनी उत्कृष्ट गतिसे अनेक जन्मोंका स्मरण कर सकनेमें सर्वथा समर्थ है। चरक संहिताके विमान स्थान अष्टम अध्यायमें 'सत्त्वसार व्यक्ति स्मृतिमान होते हैं' इस बातके उल्लेखसे भी शुद्ध श्रेष्ठ सत्त्व (मन) द्वारा जाति स्मरणकी योग्यता होना सिद्ध होता है।

जाति स्मरण सिद्धावस्था है (इसे प्राप्त करनेका अधिकारी वही है जिसने अपने रज और तम इन मानसिक विकारोंको धोकर आत्म-तत्त्वके साथ मनको भी तदाकार बना दिया है। गीतामें श्रीकृष्णने अर्जुनके प्रति अपनी सर्वज्ञताकी ओर संकेत करते हुये 'बहूनि मे व्यतीतानि, जन्मानि तव चार्जुन। तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप'। यह कहकर आत्म-योगको जाति स्मरणमें कारण बताया है। रज और तम दोषोंसे आवृत मन एक मैले शीशेकी भांतिसे है जिसमें आत्माका प्रतिबिम्ब दृष्टिगत नहीं होता। आत्मा सर्वज्ञ है उसके लिये कोई वस्तु अज्ञेय नहीं है। मनको आत्म-तत्त्वसे संयुक्त करके जातिस्मर होना एक साधारण ही बात है।

जिन व्यक्तियोंके मन इतने स्वच्छ व निर्मल होते हैं कि वे अनेक कष्ट सहकर भी पूर्व-स्मृतिका त्याग नहीं करते वे ही पूर्व जन्मकी बातोंका स्मरण कर सकनेमें सफल हो पाते हैं जिनमें सात्त्विक अंश इतना अधिक है कि रज और तम उनमें अपना विस्मृति कारक प्रभाव नहीं डाल पाते वे जाति स्मरणकी योग्य-

* यदा तु तेनैव शुद्धेन संयुज्यते, तदा जातेरति-क्रान्ताया अपि स्मरति। स्मार्त्तं हि ज्ञानमात्मनस्तस्यैव मनसोनुबन्धादनुवर्तते, यस्यानुवृत्तिं पुरस्कृत्य पुरुषो 'जाति स्मर' इत्युच्यते। (चरक शा० स्था० अ० ३)

तामें संपन्न होते हैं। स्मरणकी प्रबलता मानसिक शक्तिपर आधारित है। जो व्यक्ति जितनी ही मनः शक्तिसे संपन्न होगा उतनी ही स्मरण-विषयक योग्यता उसमें दृष्टिगत होगी। साधारण सत्त्वके व्यक्ति तो आज सोकर कल तककी बात भूल जाते हैं फिर स्मरण जो कि एक महान् दीर्घ कालीन मानसिक निद्रा है उसके पश्चात्की बातें याद रखना किस प्रकार सर्व-साधारणके लिये संभव है?

तपश्चर्यासे मानसिक संशुद्धिकी सिद्धि-प्राप्ति सर्व-साधारणके लिये भी सुलभ है। अतएव अनेक प्रकारकी तपश्चर्यायें जो कि मनोनिग्रह पूर्वक मनः संशुद्धिकी साधनार्थ हैं उनके द्वारा इस दिशामें सफलता प्राप्त होना किन्हीं दशाओंमें संभव है। पुराणोंमें अनेक ऐसे आख्यान हैं जिनमें जाति स्मरणकी सिद्धिका वर्णन है। अब भी जहां कहीं इस योग्यतासे संपन्न व्यक्तियोंकी चर्चा सुननेमें आया करती है। यह सब आत्म-तत्त्वकी महानता की ओर संकेत करने वाले विषय हैं। जो व्यक्ति आत्माकी महानता सर्वज्ञताको स्वीकार करता है उसके लिये जातिस्मरण जैसी साधारण वस्तु कोई आश्चर्यका विषय नहीं बनती। किन्तु जिन्हें इस आत्माके ऐश्वर्यमें अविश्वास एवं संदेह है उसके लिये जातिस्मर व्यक्तिकी वर्णित कथायें एक मात्र उन्मत्त व्यक्तिके प्रलापके तुल्य ही हैं।

परमात्मा हृदय प्रदेशमें अवस्थित है। उसमें कोई भी बात छिपी हुई नहीं है। उसे जन्म जन्मांतरका स्मरण है किन्तु मनोदोषके कारण उसके इस सर्व-ज्ञत्वका आभास नहीं मिलता अतएव मनोदोष निवृत्ति पूर्वक उस परमात्म-तत्त्वसे ही तादात्म्य संबंध स्थापित करके जातिस्मरण जैसी सिद्धि प्राप्त करना संभव होगा। उस परमात्माकी मायासे मोहित जीव सब कुछ ही भूला हुआ है उसके अप्रकाशसे मनुष्य न जाने क्या क्या भूल सकता है। उस परमात्माका परम प्रकाश ही जीवको अपनी स्मृति दिलानेमें समर्थ है। परम प्रकाशमय परमात्म तत्त्वसे मनको लीन कर देनेसे फिर एक जातिस्मरण ही क्या? अपने परम-प्रिय पिता परमात्मासे जिस प्रकार वियोग हो गया है उसका भी स्मरण करके जीव उन्हींमें मिलकर परमानन्दको प्राप्तकर परमात्म स्वरूप ही हो सकता है।

मानसिक रोग प्रतिकार

लेखक—श्री द्वारकाजी मिश्र वैद्य ओड़ो (गया)

जैसे शारीरिक रोगोंके कारण वात, पित्त, कफ दोषोंको विकृति कहा है उसी प्रकार मानसिक रोगों जैसे हिस्टीरिया (योबापम्हार), अपतंत्रक, गदोद्वेग, उन्मादादि रोगोंके मूल कारण सत्व, रज, तम, प्रकृति गुणका प्रभाव विकृति ही कहा जासकता है। मनोनुकूल वस्तुके अप्राप्ति या विघातसे भी कुछेक मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं। यथा—

शरीरे जायते नित्यं वाञ्छा नृणां चतुर्विधा ।
बुभुक्षा च पिपासा च सुषुप्ता च रतिस्पृहा ॥

मन (चेतना) का स्थान कोई मस्तिष्क, कोई हृदय बताते हैं। आयुर्वेद समुद्र है जो मथन करता वही पता लगासकता है पर यहां अपना विचार प्रगट करता हूँ।

हृदयका स्वरूप शरीर शास्त्रके वर्णनमें मिलता है परन्तु मनके रूपका कहीं वर्णन नहीं किया गया है अतः अनुमान है कि हृदयसे केवल सम्बन्ध रखने वाला मन (चित्त) चलायमान है, और विद्युत् गतिसे भी ज्यादा चलकर क्षणमात्रमें लौट आता है इसका अनेक प्रमाण स्वप्नावस्थामें मिलता है। मेरे विचारसे मन सूक्ष्म तत्त्व है मनकी सिद्धि केवल अनुमान प्रमाणसे होती है जैसा कि गीतामें कहा है।

(इन्द्रियाणि पगण्याहुः इन्द्रियेभ्यः परमनः)

परन्तु भाव मिश्र ने—

मनो बुद्धीन्द्रियं विज्ञैः कर्मेन्द्रियमऽपि स्मृतम् ।

मनोऽधिष्ठितमेवेदमिन्द्रियं यत्प्रवर्तते ।

शरीर क्रियाओंके संचालन करनेवाला इन्द्रियोंके प्रेरक मन है। और (मनस्तु चिन्त्यमर्थः) चिन्ता विचार ऊहा तर्क वितर्क ध्यान संकल्पमें सभी मनकी क्रियाएँ हैं। इस तरह मन दृशा इन्द्रियोंपर अधिकार बाधक अभिय विषयत अपनको राकना विचार करना आदि

प्रभाव दिखाता है। कोई कहते हैं कि इन्द्रियों से भी अपने विषयका ज्ञान होता है, परन्तु यह नहीं। उस विषयमें मनही प्रधान है। उदाहरणार्थ महाभारत शान्तिपर्वसे लीजिए—(चक्षुःपश्यति रूपणि मनसा न तु चक्षुषा) आंख मनका सहारा लेकरही सभी को देखती है। मन किसीको देखनेके लिए व्याकुल है, परन्तु आंख रहते भी नहीं देखता, वही मन स्वप्नावस्थामें इच्छानुकूल पदार्थ देखता है। शरीर धारीके लिए जीवारमासे सम्बन्धित मन (चेतना) निराकार सूक्ष्म बुद्धीन्द्रियको ही कहा जाय। भावमिश्रका प्रत्यक्ष प्रमाण है। जो भी हो आप यहां सात्त्विक राजस तामस प्रकृति गुणके मन वाले मनुष्योंके लक्षण यहां बताता हूँ।—

सात्त्विक मन वाले पुरुषके लक्षणः—

आस्तिक्यं प्रविभज्य भोजनमनुत्तापश्च तथ्यं वचो,
मेधा बुद्धि धृति क्षमाश्च करुणा ज्ञानञ्च निर्दम्भता ।
कर्मानिन्दितमस्पृहं च विनयो धर्मः सदैवादरा-
देते सत्त्वगुणान्वितस्य मनसो गीता गुणा ज्ञानिभिः ॥

रजोगुणीमन वाले व्यक्तिके लक्षण—

क्रोधस्ताडन शीलता च बहुलं दुःखं सुखेच्छाधिका,
दम्भः कामुकताऽप्यलीक वचनं चाधीरताऽहं कृतिः ।
ऐश्वर्यादभिमानिताऽतिशयिता क्रोधोऽधिकश्चाटनं,
प्रख्याता हि रजो गुणेन सहितस्यैते गुणाश्चेतसः ॥

तमोगुणी मन वाले व्यक्तिके लक्षण—

नास्तिक्यं सुविषण्णताऽनिशयितालस्यं च दुष्टा मतिः,
प्रीतिर्निन्दितकर्मशर्षणि सदा निद्रालुतःहर्निशम् ।
अज्ञानं क्लिप्त सर्वतोऽपि सततं क्रोधांशता मूढता,
प्रख्याता हि तमोगुणेन मतिरायैते गुणश्चेतसः ॥

उपरि लिखित गुणत पता चलता है कि अन्तका

प्रभाव सीधे मनपर पड़ता है, भोजन भी सात्विक (देव) राजस, तामस (राक्षसी) कहा है दूध, घृत, पवित्र अन्न, फल हविष्य-देव भोजन है। मेवा मिष्ठान्न पुष्टिकर पदार्थ जितने भी हैं राजसी भोजनमें हैं। मांस, मदिरा, रसोन प्याज अखाद्य मोटे अन्नादि राजसी भोजन में हैं। गर्भावस्थामें सुपाच्य सुन्दर देव भोजन गर्भवतीको देनेकी व्यवस्था करें तो बालकके सीधे मनपर प्रभाव पड़ेगा।—

इस सम्पर्कमें एक किंवदन्ती कहानी उदाहरणार्थ कहता हूँ।

राजदरबारमें ब्रह्मचारी परमहंस बाबा रहते थे, यह परम ज्ञानी सात्विक बुद्धीन्द्रियके थे। दुर्भाग्यवश एक दिन रणवासके अन्दर बाबा गए, और राणी के सोनेका चन्द्रहार चुराकर चम्पत हो गए। बहुत खोज करनेपर भी चन्द्रहारका पता नहीं मिला कई रोज बाद बाबा राज्य दरबारमें स्वयं आकर राजाको चन्द्रहार दिया, और कहा कि मैं चुरा लेगया था लेलो। राजा विस्मित हुआ कि वस्तुतः बात क्या है राजाने यह विचार अपने दरबारमें मनोवैज्ञानिक बड़े बड़े पण्डितोंको बुलाकर कहा और इस प्रसंगका उत्तर पूछा। राजाके प्रश्नमें पण्डितोंने विचारकर बताया कि इसमें बाबाका दोष सचमुच नहीं है। यह आपके अन्न का दोष है। जो बाबाके मनपर कुप्रभाव पड़ा राजाने पता चलाया तो पता चल कि, उस रोज चोर डकेतसे छीना हुआ अन्न भण्डारमें खर्च हुआ था, वही अन्न बाबा खाए थे, अन्न पचकर निकला तो शुद्ध होकर उनका मन बदला और चन्द्रहार देकर प्रायश्चित्त किया।

रोगोंके प्रादुर्भावमें भी सीधे, मनपर प्रभाव पड़ता है एक उन्माद रोगीके मनो-वैज्ञानिक चिकित्सा पर कहानी सुनिए।

किसीने एक जुलाहेके सामने हजारों टन रूई दिखाकर कहा कि भारतमें अभी लाखों टन रूई आई है। यह सुन जुलाहा पागल होगया और बारम्बार कहता फिरे कि इतनी रूई कौन धुनेगा—एक वैद्यजीने कई गांठ रूई मंगाई, और उस जुलाहेके सामने जलाकर कहा कि रूईके गोदाममें आगलगई है। सब रूई जल गई। सब ने यही कहा। वस उसी रोजमे पागलपन छूट

गया। इस रोगीके मनपर रूईका प्रभाव पड़ा था।

इसी तरह इच्छित वस्तु नहीं मिलनेसे मनुखित होकर उनकी इन्द्रियां रोग रूपमें परिणित होजाती हैं।—जैसे—(भोजनेच्छा विघातस्यादङ्गमर्दः रुचिभ्रमः तन्द्रालोचन दौर्बल्यं धातु दाहो बलक्षयः अङ्गमर्द, ऐंठन, अरुचि, माथेमें दर्द, भ्रम, तन्द्रा आखेधस जाना, बलक्षीण, शरीर कृश होना, धातु दाह आदि लक्षण घटित होते हैं।

पिपासा—विघातेन पिपासाया शोषः कण्ठास्योर्म वेत् श्रवणस्यावरोधश्च रक्तशोषोहृदिव्यथा।

प्यास नष्ट करनेपर कण्ठका सूखना, श्रवण नाश रक्तसूखना हृदयमें पीड़ा आदि उपद्रव होते हैं।

निद्रा—निद्रा विघातो जम्भा च शिरो लोचन गौरवं। अंगमर्दस्तथा तन्द्रास्यादन्नापाक एव च।

निद्राका मनोनुकूल नहीं मिलनेसे शिरदर्द, ऐंठन जम्भाई, अजीर्ण, तन्द्रा, प्रभृति होते हैं।

रतिस्पृहा—मैथुनेच्छा विघातसे प्रमेह शरीर शिथिलता, मेदवृद्धि, प्रभृति दृश्य होते हैं। तथा युवतियों के सीधे मनपर इसका प्रभाव पड़ता है, और हिस्टीरिया (योषापस्मार) आदि भयंकर विमारी उत्पन्न हो जाती हैं।

यों तो उन्माद आदि मानसिक रोगोंका निदान माधवाचार्यने अपने ग्रन्थमें लिखा ही है, और उन्माद रोगोंकी चिकित्सा सर्वत्र आयुर्वेदीय ग्रन्थोंमें मिलती है फिर भी यहां मैं कुछेक मनसे सम्बन्धित रोगोंके लक्षण चिकित्सा लिखता हूँ।

योषापस्मार (हिस्टीरिया) अपतानक रोग है इसका लक्षण प्राप्त होनेसे कोई कोई वातरोग इसकी गणना करते हैं। जो भी हो, मैं तो प्रत्यक्ष लक्षण लिखता हूँ।

देह रक्त क्षयाद्वापि तथाधिक्यादजीर्णतः।

कोष्ठ बन्धान्मनो नाशादुद्वेगादथ शोकतः॥

पुष्पनाशश्च नारीणां जरायुविकृतेस्तथा।

दौर्बल्यादथनैष्ठुर्याद्भर्तुरप्रणयात्तथा॥

पच्युर्नाश भवाद् व्याधेर्योषापस्मार संज्ञके।

रोगो वै जायते घोरः मनोदेह प्रतापनः॥

योषितामेव बहुल्यादतएव भवेद्गदः ।
 अपस्मार समैश्चिह्नैः स्यात्संज्ञेयमीदृशी ॥
 नैवं संजायते व्याधिः, मध्य कालं सुनिश्चितः ।
 हृदये पीड़ा जुम्भा, सादोङ्गगां तथा च चित्तस्य ॥
 योषापस्मार गदे, सन्ति हि लिङ्गानि, चोक्तानि ।
 वैचिन्त्यं विभ्रान्तिं बुद्धेर्हीन्यश्च रोदनश्चापि ॥
 प्रलपनमुच्चैः क्रोशः ज्योतिर्द्विपस्त तथा भ्रान्तिः ।
 श्वासेकृच्छ्रत्वं, स्याद्गौद्रत्यम् कण्ठकोष्ठयोः पीडा ॥
 अथ प्राबल्यं शक्ते स्पर्शा सहत्वं, सदाङ्गपीडास्यात् ।
 वर्तुल वातोदरा दुदरादुत्थाय कण्ठमायान्ति ॥
 उद्वेष्टनमंगानां मूर्च्छां हृदिमुखे फेनम् ।
 योषापस्मारेऽस्मिन् लिङ्गानि जायन्ते ॥

रुग्णाको वायु दोषके कारण कब्जियत सदा बनी रहती है । तथा कोष्ठ कटिमें पीड़ा, पेटमें पीड़ा, शिरमें चक्कर आना, कमजोरी, रजोरोधके साथ दौराके समय कण्ठ अवरुद्ध होकर घुट घुट शब्द करता है । उसे प्रतीत होता है कि पेटमें एक गोला-सा उठकर कण्ठ तक रुक गया, कोईके हृदयमें पीड़ा, जुम्भा मूर्च्छा, मुंहसे फेन आना, एवं पागलकी तरह भूत भविष्य बातों को बकना, बुद्धिनाश, वैचिन्त्य, कभी हंसना, कभी काटना, शरीर कम्पन और भूत भविष्य बातोंको बोलना आदि अनेक लक्षण दृश्य होते हैं ।

ऊपर बताए निदानके कारणसे पता चलता है कि इस रोग होनेका मुख्य कारण मन है रोग प्रभाव सीधे मनपर पड़ता है । रजो रोध जरायुकी विकृति, वायु, तथा शोक, भय, आनन्द, इच्छित मनोकामनाका मिलना, सहवास, इच्छा विवातादि मुख्य कारण ।

चिकित्सा—रोग जिस कारणसे हुआ है प्रथम उस कारणकी ही चिकित्सा करें । बादमें रोग स्थयं शान्त हो जायगा ।

रजोरोधके कारणमें—रजः प्रवर्त्तनी बटी, रजः प्रवर्त्तक क्वाथके साथ दें । और वायुनाशके लिए रातमें पंचसकार चूर्णका प्रयोग गरमपानीके साथ करें, भोजनके बाद हिंवाष्टक और लवणभास्वर चूर्णका प्रयोग करें ।

जरायु विकृति या प्रदर—में बृहद् जीरा पाक

या पुष्यान्तग चूर्ण दें ।

शोक भयमें आनन्द—जैसे हो प्रेमालाप करें जिससे उसके कारणका समाधान हो, सुखद वचन भोजन शयन, दृश्य, शृङ्गारसे सदा सन्तोष करते रहें, और रुग्णाके इच्छाओंकी पूर्ति हो । ऐसा करना चाहिये, तब अश्वगंधारिष्ट भोजनके बाद पीनेको दें ।

वायु के कारण—वात कुलान्तक रस दें अपस्मारके लिए प्रधान दवा है ।

दौराके समय—नौसादर चूना कपूर एकत्र कर शीशोमें भरें, और नाकमें सुंघाकर होशमें लावे मुखपर पंखेसे हवा दें, पानीका, छीटा, माथेमें कोई ठण्डी शीतल तेल दें ।

जटामांसीके प्रयोग—जटामांसी कपूरकी नाकमें दें, या जटामांसीके क्वाथमें चन्दन, छोटी इलायची, असगंध मुनक्काके रसमें चीनी मिलाकर आसना लें यही रोज पीनेको दें ।

काम वेग—में सहवास करानेका प्रयत्न करें पुरुष उसे पूर्ण सान्त्वनासे प्रेमालाप कर इच्छित वस्तुकी पूर्ति करें ।

यदि विधवा को हिस्टीरिया हो तो औषधि यो वायु वेग को शान्त करें । यानी मखानाके मांड़में चूने देकर पीने को दें ।

गदोद्वेग—मनसोऽत्यन्त दौर्बल्या न्मस्तिष्कस्य संभ्रमात् । मिथ्याकल्पनिको व्याधिः गदोद्वेग इतीरितः । बिना व्याधिं व्याधिशंका गदोद्वेग इतीरितः पदार्थत्वादभावत्वाद पदार्थ गदः स्मृतः शरीरो मानसो वापिश्रमोभूयाद्वलक्षयः । आतन्तोस्तु विच्छेदः शोकः कांतिर्महाभयं । दौर्बल्यं वीजदोषश्च सत्वस्याभाव एवच, अपदार्थ गदस्यैते हे कथितानुधैः ॥ मानसिक रोगोंमें गदोद्वेग एक प्रमुख रोग है । मानसिक दुर्बलताके कारण मनमें सदा मिथ्या कल्पना बनी रहती है जिस रोगमें ये चिह्न प्रकट हों गदोद्वेग कहा जाता है । बिना रोगके रोग की शक्ति इस रोगके रोगीके शरीर मन थककर आशय और सम शिथिल पड़ जाते हैं और सदा शोक भयकी मि (शेष पृष्ठ २९४ पर देखें)

आपके बालोंका सौन्दर्य

श्रीमती सुमित्रा देवी अप्रवाल "विशारद"

बाल ही नारी सौन्दर्यके प्रतीक हैं। संसारकी ऐसी कौन सी स्त्री होगी जो अपने सिरके बालोंको लम्बे, काले, चमकीले न देखना चाहती हो। लम्बे बाल एक ओर जहां स्त्रियोंकी सुन्दरता बढ़ाते हैं वहीं दूसरी ओर लम्बे बाल सुख और सौभाग्यके चिह्न हैं। जिन स्त्रियोंके बाल जितने ही अधिक लम्बे होते हैं वे निश्चय ही भाग्यशाली होती हैं। बाल ही हमारे व्यक्तित्वको आकर्षक बनाते हैं। शरीरके प्रायः हर अंगमें बाल रहते हैं। और उनका अलग अलग महत्त्व है। स्त्रियोंके सिरके बाल ही उनके लिए सब कुछ हैं। बाल सिरके लम्बे और काले बालोंके तो नारीकी सज्जना तक नहीं की जा सकती। मनुष्य शरीरमें सिरसे लेकर पैर तक बाल, जाल सा बिछाए हुए हैं। हमें कहना है कि आप शरीरपर इन बालोंके होनेका सही अर्थ लगावें, किन्तु सत्य बात यह है कि बाल शरीरके विभिन्न अंगोंकी रक्षा करते हैं, अतः शरीरके किसी भी अंगके बाल निरर्थक नहीं हैं।

हमारे शरीरके बाल सर्दी और गर्मीके दिनोंमें बचा और समस्त शरीरकी रक्षा करते हैं और जाड़े की रमीसे बचाते हैं। बालोंके कारण ही हमें शीत ऋतु में अधिक ठण्डका अनुभव नहीं होता और गर्मीके दिनोंमें गरमी भी इसी कारण नहीं लगती। सिरके बालोंकी उपयोगिता तो विदित ही है किन्तु शरीरके अलग अलग स्थानोंपर भी बालोंका होना प्रकृतिकी दृष्टिसे आवश्यक है, क्योंकि सभी अंगोंमें उगे हुए बाल अंग विशेषकी रक्षा करते हैं। शरीरको नीरोग रखनेमें हमारी शरीरके बाल हमारी सहायता करते हैं।

शरीरके विभिन्न अंगोंमें जो बाल होते हैं उनको हमें पहचानना है, पलकोंके बाल, नाकके बाल, मूँछें, दाढ़ी इत्यादि बालोंसे जाना जाता है। भाँहें, गरमाक दिनोंमें पसीने

को आँखोंके अन्दर जानेसे रोकती है। पलकोंके बाल आँखोंमें किसी भी प्रकार कूड़ा करकट, रेत आदि नहीं जाने देते। इस प्रकार नाक और कानके बाल भी नाक और कानके अन्दर किसी भी प्रकारकी बाइरी गन्दगी एवं कीड़े मकोड़ेको जानेसे रोकते हैं। मूँछें पुरुषोंके व्यक्तित्व उनके मूँछों और दाढ़ीकी आकृतिसे जाना जा सकता है। मूँछके बाल मुँहके अन्दर तक धूल जानेसे रोकते हैं। साथ ही पसीना, नाककी गन्दगी और आँखोंसे निकले हुए आँसुओंको भी मूँछके बाल मुँहके अन्दर जानेसे रोकते हैं। दाढ़ीके बाल गर्दन और गलेकी रक्षा करते हैं। इसी प्रकार शरीर के अन्य अंगोंके बालोंसे भी उन उपयोगी अंगोंकी रक्षा होती है।

बालोंकी सुन्दरता और उनकी रक्षाके लिए हर समय सावधान रहना चाहिए। जरा सी असावधानी दिखानेसे सिरके बाल झड़ने और टूटने लगते हैं। बालोंकी चमक चली जाती है और बाल पकने लगते हैं। जिससे असमय ही वृद्धावस्थाके लक्षण दिखाई पड़ने लगते हैं। बालोंकी रक्षाके लिए बालोंकी सफाई के सम्बन्धमें महिलाओंको विशेष रूपसे जानना आवश्यक है। हमारे शरीरकी त्वचामें चिकनाई वाली ऐसी ग्रन्थियाँ होती हैं जो अपनी चिकनाई से बालोंका पोषण करती हैं। इसी चिकनाईके मिलते रहनेसे शरीरके अंगोंके बाल चिकने और कोमल रहते हैं और बालोंकी बढ़ोत्तरी होती रहती है। शरीरके अलग अलग स्थानोंकी ग्रन्थियोंमें शक्ति कम और अधिक रहती है जिससे कहीं बालोंकी वृद्धि तेजीसे होती है कहीं मंद गतिसे। बालोंका पोषण रक्तके द्वारा होता है। जब रक्तका दौरा ठीक प्रकारसे होता है तब बाल शीघ्रतासे बढ़ते हैं और चमकदार व

कोमल होते हैं।

आजकल सिर धोनेके लिए प्रायः साबुनका प्रयोग अधिकतासे किया जाता है। साबुनसे बाल धोनेसे बालोंकी चिकनाई धुल जाती है। फलस्वरूप बाल सूखने लगता है। बालोंको अधिक सोडा मिले साबुन या कपड़े धोने वाला साबुनसे न धोकर चिकने एवं मुलायम साबुनसे धोना चाहिए। चिकनी एवं काली या पीली मिट्टीसे बाल धोनेसे बाल चिकने और चमकीले धुलते हैं, बालोंको धोनेमें दही, रीठा, बेसन, आंवला और मुलतानी मिट्टीका प्रयोग लाभदायक एवं गुणकारी है। बाल धोनेके बाद बालोंको अधिक देर तक गीला न रहने देना चाहिए। बाल अधिक देर गीला रहनेसे टूटने लगते हैं। शीघ्र ही बालोंका पानी किसी मुलायम तौलिएके सहारे सुखा लें। और बालोंमें तेल लगावें जिससे बालोंकी चमक बनी रहे।

शरीर रक्षाके लिए बाल जब इतने उपयोगी हैं तब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या बालोंको काटना ही न चाहिए। इस सम्बन्धमें यह जानना आवश्यक है कि शरीरमें जितने अधिक बाल होंगे उतना अधिक रक्त उनके पोषणमें व्यय होगा। इसलिए शरीरके स्वास्थ्य और सौंदर्यको दृष्टिमें रखते हुए शरीरमें उतने ही बाल रहने चाहिए जितने आवश्यक हो। शरीरके बालोंकी सफाई समय समयपर होनी चाहिए। जहाँ तक बाल काटनेका प्रश्न है पुरुषोंके लिए सिर, मूँछ और दाढ़ीके बाल स्वास्थ्य और सुन्दरता दोनोंही दृष्टिसे कटवाना आवश्यक है। स्त्रियोंके लिए यह प्रश्न ही नहीं उठता स्त्रियोंके लिए तो सिरके बाल ही उनके लिए सुन्दरताका कोष है। सच बात तो यह है कि सिरके बालोंके कारण ही नारीके सौंदर्यकी वृद्धि होती है और लम्बे लम्बे काले बालोंके कारण ही स्त्री पूजनीय है। जिस स्त्रीके बाल जितने लम्बे, चमकीले और कोमल होते हैं, उसे अपने लम्बे बालोंपर गर्व और नाज होता है और ऐसा होना भी चाहिए।

बालोंकी जड़ोंको साफ करनेके लिए मुलायम कंधा और ब्रुशका उपयोग करना चाहिए। इस विधिसे बालोंको साफ करनेसे सिरमें पड़ी हुई

धूल, मिट्टी और जूँ आदि निकल जाती है, साथ ही बालोंका पोषण भी ठीक प्रकारसे होता रहता है। बहुत सी बहिनोंके बाल टूटने और झड़ने लगते हैं इससे उनके स्वास्थ्यपर और मनपर गहरा असर पड़ता है। बाल टूटनेके अनेक कारण होते हैं। बाल टूटनेके कारणोंमें प्रमुख कारण है खूनकी कमी। इस प्रकार बालोंकी जड़ोंमें रोगका होना, धूपमें हमेशा सिरको खुले रखना, बालोंका पोषण आदि रुक जाना भी बाल टूटनेके कुछ कारण हैं।

बालोंको लम्बे, काले, मुलायम और चमकीला बनानेके लिए प्रायः सभी बहिने हर समय उत्सुक रहती हैं। बालोंको लम्बे करनेके लिए अनेक उपाय हैं। निम्न लिखित इन कुछ उपायोंसे आपके बाल निश्चय ही लम्बे होंगे और बाल लम्बे होजानेपर आपका व्यक्तित्व एवं चेहरा इतना आकर्षक हो जायगा कि आप अपने लम्बे बाल देखकर स्वयं आश्चर्यमें पड़ जायेंगी। बालोंको लम्बे करनेके लिए आप इन विधियोंको तो जरा आजमाकर देखें।

नींबूके रसमें सूखे आंवलोंका चूर्ण पीसकर लेप करनेसे बाल काले मुलायम और चमकीले होते हैं। रीठा, शीकाकाई और आंवलेके पानीसे धोनेसे बाल चिकने और लम्बे होते हैं। शीकाकाईकी फलियां रात में पानीमें भीगनेके लिए डाल दें प्रातःकाल उठकर गुठलियाँ गला करके गूदा पीस ले, और अन्दाजसे पानी डालकर बालोंको धोयें, इससे बाल भी साफ होंगे और शीघ्रतासे बाल बढ़ना शुरू कर देंगे। एक कच्चा नारियल लेकर उसमें जितना पानी हो उसी अन्दाजसे चनेकी दाल रातमें भीगनेके लिए डाल दें। प्रातःकाल दाल फूल जानेपर दालको सुखाके बेसन बनाइए। इस बेसनसे सिरके बाल धोनेसे बाल चमकीले और लम्बे होते हैं। इसी प्रकार सूखा आंवला एक पाव, शीकाकाई आधा पाव, मेथी एक पाव, रीठा आधा पाव, इन चारों चीजोंको कूटकर एक डिब्बेमें भरकर रख लें। जिस दिन बाल धोने की इच्छा हो उनसे एक दिन पहले रातमें दो चम्मच यही पाउडर पानीमें भिगो दें। प्रातःकाल दस मिनट चूहेपर रखें। महीन कपड़ेसे छानकर उससे बालोंको

कर सुखा लेनेसे बाल लम्बे होते हैं।

कभी कभी हमारी ही असावधानीसे बालोंमें नदगी जमा हो जाती है जिससे जूँ और लीख पैदा हो जाती है। बालोंको साफ करने और जूँका नाश करनेके लिए निम्न उपाय करने चाहिए।

लहसुनको पीसकर उसका रस निकालकर नींबूके समें मिलाकर बालोंमें मलनेसे सिरकी जूँ, लीखका नाश होता है। इसी प्रकार शरीफोंके बीजोंको सुखाकर नारियलके तेलसे मिलाकर रातमें सोते समय बालोंमें लगाते और प्रातःकाल बालोंको कंधीसे ठीक कर ले। आप देखेंगी कि सिरकी सभी जूँ मर गई हैं और कंधीके साथ मरी हुई जूँ निकल जायेंगी। नींबूके रसमें लहसुनका पानी लगानेसे भी जुँए मर जाती हैं।

आपकी सुविधाके लिए यहां कुछ ऐसी विधियाँ दी जा रही हैं जिनका प्रयोग करनेसे बाल भी स्वच्छ होते हैं और बालोंका झड़ना रुक जाता है। बालोंके लिए नींबू विशेष गुणकारी है। नींबूका रस सिर में मलनेसे बालोंका झड़ना रुक जाता है। नींबूके रससे सिरके बाल धोनेसे बाल साफ होते हैं। नींबूका रस और चीनी लगाकर पाँच छः घण्टे बाद

सिर धो डालनेसे रूसी मूसी नष्ट होकर बाल स्वच्छ हो जाते हैं। नींबूके रसमें अरहरकी दाल पीसकर सिर धोनेसे सिरके बाल स्वच्छ हो जाते हैं। नींबूके ही रसमें बड़की जटा पीसकर बालोंमें मलनेसे और बालोंको धोकर नारियलका तेल लगानेसे बालोंका झड़ना रुक जाता है। और बाल लम्बे होते हैं।

बालोंमें चमेली और काले तिलका तेल लगानेसे बाल काले, लम्बे और घने होते हैं। सिंदूर, चूना तथा गोपी चन्दन मिलाकर बालोंपर लेप करनेसे बाल काले होते हैं। आंवला, ब्राह्मी और मोगराका घरमें बना हुआ तेल लगानेसे बालोंका गिरना रुक जाता है। शीकाकाई और आँवलेके पानीसे सिर धोकर बालोंमें शुद्ध गोलेका तेल लगानेसे सफेद बाल काले होने लगते हैं।

स्त्रियोंके लिए तो सिरके बालोंकी रक्षा जरूरी ही है। आप अपने काले और लम्बे बालोंको जितना ही संभालकर रखेंगी व स्वच्छताकी ओर ध्यान देंगी, उसीके अनुसार आपका व्यक्तित्व भी निखरता जायगा। नारीके सौन्दर्य रक्षाके लिए सिरके बालोंकी सफाई और देखभाल आवश्यक है।

— मानसिक रोग प्रतिकार —

(पृष्ठ २९१ का शेष)

कल्पना बनी रहती है कभी कहता है पेटमें सांप है कभी कहता है पेट बड़ा है कभी दुर्बल हूँ आदि अनेक मिथ्या रोग के भ्रममें आखिर रोगी हो जाता है। इसके पक्काशयमें पीड़ा, सतत ज्वर, पाण्डु नपुसंकता, कम्प, भ्रम, बलक्षयआदि काल्पनिक रोग भी होते हैं।

चिकित्सा—अपदार्थ गदोद्व गसे पीड़ित मनुष्य को सान्त्वना, आश्वासन, प्यार, प्रसन्नताकी बातें सेवा मनोनुकूल उपायोंसे चिकित्सा करें।

पाचक जठराग्नि बढ़ाने वाली वायुका अनुलोमन करने वाली पित्त नाशक अधिक कफ नहीं करने वाली

औषधिका प्रयोग करें।

वात रोगमें चाहे तैल घृतका उपयोग करें। भैषज्य रत्नावल्युक्त यवानी चूर्ण गन्धराज तैलका साथैमें प्रयोग उत्तम है।

अन्नाद्भवन्ति भूतानि—इस वाक्यसे सीधे मानवके मनपर अन्नका प्रभाव पड़ता है इसलिये सात्विक पौष्टिक भोजन संयम ब्रह्मचर्य शुद्धि अर्थात् पंचकर्मके किसी भी कर्मसे औषधि खानेके पहले देह शुद्धि प्रधान चिकित्सा है इसके अलावा सहानुभूति सन्तोष मित्रवत् उसके अनुकूल सुन्दर वचनमें प्रभावित करना आदि मानसिक रोग जन्य चिकित्सामें उपयोगी है।

मनके रोग और उनकी सामान्य चिकित्सा

लेखक:—वैद्य श्री जीवनरामजी वर्मा आचार्य, साहित्यायुर्वेदरत्न

श्री कल्याण चिकित्सालय केकड़ी (अजमेर)

मन क्या है ?

मन शरीरान्तरके साथ सम्बन्ध करने वाला है । अर्थात् जीवके शरीरान्तरके ग्रहणमें मन ही साधक तम है । जो जीवात्माके साथ नित्य रहता हुआ शरीरके साथ सम्बन्ध कराता है । जिसके देहान्तरमें जानेको तैयार होनेपर मुमूर्षुका स्वभाव विपरीत हो जाता है । इच्छा उलट जाती है । सब इन्द्रियां उपतप्त होती है-दुःखी होती है बल नष्ट हो जाता है । रोग भरपूर हो जाते हैं । जिससे न्यून होनेपर पुरुष प्राणोंको छोड़ देता है । अर्थात् मनके न रहनेपर मृत्यु हो जाती है । और जो इन्द्रियोंको विषयोंकी ओर प्रेरणा करने वाला मन कहाता है वह मन ही शरीरान्तरसे जीवात्माका सम्बन्ध करता है । जीवात्मा स्वयं निष्क्रिय है । मन की क्रियासे क्रियावान् होकर उसका देहान्तरसे सम्बन्ध होता है तभी गर्भोत्पत्ति होती है (शुद्धेशुक्रार्तवे सत्त्वः स्वकर्म क्लेश चोदितः । अष्टाङ्गहृदय)

यह मन एक है और अणु है अर्थात् प्रति शरीरमें एक मन है और वह अणु है ।

यदि मन अनेक हों अथवा महत्परिमाण वाला हो तो युगपत् अनेक ज्ञान होने चाहिये । पर ऐसा नहीं होता, अतः उसे अणु और एक ही मानना होगा । (महर्षि चरकने कहा है अणुत्वमथ चैकत्वं द्वौ गुणौ मनसः स्मृतौ ।) अतएव जिसके द्वारा एक कालमें एक ही विषयका ग्रहण होता है वह मन है । यथा-इन्द्रियों के विषय युगपत् इन्द्रियोंसे संयुक्त होते हैं, परन्तु एक क्षणमें किसी एक इन्द्रियके विषयका ज्ञान होता है, दूसरोंका नहीं, बहुधा यह देखा गया है कि आत्मा विभु है और उसका एक कालमें ही सबके साथ योग रहता है । यदि मनकी सत्ता स्वीकार न की जाय तो सर्वदा सब इन्द्रियोंका ज्ञान होता रहे । आत्मा इन्द्रिय

और विषयोंका संयोग होनेपर मनका सान्निध्य न होने से ज्ञान नहीं होता और आत्मा इन्द्रिय विषयोंका संयोग होनेपर यदि मनका सान्निध्य (इन्द्रियसे सम्बन्ध) भी हो तो ज्ञान उत्पन्न होता है । अतएव आत्मा इन्द्रिय और विषयका सन्निकर्ष होनेपर मनके दूर रहने पर ज्ञानका अभाव और पास रहनेपर ज्ञानका भाव यह मनका लक्षण है (लक्षणं मनसो ज्ञानस्याभावो भावएव च । सति ह्यात्मेन्द्रियाश्चानां सन्निकर्षे न वर्तते ॥ वैवृत्यामनसो ज्ञानं सान्निध्यात्तच्च वर्तते ।

इस मनको इन्द्रिय माना है और यह ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय दोनों है । आयुर्वेदमें इन्द्रियोंका सम्बन्ध पंच महाभूतोंसे पृथ्वी, अप, तेज वायु और आकाशसे माना है (भौतिकानि चेन्द्रियाणि आयुर्वेदे वर्णयन्तेः तथेन्द्रियाश्च । सुश्रुत) सांख्य दर्शनमें इन्द्रियोंकी उत्पत्ति अहंकारसे मानी है ।

सांख्य-अभिमानोऽहङ्कारस्तस्मात् द्विविध प्रवर्ततेः सर्गः ।
ऐन्द्रियः एकादशकस्तस्मात् पञ्च कश्चैव ॥

दोनों दर्शनोंमें मनकी उत्पत्तिमें यह भेद है परन्तु मनको अणु एक दोनों ही मानते हैं महर्षि चरक लिखते हैं अणुत्वमथ चैकत्वं द्वौ गुणौ मनसः स्मृतौ । मनके अणु होनेसे यह सब इन्द्रियोंमें अतिवेगसे पहुँच जाता है बिना मनके संयोगके इन्द्रिय ज्ञान नहीं कर सकती । (इन्द्रियेणैन्द्रियार्थो हि समनस्केन गृह्यते । कल्पते मनसा तूर्ध्व गुणतो दोषतोऽथवा ॥) अतएव ज्ञान प्राप्ति साधन होनेसे ही इसकी गणना इन्द्रियोंमें है ।

ज्ञानप्राप्ति—इन्द्रिय मन और बुद्धि इनका इन्द्रियके विषयके साथ संयोग होनेसे ज्ञान होता है । इसमें जो इन्द्रिय जिस भूतसे उत्पन्न होती है वह उसीकी ओर

गती है। आंख रूपकी ओर, नाक गंधकी ओर, कान
शब्दकी ओर, त्वक्-स्पर्शकी ओर, जिह्वा-रसकी ओर
खिंचती है। पहिले मनके साथ संयुक्त हुई इन्द्रिय
विषयके साथ मिलती है, वहाँसे वह ज्ञान लेकर
मनको देती है, मन बुद्धिको देता है, बुद्धि इसके
विषयमें निश्चय करती है (इन्द्रियेणैन्द्रियार्थो हि समन-
केन गृह्यते। कल्प्यते मनसा तू र्वं गुणतो दोषतो
पि ॥ जायते विषय तत्र या बुद्धि निश्चयात्मिका।
यवस्यति तथा वक्तुं कर्तुं वा बुद्धि पूर्वकम् ॥)
यह ज्ञान प्राप्ति की परम्परा है।

सांख्य दर्शनमें इन्द्रिय, मन, अहंकार और बुद्धि
की शृङ्खला ज्ञान प्राप्तिमें कारण है। इन्द्रिय अपना
ज्ञान मनको देती है; मन उसे अहंकारमें दे देता है,
अहंकार इसे देखता है कि इस ज्ञानसे मेरा क्या प्रयो-
जन है, मुझे इसे रखना चाहिये या नहीं; यह निश्चय
करके यदि वह उपयोगी होता है बुद्धिको दे देता है
और बुद्धि इनके अनुसार कार्य करती है। ज्ञान
प्राप्ति की यह दूसरी परम्परा है।

दोनों ही परम्पराओंमें यह सब कार्य एक
निमेषसे भी थोड़े समयमें होता है, जिस प्रकारकी एक
गुईसे हजारों पानके पत्ते एक क्षणमें छेद दिये जाते हैं,
यह पत्ते क्रमशः एकके पीछे एक करके छिदते
हैं, परन्तु समय नहीं लगता उसी प्रकार यह ज्ञान
शृङ्खला कुछ ही क्षणमें सम्बद्ध और विघटित होती
रहती है। यही कारण है कि हम भूलते हैं, और यदि
भी रखते हैं।

भूलना और याद रखना यह धर्म बुद्धिके बुद्धि
ही ही एक क्रिया भेद स्मृति है (स्मर्त्तव्यं हि स्मृतौ
स्थितिम्)। बुद्धिकी ही दूसरी क्रियाका नाम मेधा है
(मेधा प्रहण शक्तिः) जिससे ज्ञान होता है।
बुद्धिकी ही तरह मनकी एक क्रियाका नाम 'धृति' है,
जिसके द्वारा मनको नियंत्रित किया जाता है।

विषय प्रवणं सत्त्वं धृति भ्रंशान्न शक्यते।
नियन्तु महितादर्थाद् धृतिर्हि नियमात्मिका ॥
गीतामें बुद्धि और धृति दोनोंके तीन तीन
भेद कहे हैं ?

यथा-बुद्धिके ३ भेद—

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये।
बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥
यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च।
अथवावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी ॥
अधर्मधर्ममिति या मन्यते तमसावृत्ता।
सर्वार्थान् विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी ॥ गीता

धृतिके ३ भेद—

धृत्याययाधारयते मनः प्राणैन्द्रिय क्रियाः।
योगेन व्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥
यया तु धर्मं कामार्थान् धृत्या धारयतेऽर्जुन।
प्रसंगेन फलाकांक्षी धृतिः सा पार्थ राजसी ॥
यथा स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च।
न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी ॥
॥ गीता अ० १८ ॥

यह तीन गुण गीतामें बुद्धि और धृतिमें बताये
हैं जबकि महर्षि चरकने यही तीन गुण मनके बताये हैं।

मनके तीन गुण—सत्त्व, रज और तम ('त्रिविधं
खलु सत्त्वं शुद्धं राजसं तामसमिति' चरक) संग्रहमें
इनको महागुण कहा है। मन-बुद्धि और धृति इन
तीनोंको सत्त्व, रज और तम भेदसे गीतामें विवेचना
की है जिसका वर्णन ऊपर कर दिया है।

मनका सत्त्व, रज और तम, भेदसे वर्णन, चिकि-
त्साका विषय होनेसे आयुर्वेदमें ऋषि अत्रिपुत्रने तथा
काशीपति दिवोदासने किया है। सत्त्व, रज और तम
यह तीनों गुण प्रकृतिके साथ उत्पन्न होते हैं, यह गुण
आत्माको शरीरमें बांधते हैं। अर्थात् मन सात्त्विक
होगा या राजस अथवा तामस होगा (सत्त्व रजस्तम
इति गुणाः प्रकृति संभवाः। निबन्धन्ति महाबाहो
देहे देहिनमव्ययम् ॥) इनमें, जिन पुरुषमें, सत्त्व गुण
की अधिकता रहती है, वह सात्त्विक; रजोगुणकी
अधिकतासे राजस, और तमोगुणकी अधिकतासे ताम-
सिक मन कहा जाता है, वैसे तीनों गुण मनमें रहते
हैं, अधिकतासे उसे सात्त्विक, राजस या तामस कहते
हैं। (यद्गुणं चाभीक्ष्णं पुरुषमनु वर्त्तते सत्त्वं तत्सत्त्वं
मेवोपदिशन्ति मनयोगुण बाहुल्यानुशयात् ॥)

सत्त्व, रज और तममें रज और तम दो गुण दोष वाले हैं, जो कि सत्त्व मनको दूषित करते हैं (द्वौ पुनः सत्त्व दोषो रजस्तमश्च तौ सत्त्वं दूषयतः ॥ तत्र शुद्धम-दोषमाख्यातं कल्याणांशत्वात् राजसं सदोषमाख्यातं रोषांशत्वात् । तामसं स दोषमाख्यातं मोहांशत्वात् ।) जिस प्रकार कि वातादि दोषोंके परस्पर मिलनेसे तथा मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय इन छह रसोंके परस्पर मिलनेसे असंख्य भेद बनते हैं, उसी प्रकार इनतीनों महा गुणोंके मिलनेसे असंख्य भेद बन जाते हैं (तेषां तु त्रयाणामपि सत्त्वानामेकैकस्य भेदाप्रमरि संख्येयं तरतमयोगाच्छरीरं योनि विशेषेभ्यश्च न्योन्यानु विधानत्वाच्च शरीरमपि सत्त्व मनु विधीयते सत्त्वं च शरीरम् ॥) मनके अनुसार शरीर बनता है (जैसे शेरका मन राजस होनेसे उसका शरीर भी पैक्तिक क्रूरताका द्योतक होता है; गीधका मन तामसिक होनेसे उसका शरीर भी वैसा ही गन्दा रहता है) ।

सात्त्विक मनके सात मुख्य भेद हैं ।

यथा—१ ब्राह्म २ आर्ष ३ ऐन्द्र ४ याम्य ५ वारुण ६ कौवेर ७ गान्धर्व ।

ब्राह्म मन—पवित्र सत्य प्रतिज्ञा वाला, जितात्मा, समान बांटनेकी प्रवृत्तिका; ज्ञान-विज्ञान-वचन-प्रति-वचनसे युक्त, स्मृति शाली, क्रोध-काम-लोभ-मोह-ईर्ष्या हर्ष अमर्षसे दूर रहने वाला, तथा सब प्राणियोंमें समान बुद्धि वाला होता है ।

आर्षमन—यज्ञ-अध्ययन-व्रत-होम-ब्रह्मचर्यमें लगा हुआ, अतिथियोंकी पूजामें रुचिवाला, मद, मान, राग, द्वेष, मोह, लोभ, रोष, शान्त हो चुके होते हैं, प्रति-वचन धारण तथा विज्ञानसे सम्पन्न होता है ।

ऐन्द्रमन—ऐश्वर्य युक्त, दान प्रवृत्ति, यज्ञ करनेकी अभिरुचि, शूर, ओजस्वि, तेजस्वी, क्लिष्ट कर्म करने वाला, दूरदर्शी तथा धर्म, अर्थ, काममें अभिरत होता है ।

याम्य मन—कर्त्तव्य अकर्त्तव्यकी मर्यादामें रहने वाला (लेखास्थवृत्त) प्राप्तकारि, उरसाही; स्मृति शाली, ऐश्वर्यशाली, तथा राग द्वेष मोहसे शून्य होता है ।

वारुण मन—शूर, धीर-पवित्र, मलिनतासे द्वेष करने वाला, जल क्रीड़ामें अभिरुचि रखने वाला,

कठिन दुःख वाले कर्मोंसे अलग रहने वाला, तथा उचित स्थानमें कोप और प्रसन्नता करने वाला होता है ।

कौवेर मन—उचित स्थानमें मान, उपभोग करने वाला, साधन सामग्री-परिवारसे भरपूर, धर्म-अधर्म काममें लगा, पवित्र, सुखसे जीवन व्यतीत करने वाला तथा उचित स्थानमें कोप और प्रसाद करनेकी प्रवृत्ति वाला होता है ।

गान्धर्व मन—नृत्य, गीत, बजाना, स्तोत्र, श्लोक आख्यायिका, इतिहास पुराणोंमें रुचि रखने वाला कुशल, दत्त, गन्ध, माला, अनुलेपन, वस्त्र, विहार लगा रहने वाला तथा निन्दा न करने वाला होता है । इन सबमें ब्राह्ममन ही सबसे शुद्ध होता है ।

राजस मन छह प्रकारका होता है ।

यथा—१. आसुर २. राक्षस ३. पैशाच ४. संप्रैत ५. प्रेत ६. शाकुन ।

आसुरमन—शूर, चण्ड, निन्दा करने वाला ऐश्वर्यशाली, छद्मचारी, रौद्र, दया रहित (निष्ठुर) तथा अपनी प्रशंसा करने वाला होता है ।

राक्षसमन—किसीको सहन न करने वाला निरन्तर क्रोधी, मौकेपर चोट करने वाला (छिद्रप्रहा) क्रूर, आहारमें रत, भोगमें लिप्त (या मांसप्रिय) बहुत सोने वाला, बहुत परिश्रमी तथा ईर्ष्यालु होता है ।

पैशाच मन—बहुत खाने वाला, स्त्रीप्रकृति, रुचि साथ एकान्तमें रहनेकी इच्छा वाला, अशुचि, शुद्ध से द्वेष करने वाला, भीरु, डराने वाला तथा विवाह, आहार, विहारके स्वभावका होता है ।

सार्प मन—क्रोधी होनेपर शूर और क्रोध होनेपर डरपोक, तीक्ष्ण, तेजस्वी, बहुत परिश्रम करने वाला, डरकर चलने फिरने वाला तथा आहार विहारमें रत होता है ।

प्रेतमन—आहारमें रत, अतिशय क्लिष्ट आसुर शील युक्त, निन्दा करने वाला, समान बाँटकर उपभोगने वाला, अति लालची तथा कामचोर होता है ।

शाकुन मन—निरन्तर आहार विहारमें रत, काममें लगा, अस्थिर, असहिष्णु तथा असञ्जय होता है ।

तामस मनके ३ भेद ।

१. पाशव २. मात्स्य ३. वानस्पत्य । इनमें मोह-का अंश अधिक होता है ।

पाशवमन—शरीरको अलंकृत करनेकी इच्छा-से रहित, जड़ बुद्धि, निन्दित आचार वाला, आहार, मैथुनमें रत, (आहार निद्रा भय मैथुनं च सामान्य-मेतत् पशुभिर्नराणाम्) तथा सर्वदा सोनेकी इच्छा वाला होता है ।

मात्स्यमन—भीरु, आहारका लालची, ज्ञान रहित, अस्थिर, क्रोध और काममें रत, गतिशील सदा फिरने वाला तथा पानीकी चाह वाला होता है ।

वानस्पत्यमन—आलसी, केवल आहारमें ही रत तथा सम्पूर्ण ज्ञानसे रहित होता है ।

धृति भी मनका ही धर्म है—यथा धृतिके विचार से मन प्रवर सत्त्व, मध्यम सत्त्व और हीन सत्त्व वाला होता है । प्रवर सत्त्व वाले व्यक्ति बड़ी भारी पीड़ा में भी ऐसे प्रतीत होते हैं, मानो उनको कोई कष्ट नहीं है । इनमें सत्त्वगुणकी अधिकता रहती है ।

मध्यमसत्त्व वाले व्यक्ति—दूसरे व्यक्तियोंका दृष्टान्त या उदाहरण अपने सामने रखकर कि अमुक ने भी इस दुःखको सहा था, दुःखका सहन करते हैं ।

हीन सत्त्व वाले व्यक्ति—ये बड़े शरीरके होनेपर भी थोड़ी-सी बेदना में घरको उठा लेते हैं, पास वाले व्यक्तियोंको डरा देते हैं, शोक, भय, लोभ, मन वाले होते हैं; रौद्र, भैरव कथा या वार्ताको सुनकर अथवा मांस रक्त आदिको देखकर मूर्छित हो जाते हैं, विषाण हो जाते हैं अथवा मृत्यु हो जाती है । इस तरह मनके तीनों गुणोंको भेदों सहित वर्णित किया है ।

मनके विषय—चिन्त्य, विचार्य, उद्भूत, ध्येय, संकल्प तथा अन्य जो भी मनसे ज्ञेय हैं वे सब मनके विषय कहते हैं महर्षि चरकने कहा है—

चिन्त्यविचार्यमूढं च ध्येयं सङ्कल्पमेव च ।

यत्किञ्चिन्मनसोज्ञेयं तत्सर्वं ह्यर्थं संज्ञकम् ॥

जो कुछ सोचता है वह चिन्त्य कहाता है । जो कुछ गुण वा दोष द्वारा विचारता है वह विचार्य

कहाता है । जो कुछ व्यक्ति द्वारा तर्कणा करता है वह उद्भूत कहाता है । जिसका ध्यान किया जाता है वह ध्येय है । जो कुछ कर्तव्याकर्तव्यकी कल्पना वा निश्चय किया जाता है वह सङ्कल्प्य होता है ।

मनके कर्म—इन्द्रियोंमें अधिष्ठित होना, अहित विषयसे मनको रोकना, उहा और विचार ये मनके कर्म हैं । अनिष्ट विषयमें गया हुआ मन, मन द्वारा ही रोका जाता है । मनके कर्मके पश्चात् बुद्धि प्रवृत्त होती है ।

इन्द्रियाभिग्रहः कर्म मनसस्त्वस्यनिग्रहः ।

उहोविचारश्च, ततः परं बुद्धिः प्रवर्तते ॥ चरका ॥

अर्थात्—इसका अर्थ यूँ भी किया जा सकता है इन्द्राभिग्रह, इन्द्रिय निग्रह ये दो मनके कर्म हैं । रूप रस आदि किसी अभिलषित इन्द्रिय विषयके ग्रहणके लिये आत्मा द्वारा प्रेरित मन उस विषयकी इन्द्रिय का जो ग्रहण करता है वह इन्द्रियाभिग्रह कहाता है । इन्द्रिय निग्रहसे अभिप्राय इन्द्रियोंको विषयोंसे रोकना है गीतामें कहा है—

मनसैवेन्द्रियग्रामं विनयय्य समन्ततः ।

अथवा एक ही कालमें एक इन्द्रियसे सम्बन्ध और दूसरी इन्द्रियको अपने विषयके ग्रहणमें असमर्थ रखना ये दो कर्म हैं । अथवा विषय ग्रहणके समय इन्द्रियका ग्रहण और विषयका ज्ञान हो चुकनेपर उस विषयसे निवृत्ति ये दोनों कर्म मनके हैं । कर्मके पश्चात् तर्क, तर्कके पश्चात् विचार उसके बाद बुद्धि प्रवृत्त होती है ।

मनका स्थान—मनका कोई निश्चित स्थान नहीं, परन्तु गम्भीर निद्रामें जब यह मन कोई कार्य (संकल्प विकल्प) नहीं करता तब इसका स्थान हृदय होता है क्योंकि निद्रा तब ही आती है, जब मनका काम करना छोड़ देता है ।

यदा तु मनसि कलान्ते कर्मात्मानः कलमान्विता ।

विषयेभ्यो निर्वर्तन्ते तदा स्वपिति मानवाः ॥

मन ही चेतनाका स्थान है, चेतनाका स्थान हृदय (मस्तिष्ककी गुहा Ventricular) है ।

हृदयं चेतना स्थानमुक्तं सुश्रुत देहिनाम् ।
तमोऽभिभूते तस्मिन्तु निद्राप्रविशति देहिनाम् ॥
(हृत्प्रतिष्ठम् यजुर्वेद)

मनका स्थान हृदय गुहा है परन्तु उसका कार्य क्षेत्र सम्पूर्ण शरीर है, जिस प्रकार कि राजा एक स्थानपर रहकर सारे देशमें रहता है, सब वस्तुओंकी जानकारी रखता है। इसी प्रकार यह मन भी आपदा मस्तकका ज्ञान लेकर बुद्धिको देता है। मन ज्ञानको इन्द्रियोंके द्वारा प्राप्त करता है और उससे प्राप्त ज्ञानको बुद्धिमें पहुँचा देता है।

मनके रोग

मनको दूषित करने वाले रज और तम ये ही दो दोष हैं। (द्वौपुनः सत्त्वदोषौ रजस्तमश्चतौ सत्त्वं दूषयतः) यह दूषित इस प्रकार होते हैं कि इच्छित वस्तु के न मिलनेसे और अनिष्ट वस्तुके प्राप्त होनेसे मनके अन्दर रोग उत्पन्न होते हैं। इन रोगोंमें शोक, हर्ष, भय, क्रोध, लोभ भी गिने गये हैं (इसलिये सुश्रुतमें शोक शल्यको हर्षसे निकालनेका उपदेश है, "शोक शल्य हर्षेण" सुश्रुत सू. अ. २७/५ रजस्तमश्च मानसौ दोषौ, तयोर्विकाराः काम क्रोध लोभमोहेर्ध्यामानशोकचित्तोद्वेगभयहर्षादयः ॥ चरक) रज और तमका नियत सम्बन्ध रहता है इनको पृथक् नहीं किया जा सकता, परन्तु सूत्र गुणको बढ़ाकर या दूसरे गुणकी वृद्धि करके शेष दोको कम किया जा सकता है।

धी, धृति, स्मृतिके विभ्रंशसे जो रोग होते हैं उनकी भी गणना मानसिक रोगोंमें अर्थात् मन सम्बन्धी रोगोंमें ही होती है। क्योंकि इनके विभ्रंश से भी दुःख उत्पन्न होता है और दुःख ही रोग है।

बुद्धिका विषम रूपमें लगाना, नित्यको अनित्य, अनित्यको नित्य, हितकारी वस्तुको अहितकारी, अहितकारीको हितकारी, गिनना बुद्धि भ्रंश है क्योंकि समान बुद्धि सबको भली प्रकार देखती है (यथा धर्ममधर्म च कार्यमेव च । अथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी गीता अ० १८)

धृतिके भ्रंश होनेसे विषयोंमें लगा हुआ चित

अहित वस्तुओंसे नहीं हटाया जा सकता, क्योंकि धृति ही नियामक होती है। रज और मोहसे आवृत्त होनेके कारण जिसकी स्मृति तत्त्व ज्ञानमें च्युत हो जाती है उसे स्मृति भ्रंश कहते हैं, क्योंकि स्मृतिमें स्थित ज्ञानका स्मरण होना ही चाहिये। बुद्धि, धृति स्मृतिके भ्रंश होनेसे मनुष्य जो अशुभ कार्य करता है, उसको प्रज्ञाका दोष या प्रज्ञापराध कहते हैं।

उन्माद और अपस्मारमें स्मृतिनष्ट हो जाती है मनको अन्य विषयमें लगानेसे स्मृति नष्ट हो जाती है उस वस्तुमें आसक्ति करनेसे स्मृति दृढ़ होती है इससे गीतामें कहा है—स्मृतिके नाशसे बुद्धिका नाश होता है; और बुद्धिके नाशसे मनुष्य नष्ट होजाता है।

मानसिक रोगोंका लाक्षणिक ज्ञान

मानसिक रोग शारीरिक रोगोंकी भांति स्पष्ट नहीं होते हैं। मानसिक रोग केवल एक क्रियाको ही नहीं बताता, परन्तु वह सम्पूर्ण तंत्र-मानसिक क्रियाको सूचित करता है। मानसिक रोगोंमें मुख्य लक्षण ज प्रायः होते हैं: वे आचरण सम्बन्धी, ज्ञान सम्बन्धी, क्रिया सम्बन्धी, विचार सम्बन्धी, संज्ञा सम्बन्धी स्मृति (Memory) और वैयक्तिक (Personality) होते हैं।

१. आचरण सम्बन्धी—अतिशय चेष्टाधिक (१) परिसर्पणमक्षिभ्रुवामोष्ठासहनु हस्तपाद विक्षेपण (२) अमर्त्यवाग् विक्रमवीर्य चेष्टा (३) स्मित हसि नृत्य गीतवादित्र प्रयोगश्चास्थाने । अर्थात् शून्य क्रिया या वाणीका बार बार प्रयोग, कार्यमें देरी करना य मन चुराना प्रति क्रिया रुचिके विपरीत इच्छा य कार्य (Negativism) विकृत मानसिक क्रियायें।

२. ज्ञान सम्बन्धी—अस्पष्टविचार (Confusion) अवद्ववाक्त्वम स्वप्न या नींदकी स्थितिमें रहना (वाक्चेष्टितमन्दमरोचकश्च नारी विवक्त प्रियताति निद्रा) प्रलाप, स्थान, समय तथा व्यक्तिको ठीक प्रकार न पहिचानना, निद्रामें रहना होता है।

३. क्रिया सम्बन्धी—(Emotion) मानसिक या शारीरिक चेष्टाओंका उद्वेगके कारण बढ़ जान दर्द या बेचैनी, शारीरिक कष्टका अनुभव अज्ञा होना, उदासी, बेचैनी उत्तेजनाका अभाव-शून्य

(Ahrthy) उच्छेजनाकी अस्थिरता ।

४. विचार सम्बन्धी—(Thought) झूठा विश्वास जो कि युक्तियोंसे दूर न किया जा सके (Delusion) एक झूठा विचार जो कि प्रारम्भसे ही मनमें घर बनाये रहता है ।

५. संज्ञा सम्बन्धी—झूठा भ्रम (Hallucination) अलीकज्ञान जैसे रज्जूको साँप समझना ।

मानसिकरोग—भीरु, रज और तमसे पीड़ित मन वालोंमें प्रवृद्ध-उद्भ्रान्त दोष वालोंमें, आहार विधिको ठीक प्रकारसे पालन न करने वालोंमें, अनुचित आहारके सेवनसे, तंत्र प्रयोगको विषम रूपमें करनेसे रोगके कारण, कृश शरीरवाले पुरुषोंमें, मनके चलायमान रहनेके कारण, काम, क्रोध, लोभ, मोह, शोक, ईर्ष्या भयसे पीड़ित मन वाले पुरुषोंमें, चोट लगनेसे, मनमें किसी प्रकारका आघात पहुँचनेसे, बुद्धिके चलायमान होनेसे बढ़े हुये दोष कुपित होकर, हृदयमें पहुँचकर मनोवह स्रोतोंमें स्थित होकर स्मरण शक्तिका विनाश कर मानसिक रोगोंको उत्पन्न कर देते हैं इस प्रकार यह मानसिक रोगोंकी सम्प्राप्ति है ।

मानसिक रोगोंकी प्रयोगिक परीक्षा—

मानसिक रोगोंकी जानकारीके लिये रोगीकी समस्याको यथा शक्ति उसके ही मुखसे सुनना चाहिये। इसके लिये रोगीसे वकीलकी भाँति उच्छेजना पूर्वक प्रश्न पूछकर प्रेरणा देनी चाहिये । रोगोंकी वैयक्तिक विमारीकी जानकारी सम्बन्धियोंके द्वारा जाननी चाहिये । बातचीतमें रोगी अपने मित्र या सम्बन्धियोंसे सहयोग करता है या नहीं यह जानना आवश्यक है । सम्बन्धियोंके कथनको भी जब तक सत्य प्रमाण प्राप्त नहीं होजावे तब तक सत्य नहीं समझना चाहिये । मानसिक और शारीरिक रोगोंका परस्पर अति घनिष्ठ सम्बन्धित होनेसे शारीरिक परीक्षा भी आवश्यक है ।

सबसे प्रथम यह आवश्यक है कि रोगीके लक्षणों की जानकारी प्राप्ति की जाये और फिर प्रारम्भसे रोगकी वृद्धिका ज्ञान करना चाहिये । तथा यह भी ध्यान देना चाहिये कि रोगीकी वर्तमान अवस्था उसकी पीछे

की अवस्थासे कितनी भिन्न है, उसके वर्तमान आचरण में पिछले आचरणसे कितना अन्तर हुआ है । एक रोगीका आचरण जो कि उसमें पागलपनको सूचित करता है, दूसरेमें वे आदत लक्षणोंमें मिलती है । एक रोगी बैठा हुआ तिनके तोड़ता है या नखोंको मुखसे काटता है, दूसरे व्यक्तिमें इनकी आदत मिलती है । उसकी चेष्टाओंमें भी कुछ विशेषता दिखाई देती हो तो उसे भी ध्यानमें लाना चाहिये । अतिक्रियाशीलता, तेजी, उदासी, आत्म हत्याकी चेष्टा या रुचि तो नहीं है । किसी विशेष कारणसे तो वह मानसिक रोग उत्पन्न नहीं हुआ है जैसे घरेलू कलह, वित्तनाश, व्यापारमें हानि आदि तो नहीं है घरेलू या पारिवारिक इतिहास गहराईमें जानना चाहिये; विशेषतः मद्यपान औषध सेवन, पारिवारिक प्रवृत्ति किसी विशेष क्रिया के लिये, विशेष प्रकारका वैयक्तिकत्व, तथा मानसिक व्यथाकी अन्य साक्षियाँ भी देखनी चाहिये । रोगीके वैयक्तिक जीवनकी जानकारी शरीरकी वृद्धि, पोषण, स्कूलका जीवन, आचरण वर्त्तन; कार्यक्षमता और आदतों का भी जरूर पता लगाना चाहिये, बाह्यपरिस्थितियोंकी भी जानकारी करनी चाहिये । इसके पीछे घरेलू भगामाता पितासे पृथक् होना, दूषित शिक्षा, धार्मिक तथा शारीरिक शिक्षण, यौवन काल हो तो उत्पादक ओषधी की सम्पूर्णता, काम चेष्टा आदि जानकारी भी करना चाहिये ।

रोगीके प्राथमिक वैयक्तिककी जानकारी करना चाहिये (१) क्या यह व्यक्ति मिलनसार प्रकृतिका था; सबमें मिल जाता था; अपनेको दूसरोंसे अलग तो नहीं रखता था (२) अपनेको दूसरोंसे पृथक् रखनेकी प्रकृतिका था; एकान्त पसन्द करता था; शर्मीला था दिनमें अकाशीय विचार बरतता था, मुखमें बोलता रहता था (३) सन्देशी प्रवृत्तिका था, वस्तुमें छिपे हुये भाव या अर्थको ढूँढनेकी प्रवृत्तिका था; संशयी; ईर्ष्या तो नहीं था । इन बातोंकी जानकारी करना मानसिक रोगोंमें बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि उपरोक्त जानकारी का ठीक ठीक ज्ञात होनेसे चिकित्सामें सुविधा प्राप्ति होती है । मानसिक रोगोंकी परीक्षामें सफलता बहुत कुछ इस बातपर निर्भर करती है कि चिकित्सक किस प्रकार रोगीसे पेश आना चाहिये । इसमें कभी

भी जल्दी या उद्वेग नहीं बरतना चाहिये। कभी भी असावधानी नहीं करनी चाहिये। रोगीसे प्रश्नोंका लगातार नम्बर ही नहीं बांध देना चाहिये। उसमें विश्वास पैदा करनेका यत्न करना चाहिये। वह चुप भी नहीं बैठ रहा इसके लिये सामान्य बातोंपर उससे बात चीत करना चाहिये। पश्चात् उनके विचार और अनुभवपर बातें करें और अन्तमें उसके अलीक भ्रम पर उससे वार्ता करनी चाहिये।

मानसिक परीक्षामें निम्न बातोंको ध्यानमें रखना चाहिये।

१. प्रथम सम्पर्कका लेखा रोगीके विषयमें रखना चाहिये। क्या वह बीमार दिखाई देता है। उसके चेहरेका भाव, वेश-भूषा, चाल-ढाल तथा इङ्गित चेष्टा पर दृष्टि डालनी चाहिये (आकारैरिङ्गतैर्गत्मा चेष्टया भाषणे न च। नेत्रवध्नत्र विकारेण लक्ष्यतेऽन्तर्गतं मनः॥) उसमें अमानुषीय चेष्टा या वर्त्तन तो नहीं है; वह छिपाता तो नहीं है, काममें देरी तो नहीं करता है (तूष्णीभाव) यदि वह सुस्त है, तो क्या वह प्रतिरोध भी करता है, क्या उसमें अक्षि चालन है वा नहीं, यह देखें।

२. इसके पीछे रोगीकी बातचीतको ध्यानमें लाना चाहिये; क्या उसकी बातचीत स्पष्ट है; अथवा फिरंग सर्वाङ्गघात जैसी स्पष्ट है। इसमें उसकी मानसिक विचार धाराको देखना चाहिये। उसके उत्तर ठीक और सम्बन्धित है वा नहीं? क्या वह बहुत बोलता है; क्या एक प्रकरण या प्रसङ्गको छोड़कर दूसरेपर आजाता है (उड़ते विचार) क्या उसके अपने आविष्कृत शब्द है (Neologism) क्या वह चुप चाप निद्राकी अवस्थामें है।

३—रोगीके दर्शन मात्रसे उसकी दशा, हाव-भाव जानना चाहिये। उसके भावमें कोई असाधारणता तो नहीं है जैसे बिना कारणके हँसना या रोना तो नहीं है।

४—रोगीके साथ बात चीतका सम्बन्ध जोड़कर बहुत कुछ जाना जा सकता है। उसे स्वतन्त्रतासे बोलनेके लिये उत्साहित करें। अपने विचार या

निश्चयको दृढ़ करनेके लिये जिनके सम्बन्धमें रोगी आया हो उनके साथ सम्पर्क करें। क्या रोगीमें अलीक विश्वास है? रोगीमें उसके प्रति किये गये व्यवहारसे कैसी प्रतिक्रिया होती है। क्या वह संश-यातु प्रकृतिका है? क्या वह सोचता है कि उसके साथ बुरा वर्ताव हुआ है, क्या उसे प्रेरित किया जाता रहा है? क्या उसे मनुष्य जल्दी प्रभावित कर सकते हैं? क्या वह दूसरेके विचारोंको पढ़ता है अथवा क्या वह चाहता है कि दूसरे लोग उसके विचार पढ़ें। क्या उसमें धन-विद्या या मानकी अधिकताका पागलपन है। क्या उसमें नैराश्यके भाव हैं—जैसे—रोगी समझता है कि मैंने बहुत बुरा किया, उसने बड़ा भारी पाप कर दिया, उसके लिये कोई आशा सूत्र नहीं बचा, उसका जीवन व्यर्थ है। उसमें उदासीनताका भाव है। उसमें झूठे विश्वास या झूठे भ्रमकी साक्षियां हैं? रोगी अपनी चेष्टाओं या क्रियाओंको कहां तक नियन्त्रित कर सकता है? क्या वे अन्दरसे उत्पन्न होती हैं अथवा बाह्य कारणों से प्रभावित होनेपर उत्पन्न होती हैं। झूठे विश्वास झूठे भ्रमकी मात्राको जाननेके लिये, उसके प्राथमिक मानसिक स्थितिको समझना चाहिये। यदि स्मृति भ्रंशका दोष हो तो उसे भी ध्यानमें लाना चाहिये। उसका सामान्य ज्ञान, वर्तमान कालीन या भूतकी बातोंकी याद उसको है वा नहीं? क्या वह यह अनुभव करता है कि वह रोगी है, उसको चिकित्साकी जरूरत है, उसमें चिकित्सा करवानेकी रुचि है? यदि ऐसा है तो यह शुभ लक्षण है। अन्तमें रोगीकी पहिचान और साध्यासाध्यताका निर्णय करते हुये चिकित्साका निश्चय करना चाहिये।

मानसिक रोगोंकी चिकित्सा

यदि प्रत्येक मानसिक रोगकी चिकित्साका वर्णन करूं तो संभव है पाठकगण ऊब उठेंगे तथा संपादक महोदय भी प्रकाशन करवानेमें अवश्य अरुचि प्रगट करेंगे, क्योंकि पूर्व ही लेख विशेष विस्तार पूर्वक अङ्कित करनेके प्रत्ययसे अधिक मात्रामें हो गया है इसलिये मानसिक रोगोंका, सामूहिक सामान्य उपचारको ही प्रधानता देना उचित समझकर,

उल्लेख कर रहा हूँ।

सामान्य उपचार—मानसिक रोगोंके लिये सामान्य उपचारोंको भी चार भागोंमें विभक्त किया है

१. शारीरिक उपचार २. मानसिक उपचार
३. कार्य सम्बन्धी उपचार और ४. समाज सम्बन्धी उपचार।

१. शारीरिक उपचार—इसमें उत्तेजना अनिद्रा आदिको रोकना, अपनेको नुकसान पहुँचानेसे बचाना, योग्य आहार तथा देर तक निद्रावस्थामें रखना चाहिये।

केवलं सिद्धमेभिर्वा पुराणं पाययेद् घृतम् ।
पाययित्वोत्तमां मात्रां श्वश्रं रुन्ध्याद् गृहेऽपि वा ॥
विशेषतः पुराणं च घृतम् तं पाययेद् भिषक् ।
त्रिदोषन्नं पवित्रत्वाद् विशेषाद् ग्रहमोक्षणम् ॥

जल चिकित्सा तथा उपस्थित शारीरिक दोषकी योग्य चिकित्सा करनी चाहिये।

२. मानसिक उपचार—इसे चिकित्सकको प्रति-दिन व्यवहारमें लाना चाहिये। इससे परिणाम, रोगी और चिकित्सकके पारस्परिक सहयोग श्रमपर निर्भर रहता है। इसमें चिकित्सकका प्रभाव मुख्य वस्तु है। रोगीमें यह विश्वास बिठा देना चाहिये कि उसका रोग साध्य है इसके लिये उसमें पुनः विश्वास प्रेरणा, निर्देश और विश्लेषण विधिको प्रायः व्यवहार में लाना चाहिये।

पुनः विश्वास—रोगीकी समस्याओं और लक्षणों के विषयमें स्वतन्त्रतासे विशद विचार विनिमय करना चाहिये। उसे समझाना चाहिये कि किस प्रकारसे यह लक्षण बढे हैं; उनके दूर होनेमें विश्वास दिलाना चाहिये। इस प्रकारके विचार विनिमयसे पर्याप्त सुधार होता है।

प्रेरणा—इसमें रोगीको यह विश्वास कराया जाता है कि उसमें अवयव सम्बन्धी कोई विकार या शिकायत नहीं है; उसमें किसी भूत या वाह्य ग्रहका प्रभाव नहीं है, जिसके प्रभावसे उसमें ये लक्षण उत्पन्न हुये हैं। लक्षणोंके कारणोंकी चिकित्सा करनेका यत्न नहीं करना चाहिये।

निर्देश—इसमें रोगीके अन्दर अच्छे विचार उत्पन्न करने चाहिये, इससे मानसिक विकारोंमें सुधार होता है। ये विचार या निर्देश रोगीमें उस समय लाभकारी होते हैं जब रोगी नींदसे उठा हो अथवा निद्रावस्थामें हो।

मानसिक विश्लेषण—(Psycho analysis)

इसमें रोगीकी सूक्ष्म जानकारी की जाती है; इसके लिये उसका पहिलेका चरित्र आचरण, बारीकी से अभ्यास करना पड़ता है, इसके लिये विशेष उपाय है—स्वप्नोंका विश्लेषण; हिपनोसिस; तथा उसका मिलना जुलना। रोगीको अपना प्रत्येक विचार या शब्द जो कि उसमें परीक्षाके समय उत्पन्न हो-चिकित्सकको कहना चाहिये, जिससे कि रोगीके जीवनमें छिपा कोई मानसिक आघात या कारण जाना जा सके। फ्रायडने विश्लेषण किया है कि उन्मत्त चित्तता में काम वासना असाधारण रूपमें मिलती है (नारी-विविक्त प्रियता रहस्य कामता) उसका विचार है कि स्वप्न निश्चित रूपमें रोगीके मानसिक विचारोंके द्योतक होते हैं।

पूर्वं देहानुभूतांस्तु भूतात्मा स्वपतः प्रभुः ।

रजो युक्तेन मनसा गृह्णात्यर्थान् शुभाशुभाम् ॥

॥ सुश्रुत ॥

जुगने एक नई 'शब्द समूह' विधिका आविष्कार किया है, इसमें भिन्न भिन्न अर्थ, रुचि तथा प्रकृतिके एक सौ शब्द चुने हैं, उनको रोगीके सामने बोला जाता है; और फिर देखा जाता है कि किस शब्दसे रोगीमें उत्तेजना या अन्य चेष्टा होती है। जिन शब्दोंसे एक जैसी क्रिया अधिक होती है, उनसे रोगीकी प्रवृत्तिका ज्ञान होता है, शब्द उच्चारणके पीछे तात्कालिक भावको या क्रियाको स्टॉपवाच (Stopwatch) से देखी जाती है। इससे रोगीकी चिकित्सामें पर्याप्त सफलता मिलती है। जिन रोगियोंकी आयु ५० वर्ष से अधिक हो, अथवा जिनको अवयव सम्बन्धी रोग हो, उनमें मानसिक विश्लेषण चिकित्सा नहीं की जाती है; इसमें धैर्यकी बहुत जरूरत है। कई रोगियोंमें इस क्रियाके लिये कई महीनों पर्यन्त एक एक घण्टे रोगीके साथ बैठना पड़ता है। यद्यपि कुछ

रोगियोंमें इस चिकित्साके विषयमें सन्देह रहता है कई बार इससे हानि या विकृति उत्पन्न हो जाती है। इसलिये यह कार्य योग्य अनुभवी व्यक्तिके द्वारा ही हो सकता है। (आयुर्वेदमें जो विनासन, विस्मापन आदि जो उपाय बताये हैं। उनका समावेश इसी चिकित्सामें हैं।

तजनत्रासनं दानं सान्त्वनं हर्षणं भयम्।

कार्य सम्बन्धि उपचार—शारीरिक या मानसिक विकारोंके लिये चिकित्सककी देख रेखमें कार्य करना, नई आदतें उत्पन्न करना कई अवस्थाओंमें विशेष लाभदायक होती है; इससे अधिक विकृति रुक जाती है। कार्य करनेसे मनुष्यका ध्यान रोगसे हटा रहता है, यह भी आवश्यक नहीं है कि वह कार्य ही करें किन्तु उसका मन हटाना चाहिये। जब रोगी काममें लग जाता है, तब स्वतः उसमें आत्म विश्वास उत्पन्न हो जाता है। यह प्रायः करके उदासी या निराशासे आक्रान्त रोगियोंके विषयमें बहुत लाभदायक है।

सामाजिक चिकित्सा—

मानसिक रोगोंमें बाह्य परिस्थितिका भी बहुत प्रभाव पड़ता है, इसलिये यह आवश्यक है कि प्रारम्भ में ही निर्णय कर लिया जावे कि रोगीकी चिकित्सा कहाँपर की जानी चाहिये। रोगीको आतुरालयमें कब प्रवेश करना चाहिये, इसके लिये कोई निश्चित नियम नहीं बनाये जा सकते किन्तु चिकित्सक रोगीकी साधारण या असाधारण परिस्थितिको देखते हुये नियम बना सकता है और सामाजिक चिकित्सा रोगीके लिये यदि किसी हेतु आतुरालयसे बाह्य ही उत्तम है। वह भी चिकित्सकपर ही निर्भर है।

आयुर्वेदमें—घृत और स्वर्णका योग मानसिक रोगों के लिये बहुत महत्व रखता है किन्तु यह घृत दस वर्षका प्राचीन अथवा औषधियोंसे सिद्ध होना चाहिये। औषधियोंसे सिद्ध घृतोंमें निम्न घृत उत्तम माने जाते हैं।

लशुनाय घृत, महाकल्याणक या कल्याणक घृत, ब्राह्मी घृत, पंचगव्य घृत।

स्वर्णके योगोंमें—योगेन्द्र रस, बृहत्वातचिन्तामणि, चतुर्भुज रस, चिन्तामणि चतुर्मुख तथा रसरज रस आदि दिये जाते हैं।

अभ्यङ्गके लिये—मध्य नारायण तैल, हिम सागर तैल तथा श्री गोपाल तैल मलना उत्तम है।

इसके सिवाय—शंखपुष्पी, बच, जीवन्ती, सर्प-गन्धा, भृङ्गराज, ब्राह्मी, बच, कूठ, पुष्करमूल आदि द्रव्य भी प्रायः करके सेवन करवाये जाते हैं।

आयुर्वेदमें मानसिक रोगोंके लिये—पञ्चापराध के लिये निम्न उपचार भी बताया है।

सतामुपासनं सम्यगसतां परिवर्जितम्।

व्रतचर्योपवासश्च नियमाश्च पृथग्विधा ॥

धारणं धर्मशास्त्राणां विज्ञानं विज्जने रतिः।

विषये स्वरतिर्मौनौ व्यवसायः पराधृतिः ॥

कर्मणामसमारम्भः कृतानां च परिक्षयः।

नैष्कर्म्यमनोऽङ्काः संयोगे भय दर्शितम् ॥

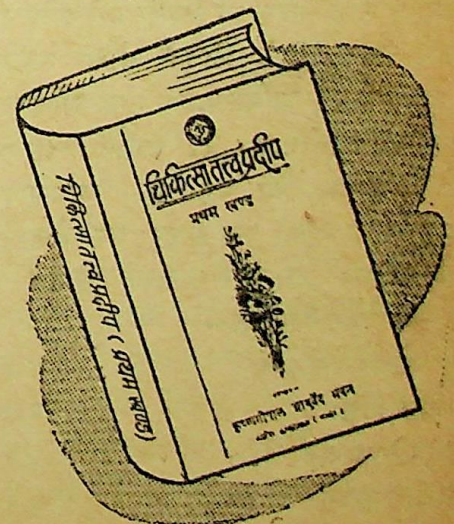
मनो बुद्धि समाधानमर्थतत्त्व परीक्षणम्।

तत्त्वस्मृतेरुपस्थानात् सर्वमेतत्प्रवर्तते ॥

स्मृति सरसेवनायैश्च धृत्यन्तेरुपलभ्यते।

स्मृत्या स्वभावं भावानां स्मरन् दुखात्प्रमुच्यते ॥

अब इसके पश्चात् इतना ही लिखकर लेखको अन्तिम रूप देता हूँ कि मानसिक रोगीकी चिकित्सा करते समय, चिकित्सकको भी चाहिये कि वह मानसिक रोगीसे सर्वदा सावधान रहते हुये चिकित्सा करें।



Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and Gangotri सन्निपातज्वरकी सफल चिकित्सा

॥

लेखक—वैद्य रामनिवास शर्मा, वैद्याचार्य, आयुर्वेदरत्न, साहित्य सुधाकर
चिकित्सालय इंजार्ज कालेड़ा-कृष्ण गोपाल (अजमेर)

रुग्णा नाम—सहोदरा देवी, आयु—१७ वर्ष शय्या सं. ६
स्थान—आमली, रोग—सन्निपात ज्वर ।
प्रवेश तिथि ११-८-६४ । निर्गम तिथि २८-६-६४
परिणाम—पूर्ण स्वस्थ ।

पूर्वरोगवृत्त—दिनांक ११-८-६४ को मध्याह्न १२ बजेके पश्चात् उक्त रुग्णाके अभिभावक चिकित्सालयमें रुग्णाको लेकर आये, औषधालय बंद हो चुका था । अतः मेरे घर आये और आद्योपान्त रोगका वृत्तान्त कहा । मैंने तुरन्त चिकित्सालय खुलवाया और उसको देखा रुग्णाको तापमान १०४° था ६ दिनसे तीव्र मलावरोध था, कुछ लेनेपर वमन प्रायः होती था, तृषा बार-बार लगती थी । रुग्णा ज्वराक्रान्तसे ८ दिन पूर्वसे पीड़ित थी, वक्षःस्थल पर गुलाबी रंगकी स्वल्प पिट्टिकाएं कहीं-कहीं दिखाई देती थीं । नाड़ीकी गति तीव्र व पित्तप्रधान थी, शिरोवेदना अतिशय थी । रुग्णाको बैठे रहना पसन्द नहीं था, बैठनेपर चक्कर आते थे । वर्षाकालीन समय था, प्रकृतिका ठण्डा प्रकोप था चारों ओर बादल घिरे हुये थे, थोड़ी-थोड़ी पानीके बूंदें गिर रही थीं, शीतल वायुका प्रकोप अधिक था, ऐसी अवस्थामें समीपस्थ ग्रामसे रुग्णाको तांगे में लेकर आये थे, रुग्णाकी स्थिति अति शोचनीय थी । प्रारम्भमें उदर शुद्धिके लिये २ औंस ग्लिसरीनकी बस्ति लगवाई । ३ मिनिट पश्चात् ठीक शौच हुआ और निम्न औषध व्यवस्थाकर स्त्री वार्डमें प्रविष्ट करने हेतु रुग्णाके अभिभावकोंको कहा गया अभिभावक अति आग्रह पूर्वक रुग्णाको दवा लेकर घर लेजाना चाहते थे, मैंने बरबस उनको समझाकर वार्डमें रुग्णाको रक्खा —औषध व्यवस्था—

| | |
|------------------|---------|
| सूतशेखर रस तं० १ | १ रत्ती |
| प्रवाल पिष्टी | २ रत्ती |
| मधुरान्तक वटी | ४ रत्ती |
| गिलोय सत्व | ४ रत्ती |

११ रत्ती की १ मात्रा

ऐसी १-१ मात्रा २-२ घंटेमें शहदके साथ देने हेतु वार्ड बाँयको कहा गया । ४ घण्टे पश्चात् फिर उक्त रुग्णाको देखा गया तो तापमान १०५° हो चुका था । दिनांक ११-८-६४ सायं ५ बजे—

| | |
|------------------|---------|
| संतापशामक मिश्रण | १ माशा |
| प्रवाल पिष्टी | २ रत्ती |
| मुक्ता पिष्टी | ३ रत्ती |

१ माशा २ ३ रत्तीकी १ मात्रा

ऐसी १-१ मात्रा १-१ घण्टेमें मधुके साथ दी गई, गोघृतका शिर, पादतल एवं हथेलियोंपर कांश्यपात्रसे निरन्तर २ घंटे तक मालिश करवाई गई । स्त्री वार्डकी आजू बाजूकी खिड़कियाँ बन्द करवादी गई, एक कम्बल और औढ़नेको दे दिया गया—

३ घंटे पश्चात् उक्त रुग्णाका तापमान १०३° हुआ रात्रिमें ९ बजे निद्रा हेतु

| | |
|---------------|---------|
| ब्राह्मी वटी | २ रत्ती |
| चन्द्रकला | १ रत्ती |
| प्रवाल पिष्टी | २ रत्ती |

५ रत्तीकी १ मात्रा

तगरादिकषाय—१ तोलाके साथ दी गई—रात्रिमें ३-४ घंटा शान्तिसे निद्रा आई ।

दिनांक १२-८-६४ को प्रातः ८ बजे सभी रोगियों को देखनेके पश्चात् उक्त रुग्णाको पुनः गंभीरतासे देखा गया । तापमान प्रातः १०१° था शिरोवेदना अत्यल्प थी, वमन बंद थी, शब्द ग्राहक यंत्र (स्टेथेस्कोप) से फुफ्फुसों एवं हृदयकी गति भली भाँति देखी गई, फेफड़ोंमें स्वल्प कफका आभास होता था कभी कभी स्वल्प खाँसी चलती थी, हृदयकी गति सामान्य थी । जिह्वा मध्यमें मैली थी और किनारोंपर लाल लाल कणसे दिखाई देते थे, रोगीको मधुरा ज्वर ही निश्चय कर- निम्न औषध व्यवस्था की गई—

| | |
|------------------|---------|
| लक्ष्मीनारायण रस | १ रत्ती |
| मधुरान्तक वटी | ४ रत्ती |

| | | | |
|--|--------------------|--|---------|
| प्रवाल पिष्टी | २ रत्ती | ऐसी १-१ मात्रा सुबह शाम शहदके साथ दी गई | |
| ऐसी १-१ मात्रा सुबह-शाम-दोपहर दिनमें ३ बार मधुके साथ दी गई। रात्रिमें ८ बजे निद्रा हेतु | ७ रत्तीकी १ मात्रा | नं० २ मधुरान्तक वटी | २ रत्ती |
| ब्राह्मी वटी | २ रत्ती | प्रवाल पिष्टी | २ रत्ती |
| प्रवाल पिष्टी | २ रत्ती | गिलोय सत्व | ४ रत्ती |
| ४ रत्तीकी १ मात्रा दी गई। | | ८ रत्ती की १ मात्रा | |
| पथ्यमें-मात्र-दूध, मुनक्का, और सायं-४ बजे चाय, दी गई। | | ऐसी १ मात्रा मध्याह्नमें दी गई। | |
| तापमान प्रातः ८ बजे १०१° मध्याह्न १२ बजे १०२½° सायं ४ बजे १०३½° और रात्रिमें १०३½° दिनाङ्क १३-८-६४ को प्रातः तापमान १०२° रहा, निद्रा कुछ कुछ ठीक आई, किंतु घबराहट रही, शौच नहीं हुआ था, औषध व्यवस्था वही रखी गई। मात्र लक्ष्मीनारायणकी जगह सूतशेखर नं० १ दिया गया, तथा उदर शुद्धि अर्थ ज्वर केशरी वटी ४ गोली दी गई। पथ्यमें वही, दूध, मुनक्का चाय ही देते रहे। | | नं० ३—ब्राह्मी वटी. | २ रत्ती |
| तापमान प्रातः १०२° मध्याह्न १०२½° सायं ४ बजे १०२½° और रात्रिमें १०३°। रात्रिमें निद्रा कुछ ठीक ठीक आई, किंतु कभी कभी प्रलापका होना प्रारम्भ हुआ। सायंकाल तक शौच न होनेपर रात्रिमें स्वादिष्ट विरेचन चूर्ण ६ माशा निवाये पानीसे दिया गया। | | बृ० कस्तूरी भैरव | १ रत्ती |
| दिनाङ्क १४-८-६४ को पुनः निरीक्षण किया। १३-८-६४ को ज्वरकेशरी वटी एवं स्वादिष्ट विरेचन चूर्ण देनेपर भी शौच शुद्धि नहीं हुई, प्रलाप होनेका मलावरोधको ही विशेष कारण मानकर-१ औंसकी ग्लोसरीन वरित दी गई। ५ मिनिट पश्चात् साफ शौच हुआ, तापमान १०२°, रहा वक्तस्थलपर पिटिकाएँ विस्तृत रूपमें फैल गई थी, शिरोवेदना रात्रिकी अपेक्षा अल्प हुई। खाँसी कभी कभी चलती थी, पथ्यमें दूध भी छानकर थोड़ी सोंठ मिलाकर-रुग्णाके इच्छानुकूल थोड़ा-थोड़ा दिया जाता रहा। मध्याह्नमें मुनक्काका यूष, और सायं ४ बजे थोड़ी चाय तुलसी डालकर देते रहे। प्रलापको विशेष दृष्टिमें रखते हुये औषधमें निम्न परिवर्तन किया गया। | | प्रवालपिष्टी | २ रत्ती |
| नं० १ लक्ष्मीनारायण रस | १ रत्ती | | |
| मधुरान्तक वटी | ४ रत्ती | | |
| प्रवाल पिष्टी | २ रत्ती | | |
| ७ रत्तीकी १ मात्रा | | | |
| | | रात्रिमें ८ बजे और १ मात्रा रात्रिमें ११ बजे, तगरादिकषाय १-१ तोलाके साथ दी गई। रात्रिमें प्रलाप दिनांक १३-८-६४ की भांति सामान्य होता रहा। तापमान रात्रिमें १०२° तक ही रहा। | |
| | | दिनाङ्क १५-८-६४ को प्रातः तापमान १००½° मध्याह्न १०२° सायं १०३° और रात्रिमें १०१° रहा औषध व्यवस्था वही चलती रही। | |
| | | दिनाङ्क १६-८-६४ ई. को प्रातः १०१° तापमान रहा। रात्रिमें-प्रलाप अधिक रहा, नं. ३ औषध में प्रवाल पिष्टीकी जगह महावात विध्वंसन मिला कर-ब्राह्मीके क्वाथसे दी गई। रात्रिमें निद्रा बिल्कुल नहीं आई और वेचैनी व घबराहट अधिक रही रात्रिभर प्रलाप अधिक रहा। | |
| | | दिनाङ्क १७-८-६४ को प्रातः तापमान १००° था तीन दिन शौच न होनेपर १ औंस ग्लोसरीन वरित लगाकर शौच शुद्धि की गई और प्रलाप सन्निपातके लिये निम्न औषध व्यवस्था की गई। | |
| | | बृ० कस्तूरी भैरव रस | ३ रत्ती |
| | | बृ० ब्राह्मी वटी | १ रत्ती |
| | | चन्द्रकला रस | १ रत्ती |
| | | महावात विध्वंसन | १ रत्ती |
| | | ३½ रत्तीकी १ मात्रा ऐसी १-१ मात्रा | |
| | | ३-३ घंटेसे ब्राह्मी और तगरादि कषाय १-१ तोला के साथ दी गई; किन्तु प्रलाप अत्यधिक बढ़ता ही गया, रात्रिमें प्रकोप दिनकी अपेक्षा और अधिक होने लगा किन्तु तापमान १००° से १०१° तक ही रहा रात्रिको वेचैनी रही, निद्रा बिल्कुल नहीं आई और बहुत चिल्लाने लगी, प्रलापक सन्निपातके सम | |

लक्षण" दिखाई देने लगे। अंगमें विकल्पता (वेचैनी-तलमलाहट) संज्ञाहीन अर्थात् वेसुध (मनुष्यादिकोंको नहीं पहिचानना), विशेष प्रलाप-आदि दोष तीव्र गति कर रहे थे। रात्रि बड़ी परेशानीसे निकाली, औषधि भी बड़ी कठिनाईसे दी गई चिल्लाहट अत्यधिक रही।

दिनांक १८-८-६४ को प्रातः फिर निरीक्षण किया उत्र १०१° था जोरसे आवाज देनेपर हाँ, नां, का उत्तर देती थी। संज्ञाहीनता अधिक थी, मल-मूत्र, त्यागका कोई विशेष भान नहीं था बार बार कपड़ोंको इधर उधर फेंकती रहती। अचानक चिल्लाती, पुनः २-४ मिनिटके लिये चुप होजाती। बिस्तरसे गिरनेका बार बार प्रयास करती रही, सेवा सुश्रुषावाले परिचारक लोग एवं उसके अभिभावक बड़ी तल्लीनतासे उसकी रक्षाके लिये उद्यत रहते, थोड़ीसी लापरवाहीसे ही उठकर भागनेका प्रयास करती थी, वार्ड प्रविष्ट अन्य स्त्री रुग्णाओंको अशान्ति होनेके कारण उक्त रुग्णाका एक पृथक् कमरेमें प्रबंधकर निम्न औषध व्यवस्था की गई।

| | |
|---------------|---------|
| सूतशेखर नं. १ | १ रत्ती |
| मधुरान्तक वटी | ४ रत्ती |
| मुक्ता पिष्टी | १ रत्ती |
| प्रवाल पिष्टी | २ रत्ती |

७ १/२ रत्तीकी १ मात्रा

ऐसी १-१ मात्रा सुबह शाम दोपहर दिनमें ३ बार शहदके साथ मिलाकर दी गई।

बृ० कस्तूरी भैरव २-२ गोली ३-३ घंटेसे तगरादिकषाय १-१ तोलाके साथ दी गई।

तापमान—सायंकाल ४ बजे तक १०१° ही रहा। रात्रिमें १०३° हुआ। प्रलाप बढने लगा। जब रात्रिमें २-२ घण्टेके अन्तरसे निम्न औषधि ब्राह्मीके क्वाथसे दी गई।

| | |
|------------------|-----------|
| बृ० कस्तूरी भैरव | १/२ रत्ती |
| बृ० ब्राह्मी वटी | १ रत्ती |
| चन्द्रकला | १ रत्ती |
| प्रलापपिष्टी | २ रत्ती |

४ १/२ रत्तीकी १ मात्रा

रात्रिभर इसी तरह वेचैनी और प्रलाप रहा।

दिनांक १९-८-६४ प्रातः ८ बजे उत्र १०३° संज्ञा हीनता और अधिक बढ गई। मल-मूत्र त्यागका कोई भान नहीं, चिल्लाहट अकुलाहट, बढती रही। वातके प्रबल वेगके कारण बार बार उठकर भागनेका प्रयास करने लगी, सुनना बिल्कुल बन्द हो गया था, चाय, दूध भी बड़ी कठिनतासे लेने लगी। रोगीके अविभावकों, परिचारकों तथा आने जाने वालों पर थूंकने लगी। दूध मुनक्काका पानी पिलानेपर मुंहमें लेकर फेंक देना, अण्ट सण्ट बकना, अश्लील शब्दोंका प्रयोग करना, अपने हाथसे किसीको मारना आदि भीषण उपद्रव हो गये थे। औषध बड़ी कठिनाईसे लेने लगी- अंगुलियोंको चबाना दांत पीसना, बहुत उच्च स्वरसे बोलना ये क्षणक्षणमें उपद्रव होने लगे तब औषधमें निम्न परिवर्तन किया—

| | |
|---------------------|-----------|
| बृ० कस्तूरी भैरव रस | १/२ रत्ती |
| बृ० ब्राह्मी वटी | १ रत्ती |
| प्रवालपिष्टी | १ रत्ती |
| सूतशेखर नं० १ | १/२ रत्ती |

१ मात्रा ३ रत्तीकी

ऐसी १-१ मात्रा ३-३ घण्टेसे मधुसे देना प्रारंभ किया। ऊपर तगरादि कषाय १-१ तोला देते रहे दिन भर चिल्लाना, उच्च स्वरमें बोलना, कुछ देर कभी शान्त रहना आदि रूप चलता रहा।

तापमान प्रातः १०३°, मध्याह्न १०२° और सायंक १०३ १/२° और रात्रिमें १०४°। रात्रिमें वही रूप चिल्लाना-घबराहट, कपड़े फेंकना, उच्च स्वरमें बोलना उठ उठकर भागनेका प्रयास करना आदि रहा। रात्रिमें

| | |
|-----------------|---------|
| सर्प गंधादि वटी | २ रत्ती |
| महावातविध्वंसन | १ रत्ती |
| कस्तूरीभैरव | १ रत्ती |

४ रत्तीकी १ मात्रा ३-३ घण्टेसे ब्राह्मीके क्वाथ से दी गई। इस दवाके देनेसे कुछ निद्रा आई। किन्तु जागते ही चिल्लाना व उच्च स्वरमें बोलना जारी होजाता था।

दिनांक २०-८-६४ को प्रातः तापमान १०३° रहा। दस्त ३ दिनसे नहीं हुआ था, वही संज्ञाहीनता, बिस्तरों में पेशाब करना, अण्टसण्ट बोलना, अश्लील शब्दोंका प्रयोग करना, कभी कभी हँसना, अभिभावकों

एवं परिचारकोंपर थूंकना ।

दिनांक १९-८-६४ को न्यूनाधिक रूप चलता रहा । औषध व्यवस्था वही रही । मात्र तगरादि कषाय में शौच शुद्धिके लिये अमलतास १ तोला डालकर दिया गया । पथ्यमें मात्र ज्वरदस्तीसे दिनमें २-३ छटाँक दूध तथा बीच बीचमें १-१ चम्मच मुनक्काका पानी देते रहे । प्रातः अमलतास देनेके ४ घण्टेके पश्चात् एक शौच बिस्तरोंमें ही हुआ । वस्त्र शुद्धिकर तापमान देखा गया । मध्याह्नका तापमान १०२° रहा । रात्रिमें वही रूप रहा । तथा वही—

| | |
|-----------------|---------|
| सर्पगन्धादि वटी | १ रत्ती |
| महावातविध्वंसन | १ रत्ती |
| कस्तूरीभैरव | १ रत्ती |

३ रत्तीकी १ मात्रा ।

ऐसी १-१ मात्रा ३-३ घण्टेसे ब्राह्मीके क्वाथसे दी गई । रात्रिमें चिल्लाहट तथा उच्च स्वरमें बोलना अधिक रहा ।

दिनांक २१-८-६४ प्रातः फिर देखा गया । तापमान १००½° रहा । तापमान अवश्य कम हुआ किन्तु प्रलापमें कोई विशेष अन्तर नहीं हुआ, औषधमें निम्न परिवर्तन किया ।

| | |
|--------------------|---------|
| नं०१—स्मृतिसागर रस | २ रत्ती |
| बृ० ब्राह्मी वटी | १ रत्ती |
| सूतशेखर नं० १ | १ रत्ती |
| चन्द्रकला रस | १ रत्ती |

५ रत्तीकी १ मात्रा

ऐसी १-१ मात्रा २-२ घण्टेसे ग्रन्थ्यादि क्वाथ तथा ब्राह्मीके क्वाथसे १-१ तोलासे दी गई ।

| | |
|----------------------|---------|
| नं०२—बृ० कस्तूरीभैरव | १ रत्ती |
| महावातविध्वंसन रस | १ रत्ती |
| लक्ष्मीनारायण रस | १ रत्ती |

३ रत्तीकी १ मात्रा

ऐसी १-१ मात्रा ३-३ घण्टेसे पृथक् अदरक रस और शहदके साथ दी गई कारण गलेमें श्लेष्मका प्रकोप था । रात्रिमें कुछ शान्ति रही, प्रलाप अधिक नहीं हुआ । हृदय बलके लिये दिवालमुश्क १ माशा रात्रिमें १० बजे दिया गया । रात्रिमें तापमान १०१° रहा ।

दिनांक २२-८-६४ प्रातः तापमान ९९½° रहा । चिल्लाहट एवं प्रलापमें विशेष वृद्धि नहीं हुई सामान्यरूप चलता रहा । रुग्णाके सीधे लेटे रहनेसे दाहिने नितम्बपर शय्याव्रण हो गया । व्रणकी शोधन व रोपण व्यवस्था की गई । औषधमें वही नं०१ औषध तगरादि कषाय तथा ब्राह्मी क्वाथसे २-२ घण्टेसे दी गई । तथा नं० २ औषध ३-३ घण्टेसे अदरक रस और शहदसे पृथक् दी गई । इतनी औषधियाँ देकर हुये भी प्रलाप एवं बुद्धिभ्रंशमें कोई अन्तर नहीं हुआ । अन्तर इतना ही हुआ कि दिनमें कुछ शान्ति रहती और रात्रिमें वही भीषण प्रलाप और अश्लील शब्दोंका प्रयोग जारी रहा । रुग्णाके अभिभावकोंकी इच्छा हुई कि हम यहाँसे चिकिरसा हेतु बाहर केकब अथवा अजमेर ले जावें । मैं उनको बराबर समझाता रहा, घबरानेकी कोई आवश्यकता नहीं है भगवान् धन्वन्तरि अवश्य सफलता देकर आरोग्यता प्रदान करेंगे । कारण अभिभावक भी व्याधिका दीर्घका होजानेसे घबरा गये थे । दो आदमी २४ घण्टे तक उक्त रुग्णाको पकड़कर बैठे रहते थे । रुग्णाकी स्थिति अति दयनीय होगई थी । फिर भी साहससे का लिया गया ।

दिनांक २३-८-६४ को प्रातः तापमान १००° रहा ४-५ रोजसे शौच नहीं हुआ था । १ औंस ग्लेसर वस्ति लगाकर उदर शुद्धि करवाई गई । प्रलाप वही चालू रहा, गत रात्रिके अन्तमें सामान्य निद्रा आई । औषधमें कोई परिवर्तन नहीं किया गया, वही नं० १ व नं० २ औषध उसी अनुपानसे देते रहे । शरीर अति दुर्बल होगया था, खुश्की अधिक प्रतीतीने लगी, दूध तथा मुनक्काका पानी और बीच-बीचमें सामान्य १-२ चम्मच ग्लूकोजका पानी भी देते रहे । किन्तु स्मृतिका भान होना नहीं दिखाई दिया । शय्याव्रणके लिये शोधन व रोपण व्यवस्था (ड्रेसिंग) की गई । दिन भर सामान्यरूप चलता रहा, तापमान मध्याह्नमें १०१° सायं १०१° और रात्रिमें ८ बजे १०१° रहा । मुझे उक्त रुग्णाकी बड़ी चिन्ता थी ३ घण्टे पश्चात् रात्रिमें ११ बजे पुनः रुग्णाको देखा गया । हृदय अवसाद अवस्थामें था, नाड़ी गति अति मन्द थी, तुरन्त दिवाल मुश्क १-

माशाकी मात्रा १-१ घण्टेसे दिलाई गई। रात्रिमें प्रलाप अधिक रहा।

दिनाङ्क २४-८-६४ को प्रातः तापमान १००° रहा, रुग्णाके अतिप्रलाप एवं उच्चस्वरमें बोलनेसे वाक्शक्ति दुर्बल होगई थी, स्वर भंगता तथा निस्तेजताका अनुभव हुआ। प्रलाप सामान्य चलता रहा, उठ-उठ कर भगना, उच्चस्वरमें बोलना, इधर उधर परिचारको एवं अविभावकोंपर थूंकना, दांत पीसना आदि उपद्रव कुछ शान्त हुये। रुग्णाके अविभावकोंको कुछ सन्तोष हुआ। गलेमें सुहागा गलीसरीन लगाई गई, शय्यात्रणके लिये प्रतिदिनकी भाँति शोधन रोपण (ड्रेसिंग) व्यवस्था की गई और औषधमें निम्न परिवर्तन किया गया।

| | |
|-------------------------|---------|
| बृ० कस्तूरी भैरव | १ रत्ती |
| महावातविध्वंसन | १ रत्ती |
| लक्ष्मीविलास अभ्रकयुक्त | १ रत्ती |
| मधुरान्तक वटी | २ रत्ती |
| ५ रत्ती की १ मात्रा | |

ऐसी १-१ मात्रा प्रातः सायं मध्याह्न और रात्रिमें ग्रन्थ्यादि कषाय १-१ तोलाके साथ दी गई।

तापमान मध्याह्न ९९½° सायं ४ बजे १००½° और रात्रि ८ बजे ९९½° रहा। रात्रिमें प्रलाप अवश्य रहा, किन्तु वाक्शक्तिकी दुर्बलताके कारण भीषण प्रकोप नहीं हुआ, तन्द्रा स्वल्प निद्रा जागरण अवस्थामें प्रलाप आदि रूप चलता रहा।

दिनाङ्क २५-८-६४ को फिर प्रातः ८ बजे देखा गया, रुग्णाका ताप ६८° था, शरीरमें बड़ी निस्तेजता थी, शरीर अति दुर्बल होगया था। सुनना प्रायः बन्द था ही और लक्षण सब सामान्य थे, अन्य दिनों की अपेक्षा प्रलापमें भी न्यूनता थी, सब लोगोंको साहस हुआ, और मुझमें भी आत्म बल उत्पन्न हुआ, दिनाङ्क २४-८-६४ की भाँति वही औषध चालू थी। शय्यात्रणका संशोधन कर्मकर व्रणबंधन करवाया। मध्याह्नमें १२ बजे तापमान ६७° हुआ सायं ४ बजे ९६½° रहा। ऐसी अवस्थामें परिचारकने आकर तुरन्त सूचना दी, जाकर देखनेपर वास्तवमें ९६½° तापमान था, और घुटनोंके नीचे पैरोंमें शीतता

थी, तुरन्त जवाहरा मोहरा २ गोली तथा कस्तूरी भैरव २ गोली चायके साथ दिलवाई गई और १ घण्टे बाद दिवाल मुश्क १॥ माशा उष्ण जलके साथ दिया गया। ३ घण्टे पश्चात् तापमान लिया गया, कोई परिवर्तन नहीं पाया। पुनः बृ० कस्तूरी भैरव २ गोली देने हेतु परिचारकको कहा गया। रात्रिमें १० बजे प्रति दिनकी भाँति फिर वाडमें गया। तापमान देखनेपर प्रतीत हुआ कि रुग्णाका तापमान ९५° था। पैरों और हाथोंमें और अधिक शीतता आई। मैं घबराया और इष्टदेवको स्मरण करते हुये सोचता गया कि सफलता मिलने वाला केश अब बिगड़ रहा है। तुरन्त साहसके साथ तल्लीनतासे निम्न औषध व्यवस्थाकर १-१ घण्टेसे देने हेतु एक पृथक् परिचारक को नियुक्त किया।

| | |
|------------------|---------|
| कालकूट रस | ½ रत्ती |
| बृ० कस्तूरी भैरव | १ रत्ती |
| हेमगर्भ पोटली | ½ रत्ती |
| जवाहर मोहरा | १ रत्ती |

३ रत्ती की १ मात्रा

ऐसी १-१ मात्रा १-१ घण्टेसे सोंठके पानीसे देना प्रारम्भ किया।

साथ ही २-२ घंटे से दिवालमुश्क १॥-१॥ माशा उष्ण जल से दी गई। पैरों एवं हाथोंपर-सोंठके चूर्णकी मालिश करवाई गई। २ घंटे पश्चात् तापमान ९७½° हुआ। पुनः २ घंटे पश्चात् देखनेपर ९९½° हुआ। ९९½° तापमान होनेके पश्चात्—

| | |
|------------------|---------|
| बृ० कस्तूरी भैरव | १ रत्ती |
| हेमगर्भ पोटली | ½ रत्ती |
| जवाहर मोहरा | ½ रत्ती |

२ रत्ती की १ मात्रा

ऐसी १-१ मात्रा ३-३ घंटेसे ग्रन्थ्यादिकाथ १-१ तोलाके साथ देना प्रारम्भ किया। निशान्तमें रुग्णाको कुछ निद्रामी आई और प्रलाप भी बहुत कम हुआ।

दिनाङ्क २६-८-६४ प्रातः ८ बजे देखा गया तापमान ९८° था, प्रलापमें काफी सुधार हुआ अन्य उपद्रव सब शान्त थे, रुग्णामें चैतन्यताका पूर्ण अभाव होगया था।

वाक् शक्ति काफी दुर्बल हो गई थी शय्या व्रणमें भी सुधार हुआ। औषधियोंमें निम्न प्रकार परिवर्तन किया गया।

| | |
|-----------------------------|---------|
| हेमगर्भ पोटली | ३ रत्ती |
| वृ० कस्तूरी भैरव | १ रत्ती |
| लक्ष्मी विलास (अध्रक युक्त) | १ रत्ती |
| २ १/२ रत्ती की १ मात्रा | |

ऐसी १-१ मात्रा सुबह शाम दोपहर दिनमें ३ बार सोंठके पानीसे, तथा रात्रिमें ३-३ घण्टे मध्यादिकाथ १-१ तोलासे दी गई।

रात्रिमें-११ बजे तथा २ बजे दिवालमुख १-१ माशा उष्ण जलसे पृथक् दिया गया। रात्रिमें निद्रा ठीक आई। प्रलाप अत्यल्प हुआ साथ ही रुग्णाके अभिभावकोंको भी पूर्ण सन्तोष मिला। तापमान प्रातः ९८° मध्याह्न १२ बजे ९९°। सायं ४ बजे ९८ १/२° रात्रि ८ बजे ९८ १/२° रहा।

दिनाङ्क २७-८-६४ को प्रातः देखा गया तापमान प्रातः ९८ १/२° अन्य रुग्णाके सब लक्षण ठीक थे। मनुष्या दिकोंको पहचानना, प्रारम्भ हुआ। प्रलाप कभी-कभी सामान्य होता, किन्तु शारीरिक दौर्बल्यता काफी आचुकी थी अन्य उपद्रव सब शांत थे। औषधमें कोई परिवर्तन नहीं किया गया वही दिनाङ्क २६-८-६४ की भाँति दवा चालू रही। तापमान मध्याह्न ९७ १/२° सायं ९८° रात्रिमें ९८ १/२° रहा। रात्रिमें ठीक निद्रा आई कभी-कभी रात्रिमें अनर्गल शब्दोंका उच्चारण करती रही। किन्तु नूतन उपद्रव कुछ नहीं हुए।

दिनाङ्क २८-८-६४ को प्रातः प्रतिदिनकी भाँति फिर देखा गया व्याधिमें काफी सुधार था किन्तु बोलने में असमर्थ थी, मात्र एक दूसरेकी ओर तटस्थ होकर देखती रहती, सुनना बिल्कुल बंद था, जोरसे आवाज देनेपर हाँ नाँ का सांकेतिक उत्तर देती थी। प्रातः स्वतः ही अल्प शौच शुद्धि होगई थी किन्तु उक्त रुग्णाको भान होनेसे रुग्णाके अभिभावकोंको संकेत करनेपर बिस्तरसे नीचे उतार दिया गया था। रुग्णाने मल-मूत्रका त्याग नीचे मल मूत्र पात्रोंमें ही किया। तापमान प्रातः ९८° था औषधमें कोई परिवर्तन नहीं किया वही दवा चालू रखी गई। किन्तु पथ्यमें दूध, मुनक्का

अधिक बढ़ा दिये गये शक्ति संरक्षणार्थ रात्रिमें महा शक्ति रसायन १ गोली दी गई। रात्रिमें निद्रा शांत आई कोई उपद्रव नहीं हुआ।

दिनाङ्क २९, ३०, ३१-८-६४ को उक्त औषधियाँ सामान्य तथा चलती रही, तापमान प्रातः मध्याह्न सायं और रात्रिमें नॉर्मल रहा सब उपद्रव शांत रहे प्रलाप बिल्कुल नहीं हुआ और शांत निद्रा आती रही चेतना शक्तिमें कुछ अभाव था जोर से आवाज देनेपर कुछ शब्दोंका उच्चारण करती। अभिभावकों एवं परिचारक परिचारिकाओंके संभाषणसे कुछ बोलती। अन्यथा चुपचाप लेटी रहती, चेतनाके लिये हेमगर्भ पोटलीके स्थान पर सञ्चेतनी वटी १-१ गोली प्रति पुड़ियामें मिलाकर वही पूर्वकी भाँति दिनमें ४ बार सोंठ लोंगके पानीसे तथा रात्रिमें मध्यादि क्वाथसे देते रहे। रात्रिमें शक्ति संरक्षणार्थ कभी दिवालमुख, और कभी महाशक्ति रसायन दूधके साथ देते रहे। इन्हीं तीन दिनोंमें क्षुधा सताने लगी, किन्तु आग्रह पूर्वक दूधकी मात्रा बढ़ाई गई सायं ४ बजे कुछ फलोंका प्रबंध किया गया आराम कुर्सी के सहारे बिठा भी दिया करते। कुछ शक्ति उत्पन्न हुई थोड़ी-थोड़ी बोलने लगी किन्तु शारीरिक शक्ति अति क्षीण हो चुकी थी शय्या व्रण काफी ठीक हो चुके थे।

दिनाङ्क १-९-६४ को तापमान वैसे दिनाङ्क २६-८-६४ से नॉर्मल था सन्निपातिक कोई उपद्रव दृष्टिमें नहीं थे शक्तिसे संरक्षणार्थ एवं क्षुधावर्धक निम्न औषध व्यवस्था की गई।

| | |
|--------------------|---------|
| सुवर्ण मालिनी वसंत | ३ रत्ती |
| ६४ प्रहरी पीपल | २ रत्ती |
| सितोपलादि चूर्ण | १ माशा |
| लोह भस्म | ३ रत्ती |
| प्रवाल पिष्टी | १ रत्ती |

१ १/२ माशाकी १ मात्रा

ऐसी १-१ मात्रा प्रातः सायं मध्याह्न शहदके साथ दी गई।

| | |
|------------|----------------|
| धनंजय वटी | २-२ गोली |
| द्राक्षासव | १-१ औंस के साथ |

समान जल मिलाकर प्रातः ११ बजे और सायं ५

बजे पृथक् देते रहे। यही क्रम दिनः १३-९-६४ तक चलता रहा। कुछ फलोंका रस तथा फल देते रहे इन तेरह दिनोंमें काफी सुधार हुआ और कुछ शक्ति का संचार हुआ स्वतः उठना बैठना, समझकी बातें करना, चेष्टावान, बुद्धि आदिकी अनुभूति पूर्ण रूपसे होगई थी। किन्तु खानेके लिये अतिआग्रह करती रही। बारबार समझाकर यह समय पूराकिया।

दिनाङ्क १४-९-६४ को रुग्णाका खानेपर अतिआग्रह रहा। रुग्णाकी करुणता देखकर थोड़ा मूंगकी दाल के पानीमें सैधानमक व थोड़ी कालीमिर्च डालकर पिलाया गया, दूध मुनक्का फल आदि नियमित चालू रहे। सायं फिर थोड़ा मूंगकी दालका पानी कुछ परिमाणमें दिया गया। कोई उपद्रव नहीं हुआ, रात्रिमें शांत निद्रा आई।

दिनाङ्क १५-९-६४ को प्रातः मूंगकी दाल २ तोला तथा गेहूँका दलिया २ तोला इसमें थोड़ा त्रिकटु डालकर पेय दिया गया सायं मूंगकी दाल ५ तोला + गेहूँका दलिया ५ तोला भलि भांति परिपक्वकर दूधके साथ दिया गया।

इस तरह धीरे-धीरे अन्नकी मात्रा बढ़ाते रहे। औषधमें बही सुवर्णमालिनी वसंत मिश्रित योग चालू रहा। यही दूध दलियाका क्रम निरन्तर ३ दिन तक चला।

दिनाङ्क १७-९-६४ को प्रातः मूंगकी दाल तथा सामान्य धनियां मिश्रित अदरककी चटनी, गेहूँके ४ पुलकोंके साथ दी गई। खानेके २-३ घंटे पश्चात् पेटमें कुछ भारीपन प्रतीत हुआ। धनंजयवटी ४ गोली द्राक्षासव १ औंसके साथ देनेपर उपद्रव शांत हुआ। सायं-पुनः मूंगकी दाल व रोटी सामान्य दी गई रात्रिमें कोई उपद्रव नहीं हुआ। शान्त निद्रा आई और शक्ति अनुकूल इधर उधर चलने फिरने भी लगी यह क्रम निरन्तर ३ दिन तक रहा दूध फल-फ्रूट नियमानुकूल, चालू रहे।

उपद्रव—दिनाङ्क २१-९-६४ को प्रातः देखा गया तापमान 100° था अभिभावकोंको आग्रह पूर्वक पूछनेपर विदित हुआ कि दिनाङ्क २०-६-६४ को सायंकाल रुग्णाके आग्रहसे चाँवलोंमें घृत तथा शकर

डालकर खिला दिया गया था, तुरन्त खाना बंद करवाया गया और निम्न औषध व्यवस्थाकर परिचारकों को उसकी देख भाल व निगरानीके लिये ध्यानाकर्षण करवाकर निम्न औषधियां दी गई।

| | |
|---------------|---------|
| रत्नगिरी रस | १ रत्ती |
| गिलोय सत्व | ४ रत्ती |
| प्रवाल पिष्टी | २ रत्ती |

३-३ घण्टेमें सधुके साथ दी गई खानेमें मात्र दिन में २-३ बार चाय तुलसी युक्त दी गई तापमान मध्याह्न 101° , सायं 103° और रात्रि 103° रहा। रात्रिमें संताप शामक मिश्रणकी १-१ माशा की ३ मात्रा १-१ घण्टेमें दी गई।

दिनाङ्क २२-९-६४ को प्रातः तापमान 97° रहा खानेमें मात्र चाय दी गई उदर शुद्धि हेतु ज्वर केशरी वटी ४ गोली उष्ण जलसे दी गई। ४ घण्टे बाद स्वच्छ शौच शुद्धि हुई। औषध पूर्वकी भांति चालू रही तापमान मध्याह्न 98° सायं 99° और रात्रिमें 98° रहा। रात्रिमें दूध दिया गया।

दिनाङ्क २३-९-६४ प्रातः तापमान 98° मध्याह्न 99° सायं 98° रात्रिमें 98° रहा। पथ्यमें फिर भी केवल दूध ही दिया गया।

दिनाङ्क २४-९-६४ को प्रातः तापमान नॉर्मल था खानेमें प्रातः दूध दलिया दिया गया। सायं मूंगकी दाल रोटी दी गई। कोई उपद्रव नहीं हुआ और—

| | |
|----------------|---------|
| सुवर्ण मालनी | ३ रत्ती |
| लोह भस्म | १ रत्ती |
| सितोपलादि | १ माशा |
| ६४ प्रहरी पीपल | २ रत्ती |

सुबह शाम च्यवन प्राश १-१ तोलाके साथ देते रहे धनंजय वटी ४-४ गोली

द्राक्षासव १-१ औंसके साथ समान जल मिलाकर भोजनके बाद दिया गया।

निरन्तर यह क्रम ४ दिन चलता रहा। स्वास्थ्य ठीक हुआ। शय्या त्रण बिल्कुल हो ठीक चुका था। खाना पूर्ण इच्छानुकूल लेती रही, रुग्णाके अभिभावकों के आग्रहसे ७ दिनकी दवा देकर दिनाङ्क २८-९-६४ को वार्डसे मुक्त कर दिया गया।

निद्रावस्थाके विचित्र रोग

लेखक—वैद्य श्री अम्बालालजी जोशी आयुर्वेदकेशरी, साहित्यायुर्वेदरत्न
मकराना मोहला, जोधपुर

निद्रा मनकी एक वृत्ति है। जब मन व इन्द्रियां थक जाती हैं तो अपने अपने विषयोंको ग्रहण करनेके प्रति उदासीन हो जाती हैं और इस प्रकार कर्म पुरुष क्लमसे युक्त होकर सो जाता है। चरकने इसी प्रकार का मन्तव्य जाहिर किया है—

यदा तु मनसि क्लान्ते कर्मात्मानः क्लमान्विता।

विषयेभ्यो निवर्तन्ते तदा स्वपिति मानवः ॥ चरक

उपरोक्त कथनसे यह स्पष्ट है कि मानसिक थकान तथा इन्द्रियोंकी थकान दोनों ही निद्रा लाने वाली है। निद्रावस्थामें मनुष्यका मस्तिष्क व्यापार अपेक्षाकृत कम पड़ जाता है। फिर भी मनुष्य अपने दैहिक तथा मानसिक थकानमें कमी महसूस करता है और उठने पर अपने आपको ताजा महसूस करता है। इसीलिये तो शास्त्रोंने निद्राको 'धामाता' के विशेषणसे भूषित किया है जो स्वस्थ निद्राके अर्थमें सर्वथा उपयुक्त है।

चरकने निद्राके सात कारण बताये हैं—

तमोभवा श्लेष्मसमुद्भवा च

मनः शरीरश्रमसंभवा च।

आगन्तुकी व्याध्यनुवर्तिनी च

रात्रिस्वभावप्रभवा च निद्रा ॥

(चरक सू० अ० २१)

(१) तमोगुणसे पैदा होने वाली निद्रा। याने क्रोध या तमोगुण प्रधानसे, शोकसे उत्पन्न होनेवाली निद्रा (२) श्लेष्माके कारण आने वाली निद्रा (कफ दोषकी अधिकतासे आने वाली नींद) (३) मनके थक जानेपर आने वाली निद्रा (४) शरीर (इन्द्रियों) के थक जानेपर आने वाली नींद (५) आगन्तुकी नींद नशा या निद्राकर औषधियोंके सेवनसे आने वाली नींद

(६) रोगोंके उपद्रव स्वरूप आने वाली नींद (७) रात्रिमें स्वभावतः आने वाली नींद। उपरोक्त सात प्रकारकी निद्रा मनुष्यको प्रभावित करती रहती है परन्तु अन्तिम याने रात्रिमें स्वभावतः आने वाली नींद 'भूतधात्री' कही गई है। वास्तवमें यह स्वभाविक निद्रा न केवल मनुष्योंके लिये मात्र अतितु जीवमात्रके लिये मात्र वृत्तितानवह है।

उपनिषदोंने नींदकी तीन अवस्थाओंकी ओर संकेत किया है—(१) स्वप्नावस्था (२) सुषुप्तावस्था तथा (३) तुरीयावस्था। इनमेंसे स्वप्नावस्थामें मनुष्य ऊपरी हालत में सोता दिखता है परन्तु उसके आन्तरिक व्यापार यथावत् चालू रहते हैं। आयुर्वेदमें 'प्रेमा' अवस्थाको 'निद्रोपप्लुतेन रजोयुक्ते न मनसा विषय ग्रहणं' कह कर इसकी संक्षिप्त व्याख्या की है। इसमें रजोगुणकी प्रधानता रहती है। इसकी अवस्था स्वाभाविक निद्रावस्था है। यह मनुष्यको सुख देने वाली है। इसमें मन तमाच्छादित होकर मन्द किया हो जाता है। इसी लिये शास्त्रोंने निद्रादेह सुखायुषाः कह कर इसकी विशिष्टताको प्रदर्शित किया है। निश्चय ही इस नींदसे उठकर मनुष्य अपने आपको सभी तरफसे स्वस्थ अनुभव करने लगता है। निद्राकी तीसरी गति तुरीयावस्था सत्त्वगुण प्रधान है अतः यह योगियोंकी अवस्था है। स्वप्न या निद्रामें मन अनुशासित नहीं रहता परन्तु इस तुरीयावस्थामें मन अनुशासित रहता है।

जहां निद्रा मनुष्यके लिये वरदान है वहां कभी कभी यह प्रगाढ़ बनकर अभिराप भी सिद्ध हो जाती है। चोरी या रोग मृत्यु आदि जरूरी जागृत अवस्था में परिवर्तित होनेके मामलोंमें यह विलम्ब कर देती है और इस प्रकार घातक सिद्ध हो जाती है। फिर

भी यह मानलेना अनुचित न होगा कि निद्रा मानव जीवनके लिये अत्यावश्यक है और वह साधारणतया मानवजीवनके एक तिहाई भागको अपने अधिकारमें लिये रहती है जब कि निद्रा भंग मानव शरीरके लिये एक अभिशाप है और लगातार ऐसा होनेसे मानव स्वास्थ्य दिन-प्रति-दिन ह्रासकी ओर अग्रसर होता रहता है। ऐसी अवस्थामें सिरमें भारीपन, आंखोंपर बोझ, चक्कर, हाथ पैरमें फूटन, थकान तथा अन्य-मनस्कता आदि लक्षण दृष्टिगत होते हैं। आती हुई निद्राके एक बार उड़ जानेपर रातमें कई घंटों तक आकाशके तारे गिनने पड़ते हैं। और रात्रि द्रोपदीके चीरके समान लम्बी भासित होती जाती है। निश्चय ही निद्राभंग एक ऐसा रोग है जो मानव मस्तिष्कको परेशान कर देती है। यही आगे चलकर निद्रानाश हो जाता है। और इससे उपरोक्त लक्षण और भी उग्र हो जाते हैं इस रोगका कारण मानसिक परेशानी है अथवा चिन्ता है। इन दोनों ही रोगोंकी चिकित्सा करते समय रोगीको चिन्ता मुक्तकर मानसिक शान्ति प्रदान करनेका प्रयत्न करना चाहिये। सन्ध्या स्नान, तैल मर्दन, (मस्तिष्कपर) तथा आध्यात्म ग्रन्थ पठन या भगवन् स्मरण ही इनकी चिकित्सा है। आजके भौतिक युगमें यह रोग निरन्तर अपना जाल फैलाता जा रहा है और दिन-प्रति-दिन इस रोग के रोगियोंकी संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है।

नींदमें खर्राटे—कई मनुष्योंकी आदत निद्रामें जोर जोरसे खर्राटे करनेकी होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि व्यक्ति गहरी नींदमें सो रहा है सोने वालेको तो इसका ज्ञान नहीं होता परन्तु पासमें सोने वाले व्यक्तिको इस प्रकारकी निद्रासे विक्षेप होजाता है। वास्तवमें कफ प्रकृति मनुष्य नींदमें अधिक खर्राटे करते हैं। यह इसका श्वासावरोध भी एक प्रमुख कारण होता है। व्यक्ति यदि भोजनके बाद निरन्तर अदरकका स्वरस तथा शहदका पान किया जाय तो धीरे धीरे कफ शमन होकर रोगी निद्रा में खर्राटे करना बन्द कर देता है। कभी कभी एक विशेष प्रकारके भागको दबाकर सोनेसे भी ऐसा हो सकता है। उस अवस्थामें उस भागको आराम देनेसे खर्राटे मिट जाते हैं।

निद्रा प्रलाप—बहुत बालक तथा बड़े भी रात्रि सोनेके बाद कुछ प्रलाप किया करते हैं। उनका यह प्रलाप अप्रासंगिक तथा अस्पष्ट हुआ करता है। बालक पढाई सम्बन्धी या खेलकूद सम्बन्धी तथा बड़े अपने व्यवसाय या व्यक्तिगत समस्या सम्बन्धी प्रलाप किया करते हैं। उनकी इस क्रियामें विशेषतः उन बातोंका प्रसंग होता है जो दिनके समय उनके सामने आई थी और जिनका प्रभाव उनके मस्तिष्क पर जागृत अवस्थामें गहरा पड़ा था। ऐसी अवस्था में उस व्यक्तिको एक बार सचेत करना ही उसकी चिकित्सा है अन्यथा वह रोगी कालान्तरमें अधिक जोर जोरसे बोलना प्रारम्भ हो जावेगा। निद्रावस्था में भी जब मनुष्यका मस्तिष्क अधिक कार्य करने लगता है तब ऐसा हुआ करता है। इस आदतको मिटाने लिये रोगीको यह गहरी नींद दिलाना उपयुगी होगी रात्रिमें सोते समय मस्तिष्कको शान्त रखने वाले वातावरणमें रखना उचित है। यथा—ईश्वर स्मरण करते सोना तथा बृहद् विष्णु तैल आदिका मस्तिष्क पर मालिश करना इस रोगकी उत्तम चिकित्सा है।

निद्रा चलन—यह रोग एक विचित्र रोग है मनुष्य निद्रावस्थामें इस प्रकारका अभिनय करता जैसे वह जाग रहा हो। रोगीकी अवस्थाके अनुसार वह दरवाजा खोलकर बाहर तक घूम आता है। सब वह नींदमें ही करता है। इसका सबूत यह कि जगनेपर वह अपनेपर बीती बातको याद न रखता। कई व्यक्तियोंकी यह हालत देखी गई कि उन्हें पुलिस स्टेशनपर लेजाकर सुला दिया गया और जागनेपर उन्होंने आश्चर्य किया कि वे कहाँ सोये थे और कहाँ आ गये। यह रोग एक भयंकर रोग है-यद्यपि ऐसे रोगी नहीं देखे गये परन्तु ऐसा संभव है कि वे रोगी तालाब आदिमें गिरकर आपत्त हत्या करले, किसी गाड़ीके नीचे आकर अपने प्राण समाप्त करले। यह रोग बहुत कम लोगोंमें देखा गया है। इसकी चिकित्सा भी समय साध्य है रोगीके पास रहने वाला व्यक्ति अधिक सतर्क रहना चाहिये। उसे उठते ही झटका लगाकर सचेत करना चाहिये। उसे भयाक्रान्त करना चाहिये तथा उसी औषधियाँ देनी चाहिये जो मस्तिष्क बल

हो। जवारके आटेकी मोटी रोटी एक ओरसे सेककर कच्ची तरफ घृत या घातशामक तैल लगाकर सरपर टोपीकी तरह रखकर बाँध देनी चाहिये। कुछ ऐसे प्रयोग जो मस्तिष्क प्रसादव हो अवश्य देने चाहिये। रोगीको ऐसी पुस्तकें तथा ऐसे विचार देने चाहिये जो मस्तिष्कको उत्तेजना न दें।

दूटती निद्रा—अत्यन्त ही व्यस्त लोगोंको जो दिन भर मानसिक परेशानीमें पड़े रहते हैं—तथा दीर्घ रात्रि तक नहीं सोते या जिन्होंने अपना सोनेका अभ्यास बहुत कम कर दिया है जैसे सट्टे वाले, फीचर वाले जिनके सिराहने टेलीफोन पड़ा रहता है, दूटती हुई नींद आती है। घंटे आधे घण्टे सोनेके बाद फिर उनकी नींद उड़ जाती है और वे घण्टे दो घंटे या सारी रात ही फिर नींद नहीं लेते। कई ऐसे व्यक्तियोंको नींद आती है उड़ती है और इस प्रकार बारम्बार आती तथा उड़ती रहती है। उन्हें मानसिक संतोष नहीं प्राप्त होता न उन्हें नींदके बाद जैसा हलका पन महसूस होना चाहिये वैसा ही होता है। दिन भर उनका मस्तिष्क, आँखें तथा शरीर भार बौझ से दबा रहता है जिन्दगीका आनन्द वे प्राप्त नहीं कर सकते। ऐसे व्यक्तियोंकी चिकित्सा ही 'निदान परिवर्जनम्' उनके मानसिक परेशानियोंके कारणोंको खत्म करनेका प्रयत्न करना चाहिये। उनके मस्तिष्कके अभावोंकी पूर्तिका प्रयत्न करना चाहिये। कई व्यक्ति ऐसी अवस्थामें भाँग आदि नशैली चीजोंका सेवन किया करते हैं यह आगे जाकर स्वास्थ्यपर बुरा प्रभाव डालता है। आदत पड़ जाती है फिर भी आराम नहीं मिलता। रोग मिटे या न मिटे एक मानसिक गुलामी और सिरपर आ बैठती है। इसीलिए जहां तक हो सके उन लोगोंका इस नशेबाजीसे अलग रखनेका प्रयत्न करना चाहिये।

निद्रा नाश—उपरोक्त प्रकारके रोगी ही जब आगे बढ़ते हैं और रोगके प्रभावमें अधिक आजाते हैं तब उन्हें रात रातभर नींद नहीं आती। दिन भर व्यावसायिक चक्करमें पड़े रहते हैं और रात भर तारे गिदते हैं। वे रात्रिमें इतने थक जाते हैं कि वे फिर कामको करनेके योग्य भी नहीं रहते। अतः रात

भर विस्तरपर लुटते पलटते रहते हैं। न तो निद्रा ही आती है न शान्ति ही प्राप्त होती है। ऐसे रोगियोंकी चिकित्सा भी उपरोक्त प्रकारसे ही की जानी चाहिये। तैलाभ्यंग, स्नान मस्तिष्क शान्ति ही इस रोगकी प्रधान चिकित्सा है। इनमें शारीरिक श्रम कराना जिससे कि पूर्ण शरीर थक जाय उपयोगी है।

अति निद्रा—कुछ व्यक्तियोंको जो अधिकतर कफ प्रकृति होते हैं तथा मेदाची होते हैं अधिक निद्रा आती है वे २४ घण्टेमें कमसे कम १६ घंटे नींद लेलिया करते हैं। कई व्यक्ति बैठे बैठे भी ऊँघ ले लिया करते हैं। इस प्रकार इनका कामका अभ्यास भी कम पड़ जाता है। और इसी कारण मेद वृद्धि और अधिक होती रहती है। ऐसे व्यक्तियोंका मुख भी निद्रावस्थामें खुला रह जाता है और लार गिरना, मुखसे श्वास लेना आदि लक्षण दिखाई देने लगते हैं। कई व्यक्तियोंके मुखसे तो इतनी लार गिरती है कि उनका तकिया गीला हो जाता है। ऐसे व्यक्तियोंकी चिकित्सा करते समय मेद तथा कफको कम करनेका प्रयत्न करना चाहिये। इसी आधारपर कुछ व्यक्ति ऐसे रोगियोंको चाय पीनेकी सलाह दिया करते हैं। भोजनके बाद नियमित रूपसे अद्रकका सेवन लाभदायक होता देखा गया है। अतिनिद्रा वह रोग है जो मनुष्यको बेकार कर देता है। कई विद्यार्थी वकील तथा अध्यापक बैठे बैठे बात करते करते ऊँघने लगते हैं। हम यह बता चुके हैं कि यह रोग कफ वृद्धिके कारण होता है। आयुर्वेदमें जो चिकित्सा अतिनिद्राकी कही गई है वही अतिनिद्राकी भी है परन्तु यह कफ वृद्धि अन्य रोग है अतः इसमें कफ कम करने वाली चिकित्सा करनी चाहिये। धारा कल्प (स्नेहधारा, तक्रधारा तथा दुग्धधारा) इस रोगकी बड़ी अच्छी चिकित्सा है। अति निद्रामें आहारपर अनुशासन रखना जरूरी है। मधुर अन्न तथा दुष्पाच्य द्रव्य कभी नहीं खाना चाहिये। खुराकसे कुछ कम भोजन ही करना चाहिये, मनुष्यको अभ्यंग स्नान तथा व्यायाम (अल्परूपमें) नित्य करना चाहिये। शीतल जलसे स्नान करना इसमें लाभदायक है।

निद्रा दन्त घर्षण—यह रोग बच्चोंमें अधिक

देखा गया है। बच्चे नींदमें दांत घिसा करते हैं। कई बालक तो इतनी तेज आवाज करते हैं कि दूरसे सुनाई पड़ने लगता है। साधारणतया देखा गया है कि जाग्रत अवस्थामें वे ऐसा नहीं करते ऐसे लक्षण वाले अधिकांश बालकोंके पेटमें कीड़े हुआ करते हैं। ऐसे बालकों को कृमिघ्न औषधि तथा मृदु विरेचन देना चाहिये। उदर शुद्धि होनेके बाद सप्ताहमें एक बार लगातार विरेचन दें, ऐसा बारबार करनेपर कृमि नाश होजाते हैं और बच्चा स्वस्थ हो जाता है। कई बार यह लक्षण आने वाले अरिष्टकी सूचना भी करता है। फिर भी यह तो स्पष्ट है कि यह एक लक्षण है स्वतंत्र रोग नहीं है।

निद्रामें मूत्र विसर्जन—कुछ बच्चोंको (बड़े-बड़े बच्चोंको भी) यह आदत सी होजाती है कि वह निद्रावस्थामें विस्तरोंमें मूत्र विसर्जन करें। कई-कई बच्चे तो निश्चय प्रति ऐसा करते हैं तथा कई सप्ताहमें एक दो बार भी ऐसा किया करते हैं छोटे छोटे बच्चों में यह रोग माता पिताओंकी इस रोगके प्रति उपेक्षा से बढ़ता रहता है और बड़े होनेपर इसे मिटानेकी चिन्तासे बढ़ता रहता है और बड़े होनेपर इसे मिटानेकी चिन्ता किया करते हैं। इस रोगका भी कारण कृमि हो सकता है, मूत्राशयका मांस सूत्र शिथिल होनेके कारण भी यह रोग हो सकता है। इस रोगमें वस्ति-प्रदेशपर मालिश, सेक तथा पेटमें मांस सूत्रोंके लिये लयपोषक औषधि प्रदानकर चिकित्सा करनी चाहिये। बच्चेको इस कार्यके प्रति घृणा पैदा करनी चाहिये तथा उसके मनमें स्वयंके इस कृत्य प्रति मानसिक परितप करना चाहिये। बच्चेको उल्टा नहीं सोना देना चाहिये। इस प्रकार धीरे धीरे यह रोग अधिकारमें लिया जा सकता है। कई बच्चोंको तो आयुवृद्धिके साथ ही इस रोगसे छुटकारा पाते देखा गया है।

स्वप्न और निद्रा—कई व्यक्तियोंको निद्रावस्था में स्वप्न आते रहते हैं ऐसे व्यक्तियोंको गहरीनींद कभी नहीं आती। रात्रिभर सिनेमा रीलकी तरह उनके स्वप्न चलते रहते हैं। ऐसी अवस्थामें रोगीको अपनी नींदके प्रति संतोष नहीं होता, न उसके मन तथा शरीरमें हल्कापन ही आता है। उसका

मस्तिष्क भी थक जाता है। रोगी परेशान रहता है। ऐसे रोगीको भी मस्तिष्क पोषक दवा देनी आवश्यक है तथा मस्तिष्कमें शान्ति लानेका प्रयास करना आवश्यक है गहरी नींद लानेपर स्वप्नोंकी कतार रुक जावेगी और रोगी कुछ आराम सहसूस करेगा।

निद्रामें स्थान परिवर्तन—कई व्यक्ति निद्रावस्था में इतने अचेत रहते हैं कि वे नींदमें क्या कर रहे हैं उन्हें पता नहीं रहता। एक स्थानपर सोया हुआ व्यक्ति उस वेहोशीकी अवस्थामें स्थान परिवर्तनकर सोया रहता है और प्रातः उठनेपर आश्चर्य करता है कि वह कहां सोया था और कहां आया। यह रोग सभी प्रकारके मनुष्योंमें हो सकता है। परन्तु पलंगपर सोनेवाले व्यक्तियोंमें यह रोग कम देखा गया है। रोगीकी चिकित्सा भी यही है उसका जमीन पर सोना बंद कर देना चाहिये। मानसिक परितप करनेपर यह सुधर सकता है।

स्वप्न प्रमेह—यह रोग एक मानसिक व्याघात है तथा कई पुरुषोंको कमजोर करता रहता है। यद्यपि यह रोग एक स्वतंत्र विषय रखता है। फिर भी हम इस रोगके मानसिक कारणको स्पर्श करेंगे और उसकी चिकित्सा मात्र देंगे। यह रोग उन लोगोंपर ही आघात करता है जो अपनी मानसिक शुद्धिको कायम नहीं रख सकते। साधारण तथा स्वप्न प्रमेहके कारणोंको हम तीन भागोंमें बाँट सकते हैं उनमें सर्व प्रथम और अत्यावश्यक है मानसिक उत्तेजना।

अधिक स्त्री सम्पर्क अप्राकृतिक मैथुन, परस्त्री संगम, वासना, उत्तेजक दृश्य साहित्य तथा कल्पना इस रोगके उत्पादक कारण हैं। इस रोगको मिटानेके लिये यह आवश्यक है कि निम्न बातोंका ध्यान रखा जाय।

(१) प्राणायाम तथा योगद्वारा मनको काबूमें करना तथा वीर्य तथा ओजको शरीरमें शोषित करना।

(२) पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन ऊर्ध्वरेता बननेका प्रयत्न करना।

(३) गृहस्थाश्रम—केवल प्रजोत्पतिके लिये संभोग करना ।

(४) मेदस्विताको कम करनेका यत्न करना ।

(५) स्वप्न प्रमेहके प्रति अपने मानसिक संशय को हटाना ।

(६) स्त्रियोंके साथ न बैठना ।

(७) सच्चरित्रवान मनुष्योंकी संगत करना ।

(८) शृङ्गार पूर्ण वातावरणका परित्याग, नस्य, रंग गान आदिसे दूर रहना ।

(९) कामोत्तेजक उपन्यास, कहानियाँ तथा अन्य ग्रन्थ न पढ़ना ।

(१०) धार्मिक तथा चरित्रोत्थापक ग्रंथोंका पठन करना ।

(११) सात्विक भोजन करना ।

(१२) शीतल जलसे खूब अच्छी तरहसे स्नान ।

(१३) कामोत्तेजना होनेपर मलमूत्र विसर्जन करना तथा खूब ठण्डे जलसे इन्द्रीको धोना ।

(१४) रात्रिमें सोते समय स्नान करना धार्मिक चिन्तन कर सोना ।

(१५) रात्रिमें दाहिने करवट सोना, सोते समय विस्तरके नीचे एक मोटा डंडा बीचमें (कमरके नीचे) रख देना ऐसा रोगी कभी भी उल्टा न सोवे ।

(१६) दिनमें कभी निकम्मा न बैठे ।

(१७) बाजारू या हल्के शब्दोंका कभी प्रयोग न करें न हल्के आदमियोंकी संगत ही करे ।

(१८) खुली हवामें रहे तथा वाटिका भ्रमण करें प्रातः काल नंगे पांव रहकर हरी दूब पर चले ।

(१९) जल्दी सोवे तथा जल्दी उठे ।

(२०) आयुर्वेदीय सद्बृत्तोंका पूर्ण तौरसे पालन करे ।

उपरोक्त सभी उपाय यथा साध्य करता रहे इससे स्वप्न प्रमेह ठीक होगा और मानव अन्य सभी व्याधियों से भी जहां तक संभव है बचता रहेगा ।

सच्चे स्वप्न—निद्रावस्थाके रोगोंमें कई रोग ऐसे भी हैं जो रोग होते हुए भी कभी कभी वरदान सिद्ध होजाते हैं । उदाहरणके तौरपर कुछ स्वप्न जो सार्थक होते हैं, कई स्वप्न जो निद्रावस्थामें आया करते हैं निकट भविष्यकी यथार्थ सूचना दे जाते हैं । ऐसे स्वप्न वरदान होते हैं नित्य प्रति जीवनमें आने वाली घटनाओंका भविष्य इन्हीं स्वप्नोंके द्वारा सूझा करता है । इसीलिये इन्हें वरदान माना गया है । इनकी चिकित्सा नहीं की जाती ।

निद्रावस्थामें समस्याओंका हल—ठीक उपरोक्त प्रकारसे ही दिन भरके कठिन श्रमके बाद जब मानव सो जाता है तो उसकी स्वपित अवस्थामें ही दिन भरकी उन समस्याओंका जिनका सुलभाव वह जागृत अवस्थामें न कर सका होता स्वपित अवस्थामें हो जाता है । यद्यपि हर व्यक्ति या हर स्वप्नके लिये यह संभव नहीं है फिर भी कई अंशोंमें यह सलुभाव होजाता है । इस अवस्थाकी चिकित्सा भी नहीं की जाती । क्योंकि इसे भी वरदान माना जाता है । कई बड़े-बड़े प्रोफेसरों के कठिनतम सवाल निद्रामें हल होजाया करते हैं । कई डाक्टरोंकी अपने रोगियोंकी चिकित्सा सम्बन्धी सुझाव भी निद्रावस्थामें ही आजाते हैं । विद्यार्थियोंके प्रश्नोंका हल तथा कठिनतम प्रश्नोंकी सूची भी नींदमें ही सामने आजाया करती है । निश्चय ही उपरोक्त स्थितिमें निद्रा एक वरदान है ।

यह एक सत्य बात है कि आयुर्वेदीय सद्बृत्त समस्त मानसिक रोगोंका एक अचूक प्रतिकार है । इनका यदि सत्यता तथा दृढ़ता पूर्वक मनुष्य पालन करता रहे तो निश्चय ही वह मानसिक रोगोंसे छुटकारा पा सकेगा । अतः जन साधारणमें जहां तक हो सके आयुर्वेदीय सद्बृत्त-रसायनका खूब प्रचार करना चाहिये ।

। शुभम् ।



आयुर्वेदको युगानुकूल बनाना जरूरी

उदयपुर (ढाक से) १-१२-६४

“यदि आर्थिक विषमताओं से मुक्त हमारे देशको पना स्वास्थ्य स्तर दूसरे देशोंके अनुकूल बनाना है आयुर्वेदको जीवित रखना होगा और उसे युगानु-ल बनाना होगा। निश्चित ही आयुर्वेद अब उपेक्षा। विषय नहीं रहना चाहिये, अन्यथा स्वास्थ्य-विहीन मारा राष्ट्र सभी क्षेत्रोंमें पिछड़ जायेगा।”

ये शब्द आज यहां उदयपुरमें सम्पन्न हो रहे अखिल राजस्थान आयुर्वेद विभागीय अन्तः कालेज प्रतियोगिताओंका उद्घाटन करते हुये इण्डियन मेडिसिन बोर्ड राजस्थानके अध्यक्ष श्री महन्तमुरलीमनोहर शरण कहे। बाहरसे आये हुए प्रतियोगियों और युवक बलाडियोंका स्वागत करते हुये श्री महन्त जी ने कहा कि आप लोगोंकी इस नई पीढ़ी पर आयुर्वेदके विकास का महान् दायित्व आ पड़ा है; और मुझे विश्वास है कि दूसरे विश्वविद्यालयीय स्नातकोंके सम्मान ही आप जी अपने मिशनमें सफल होंगे।

आरम्भमें महाविद्यालयके प्रधानाचार्य श्री श्यामसुन्दर शर्मा ने महन्तजी का स्वागत करते हुये आशीर्वादकी शमना की। समारोह में जयपुर, जोधपुर, सीकर, तनगढ़, सरदारशहर, पिलानी और उदयपुर सहित सात महाविद्यालय एवं उनके प्रतियोगी भाग ले रहे थे। उद्घाटन समारोह ओलम्पिक ध्वजोत्थोलनके साथ आरम्भ हुआ।

अनुसंधान समिति का प्रथम अधिवेशन

दिनांक १८-९-६४ को गान्धी विद्या मन्दिर, सर-रारशहरके प्रधान कार्यालयमें नव निर्मित अनुसंधान

समिति-आयुर्वेद विश्व भारतीका प्रथम अधिवेशन राजस्थानके सुप्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री श्री गौरीशंकरजी आचार्यकी अध्यक्षतामें हुआ। जिसमें ६-६-६४ को राजस्थानके आयुर्वेद मन्त्री श्री भीखाभाई द्वारा उद्घाटित अनुसंधान केन्द्रकी योजनाको प्रगति देनेके लिए विशेष रूपसे विचार किया गया।

मंगलाचरणके पश्चात् आयुर्वेद विश्व भारती द्वारा किये गये अश्वगन्धा नामक वनस्पति एवं जलोदर रोग पर उष्णी दुग्धके अनुसंधानात्मक प्रयोगोंका विव-रण प्रस्तुत किया।

तत्पश्चात् नगरके लब्ध प्रतिष्ठ एवं वयोवृद्ध वैद्य श्री रामप्रसादजी दीक्षित ने अपने चिरकालीन अनु-भवों द्वारा आयुर्वेदके अनुसंधानकी आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि अश्वगन्धा एवं वीरतरु नामक वनौषधियां क्रमशः गण्डमाला एवं मधुमेहपर अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुई है। अतः ऐसी वनौषधियोंपर अनुसंधान अत्यावश्यक है।

तदन्तर गान्धी विद्या मन्दिरके सहायक उपाध्यक्ष श्री गणेशमलजी दूगड़ने आयुर्वेदके अनुसंधानकी उपयोगिता बतलाते हुए कहा कि विटामिन्स एवं जीवाणु विज्ञानका आयुर्वेदके साथ समन्वय किया जाना चाहिए। आपने अपने संक्षिप्त भाषणमें एकौषधि प्रयोग करनेपर भी बल दिया।

गंभीर विचार विमर्शके बाद आयुर्वेदीय अनुसंधान के लिए निम्न विषयोंका निर्धारण किया गया :—

१. श्वास रोग—वैद्य श्री सोहनलालजीकी अध्यक्षतामें
२. रासयन कर्म—डा० श्री सुधाकरजी चौधरीकी अध्यक्षतामें।
३. मुष्टी योग—वैद्य श्री रामप्रसादजी दीक्षितकी अध्यक्षतामें।
४. पंचकर्म—श्री रामावतारजी शास्त्रीकी अध्यक्षतामें
५. विटामिन्स एवं जीवाणु विज्ञानका आयुर्वेदके साथ समन्वय—श्री वेदप्रकाशजी शर्माकी अध्यक्षतामें।
६. वनस्पति विशेष—अश्वगन्धा एवं शंखपुष्पी—श्री राजकुमार जैन, एच. पी. ए.।

उपर्युक्त महत्वपूर्ण निर्णयोंको लेनेके पश्चात् अध-क्षीय भाषण देते हुए श्री आचार्यजी ने मरुभूमिकी मूल्यवान वनस्पतियोंका सचित्र परिचयात्मक मासिक प्रकाशनका सुझाव किया एवं आयुर्वेदानुसंधानकी

संक्षिप्त रूप रेखा पर प्रकाश डाला ।

अन्तमें साभार धन्यवादके पश्चात् अधिवेशनकी कार्यवाही समाप्त की गई ।

प्रेषक—राजकुमार जैन

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलनका ४४

वां वार्षिक अधिवेशन, कानपुर

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन तथा निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठका ४४ वां वार्षिक अधिवेशन उत्तर प्रदेशके विशाल औद्योगिक नगर कानपुरमें दिनांक ७-८-६ मार्च १९६५ को सम्पन्न होना निश्चित हुआ है । इस अधिवेशनमें आयुर्वेद तथा वैद्य समाजसे सम्बन्धित समस्याओं, उन्नतिके उपायों, आयुर्वेद विषयक सरकारी नीतियों, तथा अन्य सम्बद्ध विषयोंपर विचार एवं निश्चय किये जायेंगे ।

अधिवेशनमें महासम्मेलनके सब ही सदस्य भाग ले सकते हैं । अधिवेशनोके सभापतियोंका निर्वाचन शीघ्र ही सम्पन्न होगा । अधिवेशनका विस्तृत कार्यक्रम यथासमय प्रकाशित किया जायेगा ।

अधिवेशनमें भाग लेने आने वाले वैद्य बन्धुओंके लिये आधे किरायेकी रेलवे कन्सेशनकी सुविधा प्राप्त है अर्थात् एक ओर के किराये से दोनों ओर की यात्रा की जा सकेगी । यह यात्रा एक मासकी अवधिमें पूरी की जा सकेगी । अधिवेशनमें भाग लेनेके इच्छुक वैद्य बन्धु इस विषयमें महासम्मेलन कार्यालयसे पत्र-व्यवहार करें जिससे कि उनके लिये रेलवे कन्सेशनकी व्यवस्था यथासमय की जा सके ।

जो वैद्य बन्धु अभी तक महासम्मेलनके सदस्य नहीं हो पाये हैं, उन्हें शीघ्र ही सदस्य बनकर इसे पुष्ट बनाना चाहिये । वार्षिक सदस्यता शुल्क ५) रु० मात्र है । मान्य सदस्योंको महासम्मेलन द्वारा प्रकाशित वैज्ञानिक मासिक पत्रिका भी निःशुल्कप्रदान की जाती है । सदस्यता आवेदनपर अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन, महालक्ष्मी मार्केट, चाँदनी चौक, देहलीसे प्राप्त किया जा सकता है ।

कैलाश चन्द्र अप्पवाल
प्रधान मंत्री

दिल्लीमें अ० भा० आयुर्वेद विचार गो
सम्पन्न

दिनांक २५-११-६४ के सायंकाल निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठके तत्वाधानमें आयोजित अखिल भारतीय आयुर्वेद विचार गोष्ठी महासम्मेलनाध्यक्ष कविराज श्रीअनन्त त्रिपाठी शर्मा अध्यक्षतामें अपने त्रिदिवसीय अधिवेशनके पश्चात् विसर्जित हुई । गोष्ठीमें भारतके विभिन्न प्रदेशों आये हुए लगभग १०० प्रौढ़ विद्वानोंने भाग लिया जिनमें भारतीय योजना आयोगके आनन्देरी आयुर्वेदिक सलाहकार वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा बम्बई, श्री विश्वनाथ द्विवेदी जामनगर, श्री बाबूराम मिहनाहापुड़, श्री बदरी विशाल त्रिपाठी, कानपुर, श्री स्वामी रामानुज जी तथा श्री प्रद्युम्नाचार्य हैदराबाद आदि नाम विशेष उल्लेखनीय हैं । गोष्ठीके प्रधान संयोजक आचार्य श्री हनुमत्प्रसाद शास्त्री थे ।

गोष्ठीका उद्घाटन २३ नवम्बरको भारत संस्कृतिके प्रतीक एवं आयुर्वेदके परमप्रेमी महाराज श्री डा० सम्पूर्णानन्द जी, राज्यपाल राजस्थान द्वारा किया । अपने उद्घाटन भाषणमें श्री राज्यपाल महाराज दयने आयुर्वेदकी मिश्रित शिक्षा प्रणालीका विस्तार किया और बताया कि मिश्रित प्रणालीसे हीन श्रेणी के डाक्टर ही बनते हैं न कि उच्च श्रेणीके वैद्य ।

उद्घाटनाधिवेशनमें भारतके ख्यातनामा उद्योगपति साहू श्री शान्तिप्रसादजी जैन मुख्य अतिथि रूपमें उपस्थित थे । आपने कहा कि आयुर्वेदके उत्थानके साथ साथ हमें इसीके अन्तर्गत यौगिक क्रिया को भी प्रोत्साहित करना चाहिये ।

दूसरे दिनके अधिवेशनमें आयुर्वेदके अग्रभक्त संसदीय कॉंग्रेस पार्टीके प्रधानमन्त्री श्री रघुनाथ सिंहजी मुख्य अतिथि थे । श्री रघुनाथ सिंहजी ने कहा कि बाहरके लोग भी आयुर्वेदकी ओर अब आकर्षित हो रहे हैं । आपने कहा कि इसमें मौलिक योगदान है । हमारी यह चेष्टा होगी कि आयुर्वेदका पूरा-प्रचार-प्रसार इस देशमें होना चाहिये । आयुर्वेद प्रति सरकारके सौतेले व्यवहारकी भी उन्नति आलोचना की ।

(शेष पृष्ठ ३१८ पर देखें)

साहित्य-समालोचना

पारिषद्यं शब्दार्थं शारीरं

पारिषद्यं शब्दशारीरं लेखकानां प्रयोजकानाञ्च प्र-
स्तुतिपत्रम् । श्री कृष्णानन्द स्वामि महाभाग संस्थापित
श्रीकृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन अजमेरतः प्रकाश्यते ।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन कलकत्तातः प्रकाशितं
पारिषद्यं शब्दार्थं शारीरं नामकं पुस्तकं समालोचनार्थं
प्राप्तम् ।

हर्षोल्लास पूर्वकं सूक्ष्मेक्षिकयेदं प्रतीयते यदस्य
स्यापरैर्निर्मातृभिराचार्य प्रवरैर्ब्रह्माविष्णुशिवरूपैश्चन्द्र-
मानु दामोदर रघुवीर महाभागैः शब्द शारीरं पारा-
रीणीणोत्तुङ्गतरङ्गैर्निर्मग्नानामध्यापकानां छात्राणाञ्चकृते
फलकोपममिदं शारीरं प्रेषितं प्रापितमिति महती दया
कृतेति पुनर्मचेतः प्रसीदति ।

तु प्राचीनायुर्वेद शरीरे संदिग्ध लेशोक्तानुक्त
शब्दानामर्थ संगतौ दुरुहा विचार सरणिः समापतिता
स्मासीत् । साह्यनल्प प्रयासेन प्रमार्जिता तैः । अनेन
शरीर शब्दकोशेन पुरातनानां शब्दार्थानां बोधविधौ
साहाय्यं प्राप्स्यते ।

किञ्च हृदयक्लोम नाभिकोष्ठाङ्गानां शब्दार्थं
संकलने विशदीकृतो विषयः । अन्येषामपि शिराधमन्या-
दीनामद्यावधि विचारणीयानां पर्यालोचनं कृतम् ।
शब्दस्य ब्रह्मणो हि दुरुहः पन्थाः, स च सुगमः कृतः ।
किमधिकं-विद्वानेव विजानाति विद्वज्जन परिश्रमम् ।
तहि बन्ध्या विजानाति गुर्वी प्रसववेदनामित्यनुभव
पूकर्या ।

त्रिभिरेभिर्महाशयैर्ग्रन्थनिर्माणे कियान् श्रमः
कृतः कथं तैरभ्यापतिता विपत्तयो निराकृता इति त
एव जानन्ति येऽनुभवन्तीति । धन्यवादाहो धन्या एव
ति । अतोऽत्यधिकमिदमुच्यते यदस्मिन्नर्थयुगे श्रीराम-
नारायणजी शास्त्रिणः सञ्चालक वैद्यनाथ प्रतिष्ठानस्य
वित्तं जलप्रवाहवत्प्रवाहयन्तः; श्राम्यन्तश्च शतशो
धन्यवादाहोः सन्ति ।

प्रति शब्दार्थं निर्धारणे कियान् व्ययः कृतोऽस्य
मूल्यं कियन्निर्धारितं कथमिदं कृतमिति विद्वद्भिरनु-
करणीयमेव धन कुबेरैः ।

यतोहि वित्तं प्राणैर्भ्योऽप्यधिकमीप्सितं भवति ।
यं प्रेषैः प्राणैस्तत्करः सेवको वणिक् च क्रीणाति ।

तदिदं धनं नैकपरिपत्सु समागतानामातिथ्ये सत्कार
विधौ च प्रवाहितं सहस्रशोमुद्राणां राशिरूपमिति
किन्नमहत्कार्यमनुपमं कृतं तैः ।

एतेविद्यानुरागिणरैतिहासिका विद्वत्सेवापरा
वरेण्या महाभागाः विद्वन्मूर्धन्या एवेति समात्मसः
उल्लासः ।

मोहाधिकेऽस्मिन् काले विद्वांसो यथैभिः सत्कृता
न तथा सर्वकारेणापि ।

किञ्च मृगेन्द्र इव स्वोपासितं प्रभुत्वं धनञ्च ज्ञान
यज्ञे हुतमित्यपि प्रमोदास्पदम् ।

एतेषां व्यापार पाठवसायुर्वेदोत्थाने च महान्
प्रयास इतिकृत्वा अभूत पूर्वा महाशयाः सन्तीत्यपि नाति-
शयितं वचः । को नाम भारते अन्यत्र च वैद्य लोको
जनलोकोवानाभिनन्दत्युपकारमेतेषामिति विरम्यते ।

सीता राम जोशी दाधीचो

नवल दुर्गीयः

स्वास्थ्य सम्पादकः

(पृष्ठ ३१७ का शेष)

तीसरे दिनकी गोष्ठीमें आयुर्वेदके परमभक्त गुज-
रात राज्यके स्वास्थ्य मन्त्री श्री मोहन लाल जी
व्यासने अपने भाषणमें शुद्ध आयुर्वेदिक पाठ्यक्रमपर
प्रकाश डाला तथा निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्या-
पीठको शीघ्र ही एक अखिल भारतीय आयुर्वेद विश्व-
विद्यालयमें परिवर्तित करनेका सुझाव दिया । विद्या-
पीठ मन्त्री श्री सीताराम मिश्रके अनुरोधपर श्री व्यास
जी ने आश्वास दिया कि गुजरात राज्यमें विद्यापीठकी
उपाधियोंको मान्यता प्रदान करा देंगे ।

गोष्ठी २५ उपगोष्ठियोंमें विभाजित हुई । आयुर्वेद
शिक्षणके विभिन्न पहलुओंपर इन गोष्ठियोंमें गम्भीर
विचार-विमर्श किया और अर्द्धरात्रि पर्यन्त प्रतिदिन
चर्चायें चलती रहीं । अन्तमें एक बृहद् समिति द्वारा
विद्यापीठ का ६ वर्षीय संशोधित पाठ्यक्रम तैयार किया
गया ।

गोष्ठीके अन्तिम अधिवेशनमें प्रस्ताव पारित हुए
वे साथ ही (अलगसे) भेजे जा रहे हैं ।

(वैद्य सीताराम मिश्र)

सन्तीति निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ ।

कृष्ण-गोपालकी शीतकालीन सेव्य औषधियां

माजून कुचिला—वातरोग और अग्निमांद्यको दूरकर आंतोंको बल देता है।

खमीरे गाजवां—हृदय और मस्तिष्ककी निर्बलतापर अच्छा लाभ करती है।

रोहिताग्नि—यकृदप्लीहावृद्धि, उदर, गुल्म अष्टीलाको भी दूर करता है।

शिलाजतु वटी—स्वप्नमेह, मूत्रकृच्छ्र, गुर्देके रोगोंपर हितकारी है।

प्रवाल पञ्चामृत—गुल्म, उदरप्लीहा, श्वास, कास आदिपर और हर तरहकी कमजोरीपर अक्सीर है।

पिप्पल्यासव—दीपन तथा पाचन है। क्षय, कास, गुल्म, उदर रोग, कृशता, ग्रहणी, अंत्रक्षय, पाण्डु एवं अश्वरोग नाशक है।

द्राक्षारिष्ट—दौर्बल्य, श्वास, कास, अरुचि, रक्ताल्पता, मन्दाग्नि, क्षय एवं दौर्बल्यता नष्टकर शरीरको पुष्ट करता है।

ब्राह्मी घृत—शीतल, वातपित्तशामक, ज्ञान (मनो) वह स्रोतोंका शोधक है। स्मरणशक्तिका अध्ययनजन्य मस्तिष्ककी निर्बलता, निद्रानाश, बुद्धिमांद्य आदिपर यह घृत सर्वश्रेष्ठ सिद्ध हुआ है। इसको बच्चे, बुढ़े, जवान हर मौसममें सेवन कर सकते हैं।

सुवर्णपर्पटी—पित्तप्रकोपज ग्रहणी, संग्रहग्रहणी, पाण्डु, क्षय, अतिसार, पुरानी संग्रहणी, मुंहसे लेकर गुदा तक छाले होजानेसे सफेद दस्त होना, भोजनकी अपेक्षा मल अधिक परिमाणमें निकलना आदि कृच्छ्रसाध्य रोगोंको समूल नष्ट करती है। इसका प्रयोग लम्बे समय तक जब तक स्वस्थ न हो करना चाहिये। सभी भारतवर्ष के वैद्य व श्रेष्ठ वर्गसे इसके गुण छिपे हुए नहीं हैं। यह कमजोरीकी अव्यर्थ औषध है।

सुवर्णवंग—मधुमेह, धातुमेह बलहानि, दुःस्वप्न फिरंगविष, जीर्ण उष्णवातसे मूत्रमें दाह, सन्धिवात और मन्दाग्निपर लाभ करता है।

श्वासरोगान्तक वटी—नया पुराना श्वास रोग जिससे कफ बहुत गिरता हो श्वासनलिका कफसे पूर्ण रहती हो उसपर लाभ पहुँचाती है।

लघुलाई चूर्ण—ग्राम संग्रहणी, प्रवाहिका, अग्निमांद्य, उदररोग आदिपर हितकर है।

प्रेमी ग्राहकोंको शुभ सम्मति

कृष्ण-गोपालकी रत्न, मुक्ता, स्वर्णप्रधान कुब

लाभप्र, औषधियाँ

नवरत्नकल्प - योजस्तेजोवृद्धिकारक, मधुमेह-नाशक, बल्य, रसायन ।

जवाहरमोहरा (रत्नप्रधान)-हृदयकी घबराहट, हृदयवेगका बढ जाना, हृदयशूल, थोडा चलनेपर श्वास, विचार तथा स्मरणशक्तिका ह्रास व निर्बलतापर श्रेष्ठ है ।

ब्राह्म रसायन (सुवर्ण)—रक्तचाप (ब्लडप्रेसर) समत्वकारक, उदरगोधक, अग्निप्रदीपक, मस्तिष्क-शान्तिप्रद ।

च्यवनप्राश (स्वर्णादि भस्मयुक्त)—श्वास-कास, तथा दौर्बल्यनाशक, बल-वृद्धिवर्द्धक रसायन ।

सुवर्ण भूपति रस—सर्व प्रकारके सन्निपात, आमवात, धनुर्वात, कम्पवात, शूल, संग्रहणी, पाण्डु, कुष्ठ, गुल्म, उदादत और विषविकार आदि रोगोंपर श्रेष्ठ है ।

चतुर्भुज रस—समस्त वातरोग-नाशक, शोष, मन्दाग्नि-नाशक, पौष्टिक ।

कामवृद्धामणि रस—शोथल, पौष्टिक, रसरक्त-वर्द्धक, मानसिक निर्बलता, योजःक्षय-नाशक ।

अम्बर-कस्तूर्यादि वटी—निर्बलता, पुरुषरोग, दुर्बलता आदिको नष्ट करती है ।

वसन्तकुसुमाकर—पौष्टिक, शुक्रवर्द्धक, सर्व प्रकारके स्त्री-पुरुषरोग नाशक ।

सुवर्णमालिनीवसन्त (बृहत्)—जीर्णज्वर, दिल-दिमागकी कमजोरी व शुक्ररोग नाशक ।

लक्ष्मीविलास रस (सुवर्ण)—हृद्य, पौष्टिक, मस्तिष्क-बलवर्द्धक, यकृत-बलवर्द्धक ।

बृहद् ब्राह्मी वटी (सुवर्णयुक्त विशेष)—मस्तिष्क, वातवाहिनियां और हृदयकी सबल बनाती है । मन्थर ज्वर, सन्निपात, हिस्टीरिया और हृदयकी निर्बलतापर श्रेष्ठ है ।

लक्ष्मीविलास (नारदीय)—हृदय व मस्तिष्क-बलदायी, श्वास-कास, ऊर्ध्व-जत्रुगत रोगोंमें लाभप्रद, शुक्रप्रय व पाण्डुनाशक ।



अंक ६] माघ कृष्णा ३० विक्रम सं० २०२१ [फरवरी

भारतके रक्षामंत्री श्री यशवन्तराव चौहान-आयुर्वेदके प्रति
 श्रद्धा और विश्वासके साथ घोषणाकरते हैं कि

आयुर्वेद बहुत प्राचीन विज्ञान है तथा भारतीय संस्कृतिका
 अमर अटल सिद्धान्त है।

आजके युगमें इसके मर्मज्ञ विद्वान् वैद्य बहुत कम रह गये हैं।

यदि प्राचीन पद्धतिमें इसका फिर अभ्यास कराया जावे पूर्ण
 अध्ययन और प्रेक्टिकलके साथ इसका पुनर्नवीनीकरण किया जावे
 तो यह आयुर्वेद विज्ञान सभी चिकित्सा पद्धतियोंमें मूर्धन्य साबित
 हो सकता है।

— परामर्श मण्डल —

वैद्य श्री प्रेमशंकरजी भिषगाचार्य
संचालक आयुर्वेद विभाग राजस्थान ।
वैद्य श्री नित्यानन्दजी आचार्य,
पिलानी ।

वैद्य श्री रमेशचन्द्रजी व्यास
भिषगाचार्य ध० अजमेर ।
वैद्य श्री अम्बालालजी जोशी
साहित्यायुर्वेदरत्न, जोधपुर ।

विषय-सूची *

| क्रमांक | विषय | लेखक | पृष्ठानक |
|---------|---|----------------------------------|----------|
| १. | आत्रेय वचन | | ३१९ |
| २. | जन वाणी | वैद्य श्री कपूरचन्दजी विश्वार्थी | ३२० |
| ३. | छोटे ग्रामोंमें स्वास्थ्य रक्षा की आवश्यकता | सम्पादकीय | ३२१ |
| ४. | नामर्दी (नपुंसकता) का निदान तथा चिकित्सा | वैद्य पं० श्री मुकुन्दगमजी योगी | ३२४ |
| ५. | प्रतिश्याय | श्री सीतारामजी जोशी | ३२५ |
| ६. | धातुस्राव | डा० श्री द्वारका प्रसादजी नामदेव | ३२७ |
| ७. | मनका देहसे सम्बन्ध | पं० श्री विश्वेश्वर दयालुजी | ३२९ |
| ८. | योषापस्मार (हिस्टेरिया) | आचार्य श्रीगयाप्रसादजी शास्त्री | ३३२ |
| ९. | स्वाद्यमें ही सब औषध है | डा० श्री कुलरंजनजी मुखर्जी | ३३५ |
| १०. | निद्राका अध्ययन | श्री अरविन्दाश्रम | ३३७ |
| ११. | पुरीषवह स्रोतस् की व्याधियां | श्री शिवचरणजी ध्यानी | ३४० |
| १२. | मानसिक विकारोंसे उत्पन्न रोगोंकी चिकित्सा | वैद्य पं० श्री चन्द्रशेखरजी जैन | ३४७ |
| १३. | धूमपान | श्री सीतारामजी जोशी | ३४४ |
| १४. | चिकित्सायां चरकस्य वैशिष्ट्यम् | वैद्य श्री मदनकुमारजी शास्त्री | ३४९ |
| १५. | आयुर्वेद जगत् | | ३५४ |

सभी लेखकोंसे नम्र निवेदन

१. एक प्रति अपने लेखकी अपने पास रखें । लेख वापिस नहीं भेजा जावेगा । यदि कोई लेख वापिस माहेगा तो पोष्ट व रजिष्ट्रीका व्यय मंगाने वालेको देना होगा ।
२. एक माससे अधिक दिनों तक लेख सुरक्षित नहीं रखा जावेगा ।
३. पुरस्कार सभी लेखकोंको नहीं दिया जावेगा और हर मासमें एक ही व्यक्तिका लेख प्रकाशित करना अनिवार्य नहीं होगा ।
४. पुरस्कारके लिए हमें कोई बाध्य न करें । लेखकी उत्तमता और पुरस्कार जो उचित समझा जायेगा; किया जावेगा बिना मांगे ही पुरस्कार दिया जाता है ।
५. लेखका प्रकाशित करना न करना सम्पादकी इच्छाके आधीन है । आवश्यक पत्रोत्तर अवश्य आयेगा ।

—सम्पादक

श्रीधन्वन्तरये नमः



स्वास्थ्य



(स्वास्थ्य, सुख और सुख शान्ति का मार्ग दाक पत्र)

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः ।

यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

प्रधान संपादक—

वैद्य सीताराम शर्मा जोशी

सह संपादक—

वैद्य बद्रीनारायण शर्मा

वर्ष १२. अङ्क ६] कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर) [फरवरी १९६५

आत्रेय वचन

रजस्तमोभ्यां युक्तस्य संयोगोऽयमनन्तवान् ।

ताभ्यां निराकृताभ्यां तु सत्त्वबुद्ध्या निवर्तते ।

विश्व
शा० १ अ०

भगवान् महर्षि चरक उपदेश करते हैं कि—

हम अनन्तकालसे एक देहको छोड़ दूसरे देहके साथ संयोग करते आ रहे हैं और नाना योनियोंमें दुःख पाते आ रहे हैं इस दुःखका कारण देह देही संयोग है ।

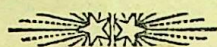
इस संयोगका कारण (देहके साथ आत्माका बन्धे रहनेका कारण) रज तम दो दोष हैं (दो बेड़ियां हैं) । अर्थात् सकाम कर्म रजोगुणको बढ़ाते हैं तथा हिंसा चोरी आदि निषिद्ध पापकर्म तमोगुणको बढ़ाते हैं ।

यदि हम सकाम कर्म और पापाचार (रागद्वेषात्मककर्म) छोड़ दें तो सतोगुण की वृद्धि होकर रजतमके बन्धनसे मुक्त हो सकते हैं । और यह जन्म मरणरूप अनन्तकालका संयोगरूप दुःख हमारा दूर हो सकता है ।

पापकर्म तथा सकाम कर्मोंसे बन्ध और निष्काम शुभ कर्मोंसे मोक्ष होता है यह कहनेका महर्षिका आशय है । यदि हमें जन्म मरण मिटाना है तो राजस. (सकाम कर्म) तामस हिंसा आदि द्वेषात्मक पापाचार छोड़ देने चाहिये ।

— जन वाणी —

लेखक—वैद्य कपूरचन्द विद्यार्थी दमोह (म० प्र०)



भोग अनन्तानन्त है रोग अनन्तानन्त ।
बिन संयम संतोष के नहिं जीवन आनन्द ॥१॥

बीज एक बोवत कृषक उपजत होय अनेक ।
सो ही तेरे कर्म फल सुख दुख का है लेख ॥२॥

काहे निंदित और को किसे दिखावत रोष ?
करनी के फल पा रहा देख आपने दोष ॥३॥

यह संसार विशाल नद अगम अनन्त अथाह ।
परमारथ रत पुरुष को सुलभ स्वर्ग की राह ॥४॥

नहिं काहू को दुख घना नहिं काहू को चैन ।
अपना अपना कर्म फल भोगत सब दिन रैन ॥५॥

पढ़ लिख कर जागा नहीं यदि हिय मांहि विवेक ।
तो शिक्षित जन मूर्ख में रहा कौनसा भेद ॥६॥

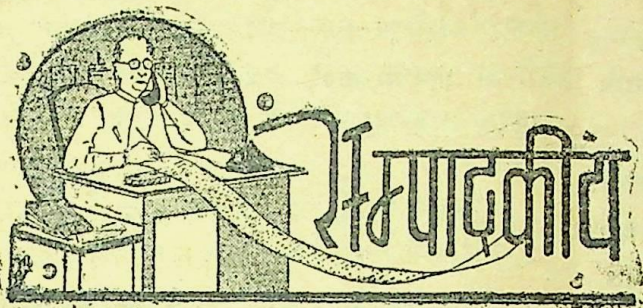
देहिं अपाहन द्वार दर सबन सीख संदेश ।
कर्मन फल भोगत फिरत सह बहु काय क्लेश ॥७॥

सज्जन प्रति श्रद्धा नहीं नहिं सद् गुण प्रति चाव ।
ऐसे जन दारिद्र दुख भोगहिं सुख अभाव ॥८॥

कंचन निखरे अग्नि संग जल संग मैला वस्त्र ।
निखरे नीच सुसंग से युद्ध स्थल विच शस्त्र ॥९॥

छोटे ग्रामोंमें

स्वास्थ्य रक्षा की आवश्यकता



दो चार बार आयुर्वेदके बारेमें भाषण दे दिया कई बार मीटिंग बुला ली, अनेकवार अनेक प्रस्ताव भी पास कर डाले। चायपार्टी और स्वल्पाहारके लोभसे अपने इष्ट मित्रों सहित उपस्थिति रजिष्टरमें हस्ताक्षर भी कर दिये, एक दो जगह या दश बीस जगह कार्य कारिणीके कार्य समाचार भी प्रेसोंमें छपा दिये, ऐसा मालूम हुआ मानों आयुर्वेदकी उन्नतिमें प्रयत्न करनेमें कसर नहीं छोड़ी। अच्छे अच्छे वेश-भूषामें सजे हुए आयुर्वेदका उद्धार करनेवाले ये लोग ऐसे मालूम पड़ने लगे मानो देवेन्द्र स्वर्गमें आयुर्वेद समुद्रका अमृत मन्थनकर जनताको अजर अमर बना देंगे। पर इनसे कर्तव्य पूरा नहीं माना जा सकता।

ये नेता लोग-यदि शीतकालमें अतिशीत और अत्युष्ण ग्रीष्म ऋतुमें गाँवड़ोंमें (छोटे छोटे गाँवोंमें) पहुँचे तो उनको मालूम हो जावे कि स्वास्थ्य विभागका क्षेत्र यह है।

शहरोंके वनिस्पत गाँवड़ोंमें पशु तो शीतउष्णसे मरते ही हैं परन्तु इस अकाल मौतसे बहुतसे मनुष्य भी मर जाते हैं।

जहाँ तक सुना है गावोंमें शर्दीके दिनोंमें गरीब रोगी औषधके बिना और साधनोंके बिना मरते हैं।

आँखों देखा हाल है कि एक ब्राह्मण जो गरीब था परिवार स्त्री विहीन एकाकी शर्दीके दिनोंमें ऐसा बीमार हुआ कि शर्दीसे कई दिन मूर्च्छित ही रहा।

साधन हीन वैद्यजी उसके पास पहुँचे भी परन्तु परिचारकके अभावसे २४ घण्टे उसकी सेवा करना

कठिन होगया।

अन्य परिवारके और गाँवके मनुष्योंको बुलाया भी गया कोई नहीं आया। जैसे तैसे किरायेके परिचारकोंद्वारा एक खाटमें डालकर उसे छोटेसे दवाखानेके पास लाया गया, आते आते उसके प्राण निकल गये।

मरनेपर कुटुम्बियोंने उसके भोंपड़ेपर कब्जा किया और उसके मकानके टीन बेचकर मृतक भोज किया।

उसके पास ओढनेको सोड नहीं थी फटा गूढ़ा जो भी छोटा था। वास मारते हुए उस गूढ़ेमें उसने दो दिन शर्दीके निकाले। न कोई पानी पिलाने वाला मिला।

न कोई दवा लाकर देने वाला मिला। किसीसे वैद्यजीने सुन लिया था अतः वहाँ वैद्यजी पहुँचे थे सोड़का प्रबन्ध वैद्यजी कहाँसे करते।

ऐसी स्थितिमें वैद्यजीके पास पाँच शय्याका प्रबन्ध होता तो जवान ब्राह्मण शीतसे बिना दवासे नहीं मरता।

गाँवड़ोंमें एक एक व्यक्तिके पास एक एक फूसका भोंपड़ा रहता है स्वयंके लिए ही पर्याप्त नहीं होता तब दूसरेको कहाँ रख सकते हैं।

अतः मुझे ऐसा लगा यदि सरकार १० हाथ लम्बी छान बन्धाकर दो चार शय्या दशबीस सोड़ सेवार्थ और काय पिलानेके वर्तन भी डाल दें तो रोगी मरें ही नहीं।

यह कोई अधिक खर्च वाली वस्तु नहीं है। नेता

लोग एक दिन की टीपार्टी भत्ता छोड़ दें तो गरीबोंके छोटे अस्पतालकी रचना हो सकती है।

और यदि एक जीप (Jeep) या बस (Bus) मिलजावे कि जिससे रोगी शहर तक पहुँचा दिया जावे तो इससे अच्छा स्वास्थ्य सुधारका कर्तव्य पालन होसकता है।

परन्तु यह बात गांवमें पहुँचें तब ही सालूम हो।

शर्दी गर्मीमें एक चक्र अवश्य लगावें तो सभा और भाषणोंसे ज्यादा अच्छा लाभ होसकता है। और परिस्थितिका परिचय भी प्राप्त किया जासकता है।

जीवोंको सुख पहुँचाना ही चिकित्सा व स्वास्थ्य विभागका ध्येय होता है।

मान लीजिए एक दीन हीन गरीब शीतज्वराक्रान्त होगया जिसके पास घरमें भी शीत निवारणार्थ वस्तु नहीं, निवात स्थान नहीं है भोजनके लिए अन्न नहीं। ऐसी अवस्थामें वैद्य जी दवाकी पुढियां बान्ध दे तो क्या उसकी पूरी चिकित्सा हो गई समझी जावे। कहनेका तात्पर्य यह है कि प्रामीण जनताका स्वास्थ्य साधन हीनताके कारण बहुत बिगड़ता रहता है बहुतसे गरीब अन्न और सोड़के बिना खाली दवा मात्रसे कैसे ठीक हो सकते हैं।

अतः सरकारको अथवा सरपंचोंको चाहिये कि चार परिचारक एक रोगी शय्याका सकान शीतनिवारणार्थ गरम सोड़ सोड़िया कम्रल इनका इन्तजाम अवश्य करें।

और एक मोटर नहीं तो तांगा, ऊंट तांगाका स्थायी प्रबन्ध पञ्चायतकी तरफसे अवश्य होना चाहिये एक एक गांवमें फ्री इन्तजाम रोगी व भूखेको अन्न मिले ऐसा होना ही चाहिये।

रोगोंमें भी महारोग भूखका है। सरकारका पहला कर्तव्य यह है कि पहले भूखके रोगकी चिकित्सा करावें।

इस रोगके लिए रोजगार दिलाना भी चिकित्सा है। वह स्वस्थ स्वास्थ्य रक्षणके अन्तर्गत है।

मनुष्य स्वस्थ है यदि साधन न होगा तभी तो रोगी होगा यदि स्वास्थ्यचर्या की जावे तो रोग होवे ही नहीं। यदि सदाचार पालन ब्रह्मोपासना न कर सके तो भोजन वस्त्रका प्रबन्ध तो न कर सके।

आवश्यक ही है।

दूसरे नम्बर पर आयुर्वेदका प्रयोजन है आतुर विकार प्रशमेऽप्रमादः। यदि रोगकी शुरुआत होने लगे तो झटपट शीघ्र उसके हटानेमें उद्योग करें प्रमाद या उपेक्षा न करे अन्यथा रोग बलवान हो जावेगा।

अभिप्राय यह है कि रोग क्यों होता है गांवोंमें भी रोगी क्यों मरते हैं उसका उपाय पहले करे।

निवेदन करनेका अर्थ यह है कि साधन हीन रोगीके लिए जिसको जैसा उचित हो सभी मिलने चाहिये। इसके लिए चार परिचारक इसी कार्यके लिए नियुक्त हों।

जिनके घरमें एक ही व्यक्ति है और वह अकस्मात् बीमार हो गया तो, एक उसको दवा ला दें, एक उसकी अन्य पथ्यादि परिचर्या करे। दो परिचारक रातको सम्भालें। यदि घरमें ऐसा प्रबन्ध न हो सके तो उसे आरोग्य शालामें ले आवें।

उसी गांवमें उत्पन्न होने वाली लता, पुनर्नवा अर्क, अपामार्ग, इन्द्रायण, कण्टकारी, गुडूची आदिका संग्रह रखें वैद्य न पहुँचे तब तक साधारण काथ पिलावें।

५ पांचसे अधिक बीमार हो तो बड़े शहरमें पहुँचा दें।

इतना प्रबन्ध तो फ्री होना जरूरी है। जिसके घरमें अन्न वस्त्र न हों दवाके पैसे वास्तवमें न हों उसके लिए औषध अन्न और निवात स्थान वस्त्र और परिचारकका इन्तजाम अवश्य होना चाहिये।

न कि सरकार सब निकम्मे, भूखे, ठलवे मनुष्योंको भोजन वस्त्र दे।

जो वास्तवमें दयनीय स्थितिमें है। उनका सारा भार जनताके मुखिया या सरकारपर है मरनेके बाद भी सरकार जलानेका प्रबन्ध करती ही है पहले ही रोगीका साधनोंसे उपचार करदे तो ठीक ही है।

सभी सुख चाहते हैं। वास्तवमें गरीब कौन है आजकी जनतासे छिपा हुआ नहीं है कि मुफ्त सेवाके लायक कौन है इसके लिए जनतापर कर लगाया जावे तो जनता इन चार परिचारक और अन्न वस्त्रके भारकी सह्य स्वीकार करेगी।

जनताका विराट रूप है। उसमें दया करने वाले भी हैं अच्छे बुरे सभी तरहके हैं यदि स्वास्थ्य विभाग इस दुखकी खोज करे तो जनता और सरकारमें अत्यधिक प्रेम सहानुभूति भी उत्तरोत्तर बढ़ सकती है।

सबको सुख पहुँचाना किसको क्या दुख है सुनना यह सर्वोपरिधर्म है यही कर्तव्य है।

सुना है कि पाली ताणा (गुजरात) में वैद्य सम्मेलन हुआ। दो हजारके करीब वैद्योंकी उपस्थिति थी दिसम्बर मासमें कड़ाके की शर्दीमें हजारों नर नारियों ने उस सम्मेलनमें सहयोग दिया।

भोजन और शीतकालीन वस्त्रोंका प्रबन्ध किया महिलाओंने स्थान स्थानपर धन्वन्तरि भगवानकी मूर्तिपर पुष्प वर्षाये। सम्मेलन सफल हो शुद्धायुर्वेदका प्रचार हो इस प्रकारके उच्चघोषमें सारा नगर और आकाश मण्डल गूँज उठा।

बड़े बड़े आयुर्वेदके महर्षियोंने प्राणपणसे (जिनमें मुरारजी भाई, श्री मोहनलालजी व्यास, रसिकजी भाई आदिका नाम उल्लेखनीय है। आयुर्वेदको उन्नत बनानेमें जनतासे अनुरोध किया। राजा महाराजाओंने प्रबल आयुर्वेद प्रचारका समर्थन किया जनताके प्रमुख

सेठ साहूकारोंने अत्यन्त उत्साह दिखलाया।

इन सब बातोंको देखकर या सुनकर चित्त प्रफुल्लित होता है कि प्रत्येक प्रान्त अब आयुर्वेदके उपकारोंको समझने लगा है।

प्रतिस्पर्धासे भी आयुर्वेद जगत् जग उठा है। डाक्टरोंकी प्रतिस्पर्धाने वैद्योंका बड़ा भारी उपकार किया उन्हें जगा दिया यह सब खुसीकी बातें हैं।

निकट भविष्य में ही आयुर्वेदीय चिकित्सा राष्ट्रीय घोषित होजायगी और यह भी आशा और विश्वास है कि पूर्वोक्त हमारी आशासे पूर्ण होंगी।

अधिकारी गाँवड़ोंमें पहुँचेंगे प्रत्येक गरीब अमीरकी चिकित्सा होगी और हमारा देश सर्व साधन सम्पन्न होगा। गरीबी भूख मरी दूर होगी पर अभीसे उधर ध्यान दिलानेके लिएलेखकका प्रयास है।

पूर्वोक्त योजनासे करनेवाले करानेवाले, और अनुमोदन समर्थन करनेवाले तीनोंका ही भला है। यह समझ कर गरीबोंकी जनता गाँवड़ोंमें विशेष है उसके पास सेवाके लिए पहुँचना चाहिये यही सरकारी नेताओंसे अर्ज है।

कृष्ण-गोपालकी गैसहर वटी

आजकल अनेक मनुष्योंके पेटमें मन्दाग्नि, अजीर्ण तथा आंतोंमें सड़ान होनेसे गैस (वायु) बना करती है जिससे पेटका फूलना, उदरशूल, खट्टी या बांटीकी डकारें आना तथा घबराहट आदि अनेक लक्षण उत्पन्न होते हैं। इस रोगका उपचार न करनेसे आगे चलकर आंतमें कैंसर जैसे घातक रोग उत्पन्न होते देखे गये हैं। भवनने अपने ३० वर्षके अनेक रोगियोंपर अनुभव करके जनहितार्थ इस महारोगसे पिण्ड छुड़ानेके लिये इन गोलियोंका निर्माण किया है।

जब भी पेटमें गैस उत्पन्न हो १ या २ गोली जलानुपानसे ले लेनेपर तुरन्त अपानवायु नीचेके मार्गसे खुलकर पूर्ण शान्ति प्राप्त होगी। भोजनोत्तर दोनों समय वटी ले लेनेसे अन्नपाचन सुखपूर्वक होता है, शौच साफ हो जाता है तथा यकृतकी खराबी दूर होकर स्वास्थ्यवृद्धि होती है।

मूल्य—१० ग्राम, ०-९०। ५ ग्राम, ०-५५।

यूनानी चिकित्साशास्त्रमें—

नामर्दी (नपुंसकता) का निदान तथा चिकित्सा

लेखक:—वैद्य चक्रवर्ती पं० मुकुन्दराम योगी आयुर्वेदाचार्य

वाईस प्रिंसिपल—श्री हनुमान आयुर्वेद कालेज रतनगढ़ (राजस्थान)

नामर्दी या नपुंसकताका मतलब स्त्रीविषय सम्बन्धी दुर्बलता का है। जानना चाहिये कि विषय शक्तिका उत्तम यानि पूर्ण होना शरीरके मुख्यांगोंके पूर्ण स्वस्थ होने यानि दिल, दिमाग, यकृत, आमाशय, गुर्दा आदिके ऊपर निर्भर है। वर्तमान समयमें यह बीमारी अधिकतासे पाई जाती है। अतः यह उचित प्रतीत हुआ कि इसका इलाज तथा कारण वर्णन किया जावे।

पुंस्त्व शक्ति अर्थात् मरदमी ताकत एक ऐसी स्वाभाविक इच्छा है जो प्रत्येक गरीब अमीरको हुआ करती है तथा इस शक्तिका रहना प्रत्येक मनुष्यके लिये आवश्यक है क्योंकि इसके दो लाभ प्राप्त करने आवश्यक हैं। प्रथम सन्तानोत्पत्तिका जारी रहना दूसरा सांसारिक आनंद, जिस मनुष्यमें यह शक्ति नहीं होती वह जिंदा ही मुर्दाके समान है अतः प्रत्येक मनुष्यको यह अत्यावश्यक है कि यथा संभव इस ताकतको सुरक्षित रखें और अपनी विवाहित स्त्रीको छोड़कर किसी भी अन्य स्त्रीकी ओर विषय दृष्टि या बुरा विचार न रखें क्योंकि इसमें कई प्रकारके खतरे हैं या इस लोकमें जान, धर्म और मालकी हानि तथा परलोकमें भी दुर्गति बल्कि इतना ही नहीं व्यभिचारी आदमी इस दुनियामें अविश्वासी तथा हमेशा बुरी हालतमें जलील ही रहता है तथा सूजाक, आतशक (गर्मी), कुष्ठ तथा क्षय रोग आदि भयंकर रोगों का होना भी विषय की अधिकता तथा अय्याशीके परिणाम (नर्ताजे) हैं। मतलब यह है कि विषयी आदमी अपनी जानका खुद दुश्मन होता है। एक मर्यादा को उल्लंघनकर स्त्री प्रसंग बिल्कुल उचित नहीं। इसी तरह नाबालिग व बूढ़ी, बीमार तथा ऋतुमती स्त्रीके साथ भी सहवास निषिद्ध है। परन्तु यदि स्वास्थ्यके नियमों को दृष्टिमें रखकर स्त्री प्रसंग (मैथुन) किया जावे तो अत्यन्त लाभकारी है तथा बहुतसे रोगोंसे छुटकारा

हो सकता है क्योंकि वीर्य भी भोजनके मलोंमें चुभु श्रेणीका मल है यूनानी सिद्धान्तसे वीर्यका भी निकलना आवश्यक है छोड़कर उन महापुरुषों को जो उध्वरेता हैं यानि जिन्होंने ब्रह्मचर्य व प्राणायामादिके द्वारा अपने वीर्यको मस्तिष्कमें स्थापित कर लिया है या कोई अत्यन्त मनस्वी विचारक जो दिन रात लोकोपकारके लिये इधर ध्यान ही नहीं देते बल्कि अत्यन्त परिश्रमकर लोकोपकारमें लगे रहते हैं उनका वीर्य शक्तिका व्यय उपरोक्त लोकोपकार कार्योंमें लगा रहता है अतः उन्हें मैथुन करनेसे कोई हानि नहीं होती इनके अतिरिक्त सर्व साधारण जो अविवाहित या पृथक् रहते हैं तथा बहुत दिनोंतक मैथुन नहीं करते उन्हें रक्तविकार तथा उन्माद आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं क्योंकि जो लोग दीर्घकाल तक स्त्री प्रसंगसे पृथक् रहते हैं उनका वीर्य जब खलित होता है उसे वे बाहर नहीं निकलने देते तब वह वीर्य वहीं रुक जाता है या तो उन्हें शुक्राशमरी हो जाती है या उसके बुखारात दिल दिमागमें पहुँचकर मूर्छा, अपस्मार, शिरदर्द, दृष्टि दौर्बल्य, शिशन दौर्बल्य, शारीरिक दौर्बल्य, अग्निमांद्य, अनिद्रा, बेचैनी व चिन्ता आदि व्याधियां उत्पन्न कर देते हैं।

यह जानना चाहिये कि विषयशक्तिमें दुर्बलता कई कारणोंसे हुआ करती है।

(१) शारीरिक दुर्बलता भोजनकी कमीसे रक्त कम बनना तथा रक्तकी कमीके कारण प्रेरक वायु व शक्ति व वीर्यकी अल्पता होती है जो विषयशक्ति के लिये आवश्यक है इन्हें रुह, रीह तथा मनी यूनानी कहा गया है ऐसी हालतमें बलवीर्य वर्धक अहार तथा रक्तवर्धक पथ्य देना चाहिये।

(२) वीर्यका स्थिर हो जाना कारण इसका अफीम भांग आदि नशीली चीजोंका सेवन करना इसका

प्रतिश्याय

लेखक—सीतारामजी जोशी

जुकाम एक मोटा रोग है। मोटा इसलिए है कि सभी ऋतुओंमें सर्दीके दिनोंसे ज्यादा गर्मियोंमें अधिक होता है। वर्षा भी इसके लिए प्रधान ऋतु है। अत्युष्ण, अति शीत, अति वर्षामें प्रतिश्याय हो जाता है।

इसकी उत्पत्ति असावधानीसे तीव्रतासे गर्मीपर सर्दी लगनेसे होती है।

सर्दीमें सोड़मेंसे निकले रातको पेशाब व टट्टी जानेके लिए बिना वस्त्र ओढ़े सहसा गरम शरीरपर ठंडीका धक्का लगनेसे होती है।

जुकाम जमीनकी ठण्डसे ठंडे पानीमें, चौकेमें बारम्बार फिरते रहनेसे, वर्षामें दिनमें नङ्गे पांव फिरनेसे भी होती है। यह अनेक बार देखा गया है कि गरम शरीरपर ठंडे के आघातसे होती है।

ग्रीष्म ऋतुमें रातको छतपर खुलेमें बिना ओढ़े सोते हैं, प्रातःकाल मन्द मन्द सर्दी पड़ती है, उससे जुकाम ज्वर हो जाता है। पसीनेमें ठण्डा पानी पीनेसे अथवा ग्रीष्ममें तप्त शरीरमें, मध्याह्नमें ठंडे पानीसे स्नान करनेसे सहसा दौड़कर पानी पीनेसे, प्रतिश्याय हो जाता है।

खांसी इसका सहचारी लक्षण है। इसकी उपेक्षामें तो खांसी होती ही है, क्षय तक भी हो जाता है। अतः इसे छोटा रोग न समझे।

शिरपरसे सर्दी लग कर श्लेष्मा, नजला, जुकाम नीचे उतरे तो दाढ़ोंमें दर्द इसीके टपकनेसे होजाता है। नेत्राभिष्यन्द, गलेमें कण्डू, शूकपर्णाख्यता, कर्णशूल भी जुकामका परिणाम है। अतः प्रतिश्यायको छोटा रोग न समझकर इससे सावधान रहना चाहिये सहसा शरीरमें सर्दी न लगने दें।

यदि जुकाम लग जावे तो सर्व प्रथम स्नान भोजन ठंडा पानी पीना बन्द कर दें।

एक बार मैंने एक वृद्ध वैद्यजीसे पूछा, जुकाम मिटता क्यों नहीं? वैद्यजी ने उत्तर दिया, जुकाम वालेको लंघन करना चाहिए गरम पानी पीना चाहिये अथवा गरम दूध पीना चाहिए। लोग खाना नहीं

छोड़ते नाना वस्तुएँ गिटते रहते हैं। जब तक अन्न नहीं छोड़े, नया पुराना प्रतिश्याय नहीं जाता।

अन्नसे रस जाड़ा पड़ जाता है। जमा हुआ श्लेष्मा पहलेसे ही दुष्पच होता है। फिर ठण्डा पानी और भोजन बारम्बार प्रतिदिन करते रहनेसे अग्नि मन्द होजानेसे जुकाम नहीं पकता।

जुकामका पकना क्या है—आमाशयमें ऊपरसे द्रव रस ठण्डे पानीय भाग आकर भर जाते हैं अग्नि-मान्द्य रहता है।

बारम्बार सोमत्त्व जलीय द्रवोंके जमा रहनेसे अभितीव्र नहीं होने पाता, अतः भोजन न छोड़नेसे ठण्डा पानी पीनेसे स्नानसे प्रतिश्याय नहीं जाता।

गर्मीके दिनोंका प्रतिश्याय भयंकर होता है। उस समय न्यूमोनिया भी इसी कारणसे होता है। अर्थात् तीव्र संतप्त शरीरमें सर्दी बैठनेसे शिर फुफ्फुसमें ठंड बहुत जम जाती है।

सारांश इतना ही है कि जुकाममें गरम पानी पीना पथ्य है। स्नान न करे। यदि न रहा जावे तो शिरःस्नान अवश्य त्याग दें। गरम दूध पर रहे। या बिना चुपड़ी रोटी मिर्चसे खावे। जिनका प्रतिश्यायसे शिर दूखता हो, वे लोग ऐस्प्रीन खाते हैं, बाम लगाते हैं नश्य लेते हैं। तम्बाखू सूंघते हैं। परंतु यह अनेक बारका अनुभव है कि रुक्ष खेद कपड़ेसे सिकताव करनेसे शिरःशूल प्रतिश्याय कास तीनों शान्त होते हैं।

प्रतिश्याय वालेको—

भाङ्गर्चादि काथ, पञ्चकोल क्वाथ वैद्योंसे प्राप्त कर पीना चाहिये। अथवा

काली मिर्च ११ नग तुलसीपत्र २१

मुनक्का ११ नग शकर २॥ तोले

ॐ पानीमें औटा कर मशालकर बिना छाने पीवे

बिना छाने न पीया जावे तो छान कर पीवे।

त्रिभुवनकीर्ति रस १ गोली गरम पानीमें या पानमें लेवें। वनप्सादि काथ प्रसिद्ध है। व्यापादि वटी से ६ तक लेवें, गोली न मिले तो कालीमि

गुड़की गोली बनाकर चूसें। आर्द्रकके टुकड़े मुहमें रखें। गर्मीके दिनोंमें मिश्री-चूसें।

मनुष्य गुड़से डरते हैं, परन्तु पाव गुड़ प्रतिदिन दो दिन ॥ आधा सेर पानीमें गरम कर छानकर पीनेसे आहार और भेषज दोनोंका काम हो जाता है। अधिक मात्राका विचार न करे।

गरमीके दिनोंमें यह प्रयोग ठीक नहीं। देशी शकर को गर्म जलमें डबालकर लेवें। बड़े मनुष्यके लिए पाव भर गुड़से कोई हानि नहीं पहुँचती। और कुछ न खावे। इससे विरेचन कफघ्न क्रिया होकर प्रतिश्याय मिट जाता है। अमीर मनुष्य कस्तूरी पानमें लेवें केशर दूधमें ले भोजन स्नान बंद रखें।

— यूनानी चिकित्सा शास्त्रमें नामर्दी (नपुंसकता) का निदान तथा चिकित्सा — (पृष्ठ ३२४ का शेष)

चिकित्सा नशीली चीजोंका छुड़ाना तथा चिकनी व पतली चीजोंका सेवन कराना।

(३) दीर्घ कालतक मैथुन न करना इससे वीर्य जोश खाकर जल जाता है इसकी चिकित्सा शरीरका शोधन करना तथा १८ वर्षकी सुन्दरी युवती स्त्रीसे विषय करना है।

(४) मस्तिष्क का दुर्बल होना निशानी इसकी विषयमें आनन्दका अनुभव न होना है।

(५) यकृतकी दुर्बलता लक्षण इसका इन्द्रियके योनिमें प्रवेशके पश्चात् शिथिल हो जाना।

(६) हृदयकी दुर्बलता जिसका चिह्न विषयके समय दिलकी धड़कन बढ़ जाना है।

(७) गुर्दोंकी दुर्बलता इसमें बिना विषय ही वीर्य स्राव होता है।

(८) कुरुप स्त्रीके कारण दिलमें उससे घृणा उत्पन्न हो जाना इसकी चिकित्सा कारणको दूर करना तथा स्त्रियोंकी प्रशंसा तथा विषय भोगोंके वर्णनोंकी कहानियाँ सुनाना जिससे घृणा जाती रहे तथा सुन्दर सुन्दर चित्रोंका दिखाना।

(९) वीर्यका पतला होजाना उसमें वीर्य पुष्टिकर औषध सेवन करावें।

(१०) अपनेसे शरीरमें पुष्ट तथा सुन्दरी स्त्रीके प्रभावमें दब जाना। चिकित्सा-कारणको दूर करें तथा वीर्यता पूर्ण किस्सोंका सुनाना व नाटक सिनेमा आदि की सैर कराना तथा दिलको ताकत देने वाला भोजन व औषधियाँ सेवन कराना।

(११) बहम करना कि किसीने जादू टोना करके विषय शक्तिको बाँध दिया है चिकित्सा कारण दूर करना तथा भ्रम नाशक शिक्षाएँ देना।

(१२) स्वप्नदोष इसमें पुष्टिकर दवा सेवन करें व मनको शुद्ध रखें

(१३) वीर्य स्राव इसमें स्तम्भक औषधि सेवन करावें यदि नपुंसकता का कारण शिरनेन्द्रियकी किसी विकृतिसे हो तो उसके भी कई कारण हैं।

(१) दौर्बल्य शिरनेन्द्रियके मांस, शिराधमनी आदि

(२) दीर्घ काल तक मैथुन न करनेसे इन्द्रियका शिथिल होजाना क्योंकि जो शरीरावयव दीर्घकाल तक अपने कार्यको नहीं करता वह दुर्बल हो जाता है।

(३) इन्द्रियमें शक्ति, वायु व खूनके कम होनेसे क्योंकि इन्द्रियमें कठोरता होनेमें उपरोक्त ही कारण हैं।

(४) इन्द्रियकी शिरा धमनियों कण्डराओंमें श्लैष्मिक तत्वोंकी वृद्धि हो जाना।

(५) हस्त मैथुन, छोटे लड़कोंसे गुद मैथुन करना

(६) स्वयं अपनी गुदामें मैथुनकी इच्छा होता।

(७) सुजाक व आतशक (उपदंश) के कारण इन्द्रियका विकृत हो जाना।

नोट—नपुंसकताके कारण व साधारण चिकित्सा सूत्र लेखमें लिख दिये हैं अन्य प्रयोग अनेक हैं जो प्रायः सभी वैद्य बन्धु जानते हैं तथापि कतिपय पौष्टिक प्रयोग व तिला, लेपादि मेरे भी अनुभूत हैं जो पद द्वारा ज्ञात करें या मेरे कोई लेख “धन्वन्तरि” छपते रहेंगे तो उनसे मालूमकर लाभ उठावें।

== धातुस्त्राव ==

लेखक—डॉ० द्वारकाप्रसाद नामदेव

चिमन-क्लिनिक ४९, न्यू देवास रोड, इन्दौर ३ (म. प्र.)

धातुपुष्टिकी दवाइयोंकी जहाँ भी देखिये भरमार है। किसी भी समाचार पत्रको देखिए, बस यही पायेंगे। यहाँ तक कि किसी भी दवाखानेका सूचीपत्र देखिए, बस इसी रोगका दौर-दौरा है।

लेकिन धातुस्त्रावके बारेमें सर्व-साधारणको भ्रम हो गया है। साथ ही समाचार पत्रोंके विज्ञापनों ने उसे पुष्ट कर दिया है। बस इसी बीमारीके भ्रमने लोगोंको ऐसा चक्करमें डाल दिया है कि उन्हें इस बीमारीके सही रूपमें लक्षण दीखे या न दीखे, मगर विज्ञापनोंमें प्रकाशित लक्षण शीघ्र ही समझमें आ जाते हैं और वे घबरा जाते हैं और सोच लेते हैं बस हो गए उस भयंकर रोगके शिकार। और दौड़ पड़ते हैं ठगोड़े लोगोंके पास। और उनसे यह रोग मोल ले लेते हैं।

वैसे इस बीमारीके भ्रमके रोगी ९० प्रतिशत हैं और इस बीमारीसे पीड़ित सत्यतः १० प्रतिशत लोग हैं। यहाँ दोनों प्रकारकी बीमारियोंका वर्णन करेंगे।

अब सुन लीजिये ९०% वाली बीमारीके लक्षण, इस बीमारीके रोगी अधिकतर मन्दाग्नि (Anorexia) के होते हैं। खाना अच्छी तरह हजम नहीं होता। लगा-तार कब्ज (Constipation) की शिकायत बनी रहती है या जितना भोजन आसानीसे शरीर हजम कर लेता है, उससे भी अधिक भोजन कर लेते हैं। घी, मलाई, दूध, रबड़ी, मिठाई, बादाम आदि इतना खाते हैं, जिसका कोई चौथाई भाग खाना चाहिए था। ऐसा पुष्टिकर भोजन करना और दिनभर निकम्मा बैठे रहना, उस तरहके भ्रमका मुख्य कारण है। इसी

प्रकार कुछ समयबीत जानेपर पेशाबमें धातु (Sperm) जैसा पदार्थ आता हुआ मालूम होता है। दृष्टीमें कब्ज (Constipation) होनेसे कनछना पड़ता है। कनछते समय दो-चार बूंदें शुक्र (Semen) जैसा पदार्थ निकल जाता है और पेशाबके सम मठा (छाछ Buter Milk) जैसा सफेद पदार्थ निकलता है। लोग उसे देखते ही धातुस्त्रावका निश्चय कर लेते हैं। लेकिन उनकी धारणा गलत है और उसे धातु स्त्रावकी बीमारी समझना बड़े दुर्भाग्यव बात है।

उदाहरणसे उसकी पुष्टि हो सकती है। बच्चों के पेटमें कीड़े होनेसे ऐसा ही मट्ठा-सा उनकी पेशाब होता है। यकृत (Liver) या मन्दाग्नि (Anorexia) की बीमारीमें भी मट्ठा जैसा पदार्थ उनके पेशाब जाता है। अब जरा गौर कीजिए कि यह युवा, प्रौढ़ तथा वृद्धावस्थामें होने वाली बीमारी बच्चोंको क्यों गई? सरासर गलत है।

इस बीमारीको आगे होकर मोल लेने वाले सज्जनोंसे विनय है कि मुश्किलसे पचने वाली वस्तुओं को चूर्ण, पाक, मोदक (धातु पौष्टिक) मतलब धातु पुष्टिके लिए खाते हैं, उन्हें लाभके स्थानपर हानि होने लगती है। इससे उन्हें न खाएँ।

अगर उन्हें यह शिक्कायत है तो मन्दाग्निकी दवा और आहाराचारका सेवन करें। कुछ व्यायाम और खानपानपर विशेष दृष्टि रखें। लेकिन भूलें भी विज्ञापन बाजोंकी दवाका सेवन न करें।

धातुस्त्रावकी बीमारीके वास्तविक लक्षण तीन (१) पौष्टिक पदार्थोंका अधिक सेवन करना (२) व

वासनाका चिन्तन करना तथा (३) शारीरिक परिश्रम न करना ।

अब इस रोगकी उत्पत्तिका पूर्ण विवरण देते हैं । रात या दिनमें सोते-सोते जननेन्द्रिय उत्तेजित होकर स्वप्न दोष (Nocturnal Polution) हो जाता है । बिना मैथुन (Copulation) के स्वप्नमें मैथुन करके स्वप्नदोष हो जाता है । इन्द्रिका उत्तेजित न होना या उत्तेजित होकर शीघ्र शिथिल हो जाना एवं शुक्र (Semen) में खुर्दबीन (Microscope) से देखनेपर शुक्रकीटों (Spermatozoa) की कमी, कामवासना चिन्तनसे शुक्रपात होना, मैथुनके समय अतिशीघ्र शुक्रपतन, शुक्रका पतला होना व कपड़ेपर शुक्र लगनेसे निशान न होना, शरीर जीर्ण-शीर्ण, कमरमें दर्द, रमरण शक्तिका ह्रास, बिना कारण भय, कार्यक्षमताका लोप, आँखोंका धँस जाना, गालोंका चिपक जाना, उनपर चिह्न हो जाना, नेत्रदृष्टि क्षीण, शीघ्र थकावट, एकान्त-वासकी इच्छा । वार्तालापमें शंका कि सामने वाला मेरे रहस्यको जानता है । बात करनेमें अनिच्छा, हृदयका धक् धक् करना, जीवनसे हताश, क्विज्यत और अजीर्ण (Indigestion) ये इसके मुख्य लक्षण हैं ।

मनको चंचल करने वाली किताबोंका पढ़ना, काम वासना सम्बन्धी चिन्तन । स्त्रियोंको कामवासना की दृष्टिसे देखना । अश्लील किताबें व अश्लील गाना गानेसे मनमें काम-वासनाकी उत्पत्ति आदि से इस रोगकी उत्पत्ति होती है । साथ ही कुसंगतसे हस्तमैथुन आदि प्रकृति विरुद्ध काम करनेसे धातुस्त्राव रोग उत्पन्न हो जाता है ।

यौवनके उरसाहके कारण बहुतसे लोग अत्यधिक स्त्री मैथुन करते हैं । इससे भी धातुका पतलापन और नपुंसकता पैदा हो जाती है । दूसरे रोगोंके कारण भी धातुस्त्राव उत्पन्न हो जाता है । पेटके गर्म होनेसे या मंदाग्नि (Anorexia) के कारण धातुका पतलापन देखा गया है । जो नवयुवक शरीरकी

पुष्टताकी इच्छासे बहुत उत्तम व गरिष्ठ भोजन करते हैं । यदि ऐसे नवयुवकोंको मैथुन अवसर प्राप्त नहीं हो, तो उन्हें धातु-स्त्राव होने लगता है । ऐसी दशामें रात-दिन विषय भोगकी चिन्ता बनी रहती है । विषय भोगकी चिन्ता बनी रहती है । विषय भोगकी चिन्ताके कारण शरीर उत्तेजित हो जाता है जिससे वीर्य अलग होकर शुक्राशयसे बाहर आजाता है । उसे रोकना व्यर्थ है । इससे सिद्ध है कि यह बीमारी कुत्सित संगतसे होती है ।

चिकित्सा

१—शिलाजीत, बंसलोचन, छोटी इलायची बीज और शालसमिश्री इन चारोंको समभाग लेकर गोलियाँ बनाकर खानेसे धातुस्त्रावमें उत्तम लाभ करती हैं ।

२—शुद्ध असली शिलाजीत १ से ३ माशे तक शहदमें मिलाकर चाटनेसे धातु-स्त्रावमें आराम होता है ।

३—त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आंवला) का चूर्ण आधे तोलेसे एक तोले तक शहद या गरम जल साथ सेवन करनेसे धातु-स्त्राव ठीक हो जाता है ।

४—गुड़चीका स्वरस एक तोला समभाग शहद मिलाकर पीनेसे धातुस्त्रावमें अवश्य आराम मिलता है ।

५—कच्ची हल्दीका स्वरस एक तोला समभाग शहद मिलाकर पीनेसे धातुपुष्टि होती है । इसके अलावा चन्द्रप्रभावटी, मेहसुद्गर वटिका, स्वर्णवर्मा वंगभस्म, वसन्त कुसुमाकर उपयोगी हैं ।

पथ्यापथ्य—सोनेसे तीन घण्टे पूर्व भोजन करना अधिक भोजन, मैथुन करना, नरम बिछौनेपर सोना सिनेमा, नाटक व उपन्यासोंसे बचना उत्तम है । रोग के समय शृङ्गार सामग्रीसे भी परे रहें । पौष्टिक तथा सादक द्रव्योंका सेवन वर्जित है । मन पवित्र रखो । सदा परिश्रममें लगे रहो । आरामके समय आराम करो तथा धार्मिक बातोंका चिन्तन करो ।

मनका देहसे सम्बन्ध

लेखक—पं० श्री विश्वेश्वर दयालुजी वैद्यराज, सम्पादक—अनुभूत योगमाला

वरालोकपुर, इटावा (यू० पी०)

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः ।

मन ही मनुष्यको प्रवृत्ति मार्गमें ले जानेवाला है और यह निवृत्तिमार्गका सहायक है। कहनेका तात्पर्य यह है कि, मन ही शरीरमें एक विशेष उपादान है। "जन्माद्यस्य" इस ब्रह्मसूत्रके हिसाबसे जिस वस्तुका ज्ञान न हो उसके जन्म होनेके कारणोंपर विचार करनेसे समस्या शीघ्र सुलभ जाती है। अतः मन क्या है जन्म और जीवनसे इसका क्या सम्बन्ध है। इसपर ही विचार करना है।

शरीरेन्द्रिय सत्त्वात्मसंयोगो धारि जीवनम् ।

च० सू० अ० १ श्लोक ४१

शरीर, इन्द्रियाँ, मन, आत्माका संयोग ही जीवन है, यही आयु है।

सत्त्वात्मा शरीरं च त्रयमेतत्त्रिदण्डवत् ।

लोकास्तिष्ठति संयोगात्तत्रसर्वं प्रतिष्ठितम् ॥

च० सू० अ० १ श्लोक ४५

मन, आत्मा, शरीर यही देहके तीन खंभे हैं। इन्हींपर प्राणियोंकी स्थिति है और सभी क्रियायें इन्हीं से होती हैं।

निर्विकारः परस्त्वात्मा सत्त्वभूत गुणेन्द्रियैः ।

चैतन्ये कारणं नित्यो दृष्टा पश्यति हि क्रियाः ॥

आत्मा निर्विकार है। परन्तु सत्त्व भूत गुण इन्द्रियोंसे केवल चैतन्यका कारण है और दृष्टा कहा जाता है।

इन कारणोंसे विद्यार्थीकी समझमें चक्कर आने लगता है और वह विषयकी जटिलताको नहीं समझ सकता। महर्षि भेलने इसका कारण दिया है कि—

मन उत्पादकः । मन ही शरीर (गर्भ) का उत्पादक कारण है।

हृदयं चेतनास्थानमुक्तं सुश्रुत देहिनाम् ।

सुश्रुतका मत भी यही है कि मन ही चेतनास्थान है। चरकने भी साफ स्वीकार कर लिया है कि

सेन्द्रियं चेतनं द्रव्यं निरेन्द्रियमचेतनम् ॥

जिन जिन पदार्थोंमें इन्द्रियाँ हैं, वह चेतन है इन्द्रिय रहित ही अचेतन हैं। शरीरमें इन्द्रियाँ (आंख, कान, नाक, जिह्वा, त्वचा, उपस्थ, गुदा, वाणी, हाथ पैर) अन्तरेन्द्रियोंमें-मनोबुद्ध्याहंकार चित्तानि। इस अन्तःकरण भी कहते हैं।

यदा तु मनसि कलान्ते कर्मात्मानः कलमान्वितः ।

विषयेभ्यो निवर्तन्ते तदास्वपिति मानवाः ॥

जब मन कलमान्वित (इन्द्रियार्थरहित) हो जाता है, तब इन्द्रियें भी कलमान्वित हो जाती हैं और विषयोंको छोड़ देती हैं तभी प्राणि सोता है। इससे भी मन ही सब कुछ प्रेरणा करनेवाला है।

लक्षणं मनसो ज्ञानस्याभावो भाव एव च ।

अणुत्वमथचैकत्वं द्वौगुणौ मनसः स्मृतौ ॥

मनका लक्षण ज्ञान देना और न देना ही है इसका जब इन्द्रिय संयोग होता है और जिस इन्द्रिय संयोग होता है उस इन्द्रिय जन्य ज्ञानका बोध होता है इसीसे मनको अणु माना है। इसीलिये इसे निर्विकार माना गया है, कारण—

विषय प्रवर्णचित्तं धृतिभ्रशान्नशक्यते ।

नियन्तुमहितादर्थान् धृतिर्हि नियमात्मिका ॥

विषयोंमें लिप्त चित्त भोग बुरेका ज्ञान

करता उसको धृति (बुद्धि) ही नियममें लाती है।

सान्तः करणा बुद्धिः सर्वविषयमवगाहते।

कर्ता हि करणैर्युक्तः कारणं सर्वं कर्मणाम् ॥

सां० त० कौ०

अन्तःकरण (मन) में बुद्धि ही सर्व श्रेष्ठ है। इसी ने समस्त विषयोंका ज्ञान होता है। कारणसे युक्त ही कर्ता सब कामोंका कारण होता है। इससे भी मन कर्ता होता है।

प्राणापानौ निमेषाद्या जीवनं मनसो गतिः।

इन्द्रियान्तर संचारः प्रेरणं धारणं च यत् ॥

च० शा० अ० १ श्लोक ६८

प्राणवायु, अपानवायु, निमेष (पलक लगना), निमेष (पलक उठाना), जीवन धारण करना, यह सब मनके प्रभावसे ही होते हैं, यही होते हैं, यही मनकी वाल है। इन्द्रियोंमें पैठकर उनको कार्यमें लगाना, कार्य कराना और धारण करना ही मनकी क्रिया। इसीसे कहा है।

वेदनानामधिष्ठानं मनोदेहश्च सेन्द्रियः।

वेदनाओंका स्थान मन इन्द्रिय युक्त देह है-अर्थात् मन और देह दो हैं। इसीसे रोग शारीरिक और मानसिक दो तरहके माने गये हैं।

सन्तीन्द्रियाणिसन्त्यर्था योगो न च नचास्तिरुक्।

इन्द्रियां और इन्द्रियोंके अर्थ सभी रहें। पर मरणायोग न होनेसे वेदनाओंका ज्ञान नहीं होता। इसीसे कहा है—

यदीन्द्रियाणामभि प्राहकं मनः। १९३

इन्द्रियोंको प्रेरणा देने वाला केवल मन ही है।

चेष्टेन्द्रियार्थाश्रयः शरीरमिति।

चेष्टा और इन्द्रिय धर्मके आश्रयीभूत ही शरीर रहता है और भी—

क्र शोणित जीव संयोगे तु खलु कुक्षिगते गर्भ संज्ञा।

(५ अ० ४ चरक)

शुक्र आर्तवके साथ जीव संयोग होनेसे ही गर्भ होता है। जब तक जीवका संयोग नहीं होता,

गर्भ नहीं होता। कारण साधारणतया मैथुन करनेपर गर्भ नहीं रहता और शुक्र शोणित सम्बन्ध ही रहता है वर्त्ता सैंकड़ों घर सन्तान हीन नहीं रह जाते और गर्भोंकी संख्या भी नहीं हो सकती, कारण आजकल विषय (स्त्रीसहवास) एक मनोरंजक हो गया है।

तब जीव क्या है ?

.....चेतनायुक्तोजीव इत्यवधीयते। भागवत

जीव चेतनावान होता है यही चेतना (चैतन्यता) देने वाला है इसके न रहनेपर शरीर मृत्तिकावत् वेकार हो जाता है।

अब सहसा प्रश्न उठने हैं कि चेतनावान कौन है, चित्तं तु चेतो हृदयं स्वान्तं हृन्मानसं मनः। इत्यमरः

चित्त और चेतस् यह मनके नाम ही हैं। चित्त और चेतस् शब्दोंके मूलपर विचार करनेसे चित्ती-संज्ञाने (भ्वा० प० से०) सेक्तः प्रत्यय करनेपर चेतस् बनता है और इसी धातुसे असून् (३० ४।१८९) असून् प्रत्ययकर चेतस् बन जाता है। यह मनके नाम हैं। अब चेतनापर विचार करना है। चित्त संचेतने (चु० आ० से) धातुसे व्यासशुस्थः (३।३।१०७) इति युच्। चेतना। यह बुद्धिकानाम है। यही चेतना चित्त (मनमें) रहती है। वह चेतन है चित्तस्य बुद्धावन्तर्भावः। चित्तका बुद्धिमें अन्तर्भाव होता है। अर्थात् मनकी एक विशेष दशा मात्र बुद्धि है। जिस प्रकार आमाशय, पक्वाशय, ग्रहणी आदि एक अंत्रके ही स्थानभेदसे नाम हैं। कहा भी है—

जीवतः पुरुषस्य कर्तृत्वं भोक्तृत्वं सुखं दुःखादि लक्षणश्चित्त धर्मः कर्तृत्वं (कारण)

भोक्तृत्वं (भोग) सुख दुःखका यह मनका ही लक्षण है। अतः मन, बुद्धि, अहंकार, सब मनके ही लक्षण भेद मात्र हैं। है सब कुछ मन ही। कहा भी है,

आत्मवान् सत्त्वमान् इति उक्तः। आत्मा और मन एक ही वस्तु है।

हृदयं जायते पूर्वं कृतवीर्योऽवदन्मुनिः।

मुने स्वसंयमस्य यत्तत्तत्स्थानमोरितम्।

(कृतवीर्यमनि)

मन और बुद्धि का एक ही स्थान हृदय है। इसका ही समर्थन व्यासजी द्वारा किया गया है देखें—

ब्रह्मणो वासुदेवः स्यात् जीवः सङ्कर्षणाभिधः ।
जायते च मनस्तस्मात् प्रद्युम्नाख्यं ततः पुनः ।
अहंकारोऽनिरुद्धाख्यश्चत्वारो विश्वरूपकः ।

बुद्धिसे ही महत् ब्रह्म (बुद्धि) और बुद्धिसे ही कृष्ण संकर्षण (बलभद्र) है और कृष्ण पुत्र प्रद्युम्न ही मन है और प्रद्युम्न पुत्र अनिरुद्ध ही अहंकार है। यही चारों विश्वरूपक हैं। बुद्धि, जीव, मन, अहंकार एक दूसरेके प्रतिरूप एक ही है। गीतामें श्रीकृष्ण भगवान् स्वयं कहते हैं—

ममयोनिर्महद् ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम् ।

मेरी योनि महद् ब्रह्म (बुद्धि) है। मैं इसीमें गर्भ स्थापन करता हूँ।

महत्त्वार्थश्च हृदयं पर्यायैरुच्यते बुधैः । च० सू० अ० १

महत् अर्थ यह हृदयके ही पर्याय हैं।

महत्त्वमिति प्रोक्तं बुद्धितत्त्वं यदुच्यते । सां. प्र. भाष्ये

महत् तत्त्व ही बुद्धि है। कहाँ तक कहें—

कामः संकल्प विचिकित्सा श्रद्धा, अश्रद्धा धृतिर-
धृति ही धी भीरित्येतत्सर्वं मनः । श्रुतिः ।

काम, संकल्प, संशय, श्रद्धा, अश्रद्धा, धृति, अधृति, ही, धी भी इनसे मनका ही बोध होता है। अतः मन एक अप्रतिमेय वस्तु है।

शरीरं सत्त्व संज्ञञ्च व्याधीनामाश्रयो मतः ।

च० शा० अ० १

वेदनानामधिष्ठानं मनोदेहश्च सेन्द्रियः ।

च० शा० अ० १ श्लोक १६४

शरीर मनरूप है अतः यही मन देह व्याधियोंका स्थान है और वेदनाओंमें पीड़ाओंका भी यही स्थान है अब प्रश्न यही रहता है कि वेदनाका ज्ञान कैसे होता है।

यद्धि तत् स्पर्श विज्ञानं धारितत्तत्र संश्रितम् ॥ च०

धारि (जीवन) अर्थात् मन जहाँ रहता है उस

भी इन्द्रियोंमें होती है और इन्द्रियोंका सम्बन्ध मनसे है और मनका देहसे। अतः और भी कहा है।

सर्वेषामेव जन्तूनां संवित् हृदयमुच्यते ।

समस्त जन्तुओंका ज्ञानकरण हृदय ही है। यथा

संवित् संभाषणे ज्ञाने । विश्व०

चिदाभासयुतां बुद्धिविशिष्यति सुखादयः । भा०

चित्तरूपी दर्पण वाली बुद्धिमें ही सुख दुःखका प्रकाश होता है।

दुःखं द्विविधं । शारीरं मानसं च ।

शारीरं—वातपित्त श्लेष्मवैषम्य निमित्तम् ॥

मानसं—काम, क्रोध, लोभ, मोह, भयेर्ष्याविषाद विषय विशेष दर्शननिमित्तम् ॥

दुःख दो प्रकारका होता है। १. शारीरिक—जो वात पित्त कफकी विषमतासे होता है। २. मानसिक—काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, ईर्ष्या, शोक, विषय विशेष दर्शनसे होता है।

आधिभौतिक—मानस पशु पक्षि मृग सरीसृप स्थावर निमित्तम् ।

आधिदैविक—चक्षु, राक्षस, विनायक, प्रहाद्यावे शनिबंधनम् ।

आधिभौतिक—मनुष्य, पशु, पक्षी, मृग, सांप, स्थावर (वृक्षादि पर्वतादि) जनित ।

इनका संस्पर्श त्वचासे होता है कारण त्वचा ही स्पर्शज्ञान बोधक है। इस त्वचाओंमें भी पाँचवी वेदनी नामक त्वचा है। यह वेदना सूचक है। इसके सिवाय धमनी, शिरा, प्राणवहस्रोत, इन्द्रियां भी स्पर्शजन्य ज्ञानको मनको पहुँचाते हैं और मनकी वेदनाओंको शरीरमें पहुँचाते हैं।

प्राणवहानां स्रोतसां मूलमहृदयम् । च० शा०

प्राणवह स्रोतोंका मूल हृदय है। प्राणवायु हृदयसे ही शरीरमें स्रोतों द्वारा विचरती है।

रसवहानां स्रोतसां हृदयं मूलं दश च धमन्यः ।

च० वि०

योषापस्मार (हिस्टेरिया)

ले० आचार्य श्रीगयाप्रसाद शास्त्री, वैद्य, साहित्याचार्य, आयुर्वेदवृहस्पति, भिषगरत्न,
प्रधानाचार्य-श्रीनागार्जुन आयुर्वेदविद्यापीठ मुरलीधरबाग, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)

बीसवीं सदीका यह हिस्टेरिया (Hysteria) प्रसिद्ध रोग है। इसी नामसे पुकारा जाता है। आधुनिक शिक्षा तथा सभ्यताकी वृद्धिके साथ साथ इसकी भी वृद्धि हो रही है। कोमल प्रकृतिकी नवयुवतियोंमें ही यह रोग बहुतायतसे पाया जाता है। इसीलिए आयुर्वेदज्ञ विद्वानोंने इसका नामकरण "योषापस्मार" किया है। बालकों तथा नवयुवकोंमें जहां इस रोगसे मिलते जुलते लक्षण दिखलाई पड़ते हैं। वहां उसे अपस्मार, उन्माद, मूर्च्छा तथा अपतानक आदि भिन्न-भिन्न नामोंसे अभिहित किया जाता है। यहां हम इस शास्त्रीय प्रपंचमें न पड़ कर केवल "हिस्टेरिया" (Hysteria) रोगके अनुभूत निदान तथा सफल चिकित्सा का ही विवेचन करेंगे।

गुजरात प्रान्तमें विशेषतः मुम्बई, सूरत तथा अहमदाबादमें इस रोगसे पीड़ित बहुत सी स्त्रियां देखने तथा सुननेको मिली। इन स्त्रियोंमें १३ वर्षकी कुमारिकाओंसे लेकर २५ वर्ष तककी आयु वाली विवाहिता स्त्रियां भी सम्मिलित हैं। १३ वर्षसे लेकर २५ वर्ष तककी आयु ही इस रोगकी विकासस्थली है। अमीर घंगानोंकी पढ़ी लिखी, सुन्दरी लड़कियां तथा स्त्रियां ही प्रायः इस रोगकी शिकार बनती हैं।

इस रोगके निदानके सम्बन्धमें कितने ही वैद्योंने अपने भिन्न विचार प्रकट किए हैं। उन सब विचारों से हमें प्रयोजन नहीं है। बहुत कुछ खोज, परिश्रम तथा अनुभवके अन्तर हमें इस रोगके जिन कारणोंका पता लगा है, उन्हींका यहां उल्लेख किया जाता है। नीचे लिखे कारणोंमें कोई एक या दो कारणोंका सम्मिश्रण ही इस रोगके उत्पन्न होता है।

सहायक होते हैं:—

- (१) ऋतुदोष तथा गर्भाशयकी विकृति।
- (२) किसी प्रकारका शारीरिक परिश्रम न करना पढ़ने-लिखने आदिमें बहुत अधिक मानसिक श्रम करना तथा विलासितापूर्ण जीवन बिताना।
- (३) प्राकृतिक, मानसिक एवं ज्ञानतन्तुओंकी दुर्बलता।
- (४) मिथ्याहार-विहार द्वारा बात-विलोम तथा पुनर्नतन दुष्कृत।
- (५) प्रेम सम्बन्धी नवल कथाओंके अत्यधिक पढ़ना तथा सिनेमा घरोंमें जाकर संयोग-वियोग उत्तेजक चित्रपटोंको देखनेसे उत्पन्न हुआ मानसिक क्षोभ।
- (६) दाम्पत्य प्रेमके अभावके कारण उत्पन्न मानसिक विकार, चिन्ता, भय, शोक तथा अवसाद आदि।
- (७) रत्यभाव या रतिसम्बन्धिनी अतृप्ति।

इन्हीं उपर्युक्त ७ कारणोंमेंसे किसी एक या अधिक कारणोंसे विक्षुब्ध बात "हिस्टेरिया" (Hysteria) रोगको उत्पन्न करता है। १०० में ६० रोगिणी नं० १ तथा नं० ७ में उल्लिखित कारणोंसे ही रोगके चंगुलमें पड़ी हुई देखी गई हैं। शेष १० शत रोगिणियोंमें भिन्न २ कारण पाए गए हैं। रोगिणीकी चिकित्सा आरम्भ करनेसे पूर्व यदि या डाक्टर कारणका ठीक ठीक पता लगा लें तो सफलता मिलनेमें देर न लगेगी।

इस रोगके निदानके सम्बन्धमें कितने ही वैद्योंने अपने भिन्न विचार प्रकट किए हैं। उन सब विचारों से हमें प्रयोजन नहीं है। बहुत कुछ खोज, परिश्रम तथा अनुभवके अन्तर हमें इस रोगके जिन कारणोंका पता लगा है, उन्हींका यहां उल्लेख किया जाता है। नीचे लिखे कारणोंमें कोई एक या दो कारणोंका सम्मिश्रण ही इस रोगके उत्पन्न होता है। इन्हीं उपर्युक्त ७ कारणोंमेंसे किसी एक या अधिक कारणोंसे विक्षुब्ध बात "हिस्टेरिया" (Hysteria) रोगको उत्पन्न करता है। १०० में ६० रोगिणी नं० १ तथा नं० ७ में उल्लिखित कारणोंसे ही रोगके चंगुलमें पड़ी हुई देखी गई हैं। शेष १० शत रोगिणियोंमें भिन्न २ कारण पाए गए हैं। रोगिणीकी चिकित्सा आरम्भ करनेसे पूर्व यदि या डाक्टर कारणका ठीक ठीक पता लगा लें तो सफलता मिलनेमें देर न लगेगी।

उक्त "कामोन्माद", को ही घरके लोग तथा वैद्य महानुभाव भी "हिस्टेरिया" या भूतावेश समझ बैठते हैं। वहीं नहीं, उसीके अनुरूप चिकित्सा भी आरम्भ कर देते हैं। इसी रोगकी चिकित्सा करते समय मुम्बईमें एक बार एक प्रतिष्ठित डाक्टर साहब किसी तरुणी-रमणीके दो चार तमाचे भी खा चुके हैं। वे डाक्टर साहब अभी जीवित हैं। बड़े भद्र पुरुष हैं। उसी समयसे उन्होंने "हिस्टेरिया" रोगका इलाज करना ही छोड़ दिया है। इस प्रकारकी दुर्घटनाएं प्रायः बड़े बड़े घरोंमें होती ही रहती हैं। इस अनावश्यक विस्तारका प्रयोजन यही है कि वैद्य लोग "हिस्टेरिया" तथा कामोन्मादके इस सूक्ष्म भेदको भली भांति समझ लें, जिससे कमसे कम वे अर्धचन्द्रसे तो बचे रहें।

लक्षण

हिस्टेरिया रोगके सामान्य लक्षण ये हैं:—प्रकुपित वायुका नाभिके दक्षिण या वाम भागसे गोलाकार उठकर गलावरोध करना। प्रायः नाभिके दक्षिण भागसे ही वायुगोला उठ कर गल-मह किया करता है। इस अवस्थामें रोगिणी तीव्र यन्त्रणाका अनुभव करती हैं। मछलीकी तरह तड़फती तथा शय्यासे उछलती हैं। अंग-प्रत्यंग टूटने लगते हैं एवं धनुषाकार हो जाते हैं। कण्ठावरोध होनेके कारण मुखसे विचित्र प्रकारकी अव्यक्त ध्वनि निकलती है। श्वास बड़ी तेजीके साथ चलने लगता है। कुछ काल तक इस प्रकारकी दशा रहनेके अनन्तर रोगिणी मूर्च्छित हो जाती है। रोगकी इस अवस्थाको आवेश (Fits) या दौरा कहते हैं। रोगकी प्रवृद्ध दशामें इस प्रकारके दौरे दिन-रातमें बीसियों बार हुआ करते हैं। कई बार दौरेके समय कई रोगिणी वेदनातिशयके कारण चीखती तथा चिल्लाती हैं। रोगकी साधारण दशामें फिट आनेके प्रथम रोगिणीको जूम्भा (जम्हाई) आने लगती है, अंग-प्रत्यङ्ग टूटने लगते हैं और वह मूर्च्छित हो जाती है। इस अवस्थामें उसे अधिक कष्ट नहीं होता है। कई वैद्योंने "हिस्टेरिया" के अन्य लक्षणोंमें "हंसने" का भी उल्लेख किया है। पर यह अनुभव शून्यताके कारण है। कुशल वैद्य जहां रोगिणीको हंसते, रोते, परिचित व्यक्तियोंके ऊपर कलंक लगाते

तथा निरर्थक प्रलाप करते देखें वहां तुरन्त "कामोन्माद, या स्त्रीचरित्र" समझ लें। "हिस्टेरिया" तथा "कामोन्माद" का यही मौलिक भेद है।

चिकित्सा

जिस प्रकार और जिन उपचारोंसे "हिस्टेरिया" रोगके रोगी अधिकाधिक संख्यामें नीरोग किए जा सकते हैं, उसी सफल चिकित्साविधिका यहां उल्लेख किया जाता है। चिकित्सा आरम्भ करनेके पूर्व पंच संस्कारों द्वारा शरीर-शुद्धि करलेनी आवश्यक है। यदि यह सम्भव न हो तो रोगीकी प्रकृतिके अनुकूल मृदु या तीव्र विरेचनके द्वारा दो चार दस्त कराकर कमसे कम रोगीकी उदरशुद्धि तो अवश्यमेव कर लें।

उदरशुद्धिके अनन्तर प्रातः सायं आंवलेका मुरब्बा या ब्राह्मी शर्बतके साथ "हिमांशु" २ रत्तीकी मात्रासे देना चाहिये "हिमांशु" मानसिक दुर्बलताके साथ-साथ ज्ञान तन्तुओंकी दुर्बलताको दूर करनेके लिये एक अव्यर्थ महौषध है। हम इसे चूना "हिस्टेरिया" तथा प्रत्येक प्रकारकी दुर्बलताओंमें खूब व्यवहार करते हैं और आश्चर्यजनक लाभ प्राप्ति योग्य हैं:—

हिमांशु

स्वर्णगैरिक (सोना गेरु) मुक्ता भरम
अमृतासत्त्व (गुर्चेका सत्त्व) रौप्य भरम
वंशलोचन, प्रवालभरम, यशदभरम
सातों १-१ तोले, स्वर्णभरम ३ माशा
स्वर्णवंग चन्द्रोदय ६-६ माशा

विधि:—समस्त औषधोंको बड़िया खरलमें डाल कर ७ भावनाएं आंवला खरसकी तथा ३ भावनाएं गुलाब जलकी देकर किसी एक शीशीमें औषध भर कर रखलें। मात्रा १ रत्तीसे २ रत्ती तक माखन, आंवलेका मुरब्बा या ब्राह्मीशर्बतके साथ दें। हृय, हिस्टेरिया, रक्तपित्त, पुरानी खांसी, श्वास, श्वेत-प्रदर, प्रमेह तथा प्रत्येक प्रकारकी दुर्बलतामें उत्तम है। भिन्न भिन्न रोगोंमें अनुपानकी कल्पना वैद्य महानुभाव स्वयं करलें। योग शास्त्रीय नहीं, कल्पित है।

"हिस्टेरिया" की रोगिणीको प्रातः-सायं ब्राह्मी-शर्बत या आंवलेके मुरब्बेके साथ २ रत्तीकी मात्रामें

पूर्वोक्त "हिमांशु" देना चाहिए। दोनों समयके भोजनके बाद २ तोलासे लेकर ४ तोला तक उत्तम "सारस्व-तारिष्ट" देना चाहिये। रात्रिमें सोनेसे प्रथम रोगकी स्थितिके अनुसार १ गोलीसे २ गोली तक निम्न लिखित "योषापस्मारनाशिनी वटी" गर्म दूध या जल के साथ देना चाहिये। योग यह है।

योषापस्मारनाशिनी वटी

शुद्ध कुचिला, मल्ल चन्द्रोदय
केशर (असली) तीनों १-१ तोला
कस्तूरी १ माशा

विधि:—समस्त औषधोंको १ पाव पानके रसके साथ भली भांति खरल करके २ रत्तीकी गोली बना लें। रोगकी प्रवृद्ध दशामें जब "हिस्टेरिया" के दौर (Fits) दिनमें बहुत बार आते हैं तब हम इन गोलियों का प्रयोग दिनमें कई बार तीन २ घण्टेके बाद करते हैं। उस समय शीतल जलके ही साथमें गोलियां देनी चाहिए। इन गोलियोंके प्रयोगसे पहले ही दिन रोगका बेग कम हो जाता है।

यदि ऋतुविकार या गर्भाशयके दोषके कारण हिस्टेरिया (Hysteria) के दौर (Fits) आते हों तो

प्रातः-सायं रोगीकी प्रकृतिके अनुसार "हिमांशु" योषापस्मारनाशिनी वटी देनी और रात्रिमें गर्म दूध साथ "ऋतुशोधक वटी" की १ या २ गोलियां देनी चाहिए। योग निम्न प्रकार है।

ऋतुशोधनी वटी

मुसब्बर, मोचरस ५-५ तोला
अकरकरहा, केशर मोंगरा (असली) २॥-२॥ तोला
हींग अंगूरी (घीमें भुनी हुई) १ तोला
लोह भस्म ६ माशा
स्वर्णमाक्षिक भस्म ३ माशा

विधि:—समस्त औषधोंको कूट, पीस, छान। मधु या जलके साथ भली भांति खरल करके बराबर गोलियां बना कर छायामें सुखा लेना चाहिये। ये गोलियां ऋतु विकार तथा गर्भाशयके दोष दूर करनेमें रामबाण हैं। "हिस्टेरिया" रोगमें प्रायः इन्हीं तीनों औषधोंको रोगकी अवस्था आवश्यकताके अनुसार भिन्न भिन्न प्रकारके अनुपात से काममें लाते हैं और हमें शत-प्रतिशत सफल मिलती है। वैद्य महानुभाव इन प्रयोगोंसे लाभ

— मनका देहसे सम्बन्ध —

(पृष्ठ ३३१ का शेष)

रसवह स्रोत और दश धमनी हृदयसे निकली है। सुश्रुत भी इसीकी पुष्टि करते हैं।

तयोर्मूलं हृदयं रसवाहिन्यश्च धमन्यः। सु.शा. अ. ५
प्राणवहस्रोत, धमनी, रसवहस्रोत इनका मूल हृदय है।

तत्रहृदये दशधमन्यः प्राणापानौ मनोबुद्धिश्चेतना महाभूतानि च। च० सि० ९

धमनियोंके विषयमें सुश्रुत और भी साफ करता है यथा—

तेषु दधोर्ध्वगाः। शेषास्तिर्यग्गता। तेषु रूपरसगन्धस्पर्शशब्दश्वासप्रश्वासोच्छ्वासस्तम्भहास्यभाषण.....कर्म सम्पादयन्तीः। देहधार

तेनैवच शुभाशुभस्पर्शज्ञानं भवति। सु.शा. अ.

दश ऊर्ध्वग धमनियाँ रूप, रस, गन्ध, शब्द, श्वास, प्रश्वास, उच्छ्वास; स्तम्भ, धुधा, रोदन, गान कार्य करती हैं—इनसे ही भला स्पर्शज्ञान होता है। इसीसे वेदना ज्ञान होता है।

खाद्यमें ही सब औषध है

लेखक—डॉ० श्री कुलरंजनजी मुखर्जी

प्राकृतिक चिकित्सालय ११४।२ बी. हाजरा रोड कलकत्ता २६.

बहुत वर्ष पहले सुकरात (Socrates) ने कहा था पथ्य ही दवा है, पथ्य ही औषध है।

आयुर्वेदका कहना है, बिना दवासे सिर्फ पथ्यसे भी रोग आरोग्य हो सकता है। किंतु पथ्य ठीक नहीं हो तो हजार दवाओंसे भी रोग मिटता नहीं।

वास्तवमें सभ्य जगत्के लोग कठिणयत्नसे तकलीफ पाते हैं। इसलिए करोड़ों रुपयोंकी औषध व्यवहृत होती है।

एक मात्र अमरीकामें हर वर्ष लोग ३० करोड़ रुपयोंकी रेचक दवा खाते हैं। किन्तु औषधसे शरीर को अपरिमित क्षति पहुंचाकर जो उद्देश्य साधन करनेकी चेष्टा की जाती है, वही लाभ किया जा सकता है। यदि बीच बीचमें बेल खाया जाय। बेल कभी पेटमें अटका नहीं रहता। वह पेटके रुके हुए मलको धक्का देकर बाहर कर देता है। बेल ऐसा फल है कि उसे कच्चा पका हुआ तथा सूखी अवस्थामें ग्रहण किया जा सकता है।

बेलके समान लाभ होता है, पाश्चात्य देशमें उपजे हुए सूखे उन फलोंसे। वह फल वायु रहित हिंन्वेमें आता है।

जब बेल नहीं मिलता तब बेलके बदलेमें इसका व्यवहार किया जा सकता है।

इसके अलावा खजूर, मुनका, किशमिश, खुब्राजी, और अंजीर आदि सूखे फल एवं पपीता, अमरुद, आदि ताजे फल हमेशा कोष्ठ सफाईमें मदद देते हैं। इसके अतिरिक्त चोकर समेत लाल आटेकी रोटी व्यवहार करनेसे कोष्ठ बद्धतासे साधारणतया मुक्त रहा जा सकता है।

पुनः ऐसे आदमी बहुत हैं। जिनको दिनमें बहुत बार टट्टी जाना पड़ता है। और जिसे कभी मल गठित नहीं होता। वे सब लोग दिनमें दो बार उबला

हुआ कच्चा केला खाकर विशेष लाभ पा सकते हैं। कच्चा केला एक प्रथम श्रेणीका धारक खाद्य है, और विभिन्न खाद्य-उपादानोंसे समृद्ध है तथा बहुत कमजोर पाकस्थलीके लिये भी वह बहुत सुपाच्य होता है।

जिन्हें बार बार तरल दस्त होता है उनके लिये बहुत अच्छा पथ्य है। वे अच्छी बिस्कुट भी खा सकते हैं। उन सब लोगोंको हर रोज भोजनके पश्चात् थोड़ासा अजवायन चबाकर खाना चाहिये। किन्तु वे सदा खाद्य रुग्ण अवस्थाके पथ्य हैं और रोग मिट जानेके पश्चात् घरमें इनका आना जल्दीसे जल्दी बन्द कर देना उचित है।

पुराना पेचिश एक कठिन व्याधि है। किसी किसी आदमीके तो वह जीवनके लिये साथी रहता है। इस रोगमें कोई भी खाद्य अच्छेसे पचता नहीं लेकिन बालूमें भुना हुआ बड़ा चावल अगर आठ-नौ घण्टे पानीमें रखकर एक दम नरम होनेके बाद अन्न के बदलेमें खाया जाय तो बहुत लाभ होता है। पुरानी इमलीकी चटनी भी इस रोगमें बहुत फलप्रद है। लेकिन इमली २० या २५ वर्षोंकी पुरानी होनी चाहिये। देहातमें बहुत लोगोंके पास ऐसी पुरानी इमली मिलती है। इस रोगमें दही बहुत लाभप्रद सिद्ध हुआ है। दहीमें जो जीवाणु रहते हैं वह पेटमें अवस्थित हरेक रोग जीवाणुओंको मार डालते हैं। इस रोगमें हप्तेमें दो रोज आगमें जला हुआ बेल दहीके साथ मिलाकर अवश्य खाना चाहिये।

पुराने पेचिशमें पका हुआ केला भी बहुत अच्छा भोजन है। किन्तु केला इतना पका हुआ होना चाहिये कि उसके छिलकेमें काला दाग पड़ा हुआ हो।

बहुत आदमी हैं जिन्हें पेशाब खुलासा नहीं होता। पेशाबके साथ हमेशा विभिन्न विष तथा दूषित पदार्थ शरीरमेंसे निकल जाता है। इसलिए हमेशा पेशाब

साफ रखना चाहिए। किन्तु साधारण अवस्थामें नींबूके रसके साथ काफी पानी पीनेसे ही यथेष्ट पेशाब होता है।

जहाँ डाम (Green coconut) मिलता है वहाँ इसलिये दिनमें दो तीन डाम पीनेसे बहुत फायदा होता है। डामका पानी शीतल, वायुनाशक, पुष्टिकर लघु पाच्य एवं पेशाब साफ करने वाला है।

गाजरका ऐसा सुनाम है कि गाजरसे पेशाबकी वृद्धि होती है। इसलिये मूत्रकृच्छ्रतामें हर रोज एक गिलास करके गाजरका कच्चा रस पीना चाहिये।

वल्डप्रेशर एक कठिन व्याधि है। वर्तमान सभ्य समाजकी एक मारात्मक व्याधि ही है वल्ड प्रेशर। इसमें जो औषध दिये जाते हैं उनसे कभी स्थायी फल नहीं होता। इससे कई रोजके लिये प्रेशर कम रहता है किन्तु उसके बाद ही प्रेशर पुनः बढ़ जाता है। लेकिन हर रोज दो एक तोला तरबूजका बीज भूनकर खानेसे प्रेशर घट जाता है। तरबूज का बीज एक ऐसा खाद्य है इसलिये इससे कभी तुकसान नहीं होता है। अच्छे गुड़का हलुआ बनाकर उसमें भूँजा हुआ तरबूजका बीज डालनेसे अच्छा स्वादिष्ट बनता है। वह खानेमें जैसा स्वादिष्ट वैसा ही लाभप्रद होता है।

मेथी चूर्ण भी वल्ड प्रेशर घटानेमें काफी मदद करता है। हर रोज लगभग १॥ माशे परिमाण मेथी-चूर्ण पकी हुई तरकारीके साथ मिलाकर खाया जा सकता है। एक छटांक मेथी धूपमें सुखाकर अंतमें चूर्ण करके कपड़ेसे छान लेनेसे ही खाद्योंके साथ ग्रहण किया जा सकता है। लेकिन मेथी-चूर्ण मैदाके समान

महीन होना चाहिये। उसे एक बोतलमें रखकर बीचमें गरमकर लेनेसे ऐसे दीर्घ अवधिकतक अच्छे तरह रखी जा सकती है।

ब्राह्मी पत्ताका रस भी वल्ड प्रेशर घटानेके लिये व्यवहार किया जा सकता है। वह बहुत लाभप्रद आयुर्वेदने इसे रसायन कहा है। किन्तु यह ज्यादातर व्यवहार नहीं करना चाहिये। हर बीस पत्तेका रस पीनेसे ही काफी होता है।

लहसुन व्यवहारसे भी वल्ड प्रेशर घटता है लेकिन इसे थोड़ा-थोड़ा करके अभ्यास करना चाहिए। ऐसी कोई दवा बाजारमें नहीं है जिससे वल्ड प्रेशर स्थायी फल हो सकता है। किन्तु हर रोज बेल् प्रहण करनेसे रोगी दिनों दिन अच्छा होता है। मृत्यु तथा पक्षाघात आक्रांत होनेका डर नहीं रहता।

वात व्याधि एक कठिन रोग है। इस रोगमें ही हार्ट खराब हो जाता है। इस रोगमें प्रथम मूत्रस्राव तथा कोष्ठ साफ रखकर, भात या रोटी साथ हर रोज एक लहसुन कच्चा खाना चाहिए। सहजन ओल (अरबी) और अद्रक भी इस रोगमें लाभदायक सिद्ध हुआ है।

सहजनसे हरेक प्रकारकी तरकारी होती लौकीको अच्छी तरह उबाल करें जब वह नरम जाय तब उसका पानी फेंककर उसे खाना चाहिये।

अद्रक भी हरेक तरकारीके साथ मसालेके साथ व्यवहार किया जा सकता है। अथवा अन्न खाते पहले थोड़े सैधव लवणके साथ ग्रहण किया जा सकता है। इससे पाचन शक्ति तथा भूख दोनों ही वृद्धि होती है।

—अब तकके सभी बाल काले रखने वाले केश तैलोंमें—

—पूर्णतः सफलता प्राप्त कराने वाला कृष्ण-गोपालका—

श्याम केश तैल व्यवहारमें लेकर दिमागी असन्तोष को दूर कीजिये—

निद्राका अध्ययन

श्रीमाताजी - श्रीअरविन्दाश्रम, पांडिचेरी २

“हमारे जीवनका तिहाईसे अधिक भाग सोनेमें गुजरता है……” अतएव भौतिक निद्राकी ओर हमें काफी ध्यान देना चाहिये। मैंने “भौतिक निद्रा” इसलिये कहा क्योंकि हम सामान्यतया ऐसा सोचते हैं कि जब शरीर सोता है तो हमारी समूची सत्ता भी सोती है।

“……कभी कभी यह भी कहा जाता है कि निद्रामें ही लोगोंकी सच्ची प्रकृति प्रकट होती है।”

उनकी सच्ची प्रकृतिका अर्थ गहनतर प्रकृति नहीं वरन् उनकी सहज प्रकृति है जो कि उनके नियंत्रणमें नहीं होती, क्योंकि इच्छा शक्तिका नियंत्रण निद्राके समय नहीं रहता। और जो कुछ व्यक्ति जागृत अवस्थामें नहीं करता वही वह निद्रामें करता है, क्योंकि तब वहाँ संकल्पका नियंत्रण नहीं रहता।

“……वे सब इच्छाएं जिन्हें बिना पूरा किये दबा दिया गया है……” उस समय जबकि इच्छा शक्ति सो रही होती है अपनी तुष्टि चाहती है और क्यों कि इच्छाएं रचनाके सबे और सक्रिय केंद्र-बिंदु हैं, वे हमारे अन्दर और चारों ओर ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न करनेका यत्न करती हैं जो उनकी तुष्टिके अधिकसे अधिक अनुकूल पड़ती हैं।”

एक अन्य प्रवचनमें हमने मानसिक रचनाकी शक्तिकी चर्चा की थी, मन सत्ताएं निर्मित करता है जिनका जीवन थोड़ा बहुत स्वतंत्र ढंगका होता है और वे अपने आपको अभिव्यक्त करनेकी चेष्टामें रहती हैं। यहां मैं विचारके विषयमें नहीं, इच्छाके विषयमें कह रही हूँ। इच्छा प्राणिक क्षेत्रकी वस्तु है किंतु इच्छाके मूलमें विचार सदा विद्यमान रहता है और तब इच्छा और भी अधिक क्रियाशील और गतिमान हो जाती है, कारण, उसके अन्दर मानसिक

रचना और प्राणिक चरितार्थताकी शक्ति रहती है। प्राणमें ही सत्ताकी क्रियाशीलताका केंद्र है, सक्रिय शक्तिका केंद्र है और दोनों मिल कर एक ऐसी शक्ति शाली सत्ता बन जाते हैं जिसमें अपने आपको चरितार्थ करनेकी अत्यधिक प्रवृत्ति होती है-वस्तुतः विश्वकी प्रत्येक वस्तु अपनी अभिव्यक्ति चाहती है और जिन वस्तुओंको अभिव्यक्त नहीं होने दिया जाता वे इसी कारण अपनी शक्ति और योग्यता खो बैठती हैं। आत्म प्रभुत्वको प्राप्त करनेकी बहुत सी प्रणालियोंने वस्तुतः क्रियाओंके दमनका, उनके प्रतिरोधका इस विचारसे प्रयोग किया है कि यदि लंबे समय तक किसी इच्छाको दबाया जाय तो अवांछित तत्त्वको नष्ट किया जा सकता है। यदि केवल भौतिक जगत्की ही बात होती तो यह सत्य था, किंतु भौतिकजगत्के पीछे एक अवचेतन जगत् है और अवचेतन जगत्के पीछे अचेतनका विशाल क्षेत्र। और एक बात जो तुम नहीं जानते वह यह है कि यदि तुम अपने अन्दर की इच्छाको अर्थात् ऐसी रचनाके बीजको नष्ट नहीं कर देते तो जिस रचनाकी अभिव्यक्तिको तुम रोकते हो वह मानों अवचेतनामें चली जाती है, वह बिरकुल तलमें धकेल और दबा दी जाती है-यदि तुम उसे अवचेतनामें खोजो तो तुम्हें पता लगेगा कि वह अपना कार्य करनेकी वहाँ प्रतीक्षा कर रही है। इसीलिये वे लोग जो वर्षोंसे अपनी किसी अवांछित क्रियापर नियंत्रण रख चुके हैं एक दिन अचानक ही यह देखकर अचंभित हो उठते हैं कि जितने अधिक लंबे समय तक वह दबी रही उतनी ही अधिक शक्तिसे वह अब तलसे ऊपर उठ खड़ी हुई है। इसीलिये स्वप्नोंका बहुत अधिक महत्त्व है, क्योंकि उस समय दमनकी क्रिया और चेतन संकल्पकी (वह सो जाता है या दूसरी जगह चला जाता है) अनु-

परिस्थितिके कारण नीचे दबी हुई इच्छा ऊपर उठ खड़ी होती है और स्वप्नोंमें व्यक्त होती है और इस रूपमें कि तुम अपनी प्रकृतिकी बहुतसी बातोंको मान लेते हो। इसीलिये यह कहा जा सकता है कि मनुष्य निद्रामें, स्वप्नोंमें अपनी सच्ची प्रकृतिको जान सकता है, यद्यपि यह उसकी सच्ची और गहनतर प्रकृति अर्थात् उसकी आंतरात्मिक प्रकृति नहीं है बल्कि उसकी सहज-स्वाभाविक, अनियंत्रित प्रकृति है।

“इस प्रकार दिनमें हमारे चेतन विचार द्वारा किये गये बहुतसे प्रयत्न रात्रिके कुछ घण्टोंमें नष्ट हो सकते हैं..... इसलिये हमें अपने स्वप्नोंको जानना चाहिये और सबसे पहले तो उनमें भेद कर सकना चाहिये, क्योंकि वे अपने स्वभाव और गुणमें एक दूसरेसे बहुत भिन्न होते हैं। प्रायः एक ही रात्रिमें हमें विभिन्न श्रेणियोंके स्वप्न आ सकते हैं और ऐसा हमारी निद्राकी गहराईके अनुसार होता है।”

मुझे पता नहीं किसीने यह देखा है या नहीं, किंतु रात्रिके कुछ विशेष घण्टोंके अनुसार या जिस समय तुम सोये हो उसके अनुसार तुम्हारी निद्राका गुण बदल जाता है।

यदि तुम निरीक्षण करनेका कष्ट करो (यद्यपि बहुत कम लोग यह कष्ट उठाते हैं) तो ऐसा हो सकता है कि यदि रात्रिमें तुम असमयपर एक दम जाग पड़ो तो यह पाओगे कि इन दो अवस्थाओंमें तुम्हारी निद्रा एक ही प्रकारकी नहीं थी। कई ऐसे काल भी हैं जब तुम्हें विभिन्न प्रकारके स्वप्न आते हैं—यदि तुम निरीक्षण करो तो तुम इस बातको स्पष्ट रूपसे देख सकोगे, कई ऐसे घंटे भी होते हैं जब तुम्हारे लिये जागना कठिन हो जाता है, क्योंकि कि तुम गहरी नींदमें सोये होते हो, तुम बाह्य वस्तुओंके प्रति बिल्कुल अचेतन होते हो। इसके विपरीत कुछ अन्य समय एक जरासी आवाज, चाहे वह बहुत ही जरा क्यों न हो, तुम्हें एक दम जगा देनेके लिये काफी होती है।

रातके समय मैं कुछ वस्तुओं से नहीं डरता—पर दिनमें मुझे उन्हींसे डर लगता है, क्यों ?

इसका अर्थ है तुम्हारा प्राण तुम्हारी भौतिक

सत्तासे अधिक आयु वाला है। “..... इसमें के संदेह नहीं कि कई दृष्टिकोणोंसे हमारी अवचेतना हमारी सामान्य चेतनासे अधिक ज्ञान प्राप्त है।”

यहां मैं एक शब्दमें संशोधन करती हूँ। हमारा ‘अव चेतना’ को हमारी सामान्य चेतनासे अधिक ज्ञान नहीं है बल्कि ‘अतिचेतना’ को है, जो हमारी चेतनाकी पहुँचसे परे है, इसलिये नहीं कि वह निःकोटिकी है, बल्कि इसलिये कि वह उच्च कोटिकी है जब रात्रिमें हमारे सामने एक समस्या आती है, वह हमारी सत्ताके उच्चतर क्षेत्रोंमें चली जाती है और प्रातः हमें उसका उत्तर, उसका समाधान मिल जाता है, कारण, हाँ, ऊपर, हमारी चेतनाकी गहराईमें हम उन वस्तुओंको जान लेते हैं जिन्हें हम अपने बाह्य चेतनामें नहीं जानते।

नींदमें प्रायः ऐसा प्रतीत होता है कि हम प्रकाश उच्चतर ज्ञानके क्षेत्रमें प्रवेश कर रहे हैं, पर जागने पर हमारे पास केवल एक आभास, एक स्मृति मात्र रह जाती है। ऐसा क्यों ? इसका कारण यह है कि सत्ता की शृंखलामें, जो कि अत्यधिक बाह्य चेतनासे लेकर उच्चतम चेतना तक हो सकती है, कुछ रिक्त स्थान होते हैं—सतत प्रवाहमें कहीं कहीं शृंखला भंग होती है और जब चेतना ऊपर उठती है तो वह एक प्रकारके अन्धकार पूर्ण छिद्रोंमेंसे गुजरती है—ये छिद्र शून्य होते हैं। तब वह निद्रामें एक प्रकारकी अचेतना में चली जाती है, और जब वह इसकी ओरसे जागती है तो वह उस वस्तुको, जिसे वह ऊपर ले आयी थी ठीक याद नहीं रख पाती। ऐसा ही अधिकतर अवस्थाएँ विशेष रूपमें उस अवस्थामें होता है जिसे हम ‘समाधि’ कहते हैं, जो लोग समाधिमें चले जाते हैं वे यह अनुभव करते हैं कि उनकी सक्रिय बाह्य चेतना ध्यानकी चेतनामें एक रिक्त स्थान होता है। ऊपर अवश्य ही चेतन होते हैं—जिस अवस्थामें वे होते हैं उसके प्रति सचेतन—किंतु जब वे दुबारा अपने शरीर की ओर लौटते हैं तो उन्हें मार्गमें एक प्रकारके छिद्रोंमें प्रवेश करना होता है जहां वे सब कुछ खो देते हैं—वे अपने साथ उस अनुभवको लानेमें असमर्थ होते हैं। जो सोपान चेतनाको इस योग्य बनाते हैं

वह ऊपरकी अपनी अनुभूतियोंको न भूल सके उन्हें अपने अंदर लानेके लिये अत्यधिक अनुशासनकी आवश्यकता है। यह कोई असंभव अनुशासन नहीं है, किंतु है असीम रूपसे लंबा, इसमें अडिग धैर्यकी आवश्यकता है। यह मानों ऐसा हुआ कि तुम अपने अंदर एक सत्ताका-एक शरीरका निर्माण कर रहे हो, और उसके लिये सबसे पहले तुम्हें आवश्यक ज्ञान चाहिये, किंतु साथ ही दृढ़ता और अभ्यवसायकी भी आवश्यकता है और इसीसे बहुतसे लोग निरुत्साहित हो जाते हैं। किंतु यदि तुम अपनी उच्चतर सत्ताके ज्ञानमें भागी बनना चाहते हो तो यह बिल्कुल अनिवार्य है।

“क्या स्वप्नोंको अंकित करना लाभप्रद है?”

हां, एक वर्षसे अधिक मैंने इस प्रकारके अनुशासनका अपने ऊपर प्रयोग किया है। मैं सब कुछ अंकित कर लेती थी—कुछ शब्द, एक छोटा संकेत, कुछ-आभास और मैं एक स्मृतिसे दूसरी स्मृति तक पहुँचनेकी चेष्टा करती थी—शुरु शुरुमें सफलता नहीं मिली, किंतु लगभग चौदह महीनेके बाद, अंतसे आरंभ करके मैं सभी क्रियाओं और स्वप्नोंका रात्रिके आरंभ तक अनुसरण कर सकती थी। यह बात एक ऐसी चेतन और सतत अवस्था कर देती कि अन्तमें तो मैं बिल्कुल ही नहीं सो रही थी। मेरा शरीर लेटा हुआ होता था गहरी निद्रामें, पर चेतनामें विश्राम नहीं था। इसका परिणाम आश्चर्य जनक हुआ। तुम इस प्रकार निद्रा विभिन्न पक्षोंको जान लेते हो, प्रत्येक बारीकसे बारीक वस्तुके प्रति भी पूर्णतया सचेतन हो जाते हो। कुछ भी तुम्हारे नियंत्रणसे बाहर नहीं रह सकता। किंतु दिनके समय, यदि तुम्हारे पास अधिक काम है और तुम्हें सचमुच नींदकी आवश्यकता है तो मैं तुम्हें ऐसा करनेकी सलाह नहीं दूंगी।

जो भी हो, एक बात बहुत अधिक अनिवार्य है, जब तुम जागो तो जरा भी मत हिलो डुलो। जागते समय तुम्हें पूर्ण निश्चलताकी चलताकी अवस्थामें रहना चाहिये नहीं तो सब कुछ समाप्त हो जायगा।

“क्या मनको शरीर और मस्तिष्कसे स्वतंत्र रूपमें विश्रामकी आवश्यकता है?”

हां उसे इसकी नितांत आवश्यकता है। औ नीरवताके बीच ही मन ऊपरसे सच्चे प्रकाशके ग्रहणकर सकता है। मैं इस बातपर विश्वास नहीं करती कि मानसिक सत्ता थक भी सकती है, यदि उसे थकावट अनुभव होती है तो यह मस्तिष्ककी एक प्रतिक्रिया है। केवल नीरवतामें ही वह अपनेसे ऊपर उठ सकती है। किंतु निद्रा और स्वप्नोंके दृष्टिकोणसे जिसकी हम चर्चा कर रहे थे वह एक बड़ा ही विलक्षण तथ्य है। मैंने इसके ऊपर प्रयोग किया है। यदि तुम केवल मस्तिष्कको ही नीरव नह बना लेते वरन् प्राणमें भी शांति स्थापित कर लेते हो और अपनी सत्ताकी समस्त क्रियाओंको बंद कर दे हो और इस प्रकार यदि तुम रूपोंके क्षेत्रसे निकलकर सच्चिदानंदकी, सर्वोच्च चेतनाकी अवस्थामें प्रवेश कर हो, तो तीन मिनटमें ही तुम्हें इतना विश्राम मिल सकता है जितने कि आठ घण्टेकी निद्रामें भी न मिलेगा। यह बहुत सरल नहीं है, न यह एक ऐसी चेतना है जो पूर्ण रूपसे चेतन है, पर है संपूर्णतया निश्चल मूल स्रोतके पूर्ण प्रकाशसे भरपूर। यदि तुम्हें यह प्राप्त हो जाय, यदि तुम अपने अंदरकी स वस्तुओंको निश्चल कर सको तो तुम्हारी समस्त सत्ता इस सर्वोच्च चेतनामें भाग लेने लगती है, और मैंने यह भली भाँति जान लिया है कि विश्राम खालसे इस अवस्थामें बितासे तीन मिनट आ घण्टेकी सामान्य निद्राके बराबर है। (और यह विश्रामसे मेरा मतलब शारीरिक विश्रामसे है अर्थात् मांसपेशियोंके विश्रामसे।)

“क्या प्राणिक शरीरको भी विश्रामकी आवश्यकता है?”

हां प्राणिक शरीर भौतिक शरीरको एक प्रकार आवरणसे वेष्टित रखता है, इस आवरणका घनत्व गर्मिके उन स्वप्नोंके घनत्वके समान होता है जि हम अत्यधिक गर्म दिनोंमें देखते हैं। यही आवरण सूक्ष्म शरीर और अत्यधिक स्थूल प्राणिक शरीर बीचमें मध्यवर्तीका काम करता है यही संक्राम व्याधियोंसे थकावट, कलांति और आकस्मिक दुर्घनाओं तकसे शरीरकी रक्षा करता है। अतएव य

यह आवरण पूर्णतया अक्षत होतो तुम्हारी सब वस्तुओं से रक्षा करता है, किंतु कोई प्रयास आवेगा थोड़ी सी थकावट या अप्रसन्नता या कोई भी आघात उसमें खरोच डाल देता है और जरासी खरोच किसी भी आक्रमणके लिये रास्ता खोद देती है। चिकित्सा विज्ञान भी अब यह स्वीकार करता है कि यदि तुम्हारे प्राणमें पूर्ण संतुलन है तो तुम्हें कोई रोग नहीं होगा, कमसे कम संक्रमणसे तुम्हें एक प्रकारकी मुक्ति प्राप्त होजायगी और यदि तुममें यह संतुलन है, यह आंतरिक सामंजस्य है जो आवरणोंको अक्षत रखता है तो यह तुम्हारी समस्त वस्तुओंसे रक्षा करेगा। कुछ ऐसे लोग हैं जो बड़ा सामान्य जीवन बिताते हैं जो

जैसा कि सोना चाहिये, सोना, जैसे खाना चाहिये वैसा खाना आदि जानते हैं, और जिनका स्नायविक आवरण भी इतना अक्षत है कि वे सब प्रकारके संकटोंको ऐसे पार कर जाते हैं मानों कुछ बात ही न हो। यह एक ऐसी योग्यता है जिसे व्यक्ति अपने अंदर विकसित कर सकता है। यदि तुम अपने आवरणके दुर्बल स्थलोंके प्रति सचेतन हो जाओ तो कुछ मिनटकी एकाग्रता, शक्तिका आवाहन और आंतरिक शांति इस बातके लिये काफी है कि सब कुछ व्यवस्थित हो जाय, तुम रोगमुक्त हो जाओ और अवांछित घटना टल जाय।

कुमार-कल्याण रस

(विशेष)

इस रसमें रससिन्दूरके स्थान पर सुवर्णयुक्त चन्द्रोदय मिला देनेसे यह बालकोंके समस्त रोगोंमें अद्भुत लाभकारी प्रमाणित हुआ है।

प्रायः देखा जाता है कि बाल्यावस्थामें बच्चोंके पाचक अङ्ग यकृत (Liver) आदि दुर्बल होनेसे उन्हें मन्दाग्नि, अतिसार, वमन आदि रोग आक्रान्त कर लेते हैं, जिनकी चिकित्सा न करनेसे बालशोष (Rickets) होकर बालक अस्थिपञ्जर-सा दिखाई देने लगता है और माता पिता उसके जीवन की आशासे भी निराश हो जाते हैं, ऐसी स्थिति में रोग होनेके पूर्व ही यदि बच्चे को प्रतिदिन अत्यल्प मात्रामें कुमारकल्याण रस खिलाते रहें, तो बच्चा किसी भी रोगसे आक्रान्त नहीं होकर अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट होगा तथा उसके दांत भी समय पर और आसानीसे निकलेंगे।

यह रस बच्चोंके ज्वर, र्वास, कास, वमन, तालुशोष, पारिगर्भिक, बालग्रह, मन्दाग्नि, यकृद्दुष्टि, अतिसार, पाण्डु, कामला, बालशोष, रक्ताल्पता और निर्बलता सभी को नष्ट करता है।

मात्रा— $\frac{1}{2}$ से $\frac{1}{4}$ रत्ती।

अनुपान—सितोपलादि चूर्ण, मधु या मक्खनके साथ, प्रातः सायं दिनमें दो बार।

पुरीषवह स्रोतस् की व्याधियां

लेखक—शिवचरणजी ध्यानी जामनगर

(गतांसे आगे)

अतिसार

अतिसारमें द्रवमलकी बार-बार प्रवृत्ति होती है। किसी भी व्याधिमें द्रवमलकी प्रवृत्ति निम्न लिखित कारणोंमेंसे किसी एक या सबके उपस्थित होनेपर हो सकती है—

१. कोष्ठमें वातवृद्धि,
२. पित्तके द्रवगुणकी वृद्धि और उष्णगुणकी कमी,
३. पुरीषवह स्रोतस्की विशिष्ट दुष्टि,
४. अग्निमांश और आमविष,

निम्नलिखित व्याधियोंमें अतिसार एक लक्षणके रूपमें बतलाया गया है। इन रोगोंमें उपर्युक्त चार कारणोंसे कोई कारण उपस्थित रहता है। १. पैत्तिक-ज्वर, २. ग्रहणी, ३. विषूचिका, ४. कृमि, ५. पैत्तिकोदर, ६. जलोदर, ७. राजयक्ष्मा, ८. पैत्तिक मूर्च्छा, ९. पैत्तिक मदात्यय, १०. वातपैत्तिक विसर्प।

अतिसारके निदान

१. गुरु, स्निग्ध, रुक्ष, उष्ण, द्रव, स्थूल तथा शीतल पदार्थोंका अधिक उपयोग करना।
२. विरुद्ध भोजन।
३. अध्यशन

४. अजीर्ण
५. विषमाशन
६. अति स्नेह-प्रयोग
७. स्नेहका मिथ्या प्रयोग
८. विष
९. भय
१०. शोक
११. प्रदुष्ट जलको पीना
१२. अति मद्यपान
१३. सारस्य और ऋतुके विपर्ययसे,

सम्प्राप्ति—स्वनिदानसे प्रकुपित वात उदकव स्रोतोंमें जाकर वहाँसे उदकको कोष्ठमें लाकर उस उदकसे अग्निको मंद करके द्रवमलका बार-बार निस्सरण कराता है,—तब अतिसार उत्पन्न होता है।

दोष—वात प्रधान
दृढ्य—मल (रस भी)
स्रोतस्—पुरीषवह स्रोतस्
अवयव—पकाशय
स्रोतोदुष्टि लक्षण—अतिप्रवृत्ति
आशुकारी—
पकाशयोत्थ—

मिथ्या आहार विहार—वातदुष्टि, उदकको कोष्ठमें प्रेरित करना, पुरीषवह स्रोतोदुष्टि, द्रवमलकी अतिप्रवृत्ति अतिसार

अग्निमांश—

पक्वाशयमें मलधराकला द्वारा

आम—

मलमत्र विमाजन ठीक नहीं होता

मलमत्र विमाजन ठीक नहीं होता

विवेचन—अतिसारमें द्रवमलकी अति प्रवृत्ति होती है। इससे दो बातोंका अनुमान होता है। प्राकृतमल संहत होता है और अतिसारमें मल असंहत (द्रव) होता है। स्वस्थावस्थामें मलकी प्रवृत्ति दो बार होती है—प्रातः और सायं, परन्तु अतिसारमें मलकी बार-बार प्रवृत्ति होती है, मलके द्रव होनेसे मलका दूध होना ज्ञात हुवा और बार-बार प्रवृत्तिसे पुरीषवह स्रोतोदुष्टिका अनुमान हुवा। मलकी बार-बार प्रवृत्ति पुरीषवह स्रोतोदुष्टिका “अति प्रवृत्ति” लक्षण कहलाता है। पुरीषको संहत बनानेके लिये पक्काशयस्थ मलधरा कला सक्रिय सहायक हैं—अग्नि और वायु। अतः मलका असंहत (द्रव) होना अग्नि और वायुकी दुष्टिका द्योतक है। पुरीषवह स्रोतोमूल ‘पक्काशय’ वातका प्रधान स्थान है। अतिसारमें अग्निदुष्टिसे अग्निमांघ और आमकी उत्पत्ति होती है। मलका बार-बार निकलना जहाँ स्रोतोदुष्टिको बतलाता है वहाँ वायुकी दुष्टिका भी द्योतक है। पूर्वोक्त विवरणसे स्पष्ट है कि मलके द्रव होने तथा उसकी बार-बार प्रवृत्ति होनेसे वातदुष्टिका ज्ञान होता है और द्रवमलकी अतिप्रवृत्ति लक्षणके आधारपर अतिसारमें वात प्रधानदोष निश्चित किया जाता है।

होता यह है कि मिथ्या आहार विहारसे वातदुष्टि और अग्निमांघ होता है। प्रदुष्ट वात एक ओर पुरीषवह स्रोतोंको दुष्ट करता है और दूसरी ओर उदकको कोष्ठमें खींचकर अग्निमांघ भी करता है। अग्निमांघसे आमकी उत्पत्ति होती है, आन्त्रोंमें शोथ होनेपर भी वातदुष्टि और उससे उदकका वहाँ आना और अग्निमांघ तथा आमकी उत्पत्तिके साथ अतिसारका होना सरलतया समझा जा सकता है। अस्तु, वातदुष्टि और अग्नि दुष्टिसे मलधरा कला द्वारा मलमूत्र विभजन ठीक नहीं होपाता। मलधराकला स्वस्थावस्थामें वायुके रुक्ष गुण और पित्तके उष्ण गुणसे शोषणका कार्य करती है। वात और पित्तकी दुष्टि होनेपर मूत्रोत्पादक जलीयाँशका शोषण नहीं होपाता, परिणामतः द्रवमलकी बार-बार प्रवृत्ति होती है। संक्षेपतः—द्रवमल किसकी विकृतिका द्योतक है? इस प्रश्नके उत्तरमें कहना चाहिए कि द्रवमल उसकी विकृतिका द्योतक है जो मलको संहत

कौन बनाता है? पक्काशयस्थ मलधरा कला, किसकी सहायतासे? वात और पित्तकी सहायतासे। मलका द्रवत्व कैसे बढ़ता है और क्यों बढ़ता है? या तो मलधरा कलाद्वारा तत्रस्थ जलका शोषण ही नहीं होता या प्रकुपित वात शरीरसे उदकको पक्काशयमें लाकर मलको द्रव बना देता है। बार-बार प्रवृत्तिके सम्बन्धमें यह पूछा जाता है कि यह किसकी विकृतिका द्योतक है। उत्तरमें कहना चाहिए कि जो स्वस्थावस्थामें मलकी प्रवृत्ति कराता है वही अवस्था विशेष-अतिसारादिमें मलकी बार-बार प्रवृत्ति भी करा सकता है और वह है वात। यह सत्य है कि जो प्रवृत्ति करा सकता है वही विकृत होकर अतिप्रवृत्ति या अप्रवृत्ति भी करा सकता है।

अतिसारको मलकी अवस्थाके आधारपर दो प्रधान भागोंमें विभक्त किया गया है:—

१. आमातिसार—जिसमें मलके साथ आम निकलता है।

२. पक्कातिसार—जिसमें मलके साथ आम न निकलता हो।

यूँ तो अतिसारमें आम कुछ मात्रामें उपस्थित रहता ही है तथापि आमातिसारमें अपेक्षाकृत अधिक रहता है और परीक्षासे ज्ञात होता है।

आममलका पता लगानेके लिए मलकी जलतिमज्जन परीक्षा की जाती है, मलके कुछ अंशको जलमें डालें, यदि वह डूब जाय तो आममल समझें, और यदि वह तैरता रहे तो पक्कमल समझें। लेकिन पक्कमल भी यदि निम्न गुणोंसे युक्त हो तो वह भी डूबता है—

१. यदि पक्कमल अतिद्रव हो तो पानीमें डूब जायगा।
२. यदि पक्कमल अधिक कठिन हो तो भी डूब जायगा।
३. यदि पक्कमल श्लेष्मासे युक्त हो तो भी डूब जायगा।
४. यदि पक्कमल बहुत देरतक हवामें रहा हो तो भी डूब जायगा।

चरकने सुश्रुत और वाग्भटकी तरह प्रवाहिका नामकी स्वतन्त्र व्याधिका वर्णन नहीं किया है। उसने आमातिसारके लक्षणोंमें ही 'प्रवाहण' लक्षण भी गिना है। अतः प्रवाहिकाको चरकके आमातिसारमें निहित समझना चाहिए। आम पिच्छिल होता है और पक्वाशयकी भित्तियोंपर लग जाता है। आमयुक्त पुरीषको बाहर निकालनेके लिए पुरीषवह स्रोतसको अधिक संकोचगति-करनी पड़ती है। परिणामतः श्लेष्मयुक्त मलका प्रवाहणके साथ विसर्जन होता है।

अतिसारकी दोषानुसार सम्प्राप्ति।

वातज अतिसारकी सम्प्राप्ति—स्व निदानोंसे प्रकुपितवात अग्निको मंद करके अपघातु (मूत्र और स्वेद) को पुरीषाशयमें लाकर उससे मलको पतला करके बार-बार द्रव मलका त्याग कराता है। अतिसार वात प्रधान व्याधि है, अतः अतिसार भी सामान्य सम्प्राप्ति भी वातिक अतिसारके समान ही बतलाई गई है जिसका वर्णन पीछे किया जा चुका है। आधुनिक विज्ञानकी भाषामें कहना हो ऐसा कह सकते हैं कि जब आन्त्रोंकी श्लेष्मकलापर किसी भी कारणसे प्रदाहोत्पादक प्रभाव पड़े तो उनसे शरीरस्थ जलका वहां साव होता है और उससे मल द्रव हो

जाता है। साथ ही आन्त्रोंमें प्रदाह क्रियाके फलस्वरूप तीव्रगति भी होने लगती है जिससे द्रवमलका बार-बार निस्सरण होता है।

पैत्तिक अतिसारकी सम्प्राप्ति—प्रकुपित पित्त अपने द्रवगुणसे पक्वाशयस्थ ऊष्माको नष्ट करके अग्निको मन्द करता है और अपने उष्ण, द्रव तथा सरगुणसे मलभेद करके अतिसारको उत्पन्न करता है। आजकलके पाश्चात्य वैज्ञानिक भी इस तथ्यको मानते हैं कि पित्त आन्त्रोंकी गतिको बढ़ाता है और अधिक पित्त यदि अन्त्रोंमें पहुँच जाय तो अतिसार उत्पन्न कर सकता है।

कफज अतिसारकी सम्प्राप्ति—प्रकुपित कफ अपने गुरु, मधुर, शीतल एवं स्निग्ध गुणसे अग्निको मन्द करता है और पुरीषाशयमें अपने सौम्यभावसे पुरीषको पतलाकरके अतिसारको उत्पन्न करता है।

सान्निपातिक अतिसारमें तीनों दोष प्रकुपित होकर अतिसार उत्पन्न करते हैं।

भयज एवं शोकज अतिसार—भय एवं शोकसे भी वातवृद्धि होजाती है, अतः इनकी सम्प्राप्ति वातातिसारकी सम्प्राप्तिके समान है।

अतिसार

| वातज | पित्तज | कफज | सान्निपातिक | शोकज | भयज |
|-----------------------------|-------------|------------------|--------------------------------|------|-----|
| १. मल | १. मल | १. मल | १. तीनों दोषोंके मिश्रित लक्षण | | |
| i अरुणवर्णका | i पीत | i शुक्ल | | | |
| ii फेनिल | ii नील | ii सान्द्र | | | |
| iii रुक्ष | iii आलोहित | iii श्लेष्मयुक्त | २. शूकरके मेदके समान मल | | |
| iv साम | २. दाह | iv विरल | ३. वाराह मांसके धावनके समान मल | | |
| २. अल्प अल्प मल प्रवृत्ति, | ३. तृष्णा | v शीत | | | |
| ३. बार-बार मल प्रवृत्ति, | ४. मूच्छ्रा | २. लोमहर्ष | | | |
| ४. मल प्रवृत्तिके समय पीड़ा | ५. गुदपाक | | | | |
| ५. सशब्द मल प्रवृत्ति | | | | | |

अतिसारके पूर्वरूप ।

१. हृदय, नाभि, गुदा, उदर, तथा कुक्षिमें तोड़ ।
२. शरीर-शैथिल्य ।
३. अपान वायुकी अप्रवृत्ति ।
४. वित् संग (मल नहीं उतरता) ।
५. आध्मान ।
६. अविपाक ।

भेद—१. वातिक, २. पैत्तिक, ३. कफज, ४. सान्निपातिक, ५. शोकज और ६. भयज—इस प्रकार अतिसार ६ प्रकारका होता है । सुश्रुतने भयज अतिसारके बदले अन्नाजीर्णज अतिसार लिखा है ।

अन्नाजीर्णज अतिसारके निदान एवं लक्षणोंके अध्ययनसे पता चलता है कि उसका अन्तर्भाव चरकोक्त सान्निपातिक अतिसारमें होजाता है । सुश्रुतोक्त शोकज अतिसारकी सम्प्राप्ति चरकोक्त सान्निपातिक अतिसारके समान है । चरक शोकज अतिसारको साध्य मानता है, लेकिन सान्निपातिक अतिसारको असाध्य मानता है । सुश्रुत शोकज अतिसारको असाध्य मानता है ।

रक्तातिसार—पित्तातिसारसे पीड़ित पुरुष जब पैत्तिक आहार करता है तब उसे रक्तातिसार हो जाता

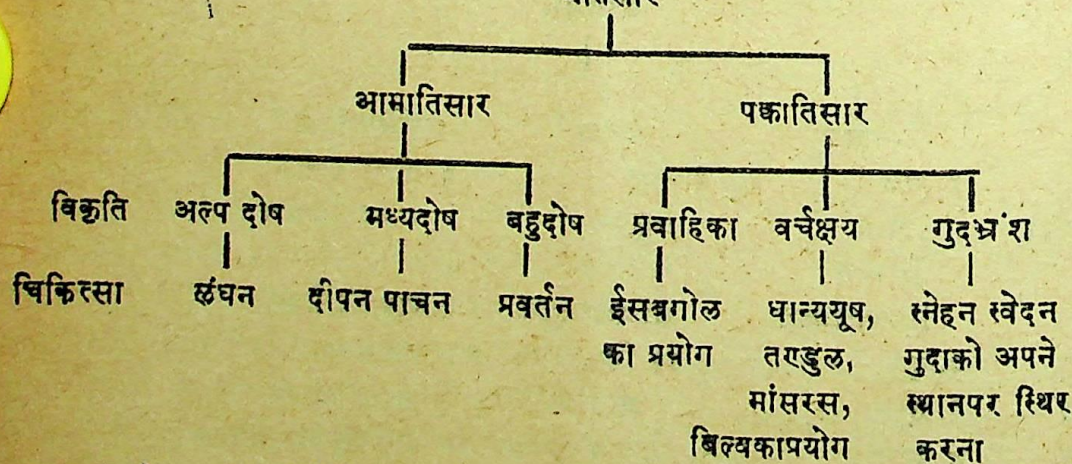
है, वस्तुतः पित्तातिसार ही रक्तातिसारमें परिणत होता जाता है ।

असाध्य लक्षण—

१. यदि पके हुए जामुनके वर्णके समान पुरीष आता हो ।
२. यदि शकृत खण्डके समान कृष्ण लोहित वर्णका पुरीष आता हो ।
३. तनु (अल्प, स्वच्छ) मल ।
४. घृत, तैल, वसा, मज्जा, वैसवार, दूध और दहीके समान मल आता हो ।
५. मांस धावनके समान मल ।
६. कृष्ण तथा नीलवर्णका मल ।
७. काला, चितकबरा तथा चन्द्रिकायुक्त मल ।
८. शवगन्धि तथा अत्यन्त दुर्गन्धित मल ।
९. वृष्णा, दाह, तम, श्वास, हिक्का, पार्श्वशूल, अक्षिशूल, मूर्च्छा तथा अरति लक्षणोंसे युक्त अतिसार ।
१०. गुदवलियोंका पाक होगया हो, गुद बंद न होता हो या गुदपाक होगया हो ।

चिकित्सा—अतिसारकी चिकित्साके सम्बन्धमें विचार करनेपर चिकित्साके दृष्टिकोणसे तथा अतिसारकी विभिन्न अवस्थाओंको देखकर अतिसारके निम्न लिखित भागोंमें बांटा जा सकता है—

अतिसार



१. यदि दोष अल्पबलवाले हों तो सर्वप्रथम लंघन कराना चाहिये । लंघनसे ही दोषोंकी विकृति ठीक होजायगी, अग्निमांश दूर होजायगा ।

२. आमातिसारमें प्रथम संग्राहक औषध नहीं दी जानी चाहिए । आमातिसारमें संग्राहक औषध देनेसे

दोष शरीरमें रुककर शोथ, पाण्डु, कुष्ठ, गुल्म, उदर उग्र आदि अनेक व्याधियोंको उत्पन्न कर देता है परन्तु यदि रोगी अत्यन्त दुर्बल हो तो आमातिसार भी संग्राहक औषध दी जा सकती है ।

३. आमातिसारमें यदि दोष अल्पमात्रामें प्रवृत्त

हो रहे हों और रोगी बलवान हों, तब दोषोंको बाहर निकालनेके लिए ईसबगोलकी भूसी, एरण्ड तैल, या हरीतकी और पिप्पलीके चूर्णको उष्णोदकके साथ देना चाहिए। इनसे विरेचन होकर दोषोंकी सम्यक् प्रवृत्ति होजाती है।

४. यदि दोष मध्यम हो तो दीपन-पाचन प्रमथ्याओंका प्रयोग करना चाहिए। यथा-पिप्पल्यादि प्रमथ्या हीवेरादि प्रमथ्या और पृश्निपर्यादि प्रमथ्याका प्रयोग।

५. दीपन और संग्राहीगणकी औषधियोंसे साधित अन्नपान प्रयुक्त करने चाहिये।

६. भोजनार्थ तक्र, काजी, यवागू तथा लाजाके सत्तका प्रयोग करना चाहिये।

७. यदि आम पाचन होगया हो, लेकिन प्रवाहिका अभी उपस्थित हो तो रोगीको कोई मृदु विरेचक औषध या कच्ची बेलगिरीके साथ सम प्रमाणमें तिलके कल्कको मिलाकर उसमें खट्टी दहीकी मलाई और घी या तैल मिलाकर प्रयुक्त करें। अथवा दुग्ध, घृत और अनार रसको मिलाकर प्रयुक्त करें।

८. यदि पुरीष केवल पानीकी तरह द्रव होगया हो तो धान्ययूषके साथ शालि चावल खिलाना चाहिए। पुरीषक्षयके लक्षण उपस्थित हों तो 'छागान्तराधियूष' का प्रयोग किया जासकता है। छागान्तराधि- इसके मेष (मेढ़े) के घड़के मांसका मांस रस तैयार किया जाता है जिसमें मेढ़ेका ही रक्त भी मिलाया जाता है। घी, धनियाँ, शुण्ठी डालकर मांसरस तैयार किया जाता है। इस मांसरसको स्वतन्त्र या ओदन (भात) के साथ रोगीको दिया जाता है।

९. यदि गुदभ्रंश होगया हो तो प्रथम स्नेहन और स्वेदन कराकर गुदाको स्वस्थान स्थित करना चाहिए तथा रोगीको चाङ्गेरीघृतका पान करायें। चव्यादि घृतका भी प्रयोग करें।

१०. उपर्युक्त सभी सामान्य सिद्धान्त हैं। जिस दोषके लक्षण प्रबल दीखते हों, उस दोषको शान्त करने वाली औषधियोंका प्रयोग भी साथमें किया जाना चाहिए।

११. पित्तातिसारमें यदि आमके लक्षण हों तो लघन कराना चाहिए। प्यास लगनेपर मोथा, पित्त-पापड़ा, खस, सारिवा, रक्तचन्दन, चिरायता, तथा सुगंधवाला-इनसे साधित जल पीनेको दें। पित्तके लक्षणोंके उपहोनेपर विरेचन कराना चाहिए। पित्ता-तिसार नाशक ६ योग नीचे लिखे जाते हैं—

(१) चिरायता, मोथा, इन्द्र जी तथा रसौत सबका चूर्ण बनाकर मधुसे प्रयुक्त करें।

(२) बेलगिरि, दारुहल्दी, सुगंधवाला तथा दुरालभाका चूर्ण बनाकर मधुसे।

(३) लालचन्दन, खस, सोंठ, लोध्र तथा नीलोत्पलका चूर्ण बनाकर मधु से।

(४) तिल, मोचरस, लोध्र, लज्जालु, श्वेत कमल तथा नीलोत्पलका प्रयोग करें।

(५) नीलोत्पल, धायके फूल, अनार झिलका तथा सोंठ इनका चूर्ण बनाकर।

(६) कट्फल, सोंठ, पाठा, जामुनकी गुठली, आमकी गुठली तथा दुरालभाका प्रयोग।

१२. रक्तातिसारमें मधु और खांडसे युक्त बकरीका शीतल दुग्ध पीनेको देना चाहिए। बकरीके दूधके साथ लाल शालि चावलका भात खिलाना चाहिए। रक्तके अधिक निकल जानेपर रोगीको घीमें भर्जित मृग या बकरेका रक्त देना चाहिए। मक्खनमें मधु और खांड मिलाकर देना चाहिए। नीलोत्पल, मोचरस, समझा तथा कमलकेशरके चूर्णको २ माशाकी मात्रामें बकरीके ठण्डे दूधके साथ दें। शतावरीके कल्कको दूधके साथ पिलाना चाहिए।

१३. यदि गुदपाक होगया हो तो पटोलपत्र और मुलहठीके अत्यन्त शीतल क्वाथसे गुदाका सिंचन करना चाहिए। ईखके रससे या बकरीके दूधसे गुदाका परिसेचन करना चाहिए। धायके फूल, लोध्र तथा उड़द इनके कल्कको गुदापर लगावें या इनका चूर्ण बनाकर गुदापर लगावें। गुदापर शतघृत घृत या चन्दनाद्य तैल लगावें। गुदापर घृत और तैलमें भिगोया हुआ पिचु रखना चाहिए।

जब अल्पमल, संवेदन, सरक्त आता हो, और अपान वायुकी ठीक प्रवृत्ति न होती हो ।

१४. कफज अतिसारमें—

(१) पिप्पली, पिप्पलीमूल, चित्रक तथा गजपिप्पलीका प्रयोग करें ।

(२) कुष्ठ, अतीस, पाठा, चव्य और कटुकीका प्रयोग करें ।

(३) कैथकी मज्जा, वायविडंग, शुण्ठी तथा काली-मिर्चका प्रयोग ।

(४) जामुनकीछाल, सोंठ, धनियाँ, पाठा, मोचरस तथा बलाका प्रयोग ।

१५. सान्निपातिक अतिसारमें क्रमशः वात, पित्त तथा कफको जीतना चाहिए या जिस दोषके लक्षण प्रबल हों, उसकी सर्वप्रथम चिकित्सा करनी चाहिए ।

१६. कुटजकल्प कराना चाहिए ।

१७. दुर्बल रोगीको—

| | |
|--------------------|---------------------|
| (१) पंचामृत पर्पटी | ३ रत्ती |
| प्रवाल पंचामृत | ३ रत्ती |
| संजीवनी वटी | १ रत्ती |
| सुवर्ण पर्पटी | $\frac{1}{8}$ रत्ती |

कुटजारिष्ट या कुटजावलेहके साथ दिनमें २ बार ऐसी एक मात्रा

अगर उपर्युक्त औषध नहीं तो—

| | |
|----------------|---------------------|
| सुवर्ण पर्पटी | $\frac{1}{8}$ रत्ती |
| पंचामृत पर्पटी | ३ रत्ती |
| अहिफेन | $\frac{1}{8}$ रत्ती |
| चिंचावीज चूर्ण | ४ रत्ती |
| जातिफल चूर्ण | १ मा० |

एक मात्रा दिनमें तीनवार ऐसी ३ मात्रा दिनमें तीन बार तक या पानीसे ।

पथ्यापथ्य—ग्रहणी रोगके समान हैं ।

पूर्णचन्द्रोदय रस (सिद्ध मकरध्वज)

इस पूर्ण चन्द्रोदयमें शास्त्र विधिसे संस्कारित तथा गन्धक जारित पारद उपयोगमें लिया गया है । इस चन्द्रोदयके सेवनसे वात और कफ प्रकृति वालोंको शास्त्रकथित पूरा-पूरा लाभ मिलता है । यह चन्द्रोदय उत्तम हृदय पौष्टिक, वाजीकर, विषघ्न, कीटाणुनाशक और रसायन (वृद्धावस्थाकी निर्बलताको दूरकर पुनः युवावस्थाके समान शक्तिप्रद) है । शारीरिक निर्बलता, मानसिक निर्बलता, शक्तिक्षीणता, आस, कास, क्षय, अपस्मार, विषविकार, जीर्णज्वर, पाण्डु आदि जीर्ण रोगोंसे पीड़ितोंके लिए अमृतके समान उपकारक है ।

मूल्य—१ ग्राम १०-१५ ।

मानसिक विकारोंसे उत्पन्न रोगोंकी चिकित्सा

ले० न्यायायुर्वेदाचार्य वैद्य पं० चन्द्रशेखरजी जैन शास्त्री

सम्पादक—आयुर्वेद चिकित्सक, लाखाभवन, जबलपुर

आयुर्वेदमें चिकित्सा करनेके पहले एक आवश्यक बातका बड़ा ही आकर्षक ढंगसे उल्लेख किया है—

“संक्षेपतः क्रियायोगो, निदान परिवर्जनम् ।”

अर्थात् चिकित्सासे पूर्व यह ध्यान रखना चाहिये कि उन कारणोंसे रोगीको बचाओ या दूर रखो या मना करदो, जिन कारणोंसे उस रोगकी उत्पत्ति हुई है। इस बातका ध्यान रखना परमावश्यक है। अन्यथा अच्छीसे अच्छी औषध-चिकित्सा करनेपर भी रोग हरगिज भी ठीक न होगा।

अन्धेकी तरह रस्सी बुने जाय और उस रस्सीको पीछेसे बकरी या बकरियों खाती जाय तो लाभ क्या हाथ आवेगा? इसी प्रकार रोगोत्पादक कारणोंको अलग किये बिना, औषध चिकित्सा कोई लाभ नहीं दे सकती।

मानसिक विकारोंके निवारणमें कार्त्तपय आशंकायें

(१) कुछ लोग कहते हैं कि यदि मानसिक विकार दीखने वाली कोई बाहरी चीज होती तो हम उसका त्याग कर देते? जैसे कि हम आलू, शकर, लालमिर्च आदि द्रव्योंका त्याग कर देते हैं। पर मानसिक विकार तो उस तरह दृष्टिगत होते नहीं। फिर इन्हें किस तरह दूर किया जाय?

इसके उत्तरमें आचार्योंने बताया है कि मन वास्तवमें बड़ा चञ्चल है। उसे विकार करने वाले विचारोंसे अलग रखना चाहिये। ऐसे विकारी विचार आने ही नहीं देने चाहिये, जिनसे कि रोगवृद्धिकी संभावना हो।

(२) फिर पूछने वाला पूछता है कि मन कभी ठलुआ या बेकार नहीं बैठता। जागरूक स्थितिमें तो वह निरन्तर अपना काम करता ही रहता है। यहाँ तक कि सुषुप्तावस्थामें भी वह अपनी करामात बन्द नहीं करता। फिर बताइये कि इसे विचारोंसे अलग किस प्रकार रखा जा सकता है।

समय तो इसपर नियन्त्रण करना एकदम असंभव है।

इसके उत्तरमें आचार्योंने लिखा है कि मनको उत्तमोत्तम विचारों तथा विवेकसे बशमें रखना चाहिये मन अपना काम तो बन्द नहीं कर सकता, पर उसकी दिशा अवश्य ही बदली जा सकती है उसे बुरे विचारों से हटाकर अच्छे विचारोंपर सुविधासे या अभ्याससे या परिश्रमसे लगाया जा सकता है। जैसे—

१. क्रोध भावको जीतनेके लिये शान्ति, क्षमा, सहनशीलता एवं आध्यात्मिक ग्रन्थोंका अभ्यास करना और सत्पुरुषोंके साथ रहना।

२. मान भावको दूर करनेके लिये विनय परिणामोंकी सरलता, मृदुता, अनुत्तेजना आदिका अपनाना। कोमल, शान्त परिणामी रहना आदि।

३. मायाचारके विचारोंको दूर करनेके लिये आर्जव-भाव, ऋजुता, सरलता, निष्कपटताका अपनाना। मनमें उन्हीं विचारोंको आने देना जिन्हें सबके सामने बिना भ्रिक्क उपस्थित किया जा सके और साथ ही कार्यरूपमें भी परिणत किया जा सके।

४. लोभ कंजूसी आदिके विकार-भावोंको पवित्रतासे, सन्तोषसे, न्यायक्रमसे उपार्जित सम्पत्तिमें सन्तोषकी भावनासे या अपनेसे छोटाको देखकर अपनेको उनसे अच्छा माननेसे दूर किया जा सकता है।

५. झूठ बोलनेके भावोंको ‘सत्यभाषण ही करूंगा’ ऐसी प्रतिज्ञा से दूर किया जा सकता है। यह काम अभ्याससे धीरे धीरे अवश्य हो जाता है।

इन तमाम बातोंमें आवश्यकतर एक और चीज है और उसका नाम है ‘संयम’। इस समय मानसिक और शारीरिक रोगोंकी संख्या बढ़ानेमें एक प्रमुखतम कारण है—‘असंयम’। इस असंयमके कई भेद हैं। संक्षेपमें इन्हें स्पष्ट करनेका प्रयत्न करते हैं।

१. स्पर्शनेन्द्रिय असंयम—यह असंयम आज-कल के युगमें बहुत ही अधिक है। इस कारण पुरुषोंमें नपुंसकता,

शीघ्रपतन, धातुक्षीणता, प्रमेह, अतुलोम और अधिकतर प्रतिलोम क्षय (इन दोनोंकी व्याख्या कभी किसी अगले लेखमें करेंगे) आदि हो रहे हैं। उधर इसीके कारण महिलाओंमें प्रदर, कमर, सिरदर्द, सीनेमें धड़कन, हाथ, पैरों आदिका दर्द, किसी काममें मनका न लगना और अन्तमें क्षय, घन्धप्रत्व, आर्तवदोष आदि रोग घर कर लेते हैं।

इस असंयमका स्पष्ट नाम है 'कामुकता' नवयुवक और नवयुवतियाँ जमाना बढ़नेके साथ साथ इसकी अनर्गलतामें भी तेजीसे बढ़ रहे हैं। सिनेमा देखना, ऐसे ही उपन्यास पढ़ना आदि इस कोठमें खाजकी तरह काम कर रहे हैं।

इसलिये इस असंयमको दूर करनेके लिये आचार्योंने देवमंदिर दर्शन, व्रतोपवास, त्यौहारादिका मार्ग निकाला। शास्त्र स्वाध्याय या उत्तम पुस्तकोंके अध्ययनका मार्ग रखा। इससे उक्त असंयममें प्रतिरोध होता है। विषय गंभीर है, जो थोड़ेमें स्पष्ट नहीं किया जा सकता, फिर भी नमूना मात्र दिखलाना हमने आवश्यक समझा है।

पुरुषोंकी अपेक्षा महिलायें इस विषयमें सावधानी रखती हैं। और विशेषकर उच्चवर्गके लोगोंमें। यह संयमी-व्रतीमातृजाति पुरुषोंको भीषण असंयमों से बचाती रहती है। जो महिलायें इन व्रतों-संयमों को पालन न करती हों, अब उन्हें सावधानीसे इस ओर अवश्य ध्यान देना चाहिये।

प्रायः यह शास्त्रीय-पद्धति हर एक धर्मावलम्बीमें चालू है कि व्रत वाले दिन महिलायें ब्रह्मचर्यसे रहती हैं। मैं अन्य धर्मावलम्बियोंके विषयमें बहुत अधिक जानकारी तो नहीं रखता पर जैन समाजके विषयमें कुछ अधिक अवश्य जानता हूँ। वह इस प्रकार है—

जैन समाजमें भादोंका महीना प्रायः पूराका पूरा व्रतमें ही जाता है। भादोंके लगते ही सोलह कारण व्रत लग जाते हैं, उनके समाप्त होनेके पूर्व ही भादों सुदीके पूर्व ही पंचलब्धि विधानव्रत लग जाते हैं। भादों सुदी ५ से १० दिन तक दशलक्षणव्रत लग जाता है। (इसे तो प्रायः पुरुषवर्ग भी खूब मनाता है।) फिर रत्नत्रयव्रत लग जाते हैं। इस तरह

क्वार बुदी १ तक व्रत ही है। पूरा माह तो इस तरह व्रतमें निकल जाता है।

फिर कार्तिक, फागुन और आषाढके महीनोंके शुक्लपक्षमें अष्टमीसे पूर्णिमा तक ८-८ दिन (कुल २४ दिनों) का व्रत चलता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक अष्टमी और प्रत्येक चतुर्दशीको व्रत रहता है। कतिपय महिलायें रविवारका भी व्रत करती हैं।

इस तरह वर्ष भरमें लगभग ३ माह व्रतमें बीतते हैं। इन दिनों महिलायें ब्रह्मचर्य पूर्वक रहती हैं। फिर प्रतिमाह मासिकधर्मके ४ दिनोंमें और भी संयम रहता है। डेढ़माह (पूरे वर्षका) इस तरह संयममें बीतता है। तब पतिदेवको भी संयमसे रहना पड़ता ही है।

संयमवाले दिन महिलायें सती साध्वियोंके चरित्र, सदाचार और ब्रह्मचर्य पोषक पुराणादिका अध्ययन करती हैं। इस तरह जैनधर्मावलम्बी पुरुषों और महिलाओंमें 'स्पर्शनेन्द्रिय संयम' उनका अच्छा संरक्षण करता है। बड़े-बड़े राजरोगोंसे उन्हें सुरक्षित रखता है। यह भाव प्रधान संयम है।

इसका अत्यन्त आवश्यक संयम है 'रसनेन्द्रिय संयम'। जीभका चटोरापन, स्वाद प्रियता, भोजनानर्गलता, होटलों और खोमचेवालोंका भोजन आदि बहुत सी बातें 'रसनेन्द्रियके असंयम'को घोषित करती हैं। इनसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं, जिनका प्रतिकार करना चिकित्सकोंको भी बड़ा कठिन होता है।

जैसे होटल रोग प्रसार करनेमें अग्रणी हैं। वहाँ प्रायः चीनी मिट्टी या कांचके पात्र होते हैं। उनमें सबको काफी, चाय आदि पिलाये जाते हैं। रसगुले समोसे, मीठा-नमकीन आदि खिलाये जाते हैं। चाय काफी दूध आदि पीनेवालोंमें श्वास रोगी, क्षयरोगी, उपदंश या सुजाकपीडित, चर्मरोग, पायोरिया, ओष्ठ रोगके शिकार आदि सभी व्यक्ति बेरोकटोक आते हैं। डटकर चाय-काफी-दूधकी चुस्कियां मजा लेते हैं। बादमें साधारण जलद्वारा वे पात्र एक पानी भरवा लटीमें डालकर धो दिये जाते हैं।

अब आप यह विचार करिये कि क्या उन चीनी

कांच पात्रोंका शुद्धिकरण ठीक तरह हो जाता है क्या? सचाई तो यह है कि बिलकुल ठीक तरहसे नहीं होता। तब उन्हीं पात्रोंका उपयोग करनेवाले अन्य व्यक्ति परस्परमें एक दूसरोंके रोगोंका शिकार होते जाते हैं। रोग-संक्रमण तेजीसे चलता है। सच पूछा जाय तो ऐसे स्थलोंको होटल आदि न कहकर 'संक्रामक-रोग प्रसारक' कहना अधिक उपयुक्त होगा। ये क्षय, श्वास, उपदंशादि बढ़ानेमें अच्छे सहायक हैं।

इसलिये धर्मशास्त्रमें बताया है कि शरीर और मनको शुद्ध रखनेके लिये सिर्फ घरमें बना हुआ पवित्र और पोषक आहार ही ग्रहण करो। घरमें पवित्र घी, तेल, मसाले, आटा, आदि उपलब्ध होते हैं। जब कि बाजारू दूकानोंमें अपवित्र घी, तेलके साथ नकली स्वास्थ्यघातक मसाले, सड़े आटा पिट्टी आदि डालकर स्वास्थ्य चोपट करनेवाला आहार दिया जाता है। जो शरीरके साथ मनको भी चोपट कर देता है।

बाजारू मसालोंमें छुई-मिट्टी, खड़िया, लकड़ीका बुरादा, पीली मिट्टी, लालमिट्टी, घोड़ेकी लीद, पत्थर (गोरा पत्थर) आदि क्या-क्या निकृष्ट चीजें मिलाई जाती हैं, उनका उल्लेख किसी अन्य लेखमें करेंगे।

लगातार एक ही प्रकारके रसोंका प्रयोग करते रहनेसे शरीरमें तद्रसजन्य विकृति हो जाती है। इसलिये सप्ताहमें २ दिन नीरस भोजन करनेका अभ्यास करना चाहिये। कइयोंको यह अभ्यास करना कठिन प्रतीत होता है। प्रायः ही लोग नीरस भोजन किसी दिन करना पसन्द करते हैं। इसलिये शास्त्रोंने एक सरल मार्ग दिखाया कि एक दिन नमक छोड़ दो (जैनोमें प्रायः रविवारके दिन नमक-त्यागका विधान है।) एक दिन दूध मत लो, एक दिन गुड़-चीनी या शर्कराका प्रयोग मत करो, एक दिन दही त्याग दो, फिर दूसरे दिन घी का उपयोग मत करो। इसी तरह एक दिनके लिये हरी-वन्स्पतिका त्याग करा दिया जाता है।

शास्त्रकारोंके सामने ऐसी स्थिति स्पष्ट थी कि संपन्न मानव घी, दूध, मीठेके बिना कभी रहता ही नहीं है। बल्कि पौष्टिकताका ध्यान रखते हुए यह दूध,

घी, मीठेका दैनिक और पर्याप्त तादादमें प्रयोग करता है। फलतः आचार्योंने अमीरों या सम्पन्नोको रोगा-क्रमणसे बचानेके लिये यह त्याग-पद्धति अपनाई। इसके साथ ही नीरस भोजनमें एकासन (एकाशन), अनोदर (भूख से कम खाना) आदिका विधान किया। अन्य शास्त्रोंमें भी उपवासकी व्यवस्था करके एक दो दिनके लिये सभी रसोंके त्यागका (निरा-हारताका) निर्देश किया है। उनके ध्यानमें भी जनताको मानसिक और शारीरिक दृष्टिसे नीरोग रखनेकी भावना काम रही थी। मेरी रायमें तो इस विषयमें प्रायः सभी धर्मावलम्बी एक ही शैलीपर चल रहे हैं। हां, पद्धतिमें थोड़ा-बहुत अन्तर अवश्य हो सकता है।

अब वर्तमान समयके आधुनिक चिकित्सक (एलोपैथिक डॉक्टर) भी इस विषयमें सावधानी रखने लगे हैं। बड़े-बड़े शिक्षित वैज्ञानिक भी, जो इस रस-त्याग पद्धति या एकाशन, अनोदर, उपवा-सादिको एक धार्मिक ढकोसला बताते थे, कहने लगे हैं कि प्राचीन ऋषियोंने यह पद्धति निर्धारित करके बड़ी ही दूरदर्शिताका काम किया है।

हम आप (चिकित्सक वर्ग) जानते हैं कि आज-कल मधुमेह खूब चल रहा है और ऐसे रोगियोंसे आलू, शर्करा, चीनी, चाय, काफी, केला, चावल आदिका त्याग अवश्य ही कराया जाता है। साथ ही शकरकन्द आदि जमीकन्दोंका त्याग भी बता दिया जाता है। दूसरी ओर हाई ब्लडप्रेसरके रोगियोंसे नमक और नमकयुक्त चीजोंका त्याग करा दिया जाता है। शेष भी बहुत रोगोंमें अब ऐलोपैथिक चिकित्सक इस त्यागकी पद्धतिको अपनाने लगे हैं। जब कि त्रिकालदर्शी ऋषियोंने इनका उल्लेख पहिलेसे ही आयु-र्वेद शास्त्रमें भर दिया है।

स्मरण रखिये कि जिह्वा (रसना) की लोलु-पतासे अनेक रोग घर कर लेते हैं इसलिये स्पर्शनेन्द्रिय की भांति इस इन्द्रियपर नियंत्रण करना भी परमा-वश्यक है। भारतीय महिलायें और विशेषतः जैन-समाजकी महिलायें इस रस परित्यागके व्रतोंमें रसना-नियंत्रणमें, अधिक सावधान रहती हैं। ध्यान रहे कि

मानव समाज भी अपनी रसना-जिह्वापर नियंत्रण करके अपनेको सदा स्वस्थ रखे।

अन्य इन्द्रियोंके नियंत्रण करनेसे भी मानसिक एवं शारीरिक विकार सुविधासे दूर रहते हैं। जैसे सिनेमा, नाटक, नौटंकी, थियेटर आदि देखनेसे शरीर उतना दूषित नहीं होता, जितना कि मन। कामुकता की भावना, मनमें गन्दे विचार, स्वप्नदोष, धातुतारल्य, नपुंसकता, मानसिक उन्माद, कामोन्माद, बुरे-बुरे निकृष्ट स्वप्न दिखाई देना आदि चक्षुरिन्द्रियके दुरुपयोगसे होते हैं।

ऐसे ही गन्दे उपन्यास, गल्प, कहानी, चित्रमय पत्र, सिनेमा संसारकी या अभिनेत्रियोंकी पत्रिकायें, अश्लील पोस्टर आदि पढ़नेसे ढेरों सारे मनोविकार उत्पन्न होते हैं। आज भारतीय नवयुवक और नव-युवतियोंको मानसिक दृष्टिसे दूषित करनेमें ऊपर लिखे इन दोनों ही कारणोंका वैशिष्ट्य है। स्थानाभाव के कारण इनपर विशेष प्रकाश डालनेमें हिचक रहे हैं। समय आनेपर इधर भी लिखना है।

× × ×

मानसिक विकारोंको जीतनेके उपाय—

मानसिक विकारोंके कारण, उनके कारण होने-वाले विभिन्न रोग आदि पर थोड़ेमें यथासंभव प्रकाश डाला है। अब मानसिक विकारोंको जीतने, नष्ट करने या निवारण करनेके लिये कतिपय उपायों, औषध-द्रव्यों आदिका वर्णन करेंगे।

१. लेखके प्रारंभमें भी इशारा कर चुके हैं कि सबसे पहिले रोगोत्पादक कारणोंको ढूँढ-ढूँढकर अच्छी तरह दूर कर देना चाहिये। इसलिये ही मानसिक-विकारोंको उत्पन्न करनेवाले कारणोंका निर्देश किया गया है।

२. बादमें रोग होजानेपर उनका व्यवस्थित उपचार या चिकित्सा आदि करनी चाहिये। इन दोनोंमें बड़ी सावधानीकी आवश्यकता है।

३. इनमें मनको तसल्ली देना, 'रोग सुविधासे दूर हो जायगा' ऐसी हिम्मत बढ़ाना प्राकृतिक नियमोंपर लाना, पथ्याहार और भोज्याहारकी सास्विकतासे व्यवस्था करना आदि सभी बातें सम्मिलित हैं। प्रायः

औषध-चिकित्सा भी इसी आधारपर की जाती है। पेड़को सुरक्षित रखनेके लिये, उसकी मूलतः व्यवस्था करनी चाहिये। सिर्फ ऊपरी फल फूल पत्तोंकी परवाह करनेसे ही काम न चलेगा।

इसका संक्षिप्त विवरण चन्द्र पंक्तियोंमें किया जा रहा है।

प्रत्येक मानसिक रोगकी चिकित्सामें ध्यान रखने योग्य बातें—

१. रोगी प्रातः सूर्योदयसे १॥ घण्टे पूर्व अवश्य ही उठ बैठे। रातको दश बजेके पूर्व न सोये और दिनमें भी नींद हरगिज न ले।

२. प्रातः झुटपुटा हो जानेपर नंगे पैर २-३ मील कच्ची जमीनमें अवश्य घूमें। इस समय स्थान और वायु शुद्धि व्यवस्थित रहती है। संभव हो तो सात (दिनमें ही भोजन करले) भोजनके १॥-२ घण्टे बाद खच्छ वातावरणमें धीरे-धीरे २-३ मील घूमे या टहले।

प्राचीन समयमें बढीनाथ, द्वारिका या शिखर या गिरनारकी यात्रा भी पैदल ही नंगे पैर करनी पड़ती थी। तब लोग एक ही यात्रा करके पचासों शारीरिक और मानस रोगोंसे मुक्त हो जाते थे। अब तो मेडिकल ट्रेन एक्सप्रेस मोटरों और यहाँ तक कि हवाईजहाजों से यात्रा करने लगे हैं, अतः रोगोंके शिकार बने रहते हैं। रईसों, आरामतलबों और कुर्सियोंकी शोष बढ़ाने वालोंको इस प्राचीन पद्धतिका पुनः अवलम्बन करना चाहिये। कमसे कम प्रति दो वर्षमें ऐसी एक पैदल यात्रा करना आवश्यक है।

पैदल यात्रासे रोग निवारण। शीर्षक द्वारा हम कभी अपने और अपने मित्रोंके अनुभवपर निर्देश प्रकाश डालेंगे।

३. स्वाध्याय, अध्ययनके क्रमको व्यवस्थित करने दें। जैसे उन्मादके रोगियोंको वह साहित्य पढ़नेको दें जिनमें सरलतासे प्राकृतिक उपायों द्वारा रोग दूर करनेका उपाय लिखा हो। रोगी अपनी पुरानी गलतियाँ सुविधासे समझ सके और आगेका स्वस्थ प्रोग्राम ठीकतरह बना सके। यह क्रम प्रायः मानस रोगियोंपर रखा जासकता है।

उन्माद रोगियोंकेलिये प्रति दिन देवदर्शन करना आवश्यक है। मन्दिरमें घण्टे आधघण्टे तक भगवत्-कीर्तन करना या उसे सुनना आवश्यक है। शुद्ध घीके दीपकोंके मध्य शुद्ध देशी कपूर जलाकर, रोगीको गा-नाचकर आनन्दसे आरती भी करनी चाहिये। उससे मनोविकार इधर उधरकी चिन्ताओंसे घूमकर एक विशेष-स्थितिमें केन्द्रित होजाते हैं। चिकित्सक जानते ही हैं कि मनोविचारोंकी धुन बदल देना, मनको एक ओरसे हटाकर दूसरी ओर लगा देना (पागलपन) की सफल चिकित्सा है।

४. गरिष्ठ, दुष्पाच्य, उत्तेजक आहार न ले। पहिले कभी चाहे आहारके विषयमें सावधानी न भी रखी हो। पर, मानसिक रोगोंमें तो पथ्याहार या सात्विक आहारका पूरा ध्यान रखना पड़ता है और चाहिये भी।

अर्थात् मानसिक रोगोंमें अपथ्याहार, दुष्पाच्य-गरिष्ठ आहार, अनुपसेव्य या असेवनीय मद्य-मांसादिका आहार और सात्विक होते हुए भी अनिष्ट (रोगवर्धक या विकारी) आहार अवश्य छोड़ देने चाहिये।

मानसिक विकारग्रस्त आलू, बैंगन, कुम्हड़ा, शकरकन्द, अरबी, घुइयां, बासी अन्न, दूषित अन्न या फल, गरिष्ठ सूखे मेवे, कढ़ाईमें तेल या घीमें तली हुई बासी चीजें, अभिषव (कामोत्तेजक) आहार, दुष्पाकाहार (अधकचा या जला हुआ दोनों तरहका आहार) न लें। गुड़ और गुड़मिश्रित पदार्थ भी काममें न लें।

मानसिक-विकारियोंके लिये उत्तम आहार—

(१) आंवला सर्व श्रेष्ठ पथ्योपध है। इसका रस निकालकर योग्यानुपानसे लें। आजकलकी चीनी रोगोंकी जड़ है, यह श्वेत विष या सफेद जहर है। मानसिक रोगियोंको भूलकर भी चीनी या आधुनिक शकरका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

देशी खांड या कालमी मिश्रीके संयोगसे आंवलाका मुरब्बा बनाकर, आंवलोंका ऐसा ही अवलेह, चयवनप्राश, आमलकी-खण्ड, आमला-पाक, आमलकी

अवलेह आदि पचासों प्रकारसे आंवलोंका उपयोग किया जा सकता है।

(२) दूसरी चीज है 'अनार'। विहदन्ता (अनार) लेना ही ठीक रहता है। इसका भी अनार-स्वरस, अनारका शरबत, अनारपाक, दाडिम पुटपाक, दाडिम चूर्ण, दाडिमावलेह, दाडिमकल्प आदि विविध रूपोंमें व्यवहार किया जा सकता है।

(३) तीसरी चीज है 'ब्राह्मी'। इसका भी विविध रूपोंमें उपयोग किया जा सकता है। जैसे-ब्राह्मीकी बनाई गई ठण्डाई, दूधमें डालकर बादामोंके साथ बनाया गया ब्राह्मी पेय, ब्राह्मी घृत, ब्राह्मी-पाक, मुक्ता-ब्राह्मी अवलेह, ब्राह्मीशरबत, आदि। ब्राह्मीस्वरसका ताजा नस्य भी अनेक दिमागी रोगोंको मिटाता है। उन्माद, अपस्मारादिमें हम इसका विविध रूपोंमें उपयोग करते हैं। ऐसे रोगियोंको सिरपर लगानेके लिये ब्राह्मी तैल और आंवला तैल मिलाकर प्रयुक्त करना चाहिये।

(४) इसी तरह मुनक्का या अंगूर भी इनके लिये बड़े कामकी चीज है। मुनक्केसे भी पाक, अवलेह, पेय, ठण्डाई, शरबत, मिश्रण, खमीरा आदि अनेक चीजें बनती हैं। मैं मुनक्कोंसे बनाये गये द्राक्षासव, द्राक्षारिष्ठ, हेमो द्राक्षामाल्ट, अंगूसासव आदिका प्रयोग मनोविकारियोंपर नहीं करता। इनके क्षणिक उत्तेजना स्फूर्ति तो आती है, पर ठीक ढङ्गका लाभ नहीं होता।

(५) कतिपय चिकित्सकोंने अनुभव किया है कि मानस रोगियोंपर बकरी का दूध, गोघृत आदि का ग्रीष्म-ऋतुमें प्रयोग करें। इन विकारोंमें रोगी अन्तजानेमें ही क्षय की ओर बढ़ने लगता है अतः ऐसोंके लिये पर्याप्त पर्यटन और बकरीका दूध देना बहुत ही अच्छा रहता है। समस्त घृतोंमें गोघृत सर्व श्रेष्ठ है और ताजा गोघृत मानस रोगियोंके लिये अमृत है।

(६) असगंध, शतावर आदिसे साधित बकरी का दूध या गोदुग्ध उनकी ताजा वनस्पतियोंका स्वरस निदानाशादि हों तो सर्पगन्धाके प्रक्षेपके साथ किया गया इनका प्रयोग बहुत अच्छा रहता है।

(७) सभीप्रकारके ताजे फल और विशेषकर सेव, चोष्य आम्र, सन्तरा, मीठानीबू (बड़ा), पके जामुन, अत्यन्त कमबीज वाले पके बड़े अमरूद आदि फल देते रहें । केला, तरबूज, खरबूजा, अचार (जिसमेंसे चिरौजी निकलती है), फालसे, करौंदे आदि नहीं देने चाहिये । मैं तो टमाटरोंका प्रयोग भी नहीं करता ।

इस तरह सावधानीसे पथ्याहार पर ध्यान रखनेके लिये इशारा लिख दिया है । विस्तृत-वर्णनमें तो बहुत पृष्ठ घिर जाते ।

विभिन्न मानसिक चिकित्साओंमें क्राम आने वाले औषध रत्न

१. जातिफलादि घृत, ब्राह्मीघृत, सिद्धार्थघृत (इन्हें अपस्मारादिमें देते हैं) २. शतावर्यादि चूर्ण, अश्वगंधादि चूर्ण, जातीफलादि चूर्ण (मनोनैर्बल्य जन्य नपुंसकतामें प्रयुक्त करते हैं) ३. हृदयपुष्टिके लिये या हृदयनैर्बल्य दूर करनेके लिये 'अर्जुन चूर्ण या अर्जुनघृत' दें । ४. च्यवनप्राशावलेह, आमलकी-अवलेह, द्राक्षावलेह सभी मनोविकारोंमें उत्तम हैं । साथमें यथावश्यक सितोपलादि चूर्ण आदि सौम्य चूर्णादि दे सकते हैं ।

मनोबल द्वारा मानसिक रोगोंकी चिकित्सा करना या प्राकृतिक क्रमसे मानसिक रोगोंकी चिकित्सा करना ये भी दो अलग अलग विषय हैं । इनपर स्वतंत्र लेख चाहिये ।

हमारे बहुतसे परिचित मानसिक रोगोंकी चिकित्साके लिये सारस्वतारिष्ट, सारस्वत घृत, सर्पगन्धा घृत, हृदयरक्षक रस, जवाहर मोहरा, हीराभस्म, स्मृतिवर्धक रस, उन्मादगज केसरी, अपस्मारघृत आदि-आदि का प्रयोग करते हैं । सबका वर्णन करना लेखको बढ़ाना है । अतः अनुभूत चिकित्सा पद्धतिके कतिपय इशारे मात्र दे रहे हैं ।

मानसिक रोगोंकी विशेष चिकित्साके क्रममें विभिन्न प्रयोग पद्धतियां

१. मानसिक आघातजन्य अतिसारमें—अनार, प्रवालपञ्चामृत, द्राक्षासव, कपर्द-भस्म (मधु एवं शण्ठीचूर्णसे), स्वर्णसूतशेखर-अभ्रकभस्मयुक्त दें ।

२. अपस्मारमें—वातकुलान्तक, भूतभैरव स्मृतिसागर, उन्मादगजकेसरी, अभ्रकभस्म, जवाहर मोहरा, मल्लसिन्दूर, सारस्वतघृत, ब्राह्मीघृत, कल्याणघृत, पञ्चगव्यघृत आदि वातनाशक, हृदय पोषक स्मृतिशक्तिवर्धक प्रयोग दें ।

३. मानसिक चिन्तादिजन्य अरुचिमें—च्यवनप्राश, मुक्तावलेह, रौप्य, (चांदी) भस्म, कामदु प्रवालपञ्चामृत आदि सौम्य, पोषक, पित्तशामक उत्तम खटिक द्रव्य दें ।

४. शुक्र क्षीणता जन्य मानसिक विकारोंमें—नागभस्म, च्यवनप्राश, पिंडखजूर साधित दुग्ध बंगभस्म, स्वर्णवज्र, चन्द्रप्रभावटी, स्वर्णसूतशेखर दें ।

५. आमवातमें हृदय रक्षणार्थ—पूर्णचन्द्रोदर रस, स्वर्णसूतशेखर, लक्ष्मीविलास रस, रसगुग्गुलु, नाराचघृत आदिका प्रयोग करें ।

६. मानसिक विकृतिजन्य उदर विकारोंमें—प्रातः सायं परिभ्रमण, सात्त्विक शीघ्रपाकी आदि अदरख, पोदीना, मुनक्के (किसमिस) की चटनी आरग्वधाद्यवलेह, दशमूलघृत, क्रव्याद रस, छुहरे मुनक्का, कालीमिर्च, कालानमक, अम्लवेत आदि बनाई गई चटनी आदिका प्रयोग करता रहे ।

७. मानस उदावर्तमें—उन्मादगजकेसरी, अभ्रकभस्म, स्वर्णसूतशेखर, आरग्वधाद्यवलेह, मुक्तावलेह, स्मृतिसागर, विजयपुष्पाद्यवलेह, पञ्चगव्यघृत, पंचगुटिका (बाह्योपचारार्थ) आदिका यथायोग्य प्रयोग करता रहे ।

८. शुक्रक्षयजन्य एवं मानस विकारोंके कारण होने वाली खांसियोंपर—वज्रभस्म, च्यवनप्राश, रौप्यभस्म, दशमूलाद्यघृत, गोदन्ती भस्म, प्रवालपञ्चामृत, बृ० सितोपलादि चूर्ण, लवंगादि चूर्ण, पिष्टी, ब्राह्मी घृत आदिका मिश्रण दें ।

९. विविध चिन्ताजन्य ग्रहणीमें—स्वर्णमाषा भस्म, पञ्चामृत पर्पटी, अभ्रकभस्म, जीरकादिको कुटजाद्यवलेह, कुटजघृत, सूतशेखर, नागभस्म, प्रवालपञ्चामृत, क्रव्यादरस आदिका अनार, च्यवनप्राश आदिके साथ ठाक तरह प्रयोग करें ।

१०. आक्षेपयुक्त ज्वरमें—सर्पगन्धाचूर्ण, स्मृति-सागर रस, गोदन्तीभस्म, स्वर्णसूतशेखर रस आदिके साथ दोषानुसार अनुपान रखें ।

११. विभिन्नज्वरोंमें (मानसिक ज्वरोंमें) हृदय रक्षणके लिये—ब्राह्मीवटी, स्वर्णसूतशेखर रस, लक्ष्मीविलास रस, हेमगर्भपोटली रस, प्रवालपंचामृत, रससिन्दूर आदि औषधों परित्थितिके अनुसार अदल-बदलकर देते रहें ।

१२. धातुनाशजन्य मानस विकारोंमें—गिलोय-सत्त्व, शतावरीचूर्ण, च्यवनप्राश, वृ० सितोपलादि चूर्ण, संशमनी, चन्दनादिलोह आदिका प्रयोग करावें ।

१३. मानसिक रोगोंमें तृषादि बढ जानेपर—पन्नाभस्म, कुमुदेश्वर, एलायुक्त आंवलापाक, गिलोय-सत्त्व, एलादिवटी, आलूबुखारा वटी, सेवफलका रस, अनारका रस, आंवलोंका खरस आदि यथायोग्य दें ।

१४. मानसिक रोगोंमें दाह बढ जानेपर—गिलोयसत्त्व, च्यवनप्राश, वृ० सितोपलादि चूर्ण, स्वर्णमाक्षिकभस्म, सूतशेखर, महाचन्दनादि चूर्ण, प्रवालपिष्टी, राजावर्तभस्म, मुक्तापिष्टी, कामदुघा रस, गुलाबका शर्बत, आंवलेका शरबत, अनारका शरबत, आंवलेका मुरब्बा, सेवफल आदिके सहयोगसे दें ।

१५. धातुक्षीणताजन्य मानसिकरोगोंमें (आज-कल यह रोग अत्यधिक प्रचलित है)—वंगभस्म, प्रवालपंचामृत, मुक्तापिष्टी, त्रिवंगभस्म, नागभस्म, शतावर्यादि चूर्ण, शिलाजीत, स्वर्णवसन्तमालती, ब्राह्मीवटी, सारस्वतचूर्ण, संशमनी वटी, स्वर्णमाक्षिक भस्म, कामधेनुरस, रौप्यभस्म, उत्तम चन्द्रोदय, अभ्रक चन्द्रोदय, सालमपाक, प्रसेहगजकेसरी, खमीरासन्दल, च्यवनप्राश, अश्वगन्धावलेह, बादामपाक आदि औषधियोंमें यथायोग्य औषधियोंका नं० १४ में लिखे गये योग्य अनुपानोंसे प्रयोग करें । क्योंकि ऐसे रोगियोंमें प्रायः पित्त बढा ही रहता है ।

१६. मानसिक रोगोंमें निद्रानाश होनेपर—माथेपर गुलाबका तैल मलो, सिरपर आंवला और ब्राह्मीका तैल लगाओ, गुलकन्द या च्यवनप्राश दो । औषधियोंमें राजावर्तभस्म, मुक्तापिष्टी, सूतशेखररस, वसन्तकुसुमाकर, सर्पगन्धावली को दाश में पर

बकरीके दूधकी मालिश कराओ । कानोंमें गुलाबका तेल डालो । रोगन काहू, रोगनकद्दू, रोगन बादाम, रोगन-गुल (गुलरोगन) मिलाकर माथे-सिरमें लगाना और कानोंमें डालना, व्यवस्थित आरामदेह वातावरण में सुलाना इनके लिये उत्तम है ।

१७. शुकज्वरजन्य प्रमेहोंकी चिकित्सा—प्रायः नं० १५ की भांति करें । त्रिफला, चन्द्रप्रभा, प्रमेहान्तररस या वटी, ताप्यादि लोह आदिका भी प्रयोग करें ।

१८. मानसिक रोगोंमें पित्त बढजानेपर—नं० १४ की चिकित्सा करें ।

१९. मानसरोगजन्य बुद्धि विकारोंपर—ब्राह्मी-घृत, पुष्पधन्वारस, अनारका शरबत, च्यवनप्राश, सेवफल, स्वर्णभस्म, वंगभस्म, मुक्तापिष्टी, अभ्रक-भस्मादि दें ।

२०. भ्रममें—स्वर्णमाक्षिक भस्म, स्वर्ण सूतशेखर, स्वर्णवसन्तमालती, मुक्तापिष्टी आदिको शर्बत विहदाना (अनार), सेवका मुरब्बा, च्यवनप्राश, आंवलेका मुरब्बा; चांदीभस्म, शरबत नीलोफर (नीलकमल), गुलकन्द आदिके साथ दें ।

२१. मूर्च्छा-संन्यासादि मानस विकारोंमें—कामदुघा, मुक्तापिष्टी, चन्द्रप्रभा, स्वर्ण सूतशेखर, अश्वगन्धारिष्ठ, चन्द्रकलारस, वसन्तकुसुमाकर योग्य अवलेह, शरबत या चटनियोंसे दें । मूर्च्छादि मिटाने को नस्यादिके ऊपरी उपचार करें ।

२२. मानसिक रोगियोंमें—वमन भी बढ जात है तब नीबूके रससे फाड़े गये दूधका पानी, शरबत अनार, शरबत नीलोफर, दाड़िमावलेह, शरबत बनफशा आदिके साथ जवाहर मोहरा पिष्टी, कुमुदेश्वर स्वर्ण सूतशेखर, एलादिचूर्ण, एला-सितोपलाद्यवलेह आलूबुखारेकी चटनी, द्राक्षावलेह, सेवफल आदि यथायोग्य परिस्थित्यनुसार देता रहे ।

२३. महिलाओंकी मानस विकृतिमें—पूर्ण चन्द्रोदय, सारस्वतावलेह, संचेतनी गुटिका, सर्पगन्धा वटी, हृदयरक्षक रस, जवाहर मोहरा, वैकान्तभस्म, स्वर्णसूतशेखर, प्रवालपंचामृत, अर्जुनघृत अशोकघृत (शेष पृष्ठ ३५८ पर देखें)

धूमपान

लेखक—सीतारामजी जोशी

व्यक्तिकी प्रकृति, उसके धूमपान दोषबलके आधार पर मात्रासे किया जावे तो अच्छा लाभ होता है।

धूमपानसे मल सञ्चय नहीं होता धातु दोष सम और निर्मल रहते हैं इन्द्रिय बल बना रहता है। धूमपानके बहुतसे गुण लिखे हैं। उनका विस्तार यहाँ नहीं करना है। धूमपानसे मुख, नेत्र, शिर, नासा, गलाके रोग नहीं होते इन्द्रिय द्वारोंकी शुद्धि होती रहती है।

निर्योपयोगी अन्य कर्तव्योंकी तरह धूमपानभी शरीरकी रक्षाका साधन है। धूमासे कलेजा काला नहीं होता।

कुछ लोग प्रायः पूछा करते हैं कि बीड़ी सिरेगट चिलम तमाखू हुक्कासे जो धूमा पीया जाता है नुकसान करता है या फायदा ?

इससे जैसे रसोईमें हरदम धूमा रहनेसे दीवार काली हो जाती है वैसेही कलेजेमें धूमा जम जाता होगा। कालिमा फेफड़ोंमें या कलेजेमें नाक, कण्ठ नालीमें धूमा जम जाता होगा।

ऐसे बहुतसे धूमपान सम्बन्धि प्रश्न लोग डाक्टर वैद्योंसे पूछा करते हैं। परन्तु ऐसा नहीं होता।

कहीं काला नहीं होता और न कहीं जलन ही लगती है। यदि धूमा विधिपूर्वक पीया जावे तो फायदा करता है हमारे स्वास्थ्यको ठीक रखता है।

धूमपान की व्यवस्था अनादिकालसे चली आयी है। और फायदेके लिए ही है।

जैसे मकानकी सफाई मरम्मत करना आवश्यक है प्रतिदिन कुछ दूद-फूट घिसाई होते रहनेसे मरम्मत की और कूड़ाकरकट मकानमें आनेसे झाड़ू लगाना आवश्यक समझा जाता है।

उसी तरह शरीरमें भी आहारके पकनेके बाद सूक्ष्म रूपसे कुछ इधर उधरसे दोष चूकर स्वाभाविक मल पैदा होते रहते हैं उनकी उत्पत्ति होती रहती है उनको धूमपानसे निकाला जाता है।

ये मल वातपित्त कफके रूपमें कोष्ठझोंमें तथा इन्द्रिय द्वारोंमें संचित होते रहते हैं उत्पत्ति भी होती

रहती है झाड़ूकी तरह इनको सूक्ष्म साधनोंसे निकाला जाता है।

जैसे स्थूल मलको निकालनेके लिए स्थूल झाड़ू और सूक्ष्म मलकी सफाईके लिए सूक्ष्म झाड़ू चाहिये अर्थात् जैसे लम्बे चोड़े मिट्टी वाले मकानके चोखे (मध्य) में यदि सफाई की जावे तो दन्ताली मोर्चे झाड़ू चाहिये।

पश्चपरसे मिट्टी साफ करनेके लिए उससे छोटी कोमल झाड़ू चाहिये, तथा मड़े गलीचोंपर या काच के फोटोपरसे मिट्टी साफ करनेके लिए कोमल मोर-पंखकी झाड़ूकी आवश्यकता होती है।

इसी तरह स्थूल मलोंकी सफाईके लिए पञ्चकर्म वमन विरेचनकी आवश्यकता है। परन्तु छोटी छोटी प्रणालियोंसे जो रस मल या पित्त चू जाता है और वहाँ ही सूक्ष्म स्रोतोंमें इन्द्रिय प्रणालियोंमें जो संचित हो जाता है जिससे वातादि दोषोंकी स्वाभाविक गति रुक जाती है उन कफ पित्तको निकालनेके लिए तो सूक्ष्म मार्जनी रूप धूम पानकी ही आवश्यकता है।

सूक्ष्म स्रोतोंसे चूए हुए संचित कफ पित्त वात की सफाईके लिए उनको दूर करनेके लिए धूमपान कराया जाता है या किया जाता है।

इस सूक्ष्म मार्जनीसे धूमपानसे शुद्धि की जावेगी तो वात पित्त कफ संचित न होने पावेंगे रोग वृद्धि न हो सकेगी। नित्यप्रति धूमपान रूप मार्जनी झाड़ूसे मार्जन करनेसे दोषोंकी स्वाभाविक गति नहीं रुकेगी दोष सम रहेंगे। शरीर इन्द्रियाँ स्वस्थ रहेगी, इसलिए पञ्चकर्मकी तरह धूमपान भी शोधन बृंहण रूपसे किया जाता है।

यह कमीकी पूर्ति करता है। अनावश्यक विकारी दोषोंको निकालकर शरीरकी रक्षा करता है।

धूमा सूक्ष्म द्रव्य है

आहारोंमें स्थूल द्रव्य अन्न है उससे भी सूक्ष्म जल है जो सब जगह पहुँच सकता है शरीरकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिये उस पानीसे भी सूक्ष्म अग्नि वायु है।

इन सूक्ष्म द्रव्योंको कल्पनाके बलपर शरीरमें पहुँचाकर शरीरकी रक्षा करना धूमपानका काम है।

धूमा जब मुख या नासिका द्वारा खींचा जाता है। तब वह प्राण उदान वायुसे खिंचकर सूक्ष्म स्रोतों द्वारा रक्तमें मिल जाता है। रक्त गरम हो जाता है इससे रक्त मिश्रित कफ पित्त द्रुत हो जाते हैं। फिर स्थानीय दोष च्युत होकर उस आशयमें जाकर जो स्थान जिस मलके निकालनेमें ठीक सहायता करता हो उपयुक्त हो उससे जुड़कर रक्तमें वायुकी तथा धूमकी प्रेरणासे मलरूप होकर बाहर निकाल दिया जाता है।

अर्थात् वायु गरम होकर अपनी चारोष्ण शक्ति (वीर्य)के द्वारा पिघलाकर कफको मलद्रव्यको सूक्ष्म मार्गसे मुख नासा मूत्र मल द्वारा बाहर निकाल दें। यही धूमपानका प्रयोजन है।

कफ दोष स्नानके बाद, भोजनके बाद, स्थानीय प्राकृत वातादि दोष विकृत होकर जब मुख, कण्ठ, नेत्र, नासा आदि स्थानोंमें संचित हो जाते हैं तब धूमपानसे द्रुतकर निकाल दिये जाते हैं। अथवा क्षीण कर दिये जाते हैं। यह धूमपानका मुख्य कार्य है।

धूमपान तीन तरहका है और तीन ही संस्कार करके शरीरकी रक्षा करता है। बृंहण धूम मरम्मत का काम करता है। शोधन भाङ्गका काम विरेचन धूम करता है प्रायोगिक धूम समता संशमन करता है।

यहाँ जानने योग्य बात यह है कि द्रव्य मात्राका सम्यक् योग फायदा करता है। न्यूनाधिक मात्रासे सेवन किया धूम हानिकर है।

जहाँ मृदु वीर्य धूमकी आवश्यकता है वहाँ तीव्र वीर्य द्रव्यका उपयोग करना और जहाँ तीव्र आवश्यक है वहाँ मृदु वीर्य द्रव्यका उपयोग होना सम्यक् योग नहीं होता। न्यून मात्रा या अति मात्राका प्रयोग, रातदिन बारम्बार खूब धूम पीया जावे तो क्या होगा, धूमका अति योग दोषको क्षीण करनेके बाद ओज या प्राकृत धातुओंको भी क्षीण करेगा। इसलिये विधि पूर्वक न न्यून न अधिक जो जिसके लिए उपयुक्त हो धूमपान करना चाहिये।

धूमपान तीन तरहका है—प्रायोगिक, वैरेचनिक नैहिक। और भी कई भेद हो सकते हैं। उनका विस्तार उचित नहीं।

प्रतिदिन स्वस्थ मनुष्य जो धूमपान करते हैं उसे प्रायोगिक धूम कहते हैं।

प्रायोगिकमें ९ आपान हों अर्थात् एक बारमें तीन बार आचूषण और तीन बार मोक्ष हो। थोड़ा अन्तर देकर फिर दूसरी बार तीन, फिर थोड़े क्षणों का अन्तर देकर तीसरी बार तीन बार आचूषण मोक्ष हो तब यह धूमपानका सम्यक् योग कहलाता है।

बारम्बार दिनमें कई बार पीया जावे तो दोष क्षयके बाद ओजक्षय भी होना शुरू हो जाता है। वायुका दमन करके अग्नि और धातुओंको भी क्षीण कर देता है। जो धातु रक्तप्रवाहमें घुले हुए चलते हैं सदा रक्त रसमें रहते हैं। अति धूमपान उन पौष्टिक तत्वोंको भी क्षीण कर देता है।

धूमपान विरेचन लेनेके बाद स्नान भोजनके बाद और विशेष उत्कलेश हो तब भी पीया जाता है। और नित्य दो बार पीया जाता है।

धूमोपयोग इसके दो अंग होते हैं—नेत्र (नली), द्रव्य (वर्ति) धूमपान करनेका यंत्र तीन टुकड़े जुड़कर बनता है। तीन हिस्से जुड़कर एक यंत्र कहलाता है। जिसको हुक्का कहते हैं।

मिथ्यायोग—आजकल बीड़ीसे धूमपान करनेमें नेत्रका प्रयोग नहीं होता यह अच्छा प्रकार नहीं है।

वास्तवमें धूम दूरसे ग्रहण किया हुआ सूक्ष्म (पतला) बना कर पीया हुआ धीरे धीरे तीन तीन बार धूम कवल कुछ अन्तर देकर ग्रहण किया जाय तो अच्छा रहता है।

नजदीकका धूम नेत्रोंकी ज्योति और ओजको क्षय करता है। अतिसन्निकट एक दमसे धूमाका धक्का प्राण उदानसे खिंचकर इन्द्रिय प्रणालियोंमें प्रविष्ट होकर इन्द्रियको धक्का देता है इस आघातसे सूक्ष्म इन्द्रिको हानि पहुँचती है।

शरीरमें श्लेष्मासे रक्षा—जैसे पानीमें किसीपर आघात किया जावे तो जल उसको बचाता है ठीक इसी तरह श्लेष्मा रक्त हमारी आघातोंसे रक्षा करता है।

वैसे तो सारे शरीरमें द्रव (श्लेष्मा) भरा रहता है। धूम गरम भी जावे तो ठण्डा होजाता है फिर भी तीव्र उष्ण नजदीकका धूम बीड़ी सिगरेट चिलमका

यदि दूरसे नली द्वारा ग्रहण किया जावे तो दुख-
दायी नहीं होता ।

इसीलिए नेत्र नली यन्त्रका विधिपूर्वक प्रयोग
किया जाता है सारे यन्त्र नलीकी लम्बाई तथा नलीके
छिद्रकी चौड़ाईका माप लिखा है ।

लम्बाई—२४ (चौबीस) अंगुली, ३२ (वत्तीस)
अंगुली, तथा अड़तालीस अंगुली लम्बी नली
चाहिये । छिद्रकी चौड़ाई कोलास्थि छोटे बेरकी गुठली
या मटर जैसा दाना प्रवेश कर सके ऐसे छिद्र वाली
नली होनी चाहिये ।

धूमपान नेत्रके एक एकके तीन तीन हिस्से होने हैं
तीन अवयवोंसे एक धूमनेत्र बनता है

नलीमें बीच बीचमें पर्वया आंटे पड़े रहने चाहिये
जिससे धूमाके टुकड़े होजावें । अर्थात् नो जगह प्रति-
हत होकर २४, ३२, या ४८, चौबीस, वत्तीस या
अड़तालीस अंगुल लम्बी नलीसे धूमा पतला बनकर
मुख या नासासे खींचा जावे धूमका सम्बन्ध मुख
नासासे दूरसे हो नजदीकसे न हो ।

तीन नेत्रके खंडोंको एक दूसरेसे जोड़कर एक नेत्र
बना लेवें । उसमें धूम द्रव्योंकी बनी हुई वर्ति रखी
जावे और अग्नि संयोगसे सुलगाकर (दीप्तका) धूम-
पान किया जावे ।

धूमयोगवाही होता है—धूमा जिस द्रव्यके साथ
संयुक्त होगा वैसा ही बन जावेगा । अर्थात् धूमामें
स्नेहन कराने वाली वस्तु प्रविष्ट कग दी जावे वह
स्नेहिक, जिस धूममें विरेचन द्रव्य प्रविष्ट हो वह
वैरेचनिक और सम स्वास्थ्यकर नित्य सेव्य द्रव्य
संशमनके रूपमें द्रव्य धूमरूपसे शरीरमें पहुँचाये
जावे वह प्रायोगिक धूम कहलाता है । ऐसे द्रव्य भेदसे
धूमाका भेद किया जाता है ।

धूमपान कल्पना—जहाँ यन्त्र शस्त्र औजार नहीं
पहुँचें और शल्य निकालना हो, पानी काथ भी नहीं
पहुँचे उस जगह द्रव्योंको धूमाकार (वायुवत् वाष्प
सूक्ष्म द्रव्य सत्वरूप) बनाकर शरीरमें पहुँचाया
जावे और दोषोंकी चिकित्सा की जावे, इसलिए धूम-
पानकी कल्पना की गई है । यह भी एक चिकित्साका
प्रकार है । पञ्चज्ञानेन्द्रियोंमेंसे स्वचाको छोड़कर चार
इन्द्रियोंके दोष चक्षु, श्राण, कर्ण, मुख (दन्त जिह्वा)के

सभी वातपित्तकफके रोग धूमपानसे मिट सकते हैं ।

शिरके अनन्तवात घोबा आदि रोग गलेके रोग,
कास, श्वास, जिह्वा जाड्य आदि बहुतसे रोग शान्त
हो जाते हैं ।

प्रायोगिक धूमपान सुबह साम दिनमें दो बार या
वायु कफका उत्क्लेश हो तब करना चाहिये । स्नेहिक
धूमपान दिनमें एकबार, वैरेचनिक तीन बार करना
चाहिये ।

गला, मुख, नेत्र, नासा आदिमें जमे हुए कफ पित्त
दोषको रेचन द्रुत करने वाले धूमको वैरेचनिक और
स्रोतोंमें उपरोक्त स्थानोंमें पञ्चेन्द्रिय शिरमें रूक्षा
मिटकर स्नेहन करने वाले धूमको स्नेहिक और नित्य
प्रयोगमें आने वाले स्वस्थ हित धूमको प्रायोगिक धूम-
पान कहते हैं ।

धूमपान स्वास्थ्य रक्षाका साधन है । द्रव्योंके
संयोगसे संस्कृत करके धूमको शरीरमें पहुँचाकर उससे
चिकित्सा की जाती है । यह एक चिकित्साका प्रकार है ।

अलग अलग रोगोंमें अलग अलग द्रव्योंके धूम
द्रव्य या धूमवर्ति बनाकर काममें ली जाती हैं ।

अमीर लोग लवंग, एला, घृत, केशर, कस्तूरी, अम्बु
इनका चूर्ण बनाकर धूम यंत्रमें रख कर पीते हैं ।

उपदंश, श्वास, कासादिके धूम द्रव्य बहुत लिखे हैं
उनका विस्तार यहाँ नहीं किया जाता यहाँ सिर्फ
इतना ही धूमपानके लिए लिखा गया है कि यह एक
सुन्दर स्वास्थ्य रक्षाकी विधि है ।

एकान्तमें एक स्थानपर बैठकर तन्मना होकर
शान्तिसे आवश्यकतानुसार आवश्यक द्रव्योंसे धूमपान
करे, तो कोई खराबी नहीं होती । चलते फिरते अन्य
कार्य करते हुए धूमपान करना विधि नहीं है । जैसे
कि बाजारमें चलते हुए भी बीड़ी पीते रहते हैं ।

विधि यह है कि नासासे खेंचकर दूसरे
द्वारसे या उसीसे निकालें या नासासे खेंचकर (एक
अंगुलिसे एक नासाछिद्र दबाकर दूसरेसे) मुखसे
धूमा निकाल दें ।

अथवा मुखसे खेंचकर मुखसे निकालें या
साधारण है ।

किन्तु मुखसे खेंचकर नासासे निकालनेका विधि
है । उससे नेत्रोंको बड़ा नुकसान पहुँचता है ।

अधिक धूमपानके रोग और न्यून बहुत कमकी कमी गुण हानि, किनको धूमपान नहीं करना चाहिये। किनको अवश्य करना चाहिये इत्यादिका विस्तार अन्य ग्रन्थोंमें है।

यहां तो आप इतना सा जान लें कि दुर्बल और क्षीण, युवा, बालक, वृद्ध, गर्भिणी इनको धूमपान निषिद्ध है।

आजकल बीड़ीके बगडलके बगडल अधिक मात्रामें पी जाते हैं और नजदीकसे धूमाका सम्बन्धकर पीते हैं। दोनों ही बातें ठीक नहीं। इससे ओजक्षय, हृदय दौर्बल्य और कास श्वास हो जाते हैं।

बचपनसे आदत पड़ जाती है वे युवावस्थामें तो निभते हैं परंतु वृद्धावस्थामें उसकी मात्रा और भी अधिक करनी पड़ती है। गरीबोंको पैसों और स्वास्थ्य दोनोंकी हानि अधिक होती है।

धीरे धीरे धूमा अन्न बन जाता है सात्म्य बन जाता है। उसके बिना चैन नहीं। इसलिए धूमपान वालोंकी संगत ही न करें।

आजकल तम्बाखूका पीनेका प्रचार है। बीड़ी सिगरेट भी कई जाति की है बहुतसे लोग कोकीन भी धूमपानमें दे देते हैं, तमाखू पिलाकर बेहोशी कर देना भी बदमाशोंका काम हो गया है इसलिए सावधानीसे धूमपान करे विश्वस्त पुरुषका ही धूमपान ग्रहण करे।

सर्दी और गर्मियोंमें पीने लायक दो धूम द्रव्यका मशाला लिखा जाता है यह नुकसान नहीं करता।

जाबित्री, जायफल, लवंग, इलायची, केशर, मोम ६-६ माशे और कस्तूरी, अम्बर ३-३ रत्ती लेकर शहतूत जितनी बड़ी बत्ती बनालें।

स्नान करनेके बाद तथा भोजनके बाद शान्तिसे धूम नेत्र(नली)में रखकर पीवें, इसे तीन व्यक्ति ३ दिन काममें लेवे इतनी मात्रा है। अर्थात् धूमपानकी यह मात्रा एक व्यक्तिकी एक बारकी नहीं है। ९ बार कुछ अन्तर दे देकर पीवे।

गर्मीके दिनोंमें, खस, चन्दन, नागरमोथा, छड़-छड़ीला, जटामांसी, कर्पूरकाचरी, गुल, घी, मिश्री, सभी ६-६ माशे लेवें। पहले चूर्ण कपड़ छान कर लें, फिर घी मिश्री गुग्गुलुके साथ कूटकर बत्ती बनालें। इसको चिलममें रखकर धूमपान करें।

इससे गर्मियोंमें शिर दूखना, रक्तपित्त, मुँहके छाले, दन्तमूलका पूय, सभी शान्त होजाते हैं। मुँहमें दुर्गन्ध मिटकर सुगन्ध रहती है। उन्मादीको इससे फायदा होता है। घृत पुराना हो तो और भी अच्छा है।

धूमपानका अतियोग करने वाले या मिथ्या योग करने वाले इससे परेशान हो जाते हैं उनके रोग बढ़ते रहते हैं। उनको इस ग्रीष्म ऋतुमें उपरोक्त ठंडे धूमक अभ्यास कर शनैः शनैः छोड़ देना चाहिये।

इस ऋतुमें छूटना आसान है। बीड़ी पीने वालोंके संगत छोड़ दें। दोस्तोंके आग्रह करनेपर भी न पीने मजबूत रहें। स्वयं छोड़ना चाहे तो कोई भी बुरा आदत छूट सकती है।

एक दो हमारे दोस्तोंने हमारी बात मानकर धूम पान छोड़ दी। उनकी छूट गई। उन्होंने यह विचार दृढ़कर लिए थे कि चाहे प्राण पखेरु उड़ जावें प आजसे बीड़ी नहीं पीवेंगे। धीरे धीरे क्रमशः क कर छोड़ दी।

कई व्यक्ति पानीके संयोगसे ठंडा किया हुआ हुक्केका धूमपान वैधानिक मानते हैं। और वह दूर भी ग्रहण होता है।

उनका कहना है कि हुक्का भी तीन खण्डसे बनता है। चिलम बीचका काष्ठका त्रिपर्वनेत्र (नली) और नीचेका जल पात्र यह धूम यंत्र है।

अथवा चिलम, हुक्का और पृथक् हुक्केसे जुड़ने वाला नली ये तीन मिलकर त्रिपर्व धूमयंत्र है। इस प्रकार चरकके आशयकी संगति बैठा लेते हैं। इससे भी कई हाथ लम्बा नेत्र रस्सीकी तरह बना हुआ होता उसे ठीक समझते हैं।

देश काल सुविधानुसार ये सभी कल्पना ठीक हैं। पञ्जाबमें और गुजरातमें और राजस्थानमें और आसाम, वङ्गाल, बिहार सर्वत्र विदेशोंमें भी धूम और धूमके कई प्रकार हैं। सभी ठीक हैं।

कहनेका अभिप्राय यह है कि धूम नजदीकसे प्रयुक्त न किया जावे जैसा कि चरक लिखते हैं:—

दूराद्विनिर्गतः पर्वच्छिन्नो नाडीतनूकृतः ।
तेन्द्रियं बाधतेधूमो मात्राकालनिषेवितः ॥

॥ च० सू० ५ वां ।

अर्थात् दूरसे खैंचकर ग्रहण किया हुआ धूमा पर्व जगह-जगह टकरानेके स्थानोंसे छिन्न भिन्न हुआ फिर सूक्ष्म नाडीमें प्रवेश करनेसे नाडीके आकारका लम्बा होकर भीतर जाता है।

इस प्रकार हल्का पतला धूम इन्द्रियोंको नुकसान नहीं देता। इसलिए इस विधिसे मात्रा और शीतोष्ण कालकी अपेक्षा रख कर पीया हुआ धूमा गुणकारी होता है।

इस समय मनुष्य स्नेहिक वैरेचनिक और प्रायोगिक इसप्रकार कल्पनासे धूमपान नहीं करते हैं। सिर्फ बीड़ी सिगरेटका रिवाज है।

सर्व साधारणको यह बात ध्यानमें रखनी चाहिये

कि मुख, गला, फुफ्फुसमें कफ क्षण क्षणमें पैदा होता रहता है। उससे प्राकृत लालारस, रसज्ञकफ आदि नाना नामोंसे आवश्यक रस उत्पन्न होते रहते हैं। शेष विकृत मल भी पैदा होते रहते हैं। वे एक जगह संचित न हों, विकार न करें, मुख, दन्त मूल, कण्ठ शुद्ध रहे शिर इन्द्रियोंमें लाघव रहे इसके लिये थोड़ा थोड़ा धूमपान दो टाइम करना चाहिये।

शर्दीके दिनोंमें ठण्डे देशोंमें इसका प्रयोग अधिक मात्रामें करते हैं। परन्तु भारत जैसे सर्व साधारण (न गरम न शीत ऐसे देश) में इसका अधिक प्रचार नहीं होना चाहिये। वास्तवमें कमजोर मनुष्योंको तो धूमपान बहुत ही निषिद्ध माना है।

— मानसिक विकारोंसे उत्पन्न रोगोंकी चिकित्सा —

(पृष्ठ ३५३ का शेष)

ऊटनीका दूध, वटदुग्ध आदि चीजें दे। नं० १६ में लिखी चिकित्सापर भी ध्यान रखे।

२४. मानसविकारज सिरदर्दपर—नं० १६ की चिकित्सा ध्यानमें रखें। स्वर्णमालिनीवसन्त, (शिरो-विरेचक नस्य, कफपूरितावस्थामें), स्वर्णमाक्षिकभस्म, गोदन्तीभस्म, प्रवालपंचामृत, स्वर्णसूतशेखर रस, शिलाजीत, गिलोयसत्त्व, च्यवनप्राश, बाम, विविध-लेप (कर्पूरादि) का यथायोग्य प्रयोग करें। सिरपर सुगन्धद्रव्य लगाकर पुष्पित बगीचोंमें घुमावें।

२५. कामोन्मादमें—सुन्दर वाटिकाओंमें विहार, सुन्दरियोंके साथ क्रीड़ा, (संभोग नहीं), ताश-शतरंज चौपड़ आदिमें सुन्दरियों द्वारा मनोविनोद, शृंगार-चर्चा, सिनेमा, अभिनेत्रियों रूपालीठाओं आदिसे विनोद आदि करायें। भोजनमें सात्विक फलाहार (सेव, अनार, अंगूर, सन्तरे, लौकाट, मोसम्बी आदि), सूखे उत्तमफल (पिंडलजूर, छुहारे, सुनक्के, किसमिस, सूखेसेव, थोड़ी मात्रामें काजू, चिलगोजे आदि), भोजन (शिखरन, मुरब्बे, अवलेह, बरफी (मेवाकी) आदि चीजें। सुरुचिपूर्ण और सुगन्धित द्रव्यसे दे।

रोगीको कब्ज बिलकुल भी न रहने दे।

२६. हृदयके विभिन्न रोगोंमें—अभ्रकभस्म, माणिक्यभस्म, अर्जुनघृत, सुवर्णभस्म, अकीकभस्म, मुक्तापिष्टी, स्वर्णमाक्षिकभस्म, वसन्तकुसुमाकर रस, शृंगभस्म, मुक्तावलेह, सेवका मुरब्बा, मुक्तापिष्टि, जवाहरमोहरा, कामदुघा, हृदयेश्वररस, अकीकपिष्टी, वंगभस्म और नं० १६ में लिखे गये विविध उपायादि।

इस तरह संक्षेपमें चिकित्साका इशारा दिया है। रोगकी किस अवस्थामें कौनसी औषधि ठीक रहती है? उस औषधका कौनसा घटक स्वतंत्र रहकर या मिश्रित होकर क्या प्रभाव डालता है? रोगी किस स्थितिका है? वंशपरम्पराका क्रम उसका किस प्रकारका चल रहा है? आदि पचासों बातें चिकित्सामें ध्यान रखने योग्य हैं। शत जकी चालसे अधिक दुरुह चिकित्साका क्रम है। किसी एक औषध पर ही लिखे तो इतना बड़ा एक लेख बन जायगा। इसलिये संक्षेपमें लिखकर ही विराम ले रहे हैं। चिकित्सक बुद्धि-शलसे इन इशारोंको समझनेका प्रयत्न-यत्न करेंगे। “सर्वे सन्तु निरामयाः”

चिकित्सायां चरकस्य वैशिष्ट्यम्--

लेखकः—वैद्य मदनकुमार शास्त्री, मिषगाचार्य, आयुर्वेदाचार्य

प्रवक्ताः—शासकीय आयुर्वेद महाविद्यालय उदयपुर [राजस्थान]

आयुर्वेदावबोधकं तत्र समूहेषु परां ख्यातिमुपगतं चरकसंहितापरनामधेयमग्निवेशतन्त्रं—समस्तायुर्वेद वाङ्मयपयोधेः प्रोज्ज्वलं रत्नमेवास्तीति नास्त्यत्र कस्यापि विप्रतिपत्तिः । “एकः पार्थो धनुर्धरः” इति वचनचरकस्तु चिकित्सिते” इत्याभाणकं न केनापि वैद्यागमज्ञेनाकर्णितमिति तु न वयं मन्यामहे ।

तदीदृशस्यास्य कायचिकित्साप्रधानस्य—चरक-तन्त्रस्य व्याधिप्रतीकारव्याख्याने क्रियदक्षि कौशलमिति तु ग्रन्थस्यास्य सम्यक्तया पठनेनैव सम्बुध्यते । अष्टाङ्गायुर्वेदस्याष्टस्वप्नज्ञेषु कायचिकित्सा नामाङ्गं गुरुतर गभीरार्थवत्त्वात् प्राथम्येन परिगणितं चरके । यथाः—तस्यायुर्वेदस्याष्टाङ्गान्यष्टौ कायचिकित्सा, शालाक्यं, शल्यापहर्तृकं, विषगर वैरौधिकं, प्रशमनम्, भूतविद्या, कौमारभृत्यकं, रसायन वाजीकरणमिति ।

चिञ् चयने इत्यस्माद्धातोर्व्युत्पादितः कायशब्दः ‘चीयते प्रशस्तदोषधातुमलैरितिकायः’ इति व्युत्पत्त्या सकलशरीरप्रतिपादको गृह्यते ।

तदेवं सर्वशरीरोपतापकानामपक्वाशयादिस्था नोद्भवानां ज्वररक्तपित्तातीसारादीनां रोगाणां—संशोधनसंशमनाहाराचारादिभिरुणयैः प्रतीकारः कायचिकित्साङ्गे गृहीतो भवति ।

यद्वाः—कायति, शब्दकरोतीति व्युत्पत्त्या—कायो जाठराग्निरप्युच्यते, यदुक्तं चक्रपाणिटीकायां भोजेनः—जाठरः प्राणिनामग्निः, काय इत्यभिधीयते ।

यस्तं चिकित्सेत्सीदन्तं, स वै कायचिकित्सकः ॥ इति यतोहि—ज्वरातीसारादयः कायचिकित्साविषया—रोगाः प्राधान्येनाग्निदोषादेव भवन्तीति सुस्पष्टं मुनिनाऽपि देहपोषकप्रधानजाठराग्निविवरणं प्रस्तावेऽग्नेः स्वरूपं प्रतिपादयता तेषां तेषामायुर्वर्णादि भावानां—रोगाणाञ्चापि वह्निमूलकता प्रदर्शिता ।

यथाः—आयुर्वर्णो बलं स्वास्थ्यमुत्साहोपचयौ प्रभा । ओजस्तेजोऽग्नयः प्राणाश्चोक्ताः देहाग्निहेतुकाः । शान्तेऽग्नौ म्रियते युक्ते ॥

रोगीत्यादिकृते मूलमग्निस्तस्माज्जिरुच्यते ॥ इति ॥ एवञ्चात्र चिकित्साधिकरणं भूतं शरीरं कायशब्देन प्रतिपाद्यावान्तर-परिगृहीतार्थं बलेन तथैव कायशब्दस्याग्नेरिति संज्ञा प्रदानं समीचीनमेव प्रतिभाति । किञ्च—व्याधिप्रतीकारार्थकस्य कितेर्धातोर्व्युत्पादितश्चिकित्साशब्दः—

“चतुर्णां मिषगादीनां शस्तानां धातुवैकृते । प्रवृत्तिर्धातुसाम्याधी चिकित्सेत्यभिधीयते ॥” इति मुनि प्रोक्तं लक्षणानुसारं—धातुवैकृते (रोगे) धातुसाम्यार्थं (आरोग्यकरणाय) या प्रवृत्तिस्तदर्थपरो गृह्यते ।

चिकित्साप्राप्तयेतु किमर्थं चिकित्सा विधीयते ? किं लक्षणा च सा ? प्रश्नरूपेणैवमाक्षिप्तमग्निवेशस्य वचः समाधातुमाचार्यश्चिकित्सा युक्तिं प्रदर्शयति ।

कथं शरीरे धातूनां वैषम्यं न भवेद्विह । समानां चानुबन्धः स्यादित्यर्थं क्रियते क्रिया ॥ तथा च—याभिः क्रियाभिर्जायन्ते शरीरे धातवः समाः । सा चिकित्सा विकाराणां कर्मतद्भिषजां स्मृतम् । इति अत्र विषयेषु—दोषधातुमलैरितिकायः, याभिः क्रियाभिः समत्वमुत्पद्यते सा चिकित्सेति चिकित्सायाः लक्षणं विहितम् । एवंभूता च सा सामान्यविशेष सिद्धान्तानुसारमधिकमपकर्षति—न्यूनग्रापयतीति वृद्धा उत्पन्ना समधातु परम्परा तु वैषम्य परम्परा निवृत्तिपूर्वकं सप्तमेव धातुसन्तानमारभते ।

धातुसाम्यानुबन्ध संस्थापनमेव च चिकित्सायाः प्रयोजनस्यस्ति । एवं हि “धातुवैषम्यं नाम विकारागमस्तज्जिवृत्तिश्चिकित्सा (धातुसाम्यमित्यर्थः)” एवं भूतायाश्चिकित्सायाः विभागद्वयं चरकेऽवलोक्यते ।

१—स्वथोर्जस्कर चिकित्सितं, २—व्याधि निर्धातकर चिकित्सितञ्चेति । अष्टाङ्गेषु पृथगङ्गत्वेनोक्ते रसायन वाजीकरणेऽत्र स्वथोर्जस्कर चिकित्सायां समाविशतः । तत्र रसायनस्य जरादि स्वाभाविक रोगहरणे

दा होवा
क आदि
हैं । शेष
इ संचित
शुद्ध रहे
डा थोडा
अधिक
साधारण
प्रचार
पोंको तो
पकभम,
पकभम,
र रस
पापिष्ट,
कपिष्टी,
गायादि।
रा दिया
ध ठीक
स्वतंत्र
ता है ?
उसका
बातें
चालते
औषध
तायगा।
रहे हैं।
मभनेका

करणमपिव्यवायादि क्षयितस्य शुक्रधातोरुपचयं कुर्वन् स्वस्थोर्जस्करं भवत्येव । व्याधिनिर्घातकर चिकित्सायां तु शरीरागन्तु मानसानां ज्वरादिविकाराणां प्रशन्नोपायाः विस्तरेण निर्दिश्यन्ते ।

पूर्व हि—दोषभेषजादीनां प्रभावमनवबुध्य न वैद्यो व्याधिहरणे साफल्यमधिगच्छतीति वचांस्युपलभ्यन्ते, “स एव दोषः संसृष्ट योनिर्विरुद्धोपक्रमो गम्भीरानुगतश्चिरस्थितः प्राणायतन समुत्थो मर्मोपघाती कष्टतमः क्षिप्रकारितमश्च सम्पद्यते” तथा ह्येभ्यो दोषादि विशेषेभ्यो व्याधयो मृद्वो दारुणाः—क्षिप्रसमुत्थाश्चिरकारिणश्च भवन्तीति, एवञ्च—दोषादिमान ज्ञानायत्तत्वाच्चिकित्सायाः “नह्यमानज्ञो दोषादीनां भिपग् व्याधिनिग्रहसमर्थो भवतीत्याहुच्यत एव” ।

अतएव प्रतिरोगं निदानपूर्वरूपरूपोपशयसंख्या-प्राधान्यविधिविकल्प बलकाल रूप सम्प्राप्ति विशेषानधिगम्य-पश्चाच्चदोषभेषजदेशकालबल शरीर साराहार सात्म्य सत्वप्रकृति वयसामवस्थान्तराणि सूक्ष्म सूक्ष्माण्यव बुध्य तैस्त्रैरुपायैर्विहिता चिकित्सा न निष्फला भवितुमर्हतीति सुनिश्चितोऽयं चरक सिद्धान्तः । व्याधिहरमेवौषध-दैवव्यपाश्रयं, युक्तिव्यपाश्रयं, सत्त्वावजयश्चेत्येवं त्रिविधं तिस्रैर्पणीये निर्दिष्टं । अत्रापियुक्ति व्यपाश्रयमौषधमाहारौषधयोजनारूपमन्तः परिमार्जनं, बहिः परिमार्जनं, शस्त्रप्रणिधानञ्चेतिप्रकारान्तरेणोपयुक्तं पुनस्त्रिविधं निर्दिश्यते त्रिविधेष्वप्येतेष्वन्तः परिमार्जनं, बहिःपरिमार्जनञ्चेत्येवं द्विविधमेवौषधं—शरीरेषु कायचिकित्सासाध्येषु ज्वरादिरोगेषु सर्वत्रोपयुज्यते । अन्यत्तु-शस्त्र प्रणिधानरूपं शल्याङ्ग विषयभूतं नेह प्रपञ्च्यते ।

अन्तः परिमार्जन्त्वौषधं शोधनरूपं शमनरूपं वाऽन्तः शरीरं प्रविश्याहार जातव्याधीन् प्रमार्ष्टि । यत्तु बहिः स्पर्शमाश्रित्याऽभ्यङ्गस्वेदा लेप परिपेकाद्यैरामयान्निवारयति, तद् बहिः परिमार्जनमित्युभयोर्लक्षणे उच्येते । उभयविधमप्येतच्छोधनाख्यं शमनाख्यञ्च कर्मद्वयं सम्पादयतीति शोधनरूपमन्तः परिमार्जनं, शमनरूपमन्तः परिमार्जनं, तथा च-शोधनरूपं बहिः परिमार्जनं, शमनरूपं बहिः परिमार्जनञ्चेति चतुष्प्रकारकं विषय भेदात्

यत्तु लघन बृंहणीयेः—

लघनं बृंहणं काले रूक्षणं स्नेहनं तथा । स्वेदनं स्तम्भनञ्चैव जानीते यः स वै भिषक् ॥

इत्यादिना षडुपक्रमा रोगाणां व्याख्याताः ।

ज्ञातञ्च—“इतिषट् सर्व रोगाणां प्रोक्ताः सम्यगुपक्रमा इति

तथा च—दोषाणां बहुसंसर्गात् संकीर्यन्ते षडुपक्रमाः षट्त्वं तु नातिवर्तन्ते त्रित्वं वातादयो यथा इत्यादि

तथा प्यनुपदमेव वक्ष्यमाणे-सन्तर्पणीयेऽप्यप्ये

विधानामप्येषां लघनाद्युपक्रमाणां सन्तर्पणापतर्पणभेदे द्विविध एव विषये प्रवृत्तिर्दिश्यते । एवञ्चात्र-लघनस्वेदनरूक्षणाणामुपक्रमाणां सन्तर्पण चिकित्सायां, तथा बृंहण, स्नेहन, स्तम्भनानां सन्तर्पण चिकित्सायां भावो युज्यते ।

अपतर्पणमपि च त्रिविधं चरके निर्दिश्यते, लघनं लघनपाचनं, दोषावसेचनञ्चेति । तत्र लघनमल्पबल दोषाणां, लघनपाचने तु मध्यबलदोषाणां, बहुदोषाणां पुनर्दोषावसेचनमेव कार्यमिति निर्देशः ।

सन्तर्पणरूपसपतर्पणरूपपञ्चाप्युपक्रमद्वयमभिधाय दानीमन्येषामप्युपक्रमाणाञ्चरके वर्णितानां निर्देशं क्रियते । तथाहिः—व्याधितरूपीयेष्विमाने क्रिमि चिकित्सा तमुद्दिश्यापकर्षणं, प्रकृतिविघातः निदानपरिवर्जनञ्चेत्युपक्रमत्रयवर्णितमस्ति । अपकर्षणञ्च-बाह्याभ्यन्तरभेदे द्विविधं, तत्र—बाह्यमपकर्षणं क्रिमिशल्यादिषु क्रियते ।

आभ्यन्तरमपकर्षणन्तु दोषसंशोधनारम्भकं वमनविरेचनादिभिरुपायैर्विधीयते । अत्रापकर्षणसपतर्पणख्ये संशोधने सर्वथान्तर्भवति, प्रकृतिविघातस्तु सन्तर्पणाख्ये संशमने । सोऽपि बाह्याभ्यन्तर भेदाभ्यां द्विविधं प्रविभज्यते ।

तत्र बाह्यः प्रकृतिविघातः स्वेदाभ्यङ्गपरिपेकाद्यैरुपायैर्बहिः स्पर्शमाश्रित्य दोषसंशमनं करोति । आभ्यन्तरस्तु शरीरान्तर्गतानामेव दोषाणां शमनं करोतीत्युभावप्येतद्विधं शमन चिकित्सायामन्तर्भवतः । निदानपरिवर्जनञ्च यथादोषं तेषां तेषां रोगोत्पादक हेतुभूतानां शीतोष्णशान व्यायामादीनां परिवर्जनार्थमुपयुज्यते ।

तथोच्यतेः—

यथा शीतोष्णशान व्यायामादीनां परिवर्जनार्थमुपयुज्यते ।

विषमाः नानुबध्नन्ति जायन्ते धातवः समाः ॥ इति
प्रयोजनञ्चास्य “संक्षेपतः क्रिया योगो निदानपरि-
वर्जनमस्त्येव” पुनश्चौषधं हेतुविपरीतं, व्याधिविपरी-
तमुभयविपरीतञ्चेत्येवं त्रिधा विभक्तं दृश्यते । तत्र-
हेतुविपरीतं,—

यथाः—शतितोष्ण कृतान् रोगान् शमयन्ति मिषग्विदः ।
येतु शीतकृता रोगास्तेषामुष्णं मिषग्विजितम् ॥
इत्यादिः ।

एवं हिः—गुरुस्निग्धशीतादिजै व्याधौ लघुरुक्षोष्णा
दीनां हेतुविपरीतानामुपयोगः क्रियते । तथा चान्यत्रापि-
“अपतर्पणनिमित्तानां व्याधीनां नान्तरेणापूरणमस्ति
शान्तिस्तथा पूरणनिमित्तानां व्याधीनां नान्तरेणाप-
तर्पणमित्याद्युदाहरणानि सन्ति । व्याधिविपरीतं
यथाः—ज्वरे विशेषतोहितं मुस्तपर्पटकम् यवागूश्च,
यदुच्यते “ज्वरघ्नो ज्वरसात्स्यत्वादित्यादिः” प्रमेहेः—
हरिद्रायवान्नञ्च, कुष्ठेः—खदिरं, तथा श्वास कास पार्श्व
शूलदिषु पुष्करमूलमित्यादि । उभयविपरीतं यथाः—
वातशोथे दशमूलं वातहरत्वेन हेतुविपरीतं शोथ हरत्वेन
च व्याधिविपरीतमेवमुभयविपरीतं निर्दिश्यते ।

षड्विरेचन शताश्रुतीये हि—पाटला इत्याचार्यप्रदशे-
मानि शोथहराणीत्येवं दशमूलस्य शोथहरत्वं प्र-
शंसित-
मस्त्येव—एवञ्च—हेतुप्रत्यनीकवदेव विपरीतार्थकारि चिकि-
त्सितमपित्रिधा विभक्तं दृश्यते । तथा च—पञ्चनिदाना-
ङ्गेषु—संकीर्ण लक्षणोऽन्तर्भव्यक्त लक्षणे वा व्याधौ रोग-
ज्ञापकत्वेन पठितं षड्विधमप्येतदुपशयाख्यं चिकित्सि-
तमौषधान्नविहाराणामवान्तरविकल्पैर्विभज्यमानं भूयो-
ऽप्यष्टादश प्रकारकं संपद्यते । किञ्चास्याष्टादश प्रकारेष्व-
द्यत्वे प्रचलितानां समेषामपि चिकित्सा विधीनां सिद्धा-
न्तरूपेणावरोधः कर्तुं शक्यत इति तु निर्निवादमुच्यते ।
तथा हिः—योऽयं प्राकृतिक चिकित्सा याः सिद्धान्तः
“विनापि भेषजं व्याधिः पथ्यादेव निवर्तते” इत्याद्यस्ति,
सोऽत्र हेतुव्याधि विपरीतान्नविहाराख्ये भेदे सर्वथान्त-
र्भवति, तथा च—“समः समं शमयति” यद्वाः—“विषस्य
विषमौषधमिति” सिद्धान्तेन व्यवहियमाणं होम्योपैथी
चिकित्सितमत्र विपरीतार्थकारिणि चिकित्साभेदेऽन्त-
र्भवति । एवमेवाधुना सर्वत्र प्रचलितायाः लक्षण प्रत्य-
नीक भूताया एलोपैथी चिकित्सायाः सतिरोधोऽपि
व्याधि विपरीतख्ये चिकित्साभेदे सिद्धान्तता भवत्येव ।

तथा चाह मुनिः—

पारम्पर्यानुबन्धस्तु दुःखानां विनिवर्तते ।
सुखहेतूपचारेण सुखं चापि प्रवर्तते ॥ इत्यादि
भूयश्च सर्वमप्येतच्चिकित्सितं—द्रव्याश्रितं—द्रव्या-
नाश्रितञ्चेति द्विप्रकारकमवलोक्यते । यतो हिः—द्रव्याद्रव्य-
भूतानां सर्वेषामप्याहाराचारदेशकाल लघनादीनां
चिकित्सार्थं मुपयोगस्तां तां युक्तिमर्थञ्च तं तमभि-
समीक्ष्य चरकेऽभिवर्णितोऽस्ति । द्रव्यशब्देनाऽत्र—पाञ्च-
भौतिकानां जंगमोद्भिद् पार्थिवानामशेषाणामपि-
द्रव्याणां चिकित्सायामुपयोगोऽभिनिर्दिष्टो भवति ।
अद्रव्यचिकित्सायान्तूपवासानिलातपदेशकालखण्डजा-
गरण धावन प्लवन संवाहन त्रास क्षोभण हर्षणा-
दीनां भावानामुपयोगस्तत्र तत्र विकारेषु क्रियते ।
एवञ्चात्र कथमेषामुपवासादीनामद्रव्यभूतानां चिकि-
त्सोपयोगित्वमिति तु प्रकरण पर्यालोचनेनैव ज्ञास्यामः ।
यदुक्तं ज्वरचिकित्सितेः—

लङ्घनं स्वेदनं कालोपवाग्वस्तिक्तकोरसः ।
पाचनान्यविपक्वानां दोषाणां तरुणे ज्वरे । इत्यादि
इह तरुणज्वरे पाचनार्थममूर्तावपि लघनकालानुप-
युज्येते । देशस्याप्युपयोगश्चिकित्सायां क्रियते तद्यथाः—
स्वेदेशे निचिताः दोषा अन्यस्मिन् कोपमागताः ।
न तथा बलवन्तः स्युः ॥
इत्यादिना विज्ञायते । देशोऽपि भूमिदेह प्रभेदात्
द्विधाऽस्ति ।

तत्र भूदेशो जाङ्गलानूप साधारण ख्यस्त्रिधा ।
तस्योपयोगित्वमपि तत्र निर्दिश्यते ॥
यथा “भेषजमवचारयन् प्रागेव तावदातुरं परीक्षेत
कस्मिन्नयं देशे जातः, तस्मिंश्च देशे मनुष्याणामिद-
माहारजातमिदं विहारजातमित्यादि” । देहाख्यस्य
देशस्य तु विवेचनं “आतुरस्तु खलु कार्यदेशः” इत्याद्युप-
क्रम्य तस्यायुषः परिज्ञानं हेतोर्बलदोष प्रमाणज्ञान-
हेतोर्वा परीक्षाऽप्यभिहिता । यदुक्तंः—तस्मादातुरं
परीक्षेत प्रकृतितश्च, विकृतितश्च, सारतश्च, संहननतश्च,
प्रमाणतश्च, सात्स्यतश्च, सत्त्वतश्च, आहारशक्तितश्च,
व्यायामशक्तितश्च, वयसश्चेत्यादिः” । कालशब्देनात्र-
क्षणादि संवत्सर रूपस्य नित्यस्य तथाः—रोगाणा-
मामपच्यमानपक्वनव पुण्य तीक्ष्णमृदुत्वाद्यवस्था-
पादकस्यावस्थेः सप्तस्यद्विविधस्यपि कालस्या-

भिधानं क्रियते । ततश्च:—‘नह्यप्राप्तातीतकालमौषधं यौगिकं भवतीति’ वचनानुसारं:—कृत्स्नायामपि चिकित्सा-याममूर्त्तस्यापि शीतोष्णादि व्यक्त लक्षणावस्थस्यास्य कालस्य सर्वत्रोपयोगित्वं चरके संसाध्यते ।

तत्रतत्रावस्थायामवश्य करणीयानाञ्चिकित्सा-विधीनां विषय विभागार्थमपि कालपरिज्ञानं नितरामा-वश्यकमस्त्येव ।

दिङ्मात्रं यथा:—

पूर्वाह्णे वसनं देयं मध्याह्णे तु विरेचनम् ।

मध्याह्णे किञ्चिद्वृत्ते बस्तिदद्यात् विचक्षणः ॥ इति

एवं व्याधिनिर्घातकराणां सर्वेषामपि विधीनां द्रव्यभूतानामद्रव्य भूतानाञ्चापि समासतो निरूपणं विधाय कृत्स्नोऽप्ययंक्रमः सन्तर्पणमपतर्पणञ्चेति क्रमद्वयं नातिवर्तत इति मुनिसंमतं हार्द वाग्भटोऽपि विमृशतीति प्रसङ्गतो विचार्यते ।

यदुक्तं तेन:—

उपक्रमस्य हि द्वित्वाद्द्विवैवोपक्रमोमतः ।

एकः सन्तर्पणस्तत्र द्वितीयश्चापतर्पणः ॥ इति

एवं व्यवस्थिते लघ्वनादि षडुपक्रम भेदानां तथा शोधनशमनाख्य भेदद्वयस्य चाप्यन्तर्भावोऽपतर्पण सन्तर्पणाख्ये प्रकारद्वय एव सर्वथा सञ्जायते । एवञ्चात्र-लघ्वनशोधनञ्चाप्यपतर्पणमेव, तथा-वृंहणं शमनञ्चेति सन्तर्पणं चिकित्सितमेवास्तीति युक्ति व्यपाश्रयाख्यं भेषजं विषय विभागानुसारं द्विप्रकारकं कात्स्न्येन प्रतिपाद्यते । द्विविधमप्येतद् व्याधि हरणे प्रयुक्तं सन्तर्पणापतर्पणरूपं भेषजं युक्तिवशाद्रोगप्रशमनं, रोगा-पुनर्भवकरञ्चेतिद्विधानिर्दिश्यते । यदुक्तं:—

निवृत्तोऽपि पुनर्व्याधिः स्वल्पेनायातिहेतुना ।

देहेमार्गीकृते दोषैः शेषः सूक्ष्म इवानलः ॥ इति

तथा-दोषाः कदाचित् कुप्यन्ति जिताः लङ्घन पाचनैः ।

ये तु संशोधनैः शुद्धाः न तेषां पुनरुद्भवः ॥

इत्यादि

तस्मात् पूर्वमेवालोचयेत्—कस्यौषधस्योपयोगित्वं रोगोऽस्मिन् भविष्यति ? किं सन्तर्पणाख्यस्यापतर्पणा-ख्यस्य वा तथा:—कियत्स्यां मात्रायां, कियति दोषबले, कीदृग्विधमौषधं कया युक्त्या प्रदत्तं रोगापुनर्भवकरं यौगिकञ्चात्र भविष्यतीति ।

यथोच्यते—‘दोषानुरूपो हि भैषज्यवीर्यप्रमाण विकृत व्याधि व्याधित बलापेक्षो भवतीत्यादि’—

यतोहि:—सहसैवाति बलानि संशोधनानां मात्राणिवोपयुक्तान्यल्पबलमातुरं निपातयेयुः ।

संशमनानि तु व्याधि बलादधिकानि तमुपशम-व्याधिं व्याधि दुर्बले देहे व्याधिमन्यं शीघ्रमावह-त्यादि:”

किञ्च—

प्रयोगः शमयेद् व्याधिं योऽन्यमन्यमुदीरयेत् ।

नासौविशुद्धः शुद्धस्तु शमयेद्योन कोपयेत् ॥

तस्मात्:—सर्वथासर्वमालोच्य यथा सम-मर्थवित् । इति

मुनिप्रोक्तदिशा-योग्यमप्यौषधमेवं परीक्षणीयं भवति

यथा:—“इदमेवं रसवीर्य विपाकमेवं गुण-द्रव्यमेवं कर्मेवं प्रभावमस्मिन् देशेजातमस्मिन्नृती-गृहीतमेवं निहितमेवं विहितमेवं निषिद्धमेवमुपसं-मेवं संयुक्तमेवं युक्तमनया मात्रायैवं विधस्य पुरुष-विधेकाले एतावन्तंदोषमपकर्षत्युपशमयति वा । अन्य-वा चैवंविधं भेषजमभूत् तच्चानेनान्येन वा विशेषे-प्रयुक्तमिदमकरोत्” इत्यादि चरक विमान ८ ।

ततश्च सर्वमिदं विचार्य सम्यक् क्रियमाण-चिकित्सायामधिक दोषबलेषु रोगेषु संशोधनार्थ-चार्यमाणं वसनविरेचनादि कर्मभेदात् पञ्चधाप्रवि-पञ्चकर्माख्यमौषधं सर्व शरीरगतानां वैकारिका-दोषाणां निर्हरणायालं भवति । तथाऽन्यदपि-लघ्वन-चनानुपायाभिप्लुतं दोष संशमनाय । अत्रापि-शोध-चिकित्सायाः सर्वातिशायिमहत्वं सर्वत्रदृश्यते, तद-भूतानां पञ्चकर्मणाञ्च ।

अतएव चरके ग्रन्थारम्भ एव-दीर्घजीवितीयेऽध्या-संशोधनक्रममुद्दिश्य मूलिन्यः, कलिन्यश्चौषधयः पञ्च-कर्माङ्ग भूतत्वादेव प्रथमं निर्दिष्टाः । पश्चाच्च पञ्च-साधन भूतानामन्येषामपि द्रव्याणां, तथा:—दोष सं-मनानामपि प्रविभागो यथायथ मनुपदमेवापामार्गं तस्य-लीयादिषु प्रोक्तः । किञ्चहुना-पञ्चकर्म यथा कर्त-तदपि संक्षेपतो निर्दिष्टमस्ति ।

यथा:—तान्युपस्थितदोषाणां स्नेहस्वेदोपपादनैः ।

पञ्चकर्माणि कुर्वीत मात्राकालौ विचारयन्

इत्यादि

इह स्नेह स्वेदोपपादन पूर्वकं पञ्चकर्माणि कुर्वीत इत्युक्तं, तेनात्र स्नेह स्वेद सहितानि सप्तकर्माणि भवन्तीत्यत्र चक्रपाणिराह । वमनादिषु कर्मलक्षणं बह्नि-
तिकर्तव्यता योगिदोषनिर्हरणशक्ति प्रकर्षत्वादुच्यते, नहि स्नेह स्वेदौ दोष बहिर्निस्सरणंकुरुतः, दोष संशमनं तु तौ कुरुतः । तावेव स्नेह स्वेदौ पञ्चकर्माङ्गत्वेन व्याप्रियमाणौ दोषोपस्थानं कुरुतः दोषनिर्हरणन्तु वमनादि पञ्चकर्म संपाद्यमेवास्ति । अनुवासनन्तु यद्यपि वमनादिवन्न बहुदोष निर्हरणकारणं भवति तथापि पुरीषस्य पक्वाशयगत वातस्य च बहिर्निहरिकत्वात् कर्मलक्षणप्राप्तमेव तदस्ति, उत्तरवस्तिस्तु-स्नेह रूपो निरुहः स्नेह वस्तावेवान्तर्भवतीत्यादिः ।

अधुना तु पञ्चकर्माणां दोषसंशोधनरूपो विषय विभागः संक्षेपतो निर्दिश्यते । तत्र सम्यक् प्रयुक्तं वमन-
मामाशयोर्ध्वभागस्थितस्य श्लेष्मणो निर्हरणं विशेषतः करोति, तदनन्तरं किञ्चित् पित्तस्य तदनु सामान्यतो वातस्याप्यावरण भङ्गादल्पंशोधनं विधत्ते । विरेचनं तु सम्यक्प्रयुक्तमामाशयाधोभागस्थितस्य पच्यमाना शयान्तर्गतस्य पित्तस्य विशेषान्निर्हरणं करोति । पश्चाच्चा-
ल्पमात्रायां कफानिलयोः ।

किञ्च-वस्तिरपि निरुहाख्यः पक्वाशयस्थित वातस्य प्राधान्येन शोधनं विधाय पश्चादल्पाल्प मात्रायां पित्त-
कफानामपि किञ्चिच्छोधनं विधत्ते ।

तस्मात्त्रयीष्येतानि-वमन विरेचन वस्त्याख्या-
निकर्माणि त्रयाणामपि कफपित्तवातानां स्थानानुरोधात् प्राधान्येन संशोधनं कुर्वन्ति । इतरेषान्तु सामान्यतः संशोधनमाचरन्तीति सत्यमुच्यते-सर्वाणि संशोधनानि कफस्यौषधं, विशेषाद् वमनं, सर्वाणि शोधनानि पित्तस्यौषधं, विशेषाद् विरेचनं तथा च सर्वाणि संशोधनानि वातस्यौषधं, विशेषाद् वस्तिरिति,

अयम्भावः, दोषाणां परस्परमावरणान्यपि सन्तीति पित्तावृत्ते वाते विरेचनं, पित्तहरमप्यावरणभङ्गाद् वातं विशोधयति, एवमेव कफाद्यावृत्ते प्राणोदानादि संज्ञके वाते वमनं, कफहरमप्यावरणभङ्गात् तत्रस्थं वातं विशोधयति । तथैव-मलाद्यावृत्ते वाते निरुहस्तथा-शुद्धे वाते विशेषतोऽनुवासनमित्येवमुभावप्येतौ वस्ती मलं वातञ्च विशोधयतः ।

एवं दोष संशोधने वमन-विरेचन-वस्ति-अनुवासन-निरुह-पित्त-कफ-वात-शोधन-विशेष-विधानं

सप्येषां कर्मणां वैशिष्ट्यं-सामान्यविशेषाभ्यां प्रतिपादितं भवति । शिरः पूर्वमेव सम्पूर्णं देहस्य शोधनं शोधन-
चिकित्सायाः विषयभूतमस्तीति, शिरः शोधनार्थ-
मूर्ध्वजन्तुगतानां दोषाणां निर्हरणाय शिरोविरेचनं दीयत एव । एवमयं पञ्चानामपिशोधनाङ्गभूतानां कर्मणां विषयविभागोऽत्र दोषानुसारं, स्थानञ्चापि दोषाणां तत्तदभिलक्ष्य प्रतिपादितो भवति ।

रक्तमोक्षणमपि दोषनिर्हरणार्थमेव प्रयुज्यत इति तदपि शोधनाङ्गभूतमेव चिकित्सितमस्तीति तेषु तेषु गम्भीरधात्वादि गत दोषोपजायमान विकारेषु कुष्ठादिषु विशेषेणोपयुज्यते ।

यदुक्तं कुष्ठ चिकित्सितेः--

पक्षात् पक्षाच्छर्दनाभ्युपेयान्
मासान्मासात् संसनञ्चाप्यधस्तात् ।

त्र्यहात् त्र्यहान्तस्ततश्चावपीडान्

मासेष्वसृङ् मोक्षयेत् षट्सु षट्सु ॥ इत्यादि

इहोक्तानां पञ्चकर्माणां प्रयोगस्तु देहसंशुद्धये क्रियते । तत्रापि वस्तिचिकित्सितं सर्वेष्वप्येतेषु कर्मसु प्राशस्त्य-
मभिषहतीति "तस्माच्चिकित्सार्थमिति ब्रुवन्ति सर्वा चिकित्सामपि वस्तिरेके" इति चरक वाक्यं सर्वविदि-
तमुल्लसति । वस्तिशब्देनात्र निरुहोऽनुवासनमुत्तरवस्ति-
श्चेत्येवं त्रयोऽप्यभिधीयन्ते । तत्र निरुह एवास्थापन-
पर्यायः स च दोषदूष्याद्यनुसारेण नाना द्रव्य संयोगात् बहुधा कल्प्यते । तस्यैव केचन भेदाः प्रयोजनमुद्दिश्य-
यथायथं तेषु तेषु विकारेषूपयुज्यन्ते । यथाः—उत्कले-
शनं, शोधनं, शमनं, लेखनं, बृंहणं, बाजीकरणं पिच्छावस्तिर्माधुतैलिकमित्यादयः ।

माधुतैलिकस्य पर्यायाः यापनो, युक्तरथः, दोषहरः, सिद्धवस्तिरिति । एवञ्च-शरीररोहणादोषनिर्हरणादचि-
न्त्य प्रभावतया वास्तिमूहा संभवान्निरुह इति कथ्यते तथा च वयः स्थापनादोषा स्थापनाद्वा-आस्थापनमित्यु-
च्यते । किञ्चानुवसन्नपि न दुष्यति, यद्वा अनुवासन-
(अनुभोजनं) वा दीयते, इत्यनुवासनमित्येषा निरुक्तिः । अनुवासनञ्चेह-यथोक्तौषधसिद्धेन स्नेहेन संपाद्यते । मात्रावस्तिस्तस्य विकल्पः स च हृस्वया स्नेह पान मात्रया दीयते । उत्तरवस्तिरपि स्नेहनार्थमनुवासनवत् स्नेहेन,

(श्री ३६६ पर देखें)



— गणतन्त्र दिवस —

ता० २६-१-६५ को प्रातःकाल कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवनमें नित्य होने वाली प्रार्थनाके पश्चात् भवनके आयुर्वेदीय होस्पिटलके प्रांगणमें संस्थाके कर्मचारी तथा जनताके जनसमूहने मिलकर झण्डा-भिवादन किया और पुष्पवर्षा की तदन्तर जनमनगण इत्यादि राष्ट्रीय गान किया गया। सभीने स्वतंत्रताके संग्राममें आहुत होने वाले गान्धी नेहरु सुभाष आदि स्वर्गीय नेताओंके प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पण की।

—सम्पादक

आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति भारतीय जनताके अनुकूल

जालन्धर सुभाष पार्कमें आयोजित अखिल भारतीय आयुर्वेदिक सम्मेलनमें भाषण करते हुए संसद-सदस्य श्री अनन्त त्रिपाठीने मांग की कि सरकार आयुर्वेदिक चिकित्सापद्धतिको उचित प्रोत्साहन दे।

यह चिकित्साकी एकमात्र राष्ट्रीय पद्धति है। विदेशी दवाइयोंकी तुलनामें आयुर्वेदिक चिकित्सामें काम आने वाली सभी जड़ी बूटियां भारतमें ही प्राप्य है।

श्री त्रिपाठीने आगे कहा कि भारतकी जनसंख्याका ८० प्रतिशत भाग इसी पद्धतिपर ही निर्भर करता है, क्योंकि विशुद्ध भारतीय होनेके साथ-साथ यह सस्ती भी है।

आयुर्वेदिक कालेजोंको भी अन्य मेडिकल कालेजोंके स्तरपर अनुदान एवं सहायता दी जाय। इस मांगपर बल देते हुए उन्होंने भारत सरकारपर आरोप

लगाया कि वह इस चिकित्सापद्धतिकी ओर ध्यान नहीं दे रही।

आयुर्वेदकी उन्नतिके लिए सतत परिश्रमका आग्रह

दिल्ली, मंगलवार निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यालयकी ओरसे आयोजित विचार गोष्ठीमें आज दूसरे दिन कांग्रेस संसदीय दलके सचिव श्री रघुनाथसिंहने मुख्य अतिथि की हैसियतसे भाषणमें कहा कि आयुर्वेदको जहां हम भूलते जा रहे हैं और उसके प्रति उदासीन भी हो रहे हैं, वहां अमरीकामें आयुर्वेदके अध्ययन और अनुसन्धानके लिए नित नयी प्रेरणा और उत्साह बढ़ता जा रहा है।

गोष्ठी आरंभ करते हुए विद्यापीठके सचिव वैद्य सीताराम मिश्रने कहा कि आयुर्वेदकी उन्नतिके लिए सतत परिश्रमकी आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि मालवीयजीके आयुर्वेद चिकित्सा प्रेमसे आयुर्वेद प्रेमियोंको प्रेरणा लेनी चाहिए।

पं० मदनमोहन मालवीय—

राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज, उदयपुर—एक परिचित लेखक—आचार्य कृष्णदत्त शर्मा वैद्य आयुर्वेदाचार्य,

एच. पी. ए. (जामनगर)

यत्रौषधीः समग्रमत राजानः समिताविव।

विप्रः स उच्यते भिषग्वचोहाऽभिवचातनः॥

समिति (राज्य सभा, विधान सभा) में जिस प्रकार राजा (उसके सदस्य) संयुक्त होकर कार्य करते हैं, तद्वत् औषधियां (दोषनाशक उपचार) जिसके समीप अथवा जिसकी बुद्धिमें स्थित होती हैं, ऐसा, राक्षसोंका (रोग बीजोंका-जीवाणुओंका) नाश करने वाला तथा (उनके आश्रयभूत) आम (आम रस तथा उससे संयुक्त दोषों) का शमन करने वाला विप्र वैद्य कहलाता है।

गत ५ दिसम्बर ६४ को पं० मदनमोहन मालवीय राजकीय आयुर्वेदिक कालेज, उदयपुर (राज०) का इक्कीसवां वार्षिकोत्सव तथा राजस्थान आयुर्वेद विभागीय परीक्षा मंडल द्वारा संचालित अन्तर्कालेजीय क्रीड़ा तथा शैक्षणिक प्रतियोगिताएं राजस्थानके मुख्यमंत्री श्री मोहनलाल सुखाड़ियाके प्रधान अतिथिके रूपमें सम्पन्न हुईं। उत्सवकी अध्यक्षता श्री भी. ला

भाई आयुर्वेद मंत्रीने की। प्रारम्भमें इस महाविद्यालयकी स्थापना १ जुलाई ४४ को हिन्दू कुल गौरव महाराणा परिवार ने 'भैत्री कारुण्यमार्तेषु' को मूर्त रूप देते हुए की।

स्वतन्त्रताके बाद भारत सरकार तथा राज्य सरकारोंने भी आयुर्वेदके विकास तथा उन्नतिके लिए ध्यान दिया है। इस आर्थिक युगमें आर्थिक अनुदान अधिक देकर इस चिकित्साको पुनर्जीवित करना चाहिए। आयुर्वेदके स्नातकोंको अधिक सुविधाएं दी जानी चाहिए।

आयुर्वेद विभाग राजस्थान द्वारा भिषग्वर तथा भिषगाचार्य (डिप्लोमा तथा डिग्री) की परीक्षा ली जाती है। इस महाविद्यालयमें भिषगाचार्य डिग्री तकका अध्ययन होता है। अभी कुल ३०० के करीब विद्यार्थी हैं। महाविद्यालयके अन्तर्गत धात्री उपवैद्य ट्रेनिंग सेन्टर भी चलता है। इस महाविद्यालयके विद्यार्थी परीक्षामें उच्चस्थान प्राप्त करते रहे हैं। १९६३-६४ के वर्षमें महाविद्यालयका बजट १,६२३५० रुपयेका रहा इस महाविद्यालयमें २१ अध्यापक हैं।

महाविद्यालयमें निदान चिकित्सा प्रसूति तथा शल्यशालाकयके प्रायोगिक अभ्यासके लिए आयुर्वेदिक चिकित्सालय है, जिसमें ८० रोगी शय्याओंकी व्यवस्था है। शरीर रचना तथा क्रिया, द्रव्य गुण, रस शास्त्रके प्रायोगिककी भी सुन्दर व्यवस्था है। केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान शाला भी कालेजसे सम्बद्ध है। इसमें बालपक्षाघात तथा स्नायुक (नाहरू-वाला) रोगके विषयमें कार्य हो रहा है।

आयुर्वेदिक कॉलेजके वर्तमान भवनमें स्थानाभावका अनुभव किया जा रहा था। यह बहुत ही हर्षका विषय है कि राजस्थान सरकारने आयुर्वेद कॉलेजके नये भवनका नाम हिन्दू विश्वविद्यालय काशीके संस्थापक स्व० पं० मदनमोहनजी मालवीयकी चिरस्मृति तथा आयुर्वेदिक चिकित्साके प्रति विशेष अनुरागके कारण "पं० मदनमोहनमालवीय राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज" रखा है यह भवन पांच लाख रुपयेकी लागतसे बनेगा। निर्माण कार्य चालू है। इस नये भवनका शिलान्यास मुख्यमंत्री श्री सुखाड़ियाने ८-१-६२ को किया। शल्यशालाका प्रारम्भ हुआ है।

प्रयास है।

यह प्रथम अवसर था कि जब क्रीड़ा तथा शैक्षणिक प्रतियोगिताएं आयुर्वेदिक कॉलेजके प्रांगणमें सम्पन्न हुईं। आयुर्वेदिक कॉलेज उदयपुरके प्रयाससे तथा परीक्षा मंडलके तत्वावधानमें प्रारम्भिक प्रयास था। इन प्रतियोगिताओंमें विभागीय परीक्षा मंडलकी ओरसे शैक्षणिक प्रतियोगिताके लिए 'श्री जवाहरलाल नेहरू चल विजयोपहार' दिया गया। यह उपहार आयुर्वेद कॉलेज उदयपुरको ही प्राप्त हुआ। इसके अलावा-स्थानीय प्रयागदास स्थलकी ओरसे-महामंडलेश्वर उपहार, वैद्य श्री भवानीशङ्करकी ओरसे 'सुखाड़िया विजयोपहार', आयुर्वेद सेवाश्रमके उपहार भी दिए गए। श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवनकी ओरसे भी पुरस्कार दिया गया। इन प्रतियोगिताओंमें जयपुर उदयपुर (राजकीय कॉलेज-डिग्रीतक) और सरदार शहर (डिग्रीतक), रतनगढ़, जोधपुर पिलानी तथा सीकर (सहायता मान्यता प्राप्त कॉलेज डिप्लोमा तक) के कॉलेजोंने भाग लिया। बीकानेर कॉलेजने भाग नहीं लिया।

क्रीड़ा तथा शैक्षणिक प्रतियोगिताएं १-१२-६४ से प्रारम्भ हुईं। इसका उद्घाटन इण्डियन-मेडीसिन बोर्ड राजस्थानके मनोनीत अध्यक्ष महन्त श्री मुरलीमनोहरशरणने किया। आपने कहा कि यह संक्रान्तिकाल है, मिलकर कार्य करना चाहिए, तथा आयुर्वेदको युगानुरूप बनाना चाहिए।

५-१२-६४ को सायं ४।। बजे मुख्य अतिथि श्री मोहनलाल सुखाड़ियाका अध्यापकों तथा छात्रोंने हार्दिक स्वागत किया। माल्यप्रदान किया गया। पांडालमें सातसौ दर्शक उपस्थित थे। समारोह मंगलाचरण तथा स्वागत गीतसे प्रारम्भ हुआ। इसके बाद माननीय श्री भीखाभाई ने अपने स्वागत भाषणमें कहा कि, हम मुख्यमंत्री महोदयका हार्दिक स्वागत करते हैं। राजस्थान जो इस एक दशान्दीमें विकास तथा उन्नति कर पाया है, इसका सारा श्रेय मुख्यमंत्रीजीको है। राजस्थानको आयुर्वेदके क्षेत्रमें गुजरातसे पीछे नहीं रहना है। प्रतियोगिताओंके पीछे एक पृष्ठभूमि है आयुर्वेदिक स्टेडिंग बोर्डके प्रस्ताव

महाविद्यालयके प्राचार्य श्री श्यामसुन्दर शर्माने कहा कि गतवर्षोंमें यहाँका परीक्षाफल ६० प्रतिशत रहा है। कुछ प्राध्यापकों तथा लेक्चररोंके स्थानरिक्त हैं, जिन्हें शीघ्र पूरा किया जाना चाहिए। अगले वर्ष नये भवनका उद्घाटन होजायगा तथा कॉलेज वहीं चलेगा। छात्रसंघने भी प्रगति विवरण सुनाया।

आयुर्वेद विभागके संचालक श्रीप्रेमशङ्कर शर्माने अपने भाषणमें कहा कि—राजस्थान विश्वविद्यालयमें आयुर्वेदकी फेकल्टी बन रही है। आगामी परीक्षा फेकल्टी ही लेगी। दस वर्षोंमें जो प्रगति हुई है, उसका श्रेय श्री सुखाडियाजीको है। आयुर्वेदिक औषधालयोंके भवनोंमें 'प्राइमरी हेल्थ सेन्टर' नहीं स्थापित किए जाने चाहिए साथ ही आपने कहा कि सबोर्डिनेट सावस रूल्स बन रहे हैं—शीघ्र ही स्टाफकी पूर्ति कर दी जायगी।

वयोवृद्ध विद्वान् श्री भवानीशंकर वैद्यने कहा कि हिन्दूओंके जिस प्रकार २४ अवतार तथा तीर्थङ्कर हुए हैं, इसी प्रकार आयुर्वेदके भी २४ अवतार हुए हैं। 'रक्त ही जीवन है' की प्राचीनता तथा वैज्ञानिकतापर विचार प्रगट किए। रसायनशाला शब्दपर आपत्ति करते हुए आपने कहा कि—'यज्जराव्याधिविध्वंसि भेषजं तद् रसायनम्' का निर्माण करने वाली ही रसायन शाला हो सकती है, अन्य नहीं।

मुख्यमंत्रीने अपने भाषणमें कहा कि—आयुर्वेदने काफी प्रगति की है। मनुष्यको स्वास्थ्य लाभ हो, यही चिकित्सा उद्देश्य है, चाहे वह आयुर्वेदसे पूरा हो या एलोपैथीसे। प्राचीन शल्यके विषयमें आपने विचार प्रकट किए। विद्वान् उसीको कहते हैं जो दूसरोंसे सीखता है, सिखाता है। विचारोंके संकुचित दायरेसे चलना संकुचित होना है। डाक्टर नहीं मिलनेपर वैद्योंको गांवोंमें भेजा जाता है। आयुर्वेदमें युगानुरूप शोध करके कॉलेजोंको बताना चाहिए। मुख्य आवश्यकता है कि वैज्ञानिक आधारको मानकर ही आयुर्वेदको विकसित करना चाहिए। आयुर्वेदके विद्वान् अखिल भारतीय स्तरपर मिलें तथा विचार करें। देशके विज्ञानका आधुनिक तरीकोंसे विश्लेषण करके बताएँ। आयुर्वेदके प्रति हमारे दिलमें श्रद्धा है अधिक कॉलेज तथा औषधालय खोलनेके पक्षमें नहीं हूँ। वैद्योंकी

उपयोगिता—कार्य कुशलता' देश, समाज तथा परिवारके स्वीकार करनेपर है। अधिक उपयोगी बननेमें है। सम्पन्न कॉलेज होने चाहिए तथा योग्य स्नातक निकलने चाहिए, चाहे संख्यामें कम ही हो। स्टाफको शीघ्र ही पूरा करना चाहिए। फेकल्टी बन जायगी इसी वर्ष। इसप्रकारके विचार प्रगट किए। साथ ही सभीको धन्यवाद भी दिया विजयी कॉलेजोंको पुरस्कार वितरित किये गये तथा राष्ट्रीयगीतके साथ समारोह पूरा हुआ।

अध्यापक व चिकित्सक

राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज उदयपुर (राज०)

(पृष्ठ ३६३ का शेष)

तथा-शोधनार्थ निरुहवच्चचदीयते । सचोत्तरेणमार्गेण दीयते इत्युत्तर वस्तिरिति संज्ञां लभते । उपयोगस्वेवां संशोधनाङ्ग भूतानां त्रिधाविकल्पितानां वस्तीनां यथा यथ सर्वत्रैवकोष्ठशाखा मर्मास्थि सन्ध्यादिगतेष्वपि विकारेषु संशोधनार्थं विधीयते । आवालयवृद्धेषु सर्वेष्वप्यपायरहितं शोधनाङ्गभूतं वस्तिचिकित्सितमस्तीति पञ्चकर्मसु परं प्राधान्यमस्योपदिष्टमस्ति । यथोक्तं वातव्याधि चिकित्सितेः—

स्वेदैर्विष्यन्दिनः श्लेष्मा यदापक्वः शये स्थितः ।

पित्तं वा दर्शयेल्लिङ्गं वस्तिभिस्तौ विनिर्हरेत् ॥

श्लेष्मणानुगतं वातमुष्णैर्गोमूत्रसंयुतैः ।

मधुरौषध सिद्धैश्च तैलेस्तमनुवासयेत् ॥

मूत्रलानि तु मूत्रेण स्वेदाः सोत्तरवस्तयः ।

तथाः—सर्वस्थानावृतेऽप्याशु तत् कार्यं मारुते हितम् ।

यापनाः वस्तयः प्रायो मधुराः सानुवासना ॥ इति

किम्बहुना—शोधनचिकित्साप्रस्तावेः वर्णितानां

मेपां पञ्चकर्मणांमध्ये यस्य कर्मणः दोषस्थानानुरोधेन

समीपदोषहरणरूपं सामर्थ्यं भवेत् तेनैव कर्मणा

तस्य दोषस्य संशोधनमेव विधातव्यमिति त्रिमूर्ति

चिकित्सितेऽपि संशोधनस्य तदङ्गभूतानां पञ्चकर्मणां

महत्त्वं प्रख्यापितं दृश्यते ।

यथाः—वातपित्तकफाः नृणां वस्तिहन्मूर्धसंश्रभः ।

तस्मात् तत्स्थानं सामीप्याद्धर्तव्याः वमनादिभिः

॥ इति

पञ्चविधं हि संशोधनं सर्वत्रैव रोगाणां समूह

छेदकरं भवतीत्यलं विस्तरेण ।

(क्रमशः)

कृष्ण-गोपालकी शीतकालीन सेव्य औषधियां

माजून कुचिला—वातरोग और अग्निमांद्यको दूरकर आंतोंको बल देता है।

खमीरे गाजबां—हृदय और मस्तिष्ककी निर्बलतापर अच्छा लाभ करती है।

रोहितारिष्ट—यकृदप्लीहावृद्धि, उदर, गुल्म अष्टीलाको भी दूर करता है।

शिलाजतु वटी—स्वप्नमेह, मूत्रकृच्छ्र, गुर्देके रोगोंपर हितकारी है।

प्रवाल पञ्चामृत—गुल्म, उदरप्लीहा, श्वास, कास आदिपर और हर तरहकी कमजोरीपर अक्सीर है।

पिप्पल्यासव—दीपन तथा पाचन है। क्षय, कास, गुल्म, उदर रोग, कृशता, ग्रहणी, अंत्रक्षय, पाण्डु एवं अर्शरोग नाशक है।

द्राक्षारिष्ट—दौर्बल्य, श्वास, कास, अरुचि, रक्ताल्पता, मन्दाग्नि, क्षय एवं दौर्बल्यता नष्टकर शरीरको पुष्ट करता है।

ब्राह्मी घृत—शीतल, वातपित्तशामक, ज्ञान (मनो) वह स्रोतोंका शोधक है। स्मरणशक्तिका अध्ययनजन्य मस्तिष्ककी निर्बलता, मिद्रानाश, बुद्धिमांद्य आदिपर यह घृत सर्वश्रेष्ठ सिद्ध हुआ है। इसको बच्चे, बुढ़े, जवान हर मौसममें सेवन कर सकते हैं।

सुवर्णपर्पटी—पित्तप्रकोपज ग्रहणी, संग्रहग्रहणी, पाण्डु, क्षय, अतिसार, पुरानी संग्रहणी, मुंहसे लेकर गुदा तक छाले होजानेसे सफेद दस्त होना, भोजनकी अपेक्षा मल अधिक परिमाणमें निकलना आदि कृच्छ्रसाध्य रोगोंको समूल नष्ट करती है। इसका प्रयोग लम्बे समय तक जब तक स्वस्थ न हो करना चाहिये। सभी भारतवर्ष के वैद्य व श्रेष्ठ बर्गसे इसके गुण छिपे हुए नहीं हैं। यह कमजोरीकी अव्यर्थ औषध है।

सुवर्णवंग—मधुमेह, धातुमेह, बलहानि, दुःस्वप्न फिरंगविष, जीर्ण उष्णवातसे मूत्रमें दाह, सन्धिवात और मन्दाग्निपर लाभ करता है।

श्वामरोगान्तक वटी—नया पुराना श्वास रोग जिससे कफ बहुत गिरता हो श्वासनलिका कफसे पूर्ण रहती हो उसपर लाभ पहुँचाती है।

लघुलाई चूर्ण—ग्राम संग्रहणी, प्रवाहिका, अग्निमांद्य, उदररोग आदिपर हितकर है।

प्रेमी ग्राहकोंको शुभ सम्मति

कृष्ण-गोपालकी रत्न, मुक्ता, स्वर्णप्रधान कुङ्कुम

लाभप्रद औषधियाँ

नवगन्धकल्प — ओजस्तेजोवृद्धिकारक, मधुमेह-नाशक, बल्य, रसायन ।

जवाहरमोहरा (रत्नप्रधान) — हृदयकी घबराहट, हृदयवेगका बढ जाना, हृदय थोड़ा चलनेपर श्वास, विचार तथा स्मरणशक्तिका ह्रास व निर्वलतापर श्रेष्ठ है ।

ब्राह्म रसायन (सुवर्ण) — रक्तचाप (ब्लडप्रेसर) समन्वकारक, उदरशोथ, अग्निप्रदीपक, मस्तिष्क-शान्तिप्रद ।

च्यवनप्राण (स्वर्णादि भस्मयुक्त) — श्वास-कास, तथा दीर्घत्वनाशक, वृद्धिवर्द्धक रसायन ।

सुवर्ण भूपति रस — सर्व प्रकारके सन्निपात, आमवात, वसुधात, कम्प, सूत्र, सग्रहणी, पाण्डु, कुष्ठ, गुल्म, उदादत और विषविकार आदि रोगोंपर श्रेष्ठ ।

चतुर्भुज रस — समस्त वातरोग-नाशक, शोष, मन्दाग्नि-नाशक, पौष्टिक

कामचूड़ामणि रस — जोतल, पौष्टिक, रसरक्त-वर्द्धक, मानसिक निर्वलता, ओजश्रय-नाशक ।

अम्बर-कस्तूरीदि घटी — निर्वलता, पुरुषरोग, दुर्बलता आदिको नष्ट करती है ।

वमन्तकुसुमाकर — पौष्टिक, शुक्रवर्द्धक, सर्व प्रकारके स्त्री-पुरुषरोग नाशक ।

सुवर्णमालिनीवमन्त (बृहत्) — जीर्णज्वर, दिल-दिमागकी कमजोरी व शूल नाशक ।

लक्ष्मीविलास रस (सुवर्ण) — हृद्य, पौष्टिक, मस्तिष्क-बलवर्द्धक, बलवर्द्धक ।

बृहद् ब्राह्मी घटी (सुवर्णयुक्त विशेष) — मस्तिष्क, वातवाहिनियाँ और हृदयको मजबूत बनाती है । मन्थर ज्वर, सन्निपात, हिस्टीरिया और हृदयकी निर्वलतापर श्रेष्ठ ।

लक्ष्मीविलास (नारदीय) — हृदय व मस्तिष्क-बलदायी, श्वास-कास, ऊर्ध्व-ज्वर, रोगोंमें लाभप्रद, शुक्रश्रय व पाण्डुनाशक ।



स्वास्थ्य

अंक ८]

चैत्र कृष्ण ३० विक्रम सं० २०२१

[अप्रेल १

देवताओंसे किया गया आयुर्वेदका सम्मान

शिवो वायुर्वै सवा भाभिरुन्मीलिता दिशः ।

निपेतुः सजलाश्चैव दिव्याः कुसुमवृष्टयः ॥ च० सू० अ० १-३७॥

यह उस समयका जिक्र है जब आयुर्वेद स्वर्गलोकसे भूलोकपर महर्षियों द्वारा लाया जाकर प्रचारित और प्रसारित किया गया था ।

तत्क्षण यह समाचार तीनों लोकोंमें फैल गया और देवताओंने इस परोपकारी कार्यसे प्रसन्न होकर दिव्य पुष्प वृष्टिकी । इन्द्रने वर्षाकर सारे भूमण्डलको आनन्दित किया । पवनदेव प्रसन्न होकर शीतल मन्द सुगन्धित बनकर बहने लगा, दिशाएँ प्रसन्न हो गई, उपद्रव शान्त होकर सर्वत्र खुसीकी लहर दौड़ गई । स्वर्गमें देवताओंने गीत नृत्य दुन्दुभि आदिसे अनुमोदन किया और पृथ्वीपर सारी जनता ने जप शोधपूर्वक मङ्गलाचार किया ।

— परामर्श मण्डल —

वैद्य श्री प्रेमशंकरजी भिषगाचार्य
संचालक आयुर्वेद विभाग राजस्थान ।
वैद्य श्री नित्यानन्दजी आचार्य,
पिलानी ।

वैद्य श्री रमेशचन्द्रजी व्यास
भिषगाचार्य ध० अजमेर ।
वैद्य श्री अम्बालालजी जोशी
साहित्यायुर्वेदरत्न, जोधपुर ।

विषय-सूची *

| क्रमांक | विषय | लेखक | पृष्ठ |
|---------|--|--|-------|
| १. | आत्रेय-वचन | | ४१५ |
| २. | आयुर्वेदके बुगले भक्त | सम्पादकीय | ४१५ |
| ३. | हितकारी मुहावरे | श्री प्रिय जैन | ४१५ |
| ४. | प्राण और शरीर की संगठन सम्बन्धी कुछ बातें | श्री मां-पांडिचैरी | ४२३ |
| ५. | प्रमेह | श्री कृष्णगोपाल गुप्त | ४२८ |
| ६. | नीम | श्रीमती सुमित्रादेवी | ४३५ |
| ७. | योषापस्मार हिस्टीरिया और इसकी चिकित्सा | उपवैद्य श्री हरीशचन्द्र शर्मा | ४३५ |
| ८. | स्तायुरोगपर अनुभूत चिकित्सा | वैद्य श्री सोहनलालजी सहल | ४३७ |
| ९. | कमजोरीका इलाज | श्री सीतारामजी जोशी | ४३९ |
| १०. | स्त्री रोग | श्री रामकन्या देवी श्रोत्रिया भिषगाचार्य | ४४१ |
| ११. | मंहगाई-भोजन और स्वास्थ्य साधन | श्री हरकिशनदासजी श्रीमाली | ४४५ |
| १२. | जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन | श्री सीतारामजी जोशी | ४४७ |
| १३. | बाल मस्तिष्क प्रदाह | श्री जगदम्बाप्रसादजी श्रीवास्तव | ४५५ |
| १४. | सन्धा स्वास्थ्य प्राप्तिका रहस्य | वैद्य श्री मन्मथनलालजी शर्मा कौशिक | ४५५ |
| १५. | तीन तरहके रोगी | श्री सीतारामजी जोशी | ४५५ |
| १६. | आयुर्वेद जगत् | | ४५५ |

रजिस्ट्रेशन ऑफ न्यूज पेपर्स (सेण्ट्रल) रुज्म १९५६ की धारा ८ के अन्तर्गत

स्वास्थ्य मासिक

१-प्रकाशन का स्थान—कालेड़ा-कृष्णगोपाल

२-प्रकाशन की अवधि—मासिक

३-मुद्रक का नाम—नवरत्नमल जोशी

राष्ट्रीयता—भारतीय

पता—पो० कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

४-प्रकाशक का नाम—नवरत्नमल जोशी

राष्ट्रीयता—भारतीय

नवरत्नमल जोशी इसके द्वारा यह घोषित करता है कि ऊपर लिखी बातें मेरी जानकारी

५-सम्पादक नाम—वैद्य सीताराम शर्मा

पता—पो० कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

राष्ट्रीयता—भारतीय

पता—कालेड़ा-कृष्णगोपाल, अजमेर (राजस्थान)

६-संचालक रजिस्टर्ड धार्मिक संस्था—

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय ट्रस्ट मण्डल

पो० कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

७-प्रकाशक के अनुसार यथावत है ।



(स्वास्थ्य, सुमति और हृष्य भावति का मार्ग दर्शक ग्रन्थ)

वैद्य बद्रीनारायण शर्मा

वर्ष १२. अङ्क ८] कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर) [अप्रैल १९६५]

आत्रेय-वचन

अर्थात् शुद्ध कर्म, तपः, दान, पुण्य, इत्यादि स्वर्गप्राप्तिके लक्ष्ये मिले, सा पीछे मिले (स्वर्गादि) ऐसे क

तो मनुष्यको करने ही चाहिये । परन्तु जिसमें अनिक भी सुख नहीं ऐसे अशुभ फल देने वाले न यहाँ सुख, न मरनेके बाद सद्गति, ऐसे कर्मोंको तो बुद्धिमानको चाहिये कि वह कभी भी न करे ।

पञ्चकर्म चिकित्सासे रोगी और वैद्यको थोड़ा छूट होता है । परन्तु सम्यग् योगसे अन्तमें अपूर्व सुख मिलता है । चरक कहते हैं जिस चिकित्सासे आगे या पीछे कभी भी लाभ नहीं, ऐसी चिकित्सा कभी भी न करनी चाहिये न करानी चाहिये ।

यह सिद्धान्त सूत्र है—कई प्रसंगोंपर इसकी संगति बैठाई जा सकती है ।

चिकित्सा विषयमें, व्यापारमें, योग, यज्ञ, दान, तप, भी कर्तव्य कर्म आगे पीछे सोचकर करने चाहिये, मादसे किये हुए कर्म सदा दुःखायी होते हैं ।

इसी आशयको लेकर-लिखा है—

प्रयोगः शमयेद् व्याधिं योऽन्यमन्यमुदीरयेत् ।

नासौ विशुद्धः शुद्धस्तु शमयेद् यो न कोपयेत् ॥

भाव यह है कि लाभके बदले हानि हो जावे ऐसे कर्म न करे । प्रसंगोपात्त एक उदाहरण मनोरंजक है—बादशाहने-वीरबलसे पूछा, वीरबल ? ऐसे चार व्यक्ति आओ जिसमें से ? एक ऐसा हो-यहाँ ही सुखी हो आगे नहीं । एक ऐसा हो, जो यहाँ सुखी नहीं व आगे मरनेके बाद सुखी हो, और एक ऐसा जो यहाँ भी सुखी है, और आगे भी सुखी होगा, और एक ऐसा जो यहाँ भी दुखी है आगे भी दुखी ही रहेगा ।

इसके उत्तरमें वीरबलने वैश्या, साधु, सेठ और मखारी ये चार व्यक्ति बादशाहके सामने उपस्थित किये ।

और अर्ज करने लगा, देखिए हुजूर ! एक तो वैश्या । यह यहाँ तो खूब अच्छे कपड़े पहनती है अच्छा खाना और ऐश आराम भोगती है, पर यह ऐसे काम करती है कि मरनेके बाद नीचे ही नीचे नरकमें जावेगी वह यहाँ हैं वहाँ नहीं ।

दूसरा व्यक्ति उपस्थित किया एक साधु जो यहाँ अग्नि तपता है संयम पालता है, अच्छा साधु है । वह यहाँ तो सुखी नहीं, पर ऐसे कर्म करता है जिससे आगे सुख पहुँचेगा, यदि उंचे स्वर्गमें जावेगा, यदि

पहले दूसरे स्वर्गमें ही जावेगा, क्योंकि संयमी साधु प्रथम तो मोक्ष ही पाते हैं, यदि कर्म क्षय पूरे न हुए तो उच्च स्वर्गमें, उसमें भी संयममें या योगमें अग्र हो गया तो स्वर्ग तो अवश्य है, और दुर्गतिसे तो बच ही जावेगा ।

तीसरा व्यक्ति—

यहाँ भी सुखी और आगे मरनेके बाद भी सुखी होगा जैसे एक सदाचारी दानी सेठ । वह यहाँ भी अनासक्ति पूर्वक सब कुछ भगवानकी सम्पत्ति समझकर उनके दिये प्रसादको ग्रहण करता है । दूरीकी तरह अपनेको जानकर भोगता है और दान परोपकार आदिमें सदैव्य करता है ।

हुजूर ? यह यहाँ भी सुखी है, और आगे भी इसको सुख मिलेगा अच्छी गति होगी ।

चौथा एक दरिद्री भिखारंगेको लाकर खड़ा कर दिया कि —

बादशाह मलान्त । यह चौथा व्यक्ति ऐसा है । जो यहाँ भी सुखी नहीं । दिन भर अपमान सहते सहते भी पेट नहीं भरता, और आगे भी इसके भाव शुद्ध न होनेसे विषयोंमें विराग न होनेसे तृष्णाग्नि प्रबल रहने से सद्गतिमें नहीं जावेगा । इसे चोरी कर लूँ, छीन लूँ भोगूँ यह इच्छा बनी रहती है ।

इस बेचारे गरीबके कैपे आचरण हैं । जो यहाँ भी पाप पल्ले बांध रहा है, और पहलेके तो खोटे कर्म हैं ही, कि जिससे यह दरिद्री हुआ ।

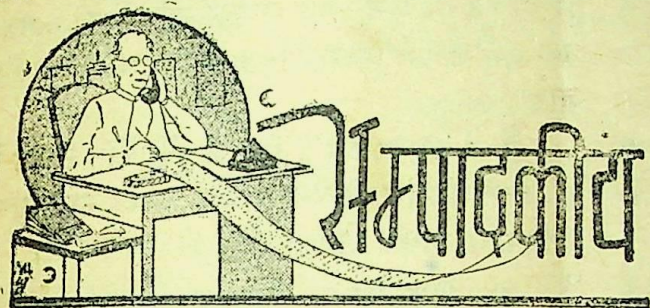
इसलिये ऐसे काम तो किसी को भी नहीं करने चाहिये जिससे यह जिन्दगी भी बिगड़े और आगे भी यातनाएँ भोगनी पड़े ।

बादशाहने भी समर्थन किया कि खुदा इसे अकल दें जिससे यह यहाँ वहाँ दोनों जगह परेशान न हो ।

ऐसा कह, वीरबलसे बादशाहने कहा, इन चारोंको कर्म अच्छा करनेकी शिफारिश कर इनाम दे, विदा कर दो ।

ये चारों ही वीरबलने बादशाहकी आज्ञासे आमंत्रित किये थे इसलिए यथायोग्य सत्कार कर विदा किया ।

और चारोंने ही एक दूसरेके वृत्तान्त सुनकर



आयुर्वेदके बगुलेभक्त

मुझे वैद्य शिवशर्मा जी बम्बईकी यह बात बहुत अच्छी लगी कि केन्द्रीय शासन सत्ताके आधीन जो आयुर्वेद्वार समिति बनाई है वह बहुत ही बुद्धिमत्ता पूर्ण है।

कहीं भी ऐसा नियम नहीं कि गणितका जानने वाला साइन्सका हेड बना दिया जावे और साइन्सके उच्च विद्वान्को इतिहासका प्रोफेसर बना दिया जावे।

जाने नहीं कक्का, नाम रख दें विद्यावाचस्पति। पास नहीं फूटी कोडी, और नाम रखे कुवेरजी। जिसने कभी दाल रोटी भी हाथसे नहीं पकाई, उसको कहें पाक शास्त्री। यह कैसी उल्टी रीति है।

परन्तु यहाँ तो यह बगुले भक्तोंकी समिति है। जो ध्यान लगाये बैठे हैं कि कब मछली आवे और कब गडप करूँ।

ये लोग यही सोचते रहते हैं कि किस तरह आयुर्वेदका विनाश हो। ऐसे मनुष्योंके हाथोंमें आयुर्वेदका वज्र देना जिनको आयुर्वेदका ज्ञान नहीं, कभी पुस्तक उठाकर निरखी नहीं, कभी कुछ हृदयपर हाथ रखकर सोचा नहीं कि आखिर जिससे (आयुर्वेदमें) हमारे दादा पड़दादा उपकृत होते आये हैं। और सारा संसार गला फाड़ फाड़कर पुकारता है कि आयुर्वेद चिकित्सा लाभप्रद है। इनकी सुनें तो सहीं।

पर जब अज्ञानान्धकार छाजाता है तब इन बेचारों की तो क्या चलाई, बड़े बड़ोंके भाव मलिन होजाते हैं।

हृदय तो गवाही नहीं देता कि आयुर्वेद अवैज्ञानिक है। पर अज्ञान मदिरासे मत्तहाकर अहमदका मद

चढ़नेसे तो वे आयुर्वेदका अनिष्ट करनेमें, वज्र क करनेमें, विरोध करनेमें तनिक भी नहीं सकुचाते। समिति तो आयुर्वेदके नामकी और व्यवस्थापक दूसरे यह कैसा विवेक है।

आयुर्वेदका प्रबन्ध, आयुर्वेदका पाठ्यक्रम, आयुर्वेदके द्रव्य गुण, चिकित्सा-निदान, जनस्वास्थ्यपर विचार निर्णय और जनताको लाभ कैसे हो; यह सब वैद्योंके हाथमें होना चाहिये। समितिमें वैद्य होने चाहिये।

पर कुछ तो मनोनीत स्वार्थी समितिमें घुसजाते हैं। कुछ भाई भतीजाबादसे घुसेड़ दिये जाते हैं।

आज मुझे कोई पूछ बैठे कि रेल्वेकी मशीनर कैसी होनी चाहिये, इन्जन कैसे लोहेके अच्छे बनाए जायें। कहाँ कैसा पुर्जा, कहाँ किस जंगहसे मंगाकर ठीक बैठाया जावे तो कुछ नहीं।

शून्य ही उत्तर होगा। बलिक मैं तो मूर्ख बना हूँ मुझे अधिकार देनेवाला भी तो बुद्धिमान् न कहलाएगा।

इसलिए जो आयुर्वेद हितकारिणी समिति केन्द्र में है वे रक्षक हैं या भक्षक? यह तो विरले ही जानें होंगे परन्तु दिखावटी तो इनकी समिति रक्षाके रूप में ही निर्माण की गई है। आखिर इनकी बगुला भक्ति कहाँ तक छिपी रह सकती है?

जब मनुष्यको (कर्तव्य) सेवाके लिए बनाया तो भले लोगोंसे पुण्य उपार्जन न हो तो दूसरों से सुंदर तो पट्टी मत बाँचो। नरकमें यातना भोगना पड़ेगी।

जो निरर्थक दूसरोंकी उन्नतिमें अन्तराय डालते हैं। उनको अनेक जन्मोंतक अन्न वस्त्रके भी लाले पड़ जाते हैं। यदि मनुष्य योनि मिल भी जाय तो अन्यथा तो उनको ज्ञानावर्णा कर्मसे पशु कूकर योनि मिलती है।

यह कोई व्यक्तिगत आक्षेप नहीं। कर्मका स्पष्ट फल वर्णन है। कोई भी हो, चाहे राजा, चाहे देव-दानव। सबको कियेका फल भोगना पड़ता है।

कभी वैद्योंने भी यदि ऐसा किया है या करते हैं तो उनके लिए भी यही भगवतका शासन लागू हो सकता है।

बनारसमें आयुर्वेदकी महत्तापर बल देकर हमारे प्रधान मंत्रीने अनुदानकी घोषणा की है यह प्रसंशनीय है। गुजरातमें मोहनलालजी व्यासने वेतन स्तर वैद्योंका बढ़ाया है यह उनका प्रयास स्तुत्य है।

वे क्या गांठसे अपने पाससे दे जावेंगे, और अनिष्ट बाहने वाले क्या बिगाड़कर सकेंगे, होना है सो तो होकर ही रहेगा अर्थात् आयुर्वेद रूपी सूर्य कभी छिप ही नहीं सकता। पर यश-अपयशकी गठरिया शिरपर धान्धते हैं हमें तो उन दयाके पात्रोंकी तरफ दया आती है। वे ऐसा क्यों करते हैं।

सम्पादकीय लेख जब लिखने बैठता हूँ तो जी यही चाहता है कि कोई अध्यात्म विषयपर ही लिखा जाय तो भाव सम रहे।

पर इस लेखका तो विषय ही यह है कि इसमें तो वर्तमान परिस्थितिका दिग् दर्शन कराया जावे।

आजकल गुजरातमें काफ़ी जाग्रति हुई है। पूर्वसे पश्चिम तक सभी प्रान्त यह मानने लगे हैं कि हमारा हित आयुर्वेदीय ज्ञानसे ही है। यही अनादि नित्य ऐश्वरीय ज्ञान है मातापितृ वत् हितैषी, परिणाम सुखा वह ज्ञान आयुर्वेदीय ज्ञान ही हो सकता है।

तब सरकारके मुँह लगे लोगोंको भी विवश होकर मुकना पड़ रहा है और वे भी कुछ ऊपरी स्वीकृति देकर वाचिक रूपसे सहानुभूति दिखलाकर भक्ति दिखलाने लगे हैं।

पर उनके मनमें है यही मनस्थान्यत् वचस्थान्यत्, चाली कामना।

इसीलिए जानने वाले ही इनको समझ ही जानते

हैं हंस कहकर पुकारते हैं। वास्तवमें स्थिति क्या है सो स्पष्ट हो जावेगी, बारम्बार विचारनेसे यही प्रतीति हो रहा है कि अब पोल ज्यादा नहीं टिकेगी, क्योंकि शिवशर्माजीकी निःस्वार्थ सेवा प्रबल उद्योग अब सफल होकर रहेगा।

मैं तो यह मानता हूँ कि आयुर्वेदकी सेवामें ऐसे ही सेवक लिए जाने चाहिये और उनका मान सम्मान अधिक से अधिक होना चाहिये।

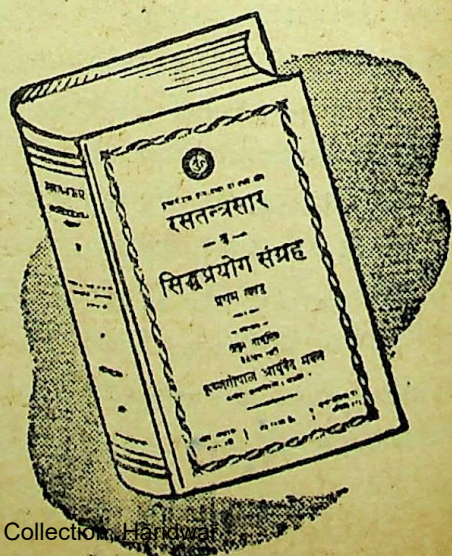
आज विदेशोंमें भी आयुर्वेदकी लगन जाग उठी है। राष्ट्रपतिजीने भी कानपुर वैद्य सम्मेलनके प्रोत्साहनमें सक्रिय भाग लेनेकी अनुमति दे दी है। अतः यह निःसन्देह माना जा सकता है कि कुमति वाले भी सुमति बन जावेंगे और भगवान आयुर्वेदका आशीर्वाद उनको भी प्राप्त हो जावेगा।

भले ही शत्रुके अधिकारी अपनेको आयुर्वेदकी आत्मासे अपने आपको भिन्न मानें, परन्तु आयुर्वेद तो सर्व विश्वका पिता है।

सभी आयु सम्बन्धि ज्ञान उसीके अंश है।

डाक्टर यदि अपनेको विजातीय समझें और विरोध करें यह उनकी भूल है बाल बुद्धि है परन्तु आयुर्वेद तो "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग् भवेत्" यह भाव रखता है।

भगवान् सबको विरोधियोंको भी सुमति दे इस कामनाके साथ विराम। जय आयुर्वेद।



हितकारी-मुहावरे

(रचियता—'श्री प्रिय' जैन)

- (१) 'खाना' मक्क-फरेवसे-घोशकर' से खाव ।
 'वेफिकरे' घूमोफिरो, सबको 'धता' बताव ॥
 सबको धता बताव, यही 'नेता' फरमाते ।
 घुसिकें पोल 'किलोल' करें नहिं, सो पछिताते ।
 वरनें 'प्रिय' कविराय, आगया यही जमाना ।
 'करते आवे चोट—खाव तिकड़मसे खाना ॥
- (२) 'कम खानेका' डारियै, जीवनमें अभ्यास ।
 रहै 'निरोगी' काय नित, रोग न फटकै पास ॥
 रोग न फटकै पास, बढ़े 'दृढ़ता-धीरजता' ।
 संकट आए समय, न व्यापै मन 'आकुलता' ॥
 वरनें 'प्रिय' कविराय 'सफलता' के पानेका ।
 है उपाय 'अभ्यास' डारिये-कम खानेका ॥
- (३) खा करके सबसे प्रथम, करि लीजे 'पेशाब' ।
 'बाएँ करवट' फिर परी, थोरी देर जनाब ॥
 थोरी देर जनाब, सुलभ है नुसखा प्यारा ।
 'गुरदोंको बल मिलै-होय नहिं मूत्र विकारा ॥
 वरनें 'प्रिय' कविराय-देखि लीजे अजमाकर ।
 क्या लागे है मोल ? 'मूत्रिके सोचो खाकर ॥
- (४) खटियासे तत्काल उठि, होते प्रातःकाल ।
 'ताजा पानी पीजिये'—सुमिरी दीनदयाल ॥
 सुमिरी दीन दयाल, व्याधि जंजाल भिटावै ।
 खुलिके होवै 'शौच'—चित्त अनुमोद बढ़ावै ॥
 वरनें 'प्रिय' कविराय, खाइये बाँझ्या-चटिया ।
 सबै 'हजम' होजाय—'न गोडै कबहुँ खटिया' ॥
- (५) 'रूखी रोटी' जोमिलै, रहि करिके 'आजाद' ।
 'हलुवा-पूरी' से भली, सदा राखियै याद ॥
 सदा राखियै याद, 'मोल खतरा नहिं लीजै' ।
 भलै, मिलै एकबार, खाव सन्तोषहि कीजै ॥
 वरनें 'प्रिय' कविराय 'र्यागिये संगति खोटी' ।
 बड़ी निर्यासत चीज, 'मिलै आजादी सोचै' ॥

- (६) तनकी 'एक निरोगता' न्यामत लाख हजार ।
 रखियै, याको ध्यान नित, सब प्रकारसे यार ॥
 सब प्रकारसे यार, सन्त जन सच फरमाया ।
 'काया आगे सभी हेय है, जगकी माया ॥
 वरनें 'प्रिय' कविराय 'रोकियै लगाम मनकी' ।
 त्यागो 'भोग विलास' होय जस मुक्ती तनकी ॥
- (७) 'चना-चवेना' खायके, ठण्डा पानी पीव ।
 'सन्तोषी सुखिया सदा' रखियै याद सदीव ॥
 रखियै याद सदीव, 'समैको वृथा न खोवो' ।
 सुखसे पाँय पसारि, रातिमें निधड़क सोवो ॥
 वरनें 'प्रिय' कविराय, 'बोलिये म. ठे वेना' ।
 लीजै 'हरिका नाम' खायके चना चवेना ॥
- (८) 'चना-चवेना' खाय जो, बना रहैगा 'चङ्ग' ।
 'फना' न जल्दी होयगा, मारै मत्त मतङ्ग ॥
 मारै मत्तमतंग, सकल नाजोंमें राजा ।
 क्या फकीर क्या अमीर सभीका प्यारा खाजा ॥
 वरनें 'प्रिय' कविराय, कहें सब आलाअदना ।
 'सेवन करिये चना'—रोगसे चाहो बचना ॥
- (९) 'राम रटे संकट कटे' कहि गए सन्त सुजान ।
 'लागै दाम छदाम नहिं' सहज होय कल्याण ॥
 सहज होय कल्याण, मिटै भव भवके फेरे ।
 लगै न छिनकी देर, काज सरिहैं सब तेरे ॥
 वरनें 'प्रिय' कविराय, नित्तकी बुरी छटपटै ।
 'बनिये शान्ति सुभाव' कटे सब विघन संकटै ॥
- (१०) मती बुढ़ावो देहको, करि करि 'आरत' ध्याना ।
 'रूखी सूखी' खायके, करी सदा गुजरान ॥
 करी सदा गुजरान, त्यागपन काम न आवै ।
 'जैसा लिखा लिलार' सुख दुःख आवै जावै ॥
 वरनें 'प्रिय' कविराय, 'मस्त है पीवो-खावो' ।
 साहि करी भगवान । बुधा मति देह बुढ़ावो ॥

(११) वाको 'दुःखी' न जानियै, जो नर धनहि विहीन ।
'दुखिया तन अतिको दुखी' छिन छिन होय मलीन ।
छिन छिन होय मलीन, सदा पीड़ै बीमारी ।
क्या सुख जगमें वाहि, करौ टुक सोचि विचारी ॥
वरने 'प्रिय' कविराय, कौन दुःख देहै काको ?
किए कर्म अनुसार मिलें फल, जाको वाको ॥

(१२) 'खाना खाके परि रहो' करौ तनक विश्राम ।
'मारि मूरि टरि जाइयै' यहै सयानों काम ॥
यहै सयानों काम, कहे सबही सुज्ञानी ।
गुरू कीजियै जानि छानिके पीवो पानी ॥
वरने 'प्रिय' कविराय, 'अपचमें करिये फाके ।
हांडी लीजै मोल ठोंकि के खूब वजाके ॥

(१३) 'गमखानेका' हो गया, जो अभ्यासी इनसान ।
क्या गम ? आएँ जाँएँ फिरि, गमके लाख तूफान ॥
गमके लाख तूफान, करै गम किसका किसका ।
वह जाने गम कहा ? गमजदा दिल है जिसका ॥
वरने 'प्रिय' कविराय, न गम है, गम आनेका ।
गम वालोंको फक्त, 'काम है गम खानेका ॥

(१४) 'खान पानमें बातमें' बुधजन कहत पुकार ।
जाके वश नहि 'जीभ' है, दुःखी रहे संसार ॥
दुखी रहे संसार, 'मान' कहूँ ठौर न पावे ।
जाय जहाँ ही नहाँ, वहाँ ही खूब थुकावे ॥
वरने 'प्रिय' कविराय, सदा यह रहै ध्यानमें ।
'जीभहि देहु लगाय बातमें, खान, पानमें ॥

(१५) 'गोको मती न वेग' को, मानि नसीहत नेक ।
'लापरवाही' नेकसे, उपजै व्याधि अनेक ॥
उपजै व्याधि अनेक, फिरि फिरि खान दवाई ।
खतरेमें मति जान, जानिकें डारों भाई ॥
वरने 'प्रिय' कविराय, बड़ोंकी बातें धोको ।
रोक सको तो सदा, 'चपल-चञ्चल मन रोको ॥

(१६) 'नशा-नशीली' वस्तुओं, भजियै कोसोंदूर ।
इनके सेवनसे परै, सद्चरित्र पै धूर ॥
सद्चरित्र पै धूर, कलेजा जारि पजोरे ।
मुखसे 'बदबू' उड़ै पास कोई न बिठारे ॥
वरने 'प्रिय' कविराय, उड़ें चहुँ ओरे खीली ।
'हरै देहकी कान्ति' रगगियै वस्तु नशीली ॥

(१७) 'बीड़ी' ऐसी उरबली, बड़ी सभ्य सतकार ।

'चाय चाय' के सबजने करते यासों प्यार ॥
करते यासों प्यार, मह नर-नारी आदी ।
भूले अदब लिहाज, सिरै बेशरमी लादी ॥
वरने 'प्रिय' कविराय, स्वर्गकी समझें सीड़ी ।
नहीं 'स्वास्थ्य' का ख्याल, मूढ़जन पीते बीड़ी ॥

(१८) विजिया में अलमस्त है, मस्तीमें मखमूर ।
सुस्तीसे कुशती लरें, करें सुपस्ती दूर ॥
करें सुपस्ती दूर, टपकती मुख नूतनी ।
हस्ती सकल मिटाय 'ब्रह्ममय' अए सुज्ञानी ॥
वरने 'प्रिय' कविराय, त्यागि सब जगसे कजिया
'लोट पोट' हो रहें, छानिकें विजयी-विजिया ॥

(१९) 'चाटें' चाटहि चटपटी, पहिनें जूता पाँय ।
ठाड़े ठाड़े हाट में, खाते नाहि अघाँय ॥
खाते नाँय अघाँय, पुराने घुने मसाले ।
'सपरेटा' में सने, खाँय दुख सहे निराले ॥
वरने 'प्रिय' कविराय, लगाएँ मुख नहिं ढाटें ।
कुलकी लाज लजाय, चटपटी चाटें-चाटें ॥

(२०) होटलमें सबसंग में, नीच ऊँच तजि भेद ।
'खाँय खिलायें' लाज तजि, नैंक न माने खेद ॥
नैंक न मानें खेद, न 'भक्षाभक्ष' विचारें ।
लेहि बीमारी मोल, मान मरिजाद बिसारें ॥
वरने 'प्रिय' कविराय खर्च आमद टोटलमें ।
'लेख भूलिन लखा'—कबहुं भूले होटलमें ॥

(२१) पीजें खाएँ 'आम' पै, खूब दूध दिलवोर ।
और, पियौ 'खरबूज' पै, शरबत चीनी घोर ॥
शरबत चीनी घोर, वैद्यजन सही बतावे ।
बढ़ै खून, बलवीर्य-देहको स्वस्थ बनाने ॥
वरने 'प्रिय' कविराय बाँधि यहि गांठहि लीजै ।
'दुखदायक' अतिजाति' न इन पै पानी पीजै ॥

(२२) 'मट्ठा' में गुण बहुत है, सदा कीजियै पान ।
दीन गरीबोंके लिए, है 'पीयूष' समान ॥
है पीयूष समान, मिलाए नमक और जीरा ।
करें 'अजीरण' दूरि, हरै सब व्याधि शरीरा ॥
वरने 'प्रिय' कविराय, रहै नित हट्टा-कट्टा ।
'बट्टा जैसा लगै' पिए जो ताजा मट्ठा ॥

(२३) खावै 'नींबू' नोन सँग, काली मिरच मिलीय ।
'बैद्य-सारा' आपने, पढ़े करमनुं रोय ॥

यार ॥ दीटें 'करमनुं' रोग, काल ततकालहि हारो ।
आदी ॥ रोग न फटकै एक, दूर करि जाय किनारो ॥
आदी ॥ वरनैं 'प्रिय' कविराय, 'बखुची' अन्न पचावै ।
सीड़ी ॥ डारि 'अचार' संहारि-पुगानों नीबू खावै ॥
बीड़ी ॥ (१४) जे चरते हैं 'वास' तृण'-तिन्हें सतावै काम ।
बमूर ॥ 'घटरस' भोजन' जे करै, उनकी जानैं राम ॥
दूर ॥ उनकी जानैं राम, 'भोग' भव रोग' बढ़ावैं ।
रानी ॥ ऐसे डूबे जहाँ थाह, फिरि कहूँ न पावैं ॥
गानी ॥ वरनैं 'प्रिय' कविराय, अन्त 'वेमोतहि' भरते ।
कजिया ॥ 'खाद्य-अखाद्य' न लखें विचरते, खाते चरते ॥

(आठोंबुरी)

पाँय ॥ (२५) घरकी खुनस महाबुरी, है है घर बरबाद ।
पाँय ॥ वर उतरे भूखहि बुरी, छोटी बुरी दमाद ॥
माले ॥ छोटी बुरी दमाद, बुरी सूखै जब खेती ।
माले ॥ भाई बीरो बुरी, बुरी सब भाँति अनेनी ॥
हिं डोटें ॥ वरनैं 'प्रिय' कविराय, बुरी है अतिकी गरकी ।
टें-चाटें ॥ अपकीरति जग बुरी-फूट ले बैठे घरकी ॥

पांचों बुरी ॥

जि भेद ॥ (२६) 'आलाघर' अतिका बुरा, जहाँ न उजाला जाय ।
ने खेद ॥ घर घुसिया साला बुरा, तन पाला दुखदाय ॥
विचारें ॥ तन पाला दुखदाय, परै इनसे नहीं पाला ।
बिसारें ॥ कंगाली में बुरे-लगै अति लाली लाला ॥
टोटलमें ॥ वरनैं 'प्रिय' कविराय, गाँव बिच बहता नाला ।
होटलमें ॥ ये पाँचों ही बुरे-कहें सब अदना-आला ॥

बोर ॥ (२७) उपजे जो कहूँ खेतमें, हरखि सबै घर खाय ।
घोरी ॥ पै, उपजी घरकी बुरी, पलमें घर नसिजाय ॥
पताते ॥ पलमें घर नसिजाय, यही यदि तनमें व्यापै ।
नाते ॥ करै 'कुपित' त्रैदोष'-मृत्युका मारग नापै ॥
लीजै ॥ वरनैं 'प्रिय' कविराय, फँसा फिरि वेग न सुरजै ॥
पंजै ॥ 'फूट न छोड़ै' काहु' जहाँ कहूँ फूटै उपजै ॥

पान ॥ (२८) पूत नियारो होयके, जाय बसै सुसरारि ।
मान ॥ पति के घर होते भए, 'आँगन' सोवै नारि ॥
जीरा ॥ आँगन सोवै नारि, 'रातिमें' सतवा खावै ।
जीरा ॥ इन तीनों की मात, कहौ कैसे सुख पावै ॥
कट्टा ॥ वरनैं 'प्रिय' कविराय, कहा दुख यातें भारों ।
हटा ॥ पूत सयानों रहें सासरे, हैकें न्यारो ॥

लोय ॥ (२९) दीनी 'रामसुनाम' की, गुरुवर 'जरी' महान ।
रोग ॥ मिटै जासुसों 'अमजुरी' होय सकल कल्याण ॥

होय सकल कल्याण, छिनैं एक पल न विसारों ।
'राखौ' हिये संहारि'-होय जासों निसतारों ॥
वरनैं 'प्रिय' कविराय, सरस ऐसी गुन भीनी ।
करै दूर 'त्रैताप'-जरी ऐसी गुरु दीनी ॥
(३०) 'थूको' कबहुँ न भूलिके, 'सागरसरिता' भ्रात ।
'करौ' न बासर नारिसंग-रति हरकतिकी बात ॥
रति हरकतिकी बात, न ठाढ़े पीवौ नीरा ।
सबसे पहिले हाथ, न डारों पातरि, बीरा ॥
वरनैं 'प्रिय' कविराय, 'मती' ओसर पै चूको ।
'नीचे' सविके 'चलो'-मती ऊपरको थूको ॥
(३१) सेवन कीजै 'वायु' का-होते प्रातः काल ।
'टहलो' दो-एक मीललों, मन्दमन्द चलि चाल ॥
मन्द-मन्द चलि चाल, ध्यानबस रखियै इतना ।
'श्वास' नाकसे लेहु'-बन्द करिके मुख अपना ॥
वरनैं 'प्रिय' कविराय, नाम प्रभुवरका लीजै ।
'स्वस्थ-स्वास्थ्य' के हेतु-वायु नित सेवन कीजै ॥
(३२) डाली नीम-बबूल की, या पीलुही मूल ।
दाँतुन करि दृढ़ दाँत हों, मिटैसु जड़ सौं शूल ॥
मिटैसु जड़ सौं शूल, प्रकृति अनुकूल दवाई ।
नित उठिभोरे करो, सभी ऋतुमें सुखदाई ॥
वरनैं 'प्रिय' कविराय, खुदाकी शान निराली ।
'गुणकारी' गुणखानि-जानिये आली-डाली ॥
(३३) गुणकारी अति 'नीम' है, कहते वैद्य-हकीम ।
नित उठि दाँतुन कीजियै, हो है लाभ असीम ॥
हो है लाभ असीम, दन्त सब रोग मिटावै ।
करै 'खूनको' साफ'-पत्तियाँ चारि चबावै ॥
वरनैं 'प्रिय' कविराय, प्रकृतिकी दैन अपारी ।
दमड़ी खरच न होय, सुलभ अति ही गुणकारी ॥
(३४) ये तीनों नहिं पाइयै, खरचे लाख करोर ।
'शान्ति, सुख नीरोगता'—सबका यहै निचोर ॥
सबका यहै निचोर, कहें सतगुरु समझाई ।
धर्म करौ मन लाय, धर्म ही सदा सहाई ॥
वरनैं 'प्रिय' कविराय, सरस यदि चाहो जीनों ।
'साधि-साधि' पग धरो-जासु सुधरे ये तीनों ॥
(३५) जल्दी उठियै-सोइयै—करि लीजै यह नैम ।
'बुद्धि' बढ़ै, और धन बढ़ै, बढ़ैसु प्रभुसों प्रेम ॥
बढ़ैसु प्रभुसों प्रेम, रोग व्यापै नहिं तनमें ।
नित नित शुद्ध विचार, नएनए उठैसु मनमें ॥

- वरनें 'प्रिय' कविराय, पढ़ै गरमी या सरदी ।
है 'सुखमय यह नैम'—सोइयै-उठिये जलदी ॥
- (३६) 'रुखी रोटी' जो मिलै, रहि करि के आजाद ।
'हलुवा-पूरी' से मली, सदा रखियै याद ॥
सदा रखियै याद, 'मोल खतरा नहिं लीजै ।
मिलै एक ही बेर, खाय सन्तोषहि कीजै ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, 'रयागिये संगति खोटी ।
बड़ी न्यामत चीज—मिलै आजादी रोटी ॥
- (३७) 'खावो कम-चावो अधिक' रखियै शुद्ध विचार ।
बीच बीच पानी पिबो, होय न उदर विकार ॥
होय न उदर विकार, सदा भगवान सुमरियै ।
'एक बार उपवास' मासमें अवशहि करियै ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, पेट पै हाथ फिरावो ।
रखियै याद सदैव 'भूख लगने पै खावो' ॥
- (३८) 'खानेसे सबसे प्रथम 'कर-पग' लीजै धोय ।
रुचिसे फिर भोजन करौ, जैसा घरमें होय ॥
जैसा घरमें होय, नहीं चिन्ता उर लावो ।
'रुखी सूखी' खाय, खुशीसे हरिगुन गावो ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, समझिये समझानेसे ।
रहे निरोगी काय, सदा 'सादा' खाने से ॥
- (३९) 'भोगेंगे' आराम से, सकल भोग-उपभोग ।
बल, पौरुष, विद्या, सुयश, जिनकी देह निरोग ॥
जिनकी देह निरोग, होयगी 'उम्र दराजी' ।
जीत सकेंगे वही-जगतमें जीवन वाजी ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, नींद सुखकी सोयेंगे ।
सदा निरोगी पुरुष भोग जगके भोगेंगे ।
- (४०) करता जो नर समयपर, 'अहार, विहार, निहार' ।
'चंगा' सोई जानियै, करलो खूब विचार ॥
करलो खूब विचार, हिकमती यहै नसीहत ।
जो चालै विपरीत सदा ही परै फजीहत ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, कबहु 'वेमौत' न मरता ।
'ये तीनों उपरोक्त' समै पै जो नर करता ॥
- (४१) चंगा, सुन्दर, सुघर वर, कन्या दीजै ताहि ।
'नंगा हू यदि होय घर, करियै नहिं परवाहि ॥
करियै नहिं परवाहि, सहज दम्पति सुखपाएँ ।
'रुखासूखा खाय, हरखि हरिके गुन गाएँ ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, प्रेमसे रहिके संग ।
'अंगा' अँग अँग लगै रहे हरदम मन चंग ॥

- (४२) बाबा है 'दासी रखै, जे नर 'वासी' खाय
'नष्ट-प्रष्ट' होते तुरत, यामे संशय नाँय ॥
यामे संशय नाँय, कषाती स्वारी 'हाँसी' ।
बीमारीकी सभी जानते जड़ है 'खौसी' ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, हमें है पूरा दावा ।
खुशी रहेंगे वही, बचे चारों से बावा ॥
- (४३) खावो न पीवो, जोरि धरि, जुग जुग जीवो देख ।
'सूम सयाने' यों कहैं, छाँटो मीन न मेख ॥
छाँटो मीन न मेख, 'अजीरण' होय न सपने ।
'काया रहै निरोग' वैद्य घर रोए अपने ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, सुनो हे दीन-गरीबो ।
चाहो 'जीवो अधिक' बुरा मति खावो-पीवो ॥
- (४४) चैतनीम, बैसाखमें भात, जेठ सो जाव ।
अदरख खाउ आषाढ़में, सावन हर चवाव ॥
सावन हर चवाव, भादवा खाउ चितावर ।
कार मास गुड़ भला, कातिके मूली 'प्रियवर' ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, पूस पय पियौ कटोरे ।
माघे खिचड़ी घीव, सपरियै फागुन भोरे ॥
- (४५) वहता, सरिता, कुएँका, या झरनेका नीर ।
पीवों, न्हावो, नैमसे, निरमल रहै शरीर ॥
निरमल रहै शरीर, पुराननु वेद बखानी ।
'गंगा जल' जो पियै, धन्य है जगमें प्राणी ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, यही जन-मानस कहता ।
'सेवन' करियै सदा, शुद्ध निर्मल-जल बहता ॥
- (४६) मुखसे कबहू भूलिकें, भूँठ न बोलें बोल ।
'ब्रह्मचर्य' पालूँ सदा' मनमें रहूँ अडोल ॥
मनमें रहूँ अडोल, बचूँ हिंसा से हरदम ।
परिग्रहमें नहिं फसूँ, धारि दृढ़तासे संयम ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, बिताऊँ जीवन सुखसे ।
'मरते-मरते-रामनाम ही निकसे मुख से ॥

है 'अनुग्रह' श्रीमानसों,
यही जोरि जुग पान ।
'पढ़ि' करि कै प्रिय ! आपनी,
'अनुमति' करे प्रदान' ॥
प्रेषक—निरयानन्द जैन, M.A.L.T.
मीतीकटय आगरा ३

★ प्राण और शरीर की--

--संगठन-सम्बन्धी कुछ बातें★

(श्रीमां श्री अरविन्दाश्रम पान्डिचेरी-२)

प्राणिक सत्ता हमारे अन्दर आवेगों और कामनाओंका, उत्साह और उग्रताका, सक्रिय शक्ति और तीव्र अवसादका, भावोद्वेगों और विद्रोहका आश्रयस्थल है। वह सब कुछको क्रियाशील बना सकती है, निर्माण भी कर सकती है और चरितार्थ भी, किन्तु वह सब कुछ को नष्ट कर सकती है और विकृत भी। इसी लिये मानव सत्ताके शायद इसी अंगको प्रशिक्षित करना सबसे अधिक कठिन होता है। इस कार्यमें सतत और लंबे प्रयास अत्यधिक धैर्यकी आवश्यकता पड़ती है, साथ ही पूर्ण सच्चाईकी भी; कारण सच्चाईके बिना व्यक्ति आरंभमें ही अपनेको धोखा देने लगेगा और उन्नतिके लिये किया गया सारा प्रयत्न व्यर्थ जायगा।

सच्ची आवश्यकता और कामनामें कोई सीमा-रेखा ढूँढना बहुत कठिन है (स्वभावतया यौगिक आदर्श यह है कि कोई आवश्यकता उत्पन्न ही न हो, अतः किसी वस्तुकी कामना भी न हो); किन्तु यह उन सद्-भावामन् व्यक्तियोंके लिये लिखा जा रहा है जो अपने आपको जानने और अपनेको नियंत्रित करनेका प्रयास करते हैं। और यही सच पूछो तो हमारे लिये एक समस्या आ खड़ी होती है जो हमसे भारी सच्चाईकी मांग करती है, क्योंकि प्राणका जीवनसे संबंध स्थापित करनेका पहला साधन कामना ही है—पर ऐसी वस्तुएं भी हैं जिनकी आवश्यकता पड़ती है। किन्तु कामना के बिना यह कैसे जाना जाय कि ये आवश्यक हैं? इसके लिये बड़े ही सतर्क पर्यवेक्षणकी आवश्यकता है और यदि तुम अपने अन्दर कोई ऐसी चीज पाओ जो एक लघु तीव्र स्पन्दन उत्पन्न करती है तो निश्चय जानो कि वहां कोई कामना वर्तमान है। उदाहरणार्थ, तुम कहते हो; "यह भोजन मेरे लिये आवश्यक है"—तुम्हारा यह विश्वास है, तुम करना करते हो, सोचते

हो कि तुम्हें अमुक वस्तुकी आवश्यकता है और तुम उसे पानेके उपाय करते हो। यह जाननेके लिये कि यह आवश्यकता है या कामना तुम्हें बड़े ध्यानसे अपने को लखना होगा और अपनेसे यह प्रश्न करना होगा:— "यदि यह वस्तु मुझे न मिली तो क्या होगा?" तब यदि तत्काल ही उत्तर मिले: "ओह तब तो बड़ा बुरा होगा;" तब विश्वास करो कि यह कामना है। सभी बातोंके साथ ऐसा ही है। प्रत्येक समस्याके लिये तुम जरा पीछे हटकर अपनेको देखो और अपनेसे पूछो "यह वस्तु मुझे मिलेगी क्या?" उस समय यदि तुम्हारे अन्दर कोई वस्तु खुशीसे उछल पड़े तो निश्चय समझो कि यह कामना है। इसके विपरीत यदि कोई वस्तु कहे: "ओह यह वस्तु मुझे नहीं मिलेगी" और तुम्हें बड़ी खिन्नताका बोध हो, तो यह भी कामना ही है।

प्राण जिसमें तुम्हें धोखा न दे इसके लिये न केवल अत्यन्त सतर्कताकी ही आवश्यकता है पर ऐसी सच्चाईकी भी जो प्रायः विलक्षण हो—तुम्हें निरुत्साहित करनेके लिये मैं "विलक्षण" शब्दका प्रयोग नहीं कर रही हूँ, किन्तु इसलिये कि तुम सच्चाईके और अधिक बड़े अभीक्षु बनो।

प्राणके सहयोगसे कोई भी प्राप्ति असंभव नहीं प्रतीत होती, न ही कोई रूपान्तर असाध्य।

यही बात बड़ी आश्चर्यजनक है। मेरा यह विश्वास है कि प्राण अपनी शक्तिको बहुत अच्छी तरह जानता है और इसी कारण वह महत्वपूर्ण है। उसके पास वह ऊर्जस्वी शक्ति है जिससे कोई भी कठिनाई उसके लिये अत्यन्त कठिन नहीं होती, किन्तु आवश्यकता इस बातकी है कि वह सही पक्षमें हो यदि वह सहयोगी है तो सब कुछ बड़ा ही अद्भुत

हो जाता है। किन्तु यह निरन्तर सहयोग प्राप्त करना सरल नहीं है। वह बहुत ही अच्छा कार्यकर्ता है, बड़े ही अच्छे ढंगसे कार्य करता है, पर कार्य करते समय वह सदा अपनी संतुष्टि चाहता है, कामसे निकलने वाले लाभ, उससे निकल सकने वाले सारे सुख, उससे प्राप्त होने वाली सारी सुविधा वह अपने लिये चाहता है, और यदि किसी कारणसे (कारण अनेकों हो सकते हैं) उसे यह संतुष्टि न मिली तो वह अप्रसन्न हो जाता है—बड़ा ही अप्रसन्न हो जाता है: “यह तो ठीक नहीं है? मैं काम करता हूँ और मुझे इसके बदलेमें कुछ भी नहीं मिलता।” और तब वह रुठ जाता है, हिलता नहीं बोलता नहीं और कभी-कभी कहता है: “मेरा कोई अस्तित्व नहीं है।” और तब सारी शक्ति शरीरसे निकल जाती है, तुम थक जाते हो, क्लान्त हो जाते हो और कुछ भी नहीं कर पाते। और फिर सहसा स्थिति और भी गंभीर हो जाती है क्योंकि यह जान रखो कि मन प्राणका बड़ा भारी मित्र है—बौद्धिक मन नहीं, शारीरिक मन, उसकी प्राणसे बढ़ी घनिष्ठता है। अतः ज्यों ही प्राण कहना आरंभ करता है; “मुझे इससे कोई मतलब नहीं, मेरे साथ बुरा व्यवहार हुआ है, मैं इससे कोई संपर्क रखना नहीं चाहता,” कि बस मन वहाँ स्वभावतया ही पहुँच जाता है—उसे और उकसाने, समझाने और अच्छी-अच्छी युक्तियाँ देनेके लिये। और फिर वही पुरानी कहानी; “जीवन जीने योग्य नहीं है, लोग सचमुचमें बड़े ही कुरिस्त हैं और सारी परिस्थितियाँ मेरे विरुद्ध हैं, मैं यहाँसे चला जाऊँ सो ही अच्छा।” और ऐसी ही ऐसी बातें। ऐसा प्रायः ही हुआ करता है, किन्तु कभी-कभी बुद्धिकी एक छोटी-सी लौ प्रकट होती है, जो तुमसे कहती है; “ओह ! बहुत हो चुका नाटक अब यह।”

किन्तु यदि बात बहुत बढ़ गयी और तुमने समय पर कोई प्रतिक्रिया नहीं की तो तुम निराशाके गढेमें जा गिरते हो; “सचमुचमें यह जीवन मुझ जैसे लोगों के लिये नहीं बना है, मैं कहीं और, स्वर्गमें, अधिक प्रसन्न रहूँगा जहाँ सभी भले हैं और जहाँ कोई जो चाहे पासकता है” इत्यादि, इत्यादि। स्वर्गकी धारणा यहाँसे निकली है—मुझे पूरा विश्वास है कि इस दोनो मित्र-अपराधियों-मन और प्राणनही स्वर्गकी सारी

कहानी गढ़ी है। क्योंकि यदि जीवन, अस्तित्व तुम कामनाओंके अनुकूल नहीं होता, तुम रोना-पीटना शुरू कर देते हो; “ओह अब मुझे यह नहीं चाहिये संसार दुःखदायी और झूठा है, मैं चला अब मरने तब एक ऐसा क्षण आता है जब स्थिति संगीन होती है; निरुत्साह विद्रोहमें और खिन्नता असंतोष बदल जाती है। मैं यहाँ उन लोगोंकी बात कर रही जिनका कि चरित्र बुरा है—कुछ लोग बुरे चरित्र होते हैं (पर इसमें उनका अपना कोई दोष नहीं), और कुछ लोग अच्छे चरित्रके होते हैं (यह भी अपने कि दोषके कारण नहीं !), जो भी हो, बात ऐसी ही है। हाँ तो जो लोग बुरे चरित्र वाले हैं वे क्रुद्ध हो जाते हैं, विद्रोह कर उठते हैं, सब कुछको तोड़-फोड़ कर ध्वंसकर देना चाहते हैं; “देखना तुम। मैं जो चाहूँ वह वे नहीं करते, उन्हें इसकी सजा मिल जायगी और तब स्थिति और अधिक संगीन हो जाती है क्योंकि मन दुष्कर्मके सहायकके रूपमें बराबर हाथी रहता है, और उसमें बदला लेनेके अद्भुत विचार उठने लगते हैं—निरुत्साहित होनेपर तुम एक प्रकार की मूर्खता करते हो और दुष्टतावश किसी और प्रकार की। निरुत्साहसे उत्पन्न मूर्खताओंका संबंध व्यक्ति रूपसे केवल तुमसे ही रहता है, जब कि दुष्टता—जिसे मूर्खताएँ दूसरोंकी चिन्ताका विषय बन जाती हैं—कभी-कभी ये मूर्खताएँ बड़ी भयंकर हो उठती हैं। यदि तुम्हारे अन्दर थोड़ी सद्भावना है तो यह अत्यन्त नियम बनाओ कि जब ऐसी स्थिति तुमपर हावी जाय तो तुम अडिग रहो और अपनेसे कहो, मैं निरुत्साह का नहीं मैं तूफानके निकल जानेकी प्रतीक्षा नहीं तो कुछ ही क्षणोंमें तुम महीनोंके नियमित विषय गये प्रयत्नको नष्ट या भ्रष्ट कर दे सकते हो।

किन्तु यहाँ मैं तुम्हें सांत्वनाकी एक बात बतलाऊँ। ये दौरे उन लोगोंमें कम टिकाऊ और कम खतरा होते हैं जिन्होंने अपने अंतरात्माके साथ इतना सौजन्य जोड़ लिया है कि वे अपने अन्दर अभीप्साकी लौ को प्राप्त कर आदर्शकी चेष्टा जीवंत बनाये रख सकें। चेष्टाकी सहायतासे वे अपने प्राणके साथ वैसा बर्ताव कर सकते हैं जैसा कि लोग बिगड़े हुए बच्चे के साथ करते हैं, अर्थात् धैर्य और अध्यवसायके

त्व तु
 गीटना
 ाहिये
 व मरने
 संगीत
 असंतो
 कर रहे
 र चरि
 तहीं), अ
 पने कि
 सी ही
 छ हो
 -फोड़
 जो चाह
 जायी
 ती है क
 र हाजि
 मुत वि
 एक प्र
 और प्र
 व व्यक्ति
 टता-जि
 ती हैं
 उठती है
 यह अ
 र हा
 , मैं नि
 मा रू
 यमि
 ।
 त बतल
 म खत
 दतना सं
 की लौ
 सकें।
 यथ वैस
 दुप ब
 नायके

...मैं हिंसा का प्रयोग नहीं करूँगा।
यमित विचारों से चलूँगा।
तब तक तब तक
मैं खतरा नहीं दूँगा।
इतना ही है।
की लौ लाल हो
सकें।
थैली वैसी ही
हुए बनें।
साथ के

त बतल
म खतर
इतना सं
की लौ
सकें।
थ वैसा
हुए बने
सायके

ज्ञान

उसे इस अत्याचार से मुक्त करना ही होगा, और
जब सत्ता के आंतरात्मिक

उसे इस अत्याचारसे मुक्त करना ही होगा, और
ये भी हो सकता है जब सत्ताके आंतरात्मिक

केन्द्रके साथ सतत युक्त रहा जाय ।

स्पष्ट ही यही सारी व्याधियोंका उपचार है ।

शरीरमें अपनेको अनुकूल बनाने और सहन करने की अद्भुत क्षमता है । यह बहुतसी ऐसी चीजें कर सकती है जिनकी हम साधारणतया कल्पना तक नहीं कर सकते । यदि यह निरंकुश और अज्ञानी स्वाभियों द्वारा शासित न होकर केन्द्रीय सत्य द्वारा शासित हो तो इसमें जो क्षमता है उसे देखकर हम आश्चर्यान्वित हो जायेंगे ।

पिछले महायुद्धमें यह प्रमाणित हो चुका है कि शरीर ऐसे कष्ट सहनेमें समर्थ है जिन्हें सामान्यतया सहन करना असंभव होता है । तुमने निश्चय ही युद्ध की कहानियां पढ़ीं या सुनी होंगी जिनमें शरीरको पड़ी भयंकर-भयंकर यातनायें भोगनी और सहनी पड़ी और उसने उन सबोंको भेलकर यह प्रमाणित कर दिया कि उसमें सहन करनेकी प्रायः अक्षय्य क्षमता है । कई लोग ऐसी परिस्थितिमें पड़ गये थे जो निश्चय ही उनके जीवनका अंत कर देती, किंतु फिर भी वे जीवित रहे तो इस कारण कि उनके अन्दर जीवित रहनेकी प्रबल इच्छा थी और शरीरने उनकी इस इच्छा का पालन किया ।

इस संतुलित और स्वस्थ जीवनमें शरीरके भीतर एक नयी समस्वरता अभिव्यक्त होगी जो उच्चतर क्षेत्रों की समस्वरता प्रतिबिम्बित करेगी और शरीरको अवयवोंकी गठनकी पूर्णता और रूपका आदर्श सौन्दर्य प्रदान करेगी ।

यह अन्तिम परिणति है । और यदि तुम वर्तमान मानव शरीरकी तुलना सौंदर्यके उच्चतर आदर्शके साथ करो तो यह स्पष्ट है कि बहुत ही कम लोग इस परीक्षामें उत्तीर्ण होंगे । प्रायः सबोंमें अवयवोंकी गठन का अनुपात असंतुलित रहता है । हम इसके इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि इसे देख नहीं पाते, किन्तु यदि हम उच्चतर सौंदर्यकी दृष्टिसे देखें तो यह हमें दिखायी देने लगेगा । बहुत ही कम ऐसे शरीर हैं जो पूर्ण सौंदर्यकी तुलनामें ठट सकेंगे । इस असंतुलनके हजारों कारण हैं, किन्तु उपचार बस एक ही है और वह

यह कि सत्ताके अन्दर इस सहज प्रवृत्तिकी, इस सौंदर्यकी, चरम सौंदर्यकी भावनाको प्रवेश कराया जाय । यह कोषोंपर धीरे-धीरे क्रियाकर शरीरमें सौंदर्य की अभिव्यक्तिकी क्षमता लायेगी । एक और बात है जिसे लोग नहीं जानते । जितनी कि कोई कल्पना कर सकता है, शरीर उससे अनंत गुना नमनीय है । तुमने निश्चय ही इस बातका ख्याल किया होगा (शायद अस्पष्ट रूपसे ही) कि जो लोग आंतरिक शांतिमें आंतरिक सौंदर्यमें, आलोक और पूर्ण सद्भावनाकी अवस्थामें रहते हैं उनके मुखका भाव ठीक वही नहीं होता जैसा कि उन लोगोंका होता है जो बुरे विचारोंके भीतर, अपनी प्रकृतिके निम्न भागोंमें निवास करते हैं । जिस क्षण मनुष्य अपनी उच्चतम अवस्थामें रहता है— अपनी निम्नतम पशुतासे ऊपर-वह कुछ ऐसी वस्तु प्रतिबिम्बित करता है जो कि तब वहां नहीं होती जब कि वह पशुताकी अवस्थामें निवासकर रहा होता है ।

यदि कोई अहंभाव द्वारा या उस प्रसिद्ध वस्तु मिथ्याभिमान द्वारा अपना रूप परिवर्तित करना चाहे तो निश्चय ही उसे सफलता नहीं मिलेगी, क्योंकि जिस वस्तुमें कार्य करनेकी शक्ति है वह इन सबोंसे अधिक गहरी है । किन्तु यदि तुम हर बड़ी बुरी इच्छाओं, दुष्ट विचारोंका आना रोक सको तो तुम देखोगे कि तुम्हारी आकृतिमें, तुम्हारे अवयवोंमें धीरे-धीरे एक प्रकारकी समस्वरता व्यक्त होने लगी है, कारण यह सत्य है कि शरीर आंतरिक अवस्थाओंको व्यक्त किया करता है ।

पर लोग एक बात भूल जाते हैं । कोई यदि दिनभर में चार या पांच घण्टे उच्चतर चेतनामें निवास करते तो उसे लगने लगता है कि वही बहुत हो गया और बाकी सारा समय वह न्यूनाधिक क्षुद्र पशुकी भांति रहता है, अपनेको ढील देता है—परिस्थितियां चाहे जिधर बहा लें । वह उस उच्चतर वस्तुके अनुरूप बनना भूल जाता है जो उसे उसकी निम्न प्रकृतिके क्षेत्रोंमें उतरनेसे रोक सकती है ।

यदि तुम इसके लिये चेष्टा-परिश्रम करो तो शरीर से तुम्हें बहुत अधिक कुछ प्राप्त हो सकता है ।

यदि तुम इसे अपने जीवनमें लाओगे तो तुम्हें बहुत अधिक कुछ प्राप्त हो सकता है ।

अधिक भर्त्सना ही करनी चाहिए। क्योंकि दोषी वह नहीं है। यदि तुम अपने शरीरको सधाने-सिखानेका ठीक तरीका अपनाओ तो तुम्हें शरीरसे अभी जो कुछ प्राप्ति होती है उससे अनन्तगुण प्राप्ति होगी। यह अभी अत्यन्त हालकी बात है कि लोगोंने शारीरिक प्रशिक्षणको महत्वपूर्ण वस्तुओंमें गिनना शुरू किया है। यदि आजसे पचास वर्ष पीछे जाओ तो तुम देखोगे कि जिन लोगोंको और कोई धन्धा नहीं था वे ही इसे अपनाते थे। और सौ वर्ष पूर्व तो यह शौककी चीज समझी जाती थी। जब कोई कहता था, "मैं अपने बच्चेको स्कूलमें नहीं डालना चाहता, उसे अपनी रोजी कमाना होगी," तो बहुतसे ऐसे लोग मिल जाते थे जो कहते: "किन्तु क्षमा करना, तुम भारी भूल कर रहे हो, क्योंकि यदि तुम अपने बच्चेको युवा जीवनके लिये तैयार नहीं करते तो आगे चलकर वह निकम्मा हो जायगा।" किन्तु ऐसी बातें लोग मनके संबंधमें ही कहा करते थे, शरीरके विषयमें कोई कुछ नहीं कहता था। कितने ऐसे बच्चे थे जो थोड़ी बहुत अच्छी अवस्थामें थे, पर उनका शरीर सचमुचमें उनके लिये समस्या था। किन्तु लोग कहते, "वह आप ही ठीक हो जायगा, वह अपने ही सुधर जायगा.....।" प्रशिक्षा और धैर्यसे तुम्हारा शरीर ऐसा हो जा सकता है जिसके साथ तुम अपना जीवन मजेमें बिता सको। अब लोग संतुलित और स्वस्थ जीवनका महत्व समझने लगे हैं।

(शरीरकी) यह समस्वरता विकसनशील होगी, क्योंकि सत्ताका सत्य स्थिति-शील नहीं है; वह एक बढ़ती हुई पूर्णताकी, जो कि अधिकाधिक व्यापक समग्र एवं व्यापक होती रहती है, सतत अभिव्यक्ति है। ज्योंही शरीर इस विकसनशील समस्वरताकी गतिके साथ-साथ चलना सीख लेगा, उसके लिये रूपांतरकी अनवच्छिन्न क्रिया द्वारा विघटन एवं विनाशकी आवश्यकतासे बचना सर्वथा संगत हो जायगा। इस प्रकार मृत्युके अटल नियमके अस्तित्वका कोई कारण नहीं रह जायगा.....। सत्यके चारों गुण सहज-स्वा-

भाविक रूपसे हमारी सत्तामें अभिव्यक्त होंगे। अन्तरात्मा सत्य और शुद्ध प्रेमका वाहन बनेगा, मन अचूक ज्ञानका, प्राण अदम्य शक्ति एवं बल व्यक्त करेगा और शरीर पूर्ण सौन्दर्य एवं सामंजस्यकी मूर्त अभिव्यक्ति होगा।

इस बातको गुह्यवादी एवं धार्मिक लोगोंमेंसे बहुत ही कम जानते हैं; सत्ताके प्रत्येक भागमें भगवान् अपनेको भिन्न-भिन्न रूपोंमें अभिव्यक्त करते हैं। उच्चतर भागोंमें वे शक्ति, प्रेम आदिके रूपमें व्यक्त होते हैं किन्तु शरीरमें उनकी अभिव्यक्ति सुन्दरता और समस्वरताके रूपमें होती है।

अतः शारीरिक सौन्दर्यकी अभिव्यक्तिकी समस्या आध्यात्मिक समस्या है।



दन्तरोगों को दूर कर
दांतों को मोती समान
स्वच्छ बनाता है।

**दन्तप्रभाकर
मंजन**

**कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा, कृष्ण-गोपाल (अजमेर)**

प्रमेह

आजकलके नवयुवकोंमें यह रोग बहुतायतसे पाया जाता है। जिसके कारण उनका स्वास्थ्य उत्तरोत्तर गिरता ही जाता है। यह एक ऐसा रोग है, जिसे नवयुवक अपने वैद्य या डाक्टरसे कहनेमें हिचकिचाता है। क्योंकि भारतमें इस रोगको नामर्दी या दुश्चरिताका प्रमाण कुछ नीम हकीमोंने मान रखा है। जो न्तको साधारण जड़ी बूटी देकर वहकाते हैं। और नसे पैसे ऐंठते रहते हैं। कितने ही नवयुवक प्रति-इन इस रोगसे पीड़ित होकर नीमहकीमोंके पास जाते हैं। वे उसे भ्रममें डाल देते हैं। परन्तु वास्तवमें इस रोगका सम्बन्ध न तो नामर्दीसे है और न किसी प्रकारकी दुश्चरित्रतासे जिसे कहनेमें लोग शर्माते हैं।

दिनमें सोने व्यायाम न करनेवाले, आलसी, शीत, स्निग्ध, मधुर, मेद वर्धक द्रव खान पान सेवन करनेवाले, दिवा स्वप्नका सुख, दही, बकरी, भेड़ आदि ग्राम्य जीवोंका मांस रस, कछुआ इत्यादिल जीवोंका मांसरस, नवीन अन्न रस, गुड़के विकार आदिका अधिक सेवन करनेसे पुरुषके अपरिपक्व अवस्थामें ही वात पित्त कफके साथ मिलकर मूत्रवाही नालोंके आश्रयके नीचेकी ओर आकर वस्ति मुखका आश्रय लेकर, जब बाहर निकलने लगते हैं तो प्रमेहकी उत्पत्ति होती है।

प्रमेहके पूर्व रूपः—

दांत इत्यादिमें मैलका जमना हाथ तथा पैरमें छद्म, शरीरमें चिकनाहट, पिपासा, मुँहका मीठा रहना, सब प्रमेहके पूर्वरूप हैं।

प्रमेहके लक्षणः—

मूत्रकी अधिकता तथा गँदलापन ये प्रमेहके सामान्य लक्षण हैं।

ये प्रमेह बीस प्रकारके होते हैं। परन्तु क

लेखक—श्रीकृष्णगोपाल गुप्ता

श्री रामकृष्ण राजपुताना औषधालय
जुरहरा, भरतपुर (राजस्थान)

आचार्य तथा वैद्य यह शङ्का करते हैं कि दोष तीन हैं तथा द्रव्य ग्यारह हैं तो फिर प्रमेह बीस कैसे है? इसका उत्तर है कि दोषों तथा द्रव्योंके संयोगसे विशेषतासे, अर्थात् दोषों तथा द्रव्योंकी अधिक तथा कम मात्रामें संयोगकी विशेषतासे मूत्रके वर्ण इत्यादि के भेदसे प्रमेहोंमें भेदोंकी कल्पना कर लेनी चाहिये। जैसा कि सुश्रुतने कहा है कि “जिस प्रकार श्वेत, पीत, रक्त, हरित तथा कृष्ण इन पाँचों वर्णोंकी अधिक तथा कम मात्रामें मिलनेकी विशेषतासे कपिलादिनाम प्रकारके वर्ण हो जाते हैं। उसी प्रकार दोष तथा द्रव्योंके संयोग भेदसे प्रमेह भी अनेक प्रकारका होजाता है।”

जैसा कि मैंने ऊपर बताया कि प्रमेह बीस प्रकारके होते हैं। उनमें कफके होनेवाले प्रमेह दश, पित्तके होनेवाले प्रमेह छः तथा वातके होनेवाले चार प्रमेह हैं।

उनके अलग अलग होनेवाले नाम तथा उनके लक्षण निम्न हैंः—

(१) उदकमेहः—इसमें रोगी स्वच्छ, अधिक मात्रामें श्वेत, शीतल, गन्ध रहित, जलके समान तथा, कुछ गँदला, और चिकना पेशाब करता है।

(२) इक्षुमेहः—इसमें रोगी ईखके रसके समान अत्यन्त मधुर मूत्र त्यागता है।

(३) सान्द्रमेहः—इस रोगके पीड़ित मनुष्यका पेशाब अगर रात भर रख दिया जाय तो प्रातःकाल गाढा हो जाता है।

(४) सुरामेहः—इस रोगका रोगी सुराके समान मूत्र त्यागता है जो ऊपरसे स्वच्छ तथा नीचेसे गाढा रहता है।

(५) पिष्टमेहः—इसके रोगीके मूत्रका वर्ण चावल के धोवनके समान सफेद तथा अधिक मात्रामें होता है।

इस मेहमें मूत्र त्यागते समय रोमाञ्च आता है। पिष्ट अर्थात् आटापिष्टी मिले हुये जलके समान मूत्र आता है।

(६) शुक्रमेही:—वीर्यके समान अथवा वीर्य मिश्रित मूत्र त्यागता है।

(७) सिकतामेही:—मेद प्रभृति धातुओंको रेतके समान घन तथा अणु स्वरूपमें मूत्र द्वारा त्यागता है। पीड़ाके साथ सिकता आती है।

(८) शीतमेह:—इससे पीड़ित मनुष्य अनेक बार मधुर तथा अत्यन्त शीतल मूत्र त्यागता है।

(९) शनैर्मेही:—धीरे धीरे तथा थोड़ी-थोड़ी मात्रामें मूत्र त्यागता है।

(१०) लालामेह:—इसके कारण रोगी लालातन्तु के तार युक्त एवं पिच्छिल तथा चिपचिपा मूत्र त्यागता है।

इस प्रकार कफके होने वाले दश प्रमेहोंका सामान्य लक्षणों सहित वर्णन हुआ। प्रमेहके कुपित होनेसे होनेवाले छः प्रमेहोंका वर्णन निम्न प्रकार है।

(१) क्षारमेह:—के कारण मूत्र गन्ध, वर्ण, रस तथा स्पर्शमें क्षार जलके समान होता है।

(२) नीलमेह:—के कारण रोगी नीले रंगका मूत्र त्यागता है।

(३) कालमेही:—काली रसाहीके समान कृष्ण वर्णका मूत्र त्यागता है।

(४) हारिद्रमेही:—हल्दीके समान पीला कटु रस तथा जनता हुआ मूत्र त्यागता है।

(५) मंजिष्ठ मेह:—रोगी कच्चे पदार्थके समान गन्धवाला तथा मजीठके काथके समान वर्ण वाला मूत्र त्यागता है।

(६) रक्तमेही:—का मूत्र आमगन्धि, उष्ण, नमकीन तथा रक्तके समान वर्ण वाला होता है।

वातके कुपित होने वाले चार प्रमेहोंका नाम व उनके सामान्य लक्षण निम्न हैं:—

(१) वसामेही:—वसासे मिला हुआ तथा वसाके समान वर्ण वाला मूत्र त्यागता है।

(२) मज्जामेही:—मज्जासे मिला हुआ मूत्र त्यागता है।

मूत्र प्रवाहित करता है। तथा बार बार मूत्र त्यागता है।

(३) मधुमेह:—इसमें रोगी मधुके समान मूत्र प्रवाहित करता है। कभी इसमें मूत्र कसेला तथा रुद्ध होता है। यह दो प्रकारसे उत्पन्न होता है। धातुक्षयके कारण वायुके कुपित होनेसे तथा दोषोंके मार्गमें रुकने से वायुके कुपित होनेसे।

(४) गजमेही:—इस रोगका रोगी मस्त हाथीकी भाँति निरन्तर, वेग रहित, लसीकासे लीला, और रुका हुआ मूत्र त्यागता है।

इस प्रकार विभिन्न दोषोंके कुपित होनेसे बीस प्रकारके प्रमेह होते हैं।

सब प्रकारके प्रमेहोंमें मधुमेह ही अधिकतर पाया जाता है। क्योंकि सब प्रकारके प्रमेह उपेक्षा करनेपर मधुमेहमें परिवर्तित हो जाते हैं। क्योंकि शरीरमें स्वभावसे ही मधुर हो जानेके कारण सब प्रमेहोंमें मधुके समान मूत्र आता है। इसलिये सभी प्रमेहोंमें मधुमेह शब्दसे भी कहे जाते हैं।

यहाँपर एक शङ्का या प्रश्न उठता है कि क्यो स्त्रियोंको प्रमेह नहीं होता ?

कई आचार्य यह कहते हैं कि स्त्रियोंमें प्रमेह नहीं होता। यथा चरकमें भी कहा है कि

“रजःप्रशोकान्नारीणां मासि मासि विशुध्यति।

सर्वं शरीरं दोषाश्च न प्रमेहन्त्यतः स्त्रियः॥”

वस्तुतः यह वचन ठीक नहीं है क्योंकि इसका तात्पर्य यह नहीं कि आर्तवधर्मके होते रहनेसे स्त्रियोंको प्रमेह नहीं होता। कई स्त्रियोंमें मधुमेह या अन्य प्रकारके प्रमेह देखे गये हैं। परन्तु जिन औरतोंमें ठीक प्रकारसे नियमित रूपसे रजोदर्शन होता रहता है, उनको प्रमेह नहीं होता है। ठीक प्रकारसे मासिक धर्म होनेसे शरीरके दोष शुद्ध होनेसे प्रमेह होनेका अवसर ही नहीं मिलता इसीसे कहा है—

“कफः सपित्तः पवनश्च दोषाः,

मेदोऽस्य शुक्राण्यु वसा लसीका।

मज्जा रसोजः पिशितं च दूष्याः,

प्रमेहोऽपि विंशतिरेव मेहाः॥” चरक

आधुनिक मत और प्रमेहः—

आधुनिक मत प्रमेहको एनोमलीज आफ यूरीनरी सिक्रीशन (Anomolis of urinary secretion) कहते हैं यह उस अवस्थाका नाम है जबकि मूत्रकी राशि प्रचुर मात्रामें तथा मैली होती है। अर्थात् असाधारण पदार्थ युक्त होती है जैसा सुश्रुतमें लिखा है

तत्राबिल प्रभूत मूत्रं लक्षणाः सर्व एव प्रमेहा”

(सु० नि० अ० ६ सू० ५)

प्रमेहका आधुनिक व प्राचीन तुलनात्मक अध्ययन

उदक मेह (Polyuria) :—यह बहुमूत्र मेह है जिसमें मूत्र वर्ण और गुरुतामें पानीके समान होता है। आधुनिक मतके अनुसार यह दो प्रकारका होता है।

(अ) अस्थार्हः—यह जल, कॉफी, चाय, कोको अधिक मात्रामें पीनेसे, हृच्छूलता, अपस्मार, तथा अपतन्त्रक इत्यादिके आवेगके पश्चात् तथा मानसिक आघातके कारण होता है।

(ब) स्थार्हः—यह पुराने वृक्क शोथसे धमनी-दबावके कारण रक्त भार बढ़ जानेसे, ग्रन्थिक वृक्कसे, और मस्तिकगत ग्रन्थिकी विकृतिसे होता है। मस्तिकक ग्रन्थिकी विकृतिसे होने वाले उदक मेहको डाय बिटीज इन्सीपीडिस (Diabetes insipidsus) कहते हैं।

(२) इक्षुमेह (Glycosuria) :—इसमें मूत्रमें शर्करा होती है। वस्तुतः यह मधुमेह नहीं है। क्योंकि मधुमेहके लिये रक्तमें अधिक शर्कराका होना अनिवार्य है।

(३) सान्द्रमेह (phoshaturia) :—इस रोगमें मूत्रमें फोस्फेट अधिक होता है। इसमें मूत्र थोड़ी देर पश्चात् गाढा हो जाता है। मूत्रमें फैत्रिन उपस्थित होने के कारण मूत्र गाढा हो जाता है।

सुरामेहः—यह भी सान्द्रमेह ही है। परन्तु जब जमनेकी क्रिया मूत्राशयमें ही होजाती है तो वह सुरामेह होजाता है। मूत्र ऐसीटीन होनेपर मूत्रमें मद्यकी सी गन्ध हो जाती है। यदि सुराकी गन्धकी दृष्टिसे विचार किया जाय तो इसे ऐसिटोन्यूरिया कहा

जाता है। परन्तु आयुर्वेदमें कहीं गन्धका उल्लेख न मिलता।

पिठर मेह (Chyluria) :—इस प्रमेहमें रोमा होता है। वह पिष्ट मिश्र मूत्रको देखनेका परिणाम मालूम होता है। इसप्रकारका रवेत मूत्र, अल्पयूग्मि पूय या काईलकी उपस्थितिसे होता है। मूत्रमें काईल (अन्नरस) मूलीपद कृमिके कारण आता है। कृमि आन्तररस रस वाहिनीमें अवस्थान करके रस प्रवाहको अवरुद्ध करते हैं इस अवरुद्धके कारण मूत्रवह संस्थानकी रसवाहिनियां फूटती हैं। रस मूत्रके बाहर निकल आता है।

(६) शुक्र मेह (Spermaturia) :—प्रजनन संस्थान एवं वातनाडी मण्डलकी विकृतिसे मूत्रके साथ वीर्य बाहर निकल आता है। शुक्र तुल्य मूत्रको अल्पयूग्मि निरिया और शुक्र मिश्र मूत्रको स्पर्मैयूरिया कहते हैं।

(७) सिकता मेह (Gravel in the urine) :—छोटी छोटी अश्मरीको ही सिकता कहते हैं। त मूत्रके साथ इनके निर्गमनको सिकता मेह कहते हैं।

(८) शीतमेहः—यह इक्षुमेहका ही एक प्रकार है। क्योंकि इसमें मूत्र मधुर आता है।

शनैर्मैहः—यह प्रमेह सिकताके मूत्र मार्ग अवरुद्ध होनेके कारण होता है। यथाः—

मूत्रेण युक्त सिकता प्रमेहः,

मन्देन मूत्रेण शनैर्मैह ॥

(१०) लालामेहः—(Prostatorrhoea) जतनेन्द्रिय सम्बन्धी वातनाडीकी उत्तेजनासे पौरुष ग्रन्थि अथवा मूत्र नलिकामें प्रक्षोभ अथवा प्रदाह कारण पौरुष ग्रन्थिसे लारके समान पदार्थ बहता या मूत्रके साथ बहता है। इसे अल्पयूग्मि निरिया कह सकते हैं।

सुश्रुतमें लालामेहके स्थानपर फेनमेहका वर्णन मिलता है। जिसका वर्णन इस प्रकार है।

“स्तोकं स्तोकं सफेनं फेनमेहीमेहार्च”।

इसमें मूत्र आगदार होता है। इसको न्यूमैरिया (Pneumaturia) कहते हैं।

क्षारमेहः—(Alkaline Urine)—मूत्राघातके कारण मूत्र अम्लीय प्रतिक्रियाको छोड़कर क्षारीय हो जाता है। इनके कारण मूत्र रुका रहकर सड़ता रहता है।

(१२) नीलमेह (Indicanuria):—उदावरण, प्रदाह पूयोरस आदि पूय उत्पादक रोगोंमें तथा राज-यक्ष्मा, आन्त्रिकज्वर, विस्मूचिका, आन्त्रावरोध आदि में मूत्रमें अधिक मात्रामें निनीलेन्य पदार्थ निकलते हैं जिनके कारण मूत्रका वर्ण नीला हो जाता है।

(१३) कालमेहः—(Brown And Black urins) सुश्रुतमें काल मेहके स्थानपर अम्लमेहका वर्णन मिलता है। परन्तु दोनोंमें समानता नहीं है उसके लक्षण हैं—

“अम्ल रस गन्ध अम्लमेही।

जब कि काल मेहका वर्ण मसी वर्ण है।

मूत्रका कृष्ण वर्ण निम्न कारणोंसे हो जाता है।

(अ) पुरानी कामलाः—इसमें मूत्रके अन्दर विलि-
वर्धित नामक रंग उपस्थित होता है।

(ब) मूत्रमें रक्त या रक्तके रंगके द्रव्यकी मात्रा अधिक हो जाना।

(स) मूत्रमें इन्डिकल तथा इन्डोलके उच्च श्रेणीके अपद्रव्यकी अधिक उपस्थिति होना।

(इ) मूत्रमें होमोजेन्ट सिनिक ऐसिडकी उप-
स्थितिसे होता है।

(ई) मूत्रमें मेलेमिन नामक रंगकी उपस्थितिसे होता है।

१४-१५ हरिद्रमेह तथा रक्तमेह (Choluria & Haematuria) —ये प्रमेह मूत्रमें रक्तकी उप-
स्थितिसे होते हैं। मूत्र मार्गके रक्तपित्त में भी हरिद्र और रक्त वर्ण मूत्र निकलता है। परन्तु इसमें प्रमेहके अन्य लक्षण नहीं मिलते इसलिये प्रमेह नहीं कहते यथाः—

“हारिद्र वर्ण रुधिरं च मूत्रं,

बिना प्रमेहस्य हि पूर्व रूपैः।

यो मूत्रयेत्तं न वदेत् प्रमेहं,

रक्तस्य पित्तस्य हि स प्रकोपः॥”

चरक प्र० चि० ॥

जब रक्त केवल रंग द्रव्यके रूपमें उपस्थित होता

है। तब उस मेहको हीमात्र्युरिया (Haematuria) कहते हैं।

(१६) मांजिष्ठमेहः—इस प्रमेहको भी कोल्यूरिया कहते हैं। यह मूत्रमें विलीरुवीन नामक पित्त रंगके उपस्थित होनेसे होता है।

(१७) वसामेह (Lipuria) —मूत्रमें पूय अल्पमि-
न अथवा चर्बीकी उपस्थितिसे यह रोग होता है।

(१८) मज्जामेह (Puguria) —यह भी वसामेहका ही एक रूप है। सुश्रुतमें इसके स्थानपर सर्वमेहका वर्णन है।

(१९) हस्तिमेह (False Incontinence of urine) —इसमें मूत्र रुक रुककर निरन्तर टपकत रहता है। इस प्रमेहमें मूत्र मार्गमें कुछ रुकावट होती है। आधुनिक शास्त्र इसे डायविटीज इन्सी पीडिस भी कहता है।

(२०) मधुमेह (Diabetes mellitus) —
इसमें मूत्रके भीतर मधुर स्वभाव ओज उपस्थित रहता है। जिसे हमरल्लूकोज कहते हैं। यह एक प्रकार की शर्करा है। जो शर्कराओंके साथ मूत्रमें उपस्थित रहती है। जिससे मूत्र कुछ गाढ़ा हो जाता है।

यह रोग आजकल बहुत फैल रहा है। और काफी मात्रामें बड़े बड़े लोगोंको यह कहते सुनते हैं, कृपया शर्करा न ढालें। क्योंकि उन्हें मधुमेह है और उनको डाक्टरने उन्हें शर्करा न खानेको कह रक्खा है। इसलिये यह जानना आवश्यक है कि मूत्रमें शर्करा होने का कारण क्या है? मूत्रमें शर्करा उपस्थित होनेके कई कारण हैं जिनमेंसे मुख्य कुछ निम्न हैं—

वृक्क—यों तो प्रकृतिने हमारे जीवनकी मशीन को इस प्रकार बनाया है कि इसका प्रत्येक पुर्जा स्व-चालित है। और समय आनेपर अपना कार्य स्वयं करने लग जाता है। वृक्क भी उनमेंसे एक है। इसका कार्य है कि रक्तस्थ शर्कराको एक विशेष प्रमाण तक रोके रखना और उसे मूत्रमें न आने देना। यह प्रमाण है १०८% तक। जब कारणवश रक्तस्थ शर्करा इस प्रमाणसे अधिक होती है, तब मूत्रमें शर्करा आने लगती है। कभी कभी यह भी देखा गया है कि वृक्क की बन्धन मर्यादा कुछ मनुष्योंमें नीचे गिर जाती है जिससे मूत्रमें शर्करा अधिक आती है। यह स्थिति

विषयान्तर्गत नहीं है।

(२) शालिपिष्टमय पदार्थोंका अत्यशन—इनके रण रक्तमें शर्करा अधिक बनती है। जिसके कारण शर्करा वृद्धकी शर्करा बन्धन मर्यादाको तोड़कर मूत्रमें जाती है।

(३) मस्तिष्क और मानसिक विकार—क्रोध, क, चिन्ता तथा भय इत्यादि मानसिक विकारोंके रण और मस्तिष्क विद्रधि, अर्बुद, रक्तस्राव तथा थ इत्यादिसे भी मस्तिष्कका कार्य अव्यवस्थित नसे मूत्रमें शर्करा आने लगती है।

(४) अन्तःस्राव ग्रन्थियोंके विकार—शरीरस्थ शर्करा परिवर्तनका नियन्त्रण अग्न्याशय, अवटुका ग्रन्थि, अधिवृक्कग्रन्थि और पोषणक ग्रन्थि इन चार अन्तःस्रावी ग्रन्थियोंके द्वारा होता है। अग्न्याशयका एक भाग एक स्राव बनाता है। जिसमें इन्स्यूलिन नामक पदार्थ होता है। यह इन्स्यूलिन पेशियोंको शर्कराका उपयोग करनेमें तथा यकृतको उसका संचित करनेमें सहायता देता है। इनकी कमीसे शर्करा वृद्ध बन्धनको तोड़कर मूत्रमें आती है। शेष तीनों ग्रन्थियोंका कार्य मूलीनके विरुद्ध होता है। ये आपसमें मिलकर शर्कराका विनियोग सुचारु रूपसे करके शरीरकी ऊर्जाको प्रदान करती है। मधुमेहमें प्रायः अग्न्याशयके एक भागको जो इन्स्यूलीन बनाता है नष्ट होकर मेद बन जाता है। और शर्कराका विनियोग ठीक प्रकारसे होनेके कारण प्रोटीन और मेदका विनियोग भी ठीक प्रकारसे नहीं हो पाता। मेदसे मेदसाम्ल तथा कई नुल उत्पन्न होकर मूत्रमें आते हैं। इससे मूत्रकी चारों-पट्टी नष्ट हो जाती है। और संन्यासादि दारुण उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं।

प्रमेहके होनेवाले उपद्रवः—

कफज प्रमेहके उपद्रवः—भोजनका ठीक परि-
क न होना। अरुचि, वमन, निद्रा, कास, तथा
नस ये सब कफजन्य प्रमेहके उपद्रव हैं।

पित्तजन्य प्रमेहके उपद्रवः—मूत्राशय तथा मूत्र
पिण्डमें सुई चुपनेकी पीड़ा, अण्डकोषोंका फटना, ज्वर,
ह, पिपासा, खट्टी डकारोंका आना, मूच्छा, पतले
तका होना, ये सब पित्तज प्रमेहके उपद्रव हैं।

वातजन्य प्रमेहके उपद्रवः—आवाज, शक्ति, अथवा

स्तम्भ, चञ्चलता, शूल, निद्रानाश, शोथ, श्वास, तथा
कास ये सब वात जन्य प्रमेहके उपद्रव होते हैं।

प्रमेहकी चिकित्साः—

आयुर्वेदमें प्रमेहकी चिकित्सा निम्न द्रव्य व
विधि द्वारा की जाती है।

प्रमेह रोगीको सर्व प्रथम प्रियंग्वादि द्रव्योंसे सिद्ध
तैल द्वारा स्निग्ध करके वमन करावे, तथा अच्छी
तरहसे विरेचन करावे। विरेचनके पश्चात् सुरसादि
गणके क्वाथमें सोंठ, देवदारु, तथा नागरमोथा इन
औषधियोंके चूर्ण मधु व सैन्धव मिलाकर निरुह वस्ति
देनी चाहिये। यदि दाह होता हो तो तैल रहित
न्यग्रोधादि कषायसे निरुह वस्ति देनी चाहिये।

सामान्य रूपसे—

१—पारिजातके क्वाथमें मधु मिलाकर पीनेसे
उदकमेह नष्ट होता है।

२—जपाके क्वाथमें मधु मिलाकर पीनेसे हनुमेह
नष्ट होता है।

३—नीमके क्वाथमें मधु मिलाकर पीनेसे सुरामेह
नष्ट हो जाता है।

४—चित्रकके क्वाथमें मधु मिलाकर पीनेसे सिक-
तामेह नष्ट हो जाता है।

५—खैरके क्वाथमें मधु मिलाकर पीनेसे शनैर्मेह
नष्ट हो जाना है।

६—पाठाके क्वाथमें मधु मिलाकर पीनेसे क्षार-
मेह नष्ट हो जाता है।

७—हल्दी, दारुहल्दी तथा श्वेत कमलके क्वाथ
में मधु मिलाकर पीनेसे सांद्रमेह नष्ट हो जाता है।

८—पीपलके क्वाथ में मधु मिलाकर पीनेसे नील-
मेह नष्ट हो जाता है।

९—अमलतासके गूदेमें मधु मिलाकर पीनेसे
हरितमेह नष्ट हो जाता है।

१०—न्यग्रोधादि गणकी औषधियोंके क्वाथ तथा
मधु मिलाकर पीनेसे फेनमेह नष्ट हो जाता है।

११—लाल चन्दन तथा मजीठके क्वाथमें मधु
मिलाकर पीनेसे मांजिष्टमेह नष्ट हो जाता है।

लोह भरम त्रिफला तथा मिश्रीके चूर्णको मधुके
साथ पीनेसे अथवा अलग अलग लोहभरम या

त्रिफला चूर्ण अथवा मिश्रीके चूर्णको मधु मिलाकर चाटनेसे समस्त प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

गिलोयका रस पीनेसे भी समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

वायविडंग, छोटी हरड़, स्वर्णमाक्षिक भस्म, लोह भस्म तथा रस सिन्दूर और शिलाजीत सम भाग लेकर ४-४ रत्ती लेकर ऊपरसे दूधमें मिश्री डालकर पीनेसे सब प्रकारके प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

बहुफली, कौंचके बीज, शतावर, असगन्ध, पाठा समभाग लेकर इनका चूर्ण करें तथा समभाग मिश्री मिलाकर २-२ तोला प्रातः सायं दूधके साथ लें तो निश्चय ही इस दारुण रोगविसे छुटकारा पाया जा सकता है।

—:आधुनिक मतसे चिकित्सा:—

प्रमेहके जो कारण मैंने ऊपर बताये हैं, आधुनिक मत सर्व प्रथम उन कारणोंको दूर करता है। प्रमेहके उत्पन्न होनेके कारणोंके दूर हो जानेपर प्रमेह रोग स्वयं ही दूर हो जाता है। फिर भी यथा संभव कुछ परीक्षित योग इस प्रकार हैं:—

| | |
|------------------|---------|
| सोडा आर्सेनिक | १ ग्रेन |
| कोडीन | १ ग्रेन |
| एक्स० नक्सवॉमिका | १ ग्रेन |
| „ जंशियन | १ ग्रेन |

इन सब द्रव्योंको मिलाकर एक गोली बना लें ऐसी गोली दिनमें दो तीन बार दें।

| | |
|---------------|----------|
| लिथियम कार्ब | ११ ग्रेन |
| सोडा आर्सेनिक | १ „ |
| एक्स जंशियन | २० ग्रेन |

इसकी पच्चीस गोलियां बनावे। तथा एक एक गोली दो बार दें।

उपरोक्त योग मधुमेहके लिये है।

Gonorrhoea (पूयमेह)

| | |
|-------------|---------|
| ऑयल कोपेबा | १ ड्राम |
| ऑयल सैन्डल | १ „ |
| ऑयल क्यूबेब | १ „ |
| ऑयल सिलेस्ट | १ „ |

इन सबको मिलाकर रख लें। १५-१५ बूंद में तीन बार दूधमें मिलाकर दें।

| | |
|-----------------------|-----------|
| वाल्सम कोपेबा | १० मि० |
| लिकर पोटास | १५ „ |
| स्प्रिट ईथर नाईट्रोसी | १५ „ |
| टि० हाइपो साइमस | २० „ |
| म्यूजीलस अकेशिया | १ ड्राम |
| एक्वा सिनेमन | कुल १ औंस |

ऐसी एक मात्रा दिनमें दो तीन बार दें।

Halmataria (रक्तमेह)

| | |
|------------------|-----------|
| कैलमियम क्लोराइड | २० ग्रेन |
| टि० हेमेलिडस | १५ ग्रेन |
| सिरप औरंशाई | १ ड्राम |
| एक्वा | कुल १ औंस |

ऐसी मात्रा तीन तीन घण्टे बाद दें।

Phosphaturia (स्फुरतमेह या हस्तमेह)

| | |
|----------------------------------|-----------|
| एसिड नाइट्रो हाईड्रो क्लोर ड्रिल | १५ मि० |
| लिकर स्ट्रक्तीन हाईड्रो क्लोर | ३ „ |
| एक्वा | कुल १ औंस |

ऐसी मात्रा दिनमें दो तीन बार दें।

Spermatorrhoea (शुकमेह)

| | |
|----------------|-----------|
| एक्स अरगट नि० | १५ मि० |
| पोटास ब्रोमाइड | २० ग्रेन |
| सोडा बाईकार्ब | १५ ग्रेन |
| टि० बेलाडोना | १० मि० |
| सिरप औरंशाई | १ ड्राम |
| एक्वा | कुल १ औंस |

ऐसी मात्रा प्रातः व रात्रिको सोते समय लें।

इस प्रकार उक्त किसी भी क्रमसे चिकित्सा यह रोग ठीक हो सकता है। इसके लिये किसी प्रकारकी लज्जा नहीं करनी चाहिये। प्रमेह असाध्य नहीं है। जब रोगीको यह रोग ठीक हो व उपद्रव शान्त हो जावे तो रोगीकी चिकित्सा करनी चाहिये।

घरका वैद्य—

नीम

लेखिका—श्रीमती सुमित्रा देवी अग्रवाल “विशारद”

(१) छोटी माता या बड़ी माता निकलनेपर नीमकी पत्तियाँ रोगीकी चारपाईके पास रखनेसे रोगी शान्त हो जाती है।

(२) तिथी बढ़ जानेपर नीमके पत्तोंका चूर्ण खाकर कुछ दिनों तक सेवन करनेसे आराम लगता है।

(३) नीमकी पत्ती और अन्दरकी छालका चूर्ण खाकर तीन माशाकी मात्रामें दिनमें तीन बार गरम पानीसे प्रयोग करनेसे नये या पुराने बुखारमें लाभ होता है।

(४) शीतपित्तमें नीमके पत्तोंका रस आधा तोला रसमें दो बार सेवन करनेसे लाभ होता है।

(५) नीमके सूखे चार फूल गर्म पानीके साथ पीनेसे खानेमें दस्त साफ आते हैं और कब्ज दूर जाता है।

(६) पेचिशमें नीमके पत्तोंका शर्वत बनाकर पीनेसे लाभ होता है।

(७) नीमके पाँचों अंगोंको कूट पीसकर काढ़ा बनाकर दिनमें दो बार नियमित रूपसे प्रयोग करनेसे पेशाब तथा पेशाबकी रुकावटमें लाभ होता है।

(८) नीमकी पत्तियोंका रस शर्वत बनाकर पीनेसे ज्वर हटकारोंका आना रुक जाता है।

(९) सूजनमें नीमके पेड़की अन्दरकी छाल या नीमको गरम करके पानीमें उबालकर सेकनेसे लाभ होता है।

(१०) नीमकी पत्तियोंको उबालकर पीसकर तथा मिलाकर लेपकर देनेसे हर तरहकी गाँठ पक जाती है।

(११) नीमका तेल लगाकर घात, साधन लगाकर

स्नानकर लेनेसे सिरमें पड़े हुये जूँ दूर होजाते हैं।

(१२) नीमका काढ़ा बनाकर धोनेसे सिरकी फुन्सियाँ नष्ट हो जाती हैं।

(१३) नीमका काढ़ा तैल तथा शर्वत लगातार प्रयोग करते रहनेसे खराब खून साफ हो जाता है।

(१४) पुराने घावमें नीमकी पत्तियोंकी पुलटिस बांधनेसे लाभ होता है।

(१५) नीमके पत्तोंके रसमें भुनी हुई हींग और अजवायन मिलाकर प्रयोग करनेसे जलन दूर हो जाती है।

(१६) नीमके फूलमें शक्कर धनियाँ मिलाकर प्रयोग करनेसे जलन दूर हो जाती है।

(१७) भगन्दरमें नीमके तेलकी बत्ती रखकर ऊपरसे उसीकी पट्टी रखनेसे लाभ होता है।

(१८) जिगर बढ़ जानेपर नीमकी पत्तियोंका रस या चूर्ण नियमित रूपसे प्रयोग करनेसे आराम मिलता है।

(१९) यदि फोड़ा फूटकर बहता हो तो उसपर नीमके पत्ते पीसकर शहदमें मिलाकर लगा देनेसे फोड़ेका बहना शीघ्र ही बन्द हो जाता है।

(२०) यदि शरीरमें खुजली हो गई हो तो नीमके पत्तोंको जलाकर उसकी राख मीठे तैलमें मिलाकर लगा देनेसे खुजली शीघ्र ही अच्छी हो जाती है।

(२१) नीमके अन्दरकी जड़को पीसकर मुँहासेमें लगा देनेसे शीघ्र ही आराम मिलता है।

(२२) नीमकी कोमल पत्तियाँ पीसकर मट्टकी तरह मथनेसे उठे हुये भागको शरीरपर मलनेसे जलन

Hysteria योपापस्मार

हिस्टीरिया और इसकी चिकित्सा

लेखक—उपवैद्य हरीशचन्द्र शर्मा गौड़ आयुर्वेदरत्न

यह रोग प्रायः स्त्रियोंको ही होता है। यह कोमल प्रकृति वाली महिलाओंको होता है किसी किसी कोमल स्वभाव वाले पुरुषको भी यह रोग हो जाता है यह रोग प्रायः उन नवयुवती लड़कियोंको होता है जिनकी संभोगकी इच्छा तृप्त नहीं होती, भारत वर्षमें प्रायः १२ वर्षकी अवस्थामें लड़कियां रजस्वला होने लगती हैं और १६ वर्षकी अवस्थामें विवाहके योग्य हो जाती है यदि इस अवस्था तक शादी नहीं हुई तो यह रोग होनेकी पूर्ण सम्भावना रहती है इसके अलावा गौण कारणोंमें शोक, चिन्ता, भय, आकस्मिक मानसिक आघात, पारिवारिक कष्ट, रजोधर्मकी खराबी, अर्जुण से भी यह रोग होता है।

यह एक मानसिक रोग है इसमें एक प्रकारका मानसिक विकार होता है। चरित्र और प्रकृतिमें परिवर्तन हो जाता है परन्तु बुद्धि नष्ट नहीं होती, मनके अन्दर एक प्रकारका वैचित्र्य या विकार उत्पन्न होता है यह रोग प्रायः इन जवान लड़कियोंको होता है जिनके मनमें पूर्ण विश्वास होता है कि हमारी रक्षा करने वाला या सहानुभूति रखने वाला अवश्य है यदि हिस्टीरिया वाले रोगीके मनमें यह विश्वास बैठ जाय कि उसकी रक्षा करने वाला या उसकी सहानुभूति करने वाला अब नहीं है तो उसी समय हिस्टीरिया के लक्षण हो जाते हैं क्योंकि यह मनका रोग है मनमें विचार होते ही यह रोग भूतकी तरह सवार हो जाता है जिन जवान लड़कियोंकी संभोगसे भी इच्छा पूरी नहीं होती उनको भी यह रोग अवश्य होता है, गर्भ गिरना, या किसी भी प्रकारका मनमें विचार करना, अधिक मसालेदार पदार्थ सेवन करना, आदि कारणों से यह रोग पैदा होता है। यह रोग अधिकतर शहरों

की लड़कियोंको होता है क्योंकि वो आये दिन सिनेमा देखती हैं उपन्यास, नाटक पढ़ती हैं देखती हैं। सिनेमा नाटक, देखनेसे उनमें अश्लील चीजें दिखाई जाती हैं और उनमें देखनेसे उनके मनमें विचार गन्दे हो जाते हैं शहरमें मसाले आदिके बने पदार्थ भी खाने को मिलते हैं तथा शाकाहारी भोजन खानेको मिलता नहीं इस कारण यह रोग गांवोंकी अपेक्षा शहरोंमें अधिक होता है बाहर गांवोंमें न तो सिनेमाका साधन होता है न नाटक आदि देखनेका मौका आता है तथा उनको नमकीन मसालेदार पदार्थ भी खानेको नहीं मिलते हैं इस कारण बाहर गांवोंमें यह रोग कम ही पाया जाता है यह चिन्तासे भी अधिक होता है क्योंकि चिन्ता करनेसे मस्तिष्कके ज्ञान तन्तु कमजोर हो जाते हैं इस कारण कोई भी चिन्ता करनेपर तुरन्त ही हिस्टीरिया रोग पैदा हो जाता है, जब यह रोग पैदा हो जाता है तो बाहर गांव वाले इसे भूत लगना, चुडेल लगना, आदि समझते हैं और वो जो रोग है उसको समझने नहीं है और भाड़ा, डोरा, आदिसे उसकी चिकित्सा करवाते हैं। जो लोग शहरमें रहते हैं वो तो इसके लक्षणोंको देखते ही समझ जाते हैं और चिकित्सा करना शुरू कर देते हैं।

लक्षणः—

हिस्टीरियामें प्रायः कोई खास लक्षण होता है इस रोगका सम्बन्ध मस्तिष्कसे है। इस रोगमें सब रोगियों को एक-से लक्षण नहीं होते सबमें भिन्न-भिन्न लक्षण होते हैं इस रोगमें किसी भी इन्द्रियमें विकार पैदा हो सकता है, इस रोगका प्रधान लक्षण बेहोशीका दौरा या मूर्च्छा है यह दौरा कभी कभी २४ से ४८ घण्टे तक निरन्तर होता देखा गया है इस रोगमें पिर्गीकी तरह

मुँहसे भाग आता है परन्तु शरीरका नीलापन व पुत-
लिया नहीं फैलती हैं। मृगी रोगकी भाँति एकदम
अज्ञान अवस्था नहीं होती वरन् कुछ न कुछ ज्ञान बना
रहता है बहुतसे रोगियोंको मूर्च्छा भी हो जाती है।

दिमाग ज्ञान और चैतन्यताका केन्द्र है। दिमागकी
गड़बड़ीके कारण ज्ञानेन्द्रियोंमें गड़बड़ी पैदा होती है
इस रोगमें रोगी बकने लगता है किसी अंगपर आघात
करनेसे वेदनाका अनुभव करता है। उसे शीत तथा
उष्णताका ज्ञान नहीं रहता है वेग आनेका भी ज्ञान नहीं
रहता है, नेत्र चढ़े हुए लालिमा युक्त हो जाते हैं अंग-
ढाई आना, हाथ-पैरोंमें वेदना होना, हँसना, रोना,
चिल्लाना, हाथ, पैर पटकना, पेटमें वायु जैसा गोला
उठना, और उसका गलेमें अटक जाना, मुँहसे कोई
शब्द नहीं निकलना, शरीर ऐंठने लगता है, दांतोंका
कटकटाना, दांतोंका बैठ जाना, वस्त्र फाड़ना, घरके सामान
को नष्ट भ्रष्ट करना, उठकर भागना, शिरधुनना आदि
इसमें लक्षण होते हैं। यह रोग १६ से ४० वर्षकी अव-
स्था तक होता है बादमें नहीं होता है।

चिकित्सा:—

मूर्च्छाको शान्त करनेके लिये कट्फल नस्य देना

चाहिए।

मांस्यादि क्वाथ— जटामांसी १ तोला, अ-
श्माशा, खुरासानी अजवायन २-३ माशाको ले-
कर जल पकावे अष्टमांश शेष रहनेपर छानकर पिल-
वाये।

सेवनार्थ दशमूलारिष्ट, अश्वगन्धारिष्ट, सा-
तारिष्ट, लीलाविलास रस, मकरध्वज, आदि
धियाँ लाभदायक हैं।

अपतंत्रकादि वटी, इसमें प्याजका रस या आन-
घोटकर देना लाभदायक है।

Allopathic Injection.

1. Atropinsulph $\frac{1}{100}$ Grain to $\frac{1}{1000}$

2. Morphin यह नींद लाता है।

यदि रोगिणी दुर्बल हो तो मार्फिनके प्रान्तोंमें
एट्रोपीनका मिश्रण करके प्रयोगमें लेना चाहिये। कोटा, प-

बच्चोंको सदासे ही ऐसी शिक्षा देना चाहिए कि वे
आगे जाकर कायर न हों तथा जिन औरतोंको तथा मध-
रिया हो उनको चिन्ता जनक, भय वाली बातें वर्षा ऋ-
कहनी चाहिए क्योंकि भय करनेसे शीघ्र ही दीर्घ औ-
की सम्भावना रहती है। क्योंकि यह मानसिक रोगके
अंग वि-
हुए नार-

पूर्णचन्द्रोदय रस (सिद्ध मकरध्वज)

इस पूर्ण चन्द्रोदयमें शास्त्र विधिसे संस्कारित तथा गन्धक जाचित पारद उ-
योगमें लिया गया है। इस चन्द्रोदयके सेवनसे वात और कफ प्रकृति वालों
शास्त्रकथित पूरा-पूरा लाभ मिलता है। यह चन्द्रोदय उत्तम हृदय पौष्टिक,
कर, विषघ्न, कीटाणुनाशक और रसायन (वृद्धावस्थाकी निर्बलताको दूरकर
युवावस्थाके समान शक्तिप्रद) है। शारीरिक निर्बलता, मानसिक निर्बलता, शक्ति
क्षीणता, ध्वास, कास, क्षय, अपस्मार, विषविकार, जीर्णज्वर, पाण्डु आदि जो
रोगोंसे पीड़ितोंके लिए अमृतके समान उपकारक है।

मूल्य—१ ग्राम १०-१५।

स्नायुरोग पर अनुभूत चिकित्सा

लेखक—वैद्य श्री मोहन लालजी सहल-नवलगढ़

नेहरु रोग कितना भयंकर है इसको किसान लोग आनूप देशवासी इस रोगसे पीड़ित व्यक्ति ही जान सकते हैं। वैसे तो यह रोग गरीब अमीर सभीको हो सकता है, परन्तु अधिक ग्रामीण गरीब जनतामें ही देखा गया है।

इसके उत्पत्ति स्थानः—आनूप देशोंमें तथा राजस्थानके उदयपुर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा, जोधपुर आदि प्रान्तोंमें व्यापक रूपसे तथा चित्तोड़गढ़, भीलवाड़ा, कोटा, पाली, नागौर, जैसलमेर, भालावाड़ा, अजमेर, टोंक, शीकर, मुंभनू, चूरु और बीकानेर आदि क्षेत्रोंमें, तथा मध्यप्रदेश और पञ्जाबके कतिपय क्षेत्रोंमें प्रति वर्ष वर्षा ऋतुमें इस रोगका प्रकोप होता है।

और हमारे लाखों ग्रामीण बन्धु इस भीषण रोगके चंगुलमें फंस जाते हैं। जिनमेंसे अनेकोंके तो अंग विकृत हो जाते हैं और अधिकांश खाटमें पड़े हुए नारकीय यन्त्रणाएँ भोगते हैं।

किसान बन्धुओंके लिए एक ओर तो फसलका समय आता है। और दूसरी ओर उनका परम शत्रु नेहरु रोग उन्हें खाटमें पड़नेको विवश करता है।

यह रोग कितना पाजी होता है, केवल भुक्त भोगी ही जान सकता है। देखने वालों तकका जी मिचलाता है। सुदूर देशोंमें भी यह रोग इन्डोनेशिया, सेण्ट्रल अफ्रिका, इजिप्ट परशिया और ब्रेजिल आदि देशोंमें व्यापक रूपसे होता है।

निदानः—यह रोग वर्षा ऋतुमें गन्दे तालाबों व पोखरों आदिका पानी पीनेसे होता है।

इस पानीमें इस रोगके कीटाणुओंके अण्डे रहते हैं। जो रक्त संचारमें आकर विशेष कर हाथ पांव आखाओंमें स्नायुके रूपमें अपना जमाव देते हैं।

गन्दा पानी वर्षा ऋतुके दूषित तालाब और नदियोंका पानी इस रोगका मुख्य कारण है।

कब्जी रहना पेट साफ न रहना दूषित मल और दोष ये भी इसके सहायक कारण हैं।

गन्दे पानीसे नेहरु रोगके बढ़ने और प्रगट होनेमें सहायता मिलती है। जिससे यह वर्षाके आरम्भमें ही प्रगट होकर अक्टूबरके अन्ततक समाप्त हो जाता है।

अनेक वर्षोंकी निरन्तर खोजके पश्चात् आयुर्वेदिक संस्था आयुर्वेद चमत्कार भवन नवलगढ़ (राजस्थान) ने पता लगाया है कि न्हारूका उत्पत्ति काल केवल माघ मास है। और उसमें भी एक निश्चित तिथि माघ कृष्ण ७ सप्तमी है। इस रोगका बीजारोपण इसी दिन होता है और वर्षाके गन्दे पानीके सहयोगसे यह कृमि बढ़ता है और प्रगट होता है।

उपशयानुपशयसे निदान कर यह बात जानी गई है। इसका पुष्ट प्रमाण यह है कि पूरे माघ मास तक उक्त संस्था द्वारा आविष्कृत न्हारू निरोधक आयुर्वेदिक चमत्कारी दवा न्हारूकी वीमा नामकके सेवनके बाद निःसन्देह इस रोगकी उत्पत्ति ही रुक जाती है।

न्हारूके पूर्वरूप और लक्षण—प्रथम सनफे चलती हैं फिर शोथ एक जगह उठता है कुछ खुजली चलती है। इस पूर्वरूपावस्थाकी उपेक्षा कर देनेके बाद और अपथ्य सेवन करनेसे शोथमें भयंकर वेदना शुरू हो जाती है। हाथ या पांवमें शोथ और वेदनाओंसे व्याप्त हो जाते हैं। रोगीको चैन नहीं पड़ता।

सौत्रिक तन्तुओंमें यह कृमि प्रवेश कर तदाकार संकोच प्रसार करता है। अतः रोगीको वेदना होती है।

धीरे धीरे इसका विष शोथको एक जगह पका देता है। और फुन्सी-सी बनाकर मुख कर लेता है निकलना चाहता है। कई प्रकारके सिकताव और वातनाशक पट्टे बान्धनेसे यह रोग शान्त नहीं होता।

रोगी व अनजान वैद्य वायुकी वेदना ही समझता रहता है।

वास्तवमें यह जल जन्तु सूक्ष्म किमिके रूपमें प्रविष्ट होकर स्नायुमें प्रविष्टकर तदाकार हो जाता है। इसलिए जब यह शोथ एक देश विशेषमें फुन्सीके रूपमें फूटकर निकलता है तब शनैः शनैः निकलनेसे रोगीको चैन पड़ता है।

इसकी शल्य क्रियासे भी चिकित्सा होती है। स्नायु निकाल देनेपर यह रोग शान्त हो जाता है।

बहुतसे डाक्टर इन्जेक्शन देकर भीतर ही इस रोगको ठीक करना चाहते हैं। कुछ सफल भी होते हैं।

परन्तु इस रोगकी उत्पत्तिसे पहले ही, यदि उक्त संस्थाकी दवा सेवन की जावे तो पेटकी सफाई होकर ऐसी शुद्धि हो जाती है कि इस रोगके किमि व उसके अण्डे पनप ही नहीं सकते। यह संस्थाका दावा है।

आयुर्वेदिक विभाग राजस्थान अपने पत्र संख्या एक ३-२२ (१) ५७/१४९७० दिनांक ३१/१२/५७ द्वारा उक्त दवाकी सफलताके ६० प्रतिशत अंशको स्वीकार भी कर चुका है। यह हमारी रिसर्च चल रही है कभी जनताके हितार्थ पूर्ण सफलता होनेपर हम इसे प्रकाशित भी करेंगे। इसके अतिरिक्त अन्य अनुभूत चिकित्सा भी सफल सिद्ध हुई है।

१. हींग २ रत्ती रससिन्दूर १ रत्ती गुड़में गोली बनाकर गरम जलसे लेवें। सिर्फ साबुत मूंग उबालकर खावें गरम पानी पीवें और गरम जलसे ही स्नान करें। १० दिनमें नेहरु जड मूलसे चला जाता है। यदि एक दिन उपवास कर लिया जावे तो प्रथम दिनमें पीड़ा शान्त होजाती है।

२. सांपकी कांचली (सर्प कंचुकी) २ रत्ती, गुड़ ४ रत्ती सुबह शाम गोली लेनेसे भी ५ दिनमें नेहरु शान्त हो जाता है। इस गोलीको घी से सेवन करें उपरोक्त मात्राकी दो गोली बनाकर एक टाइम गोली

निगलकर ऊपरसे गरम ५- एक छटांक घी पी रोग शान्त हो जाता है। पथ्य चावल या मूंग है।

३. अर्कवटी-आकड़ेकी फूली, कालीमिर्च को नोसादर समान भाग लें गुड़में गोली २ रत्तीकी बनाकर चार-चार गोली गरम पानी पीनेसे तथा भ्रूके उपवाससे नेहरुका जोर मिट जाता है।

शृङ्गिक विषको पानीमें पीसकर हल्का-सा करनेसे शोथ और पीड़ा शान्त होते हैं।

यह चिकित्सा अनुभव करके देखने लायक उपरोक्त नेहरुशमनी गोली जिसकी कीमत १० गोलीकी (१०) रुपैया है।) माघ मासमें या वर्षासे सेवनसे नेहरुके होनेका भय मिट जाता है। गो बहुत परिश्रम और खर्च करनेसे प्राप्त हुई है। फिर सेवार्थ थोड़ी कीमत रखी है। कोई हमारा व्यवसाय या विज्ञापन नहीं है। यदि कोई सामयिक ल उठालेवें तो आविष्कारकर्त्ता अपना परिश्रम समझेंगे।



कुमार कल्याण रस

बालकों को स्वस्थ और सबल बनाता है।

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद

कालिका कृष्ण गोपाल (अजमेर)

कमजोरीका इलाज

लेखक—सीतारामजी जोशी

आजकल कमजोरीकी दवा सही चाहते हैं जो कोई वैद्यजीको देख लेता है या रास्ते चलते भी मिल जाता है तो दीन होकर कह देता है वैद्यजी महाराज कोई ताकतकी दवा दीजिए वैद्यजी भी उसकी दीनता भरी आवाजसे दयाद्र होकर कह देते हैं, देंगे फुरसतसे निदानकर अच्छी दवा देंगे। फिर वह यह भी कह देता है कि दवा कीमती न हो और परहेज भी मुझसे पालन नहीं हो सकेगा।

वैद्यजी उस युवककी जिसकी आयु २२ वर्षकी है, जिसके इतनी उमरमें तीन बच्चे हो चुके हैं, शरीरसे कृश और बलमें निर्बल है, कमजोरीका कारण असं-यम और पौष्टिक आहारका न मिलना समझकर उसे निम्न लिखित प्रयोग लिख देते हैं। और अपने औष-धालयसे तथा फार्मेशीसे लेनेकी आज्ञा दे देते हैं।

वैद्यजीने एकान्तमें सब बातें पूछी, और निदान-कर व्यवस्था की।

सुबह सायं स्वर्णवंग १ रत्ती, प्रवाल २ रत्ती, शिला-जीत ३ रत्ती, जावित्री जायफल चूर्ण चार-चार रत्ती, लोहेबानके फूल १ रत्ती, भीमसेनी कर्पूर १ रत्ती, अहिफेन सत्व १ रत्ती, सबको घोटकर दो मात्रा बना कर एक तोला शहदसे चाटकर ऊपरसे दूध पीलें।

पथ्य सुबह दहीकी मलाई, चावल और बूरा डालकर खावे। रात्रिभोजनमें दूध और चावल पेट भर जितनी जिसकी आहार मात्रा हो लेवें।

इस रोगीकी कमजोरीका कारण वैद्यजीने पूछकर दर्शन, स्पर्शनसे यह जाना कि व्यक्ति सभ्य है, शिक्षित है, मास्टर है, स्वास्थ्य विज्ञान पढानेवाला टीचर भी है फिर यह कमजोरी क्यों ?

उसका कारण—प्रकृतिका परिणाम ही है।

मास्टरने स्वयं कहा कि मैं काफी संयम रखता हूँ फिर भी डायरीके हिसाबसे मैंने दिन रात्रि चर्याको देखा और तीन सालका हिसाब लगाया तो प्रतिदिन एक ली सहवास तो अवश्य ही मेरेसे बन गया।

कभी संयम पाला तो कभी संख्या वृद्धि हो गई क्या कहूँ, वैद्यजी ! अग्नि और घृतका संयोग ही बुरा है। संयम रखनेका यह विचार मेरा एक बुरा

है, कि शपथ ले लूँ। पान्तु संयम न बननेसे कमजोरी अधिक आ गई।

उधर मुझे विषम आहार भी रहा। सुबह ८ बजे जाना १ बजे आना, आकर भोजन करना उस समय भोजनका अति काल होता रहा, उधर मेरी अग्नि मन्द होते-होते बहुत कमजोर हो गई, अब हजम भी नहीं होता और पढाते समय माथा भी काम नहीं करता।

वैद्यजीने इस शिक्षित पुरुषकी चिकित्सा की। एक सप्ताह औषधि ली कुछ फायदा नहीं हुआ। वैद्यजी उसके लिए अच्छी से अच्छी चिकित्सा सोची थी।

इसके बाद मास्टरजी कमजोरीकी दवा समाप्तकर डाक्टरजी के पास पहुँचे।

यही सब हाल उनको सुनाया। उन्होंने विटामिन्सके प्रयोग कुछ मत्स्यतैल, केले, दूध बताये। फ्रूट खानेको कहा। १५ दिन लेनेके बाद वहांसे भी निराश हुए।

न कमजोरीमें फायदा हुआ, न भूखमें कोई सुधार हुआ। शक्ति व्यवयशक्तिमें भी और कमजोरी प्रतीत हुई, दवाओंकी विषमता विभिन्न औषधोपचार और विभिन्न पथ्यसे अग्नि मन्द हो गया।

वैद्यजीने चावल दहीकी मलाई दूध पथ्य बताया तो डा. जीने केले, दूध, फ्रूट द्रवांश भोजन बताया व मात्रा गुरु हो गया।

इस प्रकार कहीं मात्रा गुरु, कभी स्वभाव गुरु कभी अकाल भोजनसे रोगी ठीक न हो सका।

इसका कारण क्या है ?

इसका कारण रोग ठीक न होनेका कारण अच्छे दवा और संयम पालनेपर भी दुर्बलता दूर न होने व वजह जल्द बाजी है।

रोगी दो चार दिन या एक सप्ताह संयम पाल तब वह यह समझने लगता है मैंने बहुत संयम पाल लिया, और एक दो सप्ताह दवा लेनेके बाद कुछ विशेष लाभ न होनेपर वह वैद्य और दवा दोनोंको निःसह समझ लेता है।—

वास्तवमें इसमें कालसाध्य प्रयोग व अभ्यास वास्ती नहीं है। चरक आदेश देते हैं कि कमजोरी

मनुष्योंको संतर्पण और सन्तर्पणजन्य व्याधियोंसे
प्रतर्पण (लंघन) चिकित्सा करनी चाहिये।

पर सन्तर्पण भी दो तरहका है—एक तरफका
काम उठाने वाला आशुशक्तिवादी। दूसरा देरसे
प्रस्थाय करते करते फायदा करने वाला—

तेषां सन्तर्पणं तत्तैः पुनराख्यातमौषधम्।

यत्तदाग्ने समर्थस्याप्युपस्थाय वा यद्विध्यते॥

अथः क्षीणो हि सद्यो वै तर्पणेनोपचर्यते।

नतं सन्तर्पणाभ्यासाच्च क्षीणस्तु पुष्यति॥३॥

देहाग्निदोषभैषज्यआवाकालानु तिला।

कार्यमत्वरमाणेन भेषजं चिदुर्वले॥

च० सु० २३ अ०

दुर्बलता दूर करनेके दो प्रकार हैं एक तो शीघ्र-
तासे कमजोरी दूर की जावे, और दूसरा धीरे धीरे
प्रस्थाय करते करते पौष्टिक औषध अन्न विहार तीनोंके
उत्तम योगसे दुर्बलता मिटाई जावे।

दोनों ही उपाय हैं। परंतु कौन व्यक्ति ऐसा है जो
अपनी कमजोरी धीरे धीरे मिटाना चाहे।

सभी जल्दीसे जल्दी मिटाना पसन्द करते हैं।
रुटपट काम बन जावे, हम फिर माटे तगड़े हो जावें,
भोग भोगें। यही इच्छा सबकी रहती है।

बहुतसे अपदू डेट लोग तो प्रतिदिन दर्पणमें अपना
मुख देख लेते हैं और अपना गुरुत्व तोल कर
सन्तोष करते हैं। ठीक है सभीको शीघ्रता चाहिये।
पर इधर दूधका कप मुंहमें लगाये घूंट भरते जाते हैं
साथ ही दर्पणमें मुख देखते जाते हैं कि इस कपके
दूधसे मेरे चेहरेपर सुखी कितनी आ गई। दूध पीते
जाना जैसे माता दूध पिलाती जाती है बच्चेकी
शेखा बढ़ती जाती है बेटा दूध पीओ बोटो बढ जावेगी
इतनी शीघ्रतासे पुष्टि होना, और कमजोरी देखते देखते
मिटना इसी तरहकी शीघ्रता तो अदृष्टके बिना देखने
में नहीं आई, और न आशा ही करनी चाहिये।

शास्त्रका भाव यह है कि देरसे धीरे धीरे उत्पन्न
हुई कमजोरी धीरे धीरे ही मिटती है और यदि कोई
प्रकारका बीमार पड़ जावे, उग्रसे दो सप्ताहमें कम-
जोरी होजावे तो वह फिर शीघ्र बलवान बन सकेगा।
पर वर्षोंकी कमजोरी वर्षोंसे ही मिटती है शरीर शरीर

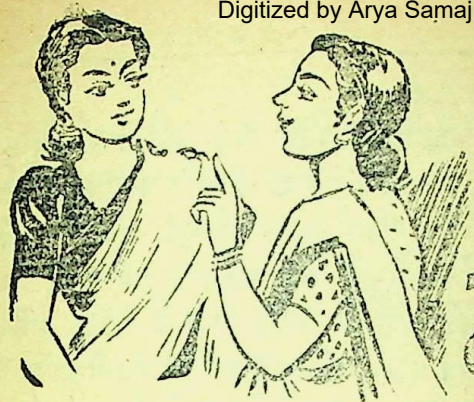
क्षीण हुआ मनुष्य तो महीनों तक दवा लेगा और
महीनोंतक ही पथ्यसे रहेगा तभी धीरे धीरे ही
उसकी बीमारी या दुर्बलता दूर हो सकती है।

इसलिए बहुत दिनोंके क्षीण मनुष्यको दुर्बलता
मिटानी हो तो, रेह, अग्नि, दोष, देशकाल इन सब
बातोंका ध्यान रखकर संतोष रखकर दवा करनी
चाहिये। शीघ्रता चाहनेसे कुछ नहीं होगा।

सांगीश यह है कि जल्दी क्षीण हुआ मनुष्य पुष्ट
भी जल्दी ही हो जाता है। और जिसके वर्षोंसे आग्नि-
मांस रोम व धातुक्षय चल रहा हो वह यदि जल्दी
करे तो कैसे ठीक होगा। धीरे धीरे ही अग्नि प्रबल
होगा, धीरे धीरे ही मज्जाकी शुद्धि होगी और धीरे धीरे
ही रस रक्तादि नवीन धातु उत्पन्न होंगे। इसलिए
मास्टरजी सभ्य थे, संयमी थे, पर प्रतिदिन क्षीण होते
होते क्षीण हो गये। इनको कमजोरी भी धीरे धीरे ही
इलाज करके मिटानी चाहिये। जल्दी क्षीण जल्दी
पुष्ट होजाता है। देरसे क्षीण देरसे। जैसे एकादशके
दिन एक उपवास करते हैं और चेहरा सुखा जाता है
वैसे ही दूसरे दिन भोजन कर लेते हैं। पर कमजोरी
दूर हो जाती है। वैसे ही सद्यः क्षीण सद्यः पुष्ट हो
जाता है। और यदि एक मासका उपवास चले उससे
क्षीण हो जावे तो एक सप्ताहकी चिकित्साके बिना
तो रक्तका संचार ही ठीक न होने पावे। धीरे धीरे
ही उसकी अग्नि मन्द हुई शीत होगी।

वह यदि जल्दी धरे और पेट भर गया तो
तत्काल मर जावेगा। कारण अग्नि धीरे धीरे ही
बढ़ता है। एक दम अति भोजनसे प्राण वायुको थका
लगकर (हृदयस्थ वायुका वेग बढकर) प्राणवह
स्रोत फट जावेगे और शीघ्र ही मृत्यु हो जावेगी।

इसलिए कई महीनोंकी कमजोरी धीरे धीरे ही
मिटती है। शीघ्रतासे मिटानेकी चेष्टा करनेसे फायदेके
स्थानपर हानि होती है अतः मनुष्य अपनी कमजोरी
मिटानेके लिए पौष्टिक औषध भी बहुत दिनों तक
सेवन करे ऐसे ही पौष्टिक आहार भी निरन्तर सेवन
करता रहे। तथा धीरे धीरे उपायामका भा. अभ्यास
बढावे। एवं कमशः पौष्टिक औषध, अन्न और विहार
के अभ्याससे दुर्बलता मिट जाती है।



महिला-जगत्

स्त्री रोग (नारीलोक पर एक विचार)

लेखिका:—श्री रामकन्या देवी श्रोत्रिया भिषगानार्य (प्र. व.) राजकीय आयुर्वेद महा विद्यालय उदयपुर

वर्तमान युगके नारी लोकपर एक विचार उत्पन्न हुआ और उस दुःख दृष्ट स्मृतिने (रोग जुष्ट स्त्रियोंकी) मेरी लेखनीको कुछ लिखनेको बाध्य कर दिया कि क्या कारण है आज नारी समाज ऐसे भयंकर स्त्री रोगोंसे व्याप्त है। जिसने प्राकृतिक सौन्दर्यको समाप्त कर कृत्रिमताके साधन प्रचुर मात्रामें आविष्कृत कर दिये। जैसे आरोग्यताका सुप्रभात भूलकर भी इधर आया ही न हो और अंधवारका ही बोल बाला हो आखिर वे ीतसे स्त्री रोग हैं जिनका वर्णन आयुर्वेदके महर्षि चरक सुश्रुतने और आधुनिक पाश्चात्य स्त्री रोगके चिकित्सा शास्त्रमें भी स्त्री रोग सूचक शब्दसे प्रयुक्त हुए हैं, ऐसे रोगोंका अवबोधन रोगोंका संक्षेपमें कारण लक्षण आदि भी हम समझ सकें ता सुज्ञात होगा कि सबसे मुख्य रोग जो कि आजकल यत्र तत्र सर्वत्र स्त्री समाजमें ९९ प्रतिशत व्याप्त है उनकी सूची निम्न है।

- (१) ल्यूकोरिया Leucorrhoea श्वेत प्रदर
- (२) डिस्मेनोरिया Dysmenorrhoea कटारतव
- (३) मेनोरेजिया Menorrhagia रक्तप्रदर
- (४) मेट्रोरेजिया Metrorrhagia अनियमित आर्तव

(५) एमिनोरिया Amenorrhoea नष्टातव
उपरोक्त सूचीके प्रथम रोगको आयुर्वेदमें श्वेतप्रदर कहा है। इस रोगमें योनिमें पूरक विह्वल श्वेतस्राव निकलता है। क्योंकि ११ कारणोंका अवबोधन करने पर यह रोग प्रायः यौगन्मा (कटारतव) के समान ही होता है।

नेच्छा प्रबल होते समय और आर्तव कालके पूर्व पश्चात् होता है। वे स्त्रियां जो अत्यधिक अम्ल पदार्थों खटाई तैलमें तले हुए वस्त्रोंके चरपरे पदार्थ खाती एवं फिर गन्धे उपन्यास पढ़ती हैं कामुक भावना पृथिनिमा देखना रात दिन खराब सहेलियोंके संग रहकर अपनी भावनाओंको दूषित करती हैं उनमें यह रोग बहुलतासे पाया जाता है।

इसके अतिरिक्त अच्छी भावना वाली स्त्रियों अत्यधिक प्रसव तथा उपसर्ग दीर्घत्व रक्ताल्पता के बद्धता आदि होनेपर भी यह रोग उनमें होता देख गया है।

(२) डिस्मेनोरिया (Dysmenorrhoea) इसे कटारतव कहते हैं। तथा इस रोगमें मासिक धर्मके समय तथा उसके ५-६ दिन पहलेसे कटारतव तथा गर्भाशय पीड़ा होता है, इस रोगके लक्षण महर्षि सुश्रुतने अष्टांगसंहितामें कौमार्य श्रुत्यके वर्णनके बाद विशाखो ने व्यापक रोगोंमें उदावर्तके साथ मिलते हैं "यथा कालेनिलुदावर्त रजः कृच्छ्रेण मुञ्चति" के समान मिलते हैं।

कटारतव हेतु—

- (१) गर्भाशय शोथ (२) गर्भाशय उद्वेग (Spasm)
- (३) व्याधिसामा (४) गर्भाशय प्राक् संकोच (Stenosis)
- (५) गर्भाशयिक निर्मोच, (Cast)

(३) मेनोरेजिया (Menorrhagia) आर्तव

(४) मेट्रोरेजिया (Metrorrhagia) अनियमित

किसी भी समय कम या अधिक रक्तस्राव होनेको मेट्रोरेजिया कहते हैं।

इसीको आयुर्वेदमें अस्तृग्दर कहा है। यथा सुश्रुते शा० अ० २ में

तदेवातिप्रसंगेन प्रवृत्तमनृतावपि ।

अस्तृग्दरं विजानीयादतो न्यद्रक्तलक्षणात् ॥

कारण कि इस रोगमें स्त्रियोंका रक्त अधिक मात्रामें नष्ट होता है अतः इसे अस्तृग्दर कहा है। अस्तृग् दीर्यते यस्मिन्निति अस्तृग्दरः यदि अधिक पीड़ाके साथ गर्भाशयसे रक्तस्रावका होना गर्भपातका सूचक होता है। मध्यमावस्थाकी आयुके पश्चात् स्त्रियोंके गर्भाशयसे रक्तस्राव होता है तो गर्भाशयके घातक अर्बुदकी संभावना होती है।

कारण-शारीरिक (Physiological)

(१) स्थूल प्रकृति मानसिक श्रम दीर्घधात्री काल रजोनिवृत्ति (Meno pause) के समय तथा प्रसवके पश्चात् गर्भाशयका कम होकर अपने पूर्ण स्वरूप पर नहीं पहुँचना आदिः—

(२) अन्तःस्रावी (Endocrine) ग्रन्थियोंकी विकृति बीजकोष (Ovary) तथा पीयूष ग्रन्थि (Pituitary) के स्रावोंका असम तौल।

(३) गर्भाशयकी विकृतियाँ, गर्भाशयका सिरागत रक्तधिक्य, सूत्रार्बुद, मांसांकुर, घातकार्बुद, (Malignant tumour)

(४) अन्य कारण, विशिष्टज्वर रक्तकेरोग, बहिर्गर्भाशय गर्भ,

(५) एमिनोरोया (Amenorrhoea) इसे नष्टार्तव कहते हैं।

इस अवस्थामें आर्तव नहीं होता है, या प्रारम्भ होकर बन्द हो जाता है। आर्तव दर्शन (Menstruation) और अनार्तव या आर्तवादर्शन (Amenorrhoea) ये दोनों स्त्रियोंके शरीरके स्वाभाविक धर्म हैं। किंतु जब ये दोनों अपने उचित समयपर नहीं होते हैं तब विकृति समझी जाती है। इसके तीन मुख्य भेद हैं। अनार्तव स्त्रियोंमें १२ वर्षकी आयुसे ५० वर्षकी आयु तक प्रविष्टा

उक्तं यथाः—

तद्वर्षाद् द्वादशास्काले वर्तमानमस्तृक् पुनः ।

जरापक्व शरीराणां याति पञ्चाशतः क्षयम् ॥

इस प्रकार बारह वर्ष पूर्व तथा ५० वर्ष बाद जो आर्तवादर्शन है वह स्वाभाविक होता है। कभी कभी आर्तव दर्शनके योग्य कालके कई वर्षोंके पश्चात् आर्तव दर्शन होता है इसे कालातीत या विलम्बित (Delayed) अनार्तव कहते हैं।

यह अवस्था प्रायः रक्तक्षय राजयक्ष्मा तथा अन्य शरीर शोषक रोगोंके कारण या गर्भाशय तथा बीजकोश (Ovary) के देरसे परिपक्व होनेके कारण उत्पन्न होती है। स्त्री विवाहिता हो तो आर्तव दर्शन पूर्व भी गर्भ धारण हो सकता है। कभी कभी गर्भाशय तथा बीजकोश दोनों ही सदाके लिये अपरिपक्व रह जाते हैं, जिससे स्त्रीमें आर्तव दर्शन कभी कभी नहीं होता इस अवस्थाको स्थायी (Permanent) अनार्तव कहते हैं।

विलम्बित और स्थायी प्रकार विकृतिके सूचक नष्टार्तव इस रोगसे आक्रान्तयुवतियोंमें इसके पूर्व नियमित आर्तव होता रहता है। इसको औपद्रविक कहते हैं सगर्भावस्था और प्रसूतावस्था इसके स्वाभाविक कारण हैं। यथा चरके—

आर्तवादर्शनमास्यसंस्त्रवणमनन्नाभिलाषः इति पर्यागते रूपाणि भवन्ति,

किंतु इन उपरोक्त अवस्थाओंमें भी कहीं कहीं रक्तस्राव होता है रक्तक्षय राजयक्ष्मा, मधुमेह, दुष्टार्बुद शरीरको क्षीण करनेवाले अन्यविकार, ठंड लगना मस्तिष्कार्बुद, उन्माद, तथा अन्य मानसिक विकार इसके वैकारिक कारण हैं।

आवृत्तार्तव—इसमें योग्य आयुके अन्दर आर्तव स्राव प्रारम्भ होता है। किंतु बाहर निकलनेका अवरोध होनेके कारण आर्तव रक्त अन्दर ही आवृत या प्रच्छन्न रहता है, अतः इस प्रकारकी अवस्थाको आवृत्तार्तव कहते हैं यह अवरोध गर्भाशय की गर्भाशयिका न होना (Imperforate Cervix) योनि मार्गाभाव (Absence of vagina) या द्वार न होना (Amenorrhoea) कहते हैं।

कारणोंसे होता है। और इन कारणोंवाला आवृत्तार्तव अधिक देखनेमें आता है। कभी कभी शस्त्रकर्मके या आघातके कारण गर्भाशय या योनिमुख बन्द हो जाता है, परन्तु ऐसे उदाहरण कम ही दिखाई देते हैं। आवृत्तार्तवमें मासिक धर्मके समय सिर दर्द श्रोणिमें पीड़ा, बैचेनी इत्यादि लक्षण होते हैं, परन्तु योनि द्वारसे शोणित स्राव नहीं होता है।

नीणार्तव (Oligomenorrhoea) भी एक पृथक् शब्द आता है। किन्तु यह नष्टार्तवके समान ही है। ये दोनों अवस्थाएं तर, तम भेदसे ही हैं। कुछ ग्रन्थोंमें (Amenorrhoea) एमिनोरीयाके दो भेद किये हैं।

(१) मिथ्या नष्टार्तव (Pseudo Amenorrhoea)

(२) वास्तविक नष्टार्तव (Actual Amenorrhoea) प्रथममें स्राव बाहर नहीं निकलता है किन्तु गर्भाशयके अन्दर ही स्राव होता है, कारण, कुमारी-च्छदका नहीं फटना गर्भाशय ग्रीवा और भगका (Cervix and Vagina) का बन्द होना या उनमें व्रण वस्तु (Scar) के कारण रक्तके बहिर्निर्गमनमें बाधा होती है। द्वितीयः—इसमें प्रथम स्राव होता है किन्तु बादमें निम्न संस्थानोंमें विकृति होनेसे बन्द होजाता है।

प्रजनन संस्थानमेंः—(१) गर्भाशय तथा बीज ग्रन्थिकी अनुपस्थिति या शस्त्रकर्म द्वारा उनको निकाल देना।

- (२) बीजग्रन्थिकी वृद्धि
- (३) गर्भशयान्तस्तरकी वृद्धि
- (४) शोथ
- (५) नववृद्धि (Newgrowth)
- (६) रेडियमके प्रभावके कारण
- (७) गर्भाधानके कारण

रक्तवह संस्थानः—(Circulatory System) रक्तकी कमीके रोग जैसे पाण्डु रक्तस्राव क्षय उजर आक्षेप।

मस्तिष्क संस्थानः—(Nervous System) ज्ञान तंतुओंपर सहसा प्रभाव डालनेवाले रोग या दशा आर्तवको नष्ट करते हैं। अतः इस प्रकारके नष्टार्तवको।

(Reflex Amenorrhoea) कहते हैं जैसे सहसा शीत लग जाना, बर्फ पीना, शीतल स्नान, आदि कुछ काल बाद यह एमिनोरीया ठीक हो जाता है। अनेक मानसिक आघात स्थायी या अस्थायी एमिनोरीया (नष्टार्तव) को उत्पन्न करते हैं। Symphathalic Amenorrhoea) इसमें स्त्री अपनेको गर्भवती समझती है। या जिनमें आर्तव विनाशकी स्थिति हो जाती है उनमें यह हुआ करता है निःस्रोतस ग्रन्थियां, प्रजनन संस्थानकी वृद्धिमें गड़बड़ी होनेसे मासिक धर्मके क्रमके ठीक होनेपर भी निःस्रोतस ग्रन्थि या इनके प्रबन्धमें गड़बड़ी कर देती है, जिससे नष्टार्तव उत्पन्न हो जाता है।

२. बीजग्रन्थिकी अनुपस्थिति या उसके अन्तःस्राव की कमी या अभावसे गर्भाशय नहीं बढ़ता है, जिससे आर्तव नहीं होता है।

(३) यदि मासिक धर्म प्रारंभ होनेके पश्चात् बीज ग्रन्थि निकाल दी जाय, या उसके कार्यमें कमी हो जाय, तो वह मासिक स्रावको क्रमशः अदृष्ट कर देती है।

(४) अवटुका ग्रन्थि (Thyroid) के स्रावकी कमीसे भी नष्टार्तव उत्पन्न होजाता है।

आर्तवक्षय—(Meno pouse) यह अवस्था ४० से ५० वर्षके अन्दर आती है किन्तु प्रायः ४५ से ५० के भीतर अधिक होती है। इस दशामें आर्तव बिल्कुल बन्द हो जाता है। तथा गर्भ धारण शक्तिका हास हो जाता है रजःस्राव जल्दी प्रारंभ होनेसे मेनोपोज (Meno Pouse) भी जल्दी होता है।

कारण—बीज ग्रन्थिकी क्रियाके न्यून होनेसे तथा निःस्रोतस ग्रन्थियोंके अन्तःस्रावमें परिवर्तन होनेसे यह होता है बीज ग्रन्थिके निकालनेसे या अन्य रोगोंके कारण भी हो जाता है डिम्बप्रणाली गर्भाशय या भगका घातक अर्बुद ट्यूबमें उपसर्ग (Tubal Praganancy) बीज ग्रन्थि तथा योनिके अर्बुद और कष्टार्तवके कारण भी मेनोपोज (Meno pouse) होता है।

यद्यपि यह खराब नहीं है, किन्तु इस काल या आर्तव बन्दके समयमें बहुत व वातिक लक्षण हो जाते

हैं जो कुछ समय तक रहते हैं। बाज ग्रन्थिको अत्यावश्यकता होनेपर ही निकालना चाहिये। आर्तव विनाश पूर्वमें धीरे-धीरे बन्द होता है और क्रमशः न्यून होकर बन्द होजाता है।

वदासी तथा मानसिक उत्तेजना भी कभी होजाया करती है। किसी-किसी स्त्रीमें मानसिक लक्षण बहुत बढ़ जाते हैं। और पागलों जैसी स्त्री की अवस्था हो जाती है तथा प्रजनन अङ्गोंमें निम्न परिवर्तन होजाते हैं। लघुभगोष्ठकी वसा गायब होजाती है योनि की श्लेष्मल कला सिकुड़ जाती है। गर्भाशय सुख एवं गर्भाशयकी स्थूलता कम होजाती है। डिम्ब वाहिनी, P. T. के आवर्त अदृष्ट हो जाते हैं, स्तन ग्रन्थियोंमें भी क्षीणता होजाती है, जिससे स्तन छोटे होजाते हैं। शरीरमें सर्वत्र वसा जमा होजाती है।

इस समय यदि अनियमित रक्तस्राव हो तो उसे आर्तव बन्द होनेकी असाधारण अवस्था समझनी चाहिये। यह सामूली और क्षणिक भी हो सकती है इसी प्रसंगान्तर्गत आचार्यों द्वारा उपदिष्ट चिकित्सा वैशिष्ट्यपर भी प्रकाश देना उपयुक्त समझ कर वातज योनि रोगोंके चिकित्सा सूत्रको देखना चाहिये उत्तर तंत्र सुश्रुत अ० ३८।

प्रतिदोषन्तु साध्यासु स्नेहादि कम उप्यते।
दद्यादुत्तरवस्तीश्च विशेषेण यथोक्तान्॥

इस प्रकार वर्णित रोगमें उत्तर वस्तीयोंका प्रयोग श्रेष्ठ माना है। इसी मतकी पुष्टि भावप्रकाशकार भी करते हैं।

तासु योनिषु चाद्यासु स्नेहादि कम उप्यते।

वस्त्यभ्यङ्ग परीपेक प्रलेप पित्तुधारणम्।

चरकमहर्षि भी चरक, चि० अ० २० में—

स्नेहः स्वेदः स्नानादिवातजास्थिजलापहम्।

इसी प्रकार चरक एवं महर्षि सुश्रुतने कुम्भी स्वेदनका सुन्दर प्रयोग दिया है।

पित्तज रोगोंमें—

औष चोपान्विता सूक्तं कुर्याच्छीतं विविधं भिषक्।

चरके यथा—

कारयेद्रूपित्तघ्नं शीतं पित्तघ्नासु च।

आगे कफज रोगोंमें पूष छावादि में—

दुर्गन्धां पिच्छिलां चापि चूर्णैः पंचकषायजैः
पूरयेद्रजवृक्षादि कषयैश्चाप धावनम्॥
योन्यान्तु पूयसाविण्यां शोधनं द्रव्यं सम्भृतैः
सगोमूत्रैः स लवणैः शोधनं हितमिष्यते॥

अभ्यञ्ज—

बृहती फल कल्कस्य द्विहरिद्रा युतस्य च।
कण्डूमतीमल्प स्पर्शा पूरयेद् धूपयेत्तथा।
इसी प्रकार चरक चिकित्सा सूत्र से भी—
यत् श्लेष्मजासु रूक्षोष्णं कर्मकुर्याद्विचक्षणः—

महर्षि सुश्रुतने वेशवार (पुष्टित मांस) का प्र-
लिखा है।

पिधाय वेशवारेण ततो बन्धं समाचरेत्।

सर्वज योनि रोगोंमें दोषोंके अनुसार सुरा और आसवोंका प्रयोग करना चाहिये। तथा प्रातःकाल लहसुनसे निकाले हुए स्वरसका पान चाहिये।

यथा उक्तं सुश्रुते—

प्रतिदोषविदध्याच्च सुरारिष्टासवान् भिषक्।

प्रातः प्रातर्निषेवेत रसोनाटुद्धृतं रसम्।

इस प्रकार दोषोंकी कल्पनाके आधारपर द्रव्य चयन कर चिकित्सा करते हुए अपने वैशिष्ट्यको आचार्योंने प्रतिपादित किया है।

अगर हम कुछ अनुसंधानकी दृष्टिसे आयुर्वेद प्रगतिके विन्दु जोड़नेका प्रयत्न करें तो अवश्य लता प्राप्त हो सकती है। इसी प्रकार पञ्चमकार्क जोर दिया है।

यथा—शूर मांस रस प्रायसादार विदधीत

और भी उपयुक्त समझकर पञ्चादिका करते हुए आयुर्वेदकी मूलिक सिद्धान्तोंपर जोर देना चाहिये इस प्रकार आयुर्वेदकी चिकित्सा द्वारा रोगोंपर विजय प्राप्त की जा सकती है। और समाज इस लक्ष्य प्राप्तिसे मुक्त होकर प्रजोत्पादन समर्थ हो सकता है। जब आयुर्वेद लेखिकाके सामुख रखेंगे तथा सुझाव देंगे तो लेखिका शर्मसाधन जायगा।

पुनश्च—विज्ञपाठक इस सम्बन्धमें अनुरोध

लेखिकाके सामुख रखेंगे तथा सुझाव देंगे तो लेखिका शर्मसाधन जायगा।

च ।
तथा ।
भी—

क्षणः—

रेत् ।

सम ।

र द्रव्य
पृथक्

आर्य

वश्य

अथ

10

पति

गुरुकुल मालेज जावे बाले अध्यापक, कार्यालयमे काम

करने वाले कर्मचारी बिना भूख लगे भोजन करते रहते हैं, क्योंकि यह उनकी आदतमें शामिल हो चुका है। अतः यदि वे भूख न लगनेपर खाना छोड़ दें और केवल अच्छी भूख लगनेपर खायें तो एक तो वे पाचन सम्बन्धी बीमारियोंसे मुक्त रहेंगे, तथा उन्हें कम भोजनमें अधिक पोषण प्राप्त होगा।

स्वस्थ व्यक्तिके रक्तमें ८०% क्षारीयता २०% अम्लीयता होनी चाहिये। इसमें असन्तुलनसे व्यक्ति रोगी हो जाता है। ताजे फल, हरी सब्जी, मठा, दही, सूखा मेवा आदि शरीरमें क्षारीयताकी वृद्धि करते हैं। अतः इस मंहगाईके जमानेमें भोजनमें अधिक भाग हरी ताजी सब्जी व फलका तथा कुछ कम भाग अन्न, दाल व चावलका होना चाहिये। पालक, बथुआ, चौलाई, गाजर, टमाटर, चुकंदर, पत्तागोभी, मूली, अमरुद, सरसों आदिका प्रचुर मात्रामें उपयोग करनेसे आवश्यक खनिज लवणों एवं विटामिन्सकी प्राप्ति होगी तथा खर्चमें भी कमी होगी।

भोजन कितना ही प्राकृतिक व पौष्टिक क्यों हो, यदि ठूस ठूस कर खाया जाय, तो विषका फल करेगा। अतः थोड़ी भूख रखकर ही भोजन करना उचित है। आयुर्वेदमें लिखा है कि पेटके २ भाग भोजनसे और १ भागको जलसे भरो तथा चौथा भाग आकाश तत्त्व अर्थात् हवाके लिये खाली छोड़ दो।

भोजनके प्रत्येक ग्रासको इतना चबाइये कि वह केवल तरल रूपमें आकर स्वयं गलेसे उतर जाय। ऐसा व्यक्ति कब्जका शिकार न होगा और भोजनमें अधिक पोषण प्राप्त कर सकेगा।

अपने घरमें यथा सम्भव लौकी, काशीफल, तोरई, पपीता, केला आदि उगानेकी चेष्टा करना चाहिये जिससे कि खर्चमें कमी हो सके।

सप्ताहमें एक दिन पूर्ण उपवास रख कर पाचन प्रणालीको पूर्ण विश्राम देना चाहिये। इससे स्वास्थ्यकी प्राप्ति तो होगी ही, इस मंहगाईके जमानेमें खर्चकी भी बचत होगी।

कृष्ण-गोपालकी गैसहर वटी

आजकल अनेक मनुष्योंके पेटमें मन्दाग्नि, अजीर्ण तथा आंतोंमें सड़ान होनेसे गैस (वायु) बन करती है जिससे पेटका फूलना, उदरशूल, खट्टी या बादीकी डकारें आना तथा घबराहट आदि अनेक लक्षण उत्पन्न होते हैं। इस रोगका उपचार न करनेसे आगे चलकर आंतमें कैंसर जैसे घातक रोग उत्पन्न होते देखे गये हैं। भवनने अपने ३० वर्षके अनेक रोगियोंपर अनुभव करके जनहितार्थ इस महारोगसे पिण्ड छुड़ानेके लिये इन गोलियोंका निर्माण किया है।

जब भी पेटमें गैस उत्पन्न हो १ या २ गोली जलानुपानसे ले लेनेपर तुरन्त अपानवायु नीचेके मार्गसे खुलकर पूर्ण शान्ति प्राप्त होगी। भोजनोत्तर दोनों समय वटी ले लेनेसे अन्नपाचन सुखपूर्वक होता है, शोच साफ हो जाता है तथा यकृतकी खराबी दूर होकर स्वास्थ्यवृद्धि होती है।

मूल्य—१० ग्राम, ०-१०।५ ग्राम, ०-५५।

जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन

लेखक—सीतारामजी जोशी

आयुर्वेदमें ऋषियोंने प्रारम्भसे ही अन्नपर खूब गहरा विवेक किया है। चरक कहते हैं कि पञ्च महाभूतोंसे माता पिताका शुक्र शोणित मन और आत्माके साथ चलनेवाले सभी भूत इस अन्नसे ही आध्यायित होते हैं इन सभी से गर्भ बढ़ता है। गर्भका जन्म ही अन्नके बिना नहीं होता। “अन्नाद्भवन्ति भूतानि” यह वेद वाक्य सब कोई जानते हैं। शरीर-स्थान तीसरे अध्यायमें लिखा है कि मातृ पितृ आदि ६ भावोंसे गर्भकी उत्पत्ति होती है उनमें भी रस और सात्म्य ये दोनों भेद अन्न ही के हैं। यथार्थमें देखा जाय तो सारे ही भाव अन्नसे बनते हैं।

आध्यायते शुक्रमस्तृक् च भूतैर्यैस्तानि भूतानि रसोद्भवानि ॥ च. शा. २ ॥

सारे भूत चाहे मातृज हों पितृज हों रसज हों चाहे आत्मज हों, सत्वज हों। १६ ही पंच महाभूत अन्नसे उत्पन्न होते हैं और बढ़ते हैं। आहारके बिना थोड़े समय भी गर्भ टिक नहीं सकता। शरीर मन इन्द्रियां सभी आहारसे उत्पन्न होते हैं। अन्न मुख्य है।

यदि तामसी अन्न खाया गया तो शुरुआतमें गर्भमें ही व्यापतियाँ होना शुरू होंगी। माता पिताके शुक्र शोणितमें भी आहारकी शुद्धि कारण है। अब्बल तो ऋतुमतीसे लेकर गर्भिणीमें पूर्ण गर्भकी उत्पत्ति पर्यन्त रोगी और निरोग होनेमें अन्न ही कारण है। परन्तु इससे आगे भी मन बुद्धिके परिणाम भी अच्छे और बुरे मनपर ही निर्भर हैं। सभी अंग प्रत्यंग मन बाणी शरीर, बुद्धि इन्द्रियाँ जैसा मन होगा वैसी बनेंगी। आत्माको छोड़कर शरीरके सभी भाव अन्नसे ही उत्पन्न मान लें तो कोई मिथ्या नहीं है।

अन्नके शुद्ध और अशुद्धिके कारण ही धी धृति और स्मृति भ्रंश होता है। मनके दोष शरीर दोषोंकी तरह विषम होकर मनुष्यकी बुद्धि भ्रष्ट कर देते हैं।

धृति नष्ट हो जाती है। धैर्य छूटकर स्मृति भ्रंश स्वस्वरूपका ज्ञान नष्ट हो जाता है। इन्द्रियोंका जय पराजय भी अन्नके ही आश्रित है। यदि अन्न न मिले तो इन्द्रियाँ कितनी ही बलवान क्यों न हों, दुर्बल पड़ जाती हैं। उपवास करनेसे धर्मकी वृद्धि हो जाती है। गर्भकी रक्षाके भाव, गर्भकी व्यापत्तिके भाव और सारे शरीर और मनकी सम्पत्ति विम्ब सव अन्नपर ही निर्भर है।

सन्तान पैदा करते समय यदि सात्त्विक अन्न खाया जावे तो सन्तान भी सात्त्विक ही होगी। भाव-प्रकाश और सुश्रुत लिखते हैं कि—

आहाराचार चेष्टाभिर्गाढशीभिर्समन्वितौ।

स्त्रीपुंसौ समुपेयातम् तयोपुत्रोपि तादृशः ॥

जिस समय कि गर्भ बन रहा हो माता पिताको चाहिये कि आहार सात्त्विक करे। भारतवर्षमें ही नहीं विश्वमें भी गर्भिणीके अन्दर रहनेवाले गर्भके मन इन्द्रियको ठीक रखनेके लिये दौहदके अनुकूल आहार देना आवश्यक माना है। यह सभी लोग जानते हैं कि गर्भिणीकी जो रुचि हो वैसा ही उसको अन्न खिलाया जाये क्योंकि शरीरसे लेकर मन इन्द्रियाँ बुद्धि तक मनसे बनते हैं।

दर्शन शास्त्र तो आहारकी तरह विहारकी भी अन्न स्यातीय मानता है। क्योंकि जैसे अन्नसे मनकी उत्पत्ति होती है वैसे ही हिंसा भूठ चोरी मैथुन परिग्रह इन पाप क्रियाओंसे भी मनका तामसिक भाव उत्पन्न होता और पुष्ट होता है। मन बुद्धि इन्द्रियाँ आदिका जैसा उपादान कारण अन्न है वैसे ही पाप और पुण्य क्रियायें भी मन और बुद्धिके क्षयके लिये अन्न रूख हैं। यथार्थमें पाप क्रियायें भी मनके दोषोंके और मनके शरीर दोषोंके कारण है। जैसा पाप या पुण्यकी क्रियाओंका आहार मनुष्य लेगा

वैसा ही उसका मन बनेगा। संयमसे अथवा पुण्य क्रियाओंसे सार्विक मनकी उत्पत्ति होती है।

धर्म्याः क्रिया हर्ष निमित्त मुक्ता ततोऽभ्यथा
शोक वशं नयन्ति ॥ च० शा० २ ॥

अन्न द्रव्य है। मन भी द्रव्य है। मन क्रियाओंका आधार है। इसमें गुण कर्म भी होते हैं इसलिये जैसे द्रव्य उत्पत्तिमें कारण है वैसे द्रव्यगत गुण क्रियायें भी उत्पत्तिमें कारण माननी चाहिये।

(द्रव्यगत) अन्नगत गुणकर्म ही आचार विचार हैं। क्रिया द्रव्यमें रहती हुई क्रियाकी वृद्धिमें कारण है। इसी सिद्धान्तानुसार सार्विक क्रियाएँ सत्त्वको बढ़ाती हैं और राजसिक क्रियायें रजको पाप क्रियायें (जो द्रव्योंमें रहती है) वे तमको बढ़ाती हैं। इसमें गुंजायश ही नहीं है। सत्त्व रज तम ये तीनों भी द्रव्य हैं और मन भी द्रव्य है। द्रव्य द्रव्यको बढ़ाये या तद्गत गुण कर्म भी गुणकर्मोंको बढ़ाये इसमें क्या अपमिद्वान्त हो सकता है। नहीं। सूत्रस्थान चरकके प्रथम अध्यायमें लिखा है कि—

सर्वदा सर्व भावानां सामान्यं वृद्धि कारणम्”

अर्थात् समान भाव समान भावोंको बढ़ाते हैं

यदि कोई इस बातको न माने तो इनके प्रयोग करके देख लें। जो मनुष्य दूध और चावल खाते हैं एक दो महीने लगातार खाकर देखें, उनका मन कैसा रहता है और मिर्च मसाले खाकर देख लें। उनके दिमागकी क्या तासीर बन जाती है। आत्माको छोड़कर शरीरके चोबीसों तत्त्व मन इन्द्रियाँ आदि सब अन्नसे ही बनते हैं। अन्नके द्वारा ही सभी शुभ और अशुभ भाव पैदा होते हैं। देवता लोगोंको भी अन्न चाहिये। यज्ञ करके अग्निमें आहुति देकर जो देवताओंको तृप्त किया जाता है वह भी अन्न है। पितरोंको जो जल देकर तृप्त किया जाता है उनका आहार वही है जिसके लिए जो आवश्यक हो पशुओंके लिए चारा। सिंहादिके लिए मांस ये सब अन्न कहलाते हैं। इसके अलावा जिनसे उन भावोंकी वृद्धि हो वे चाहे द्रव्य रूप हों, चाहे अद्रव्य रूप हों, सभी अन्न कहलाते हैं। यदि क्षयार्त्त पशुओंको मरने के लिये मार

दिया जाय तो उस ठण्डकसे उसकी लुथा शांत जाती है वह ठंडी हवा भी अन्न ही है।

कई लोग भोजन करनेके बाद तास चौपड़ खेलते हैं और मनोविनोद करते हैं अथवा रईस लोग गान सुनते हैं ये सभी विषय अलग अलग इन्द्रियोंके आश्रय हैं। अन्न कोई रोटीका ही नाम नहीं। टहलना और अखबार देखना लोग खुशक मानते हैं। योगियों योग क्रिया ज्ञानियोंको ज्ञान मिल जाना, यही उनका अन्न है। इतनी सूक्ष्म बातों तक न जाकर ब्रह्मदृष्टिसे मुँहके द्वारा जो लिया जावे वह अन्न है। और भी अधिक मात्रा और सात्त्व्य होनेसे अन्नका रूप लेती है। स्वस्थ मनुष्योंको प्रतिदिन जो स्नेह वसति जाती है वह भी एक अन्नका ही काम करती है ऊपरके मुँहसे न सही गुदाके द्वारा भी स्नेह पहुँचा मनुष्यको पुष्ट किया जा सकता है इसलिये ब्रह्म वसितियाँ लिखी हैं।

अभ्यंगसे स्नेह पहुँचाकर रोमोंके द्वारा रोमाहृत दिया जाता है। त्वचापन रोमाहृतियों भी जल पान होता है। श्वाससे भी जो ओकसीजन जाता है वह भी अन्न है। वायु जल ऊष्ण ये सभी अन्नमें ही शामिल हैं। मांस भी अन्न है जो मिठाई भी अन्न। घास पत्तों भी अन्न है। महादेवजीको वरणा करनेके लिये पर्वतों जी ने वनमें घोर तपस्या की। आहार त्यागा, निर्जर्ण शीर्ण पत्ते खाकर शरीरको चलाया। इन पर्वतों भी उन्होंने आहार समझकर त्याग दिया इसलिये उनका नाम अपर्णा पड़ा।

कहनेका तात्पर्य यह है कि तपस्यामें सूखे पत्तों आहार भी देवीने अन्नका दोष माना। वे समझती हैं कि आहारसे मन और आत्मा मलिन होते हैं। इसलिये अन्न सर्वथा ही त्याग देना चाहिये।

आत्मज्ञानकी पुष्टिके लिये ज्ञान ही अन्न है। धर्माचरण, महाव्रत पालन, संयम तपस्या यह आत्माका आहार है। बात भी ठीक है। वास्तव में अन्न शुद्ध वही है जो आत्माको मलिन न करे। दूध पन बढ़ावे। मन बुद्धिको शुद्ध रखे। अर्जुन कहते हैं कि व्रत उपवास करने वाले ज्ञाना और योगी अन्न से डरते हैं जैसे कोई जहरसे डरता हो।

अथपि अन्नं वै प्राणाः, अन्नो सर्वं प्रतिष्ठितम्, अन्नाद् भवन्ति भूतानि ।" सब कुछ अन्नकी महिमा है। अन्न जैसा कोई वान नहीं। अन्नका विवेक बहुत गहरा है कैसा भी कोई क्यों न हो अन्न सबको लेना पड़ता है। देवता भी अन्न लेते हैं कुछ देवलोक ऐसे हैं जिनमें देवता लोग १५ दिनमें एक बार आहार लेते हैं। कई ६ माससे कई बारा माससे और ऊँचे लोकों के देवता १० वर्षों में एक बार सूक्ष्म वासना रूप सारोंका सार लेते हैं। विषयोंकी तृप्ति करने वाले सभी भाव दार्शनिक परिभाषामें अन्न है यही दार्शनिक अन्नका विवेक है। ऐसा सुना जाता है कि जैसे जिह्वेन्द्रियका विषय ६ मास १२ मास कालके विस्मय ग्रहण करके देव तृप्त होते हैं। वैसे ही कई देवता देवाङ्गनाओंके साथ मनुष्योंकी तरह (मैथुनादि) उपभोग नहीं करते। जब कभी उनको आहार लेनेकी इच्छा होती है अथवा काम वासना जाग्रत होता है तो वे एक-एक विषयसे और वह बहुत थोड़ी मात्रामें किंचित मात्रा कई दिनोंमें ग्रहण कर तृप्त हो जाते हैं।

बहुतसे देव देवाङ्गनाओंके रूपको देखकर ही तृप्त हो जाते हैं। कई वर्षोंमें एक बार उनका गाना सुनकर आनन्द मान लेते हैं। बहुतसे देव उनके पादस्पर्श करनेपर सुखी हो जाते हैं। बहुतसे बर्गोंके पुष्पोंकी गन्धसे ही जाते हैं और भोग आनन्द मान लेते हैं। इससे भी आगेके देव फिर सुहाकर तमन करनेपर तृप्त हो जाते हैं। उनका इतना सा ही आहार है। इनके आगेके लोकोंके देव आत्मामें ही संतुष्ट रहते हैं। आहार नहीं लेते हैं। कुछ भी हो शुद्ध मनके बिना शुभ क्रिया व सदाचार नहीं बनने पाता।

वैसे तो दाल चावल मांस मदिरा सभी अन्न हैं। कामधेनु गौका दूध भी अन्न है और पापी पारधी मच्छी मांसका अन्न भी अन्न है। शुद्ध भगवान् के भोग लगा हुआ अन्न भी अन्न है और जात पातकी निरपेक्षा रखने वाले होटलोंका सबका भूठा अन्न भी अन्न है। अन्न शुद्धिमें ४ सहकारी भाव अपेक्षित हैं। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव। द्रव्यसे मतलब शुद्ध सात्विक दूध-घृत और पवित्र भोजनसे हैं। क्षेत्रसे मतलब जिस जगह भोजन किया जाय, वह स्थान भी पवित्र होना चाहिये। जैसे वैश्या और कसाई के घरपर भोजन हो

और देव मन्दिरके स्थलपर भोजन किया जाय। कालसे मतलब शुद्ध सात्विक काल अपेक्षित है। सन्ध्या काल और निषिद्ध काल ग्रहण पर्व आदि ये निषिद्ध काल हैं।

गहते ग्रहणमें लिया हुआ आहार मन बुद्धिको मलिन करनेवाला है। चौथा सहकारी है भाव। भाव चाहे अपना हो चाहे पराया; भाव शुद्धिसे आहार शुद्ध माना जाता है। भक्ति श्रद्धा और प्रेमसे दिया गया आहार शुद्ध सात्विक है। अपमान पूर्वक शत्रुका भोजन या किसीका भी क्यों न हो वह भोजन शुद्ध नहीं माना जा सकता। पतिको स्त्री पुत्रको माता जिस भावसे भोजन कराती है वह भोजन भाव शुद्ध कहलाता है। द्रव्य शुद्धिके उदाहरणोंका कोई पार नहीं। राजाका अन्न वैश्याका अन्न यदि प्रीतिपूर्वक भी दिया जाय या सुनार धोबी यदि हाथ जोड़कर भी दे तब भी उसका अन्न ग्राह्य नहीं है। बहन-बेटी मन्दिर, मस्जिद और गुरु आदिका अन्न भाव शुद्ध होते हुये भी द्रव्यत्वेन शुद्ध नहीं है।

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, चारोंसे पवित्र होकर लिया हुआ अन्न मनको शुद्ध करता है। संस्कार बढ़ाता है। पापका नाशकर मनके आवरणको दूर करता है। और मनकी चञ्चलताको स्थिर बनाता है। मन, बुद्धि और इन्द्रियाँ प्रसन्न रहती हैं। अन्नके ऊपर बहुतसे विचार किये जा सकते हैं। शरीरकी पुष्टि करने वाला अन्न और है जैसे मांस आदि और मनको शुद्ध कर वाला अन्न और है जैसे घी दूध कन्द आदि।

साधु सन्त लोग शरीरकी पुष्टिकी तरफ खयाल न कर देहके निर्वाह मात्रके लिये अन्न ग्रहण करते हैं। उनकी दृष्टिमें मिठाई, हलवा, माल-मसाले आदि त्याग अन्न हैं। मीरां बाईने राजमहलोंके भोगोंको छोड़कर अच्छे ताना प्रकारके अन्तोंको छोड़कर बामी दुकान ग्रहण करना पसन्द किया। साधुके लिए भिक्षा अन्न जैसा मन इन्द्रियों को शुद्ध करने वाला है वैसा सम्मानित पौष्टिक आहार नहीं।

चरक सुश्रुत वाग्भट्टों अन्तर्गत बरेमें कई अध्याय अध्याय लिखे हैं वे सभी हिताहितकी दृष्टिसे आमाने जा सकते हैं। शरीरको बढानेके लिए

मात्र आहार ही काफी है। आहार जड़ चेतन सभी लेते हैं। वनस्पति वर्गका आहार कुछ दूसरा ही होता है। यहाँ तो और विषयोंका विस्तार न कर सिर्फ यही बात लेनी है कि द्रव्य क्षेत्र काल भावसे शुद्ध आहार मनके शुद्ध भाव पैदा करता है।

इसके लिए एक हम छोटा सा उदाहरण महा-भारतका पेश करते हैं। महाभारत हो चुका। भीष्म पितामह शर शय्यापर पड़े हैं। धर्मका उपदेश हो रहा है धर्मराज युधिष्ठिर प्रश्न पूछते जाते हैं, पितामह उनको सभी प्रकारके वर्णाश्रम धर्म, लोकधर्म, लोकोत्तर धर्म, मानवधर्म, आत्मधर्म, बाल-वृद्ध-विधवा, कलान्त आदिके लिए जो कर्तव्य हैं वे धर्म समझा रहे हैं। उस समय महारानी द्रौपदीने कहा कि पितामह! दासीका यह प्रश्न है कि जब मेरा चीर हरण हो रहा था और आप जैसे धीरे गम्भीर योद्धा मौजूद थे और धर्मराज भी मौजूद थे, आपके सामने यह अन्याय कैसे देखा गया, क्या अधर्मको देखना धर्म है? अथवा आपको अपने प्राणोंका मोह था। अधर्मके पीछे मरना भी श्रेष्ठ है। आप लोग देखते रहे, और मेरी ऐसी वेड्जती की गई जो आज तक किसीकी न की गई।

नैष्ठिक ब्रह्मचारी बीर धीरे भीष्मजीने घायल होते हुये भी उरसाहके साथ उत्तर दिया कि वेटी उस समय मैं उस पापात्मा दुर्योधनके राज्यका अन्न खाता था और वर्षोंतक खानेने मेरी मन बुद्धि इन्द्रियाँ और सभी पापी हो गये थे। आत्मा उससे डरता था विचारोंमें कायरता और पक्षपात छा गया था मेरा मन रजोगुण तमोगुणके बदलोंसे ढक गया था। यह सब उसके मलिन अन्नका आहारका फल था कि मैं उस समय नहीं बोल सका और भावी भी यही थी ऐसा होना ही था। अब मेरा मन मेरी बुद्धि मेरा शरीर उपवास करनेसे, जलमात्र पीनेसे ६ मासके उपवाससे दूषित अन्नका प्रभाव सब नष्ट हो गया। मेरा मन बुद्धि इन्द्रियाँ सभी नष्ट हो गईं। रजोगुण तमोगुण सब अन्नके मल हैं। वे निरन्न रहनेसे मेरे क्षीण हो चुके हैं और अब मुझे यह मालूम हो रहा है कि उस समय तूने पापका अनुमोदन करके पाप कमाया था

और इस समय भी मुझे भान हो रहा है कि यह सब पापात्माके अन्नका प्रभाव था जो मैंने सबकी हाँ में हाँ मिला दी थी।

वास्तवमें या तो मुझे मर जाना चाहिये था या संन्यास लेकर घरसे बाहर निकल जाना चाहिये था।

वेटी मुझे माफ करो मेरा हृदय उस दशको याद कर करुणासे भर आया है। देख जबसे मैं शर शय्या पर सोया हूँ मैंने जो पापोंके सम्पर्कसे पाप किये हैं उनका स्मरण आनेसे अश्रुधारा बह रही है और प्रायश्चित्तसे मेरा हृदय शुद्ध हो रहा है मेरे शरीरसे बहुतसा रक्त धारा प्रवाह होकर निकल गया है और हृदयेश्वर भगवान् कृष्ण भी मेरे सामने खड़े हैं ये सब इनकी लीला है। तू पहलेके स्मरण सब अब छोड़ दे। अन्नसे ही सब मन इन्द्रियाँ बुद्धि बनती हैं इसलिये मैं सबको उपदेश करता हूँ कि अशुचि अपवित्र भाव दूषित अन्न किसीको नहीं खाना चाहिये। दुर्वासः ऋषि दूबका रस पीकर तप करते थे वे अन्नके दोषसे डरते थे। ऋषि लोग कन्द मूल फल खाकर जीते हैं अन्न दोषको जहरकी तरह मानना चाहिये।

मन बुद्धिके अलावा आत्मापर भी इस अन्नकी मलिनताका प्रभाव औपचारिक रूपसे माना जाता है। समय समयपर वा उपवासकी व्यवस्था दूषित अन्नको दूर करनेके लिये ही रखी गई है। अशुचि भाव दुष्ट अन्न देवता और पितर भी नहीं लेते इसलिये वेटी मैं स्व स्वरूपको भूल गया था यह अन्नका प्रभाव था मेरा कसूर नहीं था। मैं बेभान था।

भीष्म पितामहके मुखसे माफीका नाम निकलते ही अश्रुपूर्ण मुखसे ऐसी बात सुनकर सभी पाण्डव रोने लगे, और सबके नेत्रोंसे धड़ धड़ अश्रुकी धारा बहने लगी। द्रौपदी बोली परमपिता परमेश्वर तुम्हें प्रभो! आप यह क्या फरमा रहे हो हम सब तो आपके दास दासी हैं। आज हमें यह ज्ञान प्राप्त हो गया, कि अन्नका प्रभाव ऐसा है। आप जैसे बड़े बड़े तपस्वियों को भी दुःख देता है। आपने हमारे लिये बड़े बड़े कष्ट सहें हैं हम आपके वियोगसे दुःखी होजायेंगे, आह! दीजिये हम आपकी क्या सेवा करें। आप हमारे सब अपराध क्षमा कीजिये। अन्तः श्वास चल रहा है।

और अन्तिम आदेश देते हैं। "तापत्रय प्रतप्तानां कृष्ण-
एवगतिर्भवेत्" यह कहकर मौन हो गये। द्रोपदीने
युधिष्ठिरसे पूछा पतिदेव ? आहारशुद्धिके बारेमें मेरे
एक संशय है बुद्धिको ठीक करने वाला आत्माको
अनावरण करनेवाला आहार कैसा होता है ? मैं जानती
हूँ कि दुर्योधनके रसोई घरमें अच्छे अच्छे रसोईदार
स्तानकर भोजन बनाते थे। सुवर्णके थालोंमें पट्टरस
भोजन परोसा जाता था। पितामहके लिये उनकी
इच्छानुसार सात्विक रसवाले द्रव शास्त्रसम्मत, स्निग्ध,
और स्थिर, हृद्य, आहार क्षीर, दही, मक्खन वाले भोजन
पितामहको मिलते थे। भोजनका निरीक्षण वैद्य लोग
करते थे। जैसी राजघरानेकी विधि है वैसा भोजन
होता था फिर बुद्धि कैसे बिगड़ी ? अन्नमें क्या खराबी
थी। देशकालका भी खयाल रखा जाता था। दुर्योधन
भाव भक्तिसे भोजन बनवाता था फिर अन्न दूषित
कैसे हुआ ? आप समझावें। फिर द्रोपदीने कहा पिता-
मह तो इस समय मौन हैं आप ही उत्तर दीजिये
जिससे मेरा संशय दूर होजावें।

युधिष्ठिरने कहा देवी महारानी ! तुम्हारा प्रश्न
ठीक है और सभी बातें शुद्ध थीं भोजनके द्रव्य रस
वाले थे। दूध मलाई थी। स्वर्णके कटोरे और रत्न
जड़ित थालोंमें भोजन रखा हुआ था। धुली हुई पवित्र
भूमिपर बैठकर भोजन होता था। डाक्टर-वैद्योंसे
भोजनकी छानवीन भी की जाती थी। खिलाने वालेकी
सेवाओंमें भी कमी नहीं कही जा सकती थी।

परन्तु राजाका अन्न ही ऐसा होता है जो खजानेमें
आये हुये धनसे खरीदा जाता है। घोड़ी, भंगी, चमार,
दण्ड्य, अदण्ड्य ब्राह्मण, मन्दिर, सभीका धन करके
रूपमें एकत्रित रहता है यह द्रव्य हिंसा प्रधान द्रव्य
होता है। राजा स्वयं भी कामी, क्रोधी, राग-द्वेषी आदि
कई कुकर्मोंसे भरा रहता है। कोई भी राजा इस
दोषसे वंचित नहीं रह सकता। सिर्फ धर्मात्मा राजा
ही जिनको कि इस अन्न दोषका ध्यान है वे राज्यके
धनको अपने आहार और उपभोगमें नहीं लेते। पाप
क्रियाके बिना कोषमें धन होता ही नहीं।

राजाओंका खजाना महा आरम्भ और परिग्रहके
पापोंसे भरा रहता है। अनर्थ बण्ड भी बहुतसे होते

रहते हैं। दुर्योधनको तो सभी पापात्मा मानते हैं
उसका सारा द्रव्य पापमय समझा जाता है। जिन्होंने
खाया है उन सबकी बुद्धि बिगड़ गयी है। भूठे
आततायी दुर्योधनका अन्न शुद्ध नहीं माना जा सकता
और उसके भाव भी दूषित थे। स्वार्थवश लड़ाईमें
भोंकनेके लिए वह पितामहकी सेवा करता था उसकी
दृष्टि स्वार्थभावकी थी उसके भाव भी दूषित थे और
अन्न भी दूषित थे। उस अन्नसे भी ऐसा होना
स्वाभाविक था।

अन्न शुद्धिके लिये कई विधान हैं। भगवन्के
अर्पण किया हुआ अन्न भाव शुद्ध अन्न शुद्ध माना
जाता है। जो गृहस्थी भी परमेश्वरके अर्पण किये बिना
अन्न खाते हैं वे पाप खाते हैं।

भुञ्जंते ते त्वग्रं पापा ये पचन्त्यात्म कारणात्।

॥ गीता ॥

मनमानी मौज उड़ाने वाले चाहे जहां अन्न खाने
वाले मनुष्योंकी बुद्धि अन्नसे ही बिगड़ती है वे भूठा
और अछूतका कोई भेद नहीं समझते। गृहस्थीको
अन्न शुद्धिके लिए पंचयज्ञ करनेका विधान है। दुर्यो-
धनका अन्न द्रव्य क्षेत्र काल भाव सभी तरहसे दूषित था।

सर्वसाधारण-गृहस्थीको भी पांच हिंसाएं लगती
हैं। चूल्हेमें जीव जलते हैं चक्कीमें पिस जाते हैं।
भाड़की रगड़से नन्हें जीव घायल हो जाते हैं। जला-
शय व परीण्डेमें व घड़ोंमें पानीमें पड़कर जीव मर
जाते हैं। ऊखल मूसलसे भी जीव मर जाते हैं कुट्टित
हो जाते हैं। ये पांचों हिंसाएं गृहस्थीके घरोंमें सदा
होती रहती हैं। उनकी शुद्धिके लिये स्वाध्याय तर्पण
होम बलिदान और अतिथि सत्कार गृहस्थियोंसे किया
जाता है। जो ऐसा नहीं करते उनका अन्न पापमय
है। इस अन्नसे शरीर वाणी धन मन परिवार सभी
दूषित हो जाते हैं। एक ही अन्नके दोषसे सभी मलिन
हो जाते हैं। इसलिये मनशुद्धिके लिये द्रव्य शुद्धि
आवश्यक है।

ब्राह्मण लोग किसीका भी अन्न नहीं खाते थे
यदि खाते हों तो वे भी उपरोक्त शुद्धिका खयाल रख-
कर खाते थे। हेय उपादेयका ध्यान सदा रहता था।
बहन बेटी भंगी चमार दास दासी वैश्योंका अन्न

कभी कोई नहीं लेता था ।

अन्नके महत्वको देखकर ही ऋषियोंने कहा है कि

यादृशं भक्षयेदन्नं बुद्धिर्भवति तादृशी ।

यथान्धं भक्षयेद्दीपः कज्जलं च प्रसूयते ॥

जैसे दीपक अन्धकारको खाता है तो काजल पैदा होता है ऐसे ही जैसा अन्न खाया जायगा वैसी ही मन बुद्धि इन्द्रियां बनेंगी ।

संन्यासी साधु भिक्षाका अन्न क्यों लेते हैं चक्रवर्ती राजाओंने छपन भोग छत्तीसों भोजन छोड़कर भिक्षाको क्यों ग्रहण किया । राजा भरथरीने पिंगलासे भिक्षान्न ही क्यों चाहा । लड्डू पेड़े रत्नोंके भरे हुये थाल क्यों न लिये । मीरां ने बासी टुकड़े खाकर शरीरको कृश किया इसलिये यह मानना चाहिये कि अन्न तापसी पदार्थ हैं । रसभावतः ही अन्न आकर्षण करने वाला है । फिर पापी पुरुषोंका अन्न तो विषसे भी बहतर है । शंकर स्वामीने लिखा है—भिक्षौषधं भुज्यताम् निज गृहात्तूर्णं विनिर्गम्यताम् । वे कहते हैं यदि मोक्ष चाहते हों तो तत्काल घरसे निकल जावो और भिक्षाका अन्न और वह भी नीरस, स्वरस अन्न जिसपर किसीका मन न चले । जिसको जानवर और कुत्ते भी न खावें ऐसा राग रहित अन्न मन बुद्धिकी शुद्धि करके आत्माको मोक्षमें प्रवृत्त करने वाला माना गया है ।

सन्त महारामा गंगाके किनारे जल पीकर रहते हैं । उनका अन्नःकरण शुद्ध हो जाता है । योगी लोग अन्नके दोषसे डरते रहते हैं ।

एक सुनारने मन्दिरमें भगवानके भोगके लिये आटा संधा भेजा, और मिठाइयां भी भोगके लिये भेजी । सुनारके अन्नका भगवानके भोग लगाया गया । अच्छी मिठाइयां भोगमें रखी गई । इसके बाद अच्छी मिठाईमें कीड़े ही कीड़े हो गये और सुगन्धित अन्न दुर्गन्धित हो गया । पुजारीने वह अन्न फेंक दिया और भगवानके प्रार्थना की कई । आज प्रभु मुझसे क्या अपराध बत पड़ा पुजारीने उपवास और पश्चात्ताप किया । भगवानने स्वप्नमें पुजारीसे कहा कि भिक्षामें सुनारका आटा मिल गया था । मैं तुम्हें आदेश देता हूँ कि वह अन्न मल बिष्टा बग़ावर है । भक्तने कहा प्रभो ! सूखे अन्नके लेनेमें और भोग लगा-

नेमें मैं पाप नहीं समझता था । मुझे ध्यान नहीं रहा ।

फिर भगवानने कहा मैं तो भक्त चाहे कोई भक्त हो सुनार या पापी भी हो । सबके अन्नको शुद्ध कर पचा सकता हूँ मुझे कोई अन्न दोष बाधा नहीं कर सकता ।

मैं सर्वभुक् हूँ परन्तु सर्वसाधारणको अन्न शुद्धिका ध्यान रखना चाहिये । अन्न दोष तत्काल जैसा मनोबुद्धिको मलिन करता है । ऐसे और पाप नहीं करते । सुनार वैश्या धोबी छीपा आदिका अन्न लेना और न लेना यह सब लौकिक व्यवहार सर्वसाधारणके लिए है । मुझे कभी कोई अन्न किमीका बाधा नहीं देता । मेरे लिये चाण्डाल और ब्रह्मसमी मही हैं । मैं जो व्याज्य और प्राह्य अन्न दोषगुण वर्णन किये हैं वे सब देखकर ही सब आहार लेना चाहिये ।

इस बातको दर्शानेके लिये यह अन्न की मलिनता का उदाहरण साक्षात् दर्शाया है । अन्नमें कीड़े जाना और दुर्गन्धित होना यह सुनारके अन्नको बतानेके लिये किया गया है ।

यहाँतक कि श्राद्धमें भोजन करनेवाले यात्रा ब्राह्मण का भी अन्न त्याज्य है । मृतक भोजमें दारुण अन्न प्रेतान्नके नामसे समझा जाता है । वह अन्न बुद्धि इन्द्रियाँ शरीरको बिगाड़ देता है । अन्नके प्रभु को जाननेवाले गुरुका भी अन्न नहीं खाते किन्तु उस दुर्गन्ता मूल्य देकर प्रसाद ग्रहण करते हैं । मन्दिर चढावेका पैसा और अन्न अच्छे व्यक्ति नहीं खाते ।

अन्नदानका फल बहुत महत्वका है । अन्न देनेवाला पापमें मुक्त हो जाता है और प्रतिप्रद करनेवाला दण्ड जाता है । परमहंस वृत्तिवाले साधु तीर विवेककर अन्नग्रहण करते हैं वे हर अन्न नहीं खाते । क्योंकि उनका तम क्षीण हो जाता है । मन मलिन और चंचल हो जाता है । विषराग होकर अन्नके लोभसे साधु लक्ष्यसे च्युत जाता है । अन्नका दोष जब भोजन पितामहोंको बाधा करता है तो सर्वसाधारणकी क्या बाधा इसीलिये यह बात चल पड़ी है कि जैसा खावे वैसा बने अन्न । जैसा पाने पानी वैसी बोले बातें

बाल मस्तिष्क प्रदाह

Infantile Meningitis

लेखक—रायजादा जगदम्बा प्रसाद श्री वास्तव

परिचय—यह एक सन्निपातिक रोग है। विशाख या स्कन्धापस्मार जैसे लक्षण होते हैं। इससे प्रतिवर्ष लाखों शिशु इहलीला समाप्त करते हैं।

कारण—जो माताएँ सहवासके तुरन्त बाद शिशुको स्तनपान कराती हैं उनको यह रोग हो जाता है। प्रीष्मकालमें अधिक लू या धूप लगनेसे यह रोग हो जाता है। प्रायः ३ पित्तोत्पन्न होता है जीवाणु-जन्य होता सम्भव नहीं है।

लक्षण—यह रोग अति प्यासके नामसे बताया जाता है किन्तु ३ लक्षण वाले अधिकांश शिशु मिले। १. अतिप्यास, अतिज्वर 104° - 105° तक, अतिसार। रोग। घेचैन हो शिर धुनता (इधर उधार घुमाता) है। गर्त नीचाकर कन्धे पर टेकता है। दाँत कटकटाता है। मुँह टेढ़ा करता है, मुख लार टपकती है। रोगीको निद्रा नहीं आती। सदा तन्द्रा बनी रहती है। शिरःशूल होना चाहिए। शिशु विड़चिड़ा क्रोधी स्वभावका हो जाता है। और रुदन करता रहता है। हस्तपादमें आक्षेप (झटके) आते हैं और कभी मूच्छा भी (बेहोशी भी) हो जाती है, दस्त न हो ऐसे रोगी नहीं मिलते। माताके दूध पिलाकर हटते ही दस्त हो जाता है। प्रायः मस्तिष्ककी म्लितियोंमें शोथ होता है। दाँत निकलते समय रोग हो सकता है। मस्तिष्कावरण शोथके कारण शिशु कटि प्रदेशको देखा करता है और मुठियां बांध कर शरीर तानता है। लकवा पक्षवध होनेके भी लक्षण दिखाई पड़ते हैं। आक्रमण तीव्र होनेपर रोगीके मुँहसे फेन निकलता है और हाथ पैर पेंठ जाते हैं। मुँहसे मवाद या खून सी गन्ध आती है। जमुहाइयाँ आती हैं। (वातोत्पन्नता भी होती है) जमु-हाई आते ही दृष्टी निकल जाती है। दृष्टी पानी सदृश

पतली होती है। मस्तकपर हाथ रखनेसे हाथ जलने लगता है। (पित्तोत्पन्नता भी होती है) अर्द्ध बेहोशी सदा रहती है। बेहोशीमें शिशु अपने बाल नोचता है। यदि स्तन मुखमें डाला जाय तो स्तन काट खाता है। रोगीको यदि निद्रा आ भी जाय तो तुरन्त चौंक पड़ता है। वातपित्तोत्पन्न कफ हीन सन्निपात-मे लक्षण होते हैं। फेन आनेसे स्कन्धापस्मार-ने धोखा होता है। आक्षेप या अपस्मारमें आंखोंमें मैंगापन आकर आक्षेप आते हैं ज्वर साधारण हो सकता है। अतिसार नहीं होता, मस्तक नहीं जलता, झटके आकर मूच्छा होती है, मुखसे फेन आता है। रोगी चिल्लाकर मूर्च्छित होता है।

अमाध्य लक्षण—स्तनपान न करना, अतिज्वर अति अतिसार, आक्षेप, पेशाब और पाखाने या मुखसे रक्तस्राव होना, दूसरेको मारने दौड़ना, निद्राका न आना आदि लक्षणों वाला शिशु ठीक नहीं होता। पेन्सिलीन या अन्य सूची लाभ नहीं करती। डाक्टरों द्वारा शतशः रोगी देखे। डाक्टरी चिकित्सासे ठीक नहीं होते।

चिकित्सा—संजीवनी वटीसे कभी-कभी कुछ लाभ हुआ। लक्ष्मीनारायण २-२ चावल मधु १ माशेसे मिल चटावें। १ माशे सारस्वतारिष्टमें मिलाकर देना चाहिए। विवेचनानुसार ४ चावल प्रवाल पिष्टी या २ चावल मुक्ता चूर्ण पिष्टी या मुक्तावरण (मुक्ताके छिलकों) का पिष्टी मिलाना उत्तम है। आनन्दभैरव २-३ चावल मधुसे या सारस्वतारिष्टसे दी गई। १-१ रत्ती जवाहर भी मिलाया गया। आनन्दभैरवसे ज्वर और अतिसार १ दिनमें ही शमन हो जाते हैं। जवाहर मोहरा, हृदयकी निर्वलता, श्वास

अशक्ति, वमनमें अति लाभकारी है। मात्रा १-१ चावल वचके घासेसे, मधुसे देना चाहिए।

वृ० वातचिन्तामणि—वात पित्तज सर्व विकारमें लाभकारी है आक्षेप शमन करता है। १-१ चावल २०-२० मिनटपर देना चाहिए। कुमारकल्याण रस—सर्व विकारोंको शमन करता है। वातपित्त कफ शामक है उक्त अनुपानसे सेवनीय मात्रा १-१ चावल यदि अनुपानमें जायफलका घासा या सोंठका घासा लें तो अति अल्प १ चावल ही घिसें। उष्णपानके रससे सभी रस दिए जा सकते हैं। रसमाणिक्य—१-१ चावल पानका अर्क उष्ण कर उसमें लकीर पत्थरपर की हुई पोंछ लें। शंख भस्म १ चावल सभीमें मिला सकते हैं। रससिन्दूर और रसमाणिक्यकी पत्थर पर की हुई लकीर मात्रा तिल प्रमाण। यह योग प्रायः प्राम वासी देते हैं इससे पित्तकी और भी वृद्धि हो जाती है और रोगी ठीक नहीं होता है ऐसा लेखक ने देखा है। अल्प मात्रामें १-२ मात्राएँ दी जा सकती हैं किन्तु साथमें १ चावल शङ्खभस्म और १ चावल मुक्तापिष्टीका मिश्रण भी लिया जाय। गायका खोवा उष्ण कर शिरपर बांधना चाहिए। गुलरोगन या गुलाबजलकी पट्टी भी उष्ण ऋतुमें रक्खीजाय तो ठीक रहती है। कृष्ण चतुर्मुख रस, एकांगवीर रस, विवेचनानुसार सेवनीय है। माताका दूध बन्द कर देना चाहिए। गायका दूध समभाग जल १ छटांकेमें सोंठ, दालचीनी, छोटी पीपर, मिलित १ माशे डालकर पकाना चाहिए। इसे ही थोड़ा थोड़ा मिलाना चाहिए। मैसका दूध न दें पित्तविरोधी चिकित्सा न करें।

आयुके अनुसार सोनेके घण्टे इस प्रकारसे हैं।

| आयु | सोनेके घंटे |
|-----------------|-------------|
| १ महीनेका शिशु | २० घण्टे |
| ६ " " | १८ " |
| १ वर्ष | १६ " |
| ४ " " | १२ " |
| १२ वर्ष तक बालक | ८-१० " |
| १६ " " | ८ " |
| २०-३० | ६ " |

प्रायः रात्रि १० बजेसे ४ बजे तक, १ घण्टा इधर उधर हो सकता है।

४०-५०-६०

ग्रीष्म ऋतुमें

५-६ घण्टे

१-२ घण्टे दोपहरमें

जिन व्यक्तियोंको २-४ दिन या उससे अधिक निद्रा नहीं आती वे अनिद्रा रोगसे ग्रसित माने जाते हैं। निमोनिया, हृदयरोग, वातपित्तोत्पन्न आन्त्रिक ज्वर निद्रा न आना अरिष्ट लक्षण हो सकता है। आपने अनिद्रा रोगकी चिकित्सा है।

निद्राकी आवश्यकता—

अथ खलु त्रय उपस्तम्भाः।

"तद्यथा आहारः स्वप्नो ब्रह्मचर्यमिति" आचार्य चरकका ऐसा कथन है यहां स्वप्नसे मतलब युक्तियुक्त निद्रासे है। "देह वृत्तौ यथाऽऽहारस्तथा स्वप्नः सुखो मतः" वचनानुसार द्वितीय सहारा निद्रा है। युक्तियुक्त निद्रा ही देह धारण करनेमें समर्थ होगी मनः शरीर श्रम सम्भव निद्रा बिना शरीर ठीक तरह कार्य करनेमें समर्थ नहीं हो सकता। मन और शरीर जब श्रमित होता जाता है तो उस समय निद्रा मानस और शारीरिक थकान दूर कर स्वास्थ्य प्रदान करने वाली होती है।

ग्रीष्मेत्वादान रुक्षाणां वर्धमाने च मारुते।
रात्रीणां चाति संक्षेपात् दिवास्वप्न प्रशस्यते ॥
ग्रीष्मकालमें दिनमें भी निद्राके लिए आदेश है।



सच्चा स्वास्थ्य प्राप्तिका रहस्य

—पर नारीका चिन्तन तक भी मत कीजिये—

लेखक—वैद्य मन्मथन लाल शर्मा “कौशिक” आ० आचार्य-आ० अलङ्कार
वैद्य इन्चार्ज राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय आहौर, जिला-जालौर

शरीर शास्त्रके मर्मज्ञ, इस बातको एक स्वरमें स्वीकार करते हैं; कि शरीरका मुख्य, प्राण, धातु, जीवनसार, तथा देह दीपकका “तैल” “वीर्य” ही है।

इस तैलके बिना, देह रूपी, बातीका जलना, मुश्किल ही नहीं, अपितु असम्भव है। अतः वीर्य रूपी तैलका दुरुपयोग करना, भाग्यकी पूँजी खोना, तथा भयङ्कर बीमारियोंका-घर ही नहीं करना-अपितु मृत्युको अकाल ही बुलाना है।

यह निर्विवाद-सत्य सिद्धान्त है कि “वीर्य बलसे मृत्युको जीता जा सकता है। जो निम्नलिखित वैदिक सूक्तियोंसे सिद्ध हो जाता है।

“ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपावन्त” अथर्व ११-७-१९

अर्थात् ब्रह्मचर्य रूपी तपो बलसे ही विद्वान् लोगोंने मृत्युको जीता है। और भी “छान्दो० प० ८-५-३-में लिखा है

“एष ह्यारमा न नश्यति यं ब्रह्म चर्येणानुविन्दते”
जिस आत्माको मनुष्य ब्रह्मचर्यसे प्राप्त करता है, वह आत्मा नष्ट नहीं होता ॥ अस्तु:—

काम गुलामोंको अपने स्मृति पटलमें यह वैदिक-सूक्त स्मरण रखना चाहिए:—

“ब्रह्म चर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति”

अथर्ववेद:—१।१।७

ब्रह्मचर्य रूपी तपके द्वारा ही राजा राष्ट्रका संरक्षण करता है।

आपको मालूम होना चाहिए कि-महाभारतके प्रसिद्ध योद्धा-भीष्म पितामहने, वीर्य बलसे ही मृत्युको जीता था।

“आठ प्रकारके मैथुनसे, बचो सदैव मेरे भाई”
“भीष्मपितामह ने वीर्यबलसे मृत्यु दूर भगाई”
“आ० पी० लता से”

इस तथ्यको चिकित्सकगण भी भलीभाँति जानते हैं-कि, जिस आतुरका, बलवीर्यक्षीण होगया है। वह केवल, कष्ट साध्य ही नहीं अपितु असाध्या-वस्थाका रोगी होता है।

तथा शीघ्र ही उसका यमदूतसे पाला पड़ जाता है दूसरी ओर रोग असाध्य है परन्तु रोगीका बल वीर्य क्षीण नहीं हुआ है, तो-वह शीघ्र ही स्वस्थ हो-जाता है। वास्तवमें “वीर्य रक्षा” हजारों रोगोंकी एक राय बाण दवा है। जैसे कहा भी है।

सब रोगोंकी एक जड़ी।

वीर्य रक्षा हर घड़ी ॥ अस्तु:—

वीर्यका सम्पक् पालन करने वालेको ब्रह्मचारी कहते हैं। वैसे ब्रह्मकी प्राप्ति-करनेके लिए वेदोंका अध्ययन करना भी-ब्रह्म चर्यका प्रसिद्ध अर्थ है।:—

“दूर असलते” वीर्य रक्षासे ही, उच्च तथा स्थिर बुद्धिकी प्राप्ति होती है। और इस प्रखल-तथा तीव्र-बुद्धिसे ही-वेद शास्त्रोंके-गूढ़ तथा कठिन-जीवन रहस्य-मय, विज्ञान तत्त्वोंका सुअध्ययन हो सकता है। इस प्रकारके उच्च तथा सन्धक स्वाध्यायसे प्राप्त “ज्ञाना-ग्निसे” अज्ञान अन्धकारको मिटाकर “ब्रह्मकी साक्षात्-प्राप्ति” की जाती है।

हमारे त्रिकाल दर्शी-महर्षियोंने इस ब्रह्मचर्य तपसे ही-महान् जीवन शास्त्रोंका निर्माण किया था। इस ब्रह्मचर्य बलसे ही, बाल ब्रह्मचारी पवन पुत्र इस ब्रह्मचर्य के दृढ़जीन से मृत्युको थरा दिया था:—

आ० पी० ल० में यथा:—

अरे पता नहीं क्या तुम्हें—

कामजीत थे पवन पुत्र हनुमान ।

जिनके मुष्ट प्रहार से,

लज्जित था इन्द्रजीत बलवान ॥ अस्तु:—

निरोग, सुखमय, बलवान्, तेजस्वी, दीर्घ जीव-
नकी, भला किसको इच्छा न होगी । परन्तु क्षणिक
आनन्दके भूखे, मूर्खलोग, कामके गुलाम, अपनी
जीवन, रसायन, गंगाकर स्वास्थ्यसे हाथ धो बैठते हैं ।

उनको पता होना चाहिए कि शरीर बेचकर ही
भोगका क्षणिक आनन्द खरीदा जा सकता है ।

अर्थात्—भोग खरीद कर उसके बदले शरीर एवं
सुस्वास्थ्यकी आहुति देकर, भोगकी कीमत चुकानी
पड़ती है । तत्त्वतः पाठकोंको यह निस्संदेह समझ
लेना चाहिए कि “वीर्य रक्षा ही जीवन है, तथा वीर्य
नाश ही मृत्यु है” जैसे कहा भी है ।

“स्मरणं विन्दुपातेन-जीवनं विन्दुधारणान्”

अतः इस तथा परलोकमें कल्याण चाहने वाले,
बन्धुओंको संतान प्राप्त करनेके अतिरिक्त, आठ
प्रकारके मैथुनोंका परित्याग कर देना चाहिए ।
शास्त्रोंमें आठ प्रकारके मैथुन इस प्रकारसे बताये हैं ।

यथा:—

“स्मरणं कीर्तनं केलि प्रेक्षणं गुह्य भाषणम्”

“संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रिया निवृत्तिरेव च”

(१) स्मरण:—किसी सुन्दरीके हाव, भाव, कटाक्ष,
रूप, लावण्यका स्मरण करना, तथा भविष्यमें किसी
सुन्दरीके साथ मैथुन करनेका स्मरण करना, स्मरण
मैथुन कहलाते हैं ।

(२) कीर्तन:—अश्लील चर्चा करना, शृंगार-
रसोंका वर्णन करना, तथा युवतियोंके रूप, लावण्य,
यौवन, शृंगारकी प्रशंसा करना, तथा कामोद्दीपन
साहित्य पढ़ना, एवं दूसरोंमें सुनना, इत्यादि कीर्तन
मैथुन कहलाते हैं ।

(३) केलि:—किसी स्त्रीके साथ हंसी, मजाक करना,

नाचना, गाना, जल विहार करना, फाग खेलना,
अश्लील चेष्टाएँ करना आदि आदि केलि मैथुन कह-
लाते हैं ।

(४) प्रेक्षण:—स्त्रियोंके अंग-प्रत्यंगोंकी रचनाएँ
देखना, नाटक, सिनेमा देखना, दर्पणमें अपना रूप
शृंगार देखना, “प्रेक्षण” मैथुन कहलाते हैं ।

(५) गुह्य भाषण:—स्त्रियोंके साथ एकान्तमें, गन्धी
बातें करना, उनके रूप, शृंगार, यौवनकी प्रशंसा
करना, युवतियोंके साथ हास्यविनोद करना गुह्य
भाषण मैथुन कहलाते हैं ।

(६) संकल्प:—कामभाव, तथा काम चेष्टासे
किसी स्त्री, बालक बालिकाका चुम्बन करना, किसीके
साथ मैथुन करनेका विचार करना, संकल्प रूपी, मैथुन
कहलाते हैं ।

(७) शृंगार:—खुशको सुन्दर तथा दूसरोंको
अपनी ओर आकर्षित करनेके लिए सुरमा लगाना,
पाऊडर लगाना, इत्र लगाना, दाँतोंमें सोना जड़ाना,
शोकके लिए चश्मा लगाना, लालझोठ करनेके लिए-
पान खाना, इत्यादि शृंगार जन्य मैथुन कहलाते हैं ।

(८) श्रवण:—किसीके रूप लावण्य तथा अंगोंका
वर्णन करना, सुनना, मैथुन सम्बन्धी बातोंका श्रवण
करना, श्रवण मैथुन कहलाते हैं । अस्तु:—

हर हालतमें उक्त आठ प्रकारके मैथुनोंका त्याग
करनेमें ही जीवनकी बलिहारी है । आयुर्वेदके महान-
ज्ञाता महर्षि चरकने शरीर धारणमें ब्रह्मचर्यको मुख्य
स्थान दिया है यथा:—

चरक:—

“व्रतः उपस्तम्भाः आहारो निद्रा ब्रह्मचर्यमिति”

परन्तु आजके काम गुलाम क्षणिक स्वादने जीवन
रसायन गंगाकर “जोवनका स्वर्णकाज” टी. वी. के
अस्पतालमें जीवन व्यतीत करते हैं । अतः

“ज वेम शरदः शतम्” की इच्छा वालों ! तथा
जीवन साधनपथके पथिकों ! यदि अपना कल्याण चाहते
हो तो “परनारीका चिन्तन तक भी मत कीजिए”

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः श्रीरस्तु:—

तीन तरहके रोगी

Digitized by Arya Samaj Publication Chennai and eGangotri

लेखक-श्री साताराम जोशी कालेड़ा

चरु निस्त्रैपणाय अध्यायमें जहां तीन तीन संख्या के तत्व गिनाये हैं वहाँ रोगी भी तीन तरहके लिखे हैं।

रोगी इलाजी (इलाज कराने वाले) तीन तरहके ज्ञानी और अज्ञानी पहले दो तरहके समझें। अज्ञानीके दो भेद एक साध्यावस्थामें इलाज कराने वाले बाल, जिनको थोड़ी पीड़ा रहनेसे यहाँ मालूम नहीं कि यह रोग है आगे चलकर दुःख देगा। दूसरे अज्ञानी जो प्रमादी हैं अर्थात् शरीर बल होनेसे अहंकारसे साध्यावस्था तक तो रोगकी परवाह ही नहीं करते, उपेक्षा रखते हैं, असाध्य होनेपर चेतते हैं।

इस प्रकार एक ज्ञानी बुद्धिमान रोगी, और दो अज्ञानी एक साध्यावस्था या रोगकी अवस्था न जानने वाला; मोहवश इलाज न कराने वाला, दूसरा जवानीके जोरमें जानते हुए भी अहंकारसे साध्यावस्थाके अतिक्रमण होनेपर इलाज कराने वाला।

इस प्रकार तीन तरहके आतुर हुए। ज्ञानी, अज्ञानी (बाल) और प्रमादी।

अथवा दो भेद मानें। एक बुद्धिमान् सुख साध्य रोगकी चिकित्सा कराने वाला पूर्व रूपावस्थामें चेतने वाला, दूसरा असाध्यावस्थामें होशमें आने वाला शास्त्रमें रोग और दोष वृद्धिकी या दुःखवृद्धिकी छ-छ अवस्थाएँ मानी हैं—

१ संचय, २ प्रकोप, ३ प्रसव, ४ स्थानसंश्रय, ५ व्यक्ति, ६ भेद।

संचय—एक प्रकारका शरीरमें दोषोंका संचय है स्तुचर्या न पालनेसे या विपरीत आहार विहारसे शरीरके कोष्ठोंमें मलरूप दोषोंका शनैः शनैः संचय होता रहता है जैसे हमारे घाके नाली नालोंका गन्दा पानी एक या दो तीन जगह (जैसे स्नानागार, शौचागार, पाकशाला आदि स्थानोंके नाली नालोंका गन्दा पानी कचरा एकस्थानमें खड्डोंमें संचय होता रहे।

इसी प्रकार दोषोंके आमाशय पिताशय वाताशय या अन्य दोष स्थानोंमें संचय होता रहता है। यह संचयावस्था है।

यदि वह दोष संचयावस्थामें ही पञ्चकर्मादिते निकाल दिया जावे तो साग शरीर प्रकोप प्रसरने दोष बगल होकर रोग पैदा न करे।

इसलिए यह प्रथम चिकित्सा काठ माना है। अर्थात् जैसे घरकी पावडामें मैला पानी भर जावे तब निकाल दें तो वह सारे चोकको गन्दे काँचड़से दूषित नहीं करेगा, दुर्गन्धसे सभी कमरे ठीक रहेंगे।

यदि प्रातःदिन निकाल दिया जावे तो सफाई रहेगी यह बुद्धिमानी है कि गृहपति उसे संचयावस्थामें ही साफ करादे गन्दगीको कई दिन उपेक्षा कर देना रोगी होनेके बाद सफाई कराना बुद्धिमानी नहीं।

इसकेबाद प्रकोपकाल है। रोग इलाज करानेकी। वह दूसरी अवस्था है प्रकोप अर्थात् शरीरमें दोषोंका बल बढ गया, जोरोंसे ऊपरतक कोष्ठाङ्क दोषोंमें व्याप्त होगये, भर गये तब भी चेत जावे और शुद्धि कर डाले तो आगे प्रसर फैलाव न होने पावे।

यह दूसरा इलाजका समय बतलाया गया है जैसे मल कोष्ठोंके ऊपर तक भर जाने तक भी चेत ले तो गन्दगी न फैले साफ करादे। इलाज होसकता है।

इसकी उपेक्षा करदें तो-फिर प्रसर तीसरी दोष-गति कही गई है वह पानी ऊपरसे छिलकर ऊफलकर फिर सारे चोकमें फैल जावे।

वैसे ही बात पित्त कफ आमाशयादि कोष्ठोंमेंसे ऊफलकर (पाल तोड़कर) फिर ऊपर नीचे शिर धमनी रसायनी आदि नाली प्रणाली स्थूल सूक्ष्म स्रोतोंसे फैल जावे यह तीसरा इलाजका समय है इस समय भी चेत जावे तो ठीक है।

शरीर भारी, अंग पीड़ा, अग्निमान्द्य, अरुचि, उर अंगमर्द, शिरःशूल आदि लक्षण होते हैं।

इसकेबाद स्थान संश्रय चौथा चिकित्साकाल है फैलते हुए दोष सारे शरीरमें किसी न किसी जगह ठहर जाते हैं अर्थात् रक्तसंचारमें प्रविष्ट वात, पित्त, कफ मांसपेशी प्रन्थि, सन्धि, कोष्ठ आदि स्थानोंमें ठहर जाते हैं अरुता अड्डा जमा लेते हैं यह चौथा चिकित्सा काल है।

और रोगके सामान्य विशिष्ट पूर्वरूप इस गति उत्पन्न हो जाते हैं।

यह स्थान संश्रय प्रसरके बाद होता है। जैसे आसन्न अरिष्ट एक पात्रमें ऊफन जाते हैं इसी प्रकार सामाजी उल्लेखित दोष कहीं न कहीं ठहर जाते हैं।

दोष प्रसारके १५ भेद हैं सुश्रुतमें देख लें। यहाँ विस्तार ठीक नहीं उनके लक्षण समझनेके लिए भेद किये गये हैं।

इसके बाद फिरभी अज्ञानी बाल मूढ गंवार पूर्व-रूपावस्थामें भी इलाज न करावें तो रोगपूर्वरूपावस्थासे रूपावस्थामें आजाता है। अर्थात् पूर्वरूपावस्थामें अपथ्य सेवन करता रहे, जैसे शरीरकी थकान बेचैनी अंगमर्द आदि लक्षणोंका अनुभव होते हुए भी लापरवाही कर दें। स्नान करे, भोजन करे, हवामें फिरे तो ज्वर होगा ही।

शोथावस्थामें (पूर्वरूपावस्थामें) शुद्धि रक्तावसेक विस्लापन न करेगा तो शोथ पाक होकर अवश्य व्रण होगा ही। यह पांचवाँ क्रियाकाल है।

इसकेबाद शोथमें व्रण शोथमें तो मवाद सुँह बनाकर फूट जावेगा और व्रणको दूषित व्रण बना देगा।

तथा ज्वरादि कायचिकित्साके रोगोंमें दोष धीरे धीरे ज्वरावस्थामें रूपावस्थामें भी वेपरवाही इलाज न करानेसे चिरानुबन्धी लम्बे दिन चलनेवाला ज्वर धात्ववगाही तृतीयक चतुर्थक सन्निपातादि ज्वर होंगे।

इसे छठी अवस्था कहते हैं यहाँ भी उपेक्षा हुई तो फिर प्रमादी अज्ञानीकी रोगकी असाध्यावस्था हो जावेगी और वह उपद्रवोंमें अत्यन्त पीड़ाओंसे घायल होकर मर जावेगा।

उस समय इस असाध्यावस्थामें अब्बल तो चिकित्सक चिकित्सा ही नहीं करेगा।

यदि चिकित्सा की भी जावेगी तो इसे वैद्य बचा नहीं सकेगा। चाहे वह सर्वस्व ही घरका लुटा दे। चाहे घर बार बिक जावें, कर्जा हो जावे, कर्म पुण्यदान कुछ भी करे, सारा परिवार खैर मनावे और देवताओंको सुमारे परन्तु इस अथाह समुद्रमें डूबे हुयेको कौन निकाल सकता है।

इस लिए भगवान चरक दयार्द्र हृदयसे उपदेश करते हैं कि प्राणीको यदि सुख पूर्वक जीना है तो इन छ अवस्थाओंको एकको नहीं लांघना चाहिये। विवश हो जावे तो दूसरीमें चेत जावे इन संचयादि अवस्थाओंमें सावधान हो जावे रोग चाहे थोड़ा हो, ज्यादा हो इसको बढ़ने नहीं देना चाहिए तुरन्त इलाज कराना चाहिये। यही बुद्धिमानों है।

अन्यथा वे भौत दुखी होकर सरना पड़ेगा और ऐसी अवस्थाओंको पार करने पर तो हरगिज ब्रह्मा भी नहीं बचा सकेगा, चाहे वह कितना भी प्रयत्न करे।

इस प्रसंगको चरकने खोलकर लिखा है और कहा कि रोगका विश्वास मत करो यह राईसे शीघ्र पर्वत बन जाता है और मार देता है।

तस्मान् प्रागेव रागेभ्यो रोगेषु तरुणेषु वा।

भेषजै प्रतिकुर्वीत य इच्छेत् सुखमात्मनः॥

॥ च० सू० ११॥

एक सेवा भावी छात्र था शीतकालके दिन थे वह खुली हवामें प्रातः ६ बजे नलके नीचे साबुन तैल लगाकर स्नान कर रहा था। मैंने कहा शर्दी लग जावेगी यदि स्नान ही अभीष्ट है तो निवातस्थानमें कुछ गुनगुने या ताजा पानीसे स्नान किया करो।

उसने प्रमादसे उत्तर दिया, गुरुजी ! मेरे शरीरमें इतनी गर्मी और ताकत है कि मैं तालाबमें कूद पड़ूँ तो सारे तालाबका पानी गरम हो जावे।

मैंने कहना बन्द कर दिया, प्रमादी किसीकी नहीं मानता।

आखिर ऐसा सन्निपात ज्वर हुआ कि शिरः और सर्वाङ्ग वेदनाके मारे कई दिन तड़फड़ाया और खूब दश बीस सेर अंगारोंसे सिकताव निवात स्थानमें किया, उपचार किया तब बचा नहीं तो थोड़े ही समयमें छाओं अवस्था संचयादि पारकर असाध्यावस्थामें पहुँच गया था।

यह है प्रमाद, आयुर्वेदाध्यायी छात्र फिर गुरुजी आज्ञाकी अवहेलना। अज्ञानी बाल गंवार भी बहुत मिले हैं जिनको पूर्वरूपावस्थामें प्रेरणा दी, पर माने नहीं, दुखी हुए। अच्छे-अच्छे मास्टर फुरसत नहीं। पुकारते पुकारते डबल खर्चा करते हैं और पीछे इलाज कराते हैं पूरे दुखी होते हैं छुट्टी भी महीनोंकी लेनी पड़ेगी ही। वेतन भी कटता है और इलाज भी पीछे होता है।

छोटे बच्चे शिशु शोष रोगसे उपेक्षाके कारण ही मरते हैं कासकी उपेक्षासे क्षय, अतिसारकी उपेक्षासे महंगा रोग होता है। आप लोग सदा देखते ही हैं।



आयुर्वेद परिषद्की अध्यक्षता श्री पं० प्रेमशंकर शर्मा संचालक आयुर्वेद विभाग राजस्थानने की।

वैद्य श्री प्रेमशंकर जोशी ने कहा कि राजस्थानमें आयुर्वेद विकासके लिए सरकार काफी प्रयत्नशील है। पिछले ८-१० वर्षमें राजस्थानमें औषधालयोंकी बढ़ती हुई संख्या इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली अत्यधिक जन प्रिय है।

आयुर्वेद विश्व भारतीमें आयुर्वेद परिषद्का आयोजन

सरदारशहर, दिनांक १४, १५, १६ फरवरी १९६५ को यहाँ आयुर्वेद परिषद्का एक शानदार आयोजन किया गया। पाठ्यक्रम गोष्ठी अखिल भारतीय विद्या पीठके भूतपूर्व अध्यक्ष आचार्य मणीरामजीकी अध्यक्षतामें, अनुसंधान गोष्ठी श्री दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णी, भूतपूर्व निर्देशक उत्तर प्रदेश और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम गोष्ठी श्री विश्वनाथ द्विवेदी, निर्देशक पोस्ट ग्रेजुएट ट्रेनिंग सेंटर जामनगरकी अध्यक्षतामें सम्पन्न हुई। देशके गणमान्य विद्वानोंने पधारकर इस आयोजनको सफल बनाया।

गांधी विद्या मन्दिर, सरदारशहर द्वारा दिनांक १३, १४, १५, १६ फरवरी, १९६५ को आयोजित भारतीय संस्कृति सम्मेलनके अवसरपर आयुर्वेद परिषद्के साधारण अधिवेशनमें सर्व सम्पत्तिसे पारित प्रस्तावः—

आयुर्वेद एक सम्पूर्ण जीवन विज्ञान व वैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति है। देश, काल व सुविधाकी दृष्टिसे भी यह भारतवासियोंकी आवश्यकताके सर्वथा अनुकूल है। इतना होते हुए भी सरकारके द्वारा आयुर्वेद उपेक्षित सा विषय रहा है। विदेशोंसे आगत एलोपैथिकको सरकार द्वारा जो मान्यता व सम्मान प्राप्त है, उसका स्वरूप सूक्ष्मांश ही आयुर्वेदको प्राप्त है। यह अत्यन्त खेदका विषय है। अतः गांधी विद्या मन्दिरके भारतीय संस्कृति सम्मेलनके अवसरपर आयुर्वेद परिषद्के साधारण अधिवेशनमें निम्नलिखित प्रस्ताव सर्व सम्पत्तिसे पारित किये गयेः—

१-सरकार द्वारा आयुर्वेद चिकित्सा पद्धतिको आधुनिक चिकित्सा पद्धतिके समान मान्यता व सहायता दी जावे।

२-केन्द्रीय सरकारमें आयुर्वेद मन्त्रालयका पृथक् विभाग हो।

३-इण्डियन मैडिकल कौन्सिलके समान अखिल भारतीय आयुर्वेद परिषद्की स्थापना हो।

४-प्रत्येक राज्यमें राजस्थानके समान आयुर्वेद मन्त्रालय हों।

५-आयुर्वेदीय शिक्षण संस्थाओंको सरकार अधिकाधिक आर्थिक अनुदान प्रदान करें।

६-चतुर्थ पंचवर्षीय योजनामें देशके प्रत्येक प्रदेश में आयुर्वेद विश्वविद्यालय हों। यदि प्राच्य विश्वविद्यालय हों तो उनमें आयुर्वेद मुख्य फैकल्टीके रूपमें रखा जाय।

७-प्रत्येक प्रदेशमें अविलम्ब कम से कम एक ऐसे आयुर्वेद महाविद्यालयकी स्थापना हो जिसमें शिक्षण, स्नातकोत्तर प्रशिक्षण, अनुसन्धान विभाग, आतुरालय, रसायनशाला, बनीषधि वाटिका, अनुसन्धान, एवं प्रचार प्रसार विभाग हों और ऐसे महाविद्यालय यदि निजी संस्थाओं द्वारा संचालित हों तो उन्हें केन्द्र और राज्य सरकारें विशिष्ट संस्था मानकर कुल व्ययका ९५ प्रतिशत आर्थिक अनुदान प्रदान करें।

८-प्रत्येक ग्राम पंचायतमें एक आयुर्वेदिक औषधालय हो और प्रत्येक जिलेमें एक ए० श्रेणीका औषधालय कम से कम ५० शैयाओंका हो और

प्रत्येक प्रदेशमें सञ्चालक, स्वास्थ्य अधिकारीकी नियुक्ति हो।

६-प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्चतर शिक्षण संस्थाओंमें आयुर्वेदीय स्वास्थ्यवृत्तका ज्ञान सामान्य विज्ञानके स्वास्थ्य विज्ञानके अन्तर्गत सम्मिलित किया जाये।

१०-समस्त भारतवर्षमें चलनेवाले आयुर्वेद महा-विद्यालयोंमें एक ही स्नातक पाठ्यक्रम चालू हो और उसमें अवधि ५ वर्षकी हो। पाठ्यक्रम उत्तीर्णकर लेनेवाले स्नातकोंको आयुर्वेदाचार्यकी उपाधि दी जावे।

वैद्य सोहनलाल शर्मा

पिसिपल,

आयुर्वेद विश्व भारती,

गान्धी विद्या मन्दिर, सरदारशहर (राज)

पशु-बलि मत कीजिये

मांसाहार धार्मिक नहीं; अधर्म स्वास्थ्य और सुख नहीं दे सकता दुर्गतिका कारण है।

लेखक:—आ. आचार्य वैद्य मखन लाल शर्मा 'कौशिक' आयुर्वेदालंकार, भि. व. धर्म रत्न, गुडलिया निवासी आहोर (राज०)।

ओ भैरव-कालीके नामपर पशु-बली करने वाले हिन्दुओं? जिह्वा लोलुपताके गुलामों? देवमन्दिरोंको कसाईखाने बनाने वालों? हिन्दू संस्कृतके प्रधान धर्म 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः' तथा 'अहिंसा परमो धर्म' एवं 'परहित सखि धर्म नहीं भाई, पर पीड़ा सम नहीं अधर्माई' के पवित्र सिद्धांतों को गवांकर-विचारे निर्दोह निरपराध, पशु-पक्षियोंका गला क्यों काटते हो? इन्होंने तुम्हारा क्या बुरा किया? जरा सोचिये पशु-बलि जैसे जघन्य अपराधके लिए स्वयं देवी क्या कहती है—

मद् व्याजेन पशून् दत्त्वा यो यज्ञे सह बन्धुभिः,

तं गोत्रलोमसंख्यादेरसिपत्रवने वसेत्।

मेरे ब्रह्मने से जो मनुष्य पशु ही बध करके अपने भाई बन्धुओं-सहित मांस खाना है वह मनुष्य, पशु के शरीरपर जिनने बाल (रोम) होते हैं उनमें दो वर्षों तक असिपत्र नामक मद्ध होता है। तब ही जिनका पशु-पक्षियोंका

है। और भी कहा गया है।

देवोपहार व्याजेन यज्ञ व्याजेन ये ऽथवा!

घ्नन्ति जन्तून् गतघृणा घोरां ते यान्त दुर्गतिम्॥

जो लोग देवताओंके नामपर अथवा यज्ञके नामपर पशुओंको मारते हैं वे दुष्ट घोर दुर्गतिको प्राप्त होते हैं। अतः बन्धुओं? न तो पशु हत्या कीजिये और न कराईये तथा न करने दीजिये। न तो मांस खाईये न खिलाईये और न खानेकी प्रेरणा दीजिये।

तत्त्वतः मांस खाना केवल धार्मिक दृष्टिसे ही दूषित नहीं है अपितु स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भी अहितकर सिद्ध है मांस खानेसे अनेक मानसिक विमारियां हो जाती हैं। दरअसलमें मांसाहार भयंकर मानसिक विमारियोंका पिता है। जिसके अनेक वैज्ञानिक प्रमाण मौजूद हैं। अतः इस प्रकारकी कलंक कालिमाएँ दुष्प्रवृत्तियोंके विरुद्ध निर्भीक आवाज बुलन्द कीजिये और अपनी सच्ची मानवताका परिचय दीजिये।

पशुओंकी आत्माकी पुकारको अनसुनी न करें

वे क्या कहते हैं।

जीव को परमात्मा मानने वाले-रे हिन्दू भाई! हम दीन, मूक पशुओंपर भी कुछ दया नहीं क्यों आई? बिना अपराध काटते हमको, तुम हो निर्दयी भाई! क्या बुरा किया हमने तेरा, बतलादो हिन्दू भाई! प्राणोंकी भीख मांग रहे, हम तुमसे हिन्दू भाई! ओ दया करो हम पर दयालु, मानवताके हो भाई! शरणमें है हम तो तिहारी, शरण दे दो मनुज भाई! स्वार्थ बिना नित्त उपकार करे, तेरे जो मानव भाई! नहीं हमें स्वर्ग फलकी चाह, ओ सुनले हिन्दू भाई! नहीं हमने कहा है तुमसे, भेद बलि दे स्वर्ग भाई! हमें तो घास-पात धरापर, संतोष है सदा भाई! बिना अपराध गला काटते, धर्म यह कहाँ का भाई! यदि यही मानलिया जावे, बलिके प्राणी स्वर्ग भाई! यज्ञमें होमे जाने वाले, यदि सुख स्वर्गका भाई! रे देकर बलि प्रिय जनोंकी, क्यों न स्वर्ग पहुँचते भाई! फिर माता पिता प्रिय पुत्रको क्यों नहीं उनको भाँसे भाई! यज्ञ पशु बनाकर यज्ञमें, कोई बलि हमारी देता भाई! पापों, अन्यायों हरयारा, धर्म दोहो कहलता भाई! कदवा भाई!

अहिंसा धर्म सुपाले वही, सच्चा मानव कहलाता ॥
रे अपनी रसनाके गुलाम, तुम्हारी कैसी मूर्खता ।
हृदया जैसे घोर पापसे, क्या खुशी होते देवता ।
जीव मारकर सफल न होगा, रे दुष्ट जवन्य कर्म से ।
हमें मारकर सुखी न होगा, मानव सोचले ध्यान से ॥

अतीतकी ३० कल्पनाएँ

श्री भवानीशंकरजी वैद्य तपोवन, उदयपुर

प्रिय सुनिल—

तुम्हारा घूबता घामता पत्र आज यहां मिला है ।
मुझे बम्बई आये डेढ़ सप्ताह होगया है, भिन्न-भिन्न
प्रकारके रोगियोंका तांता सा लग गया है । २०%
रोगी मानसिक तनावके कारण अतिशय पीये जाते
हैं । शायद चार पांच दिनोंमें लिये हुए रोगियोंको
मिटवा कर दो दिनोंके लिए पूना जानेका विचार कर
रहा हूँ "हिन्दुस्तान एंस्टीबायोटेकम-फैक्टरी" देखनेके
लिये । यों दोबार पहले भी उक्त फैक्टरी देख चुका हूँ
जिन्नासा वृत्ति शांत न होनेके कारण पुनः देखनेका
कार्यक्रम बनाया है । लौटते समय सूरत, बड़ौदा नडि-
याद और अहमदाबाद होता हुआ १५ जनवरी तक
उदयपुर पहुँच जाऊंगा ।

यहां इस बार रोगियोंको शाक सम्राट वेंगनका
प्रयोग विशेष रूपसे करा रहा हूँ । तुम्हें भी वेंगनके
संबंधमें थोड़ी जानकारी करा देना आवश्यक समझता
हूँ क्योंकि जो प्रश्न तुमने ग्रामवासियोंके रोगके
संबंधमें किए हैं, उनके लिए भी वेंगन अधिक
उपयोगी होगा ।

"भोजनं घिग्गुन्ताकम्, वृन्ताकम् घिग्गुन्ताकम् ।

सघृन्तं घिग् तैलाढ्यं तैलाढ्यं घिग्गामठम् ॥

इस शाक-सम्राट्का प्रशंसा चैमकुतुडल ग्रन्थमें
चैम शर्मा ने बहुत की है । इस शाक-सम्राट्के संबंधमें
अमेरिकीके मेकिस्काने भी बहुत कुछ लिखते हुए स्वी-
कार किया है कि यह भारतकी अद्भुत वनस्पति है ।
चाक संहितामें भी इतना उल्लेख है इससे प्रतीत होता
है कि शदिगोंले इसका उपयोग भारत वासी करते
आ रहे हैं ।

आयुर्वेदमें वृत्तफला, चित्रफला, रक्तफला, नीलफला
और मित्रफला आदि नामोंसे संज्ञित हैं ।

वेंगनकी जांच करनेमें सचिकन्वृद्ध और मांसल ही
अधिक उत्तम होता है इसीलिए राज निघंटुकार ने
उत्तम वेंगनको 'मांसफला' कहा है ।

सबका जाना पहचाना और प्रिय वेंगन तेलमें ही
बहुत स्वादिष्ट बनता है लाभकी दृष्टिसे, पानीमें अथवा
केवल मंदअग्निमें पकाया हुआ शरता अधिक उपयोगी है ।

औषधीय उपयोगमें इसके फल पान और मूलका
उपयोग किया जाता है । इसके गुणोंको वर्णन करते हुए
वैद्यक शास्त्रमें लिखा है कि वेंगन सधुर, तीक्ष्ण उष्ण,
विपाकमें कटु और अपित्त अर्थात् पित्त नहीं करने
वाला माना है । यह ज्वर, बाल-कफके रोग, गुल्म
प्लाहावृद्धि, शिरोरोग, जीर्ण ज्वर, कामला, अरुचि,
मूत्र रुकावट और पथरीको मिटाने वाला माना
है । यह अग्निको बढ़ाने वाला भी है । चैम शर्माने
इसे पित्तकारक माना है । कोमल वेंगन कफ और
पित्तका शमन करते हैं, पचनेमें हलके होते हैं और
वीर्यवर्द्धक होते हैं । पुराने और अधिक पके हुए वेंगन
पित्तको बढ़ाते हैं ।

सफेद और गोल वेंगन बवासीरमें विशेष हितावह
है । परन्तु अन्य गुण काले वेंगनकी अपेक्षा
सफेद वेंगनमें कम होते हैं । अग्निपक्व (भुरता)
कफ मेद और आमका पाचन करने वाला होता है
और अतिशय रोगियोंके लिए तो वेंगनका भुरता
आशीर्वाद लग ही है यदि इसमें सफेद प्याजका
२०% प्रतिशत कचूर और मिला दिया जाय ।

संशर्गित, जुलाम, अजोर्ण, पांडुरोग, वात व्याधि
नेत्ररोग, खांसी, कानके रोगोंमें इसे पथ्य रूपमें स्वी-
कार किया गया है ।

फिजोसाइन्सके चिकित्सक इसके पत्तोंकी चटनीमें
जीरा और शक्कर मिलाकर अर्शके रोगियोंको देते हैं
जिमसे बवासीरका खून बन्द होजाता है और दर्द भी
नष्ट हो जाता है । पंडित तरहरि शास्त्रीने वेंगनको
'निद्रालु' पर्याय वाचक शब्द दिया है ।

अक्रोका निमानी गर्मीकी बीमारीमें इसके मूलका
काढ़ा मिलाने हैं और जगोहर इसके पत्ते पीसकर
लगाया करते हैं ।

बहुतेरे चिकित्सक इसके बीजोंका चूर्ण उत्तेजना
के लिये उपयोग करते हैं । दांतोंकी कुलनपर

इसके पत्तोंका उपयोग भी बहुतसे लोगोंको करते देखा गया है। सड़े हुए पुगने घावोंपर भी इसका तैल उपयोगी सिद्ध हुआ है।

बैंगनको विधिवत् उपयोग करनेसे, धमनियोंमें उभरे हुए दोष शांत होजाते हैं और नाड़ियोंकी जड़ना दूर हो जाती है। पाचन शक्ति बढ़ती है, वायु व कफके विकारोंको यह मिटाता है। हृदयके दबावको कम करता है, शरीरमें शक्ति और स्फूर्ति बढ़ाता है।

'वृन्तातयूष', वाताक्षेपको रोकता है, पथरीको काटता है और मूत्रज है। इसकी जड़में प्रतिरोधक (एन्टीबायोटिकएक्सन) शक्ति पाई जाती है। कुछ वैज्ञानिकोंने इसके भिन्न भिन्न भागोंसे एक्टीबायोटिक-तत्व निकाले भी हैं।

इस तरह यह शाक-सम्राट् केन्सर, सिफलिस, अर्श, मूत्रावरोध आदि में अनुसंधानीय दृष्टिसे उपयोग किया जा सकता है। जिसका वर्णन अवकाशके समय करूंगा।

आज तो केवल 'अनिद्राहर-स्वरसका प्रयोग लिख कर यह पत्र समाप्त करता हूँ। यह अनिद्राहर स्वरस केवल नींद लाने वाला ही नहीं है दूसरी व्याधियोंमें भी उपयोगी है जिसका वर्णन किसी दूसरे पत्रमें करूंगा।

शेष कुशल—मंगल और भगवत्कृपाश्रुतिको आर्शावाद्—

— अनिद्राहर-स्वरस —

१. बैंगनके पत्तोंका रस—२ तोला
२. सफेद प्याजका रस—१ तोला
३. उत्तम मधु १॥ तोला

इन तीनोंको मिलाकर रातको सोनेके एक घण्टे पहले देकर ऊपर थोड़ा दूध पिला दें। प्रगाढ़ निद्रा आयगी और स्नायु मंडलका तनाव कम होगा। तनाव व क्षुब्धता अधिक बढ़ी हुई हो तो यह स्वरस प्रातः काल भी दिया जा सकता है।

आयुर्वेद सामग्री

कार्यकारिणी समितिका अधिवेशन

हैदराबाद "आयुर्वेद अकादमी" की कार्यकारिणी समितिका एक विशेष अधिवेशन २५ से ३३ तक पढ़ें।

स्वामी श्रीहंसानन्द जी सरस्वतीकी अध्यक्षतामें सायं काल ४ बजे महन्त बाबा सेवादास जी महाराज उदासीमठमें आरम्भ हुआ। इस निर्णयको पुनः अनुप्राणित किया गया कि भारतके जिन विद्वान् वैद्य महानुभावोंने शिक्षाके क्षेत्रमें, "अध्यापन अथवा ग्रन्थ लेखन द्वारा" आयुर्वेदकी विशिष्ट सेवाएं की हैं, उन्हें "आयुर्वेदमहोपाध्याय" की उपाधिसे विभूषित किया जाय।

श्री प० वसुदेव जी शर्मा शास्त्रीके इस संशोधनको कुछ बन्धनोंके साथ सर्वानुमतिसे स्वीकृत किया गया कि जिन वैद्य महानुभावोंने चिकित्साके क्षेत्रमें विशेष सफलता प्राप्ति की है और निरन्त आयुर्वेदकी सेवामें संलग्न हैं, उन्हें "प्रबन्ध प्रतियोगिता" परीक्षासे मुक्त रखकर "वैद्यवाचस्पति" या "वैद्य शिरोमणि" के पदवीदानसे सम्मानिता किया जाय। यह कार्य किसी विशिष्ट समारोहमें पूर्ण करना उचित होगा।

निश्चय हुआ, श्री प्रधान मंत्री जी सुविधा अनुसार अप्रैल ६५ की किसी भी उपयुक्त तिथिमें "आयुर्वेद अकादमी" के नवनिर्वाचनका कार्य पूरा करनेका प्रयत्न करें।

श्री अध्यक्ष महोदयको धन्यवाद देनेके अनन्त आजका कार्यक्रम पूर्ण हुआ। प्रधान मंत्री आयुर्वेद अकादमी

भूल सुधार

मार्च ६५ के स्वास्थ्यमें श्रीअलौकिकका प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धित लेख प्रकाशित हुआ है। उस कम्पोजीटरकी गलतीसे मैटर कम्पोज करनेमें गलत हो गई है उसे इस तरह पाठक गण ठीक कर सकते हैं।

पृष्ठ ३७६ कालम एक की पंक्ति २४ के आगे इस पृष्ठके कालम दो पंक्ति २६ में 'बीमारी, शिरकी तब बढ़ाया.....से पढ़ना शुरू करें।

पृष्ठ ३७७ कालम एक पंक्ति ३४ के पूर्व ३७६ कालम दो की पंक्ति २६, २७, २८ और २९ 'व्यय जीवनमेंसे' तक पढ़ें।

पृष्ठ ३७६ कालम एक पंक्ति २५ के पूर्व ३७६ कालम दो की पंक्ति २५ से ३३ तक पढ़ें।

कृष्ण-गोपालकी शीतकालीन सेव्य औषधियां

माजून कुचिला—वातरोग और अग्निमांछको दूरकर आंतोंको बल देता है।

खमीरे गाजवां—हृदय और मस्तिष्ककी निर्बलतापर अच्छा लाभ करती है।

रोहितारिष्ट—यकृदप्लीहावृद्धि, उदर, गुल्म अष्ठीलाको भी दूर करता है।

शिंजाजतु वटी—स्वप्नमेह, मूत्रकृच्छ्र, गुर्देके रोगोंपर हितकारी है।

प्रवाठ पञ्चामृत—गुल्म, उदरप्लीहा, श्वास, कास आदिपर और हर तरहकी कमजोरीपर अवसीर है।

दिप्ल्यासव—दीपन तथा पाचन है। क्षय, कास, गुल्म, उदर रोग, कृशता, ग्रहणी, अंत्रक्षय, पाण्डु एवं अर्शरोग नाशक है।

द्राक्षारिष्ट—दौबल्य, श्वास, कास, अरुचि, रक्ताल्पता, मन्दाग्नि, क्षय एवं दौर्बल्यता नष्टकर शरीरको पुष्ट करता है।

ब्राह्मी घृत—शीतल, वातपित्तशामक, ज्ञान (मनो) वह स्रोतोंका शोधक है। स्मरणशक्तिका अध्ययनजन्य मस्तिष्ककी निर्बलता, निद्रानाश, बुद्धिमांछ आदिपर यह घृत सर्वश्रेष्ठ सिद्ध हुआ है। इसको बच्चे, बुढ़े, जवान हर मौसममें सेवन कर सकते हैं।

सुवर्णपर्पटी—पित्तप्रकोपज ग्रहणी, संग्रहग्रहणी, पाण्डु, क्षय, अतिसार, पुरानी संग्रहणी, मुंहसे लेकर गुदा तक छाले होजानेसे सफेद दस्त होना, भोजनकी अपेक्षा मल अधिक परिमाणमें निकलना आदि कृच्छ्रसाध्य रोगोंको समूल नष्ट करती है। इसका प्रयोग लम्बे समय तक जब तक स्वस्थ न हो करना चाहिये। सभी भारतवर्ष के वैद्य व श्रेष्ठ वर्गसे इसके गुण छिपे हुए नहीं हैं। यह कमजोरीकी अव्यर्थ औषध है।

सुवर्णरंग—मधुमेह, वातुमेह, बलहानि, दुःस्वप्न फिरंगविष, जीर्ण उष्णवातसे मूत्रमें दाह, सन्धिवात और मन्दाग्निपर लाभ करता है।

श्वाभोगान्तक वटी—नया पुराना श्वास रोग जिससे कफ बहुत गिरता हो श्वासननिका कासे पूर्ण रहती हो उसपर लाभ पहुँचाती है।

लघुलाई चूर्ण—ग्राम संग्रहणी, प्रवाहिका, अग्निमांछ, उदररोग आदिपर हितकर है।

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन द्वारा निर्मित

हीरा भस्म (श्वेत)

‘शंखकुन्देन्दुसमप्रभ’ श्वेत रंगकी हीरा भस्म हमारे यहाँ विशेष विधिसे बना जाती है। यह भस्म अपेक्षाकृत गुण एवं प्रभावमें श्रेष्ठ है।

गुण—कंषर (कर्कटावृद्धि), गंभीरनाड़ीव्रण, अस्थिचय तथा पौरुषवर्द्धक है। इसमें आयु-मेधावृद्धि, शुक तथा शक्तिकी वृद्धि होती है। यह बल तथा दृष्टिवर्द्धक है। साथ ही इससे जीर्णप्रमेहरोग, जीर्णप्रदर, राजयक्ष्मा, जीर्णज्वर आदि रोगोंमें आशाप्रद फल प्राप्त होता है। मूल्य १ रत्ती ५०) रु० मात्र।

हीरा भस्म अनुपान मिश्रण सह—हीराभस्म १ रत्ती, पूर्णचन्द्रोदय १॥ माशे, ब्रध्नकभस्म (सहस्रपुटी) १॥ माशे, सुवर्णभस्म १॥ माशे, मुक्तापिष्टी (जं० १) १॥ माशे लेके घोटकर मिलालें तथा ४८ पुड़िया बनावें। इसके सेवनसे उक्त रोग तो दूर होते हैं, साथ ही जीर्ण-रोग तथा वृद्धावस्थासे जीर्ण हुए देहकी उत्तम पुष्टि होती है।
अवश्य सेवन करके लाभ उठावें।

ब्राह्म रसायन

(सुवर्णयुक्त विशेष)

इसकी अप्रतिम विशेषताएँ—

- मर्मिष्क व आंजोवर्द्धक
 - उत्तम रसायन
 - अपूर्व शक्तिवर्द्धक
 - अनुपम उदर-शोधक
- बालक, युवा, प्रौढ, वृद्ध, स्त्री एवं पुरुषों के लिये—

परम हितावह

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन

पो० कालेडा कृष्णगोपाल, जि० अजमेर



स्वास्थ्य

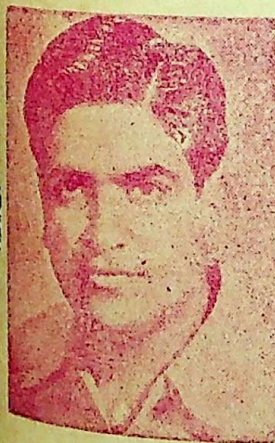
अंक ९]

वैशाख कृष्ण ३० विक्रम सं० २०२२

[मई]

राजस्थानके मुख्यमंत्री

— श्री सुखाडियाजीका अभिमत —



राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन द्वारा मुख्यमंत्री श्री सुखाडियाजीको अमृतकलश एवं अभिनन्दन पत्र भेंट किया गया ।

अभिनन्दनका उत्तर देते हुए मुख्यमंत्रीने कहा विज्ञानसे लाभ उठाना तथा वर्तमान वैज्ञानिक यन्त्रोंसे सहायता लेकर आयुर्वेदको उन्नत करना चाहिये भूतकालमें आयुर्वेद प्रगतिशील रहा है और विशेषरूपसे लंका में इसने ख्याति प्राप्त की है । परन्तु बढते हुए युगमें नवीन विज्ञानका सदुपयोग ले लिया जावे तो अनुसंधानमें बहुत कुछ सहायता व लाभ हो सकता है ।

— परामर्श मण्डल —

वैद्य श्री प्रेमशंकरजी भिषगाचार्य
संचालक आयुर्वेद विभाग राजस्थान ।
वैद्य श्री नित्यानन्दजी आचार्य,
पिलानी ।

वैद्य श्री रमेशचन्द्रजी व्यास
भिषगाचार्य ध० अजमेर ।
वैद्य श्री अम्बालालजी जोशी
साहित्यायुर्वेदरत्न, जोधपुर ।

विषय-सूची *

| क्रमांक | विषय | लेखक | पृष्ठ |
|---------|--|------------------------------------|-------|
| १. | स्वस्थ वाणी | वैद्य श्री कपूरचन्द्रजी विद्याधी | ४६१ |
| २. | आत्रेय-वचन | | ४६१ |
| ३. | अब वैद्यलोग जागउठे | सम्पादकीय | ४६१ |
| ४. | पीरूप्रन्थी-प्रदाह | डा० श्री द्वारकाप्रसादजी | ४६१ |
| ५. | स्वास्थ्य और सौन्दर्य | डा० श्रीमति इन्दिरा देवी | ४६१ |
| ६. | हृदयके रोगोंकी सरलतम गृह चिकित्सा | श्री लक्ष्मीनारायणजी | ४७१ |
| ७. | सेवाधर्म परिचारकधर्म | श्री सीतारामजी जोशी | ४७१ |
| ८. | बापूके एकादश व्रत | श्री गौरीशङ्करजी गुप्त | ४७१ |
| ९. | प्रदर | श्री कृष्णगोपालजी गुप्ता | ४७१ |
| १०. | योगसे मानसराग चिकित्सा | श्री सीतारामजी जोशी | ४८१ |
| ११. | ककड़ी और उसका उपयोग | श्रीमती सुमित्रादेवी | ४९१ |
| १२. | रसचिकित्सामें मल्लसिन्दूरका महत्त्व | वैद्य श्री मन्मथनलालजी शर्मा कौशिक | ४९१ |
| १३. | कुछ अनुभूत घरेलू प्रयोग | वैद्य श्री प्रेमप्रकाशजी | ४९१ |
| १४. | नेत्रविशेषज्ञ महर्षि सुश्रुत | पं० श्री गौरीशंकरजी | ४९१ |
| १५. | अपना डाक्टर आप बनें | डा० श्री कुलरंजनजी मुखर्जी | ५०१ |
| १६. | राजवैद्य पं० श्री सुरेन्द्रनाथजी दीक्षित | | ५०१ |
| | लखनऊका भाषण | | ५०१ |
| १७. | आयुर्वेद जगत | | ५०१ |

—अब तकके सभी बाल काले रखने वाले केश तैलोंमें—

—पूर्णतः सफलता प्राप्त कराने वाला कृष्ण-गोपालका—

श्याम केश तैल व्यवहारमें लेकर दिमागी असन्तोष
—को दूर कीजिये—

श्रीधन्वन्तरये नमः



स्वास्थ्य



(स्वास्थ्य वाणी का प्रकाशन आर्य समाज, दिल्ली)

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः ।

यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

प्रधान संपादक—

वैद्य सीताराम शर्मा जोशी

सह संपादक—

वैद्य बट्टीनारायण शर्मा

वर्ष १२. अंक ६] कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर) [मई १९६५

स्वस्थ वाणी

लेखक—वैद्य कपूरचन्द्र विद्यार्थी दमोह (म० प्र०)



आवश्यक है स्वास्थ्य हित समर्थे प्रकृति विधान ।

भूलों के प्रति सजग हों रखें आयु का मान ॥१॥

ऋतु आहार विहार नित हित निहार आचार ।

वे विचार बिन जगत जन दुःखी दीन बीमार ॥२॥

दवा दवाये रोग को करे नहीं निर्मूल ।

चतुर चिकित्सक मर मिटे कर कर छोटी भूल ॥३॥

यदि औषध से रुज मिटे मिटते क्यों ऋषिराज ।

सुश्रुत चरक सुषेण से रहते वैद्य समाज ॥४॥

दृढ़ आशा विश्वास दृढ़ संयम दृढ़ आचार ।

है जीवन संप्राम के सुफल सफल आधार ॥५॥

जहाँ वीर्य रक्षा नहीं वहाँ न रक्षित प्राण ।

प्रति क्षण प्रबल प्रहार हैं कोटि यतन बिन त्राण ॥६॥

आत्रेयादेश

परिहार्याण्यपथ्यानि सदा परिहरन्नरः

भवत्यनृणतां प्राप्तः साधूनामिह पण्डितः ।

यत्तु रोगसमुत्थानमशक्यमिह केनचित्,

परिहतुं न तत्प्राप्य शोचितव्यं मनीषिणा ॥

॥ च.सू.२८ अ.४२-४३ ॥

जिस उपदेशको “कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन” इस प्रकार शब्दान्तरोंसे भगवानने गीतामें कहा है । उसी आशयको भगवान आत्रेय अपने ग्रन्थमें लिखते हैं परिहार्या इत्यादि ।

अर्थात् बुद्धिमान् मनुष्यको चाहिये कि वह ज्ञान पूर्वक अपथ्यका परिहार और पथ्यका सेवन करे । (धर्मका सेवन और अधर्मका त्याग करे) ।

यह उसका आनृत्य धर्म है, कर्त्तव्य है उसमें वह अपराधी नहीं माना जाता ।

और ठीक रास्ते चलनेपर भी परवशताके कारण व्यक्ति यदि रोगी हो जावे, पथ्य न पाल सके तो वह उसका दोष नहीं ।

जैसे मास्टर लोग या मील मजदूर तथा अन्य श्रमजीवी बुद्धि जीवी रातको दिनको २ बजे भोजन करने वाले सभी कार्य बेटाइम करने वाले यदि बीमार हो जावें तो वे अपराधी नहीं समझे जाते, परिस्थिति ही परवश करती है । वैद्य या डाक्टरोंको उसके अपराधपर कुछ न होकर दया करनी चाहिये । उन्हें दोषी नहीं ठहराना चाहिये ।

ऐसे ही वैद्य भी सावधानी पूर्वक तन मनसे चिकित्सा करें, और रोगीको लाभ नहीं हो तो वह ईश्वरके यहाँ ऋणी नहीं वह भी कर्त्तव्य च्युत नहीं । सफलता न मिलनेपर उसे उदास होकर चिन्ता नहीं करनी चाहिये, क्योंकि वह कर्त्तव्यपर है । हानिमें विपाद, लाभमें हर्ष न मानकर हानि लाभको समान जानकर कर्त्तव्य करना चाहिये ।

प्रज्ञा पूर्वक चिकित्सा करनेपर भी रोग न मिटे तो चिन्ता नहीं करनी चाहिये ऐसा भगवानका आदेश है ।

ज्ञान पूर्वक क्रिया करनी चाहिये, चाहे उसका फल कुछ भी नजर आवे, प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

प्रमाद जान बूझकर गल्ती करनेका नाम है । मनुष्य यदि पर वशमें दबावसे, भयसे, हिंसा आदि विहार और अध्यशन (खानेपर खाना जैसे पुत्र विवाहोत्सवादिमें प्रायः हो जाता है) करे और उस भूलके कारण वह रोगी हो जावे तो वह भगवानका ऋणी (दोषी) नहीं माना जाता । क्योंकि उसने जानबूझकर अपथ्य सेवन नहीं किया ।

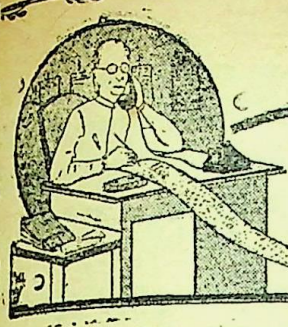
यह सदा सबको ज्ञात रहना चाहिये कि ऐसे भी कर्म होते हैं जो पूर्व जन्मके कर्मोंके प्रबल उदयसे मनुष्यको विवश हो कर करने पड़ते हैं । वास्तवमें वह उसकी प्रकृति है । उस पथ्य अपथ्य या सन्मार्ग प्रवृत्ति असन्मार्ग प्रवृत्तिमें उसका अधिकार नहीं होता इसीलिए लिखा है कि —

प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति ।

तथा

सदृशं चेष्टते स्वस्य प्रकृतेर्ज्ञानवानपि ॥

अच्छे कर्म करते हुए भी दुःख आ पड़ता है और बुरे कर्मोंको भी अच्छा फलका लाभ देखा गया है इसलिए मनुष्य अच्छे बुरे परिणाममें सम रहे तो वह दोषी नहीं होता । यही चरक और गीताका आशय है ।



रामपादपीप

अब वैद्यलोग जागउठे

कोई पांच घण्टे नीन्द लेता है, कोई आठ घण्टे सोता है। शिशुओकी निद्राके १० घण्टे गिनते हैं। निद्रा कोई अधिकसे अधिक लेवे, आखिर अन्तमें उसे जागना ही पड़ता है। सोनेके बाद जगना, जगनेके बाद निद्रा आना, स्वाभाविक है।

निद्रासे पुष्टि होती है, सुख और शान्ति मिलती है। परं अति निद्रा तो काल रात्रि मानी जाती है।

सोना जागना क्षणिक जैसा है। व्यक्तावस्थासे अव्यक्तमें अव्यक्तसे व्यक्तमें ज्ञानका रहना जागना और सोना है।

जैसे भगवान् सूर्यके उदय होते ही सारा जगत् जाग उठता है छोटे बड़े पशु-पक्षी, मानव, दानव सभी सचेष्ट होकर स्व-स्व कार्यमें लग जाते हैं, और सबकी निद्रा दूर हो जाती है।

वैसे ही कालक्रमसे भगवान् आयुर्वेदके प्रतापसे थोड़े समयसे अव्यक्तावस्थासे व्यक्तावस्थामें आजानेपर अथवा पुनः उदय होजानेपर सबकी निद्रा दूर हो गई है। और साग आयुर्वेद जगत् प्रकाशमें आगया है।

यहां प्रकाश्य और प्रकाशक दोनों आयुर्वेदके ही रूप है।

एक समय था डाक्टरके नामसे जनताकी तरह विद्वान् वैद्य भी शंका मानते थे, भयभीत रहते थे। वैद्यलोग मनमें सकुंचाते थे कि यदि डाक्टरजीने प्रत्यक्ष शारीर विषयक प्रश्न पूछ लिया तो क्या उत्तर देंगे। यदि डाक्टर जी पूछ बैठे कि प्रोपेटेट ग्रन्थि कहाँ है, थाइमसका क्या कार्य है, तो क्या उत्तर देंगे। इस प्रकार उनसे भय मानते थे।

पर अब काल क्रमसे वैद्योंने उनका मुट्ठी भर शारीर ज्ञान प्राप्त कर लिया, उनकी गिनी चुनी प्रभावशाली दवाइयां परख ली, सूचीबद्ध चिकित्साका अन्धेरा उजाला उनका दाख गया, कोट

पेण्टकी वेशभूषासे तथा इङ्गलिश भाषामें बात चीत करके प्रभावित करनेकी पोल सबके ध्यानमें आ गई, बाह्याडम्बरका तथ्यांश समझलिया गया, तब वैद्यलोगोंकी निद्रा एकदमसे दूर होगई और वे जाग उठे।

वैद्योंको मालूम तो हो गया कि हम तो अब तक भूल भुलैयामें ही रहते रहे। लोगोंने हमारे ऊपर झूठे हां रोब जमाया इनका शारीर और शल्य ज्ञान यह है। अर्थात् जितना आडम्बर उतना अर्थ नहीं।

क्या विशाल भवनमें ही चार सहायक डाक्टर और चार कम्पोजण्डरोंके बिना छोटा मोटा आपरेशन भी नहीं हो सकता।

क्या विलायती रुई और विदेशी दवाइयां ही काम दे सकती हैं?

क्या आयुर्वेदीय शल्यशालाक्य उपयोगी और पर्याप्त नहीं परन्तु वैद्यलोग अपना शास्त्र और स्वरूप दोनों ही भूले बैठे हैं।

अब वे जान गये हैं कि इतना शारीर है और इतना शल्यज्ञान है तथा थर्मामीटर स्टेथिस्कोप और एक्स रे यन्त्र यहां तक निदानमें सहायक हैं। जंत्रोंसे जाना जाता है वह और वेशभूषा, इङ्गलिश वार्तालाप भी वैद्योंने हस्तगत कर लिया।

डाक्टरी साहित्यको देख डाला, और बाहर आडम्बरकी पैन्दी टटोल ली। तब डा० जी क्य प्रश्न करें।

यदि पूछ बैठें तो उनके उत्तरमें सैकड़ों जवाब तैयार।

और कदाचित् वैद्यजीने वात-पित्त-कफके ढेर में पूछ लिए और रस भेदोंके तारतम्यपर प्रश्न शुरु क दिया तो मौन ही उपाय है।

कई कानून इन भोले वैद्योंको भुलावेमें डालने लिए रखे गये।

सभी तरहके मद्य बनानेकी इनको स्वीकृति मिल नहीं सकती। कुचिला, संखिया, शृङ्गिक, अफीम, भांगका प्रयोग वैद्य न करें। यदि करें तो इनकी कृपासे लाइसेंस मिले तभी करें।

क्या अजीबका न्याय है कैसा शासन है। भारतीय भूमें उत्पन्न दवा देशी कहलावे, और देशी दवाओंके उपयोगके लिए विदेशी दिमागकी छाप लगे तभी वह शुद्ध मानी जावे।

आखिर अहंता और स्वार्थकी पराकाष्ठा न होती तो ये वैद्य कैसे जागते, इनकी आँखोंपर डाला गया पर्दा दूर कैसे होता।

वास्तवमें वैद्योंका विरोधकर दूसरे लोगोंने कुम्भ कर्णी निद्रासे वैद्योंको जगा लिया। वैद्य खूब अपनी उपेक्षाका या निद्रा तन्द्रा प्रमाद आलस्यका फल पा चुके।

जब वैद्योंको अवकाशके लिए स्वास्थ्य विषयक प्रमाण पत्र लेना पड़े तो इन महा प्रभुजीकी खुशामद करो। स्वास्थ्यके बारेमें वैद्य क्या समझे।

जब जनताने यह देखा कि स्वयं वैद्यजी डा० जी के पास स्वास्थ्यका प्रमाणपत्र चाहते हैं तो ये दूसरोंको क्या देंगे।

इनके प्रमाण पत्र स्वयंको प्रमाणित नहीं कर सकते दूसरोंको प्रमाणित क्या करेंगे। अन्धेर घोर अन्धेर।

पर एक सुधा सूक्ति है कि 'होशमें आता है नर भी ठोकरें खानेके बाद। रंग लाती है हिना पत्थरसे घिस जानेके बाद'।

इन वैद्योंको जब आघात पहुँचे; जगह जगह अपमान हुआ तब इनको स्व स्वरूपका होश आया।

अब सब पोल खुल गई, चारसौ देशी औषधियों का नामान्तरकर चोरीसे ऐंलैपैथीमें परिणत करना वैद्योंको ज्ञात हो गया। इन्हींकी लेबोरेटरीने इन्हींकी पोल खोल दी, तब इनको खानी पड़ी।

अब तो और लोग भी समझ गये। इनके रात-दिनके व्यापत् चमत्कार प्रत्यक्ष जनताके सामने आने लगे, तब वैद्योंका गया हुआ बल फिर प्राप्त हो गया।

अब समान अधिकार, समान वेतन स्तर, समान कृशी, घराघरका सम्मान वैद्योंको होनेकी बात केन्द्रीय विधान सभा तक पहुँच गई।

जो मंत्री गण विरोध करते थे, अनुमोदन करने लगे, विपक्षी कई डाक्टर सपक्षी बनकर आयुर्वेदकी वकालत करने लगे। प्रान्त प्रान्तमें जागृति हो गई। प्रायः सभी मान गये कि यह अदम्य शक्ति अब दब नहीं सकती।

भास्करके उदय होनेपर यदि क्षणिक बढ़ल छा भी जावे तो भी क्या पदार्थोंके ज्ञानके लिए तो पर्याप्त उजाला रहता ही है।

तिरस्कृत विपक्षियोंके हृदयसे यदि द्वैत न भी निकले तो भी क्या। अब वैद्योंको अन्धेरेमें नहीं रक्खा जा सकता।

विज्ञान विज्ञान ही रहेगा। हमें तो इनका आभार मानना चाहिये जिन्होंने हमें जगा दिया। जैसे जैसे आयुर्वेदका विरोध हुआ वैसे वैसे वह उन्नत होता गया। वैद्योंमें वीरता निर्भयता साहस बढ़ता गया जनताने अनुमोदन समर्थन किया प्रभुने बल दिया।

प्रान्त प्रान्तके उच्चाधिकारियोंने वास्तविकताको समझकर पद पदपर सम्मानित किया।

समानताका अधिकार और वज्रट निकट भविष्यमें ही प्राप्त होनेवाला है। ऐसी हमें आशा है।

गुजरातके मुख्य मंत्री मोहनलाल व्यासने तो यहाँ तक कह डाला कि मैं तो चाहता हूँ वैद्योंका वेतन डाक्टरोंसे समान नहीं बल्कि अधिक होना चाहिये।

उन्होंने कई जगह वेतन स्तर काफी बढ़ाकर लागू कर दिया है जो साहस पूर्वक किया गया यह उनका आदर्श अनुकरणीय है।

राष्ट्रपतिजीकी सभापतिपद स्वीकृति जो कानपुर होने वाले आलइण्डिया वैद्य सम्मेलनके लिए हुई है इस बातका साक्षी है कि आयुर्वेद भारतकी उच्च सत्तासे अनुमोदित हो चुका है।

शिव शर्माजी का प्रयास वैद्योंके लिए अनुकरणीय है। जो प्राणपणसे उनकी सेवा है।

हाल ही में अजमेरमें हुआ राजस्थान प्रान्तीय आयुर्वेद सम्मेलन भी शिखर सम्मेलन मानना चाहिये।

राज्यपाल डा० सम्पूर्णानन्दने, मुख्य मंत्री मोहनलाल सुखाड़िया आयुर्वेद मंत्री भीखाभाईके ओजस्वी

पौरुषग्रन्थी-प्रदाह

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा. द्वारका प्रसाद नामदेव,
विमन क्लिनिक, ४९, न्यूदेवास रोड, इन्दौर ३,

परिचय (Histology) —

पौरुषग्रन्थी प्रदाह या प्रोस्टेटाइटिसको आर्गेनिक इन्लार्ज मेन्ट आफ दी प्रोस्टेट (organic Inlargement of the Prostate) भी कहते हैं। पौरुषग्रन्थी या प्रोस्टेट ग्लैण्डको मूत्राशयकी मुखशाथी ग्रन्थी भी कहते हैं। इस नामकी व्याख्या प्राचीन ग्रन्थोंमें पाई जाती है। यह ग्रन्थी स्त्री एवं पुरुष दोनोंमें मौजूद होती है। देखनेमें यह अखरोट (Juglanregia) (अखरोट अंग्रेजीमें Walnut) के आकारकी रहती है। पुरुषोंमें मूत्राशयके गलेके जिस स्थानसे मूत्रनली शुरू हुई है, उस जगह यह ग्रन्थी घेरे रहती है। स्त्रियोंमें जननेन्द्रियकी जड़की अस्थि (Symphysis Pubis) के ठीक पीछे भागमें ग्रन्थीका संयुग्मश और मलाशय (Rectum) के ऊपर-पिछला अंश (Posterior Portion) रहता है। इस ग्रन्थीसे दूध सदृश एक चिकना बिना रेशाका रस निकलता है। जो मैथुन (Copulation) के समय शुक्रवाहमें सहायता करता है। पौरुषग्रन्थीमें प्रदाह होनेपर ही यह पौरुषग्रन्थी प्रदाह रोग कहलाता है।

कारण (Etiology) —

पौरुषग्रन्थी प्रदाह रोग होनेके दो कारण आंके गए हैं १. प्राथमिक कारण (Acute Causes) और २. गौण कारण (Chronic causes).

१. प्राथमिक कारण (Acute causes) प्राथमिक कारणोंमें साधारण आघात (Traumatic causes) जैसे घुड़सवारीके समय कड़ी चीजपर बैठने, ऊँचे स्थानसे नीचे कूदने तथा कृत्रिम अथवा हस्त मैथुनसे इस रोगका आरंभ होता है।

२. गौण कारण (Chronic Causes) — गौण कारण पौरुषग्रन्थीके प्रदाहके लिए इनसे शुरू होते हैं जैसे यूरेथ्राइटिस (Urethritis), मूत्राशयकी पथरी (Calculus of Bladder), मूत्रोत्संग (Stricture of Urethra), घात (Gout), गठित (Rheumatism), सूजाक (Gonorrhoea) या उत्तेजक वस्तु जैसे बालसम (Balsam) कोपेबा, (Copeba), टर्पेन्टाइन (Terpentine), क्यूबेबा (Quebeba) आदि हैं।

PROSTATITIS.

अयुर्वेद ग्रन्थोंमें पौरुषग्रन्थी प्रदाहको मूत्राघात (Obstructed micturition) का दूसरा प्रकार मतलब अष्टोला मूत्राघात (Enlargement of Prostate) कहते हैं। जिसके उत्पन्न होनेका कारण दूषित वायु माना है।

लक्षण (Symptomology) —

इस पौरुषग्रन्थीके प्रदाहके लक्षण हैं कि रोगके होनेके पूर्व मूत्राशयके गले (Neck of Bladder) में पीड़ा ज्ञात होता है। रोगसे पीड़ित स्थान तापप्रसित हो जाता है। पेरिनियम (Perinium) और मलाशय (Rectum) में तीव्र फटने सी पीड़ा होती है और पेरिनियममें आलपिन चुभने सी पीड़ा भी होती है जो कि पबिक अस्थि (Pubic Bone), कमर (Lower Vertebrae) ओर पैर (Lower limb) की तरफ भी बढ़ जाता है। इस रोगमें लगातार पेशाबका वेग व इच्छा (Desiration of Urine) जो कष्टके साथ होती है। बड़ी देरके बाद, काँखने और कोशिश करनेपर धीरे धीरे या बूंद बूंद मूत्र होता है, जिसे हम पेशाबकी रुकावट (Retention of Urine) कहते हैं। पेशाब करनेकी बारबार कोशिश करनेपर पीड़ा बढ़ती जाती है और पेशाब मूत्राशयमें रुका रहता है। इससे पीड़ा और तीव्र होती है, इसे रोगी सहन भी नहीं कर पाता है। पौरुषग्रन्थीके मलांवर पर दबाव पड़नेसे बड़ी तकलीफके साथ थोड़ा सा मल (Stool) होता है। सर्दीका भी हमेशा आभास होता है। बुखार आदिके लक्षण उभर आने पर इसका प्रदाह बैठ जाता है।

रोग निदान (Pathology) —

यदि किसी रोगमें शीघ्र आराम नहीं होता है

और पौरुषग्रन्थी पक कर फूट भी जाती है और मंवांद (Pus) मूत्रनलीके अन्दरसे होकर पेरिनियमके अन्दर पहुँचती है और मूत्राशयमें तथा मलाशयमें भी पहुँच जाती है ।

पेशाब करते समय आरंभमें मवाद निकले उस वक्त पेशाबमें अम्लीयता रहती है, और वेहद पीड़ा अनुभव होती है, और प्रयोगशालाकी जाँच लेने पर मवाद मेह (Puscells) की प्राप्तिपर अन्दाज लग जाता है कि पौरुषग्रन्थी प्रदाह है । यहाँ हम मूत्र जाँचनेकी प्रथाएँ नहीं दे रहे हैं कारण लेख काफी बड़ा हो जायगा ।

इस रोगके लक्षण मिलने और मलमें मवाद सी आनेपर मल परीक्षामें भी मवादमेह (Puscells) की प्राप्तिसे पौरुषग्रन्थीका प्रदाह भी आँका जाता है ।

यह रोग मरारमक नहीं है । इसमें रोगी रोगसे मुक्त हो जाता है । कभी कभी तो प्राथमिक कारण होकर ही ग्रन्थी बड़ी रह जाती है और प्रदाह भी नहीं होता ।

साठ वर्षसे ऊपर उम्र होनेपर बहुतायत यह देखा गया है कि पौरुष ग्रन्थीका प्रदाह अपने आप ही होता है । इस समय बिना शल्य कर्मके लाभ नहीं होता ।

चिकित्सा—(Treatment)—

१. गोक्षुरादि गुग्गुलु (शार्ङ्गधर संहिता) घटक (Composition) —गोक्षुर, शुद्ध गुग्गुलु, त्रिकटु, त्रिफला, मुस्तादि ।

मात्रा—(Doses)—२ से ४ गोली पृत अथवा मधुके साथ ।

गुण—(Properties)—दूषित वायुसे कुपित पौरुष ग्रन्थी प्रदाह होनेपर ।

२. चन्द्रकला (रस योग सागर) घटक—ताम्र-भस्म, गन्धक, अभ्रकभस्म, मुस्ता, पित्तपापड़ा, दाडिम, दूर्वा आदि ।

मात्रा—१ से २ गोलियाँ गुलाब शर्बत, गुलकन्द, आँवलेका मुरब्बा या जलके साथ ।

गुण—पेशाब करनेमें रुकावटके साथ अन्तर्दाह होनेमें ।

३. पलाश पुष्पासव (योग रत्नाकर) घटक—पलाशपुष्प, पाषाणभेद, सफेदवाला, रक्त चन्दनादि ।

मात्रा—चायके एक से दो चम्मच आठगुणा गर्म जलके साथ सुबह शाम भोजनके बाद ।

गुण—पौरुष ग्रन्थी प्रदाहमें मलावरोध होनेपर ।

४. योग (वैद्य रत्न) घटक—इलायची, पाषाणभेद, शिलाजीत, पीपल आदि ।

मात्रा—दिनमें दो बार चावलके जल या गुड़के साथ लेना चाहिए ।

गुण—पेशाबका रुक रुककर बूंद बूंद होना ।

वर्जित (Disallowed)—इस रोगके होनेपर शराब पीना, घूमना, मैथुन करना और सूखी वस्तुएँ खाना वर्जित हैं ।

पथ्य (Allowed)—इस रोगके होनेपर पुगना चावल, दूध, दही, परवल, हरड़ और कोमल नारियल आदि रोगीको दे सकते हैं ।

सावधानी (Precaution)—पौरुष ग्रन्थीके प्रदाहमें रोगीको आराम करवाना चाहिये । कारण चलने फिरनेसे पीड़ा तीव्र होती है और पेशाब करनेमें रोगी बुरी तरह छटपटा भी जाता है ।

— अब वैद्यलोग जागउठे —

(पृष्ठ ४६६ का शेष)

भाषणोंने जो जोरदार आयुर्वेदका समर्थन किया, तथा वैद्योंने निर्भीकता पूर्वक अपनी वेतन वृद्धि की अविलम्ब स्वीकृतिकी जो माँग रखी, वह भी उल्लेखनीय ही है ।

आयुर्वेद उपासकोंका भविष्य उज्ज्वल है । परिस्थिति अनुकूल है । वैद्योंको सहयोग और संयमसे अपनी बुद्धिमत्ताका परिचय देना चाहिये यह हमारा उनसे निवेदन है ।

इस समय जो कालेड़ा कृष्णगोपालकी तरफसे भोजनादि सम्मान ग्रहण कर संस्थाको वैद्य महाभारतोंने आशीर्वाद दिया उन्नतिकी कामना की उनके हम आभारी हैं । यह सब आयुर्वेद भगवानको द्रव्य, पत्र-पुष्पादिस यथा मिलितोपचार पूजा है ।

स्वास्थ्य और सौन्दर्य

डा० इन्दिरादेवी शास्त्रिणी, आयुर्वेदमणि, संचालिका-नारी आरोग्य-मन्दिर मुरलीधरबाग, हैदराबाद (आ.प्र.)

“स्वास्थ्य और सौन्दर्य” ये दोनों ही शब्द बड़े अतिमधुर हैं। इन्हें सुन कर हमारी हृत्तन्त्रीके तारोंमें एक अनोखी झंकार पैदा हो जाती है, जिससे हमारे रोम-रोममें एक प्रकारके अद्भुत आनन्दकी लहर उठने लगती है। इन बातोंसे पता चलता है कि “स्वास्थ्य तथा सौन्दर्यके” साथ हमारे जीवनका कोई निकटतम संबंध है, परिचय है या नाता है। इनके बिना यह हरा-भरा सुन्दर संसार नरकके समान प्रतीत होता है, और यह दुर्लभ मानव-जीवन भारभूत हो जाता है। हमारी समस्त आशाएं तथा अभिलाषाएं इन्हींपर केन्द्रित रहती हैं। हमारे स्वार्थ तथा परमार्थके ये ही साधन हैं। धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षके ये ही मूल-कारण हैं। इन्हींकी प्राप्ति के लिए हम सब रात-दिन उतावले रहते हैं। फिर भी हम इनकी वास्तविकतासे अपरिचित हैं, इनकी रूप-रेखासे अनभिज्ञ हैं और इनकी प्राप्ति के लिए सदा मृगमरीचिकामें भटकते रहते हैं। “स्वास्थ्य” क्या वस्तु है। इसपर हमने कभी विचार ही नहीं किया।

“स्वप्रकृतौ तिष्ठतीति स्वस्थः, स्वस्थस्य भावः स्वास्थ्यम्” वात, पित्त एवं कफ ये त्रिदोष तथा सत्व, रज और तम, ये गुणत्रय जिस व्यक्ति या आधारमें अपनी स्वाभाविक स्थितिमें रहते हैं, वही स्वस्थ कहा जाता है, और स्वस्थके भावको ही “स्वास्थ्य” कहते हैं। जिस व्यक्ति के तन, मन एवं वचन ये तीनों ही निर्विकार हों, वही वास्तवमें स्वस्थ कहा जा सकता है। इन तीनोंमेंसे यदि कोई भी एक विकारी है, तो भी वह व्यक्ति रोगी ही कहा जाता है। और इस प्रकारके रोगी व्यक्तिको अफालमें ही निगल जानेके लिए मृत्यु मदा ही मुख फैलाए खड़ी रहती है। दीर्घ जीवनके लिए इन तीनोंको ही स्वस्थ रखनेकी बहुत बड़ी आवश्यकता है। किसी समय मान अपने दीर्घजीवनके लिए बहुत ही प्रसिद्ध था। किन्तु आज भारतमें ही सबसे अधिक मृत्यु-खंखा है। जहां रोग और मृत्यु-एक साथ चलते हैं, वहां आज प्रत्येक व्यक्ति किसी न

किसी भयंकर यन्त्रणासे कराह रहा है। यदि विचारकी दृष्टिसे देखा जाय तो सहस्रों व्यक्तियोंमें एक भी आदमी नीरोग मिलना कठिन है। इस प्रकारके रोगी पुरुष, स्त्री तथा बच्चे सभी हैं। इनमेंसे किसी एकको भी अपवाद मानना कठिन है। कई बार स्वास्थ्य परीक्षामें बहुत बड़ी भूलें होती हैं। जिन लोगोंको हम ऊपरसे स्वस्थ या नीरोग देखते हैं, वे शारीरिक रोगियोंसे कहीं अधिक बढ़-चढ़कर रोगी पाये जाते हैं। रोगका परिणाम है दुःख। दुःखमात्र ही रोगजन्य है। फिर वे रोग चाहे शारीरिक हों या मानसिक। शारीरिक रोगोंकी अपेक्षा मानसिक रोग अधिक भयानक हैं। शारीरिक रोगोंका दुःखरूप फल इसी भौतिक शरीरसे भोगकर मनुष्य छुटकारा पा जाता है। किन्तु मानसिक रोगोंका दुःखद फल तो जन्मजन्मान्तर तक पीछा नहीं छोड़ता। जिस प्रकार ज्वर, अतिसार, शूल एवं कुष्ठ आदि अगणित शारीरिक रोग हैं, उसी प्रकार ईर्ष्या-द्वेष, घृणा, हिंसा, प्रतिहिंसा, मिथ्याभिमान तथा अनेक प्रकारकी कुरिस्त भावनाएं मानसिक रोग हैं। इन दोनों प्रकारके रोगोंका परस्पर बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनमेंसे प्रत्येकका एक-दूसरेके ऊपर प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता है। अतः जो भाग्यवान् लोग इन दोनों प्रकारके रोगोंसे मुक्त हैं, सच्चे अर्थोंमें वे ही स्वस्थ हैं एवं लौकिक तथा पारलौकिक सुखोंके भोगनेके वे ही अधिकारी भी हैं।

स्वस्थ शरीरमें ही स्वस्थ मनका निवास रहता है और स्वस्थ मनमें ही सुख प्रतिबिम्बित या प्रतिफलित हुआ करता है। यह एक बहुत ही पुरानी कहावत है, किन्तु है अक्षरशः सत्य। इस बातको कभी भी उपेक्षा दृष्टिसे नहीं देखा जा सकता। संसारकी ये सारी हलचलें और प्राणिमात्रकी ये सारी चेष्टाएं केवल सुखके लिए हैं। संसारमें ऐसे बहुतसे लोग पाए जाते हैं, जिनका किसी न किसी वस्तुके प्रति विराग हो सकता है किन्तु सुखके प्रति किसीका भी विराग नहीं है। जो लोग दुःख भोगते हुए पाए जाते हैं अथवा जिन्होंने जीवनमें कभी भी सुखकी मुखरूप

नहीं देखी हैं, वे भी सुखके ही लिए जीते हैं और सुखके ही लिए मरते हैं। संसारके नन्दन-वनसे यदि सुखाशाकी हरीभरी, फूली-फली लावण्यमयी लताको निकाल दिया जाय तो वह तुरन्त श्मशान बन जाय। फिर एक दिन भी इसमें रहनेके लिए कोई तैयार न हो। जब जीवनका लक्ष्य सुखी होना है और उस सुखका साधन एकमात्र स्वस्थ शरीर ही है, तो उसे शारीरिक तथा मानसिक रोगोंसे सुरक्षित रखनेका अनवरत प्रयत्न करना ही चाहिए।

स्वास्थ्य और सौन्दर्यके सम्बन्धमें बड़ा मतभेद है। सभी लोग अपने-अपने दृष्टिकोणसे इन दोनोंकी परिभाषा करते हैं। जो लोग प्राचीन आयुर्वेद विज्ञानके सूक्ष्म तत्त्वोंसे अपरिचित हैं, वे लोग 'स्वास्थ्य' शब्दसे केवल शारीरिक आरोग्यका ग्रहण करते हैं, और 'सौन्दर्य' शब्दसे केवल शारीरिक सौन्दर्य ही उन्हें वाञ्छित है। इसी स्थूल दृष्टिसे आजकल स्वास्थ्य तथा सौन्दर्यकी प्रायः व्याख्या भी की जाती है। इस प्रकारकी व्याख्या या परिभाषाएं सदा ही अपूर्ण तथा विचारशील व्यक्तियोंके लिए असान्य रही हैं। इनके मतमें "शरीरके प्रत्येक अंगकी स्वाभाविक" क्रियाका नाम "स्वास्थ्य" है। यह लक्षण सर्वथा अपूर्ण है। इस लक्षणके अनुसार तो शरीरके प्रत्येक अंगकी स्वाभाविक क्रिया तथा अस्वाभाविक क्रियाकी भी पृथक्-पृथक् व्याख्या करनी होगी, जिससे द्रोपदीके चौरके समान कभी स्वास्थ्यकी ठीक-ठीक व्याख्या न हो सकेगी। अतः "नोरोग तन, मनकी प्रकृतावस्थाका नाम स्वास्थ्य है" यही परिभाषा सर्वथा उचित होगी।

सौन्दर्यके सम्बन्धमें भी इसी प्रकारका भारी मतभेद है। लोग अपनी-अपनी रुचिके अनुसार सौन्दर्यकी व्याख्या करते हैं। भिन्न-भिन्न देश तथा समाजभी इस मतभेदके पोषक हैं। किन्तु "सौन्दर्य" क्या वस्तु है, इस विषयमें लोग भारीभ्रम तथा भूठमें हैं। "सौन्दर्य" जैसे एक व्यापक तथा अनिर्वचनीय पदार्थको लोगोंने प्राणियोंके अंग-सौष्ठव तक में ही सीमित कर रखा है। वह अंग-सौष्ठव भी कैसा, जिसमें किसीका भी ऐक्यमत नहीं। किसी देशके लोग यदि शुक्लकी चौबक समान नासिकाको सुन्दर मानते हैं तो दूसरे देशके लोग चन्दकी नासिका ही

महत्त्व प्रदान करते हैं। चीनके लोग तो सौन्दर्यदेवके ही चरणकमलोंमें चीनी कुमारियोंको लोहेका जूता पहनाकर केवल उनके चरणोंकी बलि ही नहीं दे डालते हैं, किन्तु उन्हें अपंग भी बना देते हैं। इसी प्रकार सौन्दर्य-पोषक वर्णोंके सम्बन्धमें भी भारी गड़बड़ी है। कोई श्वेत-वर्णको सौन्दर्यका पोषक समझता है, कोई श्वेत-पीतको, कोई श्वेत-रक्तको तो कोई श्याम-रंगके ऊपर ही सर्वात्मना निष्ठावर होता रहता है। एक ओर भारतकी श्रेष्ठ आर्य-जातियां ब्राह्मण आदि "पुण्ययेन गौरवर्णः" पुण्यसे गौरवर्ण प्राप्त होता है, यह कहकर केवल गौरवर्णको महत्त्व ही नहीं देते हैं किन्तु उसे अपने आर्यत्व तथा कौलीन्यका सूचक मानते हैं। ठीक इस भावनाके विपरीत दक्षिण-भारतमें कोमटी आदि कुछ ऐसी जातियां हैं, जो गौरवर्ण सन्तानको अपने कौलीन्यका घातक समझती हैं। यदि दैवयोगसे किसीके घरमें गौरवर्ण सन्तानका जन्म होता है, तो उस समाजके लोग बालकके माता-पिताको बड़ी घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं और कहते हैं कि यह बालक अपने प्रकृत पिताकी सन्तान नहीं है। फलतः कोई भी वर्ण, सौन्दर्यकी जन्मभूमि नहीं है। सौन्दर्य तो स्वतः प्रकाशमान, सर्वत्र-व्याप्त तथा एक अनिर्वचनीय वस्तु है।

'स्वास्थ्य' और 'सौन्दर्य' के साथ जिस सौन्दर्यका ग्रहण किया जाता है, वह एक विशेष प्रकारका सौन्दर्य है। स्वास्थ्यके साथ उसका निकटतम सम्बन्ध है। दोनों-स्वास्थ्य और सौन्दर्य अङ्गोन्मिश्रित हैं। एक दूसरेपर आधारित हैं। अभिन्न हैं। तन-मनके सुख स्वास्थ्यके बिना सौन्दर्य निष्प्राण रहता है। उसमें किसी प्रकारका भी आकर्षण नहीं रहता है।

"देखि रूप मोहे नर-नारी"

जिस रूप या सौन्दर्यको देखकर नर-नारी ही नहीं अपितु देवता भी मोहित होते हैं, वह मनोमोहक रूप या सौन्दर्य स्वास्थ्यके बिना स्थायी नहीं हो सकता है। आधुनिक सौन्दर्य प्रसाधनों द्वारा कोई भी व्यक्ति वास्तविक सौन्दर्य ही उपलब्ध नहीं कर सकता है। अतः प्रत्येक व्यक्तिको अपनी समस्त शक्ति स्वास्थ्यकी साधनामें लगानी चाहिये। कागण, दिव्य स्वास्थ्य द्वारा ही दिव्य सौन्दर्यकी उपलब्धि हो सकती है।

हृदयके रोगोंकी सरलतम गृह चिकित्सा

लेखक:—लक्ष्मीनारायण 'अलौकिक'

संसारमें जितने भी रोग हैं उन सबमें हृदयके रोग ही ऐसे हैं जिनमें मौतका कोई भरोसा नहीं रहता। हृदय रोगसे प्रसित अच्छा खासा तन्दुरुस्त दीखने वाला आदमी भी चलते-चलते या बात करते-करते मृत्युकी गोदमें लुढ़क पड़ता है।

हृदयके रोगोंकी पहुँच फिजिऑलॉजिकल शिष्ट परि-वारों तक ही हुई है, या यों कहें कि हृदयके रोग उन्हीं व्यक्तियोंको होते हैं जो खानपान और रहन-सहनके आरोग्यानुकूल नियमोंका पालन नहीं करते हैं तथा आवश्यकतासे अधिक मानसिक परिश्रम करते हैं तो भी दूसरी बात नहीं होगी। स्मरण रहे मस्तिष्क का हृदयसे बहुत गहरा सम्बन्ध है। मस्तिष्कसे जब सोचने विचारनेका कार्य असाधारण रूपसे लिया जाता है उस समय मस्तिष्कमें उत्पन्न हुए भावोंका असर हृदयपर ही होता है। भय, चिंता, ईर्ष्या और विषादके भावोंमें हृदयकी मांसपेशियाँ कमजोर होनेकी बात तो सभी जानते हैं लेकिन यह चीजें तो अशिक्षित परिवारोंमें भी पाई जाती हैं, जहाँ हृदय रोगोंकी पहुँच बहुत कम है। हो सकता है देहात और कस्बोंमें रहने वाले लोगोंको जरूरी और भोजनादि आरोग्य-प्रद मिलता हो, जिससे रोगोत्पादक भावोंका प्रभाव दब जाता हो या दूसरे रूपमें प्रकट होता हो। हृदयकी मांसपेशियाँ मजबूत हों तो सामयिक रोगोत्पादक भावोंका कोई भी असर सामने नहीं आता है।

..... शहरोंके अस्वस्थ वातावरणमें रहने वाले मान-सिक श्रमिकोंको ही हृदयके रोग अधिकांशतः आ-पेटे हैं। जिसकी वजह है जन्मजात दुर्बल हृदय ऊपरसे विचारोंका बोझ। याद रहे मस्तिष्कसे कार्य लेते समय श्वास प्रश्वासका क्रम बहुत कुछ बिगड़ जाता है। साधारण अवस्थामें हम जितनी गहरी सांस लेते और छोड़ते हैं उसमें मस्तिष्कपर दबावके अनुसार २० प्रतिशतसे ८० प्रतिशत तककी कटौती आ जाती

है। इस कटौतीके परिणाम स्वरूप रक्तका कार्बन डायोक्साइड शरीरसे बाहर नहीं हो पाता, और वह लग-तार हृदयपर अपना घातक असर डालता रहता है यहाँ यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि हमारे रक्त कणोंमें होम्योग्लोबिन नामका एक रासायनिक पदार्थ रहता है जो प्रतिक्षण रक्त धारा में उत्पन्न हुए कार्बन-शोषण करनेका तथा फेफड़ोंमें पहुँचनेके दौरान कार्बन को उगलकर ऑक्सीजन ग्रहण करनेका कार्य करता है। होम्योग्लोबिनके इस रक्त शुद्धिके कार्यसे व्यक्ति लाभान्वित होता है जो श्वास प्रश्वास गहराईमें कटौती नहीं आने देता।

हृदयमें होने वाले रोगोंके छह प्रकार हैं। हृदय दर्द, हृदयका भारीपन, हृदयकी धड़कन, सफूलना, उच्च रक्तचाप, निम्न रक्तचाप। हृदयके सभी रोग रक्तमें विजातीय द्रव्योंके संग्रह होनेसे तब हृदयकी मांस पेशियाँ दुर्बल होनेसे ही होते हैं। रोगोंको ठीक करनेके लिए डाक्टर और वैद्य केवल हृदयको मजबूत करने वाली औषधियों व्यवस्था करते हैं। रक्तको सम्पूर्ण रूपसे शुद्ध कर रोग ठीक करनेका इरादा वे कभी नहीं रखते। भी क्यों, जब वे हर रोगको स्वतन्त्र आक्रमक करनेकी तथा उसीके अनुसार चिकित्सा करनेकी जानकारी हासिल किये हुए हैं। हृदयको मजबूत करने वाली जो दवाएँ वे रोगको देते हैं वे एक निश्चित समय तकके लिए ही हृदयको आरोग्य प्रदान करती हैं। थके माँदे शरीरपर चाय, कफ शराब आदिकी जो कृपा प्रत्यक्ष दिखाई देती है ही रुग्ण हृदयपर दवाओंकी होती है। थक कर हुए घोड़ेको चाबुक लगाकर फुर्तीला बनाया सकता है पर वह फुर्ती जैसे उसके शरीरके नुकसानदायक है ऐसे ही उतने जक दवाओंसे हृदय आरोग्य करने वाली बात समझनी चाहिए। यह

गया है कि दवाओंका असर खत्म होनेके बाद हृदय और भी ज्यादा कमजोर हो जाता है। अतः इंजेक्शन दवाओं आदिका व्यवहार रुग्ण हृदयपर भूल कर भी नहीं करना चाहिए। रक्त शुद्धिके पश्चात् जब हृदयको कुछ आरोग्यता मिल जाए उस समय दवाओंकी हलकी मात्रा देकर हृदयका उपचार किया जा सकता है ऐसा कई प्राकृतिक चिकित्सकोंका मत है।

हृदय रोगका उपचार लिखनेके पूर्व हम हृदयके कमजोर तथा बीमार होनेके कारण बताते हैं। कोई भी हृदयका रोगी इन कारणोंको छोड़कर अपने हृदयको बगैर किसी औषधोपचारके स्वस्थ कर सकता है।

१. शरीरकी क्षमतासे बाहर मानसिक परिश्रम करना।

२. अत्यधिक मैथुन।

३. अस्वस्थ वातावरणमें रहना।

४. चाय, काफी, सिगरेट, शराब इत्यादि मादक द्रव्योंका सेवन।

५. मिर्च मसालोंसे बने गरिष्ठ खाद्योंका सेवन।

६. अम्लधर्मी खाद्योंपर निर्भर रहना।

७. कठिन मेहनतमें जुटे रहना, विश्रामकी इच्छा पर भी विश्राम नहीं करना।

८. प्यास लगनेपर पानी न पीना।

९. मल-मूत्र, छींक, डकार, जमुहाईके वेगोंको रोकना।

१०. हमेशाकी कब्जियत।

११. छातीको कई कपड़ोंसे ढाँपे रखना।

१२. नींद कम लेना।

१३. आवश्यकतासे अधिक भोजन करना व शारीरिक श्रम तथा व्यायामसे जी चुगना।

१४. भय, चिंता, ईर्ष्या, ग्लानि, विषाद तथा दुःखसे घिरे रहना।

१५. बहुत गर्म भोजन ग्रहण करना व भोजनके बाद सीधे कामपर लग जाना। स्मरण रहे हृदय और पाकस्थलीके बीच सिर्फ एक पेशीका व्यवधान है। पाकस्थलीमें पहुँचा हुआ गर्म भोजन हृदयको भी

प्रभावित करता है।

अब हम हृदय रोगोंकी ऐसी गृह चिकित्साका उल्लेख करना चाहते हैं जिसे प्रत्येक गृहस्थ बगैर किसी परेशानी के ले सके। डाक्टरकी चिकित्सा वाला स्वस्थ तथा परिणामी अनिष्ट इसमें लेशमात्र भी नहीं है। मजेकी बात तो यह है कि इस चिकित्साके लेनेके बाद हृदयकी आरोग्यता ही नहीं मिलेगी बल्कि उन सब रोगोंसे छुटकारा मिल जाएगा जो विजातीय द्रव्यके सहयोगसे शरीरमें पैदा होने वाले थे। प्राकृतिक चिकित्साकी यही विशेषता है कि इसमें हर रोगको ठीक करनेके लिए शरीरको स्वच्छ और सशक्त किया जाता है। एक विद्वान चिकित्सक ने कहा है कि साफ सुथरे और मजबूत शरीरमें रोगोंकी उत्पत्ति किसी भी तरह नहीं हो सकती। प्राकृतिक चिकित्साका लक्ष्य भी यही है। तो लीजिये चिकित्सा क्रम इस प्रकार है —

रोगकी हालत एवं शरीरकी सामर्थ्यके अनुसार २४ घंटे से ७२ घंटेका उपवास लीजिये। हृदयके सामान्य नये रोग तो सिर्फ उपवाससे ही चले जाते हैं। उपवास कालमें प्रातः आधा घण्टेके लिए पेट साफ मिट्टीकी पुलिश लेनेके बाद एनिमा लेकर पेट साफ कर लेना जरूरी है। उपवासमें सिर्फ नींबू और मधु मिले पानी पर ही निर्भर रहें। प्रत्येक तीसरे घंटे आधा सेर पानी पीते रहें। सुबह शाम ठण्डी मालिश (स्पंज बाथ) लें। किसी महीन वस्त्रको बार-बार पानमें भीगोकर उससे शरीरको रगड़नेको ही ठंडी मालिश कहते हैं। यह मालिश पूरे शरीर पर एक माथ नहीं बल्कि एक-एक अङ्ग पर चलाई जाती है। शिर, मुँह, गर्दन, छाती, पीठ, हाथ, पैर, गुप्तांग जाँघें और पैर इन पर एकके बाद दूसरेपर ठंडी मालिश ली जाती है। जिस अंग पर ठण्डी मालिश ली जा चुकी हो उसे सूखे कपड़ेसे पोछकर व सूखी मालिश लेकर पहलेकी तरह गर्म करके ही दूसरे अंग पर ठण्डी मालिश लें। एक बार में ली जाने वाली ठंडी मालिशमें कम से कम २५-३० मिनिट लग जाने चाहिए। यह ठण्डी मालिश शरीरके सभी रंगोंके सूखे वायुको दूर करती है। सामर्थ्य रखती है। इससे स्नायुमण्डल की नवजावन प्राप्त होती है, नया रक्त बनता है तथा शरीरका समस्त

विष रोम छिद्रों के रास्ते से धीरे-धीरे बाहर आता रहता है।

छाती में दर्द की शिकायत हो, दर्द के स्थान पर ठंडी गर्म संक या छाती की लपेट अथवा दोनों लेकर तिल के तैल में (एक छटांक तैल में ३ माशा के मान से) सैंधा-नमक डालकर उससे मालिश करनी चाहिए।

उपवास को किसी फल के एक पात्र रस से या गाय अथवा बकरी के धारोष्ण दूध से तोड़िये। धारोष्ण दूध न मिले एक उकान के दूध में थोड़ा मधु या ग्लूकोज मिलाकर पिया जा सकता है। उपवास की अवधि के अनुसार फलाहार रसाहार एवं दूध छाछ पर निर्भर रहिये। यदि उपवास २४ घण्टे का हो तो ४८ घण्टे और उपवास ४८ घण्टे का हो तो ७६ घण्टे फलाहार दूध आदि पर रहें। उसके बाद अन्नाहार शुरू कर सकते हैं। शुरू शुरू में बहुत कम भोजन करना चाहिए। जिन्हें हृदय का असाध्य रोग हो उन्हें रोग आरोग्य होने तक एक समय भोजन व सुबह शाम फल दूध पर रहना उचित है। विश्वास है एक माह में हृदय की खराब से खराब हालत भी दूर हो जाएगी।

अन्नाहार में गेहूँ चावल की अपेक्षा ज्वार मक्का हृदय के रोगियों को ज्यादा माफिक पड़ते हैं। इनमें धारक तत्वों का परिमाण ज्यादा रहता है। गेहूँ ही लिया जाए तो उसके चोकर को पृथक् न करना चाहिये। चावल पालिश वाले नहीं लेने चाहिये।

श्वास प्रश्वास का व्यायाम हृदय रोगों का अन्यतम सफल उपचार माना गया है। समतल जमीन पर लेट कर या दण्ड की तरह सीधे खड़े होकर हमेशा यह व्यायाम दस पन्द्रह गहरी सांस लेनी और उसे कुछ क्षणों तक छाती में रोककर पुनः बाहर निकाल देने को ही श्वास प्रश्वास का व्यायाम कहते हैं।

हृदय रोगों में मूढ़ा (छाछ) एवं त्रिफला अत्यन्त उपकार करने वाले पदार्थ हैं। बरसों की हृदय की

बीमारी इनसे रफा दफा हो सकती है। त्रिफला सेवन करने का सबसे अच्छा तरीका है, रात को मिट्टी के बर्तन में २ तोला त्रिफला का चूर्ण १० तोला पानी में भीगो दीजिये और सुबह मसल छानकर पी लीजिये छाछ का सेवन भोजन के साथ अथवा खाली पेट कर्म भी किया जा सकता है।

हृदय रोगों से ग्रस्त व्यक्ति काम धन्यसे फारि होकर महीने पन्द्रह दिन के लिए सौ मील दूर किसी भी स्थान पर रह ले तो उसे बहुत लाभ हो सकता है स्थान परिवर्तन से हृदय के रोग बगैर किसी चिकित्स के ठीक हो सकते हैं ऐसे कई प्रयोग सफल हुए हैं लेकिन याद रहे हमने आरम्भ में हृदय रोग के जो कारण बताये हैं उन्हें तो हर हालत में छोड़ने होंगे।



कुमार कल्याण रस

बालकों को स्वस्थ और सबल बनाता है।

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा, कृष्ण गोपाल. (अजमेर)

सेवाधर्म परिचारकधर्म

लेखक—सीतारामजी जोशी

सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः ।

यज्ञदत्तने देवदत्तसे पूछा कि क्या ऐसी बात है सेवाधर्म योगियोंको भी नहीं मिलता ? अर्थात् मैं पास होजाना साधारण बात नहीं, जो संयमी न चाहने वाले सिर्फ सेवा परायण योगी भी जिसमें सफल नहीं हो पाते । इसका क्या कारण है । दत्तने कहा चलो गुरुजीके पास ही इसका रहस्य है । दोनों मित्र गुरुजीके पास गये और साष्टाङ्गाम कर विनयसे पूछने लगे । एकने कहा—

आजकल तो ग्रामसेवक, ग्रामसेविकाएं सेवाधर्म ती हैं सेवा समितियाँ गांव-गांव में बनी हुई डाक्टर भी अपनेको जनताका सेवक कहता है । कम्पाउण्डर भी यही राग चलते हैं । नौकरी के आजकल ६० नव्वे प्रतिशत सेवाधर्मसे जीते हैं के अतिरिक्त स्वयं सेवकदल, राष्ट्रीयसंघ सभी क हैं । हमारी समझ में तो संसारमें सेवाधर्मके वा कोई किसी जगह जीवित ही नहीं रह सकता ।

बेटेको पिताकी, स्त्रीको पतिकी, शिष्यको गुरुकी करनी पड़ती है । मात्र एक किसान ही कहता है मैं तो किसीकी सेवा या नौकरी नहीं करता अपने की कमाई खाता हूँ ।

क्रोध आनेपर स्त्री भी कह देती है कि सेवा करते हैं रोटी मिलती है । देवदत्तने भी यही कहा—गुरुजी ! रका पुजारी ठाकुरजीकी सेवा करता है राजा जाकी सेवा करनेसे अपने आपको सेवक ही पा है ।

मंत्री, प्रधानमंत्री, मिनिस्टर, आनेवार आदि

छोटेसे बड़े तक अपनेको सेवक कहकर पुकारते हैं फिर ऐसी क्या बात है ? जो योगियोंको भी दुर्लभ है । सभी तो सेवा करते ही हैं ।

गुरुजीने कहा प्रिय छात्रों ! यह ऐसा कठिन धर्म है ; इसमें योगी भी डिग जाते हैं ।

सेवा क्या वस्तु है ! सेवा धर्म वह है जिसमें राग-द्वेष न हो, मात्र जीवात्माको परमात्मा समझ, कर्तव्य समझकर प्राणीको सुख पहुँचाया जावे । अपने आपको काया,वाणी, मन, धन सबही समर्पण कर दे । वाग्भट लिखते हैं—

स्वार्थवृत्ति परार्थेषु पर्याप्तमिति सद्ब्रुतम् ।

दूसरेका काम अपना काम । दूसरेको सुख अपनेको सुख मिला समझें । दूसरेकी हानि अपनी हानि । सेवामें-द्वैत नहीं रहता । सदाचार सब इसीमें समाविष्ट होगया है ।

सेवक यह समझ कर करता है कि मैं तप कर रहा हूँ । आत्मामें जो ज्ञानदर्शन चरित्र है वह सब उसीको समर्पणकर स्वयं निर्मान-निर्मोह-निलोभ, क्रोध-रहित होकर सेवा करता है, वह असली सेवाधर्म है । सेवक स्वामीसे कुछ भी नहीं चाहता । परन्तु यदि परनीको साड़ी न लाकर देवें तो वह पतिकी सेवामें कमी कर देगी, और क्रोध भी कर सकती है । अपने बच्चोंकी पिता मोहवश सेवा करता है । औरोंके बच्चोंको एक फल भी नहीं देता । यदि शिष्य गुरुके सामने बोलजावे तो गुरु मानमें आकर उससे सेवा लेना ही बन्ध कर देता है ।

देतन योगी सेवकों की तो देतन प्राप्ति तक ही

सेवा है। वेतन न मिले कि, सेवाकी इति श्री होजाती है। तब ऐसी सेवा और सेवा धर्म संसारमें प्रचलित ही है फिर इसकी दुर्लभता कैसे बताई है। क्यों बताई है सो सुनो।

पहले तो यह सोचना चाहिये कि सेवाकी आवश्यकता ही क्या है। सेवाका अर्थ है सुख पहुँचाना। जीवमात्रको सुख पहुँचाना ही सच्ची सेवा है। जिनके पास दुःख है सुख नहीं है उनको सुख पहुँचाना दुःख दूर करना ही सेवा है।

जीवोंको सुखके आवश्यक द्रव्य गुण कर्म नहीं मिलनेसे जीव दुःखी रहता है। भूखेको भोजन, शर्दीमें सोढ़ मोड़िया, रोगी को दवा, मूर्खको विद्यादान ये सब जिसको जिसकी आवश्यकता हो तदनुसार सुखसाधन देना सेवा है।

सर्व साधारण व्यक्ति सेवा नहीं कर सकता, जिसके पास द्रव्य न हो स्वयं निरुपाय दरिद्री दीन स्या सेवा कर सकता है? क्या धनवान ही द्रव्यसे सेवा कर सकता है? नहीं; सेवा तन मनसे भी हो सकती है।

तनसेवा—यदि धन न हो तो न सही, अपने शरीरसे जिस जीवको जो आवश्यक हो, ला देना, औषध ला देना, स्नान कराना, गरम पानी पिलाना, पखा करना, कपड़े धोना आदि तन सेवा है।

वाणीसे—आश्वासन देना, निर्भय रहो। मैं अमुक को समझा दूंगा, कह दूंगा। मैं आपकी क्या सेवा करूँ। मैं हूँ जैसा तैयार हूँ, आपको सुख मिलेगा, अवश्य मिलेगा, जल्दी मिलने वाला है। सुख सदा नहीं रहता तो दुःख भी सदा नहीं रहेगा। इत्यादि वाणीसे आश्वासन सेवा है।

इससे भी आगे मन सेवा है—भाव सेवा, चाहे दूर बैठा रहे, चाहे मौन रखे; परन्तु यदि सेवा भाव होगा तो परा पूजा हो जावेगी। मनुष्यमें आध्यात्मिक दुःख रहते हैं शारीर मानस दोनों ही दुःख आध्यात्मिक कहलाते हैं।

आदि मानस भावोंसे प्राणी दुःखी रहता है।

जब मनुष्यमें क्रोध हो, क्रोध रूपी रोगसे आक्रान्त हो, तब उस क्रोधको रोग समझकर उसे सह लेना और उत्तर न देना, कटु वचनके बदले मृदु, शीतल, शान्त वचन कहना यह क्रोध रूपी दुःखसे दुःखीकी सेवा है।

बहुतसे मनुष्य रोगीकी सेवा करते हैं, परन्तु जहाँ उसने क्रोध किया, कटु वचन कहे, सेवा छोड़ देते हैं। या उनकी अरुचि हो जाती है। उस समय कटु वचनोंसे उसके दुःखके प्रहारोंसे विचलित न होना योगियोंको भी दुर्लभ है।

क्योंकि जब एक दिन नहीं, एक रात नहीं, एक सप्ताह नहीं, पक्ष-मास-वर्षोत्तक गुरुकी या रोगीकी सेवाका मौका मिले। उस समय उसके क्रोधको सहनकर लोभ (पैसा मांगे तो देना), मोह उसका आत्मीय बनकर सेवा करना, उसके मिथ्या घमण्डको सहन करना, वह यदि कहे कि मैं ऐसा हूँ, मेरा प्रभाव ऐसा है, मैं तुम्हें धनी बना दूंगा, ऊँचे स्थानपर बिठा दूंगा, इत्यादि बातोंपर विचार न कर निस्पृह, निस्वार्थ होकर जब तक वह स्वयं न कह दे, तब तक रात दिन तल्लीन होकर सेवा करना इस समयके व्यक्तियोंके लिए दुर्लभ ही नहीं असंभव है।

एक दो दिन मनुष्य मलमूत्र साफ कर सकता है, मानापमान सह सकता है, परन्तु संयम (सहन) करते करते योगी और क्षमावान भी डिग जाता है। अन्त तक उसे सुखी रखना अपना जीवन समर्पण कर देना-भूखा है, प्यासा है। स्वयंके तन मन धनका ध्यान नहीं उसी व्यक्तिको परमेश्वर समझकर इसकी सेवासे मेरे अनन्त जन्मके कर्म कट रहे हैं।

हजारों गो दानका फल मुझे इस सेवासे प्राप्त हो रहा है। सारी पृथ्वीके तीर्थोंका स्नान फल यहाँ ही है। इस सेवासे ही है। यज्ञ दान और तर भी यही है। भगवान इसीमें है भगवान इसीसे प्रसन्न होते हैं। मुझे अपने लिए कुछ नहीं करता अलग मेरा कोई कर्तव्य नहीं।

स्नान-संन्या, जप-तप, स्वाध्याय, सर्वस्व इसीमें है। सेवा आराध्यदेव

क्रोध, लोभ, मोह, उद्वेग, मात्सर्य, अविद्या, अज्ञान, अहंकार, ईश्वर

प्रसन्न रहे तो मैंने पुरुषार्थ चतुष्टय इसी लोकमें प्राप्त कर लिए। मेरी तपस्या भंग न हो जावे। सेवामें कमी न रह जावे। मुझसे अपराध न बनने पावे। यदि मेरा शरीर बिक जावे और इनको सुख पहुँचे तो मेरा मनुष्य जीवन सफल हो जावे ऐसी भावनासे जो सेवा होती है। वही सेवा धर्म है।

पातिव्रत धर्म, गुरु-शिष्य सेवा धर्म, ईश्वर भक्ति ये सभी सेवा धर्म हैं। पूर्व पुण्यसे ही ऐसे भाव प्राप्त होते हैं। अतः कहा है 'सेवाधर्मः परमगहनो' यह धर्म भी पहले सीखनेपर अभ्याससे प्राप्त होता है। गुरु या मातापिता सेवा सिखावे तभी प्राप्त हो जाता है। जितना यह धर्म दुर्लभ है उतना ही महत्त्व भी रखता है।

सेवामें हजारों वर्षोंका ऋणि तपस्वियोंका तप प्राप्त होजाता है। गो सेवाससे दूध भी मिलता है और क्षणमें आशीर्वाद प्राप्त हो जाता है। यह धर्म निष्फल नहीं जाता। यह सारोंका सार है तपोंमें अति श्रेष्ठ तप है। इससे बढ़कर कोई तप नहीं। जितने कर्म इससे

कटते हैं। उतने दूसरे साधनोंसे नहीं।

पञ्च धूनी तपना सहज है, मनुष्य हजारों रूपोंका दान दे सकता है। भूख प्यास सह सकता है। परन्तु कटु वचन सहन करते हुए मानापमान सहकर सेवा करना दुर्लभ ही नहीं अति दुर्लभ है इसीलिए लिखा है—

सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः।

इसकी गहनता यही है कि सेवक हरदम यही विचारना रहता है कि गुरु या ईश्वर, रोगी व अन्य जिसकी सेवा करता है यह कैसे प्रसन्न हो, इसको सुख कैसे पहुँचे; इसी चिन्ता विचारोंमें मग्न रहता है, और सेवा करता है समाधि लगी रहती है। रात भर खड़ा है, दिनका भूखा है। निद्रा नेत्रोंमें है, शरीर का भान नहीं ऐसी सेवा रंगवा है। अन्य तो सब ढोंग है।

आयुर्वेदमें परिचारकका स्थान है वह इसीमें है। अर्थात् परिचारक परिचारिका ऐसे होने चाहिये तभी रोग सुसाध्य माना गया है।

पूर्णचन्द्रोदय रस (सिद्ध मकरध्वज)

इस पूर्ण चन्द्रोदयमें शास्त्र विधिसे संस्कारित तथा गन्धक जारित पारद उप-योगमें लिया गया है। इस चन्द्रोदयके सेवनसे वात और कफ प्रकृति वालोंको शास्त्रकथित पूरा-पूरा लाभ मिलता है। यह चन्द्रोदय उत्तम हृदय पौष्टिक, वाजी-कर, विषघ्न, कीटाणुनाशक और रसायन (वृद्धावस्थाकी निर्बलताको दूरकर पुनः युवावस्थाके समान शक्तिप्रद) है। शारीरिक निर्बलता, मानसिक निर्बलता, शक्ति-क्षीणता, श्वास, कास, क्षय, अपस्मार, विषविकार, जीर्णज्वर, पाण्डु आदि जीर्ण रोगोंसे पीड़ितोंके लिए अमृतके समान उपकारक है।

मूल्य—१ ग्राम १०-१५।

बापूके एकादश व्रत

गौरीशंकर गुप्त (मंत्री, राष्ट्रकवि परिषद्)

गीतोपनिषद् और धर्मशास्त्र प्रतिपादित धर्मके लक्षणोंसे बापूको काफी प्रेरणा मिली थी और उन्हींसे प्रेरित होकर उन्होंने अपने और अपने आश्रमवासियोंके जीवनमें इन लक्षणों व व्रतोंको उतारनेकी चेष्टा की थी, जो एकादश व्रतोंके रूपमें प्रसिद्ध हैं। इन व्रतोंका पालन करने व इन नियमोंपर चलनेके कारण ही आश्रमवासियों और स्वयं बापू ने भी अपनेमें मानवके अभ्युदय और कर्ममय जीवनको निरत्य प्रशस्त और कल्याणमय पाया था। ये एकादश व्रत उनकी दिन-चर्याके अभिन्न अंग रहे। इनका उन्होंने समय-समय पर जो भाष्य किया था, उसीका सारांश यहां प्रस्तुत है—

१. सत्यका अर्थ इतना ही नहीं कि दैनिक व्यवहारमें झूठ न बोलना या असत्यका आचरण न करना, बल्कि ऐसा समझना चाहिये कि सत्य ही परमेश्वर है और उससे बढ़कर कुछ है ही नहीं। इस सत्यकी खोज और पूजाके लिए ही अन्य सब नियमोंकी आवश्यकता है और सत्यसे ही उनका जन्म तथा विकास होता है। सत्यका पुजारी अपने माने हुए देशहितके लिए भी कभी असत्यका आचरण न करे, झूठ न बोलें, बल्कि सत्यके लिए भक्तगज प्रह्लादकी भांति अपने माता पिता तथा बड़े-बूढ़ोंकी आज्ञा भी विनय पूर्वक भंग करनेमें पाप न समझे, उसे अपना धर्म माने।

२. अहिंसा—इस व्रतका पालन करनेके लिए प्राणियों व जीवोंका हनन न करना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि अहिंसाका मतलब है—छोटे-छोटे जंतुओंसे लेकर मनुष्य तक सब जीवोंको एक-सी दृष्टिमें देखना। इस व्रतका आचरण करने वाला घोर अन्यायीपर भी क्रोध न करे, बल्कि उसपर प्रेम रखे—उसके शुभकी ही कामना करे। साथ ही, प्रेम करते हुए भी उसके अन्यायसे न दबते हुए उसका सामना करे और ऐसा करनेमें उसे जो भी कष्ट भोगने पड़े, उनको द्वेषरहित रहकर धैर्यपूर्वक सहन करे।

३. ब्रह्मचर्य—ब्रह्मचर्यव्रतके पालनके बिना सत्य और अहिंसा इन दो व्रतोंका पालन असम्भव है, जिसके

लिए मात्र इतना ही आवश्यक नहीं कि ब्रह्मचारी किसी स्त्रीको या स्त्री किसी पुरुषको कुदृष्टिसे न देखे, बल्कि यह भी जरूरी है कि वह मनसे भी विषयोंका चिन्तन या भोग न करे। यदि वह विवाहित हो तो अपनी पत्नी या अपने पतिके साथ भी विषय-भोग न करे, बल्कि उसे अपना मित्र मानकर उससे पवित्र वा निर्मल सम्बन्ध रखे। अपनी पत्नी हो या परायी स्त्री हो, अपना पति हो या पर-पुरुष हो, किसीके भी विकारमय स्पर्श या वैसी बातचीत अथवा किसी वैसी अन्य चेष्टासे भी स्थूल ब्रह्मचर्य भंग हो जाता है। ऐसी विकारयुक्त चेष्टा यदि परस्पर पुरुषोंमें या स्त्रियोंमें हो अथवा दोनोंकी किसी चीजके लिए हो, तो भी स्थूल ब्रह्मचर्य नष्ट हो जाता है।

४. अस्वाद—बिना जीभको वशीभूत किये ब्रह्मचर्यव्रतका पालन असम्भव सा होनेके कारण अस्वाद एक अलग व्रत माना गया है। भोजन केवल शरीरको जीवित रखनेके लिए करना चाहिये, आनन्द-लाभकी दृष्टिसे नहीं। भाव यह कि भोजनकी औषधि समझकर और संयमपूर्वक ग्रहण करना आवश्यक है। इस व्रतके पालकको विकार उत्पन्न करने वाले मसालों तथा मांस, शराब, तम्बाकू, भांग, चाय, बड़ी-सिगरेट आदि वस्तुओंका त्याग कर देना चाहिये। दावत देने, उसमें सम्मिलित होने तथा भोजनका किसीसे आप्रह करनेकी भी सनाही इस व्रत वालेके लिए है।

५. अग्नेय—इस व्रतके लिए इतना ही पर्याप्त नहीं कि दूसरेकी कोई वस्तु बिना उसकी आज्ञाके न ली जाय, बल्कि जो वस्तु जिस कामके लिए मिली हो, उसके अतिरिक्त उसे किसी काममें लेना तथा जितने समयके लिये वह मिली हो, उससे अधिक समय तक उसका उपयोग करना भी स्तेय या चोरी है। इस व्रतके मूलमें यह तथ्य है कि परमात्मा हम प्राणियोंके लिए दैनिक आवश्यकताकी वस्तुयें सदासर्वदा पैदा करता है और हमें प्रदान करता है। आवश्यकतासे जरा भी अधिक बढ़ पैदा नहीं करता। इसलिए अपनी

कम से कम आवश्यकताके अतिरिक्त मनुष्य यदि कुछ भी ग्रहण करता या लेता है, तो वह चोरी ही है।

६ असंप्रह-असंप्रह वा अपरिग्रह व्रत पूर्वोक्त अस्तेय व्रतके अंतर्गत ही है। जिस प्रकार अनावश्यक वस्तु ली नहीं जा सकती, उसी तरह उसका संप्रह करना भी वर्जित है। आशय यह कि अनावश्यक वस्तुओंका संप्रह करनेसे यह व्रत भंग हो जाता है। उदाहरणार्थ अन्न या फर्नीचर आदि किसी भी वस्तुको आवश्यकतासे अधिक न रखे और जहां तक हो सके, अनावश्यक वस्तुओंका उपयोग ही न करे। दूसरे शब्दोंमें अपरिग्रही अपना जीवन सदा सादगीमय रखे।

७. सर्वत्र भयवर्जन (अभय) सत्य, अहिंसादि व्रतोंका निर्वाह निर्भयताके बिना संभव नहीं है। अतः निर्भयताका चिन्तन करना और उसका प्रचार करना अत्यावश्यक है। सत्यपरायण रहने वाला जात-पांतसे, चोरसे, गरीबीसे और मृत्यु तकसे अभय रहे।

८. स्पृशभावना (अस्पृश्यता निवारण) - छुआछूतको अधर्म मानकर अस्पृश्यता निवारणको भी व्रत माना गया है। बापूके आश्रममें जात-पांत या छुआछूतका कोई बन्धन नहीं है। आश्रमकी मान्यता है कि छुआ-छूत या जात-पांतकी ऊंच-नीचकी भावनासे पूर्वोक्त अहिंसा धर्म को हानि पहुँचती है।

आश्रम वर्णाश्रम धर्मको मानता है; किन्तु उक्त-वर्ण व्यवस्था मात्र धंधेके सम्बन्धमें है। मतलब यह है कि जो इसे मानता है, उसे अपने पैतृक व्यवसायसे जीविकोपार्जन करके शेष समय ज्ञान प्राप्ति तथा उमरके संवर्धनमें लगाना चाहिये। स्मृतियोंमें वर्णित वर्ण-व्यवस्था विश्वका उपकार करने वाली है; किन्तु वर्णाश्रम धर्म मान्य होनेपर भी आश्रम-जीवनकी रचना तो गीताके माने हुए व्यापक और भावना प्रधान संन्यास धर्मके आदर्श पर हुई है और इसीलिये वर्ण-भेदकी वहां गुंजाइश नहीं है।

९. शरीर श्रम-अस्तेय तथा अपरिग्रह (असंप्रह) व्रतोंके पालनार्थ शरीर श्रम आवश्यक है। फिर सब लोग जब खुर मेहनत करके जीविकोपार्जन करें, तभी वे सामाजिक द्रोह तथा आत्मद्रोहसे बच सकते हैं। जो खुर परिश्रम करनेमें समर्थ हैं और विवेकशाल हैं, उन्हें अपना दैनिक कार्य बिना किसी सहायकके खुर

व खुर कर लेना चाहिये। बिना किसी विशेष कारणके सहायकका उपयोग करना अनुचित है। इसी प्रकार किसीकी सहायता अनिवार्य होनेपर उससे स्वामी और सेवकका-सा बर्ताव करना, कोई भेद भाव रखना अनुचित है। साथ ही, अवसर आनेपर बच्चों, अपाहिजों-अपंगों तथा वृद्ध स्त्री-पुरुषोंकी सेवा करना सामाजिक उत्तरदायित्वका अनुभव करने वाले प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है, धर्म है।

१०. सर्व धर्म समानता (सहिष्णुता) बापूके आश्रमकी यह मान्यता है कि संसारमें जितने भी प्रचलित और प्रसिद्ध धर्म हैं, वे सब सत्यको प्रकट करते हैं; किन्तु अपूर्ण या अनाधिकारी मनुष्योंद्वारा उनकी अभिव्यक्ति हुई है। इस कारण उन सब असत्यका समावेश हो गया है। आशय यह कि हमने स्वधर्मके लिये जितना मान हो, उतना ही अन्य धर्मों के लिए भी होना चाहिये। ऐसी सहिष्णुता होनेपर पारस्परिक विरोध टिक नहीं सकता और न किसीने स्वधर्ममें लानेका प्रयत्न ही किया जाता है, बल्कि यह प्रार्थना की जाती है कि सभी धर्मोंमें यदि कुछ दोष हो तो वे दूर हो जायें। इस भावनाको सदा दृढ़ रखना आवश्यक है।

११. स्वदेशी-मनुष्य सबसे बलवान प्राणी है। इसलिये वह अपने पड़ोसीकी सेवाके माध्यमसे सम्पूर्ण जगत्की सेवा कर सकता है। इस भावनाका नाम स्वदेशी है। जो अपने पास-पड़ोसकी सेवासे विमुख होकर दूरकी सेवाके लिये दौड़ता है, वह यह व्रत भंग करता है। इस भावनाको दृढ़ करनेसे मजबूत बनानेसे सारा संसार सुव्यवस्थित बन सकता है। इसके विपरीत आचरण करनेसे अव्यवस्था उत्पन्न होती है। अतः इस नियमके अनुसार जहाँ तक हो सके हमें अपने पड़ोसकी दुकानसे व्यवहार करना चाहिये। इसी प्रकार, अपने देशमें बनने वाली या सुगमता पूर्वक बन सकने वाली कोई भी वस्तु परदेशसे मंगाना अनुचित है। स्वदेशी व्रतमें स्वार्थका स्थान है ही नहीं। अपनेको कुटुम्बके लिये, कुटुम्बको शहरके लिये, शहर को देशके लिये और देश को समूचे विश्वके कल्याणके लिये न्योझावर कर देना चाहिये यह इस व्रतका

प्रदर

लेखक—श्रीकृष्णगोपाल गुप्ता
श्री रामकृष्ण राजपुताना औषधालय
जुरहरा, भरतपुर (राजस्थान)

नारी जननेन्द्रियोंसे हर समय अथवा विशेष कसरत करनेपर, या ऊपर नीचे चलनेपर विरुद्ध भोजन करनेसे, मद्य एवं अर्धसतके सेवनसे, दिनमें अधिक सोनेसे एक प्रकारका स्राव सा निकलने लगता है इसे प्रदर कहते हैं। यह स्त्रियोंके लिये बड़ी भयंकर व्याधि है। इसमें स्त्रीका स्वास्थ्य उत्तरोत्तर गिरता ही रहता है। अरुचि व शिथिलता आती है। यह रोग कभी कभी छोटी-छोटी बालिकाओंमें भी होते देखा गया है।

आयुर्वेदके मतानुसार यह रोग चार प्रकारका होता है। कफज, पित्तज, वातज और सन्निपातज। इसके लक्षण आयुर्वेदमें भिन्न-भिन्न दिये हैं। भाव प्रकाशमें इसके लक्षण निम्न मिलते हैं।

कफज प्रदरके लक्षणः—

आमं सपिच्छाप्रतिमं सपाण्डु,

पुलाकतोयप्रतिमं कफात्तु।

अर्थात् कच्चे रस वाला, सेम आदिकी गोंदकी तरह चिकना तनिक पीले वर्णका और पुलाक नामक मुख्य धान्यके धोवनके समान रुधिर बहता है।

पित्तज प्रदरके लक्षणः—

सपीतनीलासितरक्तमुष्णं,

पित्तार्तियुक्तं भृशवेगि पित्तात्तु।

अर्थात् पीला, नीला, सांवला, लाल तथा गर्म रक्त तथा दाह आदि लक्षणोंसे युक्त प्रदर पित्तज प्रदर कहलाता है।

वातज प्रदरके लक्षणः—

रुतारुणं फेनिलमलमालपं,

वातार्ति वातारिपशितोदकाभम्।

अर्थात् रुखा कालिमा लिये हुये लाल फेन युक्त और मांसके धोवनके रंगका थोड़ा थोड़ा स्राव सुई चुभोने जैसा पोड़ाके सहित होता है।

सन्निपातज प्रदरके लक्षणः—

सचौद्रसर्पिर्हरितालवर्ण,

सजप्रकाशं कुणपं त्रिदोषात्।

अर्थात् शहद, घी, हरतालके समान रंग वाला, मज्जाके समान सड़े मुर्देकी-सी गंधवाला स्राव त्रिदोषज प्रदरमें बहता है।

आधुनिक मत और प्रदरः—

आयुर्वेद और आधुनिक मतमें प्रदरके बारेमें कोई खास मत भेद नहीं है। यथा—

कफज प्रदर (Leucorrhoea)—के नामसे पुकारा जाता है। इसमें जननेन्द्रियोंसे एक प्रकारका सफेद स्राव निकलता है। पहिले यह स्राव सफेद रहता है व कपड़ोंमें सफेद दाग लगता है। सूखकर कपड़ा कड़ा हो जाता है। पश्चात् स्राव बढकर पीले अथवा हरे रंगका हो जाता है।

ल्यूकोरिया उत्पादक अंगोंसे निकले हुए उस स्रावको कहते हैं। जो गाढा हो श्वेत हो अथवा, किंचि पीत वर्ण चिपचिपा तथा श्लेष्मिक कलाके टुकड़ोंसे व्याप्त हो। अपने यहां आयुर्वेदमें भी इसके लक्षण इसी प्रकारके हैं। यथा—

आमं सपिच्छाप्रतिमं सपाण्डु,

पुलाकतोयप्रतिमं कफात्तु।

कारण (Causes)—मुख्य रूपसे इसके दो कारण हैं

(१) जननेन्द्रियात्मक (Genital)

(२) बहिर्जननेन्द्रियात्मक (Extragenital)

जननेन्द्रियात्मकः—ये गर्भाशय (Uterus) अथवा वय (Vagina) और योनि (Vulva) इन शोथ युक्त स्थानकी उपस्थिति।

(२) गर्भाशयके भीतरी स्तर—में परिवर्तन, गर्भाशय ग्रीवाकी श्लेष्मिक कलामें परिवर्तन रक्ताधिक्य (३) ग्रन्थियोंका स्राव अधिक होना।

(४) बीज ग्रन्थिके कार्य बढ जाना, इसके कारण गर्भाशयके भीतरी स्तरकी ग्रन्थियोंका स्राव अधिक होना ।

(५) ऐसे अर्बुदोंकी उपस्थिति होना जो गर्भाशयकी श्लेष्मिक कलापर प्रभाव डालते हों । अथवा अपत्यपथ और योनिपर प्रभाव डालते हों ।

(६) ऐसे अर्बुद जो टूट रहे हों अथवा नाशकारी हों उनकी उपस्थिति ।

आधुनिक मत इन सबको ल्यूकोरियाकी उपस्थितिका कारण मानता है । संक्षेपमें यह अनेक प्रकारके उपसर्गोंसे उत्पन्न होने वाला एक लक्षण मात्र है । श्वेत प्रदरका उपसर्ग (Infection) दो प्रकारसे होता है ।

(१) गर्भाशय तथा गर्भाशयिक प्रीवासे उत्पन्न होने वाले स्रावको बढा देना । और कभी कभी क्रिया को बढा देना ।

(२) अपत्यपथ (Vagina) की म्यूकस मेमब्रेनकी दशाको अस्वस्थ बना देना । और योनिगत लसीका और रक्त वाहिनियोंमेंसे लसीका टपकने लगता है । इस प्रकारका उपसर्ग बहुत कठिन होता है ।

इस प्रकार श्वेत प्रदरका उपसर्ग होता है । यह कफज प्रदर है । इसके लक्षण और आधुनिक ल्यूकोरियाके लक्षण समान मिलते हैं ।

Metrorrhagia (मेट्रोरोजिया)—यह नाम आधुनिक मतने पैत्तिक प्रदरको दिया है जिसे रक्त प्रदर कहकर भी जाना जाता है । इसकी परिभाषा निम्न प्रकारसे दी जाती है ।

(१) मासिक स्रावमें प्रथम चार पाँच दिनमें अधिक रक्तके निकलनेको मैनोरोजिया (Menorrhagia) कहा जाता है ।

(२) रजःस्राव कालके बाद रक्तका अधिक निकलना (Metrorrhigdo) मेट्रोरोजियाके नामसे जाना जाता है ।

इस रोगके निम्न कारण बताये जाते हैं—

(१) जननेन्द्रियात्मक (Genital)

(२) रक्त वह संस्थानके दोष (Genital Domain). Gurukul Kangri Collection, Haridwar

(३) मस्तिष्क संस्थानके विकार (Nervous cause)

(४) निःस्रोत ग्रन्थियाँ (Ductless glands)

(१) जननेन्द्रियात्मक कारण (Genital Causes)—इसमें बीज ग्रन्थि और गर्भाशयके अर्बुद तथा बहिर्गर्भस्थिति और उसके अतिरिक्त गर्भाशयके भीतर शोथ, अथवा गर्भाशय स्थान अंश और प्रसवके बाद गर्भाशयमें अपरा अथवा कला आदिका कोई टुकड़ा रह जाना । ये सब कारण होते हैं ।

(२) रक्तवह संस्थानके दोष—ये सारे कारण तथा रोग जिनसे रक्त भार (Blood Pressure) की वृद्धि होती तथा है हृदय तथा वृक्क के रोग, वदर प्रेशेके अर्बुद इसके अतिरिक्त ब्राकाईटिस तथा एम्फीसीमा इत्यादि फूँफड़ेकी बीमारियाँ ये सब मेनोरोजियाके कारण होते हैं ।

(३) मस्तिष्क संस्थानके विकार—कुछ ऐसी दशाएँ हैं जो रिफ्लेक्स मेनोरोजियाके कारण होते हैं (Reflex menorrhagia) को पैदा करती हैं । अधिकतर मेनोरोजिया अधिक विषय सेवन करनेसे होता है अथवा अधिक गर्म जलसे स्नान करनेसे या अधिक मानसिक परिश्रम इत्यादि करनेसे होता है ।

(४) निःस्रोत ग्रन्थियाँ—(अ) बीज ग्रन्थि (Ovary) का अधिक रस स्राव (Secretion)

(ब) अवटुका ग्रन्थि (Thyroid gland) का अधिक रस स्राव ।

आधुनिक मतके अनुसार वात जन्य प्रदर या कष्टार्तव एक ही है । वात जन्य प्रदरको यह मत डिस्मिनोरिया (Disminorrhoea) कहता है । यदि आर्तव मात्रामें कम तथा आरामके साथ हो तो उसे डिस्मिनोरिया (Disminorrhoea) नहीं कहते किन्तु जब आर्तवके समय अधिक पीड़ा होती है तो उसे डिस्मिनोरिया या कष्टार्तव कहते हैं । ऐसा अक्षेप चरक संहितामें भी मिलता है । यथा—

“कटिवंक्षण हृत्प र्श्वं पृष्ठं श्रोणिषु मारुतः ।

कुरुते वेदनां तीव्रामेतद् वातात्मकं विदुः ॥”

कष्टार्तवके हीनवाले कारणोंको निम्न दो भागोंमें

बाँटा जा सकता है —

१. जननेन्द्रियात्मक (Genital)

२. बहिर्जननेन्द्रियात्मक (Extra Genital)

जननेन्द्रियात्मक कारण—(क) बीज ग्रन्थि (Ovary) और गर्भाशयका पूर्ण रूपसे विकसित न होना।

(ख) बीज ग्रन्थि (Ovary) गर्भाशय तथा फेओपिअनट्यूबस (Fallopian Tubis) इनका श्राय होना। इस अवस्थाके बाद इसमें व्रण हो जाता है।

(ग) गर्भाशयग्रीवा (Cervex) के अन्तः स्तर (Endometrium) का उलट जाना।

(घ) गर्भाशयका स्थानान्तरण।

(ङ) बीज ग्रन्थि, गर्भाशय, फेओपिअनट्यूबसके अर्बुद।

(च) सहज या जन्मके पश्चात् गर्भाशय ग्रीवाके मार्गका बन्द हो जाना।

आतं व कालमें रक्ताधिक्यके कारण रक्त नलिकाओंमें तनाव पैदा हो जाता है। इस तनावके कारण ज्ञान तन्तुओंके अप्रभागां पर दबाव पड़ता है। और इसी दबावके कारण पीड़ा होती है।

जब डिसमिनिरिया रक्ताधिक्यके कारण नहीं होता है तो यह यान्त्रिक कारणसे होता है। इसमें मासिक स्रावका प्रवाह किसी अवरोधके कारण होता है।

अवरोधके प्रकार—(क) गर्भाशयग्रीवाकी नलिकाका अवरुद्ध होना। और वह रुकी सी होना।

(२) गर्भाशय, गर्भाशय ग्रीवा अथवा गर्भाशय द्वारपर किसी अर्बुदका होना।

(३) गर्भाशय मुख द्वारका रक्ताधिक्य युक्त गर्भाशयान्तः-स्तरके द्वारा अवरुद्ध हो जाना और वह गर्भाशयके बिल्कुल झुक जानेके कारण होता है।

बहिर्जननेन्द्रियात्मक कारण (Extragenital causes)—(क) साधारण स्वास्थ्यकी खराबी जैसे पाण्डुरोग तथा हरित रोग आदि।

(ख) आमवात अथवा वात रक्तकी प्रवृत्ति।

(ग) न्यूरेलजिया।

(घ) न्यूरेस्थिनया।

इस प्रकार हमने देखा कि प्रदरके बारेमें पृथक् पृथक् दोषोंसे दूषित होनेपर पृथक् पृथक् लक्षण पाये जाते हैं। सामान्य सर्व प्रकारके प्रदरमें आचार्य सुश्रुतके अनुसार ये लक्षण मिलते हैं।

“असुरदरो भवेत् सर्वः साङ्गमर्दः सवेदनः।

तस्यातिवृत्तौ दोर्बल्यं, भ्रमोमूर्च्छा मदस्तृषा॥

दाहः प्रलाप पाण्डुत्वं तन्द्रारोगाश्च वातजाः॥

इस प्रकार रोगके सामान्य लक्षण हुये। यह रोग असाध्य नहीं है। बल्कि पूर्व में साध्य तथा उत्तरोत्तर कष्ट साध्य होता जाता है।

चिकित्साः—

आयुर्वेद मतसेः—१—कालानमक, जीरा, मुलेठी और नाल कमलका फूल प्रत्येक दो दो मासा लेकर चार तोला दहीमें पीसकर ८ माशा शहद मिलाकर खावें। इस प्रकार रोजाना खाते रहनेसे वातज प्रदर नष्ट हो जाता है।

(२) अशोककी छाल १ पल (चार तोला) के ३२ पल जलमें पकावें। जब ८ पल जल शेष रह जा तब ८ पल दूध डालकर पकावे, जब पानी जल जा दूध रह जावे, तब उतारकर ठंडा कर ले। छानकर चारपल दूध प्रातः चार पल दूध सायं पाँचे तो ती प्रदर भी नष्ट हो जाता है। अगर अग्नि मन्द हो कम पावे।

(३) दारु हल्दी, रसोत, चिरायता, नागर मोथ श्रीफलकी गिरी, लाल चन्दन, और मदारका फूल इनके काठेमें शहद (प्रत्येक चीजसे दुगुना) डालकर पीनेसे रक्तप्रदर व श्वेत प्रदर दोनों ही नष्ट हो जाते हैं व उनकी पीड़ाएँ नष्ट हो जाती हैं।

(४) पाठा, आम व जामुनकी गुठली, पाषाणमे रसोत, अम्बष्ठकी मोचरस, लज्जालूके बीज, कम केशर, कुड़ाकी छाल, अतीस, नागरमोथा, वेल, लो गेरु, कालामिर्च, सोंठ, मुनक्का, लाल चन्दन, सो पाठा, इन्द्रियव, यवासा, धातके फूल, मुरेठी, अ अर्जुनकी छाल, सब चीजें समान भाग लेकर ५ कप में पानी में पकावें। उस चूर्णको शहद

मिलाकर चावलके जलके साथ पीना चाहिये । यह चूर्ण स्त्रियोंके योनिदोष, रजोदोष, सफेद, नीले, पीले फूल, आसमानी व लालिमा लिये हुए प्रदरोंको बलात् नष्ट करता है ।

यह पुष्यानुग चूर्णके नामसे जाना जाता है ।

(५) ताजी शतावरका रस १२८ तो० लेना चाहिये दूध २५६ तो० घी १२८ तो० जल १२८ तो० अष्टवर्ग आठ तोला, मुरैठी, चन्दन, गोखरु, कौंचके बीज, खरैटी, गंगेरन, सखिन, पिठवन, विदारीकन्द, सरिवा, शक्कर और खम्भारके फल प्रत्येक एक तोला) इनका कलक छोड़कर पकाना चाहिये । मृदुपाक होनेपर छान लेना चाहिये । यह सन्निपातज प्रदर व अन्य कई रोगोंमें रामबाण है । यह शतावरी वृत्तके नामसे जाना जाता है ।

आधुनिक मतानुसार चिकित्सा:—श्वेत प्रदर (Leucorrhoea)

| | |
|--------------|-------|
| पलवऐलम | ३ औंस |
| जिक सक्क | १ ” |
| काबौलिक एसिड | १ ” |
| बोरेक्स | १ ” |
| एक्वा | २ ” |

इन सबको मिलाकर रख लें । ३ औंस दवा में चौबीस औंस पानी मिलाकर ड्यूम करें ।

| | |
|---------------------|-----------|
| टि० फैरीफर क्लोराइड | १५ मि० |
| ऐ० अर्गट लि० | १५ ” |
| एसिड गैलिक | ५ ग्रेन |
| टि० हेमसे लीडिस | १५ ” |
| स्पिट क्लोरोफार्म | १० ” |
| इन्फ्यूजन क्वासिया | कुल १ औंस |

ऐसी एक मात्रा दिनमें तीन बार पिलावें ।

साथ ही ल्यूकोर्रिथारीन (Leucorrhoearine) का इन्जेक्शन तीसरे दिन देते रहना चाहिये ।

अगर रोगिणी पीनेकी दवा न लेना चाहे तो, उसे

पानी से दें ।

रक्तप्रदर (Menorrhagia) की चिकित्सा:-

| | |
|-------------------|----------|
| १. पोटैस ब्रोमाइड | १५ ग्रेन |
| एसिड गैलिक | १० ग्रेन |

ऐसी पुड़िया दिनमें तीन बार दें ।

| | |
|-------------------------------|-----------|
| २-लिकर आर्सेनिक हाइड्रो क्लोर | ३ मि० |
| टि० डिजिटेलिस | १०,, |
| लि० स्ट्रिकनीन हाइड्रोक्लोर | ३,, |
| एक्स० हाईड्रास्टिस लि० | १०,, |
| एक्वा | कुल १ औंस |

ऐसी मात्रा दिनमें तीन बार दें ।

ल्यूरो साईक्लीन, कैल्शियम क्लोराइड, प्रोजेस्टीन, गार्डन राजिन, इन इन्जेक्शनोंमेंसे कोई एक इन्जेक्शन तीसरे दिन देते रहना चाहिये । उसके साथ ही निम्नमेंसे कोई एक योग उसके ऊपर लिखी विधिसे देना चाहिये ।

अशोक कोडियल, ऑवेरेक्स, ऐलेट्रिस कोडियल इत्यादि ।

कष्टार्तव (Dysminorrhoea) की चिकित्सा:-
ऊपर रोगके लक्षण और कारण बताते समय मैंने कष्टार्तवके बहिर्जननेन्द्रियात्मक पांच कारण बताये हैं । उनकी सिलसिलेवार चिकित्सा निम्न प्रकारसे है:-

१—साधारण स्वास्थ्यकी खराबीके जो कारण हों उन्हें दूर करना चाहिये ।

२—पौष्टिक और दस्तावर औषधियोंका सेवन करना चाहिये । रक्तकी कमीको दूर करना चाहिये । सड़े हुए दाँत, नासाकी ग्रन्थियोंका शोथ, मलावरोध, भोजनकी कमी, आन्त्रपुच्छ शोथ (Appendicitis) और अर्श इनको दूर करना चाहिये ।

३—वात रक्त जन्यकी चिकित्सा आमवातके अनुसार करना चाहिये ।

४—न्यूरेलाजिया (Newralgia) के द्वारा उत्पन्न होने वाले कष्टार्तवमें फिनस्टीन दो से ५ ग्रेन एण्टी

विका सेवन करना चाहिये।

५—नासिका दोष जन्य कष्टार्तव यह नासिकाकी धूपवर कुलम जोकि एक प्रकारका धातु होता है उसमें पाया जाता है। यह मासिक स्रावमें फूल जाता है। इसे २०% कोकीनके घोलको लगाना चाहिये।

अगर इससे ठीक नहीं हो तो दाह कर्म करना चाहिये अथवा अम्लसे काट देना चाहिये।

६—न्यूरेस्थिनियाका कष्टार्तव:—इसकी चिकित्सा बहुत कठिन है। इसमें ऐसे कारण लाभदायक हैं जिनकी मानसिक शक्ति बढे। बीज ग्रन्थिका सत्त्व (Ovaryn Extract) इसकी विशेष चिकित्सा है। इसमें अण्डका ग्रन्थिका सत्त्व (Thyroid glands Extract) मिलाकर देना चाहिये। ऐन्टीरियर लोब आफ पिट्यूरीको भी दे सकते हैं।

सावधान मद्य तथा अफीमकी चिकित्सा इस रोगमें कदापि नहीं करनी चाहिये।

सामान्य चिकित्सा—

| | |
|--|---------|
| ऐन्टी पायरीन | ५ ग्रोन |
| टि० मोफीन हाइड्रोक्लोरो | २० मि० |
| टि० वेलोडोना | १० „ |
| सिरप औरंशाई | १ ड्राम |
| एक्वा कुल | १ औंस |
| ऐसी मात्रा दिनमें तीन बार देनी चाहिये। | |

अथवा

| | |
|--------------------------|---------|
| लिकर मोफीन हाइड्रोक्लोरो | १५ मि० |
| ऐन्टी पायरीन | ७ ग्रोन |
| स्प्रिट क्लोरोफार्म | १० मि० |
| टि० केस्टर | २० मि० |
| एक्वा कुल | १ औंस |

ऐसी एक मात्रा दिनमें तीन बार देनी चाहिये।
नोबल्लिन या यूपेकोका इन्जेक्शन सप्ताहमें एक बार दे देना चाहिये। आवश्यकता पडनेपर कोडापायरीनकी एक गोली भी दी जा सकती है।

प्रदरकी चिकित्सामें मेरा निजी अनुभव है कि अगर प्रातः सायं ६ माशा चन्दनादि चूर्ण चावलके पानीके साथ लेना चाहिये। भोजनके बाद अशोकारिष्ट २-२ तो० जल मिलाकर सेवन करना चाहिये।

रात्रिको सोते समय २-२ गोली चन्द्रप्रभा वटी गर्मे दूधके साथ लेनी चाहिये और चन्दनादि या प्रसारणी तैलकी मालिश करनी चाहिये।

शिरपर या वक्षः स्थलपर जोर पडने वाले तथा धूपमें होने वाले कार्य नहीं करने चाहिये।

इस प्रकार लगातार एक मास चिकित्सा करनी चाहिये। तो निश्चय ही श्वेत प्रदर तथा रक्त प्रदर जैसी भयंकर व्याधियोसे पीछा छुड़ाया जा सकता है।

ठीक महीनोंके दिनोमें, बहुत चिकनाहट रहित जलन रहित, और शूल रहित अर्थात् विकृत कफ वात पित्त आदिके लक्षणोंसे रहित न अधिक न थोड़ा अर्थात् मध्यम परिमाणमें रजस्राव हो तो पांच रात तक रहे तो उसे शुद्ध आर्तव समझकर प्रदर रोगिणीकी चिकित्सा बन्द कर देनी चाहिये।

किसी स्त्रीको अगर रजस्राव अधिक होता है तथा तीन दिन ही आता है। एवं शुद्ध आर्तवके लक्षण हों तो उसकी भी चिकित्सा समाप्त कर देनी चाहिये।

इस प्रकारसे प्रदर जो कि स्त्री समाजके लिये भयंकर व्याधि है। दूर की जा सकती है। और नारी समाजको बचाया जा सकता है। जिसके कारण कितनी ही मां बहिनोका जीवन गर्त में पड़ा हुआ है।



श्री गदांतक अर्क

स्त्रियों के प्रदर, गर्भाशय विकार और मासिक धर्म के विचारपर उपयोग्य

योगसे मानसरोग चिकित्सा

(लेखक—सीताराम शर्मा दाधीच इनाणीजोशी नवलगढ राजस्थान)

इस विषयमें पहले पहल योग क्या है ? मनके रोग क्या हैं ? उनकी चिकित्सा कैसे ? सच्चे से लिखा जायगा । चरकने योगका लक्षण साफ लिखा है कि जब इन्द्रियां सहित मन-बुद्धि आत्मामें स्थित हो जावे, तब योग कहलाता है । आत्माके कई गुण हैं ।

मुख्य गुण ज्ञान है । वही उसका स्वरूप है । चेतनता और आनन्द भी उसीके गुण हैं । तीनोंका एक सच्चिदानन्दघन एक आत्मा है । सत् सत्ता तीनों कालोंमें एक रस रहना, चेतनताका कभी अचेतन न होना, अर्थात् निद्रा जागरण तीनों ही अवस्थाका न होना, यह आनन्द भी सदा त्रैकालिक बना रहता है । दुःखका अत्यन्ताभाव आत्माका स्वरूप है । घनका तात्पर्य यह है कि आत्मामें थोड़ा बहुत आनन्द नहीं, अनन्तानन्द आनन्द है । आनन्दका तो यह अपार समुद्र है ।

इस आनन्दका थोड़ा-सा भी मालूम हो जावे तो मनुष्य विषयानन्दको छुवे ही नहीं । परन्तु बड़े दुःख की बात है कि जीवको अपने निजानन्दका एक बार भी आनन्द प्राप्त नहीं हुआ । वह तो उस आनन्दसे अपरिचित ही है ।

किसीने एक विषयानन्दको एक बार भी चख लिया तो वह जन्म भर नहीं भूल सकता । ऐसे ही यदि जीवको एक बार भी वह आनन्द प्राप्त हो जावे तो वह विषयानन्दकी तरफ देखे ही नहीं ।

इन्द्रियाँ मन बुद्धि ये बाहर आनन्द ढूँढते फिरते हैं । इनको उस आनन्दकी प्राप्ति की कथा सुनाकर या किसी भी तरह लालसा पैदाकर उधर प्रवृत्त करा दिया जाय, थोड़ा उस आनन्दका भान होने लगे तो मन स्वयं ही अन्य छोड़कर आत्माके पास ही रहे । अपना सर्वस्व समर्पण करके उसीमें सदा स्थित हो जावे ।

स्वयं या अन्य प्रयत्नोंसे मन बुद्धि इन्द्रियादिकोंका एक होकर आत्मामें स्थित रहना योग कहलाता है ।

भेत्ता हि भेद्यमन्यथा भिन्नतीति । इत्यादि ॥ च. वि. ॥ में आदेश है कि एक ही बात भेद प्रकृत्यन्तरसे कह दी जाय, और तात्त्विक विरोध न आता हो तो कोई हर्ज नहीं है । बात एक हो, तात्पर्य एक ही हो, सम-मानेके लिए दूसरे प्रकारसे कह दिया जावे, समझा दिया जावे, तो पुनरुक्ति दोष नहीं माना जाता ।

असली तात्पर्य सबका एक मिलना चाहिये । ऊपरसे चाहे विषयका भेद मालूम पड़े वास्तविक भेद नहीं होना चाहिये । विषयको प्रकारान्तरसे कह देना लिख देना कोई अपराध नहीं । असली मूल तात्पर्यका विरोध नहीं होना चाहिये । पचास तरहसे भी कोई योगका लक्षण लिखे । वृत्ति निरोध रूप योगका लक्षण सबमें मिलना चाहिये ।

ज्ञान योग, कर्मयोग, सांख्ययोग, भक्तियोग, हठ योग न मालूम कितने योग हो सकते हैं । और संख्यामें भेद हो सकता है परन्तु तात्त्विक अभेद होना आवश्यक है ।

योगसूत्र और चरकने जो लक्षण लिखे हैं दोनों का भाव यही है कि शरीर, इन्द्रियाँ, मन इनकी सभी वृत्तियाँ (आत्माका ज्ञान) भिन्न-भिन्न धाराओंमें बिखरा है । वह सब एकत्र हो जावे, और ज्ञान एक जगह आ जाय यही योग है । योग एक बल है । जैसे बिजली चारों तरफ फैली हुई हो परन्तु उसे एक जगह रोक लिया जाय तो बल अधिक बढ़ जाता है ऐसे ही इन्द्रियोंका संकोच करके उनके बलको मनमें समेट लिया जाय तो मन बलवान हो जायगा । स्वयं योग सिद्ध हो जायगा । मनोबल बढ़नेसे इन्द्रियाँ स्वयं वशमें हो जायेंगी । मन स्वयं बलवान हो जायगा । जिस

कार्यमें वह लग जायगा अच्छी तरह कर गुजरेगा। कमजोर मन कुछ नहीं कर सकेगा। इसलिये इन्द्रिय द्वारसे उसका बल क्षीण होता रहता है। उस बलको रोक देना इस रोकनेका नाम योग है।

ऐसा भी कहा जा सकता है कि जैसे कोई आंखों-पर पट्टी बांधकर चले ऐसे ये मन इन्द्रियां अज्ञान अन्धकारमें चल रही हैं। उनको अज्ञानकी पाटी दूर करके उनको रास्ता दिखला दिया जावे जिससे वे ठीक रास्ते चलने लगे।

इस तरह रज तमके आवरणको हटा देनेसे मन और इन्द्रियोंको सूझनेवाला बना यह योग है।

अथवा यों कहिये कि शरीर मन इन्द्रियाँ अविद्या अथवा अज्ञानसे उत्पन्न हैं। इनका अज्ञानमें चलना स्वाभाविक है। इन सबको ज्ञानमें पलट देना इनका अज्ञान हटाकर ज्ञान भर देना प्रकाश भर देनेका नाम योग है।

मन इन्द्रियोंको रोकना शनैः शनैः इनकी बुरी आदतें छुड़ा देना योग कहलाता है।

योग कोई भी स्वयं नहीं कर सकता। प्रारम्भमें इसका ज्ञान दूसरे गुरुओंसे करना पड़ता है क्योंकि इसमें शुरुमें आनन्द नहीं आता।

बच्चेको पहले अच्छर ज्ञानमें प्रवृत्ति करानी पड़ती है। नीरस विषयमें स्वयं प्रवृत्ति नहीं होती। परन्तु जब अशुभ योग छूट जानेसे शुभ योगसे अच्छी वस्तुका आनन्द आने लगे, जैसे बच्चेको अच्छर ज्ञानके बाद कहानी किस्मे स्वयं पढ़नेमें आने लगते हैं जब उसे आनन्द आने लग जाता है, तब उसकी प्रवृत्तिमें सहायता देने की जरूरत नहीं पड़ती और बुरी आदत छुड़ानेमें भी बल नहीं लगाना पड़ता, स्वयं अपने आप असत्से प्रवृत्ति रुक जाती है।

ऐसे ही चित्त वृत्तियोंको रोकना उमके लिये प्रयास करनेका नाम भी योग है। आगे चलकर रजस्तम (अज्ञान) के क्षयसे आवरण विद्ये दूर होकर स्वयं चित्त वृत्तियोंका रुक जाना भी योग है।

गुरुकी आवश्यकता जब तक है कि जब तक उसे रास्ता न मिले। और मन इन्द्रियोंकी चंचलता को बुरी न आ जावे। उनका उदपदांग गति चलता न

रुक जावे। जब यह स्वयं योग करने लगे तो स्वयं ही दुष्ट प्रवृत्तियाँ रुक जाती हैं।

दो ही प्रकारके योग हैं अच्छी प्रवृत्तिमें लग जाना, और दुष्ट प्रवृत्तिमें लग जाना। मनमें रजोगुण, तमोगुण अन्धकारकी प्रवृत्ति हैं। यही इसमें अविद्या है। इसी से यह चंचल रहता है। मनकी चित्त विक्षिप्त उन्मत्त दशा भी इसीसे रहती है। यही इसका मदिरापान है। इनको जिस किसी योगसे उपायसे दूर किया जावे वे सभी योग हैं। इनका उपाय ज्ञान है। ज्ञानसे ये रुक सकती हैं।

कबीर लिखते हैं कि—

मन पंखी तब लग उड़े, विषय वासना मांय।

ज्ञान बाजकी झपटमें जब लग आवे नांय ॥

अर्थात् मन अज्ञानके वशीभूत होकर रज और तम दो पंखोंसे उड़ता रहता है। जब यह पक्षी ज्ञान रूपी बाजकी झपटमें आजाता है तब कहीं नहीं जाता। यह बाहर कस्तूरी मृगकी तरह आनन्द ढूँढनेके लिए दौड़ता रहता है, परन्तु यह जब आनन्द घनमें जो उसकी नाभिमें है उस जगह आनन्दको देखे तो उसे आनन्द प्राप्त हो सकता है।

प्रारम्भमें अधम अधिकारीके लिए हठ योग भले ही उपयुक्त हो, परन्तु समझदारके लिये जैसे बुद्धिका इशारा काफी है। ऐसे ही बुद्धिमान मनको थोड़ा विवेक विचारका इशारा कर दिया जावे तो वह स्वयं अपने आपका निग्रह कर सकता है।

मनका काम (मनसः स्वस्य निग्रहः) स्वयं अपने आपको वशमें कर लेनेका है। मन स्वयं अपने आपका समभाव, स्वयंमें ही अपना सत्त्व बल बढ़कर रज तम क्षीण हो जावे तो इसके योगका साधन य स्वयं ही बन जाता है। असन् प्रवृत्तिका रुक जाना योगका मुख्य साधन है।

योग करनेवालेको चाहिये कि वह पहले शीघ्र सन्तोष, तप, स्वाध्याय इस क्रियायोगसे पहले अविद्या का बल तोड़ दे। यह योग बलवान् विघ्नका दोषाको दूर करनेके लिए ही पतंजलिने बताया है।

अर्थात् मोटे मोटे स्थूल भयंकर विघ्न करनेवाले को पहले नाश कर दिखे जाते हैं, या कृश कर दि

जाते हैं तब आगे योगक्रिया बढ़ सकती है। अतः योगीको काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि प्रबल शत्रु और कषायकी फौजको पहले रोक देना चाहिये।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये महाव्रत हैं। इनसे प्रबल शत्रुओंकी फौज आती हुई रुक जाती है। यदि इनका ठीक पालन न किया जाय तो कर्म प्रबल होते हैं और मनुष्यका धी, धृति, स्मृति, बल दूट जाता है, छुड़ा देते हैं।

परन्तु योगीको अपनी कुशलतासे किसीको समझाकर किसीको दबाकर शम, दाम, दण्ड, भेद आदि सभी तरहके युद्धसे इनको, और इनके बलको, तोड़ देना चाहिये। शत्रुओंपर विजय पाये बिना जैसे कोई चैनसे नहीं बैठ सकता, वैसे रज और तमकी फौज काम क्रोधादि शत्रुओंकी फौज है।

इसको जीते बिना कषायोंको दूर किये बिना योगी चैन नहीं ले सकता। ये सब दो तरहकी फौज ज्ञान और अज्ञानकी है।

राज योगमें ज्ञान बल प्रधान है। विचार विवेकोंकी धाराये हैं, ये ही ज्ञानकी फौज है। जो जैसा विचार जिस तरहसे दब सके, या नष्ट हो सके उसी तरह उन छोटे विचारोंकी फौजको दूर भगा देना चाहिये। यही योगकी कर्म कुशलता है। “योगः कर्म सुकौशलम्”। जब युद्ध किया जाता है तब योद्धाकी कुशलता इसीमें है अन्दर न आने दे।

मनमें बाहरके दूषित विचारोंको न आने देना यह चित्तवृत्ति निरोध है। जैसे प्रविष्ट हुई फौजको या तो अनुकूल बना देना, या मार देना उचित होता है, वैसे ही थोड़े बहुत बचे खुचे दुष्ट भावोंको मन भीतर ही भीतर अपने ज्ञान बलसे या विचारोंसे या तो अनुकूल बना ले, या नष्ट कर दे, यही उसकी कर्म कुशलता है।

ऐसे ही नये पाप कर्मोंको, इन्द्रियोंमें मनःशरीरमें न आने देना महा व्रतोंसे, तथा धारणा-ध्यान-समाधिसे भीतरमें आये हुये संचित कर्मोंको धीरे धीरे अभ्याससे क्षय कर देना इस कर्मको भी कर्म कौशल कहते हैं। जैसे ज्ञान बल अज्ञान बल दो बल हैं और वे दोनों ही मन आत्मा में हैं।

कभी अज्ञानका बल बढ़ता है तो कभी ज्ञानका। जो बलवान होता है वही एक दूसरेको दबा देता है। अतः सत्कर्मोंसे ज्ञान बल बढ़ाकर मन इन्द्रियोंकी प्रवृत्तिको क्षीण करके आत्मा और मनको सुखी बनानेका प्रयत्न करना चाहिये।

जब तक अज्ञान बल बढ़ता रहता है, तब तक इन्द्रियाँ और मन प्रमाद करते रहते हैं, और मदमत्त होकर विषयोंमें लगे रहते हैं, यह बात आप लोग जानते ही हैं।

आयुर्वेदमें इसको प्रज्ञापराध कहो, चाहे विषय प्रवृत्ति रूप अविद्या कहो, एक ही बात है। मन इन्द्रियोंका विषयोंमें आसक्त रहना, अतियोग या मिथ्या योग है। इनका विषयोंमें उचित मात्रामें रमणकरना यह आयुर्वेदिक परिभाषामें सम्यक् योग कहलाता है लिखा है योगः सम्यक् प्रवृत्तिः स्यात्।

मानस रोगकी चिकित्साका थोड़ासा विवेचन तो संक्षेपसे हो ही चुका है। परन्तु विषयको स्पष्ट करनेके लिये रूपान्तरसे फिर लिखा जाता है।

मनके दो दोष हैं। रजोगुण और तमोगुण। इसके काम क्रोधादि मोटे मोटे कई रोग होसकते हैं। इनसे भी ज्यादा बड़े राग और द्वेष हैं। उनको दूर करनेके लिए उनकी चिकित्सा में प्रथम निष्काम कर्म योग, दूसरा भक्ति योग, तीसरा उपाय है ज्ञान योग।

तीनों ही उपाय तीन उत्तम मध्यम अधिकारियोंके लिए हैं। तीनोंमें ही राग-द्वेष रहित रहकर क्रिया की जाती है।

भक्ति भगवानकी करें, राग द्वेष चलता रहे तो मन आत्माकी शुद्ध नहीं हो सकती।

जैसे सुवर्णको तपाया जावे, एक बार दो बार तीन बार उतना उसका खोट निकलता जावेगा, और सुवर्ण अपने रूप रंगके गुण प्रकट करता जावेगा। जैसे-जैसे प्रतिदिन नेत्रोंमें अंजन लगाते रहेंगे। अभ्यास करते रहेंगे तो वैसे वैसे ही सूक्ष्म बल दीखने लगेंगी।

उपरोक्त तीनों ही योग ज्ञान-बल आत्म-बल मनो-बलको बढ़ानेवाले हैं।

कर्म करनेवाला निष्काम कर्म करे, चाहे अपनी

आत्माका ध्यान करे, चाहे ईश्वरमें मन रखे, पूर्ण आसक्तिसे, प्रेम लक्षणा भक्तिसे, ज्ञानसे, सिर्फ आत्मामें ही लीन रहे यह योग है।

हाथ पाँव चाहे काम करते रहें परन्तु जैसे धाय पराये बच्चेको खिलाती है उसका लालन पालन भी करती है परन्तु सभी वस्तु पराई समझकर किसीमें राग नहीं करती। यही कर्तव्य कर्म योगीका है।

भक्ति मार्गमें भक्त भगवानके सिवाय किसीसे योग नहीं करता, किसीमें अतुरक्त नहीं रहता। उसका भी ध्यान जैसे पतिका ध्यान पत्नीमें, पत्नीका पतिमें रहता है। वहाँ भी आत्मा और मन दोनों अनन्य होकर कर्म करते हैं।

ज्ञानीका भी यही हाल है, वह भी एक व्यापक तत्त्वसे स्वयं जुड़ा रहता है। जैसे घटाकाश महाकाशसे अलग नहीं। घटकी उपाधि मात्रसे भिन्न दीखता है, वैसे ही ज्ञानी देहकी उपाधिसे भिन्न और अभिन्न भी अपनेको मानता है। यह साधनावस्थाकी स्थिति है।

सिद्धावस्थामें देह और देहाध्यास भी जब नहीं रहता, तब तो देहको भी तद्रूप (आत्मारूप) ही मानता है अर्थात् भक्त "दावोऽहं दावोऽहं" जप जपता रहता है और सभी देहमें कर्म करता रहता है। भक्तके हृदयमें भी किसीके प्रति राग-द्वेष नहीं होता तभी वह सच्चा प्रिय भक्त कहलाता है।

यदि एक जीवात्माकी बलि देकर, देवीको चढ़ाकर अपने पुत्रकी खैर मनावे तो वह सच्चा भक्त नहीं, क्योंकि उसकी आत्मा और उसकी आत्मा एक है।

भक्तियोग कोई साधारण योग नहीं, यह भी ऊँचे दर्जेका योग है। इसमें पढ़े लिखेकी जरूरत नहीं। जो पुरुष (तेज लगन चाहिये) कोई भी कर सकता है। जैसे तीव्र लगन गोपियोंमें थी। उद्धवजीका ज्ञान भक्तिके सामने नगण्य हो गया था। उसका कारण यही था कि उनकी निष्काम तीव्र अनन्य भक्ति प्रेम उनमें था। रात दिन भगवानके चरित्रका ज्ञान उनकी रूपलीला कथा, ज्ञान, सदा उनकी पूजामें रहना वे गोपियाँ सब तरहसे उनमें लीन रहती थीं।

वहाँ ज्ञानके लिये शरीरके तिल मात्र प्रवेशमें भी

स्थान नहीं था रोम-रोम कृष्ण-कृष्ण जपता था। श्वास श्वासमें मन बुद्धि इन्द्रियाँ लगी हुई थीं। जहाँ देखो भगवान ही भगवान दीखते थे। जो गति उन गोपियों को मिली वैसी किसीको न मिली। कर्मयोगमें भी कर्म योगी सब तरहसे कर्म काट सकता है और वह भी अन्तरंगमें "सोऽहं सोऽहं" करते करते अन्तमें शिवोऽहं शिवोऽहं ब्रह्मास्मि तक पहुँच जाता है।

तीनों ही साधक भीतरमें आत्माकी उपासनामें लगे हुये हैं और बाहर निष्काम कर्म करते हैं। आचरणोंमें राग-द्वेष न हो तो कर्म भक्ति और ज्ञान तीनों ही उपायोंसे मोक्ष हो सकती है।

कई कहते हैं कि कर्म मोक्ष नहीं दे सकता। ज्ञान ही मोक्ष दे सकता है। परन्तु ऐसा नहीं है, कर्म भी मोक्ष दे सकता है। आप सोचिये ज्ञान बिना भक्ति कैसे हो सकती है। और भक्ति बिना ज्ञान कैसे हो सकता है। ज्ञान और भक्ति दोनों आचरण शुद्ध कर्मके बिना कहाँ रह सकते हैं, इसलिये तीनों ही एक दूसरेके सहयोगी हैं। गेहूँके बिना आटा कैसे बने आटे बिना रोटी कैसे बने।

निष्काम कर्म बिना भक्ति कैसी, अर्थात् निष्फल है। बिना भक्तिको ज्ञान शुष्क ज्ञान है। तीनों एक ही आत्माके परिणाम हैं अवस्था विशेषके विचार हैं कर्म, बाणी, मन, काया ये तो जड़ हैं, कर्म करे कौन? कर्मका कर्ता तो आत्मा ही है। उसके विचारमें वीतरागता रहे तब वही कर्म, कहीं यज्ञ, कहीं तप रूप धारण कर लेता है।

कहीं भक्ति प्रेमकी पराकाष्ठापर पहुँचकर त्रिवेद्याति पैदा कर देती है। और कहीं वही आत्मा ज्ञान सत्याबुद्धि ऋतंभग प्रज्ञा संज्ञा होकर ज्ञ कहलाता है।

तीनों योगोंमें वीतरागता चाहिये; और तीनों में अनन्यता चाहिये, तीनों ही में तीव्र लगन चाहिये। निरन्तर तीव्र चिन्तन व चिरकाल तकका अभ्यास चलता रहे तो योग सिद्धि और मोक्ष अनि निकट जाते हैं। तीनों योगोंसे मनके भयंकर रोग रजो-तमोगुण दूर किये जा सकते हैं, अथवा यों कहें राग द्वेष दो रोगोंसे जो अनेक महारोग उत्पन्न

हैं वे सब भी इसी चिकित्सासे ठीक किये जा सकते हैं।

विषयको फिर दोहरानेका मतलब यही है कि एक ही घात अच्छी तरह दृढ़ हो जाय, और रूपान्तरसे कहनेपर समझमें आ जाय। कषाय वृत्तियोंसे रहित होकर आत्मामें मनकी स्थिति, अथवा आत्माका आत्मामें ठहरे रहना, बाहर इन्द्रियों और मनके साथ संयोग न करनेको योग कहते हैं।

कई बार कहा जा चुका है कि आत्मा अपने आपके बाहर सुख ढूँढनेके लिये बाहर ही बाहर फिरता रहता है। अपने घरमें सब कुछ भरा है परन्तु उसका उसको ज्ञान नहीं। जैसे अपने घरमें धनके छोटे भरे होवें और उसे मालूम न होनेसे व्यक्ति बाहर गीख मांगता फिरे। इसी तरह आत्माको ज्ञान नहीं के मेरा निजानन्द स्वयंके पास है। बाहर कहीं कुछ ही नहीं है। आनन्द जो भी मिलेगा अपने पास ही मिलेगा कबीरका पद है—

पानीमें मीन पियासी रे पानीमें मीन पियासी।

रहाने सुन सुन आवत हाँसी रे ॥

नाभि कमल बिच है कस्तूरी सूँघत होजे घासी।

पानीमें ० ॥

ज्ञान बिना नर सूना होले भरमत फिरे चौरासी।

आदि आदि।

अर्थात् मछली पानीमें रहती है जब वह पानी ना चाहती है तब उसके कण्ठके पास एक कांटा गा रहता है वह आड़ा आ जाता है पानी उसके में नहीं जा सकता।

इसी तरह मृगकी नाभिमें कस्तूरी विद्यमान है परन्तु वह इस कस्तूरीकी गन्धको कोसों तक प्रत्येक तलाश करता रहता है और सूँघता रहता है। कते भटकते मर भी जाता है पर उसे कस्तूरी नहीं ठती। वह तो उसके पास ही है पर उसे ज्ञान नहीं लिये भटकता रहता है।

इसी तरह व्यक्तिको अज्ञानके आवरणसे स्वयंका ज्ञान नहीं होता। यह आवरण अज्ञान की ही राग द्वेषमय दो तरहकी प्रवृत्तिमें उत्पन्न बाहरका कुछ नहीं। यह मिथ्या ज्ञानसे अथवा

अज्ञानसे जीव दो तरहकी क्रिया करता रहता है और आठ प्रकारकी मनमें खोटी मान्यता लिये हुये है।

इनको मन और आत्मामें राग द्वेषके कारण समझनी चाहिये। आत्मामें हमारा मतलब राशि पुरुषमे है। जो राग द्वेषसे ही जन्मता और मरता रहता है।

आठ तरहकी मिथ्या मान्यता (विपरीत बुद्धि) अज्ञान इस मनमें भरा रहता है जिसके नाम हैं अहंकारादि।

उनमें पहला अहंकार है यह खोटी मान्यता है। मैं पनेको अहंकार कहते हैं। मैं पना क्या है अज्ञानसे व्यक्ति यह समझता है कि यह मेरा धन है मैं बड़ी जातिमें उत्पन्न हुआ हूँ मेरे पास जो बल सामर्थ्य है वह किसीके पास नहीं। मैं बड़ा हूँ यह झूठा अभिमान है। संसारमें सबके पास सब कुछ है। अहो जीव धनतो आत्म धन है तेरा स्वरूप परिवार नहीं है। मकान तेरा रूप नहीं है। तू तो इन सबसे विग्रह है परन्तु कुछ का कुछ समझता है यह तो मनी खोटी मान्यता विपरीत बुद्धि ही है।

दूसरी खोटी बुद्धिका नाम संग है। जिसके कारण जीव विषयोंमें आसक्त रहता है अपना काया वाणीसे ऐसे कर्म करता रहता है, जिसमें व्यक्ति बम दूँतेके बजाय कर्माणि बन्धन होता रहता है अर्थात् यह सकाम शुभशुभ कर्म करता रहता है। सुख भोगार्थ ऐसे कर्म करता है जिसमें कहीं ही उत्तरोत्तर बुद्धि की हो कम न हो।

कर्म करना दुःखदायी है परन्तु यह जीव तो कर्मों को सुखदायी समझकर सकाम भोगेच्छासे कर्म करता रहता है। कर्म करना चाहिये। कर्म किये बिना कर्म कटते नहीं। कांटे हो निकालनेके लिए बाँटा सूई ग्रहण किया जाता है जब तक दूसरे कांटेने बाँटा न निकाले कांटा निकले ही नहीं। अतः शुभ कर्म पाप कर्मको निकालनेके लिए किये जाते हैं। मनमेंसे राग द्वेषरूप कांटा निकालनेके लिये सार्विक शुभ कर्म किये जाते हैं।

परन्तु ये कर्म यदि सकाम हों अर्थात् इनसे फिर सुख भोगनेकी इच्छा हो तो कांटे फिर फिर उत्पन्न होते ही जावेंगे। अतः पहले कांटे को निकाल दें और नये कांटे न आने दें।

इसके लिये शुभ कर्म किये जाते हैं। कर्ममें कामना एक विषय है। कर्ममेंसे सकामता निकाल दी जावे तो कर्म बन्धनके कारण नहीं बनते। बन्धन करनेवाले कर्मोंको संग कहते हैं। जब अज्ञानसे कर्म करता रहता है सकाम करनेके कारण वापस बंधता जाता है।

तीसरी खोटी मान्यता मिथ्याज्ञान, इसमें संशय बुद्धि कर्म है। शुभ-शुभ कर्मोंका फल मिलता है। जन्म मरण होता है। स्वर्ग-नरक कर्मोंका फल है या नहीं क्यों करें, या न करें? कभी दूसरोंसे सुन लेता है तब इन्झा भा रहता है। और नहीं भी। संशयमें एक निर्णय नहीं होने पाता। अतः शुभ कर्म नहीं कर सकता। यह भी तीसरी अविद्या इस मनमें बैठी हुई है।

चौथा अज्ञान इसमें अभिसंश्लेषः धन व परिवार सुखदायी है जो कुछ है इनके सिवाय सुखदायी कोई मनु नहीं। इस सुख-दुःखमें बाह्य पदार्थोंका कभी सुखमें कभी घोर दुःखमें डूबे रहनेको अभिसंश्लेष कहते हैं। यह भी अज्ञानके कारण मन आत्मामें कोटा हा है। दोष है। खोटी समझ है।

पाँचवां अभ्यवपात है-घर एक अन्धकूप है। समतामें, मैं परिवारका हूँ। परिवार मेरा है, मेरा घर है। घरकी चिन्ता करना दूसरी जगह निगाह करना। अभ्यवपात है खड्डेमें गिरे रहना है। आत्मात्मन इस खड्डेमें नहीं निकल सकते। यह भी वे समझ ही है।

छठा विप्रत्यय-विपरीत बुद्धि साफ है। हिता-हितका खयाल न रहकर धर्मको अधर्म, अधर्मको धर्म मानना, पापाचारमें प्रवृत्त रहना यह सबसे बड़ी बुरी मान्यता मनकी है। यह भी भयंकर रोग है। कोटा है। इससे पाप कर्मोंका संचय होता रहता है। अन्तःकरण मलिन बनता जाता है।

सातवां अविशेष है-यह ऐसा अज्ञान मनमें घुसा रहता है जिसके कारण धर्म भी वैसा ही, अधर्म भी वैसा है। धर्मको धर्म समझना चाहिये। पापको पाप समझना चाहिये। परन्तु इस अज्ञानमें जीवधर्मधर्म समझा जाता है। बहुत घेटी स्त्री

पुरुषमें भेद नहीं मानता, उसके त्याग्य उपादेय स्त्री कोई नहीं है।

आठवां अनुपाय-इसका तात्पर्य यह है कि मोक्ष ज्ञानसे होता है। शुभ कर्मोंसे यज्ञ, तप, जपादिसे कर्म जरूर कटते हैं। परन्तु मोक्ष तो ज्ञानसे ही होता है परन्तु वह तो अग्निमें जलकर मर जावे, देह भस्म हो गई तो समझो मोक्ष हो गया। यह जलमें डूबना गंगाजीमें डूब जाना, ओंघा लटककर शरीरको कष्ट देकर कर्म निकालना समझता है। इसमें मोक्ष मानता है। वास्तवमें यह मोक्ष साधन नहीं है। मोक्षके अनुपाय हैं। उपाय नहीं परन्तु इनको वह नहीं मानता है।

इस प्रकार यह जीवात्मा बेचारा अज्ञानी इन आठों भूतोंके वशमें रहकर इनके लम्बे लम्बे हाथोंसे पकड़ा हुआ, इसको ये छोड़ते नहीं, यह इनकी कैदमें पड़ा रहता है। ये आठ कारण इसको अज्ञान रूपी नशा-मदिरा पिलाकर बेहोश रखते हैं।

तब यह अभिमानके नशेमें चूर रहता है। विषयों में आशक्त रहता है। इसे संशय बना रहता है, इसकी बुद्धि ममतामें डूबी रहती है। ज्ञानमें कुछका कुछ दीखता है। धर्म कर्म एक सा मानता है। ऊजड़ रस्ते चलता है। इस प्रकारके और अन्य अनेक दुर्गुण इसमें भर जाते हैं। इन दुर्गुणोंके कारण यह पापाचरण करता रहता है। फिर इसके फल भोगता है। जन्मना मरणा इसका बना ही रहता है।

इसकी बुद्धि इसका धैर्य और स्मृति तीनों भ्रष्ट हो जाती हैं। यह सदा मन और शरीरके दोषोंकी पीड़ामें दुखी ही बना रहता है। इसके दुःखका कोई अन्त आता ही नहीं।

इन दुःखोंको दूर करनेके लिये चरकमें शारीरके ५ वें अध्यायमें विस्तारसे उपाय लिखे हैं। पाठक पुरुष विचय अध्याय अवश्य देखें।

जैसे धी, धृति, स्मृति इनकी विषमतासे या इन्में रज-तम बढ जानेसे मनुष्य संयम नहीं रख सकता। अज्ञान भ्रष्ट होनेसे धैर्य छूट जाता है। सदाचारमें संयममें टिका नहीं रह सकता।

इसी तरह स्मृति भ्रष्ट होनेसे स्वस्वरूपका ध्यान नहीं रहता। वैसे ही इन तीनोंके अज्ञानको रज तम दोषको शुद्ध क्रियाओंसे शुद्ध कर दिया जाय तो इन्हीं तीनोंसे अर्थात् धी धृति स्मृतिमें ज्ञान बढ़नेसे योग सिद्ध हो जाता है।

पहले तत्त्वोंका ज्ञान प्राप्त करना, उसके बाद श्रद्धा उत्पन्न होजाती है। फिर ज्ञान और श्रद्धा पूर्वक योग साधनोंका अभ्यास किया जावे तो मन शुद्ध हो जाता है। इसी मनसे सत्य ज्ञान सत्यावुद्धि उत्पन्न होकर मोक्ष हो जाता है।

जैसे उपरोक्त तीन बुद्धि वृत्तियाँ शुद्ध होकर योग मोक्षमें मुख्य साधन बन जाती हैं वैसे ही इन तीनोंमेंसे भी तत्त्वस्मृति स्वस्वरूपका ज्ञान मुख्य साधन है। लिखा है।

स्मृत्वा स्वभावं भावानां स्मरन् दुःखात् प्रमुच्यते।
इसके अलावा तत्त्वस्मृते रूपस्थानात् सर्वमेतत् प्रवर्तते यह लिखा है।

तत्त्व २४ हैं, २६ हैं। कई ६ द्रव्योंको तत्त्व मानते हैं। कई प्रकृति पुरुष २ को ही तत्त्व मानते हैं। परन्तु योग साधनमें एक आत्मा ही तत्त्व है। और दूसरा तत्त्व जड़ प्रकृति (शरीर) है। जड़ तत्त्व परिवर्तनशील है। अनित्य है। दुःख रूप है। आत्माका आवर्ण करनेवाला है। आत्मा नित्य सुखराशि शुद्ध बुद्ध और स्वका अपना असली रूप है।

प्रकृतिके भाव सत्त्व रज तम इसको सुख दुःख देकर बांधे रहते हैं। इसलिये आत्माको, अथवा सर्वसाधारण व्यक्तिको चाहिये कि प्रकृति और पुरुष इन दोनों तत्त्वोंके स्वभावोंका चिन्तन करें। प्रकृतिसे बना हुआ हमारा शरीर और जगत् कैसा है इसका भाव स्वभाव इस प्रकार चिन्तन करें।

सर्व कारणवत् दुःखं अस्वं चानित्यमेव च। न चारम कृतकं।

वह यह सोचे कि यह सब दृश्यमान प्रपंच प्रकृतिका है। शरीरके लिये है। मेरा कुछ नहीं। सब दुःखरूप और अनित्य है। मेरा इससे कोई वास्ता नहीं। मेरा आत्मा इससे अलग है।

कारण अज्ञान और ज्ञान है।

या ऐसा कहो शरीर और प्रकृति दुःख है। आत्मा और ज्ञान दोनों अनन्त सुखराशि हैं। एक चेतन है और एक जड़ है। दोनोंका सूक्ष्म अन्तर जानकर प्रकृति पुरुषका भेद करके अपने आपको शरीरसे भिन्न जानकर अपनेको दुःखसे अलग कर दे। और ज्ञान वृद्धि कर अज्ञानके उपरोक्त आठ ८ भाग विकार या रोग काटकर रज तम दोषोंको दूर कर मुक्त हो जावे। यही मनके रोगोंकी चिकित्सा है।

मनके रोगोंकी चिकित्सा अष्टांग योग और ज्ञान योग आदि कई योग हैं परन्तु चरकने एक विलक्षण मनशुद्ध करनेका राजयोग बताया है वह सर्वोत्तम है।

लोक पुरुषयोः सर्गादिसामान्यावेक्षणं। कार्यकालात्ययभयं। योगारम्भे सततमनिर्वेदः। सत्त्वोत्साहः अपवर्गाय धी धृतिस्मृति बलाधानं। नियममिन्द्रियाणां चेतसि, चेतस आत्मन्यारमनश्च, धातुभेदेन शरीरावयव संख्यानमर्षक्षणं-सर्व्व कारणवद् दुःखसर्व्वमनित्यमित्यभ्युपगमः। सर्व्व प्रवृत्तिषु दुःखसंज्ञा, सर्व्वसंन्यासेसुखमित्यभिनिवेशः। एष मार्गोऽपवर्गाय, अतोऽन्यथा बध्यते। इत्युदयनानि व्याख्यातानि॥

॥च० शा० ५.१॥

इस गद्य भागमें मन शुद्धि करनेके अनेक विचार लिखे हैं। विचारों ही विचारोंसे विचार बदल दिये जाते हैं और शुद्ध हो जाते हैं। योगीका मन ऐसे विचार करे। सब विचारोंमें लोक और पुरुषका विचार मुख्य है।

जिसके लिये यह सारा अध्याय लिखा गया है। सारोंका भी सार यह है कि व्यक्ति अज्ञानसे और कर्मोंसे अथवा रजोगुण तमोगुण या राग द्वेषसे बन्ध कर मुक्त हो जाय। विषय और संसारसे वैराग्य, ज्ञान और आत्मासे राग उत्पन्न हो।

दो उपाय हैं एक संसारका चिन्तन, दूसरा अपने आपका चिन्तन। अपने आपको समझे, और संसारको समझे। दोनोंसे मिलान करके संसार शरीरको दुःखदायी समझकर अज्ञान मूलक समझ कर त्याग करे और अपने आपको इस संसारको

आग और शरीरके दुखोंसे बचा ले।

ऊर्ध्व मध्य और अधो तीन लोकोंसे मिलकर एक लोक पुरुष बना हुआ है इसको लोक पुरुषका रूप कह सकते हैं या इसीको संसार कह सकते हैं।

इसमें सात्विक क्रियाओंसे स्वर्गके जीव सुख भोगते हैं और पापकी क्रियाओंसे तमोगुणी जीव नारकीय दुख भोगते हैं और बीचके मध्यम लोक मनुष्य सुख दुख दोनों भोगते हैं यह सारा मिलकर लोक पुरुषका रूप है।

आप जानते हैं कि जिसमें तीनों लोकोंका विभाग हो, वह सब मिलकर अनन्त जीवोंका समूह लोक कहलाता है। इस लोकमें अनन्त जीव अपने अपने पाप और मिश्र कर्मोंके अनुसार दुख पाते हैं। ऐसा सात लोक और चौदह भुवनोंका समष्टि रूप एक लोक पुरुष है। इन जीवोंकी समष्टिसे या सब जीव मिलकर तथा सब लोक मिलकर एक लोक पुरुषका शरीर बनता है।

समष्टिको भी भुवन मण्डलको भी लोक पुरुष कहते हैं। और इस लोकमें एक जीवको भी लोक पुरुष कहते हैं। लोकस्तु भुवने जने कोष। जैसे लोक पुरुषके शरीरकी रचना देखें तो वह पुरुष भी अविद्यासे प्रवृत्ति मार्गमें पड़े हुये जीवोंका बना हुआ समष्टि एक लोक पुरुष है। इसमें अनन्त जीवोंका उनके कर्मानुसार उत्पत्ति स्थिति लय होता रहता है।

समष्टि लोकको उसके उत्पत्ति, स्थिति, प्रलयके कारण भी मोह इच्छा द्वेष (सभी जीवोंके) हैं। और व्यष्टि जीवके भी कारण अविद्या, मोहेच्छा, द्वेष रूपा-प्रवृत्ति ही राग द्वेषात्मक (सकार कर्म) ही कारण हैं। जीवोंके समूह रूप समस्त लोक समूहोंसे बने हुए लोक पुरुषके शरीरकी रचनाको समष्टि लोक पुरुष करता है।

ऐसे ही एक जीव भी अपने कर्मानुसार शरीर मन इन्द्रिय आदिके उत्पत्ति स्थिति लयकी रचना करता है। वहाँ भी प्रवृत्ति (कर्म) अविद्यासे है। और यहाँ भी अविद्या ही कारण है। जैसे लोक पुरुषमें अध्यात्म, अधिदैव, अधिभूत इन तीन विभागों

विभक्त भूत देवता और स्वयं आत्मा तीनों मिलकर शरीरका उत्पत्ति स्थिति लय करते हैं और उसीमें अलग अलग इन्द्रियाँ और भूत हैं।

उनके अलग अलग अधिष्ठाता देव भी उसीमें है वैसे ही एक जीवमें भी अहंकार, मन इन्द्रियाँ आदिके देवता और भूत शरीरमें अलग अलग विभक्त हैं जैसे वहाँ सब भूतोंका अधिष्ठाता व्यापक ब्रह्म एक है ऐसा ही यहाँ भी मन इन्द्रियादि भूत और उनके देवता सबका अधिष्ठता अध्यात्म (जावात्मा) ब्रह्म एक ही है।

इसी प्रकार संसार लोक पुरुषकी रचना जैसे है वैसी ही हमारे शरीर और शरीरस्थ आत्माव रचना है। दोनोंका एक ही स्वभाव है व्यष्टि समा दोनोंमें भेद होते हुए तात्विक अभेद है।

जब यह विचार हो जाता है कि दोनों एक जैसे दोनों ही जीव और जगत लोक अज्ञानसे बन्धे हुए लोक पुरुष (संसार) भी (प्रवृत्ति) कर्मोंसे बना है और जीव राश पुरुष व्यक्ति भी शुभाशुभ कर्मोंसे बना तब दोनोंका सामान्य ज्ञान इस आत्माको हा जाता

जब यह मालूम हो गया कि मैं ही इस देह उत्पत्ति रक्षा और मरण करने वाला हूँ उधर लोक पुरुषमें लोक पुरुषके कम (प्रवृत्ति मार्गमें पड़े हुये ज कर्मोंके समूह कारण हैं) तब यह कर्मों ही कर्मों प्रपंच है। अविवेकसे प्रवृत्ति हो रही है। सामान्य ज्ञानसे व्यक्तिका अविवेक (मोह) अज्ञान हो जाता है।

जैसे कोई व्यक्ति किसी व्यक्तिके अपराधको स ले, और फिर उसका फल पिटाई कैद जाना ले, और फिर उसका फल पिटाई कैद जाना दुखी होना, देख ले, तो अन्य व्यक्ति स्वयं उसे करता। उस अपराध कर्मसे उसे वैराग्य हो जाता वह समझता है हम भी ऐसा करेंगे तो ऐसी पायेंगे। इसी तरह लोक पुरुषोंके जीवोंको स्व सुख भोगकर वापिस आना पड़ता है।

अतः स्वर्ग भी दुख है। नरकमें और कु पाकादि वेदना होती है। मध्य लोकके मनुष्य परिवार धन वासनादिते दुखी हैं। यह सारा दुखी है।

यह सागर प्रपंच प्रवृत्ति मार्ग (अज्ञान कर्म) का फल है। प्रवृत्ति काया वाणी (मन) से क्रिया करना, अविद्यासे राग द्वेष मोहसे होती है। जिसका फल नरक स्वर्गमें संसरण करना है। यही संसार है यही लोक पुरुषका रूप है।

अतः कर्मोंका फल संसार है। संसारमें संसारिक जीवोंके देवता नारकीयोंको भी दुखी देखकर उसे संसारके कर्मों (जन्म मरण, संसरण) से भय और अपने शरीरमें विराग हो जाता है।

कर्मोंसे गति करते रहनेका नाम ही संसार है। अपने आपकी तरफको देखें और अपने शरीरको देखें तो शरीरमें हाड़ मांस राद कोई कीचड़ बद्धूके सिवाय और क्या है, यह उसे ज्ञान हो जाता है।

लोक पुरुषको सामान्य दृष्टिसे देखने वाला व्यक्ति व्यष्टि समष्टिको कर्ता और भोक्ता मानता है। यह ज्ञान उसे हां जाता है। यह शरीर भी मैंने कर्म करके पैदा किया है। आगे मैं अज्ञानमें कर्म न करूं जिससे मेरा जन्म मरण न हो। लोक और शरीरसे वैराग्य हो जाता है। यही इसके सामान्य ज्ञानका फल है। इससे तत्त्व ज्ञान रुच्य ज्ञान होकर मन शुद्ध हो जाता है।

इस प्रकार विचारों ही विचारोंसे मनमें बार-बार चन्तवन करनेसे मन स्वच्छ हो जाता है, और वह योग साधनके उपाय तथा कर्म बाटनेके उपायमें लग जाता है। प्रवृत्तिसे निवृत्ति मार्गमें आजाता है यही सामान्य ज्ञानका फल है।

आगार और अनागार दो धर्मके स्थान हैं। अर्थात् हस्थमें रहकर योग करे चाहे घरसे बाहर संन्यास कर योग साधना करे, दोनों ही ठीक है।

चरकने वनेस्वन्निकेतवासः कहकर योग साधनमें नागार धर्मको लेकर योगपर चलनेका मार्ग बतलाया। वनमें रहे, गुरुके पास रहे, उनका कहना माने तब कहें अनुसार योग साधनपर चले। सब णियोंमें आत्मवत् भावना रखे। पर धन और पर को हेय समझे। पत्ते घास फूसका विस्तर तकिया न। शीतोष्ण सहे। गुदड़ी ओढ़े। विषयोंको दूख समझे।

मानापमानका विचार न करे। सत्य और मित्र भाषी हो। जमीनपर देखकर चले। जीव हिंसा न होवे, ऐसा सदैव ध्यान रखे। कमण्डलु, गुदड़ी, कोषीन और कार्यानिबन्धनी (योग साधन काष्ठ पट्ट) इनके सिवाय परिग्रह न रखे।

धैर्य रखे। योगके विघ्नोंसे घबरावे नहीं। अहिंसादि महाव्रतोंका पालन करता रहे और एकान्तमें बैठकर मनको आत्मामें लगावे। अच्छे विचारोंमें लगाकर मनको शुद्ध करे।

आत्माके सिवाय अन्यत्र न जावे। ज्ञानमें रहे अर्थात् इन्द्रियोंको मनमें, मनको बुद्धिमें, बुद्धिको आत्मामें जोड़कर फिर आत्माको प्रकृति पुरुषके भेद करनेमें लगावे या लोक पुरुष राशि पुरुषकी रचना जाननेमें धारणा ध्यान समाधि लगावे।

जब ऐसा करेगा तब उसे अपने शरीरमें अवयव संख्याके सिवाय और कुछ नहीं मिलेगा। हाड़ मांसदिके सिवाय आत्मा ही उपादेय नजर आयेगा। और कोई उसके लिये उपादेय न रहेगा।

शरीरसे घृणा वैराग्य हो जायगा। ऐसा शरीर मैंने भूलसे खोटे कर्मसे बनाया है और संसारी जीव सभी दुखी हैं। सागर संसारका स्वरूप तीनों लोक चौदह भुवन कर्मोंका विस्तार है। इसमें अपार दुख ही दुख है। संसार जन्म मरण रूप गति करता रहता है।

संसारमें जन्म लेना दुखोंकी आगमें पड़ना है। यह ज्ञान हो जायेगा! फिर वह सब चीजोंके त्यागमें सुख मानेगा। धन परिग्रह संग्रहमें दुख समझेगा यही सत्याबुद्धि है। जो सामान्य ज्ञानका प्रयोजन है। यही रज तम मनके दोषोंका उपाय है। यहाँ इतना जरूर जानना चाहिये कि मन और आत्मा दोनोंकी एक ही क्रिया है।

आत्मा निर्विकार होते हुये उसको भी कर्ममें पड़नेके कारण शुद्ध हो जाना आवश्यक है। ये सब शुद्धिके उपाय चरकने लिखे हैं। ये सब विलक्षण योग मार्गके उपाय बतलाये हैं। शान्ति और अपार

योगका मुख्य लक्ष्य मोक्ष है। रोग क्षय सिद्धियां
योग फल हैं।

चरकने "योगो मोक्षः प्रवर्तकः" कहा है।

यथार्थमें कामीका मन कामिनीमें, लोभीका धनमें,
जिस प्रकार लगा रहता है; उसी प्रकार भक्तका
भगवानमें, योगीका ईश्वरमें, ज्ञानीका ब्रह्ममें तदाकार
रहना योग है।

योगः "सम्यक् प्रवृत्तिः स्यात्", चरकका योग यही
है। "योगः कर्मसु कौशलम्" "समत्वं योग उच्यते"
ये सब योग तीनों पापोंको दूर करने वाले हैं। "योगेन
चित्तं, पदेन वाचा, मलं शरीरस्य तु वैद्यकेन। यो-
गाकरोत्तं प्रसभं मुनीनां पतञ्जलिं तं मुनिमानतोऽस्मि।

मल चित्तमें, वाणीमें, शरीरमें रहते हैं। ये सवि-
वारी भाव हैं। आत्मा निर्विकार है। पातञ्जलयोग
सब मनके मल दूर करनेका उपाय बतलाता है।

व्याकरण महाभाष्य वाणीके दोषोंका परिष्कार करता
है। और चरकमें आयुर्वेदीय तत्त्वको लेकर शरीर
मलके शुद्धिका पथ प्रदर्शन है।

जैसे वेद व्यास ज्ञानके प्रचारके गुरु हैं। वैसे ही
भगवान पतञ्जलि नाना रूपसे जगत्के प्राणियोंका
कष्ट दूर करनेमें अद्वितीय अवतार माने गये हैं।
उपरोक्त योग चरकके आशयमें लिखा गया है जिससे
योग द्वारा-मन और मनके दोष दोनों ही न रहे।
ऐसा विलक्षण योग है ऐसा सरल मार्ग इस ग्रन्थके
सिवाय अन्यत्र देखनेमें नहीं आता इसलिए लिखा है—

पातञ्जल महाभाष्य चरक प्रति संस्कृतैः ।

मनोवाक् काय दोषाणां हर्त्रेऽहिपतये नमः ॥

यह गूंगे का गुड़ है पत्नीको पति मिलापके निजा-
नन्दकी तरह अनुभव गम्य है। कहने सुननेका
विषय नहीं।

महाशक्ति रसायन

इस रसायनके भीतर पूर्ण चन्द्रोदय, सहस्रपुटी व अरुण भस्म २८
पुटी, कस्तूरी, केशर, अम्बर आदि प्रधान औषधियाँ हैं। इसका उपयोग अनेक हताश
रोगियोंपर किया जाता है। यह अति सफल योग है।

यह रसायन शक्तिवर्द्धक और शरीरमें नवजीवन लाने वाला है। हृदय और
मस्तिष्कको बलप्रदान करता है, नयी और पुरानी बीमारियोंमें आई हुई निर्बलता
को दूरकर शरीरको स्वस्थ और सबल बनाता है।

धातु-क्षीणता, पुरुषत्वकी न्यूनता, क्षय, वृद्धावस्थाजनित निर्बलता, वातनाडियों
की निर्बलता, जीर्ण श्वास, जीर्ण कास और कफ-प्रकोप आदिकी यह महान् औषधि
है। यह पाचन क्रियाको सबल बनाता है, अङ्ग प्रत्यङ्गोंको सुदृढ बनाता है और मनको
प्रसन्न रखता है।

मानसिक या शारीरिक अतिश्रमसे उत्पन्न थकावटके समय इसका सेवन करने
पर थकावट सत्वर दूर हो जाती है। प्रसूतिकालमें प्रसूताको देनेसे बिना कष्टसे प्रसव
हो जाता है।

मात्रा—इसे १ रत्ती, दिनमें २ बार, दूधके साथ सुबह और रात्रिको।

ककड़ी और उसका उपयोग

लेखिका—श्रीमती सुमित्रा देवी अग्रवाल "विशारद"

प्रोष्ठ ऋतुमें पाये जाने वाले स्वादिष्ट एवं उपयोगी फल जैसे खरबूजा, आम, नींबू, अनार, पपीता, शहतूत, वेर, बेल, तरबूज, आदि फलोंके साथ ही साथ ककड़ी भी एक ऐसा सुमधुर एवं स्वास्थ्यवर्द्धक एवं स्वादिष्ट फल है जो बाजारोंमें बहुतायतसे मिलती है। गरमीमें हरी हरी पतली पतली मुलायम ककड़ी किसको अपनी ओर आकर्षित नहीं करती। इस ऋतुमें पाये जाने वाले उपरोक्त अनेक गुणकारी फल कुछ जो बड़े बड़े पेड़ोंमें पैदा होते हैं, जैसे आम, शहतूत, बेल, कैय आदि। इसीके विपरीत कुछ फल ऐसे होते हैं जिनकी बेलें लगाई जाती हैं और प्रायः नदियोंकी रेताली भूमिमें ही बहुतायतसे ये मौसमी फल पाये जाते हैं। प्रोष्ठ ऋतुके ऐसे उपयोगी एवं स्वास्थ्य वर्द्धक फलोंमें तरबूज, खरबूजा, ककड़ी प्रमुख हैं। ककड़ी खानेमें रुचिकर होती है।

ककड़ी प्रायः फागुन या चैतमें बोई जाती है। परन्तु उसे बरसातके प्रारम्भमें भी बोया जा सकता है। ककड़ीको फलोंकी बीच वालो खाली जमीनपर भी बोया जा सकता है। ककड़ीके बेलकी पत्तियां ६-३ फुटके अन्तरपर रखना चाहिए। पौधेने पौधेकी दूरी चार फुटके अन्तरपर हो हा इसी अन्दाजमें ककड़ीके बीज बने चाहिए। प्रायः एक एकड़ के लिए आठ दस छटांक बीज पर्याप्त होते हैं। ककड़ीकी एक जाति ऐसी भी होती है जिसके बीज साधमें बोये जाते हैं।

इसकी बेठ खीरा ककड़ीकी बेठकी तरह खूब लम्बी फैलती है। ककड़ीकी बेलके पत्ते खीरेके पत्तोंसे कुछ छोटे और चिहने होते हैं। फल पीले रंगका होता है। ककड़ीकी बेठमें वैशाख, ज्येष्ठ मासमें फल बहुतायतसे मिलने हैं। बरसातमें पहिले जो फसल तैयार की जाती है उसकी सिंचाईकी ओर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। बरसानमें बोई जाने वाली ककड़ीकी फलके लिए सिंचाई करनेकी आव-

श्यकता नहीं। ककड़ी बेलोंकी काट छोड़ करनेकी जरूरत नहीं पड़ती, फिर भी बरसातकी फसल प्राप्त करनेके लिए मचान बनाना लाभदायक होता है। मचान बना देनेसे ककड़ीकी बेलें खूब फैलती हैं। जाड़ेमें बोई जाने वाली ककड़ीकी फसलके लिए सूखी टहनियां खेतोंके आसपास डाल दें। जिससे ककड़ीकी लता आसानीसे फैल सके।

ककड़ीके फल खीरासे मिलते जुलते होते हैं, किन्तु इसके फल खीरेकी अपेक्षा, लम्बे, गोलाकार, कुछ मुड़े हुए लगभग एक या डेढ़ फीट तक लम्बे होते हैं। ककड़ीमें लम्बाईके हलकी उभरी हुई सीधी रेखाएं स्पष्ट दिखलाई पड़ती हैं। जलवायु एवं स्थानके अनुसार कहीं कहीं ककड़ी लम्बी और कहीं बिल्कुल छोटी छोटी पतली पतली ककड़ियां देखनेमें आती हैं। छोटी-छोटी हरी एवं मुलायम नरम एवं रोयेंदार होती हैं। जब यह ककड़ी बढ़ जाती है तब उनमें एक प्रकारका पीलापन आने लगता है।

ककड़ी खानेका अच्छा खासा रिवाज है। प्रायः ककड़ी कच्ची ही नमक और काली मिर्चके साथ खाई जाती है। कुछ लोग कच्ची ककड़ी बिना नमक मिर्च लगाये स्वादमें भर पेड़ खाते हैं। ककड़ीकी साग एवं अन्य विविध प्रकारके स्वादिष्ट व्यञ्जन तैयार किये जाते हैं। प्रोष्ठ ऋतुमें पाई जाने वाली ककड़ी ही स्वास्थ्यके लिए गुणकारी मानी गई है। अन्य ऋतुओंमें वर्षा व शरद ऋतुमें पाई जाने वाली ककड़ी रोगकारक हाती है। आयुर्वेद शास्त्र प्रोष्ठ और हेमन्त ऋतुमें पाई जाने वाली ककड़ी रुचिकारक पित्तनाशक मानी गई है।

आयुर्वेदीय मतानुसार ककड़ी, शीतल, अरुचिकारक, मूत्रक, वृद्धिकारक तथा मूलावरोध, दाह, पित्तरक्तविकार तथा शोथ, जड़ता, वमन, श्रम, नाशक गुणों वाली है। मधुमेहके रोगियोंके तो ककड़ीका सेवन करना हर दृष्टिसे लाभ प्रद है।

गुणकी दृष्टिसे ककड़ी शीतगुण प्रधान है। ककड़ीके अधिक सेवन करनेसे इसी कारण कुछ बालके विकार उत्पन्न होनेकी आशंका रहती है। ककड़ीके ऊपरका छिलका छील कर अन्दरके गूरेके नीचे गोल लम्बे अथवा अपनी इच्छानुसार टुकड़े काट कर काली मिर्च एवं नमक मिला कर खूब मसल डालें। ऐसा करनेसे ककड़ीसे जो पानी निकलें उसे पीकर दें। इस प्रकारकी ककड़ीका सेवन करनेसे स्वास्थ्यको हानि नहीं होती।

ककड़ी खानेमें जितनी ही स्वादिष्ट एवं रुचिकर होती है इसी प्रकार ककड़ीका प्रयोग अनेक रोगोंमें मकरंजता पूर्वक किया जा सकता है। ककड़ीके गुणों एवं विविध प्रयोगोंसे प्रत्येक आमवासी एवं साधारणको परिचित होना चाहिए जिससे समय पड़नेपर प्रथम ऋतुमें जब ककड़ीकी बहार हो ककड़ीका उपयोग अनेक रोगोंपर कर सकें। ककड़ी गुणोंकी खान है। दवाके रूपमें ककड़ीका प्रयोग इस प्रकारसे किया जा सकता है।

ककड़ीको छील कर खिलानेसे अथवा ककड़ीको पीस कर उसमें प्याजका रस मिला कर देनेसे शराब-बाध नष्ट दूर हो जाता है। मूत्रदाहके रोगीको ककड़ीके रसमें नींबूका रस जीरा व मिश्री मिला कर देनेसे शीघ्र ही आराम मिलता है। ककड़ीके छोटे छोटे टुकड़े करके शकरकरके साथ खिलानेसे मूत्र दाहके रोगीको लाभ होता है। ककड़ीके बीज भी कम उपयोगी नहीं है। मूत्र रोगोंको दूर करनेमें ककड़ी एवं ककड़ीके बीज विशेष रूपसे उपयोगी हैं। ककड़ाके बीजोंकी खीर बना कर पीनेसे मूत्र तालिकाकी दाह अथवा जलन दूर हो जाती है और मूत्रेन्द्रिय तथा जननेन्द्रियके कष्टकारक रोग दूर हो जाते हैं। प्रथम ऋतुमें ककड़ीके बीजोंका प्रयोग मधुमेयताको दूर करनेके लिए ककड़ीके बीजोंका लेप करना चाहिए। ककड़ीके बीजोंके साथ जीरा पीस कर मिश्री मिला कर पीनेमें अच्छी तरह घोंट छान कर पीनेसे मूत्राघातमें विशेष लाभ होता है।

अधिक मात्रामें ककड़ीका सेवन करनेसे ज्वर आ जानेकी आशंका रहती है। जब भी ककड़ीका सेवन करें यह सदा ही ध्यानमें रखें कि जलदबाजीमें ककड़ी न खाकर भली भांति चन्ना चन्ना कर ही ककड़ी खाना चाहिए। जिससे आमाशयमें विकृत न हो सके। अपच होनेपर यह अन्य अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न करनेमें सहायक होती है। ककड़ीके अन्य आवश्यक गुणोंके सम्बन्धमें भी कहा जाता है कि यदि ककड़ी दूध पीने वाले छोटे बालकके विछौनेपर रख दी जाय तो ककड़ी उसके ज्वरको खींच लेती है और मुलायम पड़ जाती है।

ककड़ीके बीज जितने गुणकारी है उसी तरह इसकी जड़ और पत्ते भी उपयोगी है। शहद और जल मिश्रणके साथ ककड़ीकी जड़ पीस कर सेवन करनेसे वमन होने लगते हैं। ककड़ीके पत्ते पागल कुत्ते के काटे हुए रोगीके लिए रामबाण औषधि है।

ककड़ी इतनी गुणकारी है कि जब कभी घरोंमें ग्रीष्म एवं मांसल पदार्थ अधिक मात्रामें खा लिए जाते हैं तब अजीर्ण दूर करनेमें ककड़ी अपना गुणकारी प्रभाव दिखाए बिना नहीं रहती। गेहूँ, ज्वार, मक्का, अरहर, उड़द, मूँग आदि अन्न खानेसे होने वाले अजीर्णमें ककड़ी खानेसे ही लाभ होता है। कच्ची ककड़ीमें आयोडीन होता है जो घेंवाके लिए विशेष लाभदायक है। कच्ची ककड़ी कुचल कर रससे हाथ सुंद धोनेसे हाथ सुंद नहीं फटते वरन् सौन्दर्यकी वृद्धि होती है।

ककड़ी खानेके बाद शीघ्र ही भोजन नहीं करना चाहिए। जब ककड़ी पच जाय तभी भोजन करना लाभदायक है। ग्रीष्म ऋतुमें जब बाजारमें पतली पतली मुलायम हरी और नरम ककड़ी उपलब्ध हो जब इच्छानुसार ककड़ीका सेवन अवश्य ही करना चाहिए। मौसमी फलोंका सेवन करनेसे स्वास्थ्य बनता है। गांवोंमें ककड़ीकी खेती करनेसे किसानोंको अच्छी आमदनी हो सकती है। ककड़ीकी खेती आयका अच्छा साधन है।

रसचिकित्सामें मल्लसिन्दूरका महत्व तथा मेरा अनुभव

लेखक:—मखन लाल शर्मा वैद्य इञ्चार्ज राजकीय
आयुर्वेदिक चिकित्सालय आहौर, जिला-जालौर

(१) श्वसनक ज्वर:—

मल्लसिन्दूर २ रत्ती
सुहागा फूला २ माशा

खूब खरल कर, ७ सात पुड़ियों, बना लेवें।
मात्रा:—१-१-पुड़ियों। प्रातः सायं मधु एवं आर्द्रक
स्वरसके साथ।

(२) श्वास:—

मल्लसिन्दूर २ रत्ती
अश्रक भरम २ माशा

७ मात्रा करें। १-१ मात्रा, प्रातः सायं मधुके साथ।

(३) त्रिषम ज्वर:—

मल्लसिन्दूर २ रत्ती
शुद्ध फिटकरी २ माशा

दोनोंको मिलाकर ७ मात्रा बना लेवें; १-१ मात्रा
प्रातः सायं त्रिफलाकाथ, मधुके साथ देवें।

सूचना:—ज्वरावस्थामें भूळ कर भी न देवें।

(४) शुकच्छय:—

मल्लसिन्दूर २ रत्ती
शुद्ध शिलाजीत १ माशा
त्रिवंग भरम १ माशा
प्रवालपिष्टी २ माशा

इन चारोंको मिलाकर ७ मात्रा बनावें। १-१
मात्रा मलाईमें मिलाकर प्रातः सायं चाटें। और
ऊपरसे दूध मिश्री एला चूर्ण युक्त पीना चाहिए।
भोजनमें घृत यथेष्ट मात्रामें लेवें।

(५) अग्निमांश:—

मल्लसिन्दूर २ रत्ती
मिश्री अथवा चीनी १ तो०

दोनोंको मिलाकर ७ मात्रा तैयार करें।

१-१ मात्रा:—प्रातः सायं दूधके साथ देवें।

विशेष:—यह प्रयोग खानदानो है। तथा तुम्ह
फल दिखाने वाले चमत्कारी प्रयोग हैं। स्वास्थ्यके
पाठक एवं वैद्य बन्धुगण निम्नदेश होकर लाभ उठावें।
लेखकके रातदिनके परीक्षित एवं गुप्त प्रयोग हैं।

कुछ अनुभूत घरेलू प्रयोग

लेखक—वैद्य प्रेमप्रकाश यादव "प्रेम"

रुद्रपुर इटुआहार, ऊसराहार, इटावा (३० प्र०)

(१) जामुनकी गुठलियाँ छायामें सुखाकर बारीक
पीसकर ६ माशा प्रातः तथा शामको जलके साथ
इस्तेमाल करनेसे स्वप्न-दोषका रोग दूर हो जाता है।

(२) अपामार्ग (ओंगा चिरचिरा), की जड़ काट
कर व उसे घिसकर माँके दुग्धमें बच्चोंको खिलानेसे
शोष रोग चन्द दिनोंमें जड़से चली जाती है।

(३) २१ पत्ते निम्ब (नीम) के एक छटाँक पानीमें
प्रातः सायं घोटकर पीनेसे खुजलीका नाश हो जाता है।

(४) हींग मुनेठी तथा सौंठको सहीन पीसकर
चनेके समान गोलियाँ बना लेनी चाहिए। २ दो गोली
प्रातः एवं दो सायं ताजे पानीसे प्रयोग करनेसे खाँसी
व जुकाममें फायदा हो जाता है।

(५) डी० डी० टी० पाउडर १ तोला ले उसमें
सरसोंका तैल ३ तोला मिलाकर किसी शीशमें रख
लेना चाहिए। सिरको साबुन (Soap) से धोकर
पुनः यह तेन लगाना चाहिए तथा २० मिनट पश्चात्
सिरको फिर साबुनसे धो डालना चाहिए, इससे
सिरके तमाम जुयें मर जावेंगे।

(६) अर्क (अकौआ) के तीन पत्ते लेकर गर्म
सरसोंके तेलमें अर्क निचाड़नेसे जो भाप बने उसे जिस
जगह बिच्छू ने काटा हो आपको लगाओ, अवश्य
आराम होगा।

(७) राल बारीक पीसकर देशी घी मिलाकर
हाथ-पाँव फरते हों तो लगानेसे ठीक हो जावेंगे।

(८) असगंधके चूर्णको फंका लेकर ऊपरसे मिश्री
मिश्रित दुग्ध पान करनेसे धातु-पुष्टि होती है और गई
जवानी लौट आती है।

(९) कटेरीके बीजोंका चूर्ण १ माशा-६ माशे मधु
के साथ मिलाकर खाना दमेको दूर करता है।

(१०) दस-बारह मुनकका खूब चबाकर ऊपरसे
मिश्री मिला भैंस या गायका अधोटा दूध पीनेसे खूब
शुक्र (वीर्य) वृद्धि होती है।

(११) अँगूलेके चूर्णको गुड़के साथ खानेसे थका
वट हट जाती है।

(१२) सरसोंका तेल व हल्दी मिलाकर मसूदोंपर
सावधानीसे लगाया जाय तो जल-रोग दूर हो जाते हैं।

नेत्रविशेषज्ञ महावि सुश्रुत

लेखक—पं० शिवशंकरात्मज गौरीशंकर श्रोत्रिय भिषगाचार्य आयुर्वेदाचार्य
राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय उदयपुर (राजस्थान)

ऐतिहासिक वृत्तोंपर दृष्टिपात करनेपर एक स्पष्ट विचार यह होजाता है कि भारतीय चिकित्सक नेत्र संबंधि ज्ञानमें ऋग्वेदके समयमें ही पूर्ण अभिज्ञ थे जिमको प्रागैतिहासिक युग कहा जाता है और इसे ईस्वीय सन्से आठ दश हजार वर्ष पूर्वका सब ऐतिहासिक मानते हैं। किन्तु महावि सुश्रुतके समयमें जो ईस्वीय सन्से २॥ ढाई हजार वर्ष पूर्वका समय होता है प्रायः नेत्र विशेषज्ञोंको नेत्र संबंधि सभी अङ्गों उपाङ्गोंका और उनकी क्रियाका ज्ञान था इनके प्रत्येक अंशके रोगोंका ज्ञान और उनकी चिकित्साका विस्तृत ज्ञान था। सोतियाषिद (Catract) अर्भ पोथ की, पद्म कोप आदिपर लेखन व पाटनादि क्रियाओंका अच्छा ज्ञान प्राप्त था। इसके पश्चात् चीनका नेत्र शास्त्र प्राचीन है और हूँ आगटी नामक शासकके कालमें नेत्ररोगपर चिकित्सा व शस्त्र क्रियाका प्रयोग मिलता है इसके बाद भी इस शास्त्रमें प्रगति होकर ज्ञान परिवृद्ध हुआ। यह का ईस्वीय सन्में २६७६ वर्ष पूर्व माना जाता है मिश्र देशमें नेत्र चिकित्सा साहित्य कुछ मात्रामें मिलता है। उसीरियामें ईस्वीय सन् पूर्व कुछ कुछ नेत्र ज्ञान था। ग्रीक वैद्योंमें हिपोक्रेटीज अरिस्टोटलने नेत्र रोगोंपर कुछ प्रकाश डाला। प्लोनी व गैलनके काल तक फिर कोई प्रगति नहीं हुई। सोलहवीं शताब्दी तक कोई प्रगति नहीं हुई। एरियसके समयमें नेत्र शास्त्र सम्बन्धि कुछ ज्ञान बढ़ा किन्तु नेत्ररोगोंपर कोई विशेष साहित्यमें वृद्धि नहीं हुई। अरब देशीय चिकित्सकोंमें सर्व प्रथम नेत्र साहित्य अली बिन ईसाने लिखा। अलहासन ने कुछ दर्शन क्रिया सम्बन्धि ज्ञान पर प्रकाश डाला नेत्र रोगोंका संख्या महावि सुश्रुत ने ७६ मानी है। आचार्य वारभट्टने इनकी संख्या ९४ बतलाई है। शालाक्य ऋषि श्री कराल भी ९६ मानते

हैं। सुश्रुतके प्रति संस्कर्ता नागार्जुन व दृढबलको भी सुश्रुतके प्रतिसंस्कारके समय ७६ नेत्ररोगोंके वर्णनके बाद कुकूणक रोगका पता लगा था और उन्होंने इसका उल्लेख भी स्पष्ट किया है।

षट्मप्रतिनयनजा य इमे प्रदिष्टा,

रोगा भवन्त्यमहतां महतां च तेभ्यः ।

स्तन्यप्रकोपकफमारुतपित्तरे-

र्वालाक्षिवर्त्म भव एव कुकूणकोऽन्यः ॥

(सु. ३० अ. १६)

उपरोक्त उद्धरणसे स्पष्ट है कि छोटे और बड़े (अमहतां महतां) को ये नेत्ररोग एक समान ही होते हैं इनमें एक कुकूणक अलग है; जो केवल दूध पानेवाले बच्चोंको होजाता है। इन ७६ प्रकारके रोगोंकी संख्यामें ५ (नो) संविगत रोग, २१ वर्त्मगत, ११ शुक्लगत, ४ कृष्ण भागमें, १७ सर्वगत, १२ दृष्टिगत, २ बाह्यज की गणना सुश्रुतने उत्तर तंत्रके प्रथम अध्यायमें की है। इसमें पुनः कुकूणक को पृथक् करना पड़ा जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया है। वारभट्ट ९४ चतुर्नवति रोग संख्याकी पुष्टि करते हैं। इस प्रकार सुश्रुतके कालसे वारभट्ट काल तक अट्ठारह रोगोंको वृद्धिके ज्ञान वारभट्टको हुआ था। इस प्रकार शालाक्य संबंधि चिकित्सा क्षेत्रमें नव नवन रोगोंका परिज्ञान बराबर अन्वेषणों द्वारा होता रहा है। महावि सुश्रुतने जो कुछ भी वर्णन किया है वह नेत्र शास्त्रके विद्वान् विदेहाधिप कृत विदेह तंत्रके आधारपर ही ७६ नेत्र रोगोंका उल्लेख किया है। कराल भट्टशोतक जेज्जट विद्वानों तंत्रोंमें नेत्र संबंधि रोगोंका बहु विस्तृत वर्णन किया गया था; किन्तु विदेहाधिपने ७६ नेत्ररोग ही वर्ण किये थे। आः सुश्रुतने उनका ही अनुसरण किया और टीकाकार डल्हन भी इसे स्वीकार करते हैं।

शालाक्यतंत्राभिहिता विदेहाधिपकीर्तिताः ।

इति निमी प्रणीताः षट् सप्तति नेत्ररोगाः न कराल भद्र शौनकादि प्रणीताः; उस समयके उपलब्ध साहित्य के लिये वे महान् तंत्र (समुद्र इव गंभीर) "दुर्गागाथा-उगुधेरिव" कहकर प्रयोग करने बहुत बड़ा साहित्य पूर्ण मात्रामें उपलब्ध था । आधुनिक चिकित्सा विज्ञान (Ophthalmology) के विवरणोंको यदि सुश्रुतके सिद्धान्तोंके अनुसार तुलनात्मक तुला-पर रक्खें तो आज सहस्रों वर्षके पश्चात् भी वह एक दम नया ही परिज्ञात होता है । रोगोंके निदान व संख्यामें सुश्रुतने अधिक योग्य व उपयुक्त विचार किया है । यदि कुछ पार्थक्य है तो वह नगण्य है । और यह तो अवश्य है कि आधुनिक नेत्रविज्ञानपर अनुसन्धानमें लाखों रूपये प्रतिवर्ष व्यय होते हैं । और चिकित्सकोंने उसमें पर्याप्त परिश्रम करके इस विज्ञानको उन्नत बनाया है । मगर आधुनिकोंके वर्णित रोगोंमें ऐसा कोई भी रोग देखनेमें नहीं आया है कि जिसे सुश्रुतने वर्णन नहीं किया हो या उसपर विचार नहीं किया हो चिकित्सा न दी हो वर्त्म प्रदेशके २१ भेदोंमें एक भी ऐसा रोग नहीं है जो आधुनिक (Eye specilisto) ने अधिक लिखा हो । अर्शो-वर्त्म या ट्रोकोमा (Trocoma) की लक्षण पंक्तिमें उसकी अवस्थाओंको सुश्रुतने बिलकुल पृथक् नाम देकर रक्खा है । आजतक आधुनिक विज्ञान पोथकी की सफल चिकित्सा नहीं प्रदान कर सका । सुश्रुतने और इसके बादके महर्षि वाग्भटने इस रोगकी सफल चिकित्सा दी है और इस भयङ्कर नेत्र रोगपर विजय प्राप्त की । सुश्रुत और वाग्भट्टका नेत्र चिकित्सा विवरण एक दम आधुनिक प्रणालीका तरीका है निदान चिकित्साके स्थानोंका अवलोकन करनेसे यह स्पष्ट होता है कि सर्वत्र लाक्षणिक विवरण ही प्राप्त है और आयुर्वेदके महर्षि चरक सुश्रुत वाग्भट्ट आदिने रोगोंके लक्षणोंको व्याधिके रूपमें बतलाया है । एक लक्षणोंका समूह ज्वर, अर्श, अतिसार, कास कहा जाता है ऐसा आयुर्वेदके तंत्रोंमें कहीं नहीं प्राप्त होगा कि यह आंत्रकी बिमारी है या आमाशयकी है या अमुक अंगकी; ये लक्षण हो तो यह व्याधि होगी ऐसा ही उल्लेख प्राप्त होता है । किंतु सुश्रुतने नेत्र

विज्ञानपर आकर उपरोक्त पद्धतिका निराकरण अंततोगत्वा आंगिक क्रमके अनुसार वर्त्म रोगोंके कृष्ण दृष्टि पटलके रोगोंकी चिकित्सा व लक्षण लिखा, आधुनिक कुल इसी सिद्धान्तको मानता है और आमाशय फुफ्फुस पक्वाशय रोगोंके लक्षण पृथक् पृथक् उनके यहाँ शास्त्रोंमें दिये हैं जैसा कि सुश्रुतका लेखन व वर्णन क्रम है ।

चिकित्साके विवरणमें सुश्रुत अपना एक पृथक् ही वैशिष्ट्य एवं आदर्श रखते हैं । आधुनिक साहित्य ऐसा कोई भी प्राप्त नहीं होता है जो महाविद्यालयों निकलने वाले नये चिकित्सकोंके लिए मार्ग भ्रष्ट (Pitfall) होनेसे रोके और चिकित्साके प्रारंभ ही सर्जनको सतर्क कर दे । किन्तु महर्षि सुश्रुत चिकित्सामें प्रवेश करनेसे पूर्व ही नेत्र रोगोंकी श्रेणी विभाग करके स्पष्ट अवबोधन कराया है कि ७६ नेत्र रोगोंमेंसे च्छेद्य नेत्ररोग ११ हैं । लेख्य ९, भेद्य ५, वैध्य १५ हैं । १२ ऐसे रोग हैं जिनमें शस्त्र भूतकर प्रयोग नहीं करना चाहिये । ७ याप्य हैं । १५ नेत्र रोगोंपर चिकित्सा कर्म व्यर्थ जाता है असाध्य हैं या याप्य रहते हैं । बहुत ही सुन्दर वैज्ञानिक विवरण और चिकित्सकोंको भूलसे रोकनेके लिये पर्याप्त है । यह सुश्रुतकी अपनी ही विधि है । इसके पश्चात् कालीन चिकित्सकोंने भी इसका अनुकरण किया एवं संख्या ही नहीं पृथक् पृथक् रोगोंको नामोंसे उल्लेख किया जैसे च्छेद्य रोग अर्शवर्त्म, शुष्कार्श आदि, लेख्य उत्संगिनी वहल वर्त्म, आदि भेद्य-श्लेष्मोपनाह लगण आदि व्यध्य सिरोत्पात सिगा हर्ष आदि अशस्त्र कृत्य-शुष्काक्षिपाक, कफ विदग्ध दृष्टि, अर्जुन शुक् आदि याप्य वे रोग जो चिकित्सा करनेपर लाभप्रद हों और छोड़ते ही ज्यों के त्यों हो जाँय । याप्य कहलाते हैं । असाध्य हताधिमंथ निमिष गंभीर दृष्टि आदि अलज्ज इनमें चिकित्सा कर्म व्यर्थ जाता है ।

शस्त्रक्रियासे साध्य होजाय अन्यथा औषधिसे लाभ नहीं होता दो आगन्तुक रोग भी असाध्य हैं नेत्रक्षत व हत दृष्टि इस प्रकार नेत्र चिकित्सामें प्रविष्ट होने वालेके लिये सुन्दर निर्देश किया है औषध चिकित्सामें भी सुश्रुतकी कोई भी समता नहीं हो

सकती। नेत्र रोगोंमें भी सांगोपांग चिकित्साका वर्णन अच्छी तरहसे किया है प्रधान कर्ममें सार्व-
 ज्ञिक शोधक चिकित्सा व स्थानिक चिकित्साका सर्वत्र ध्यान रक्खा है। सर्वाङ्ग शुद्ध हो जानेपर स्थानगत दोषका परिमार्जन अल्पकालमें होजाता है। सार्वज्ञिक चिकित्सामें स्नेहन स्वेदन वमन विरेचन आस्थापन शिरोविरेचन नस्य धूम इनका प्रयोग करके शरीरकी शुद्धि करना सार्वज्ञिक चिकित्सा है। स्थानिक चिकित्सा वह चिकित्सा जो कि किसी स्थानपर विशेषकर जो रुग्ण हो रहा है, उसपर प्रयुक्त हो, स्थानिक चिकित्सा है। जैसे परिपेक प्रदेह, स्वेद, आश्च्योतन, अंजन, तर्पण, पुटपाक, शिराभोक्षण, वेधन लेखन, छेदन व अन्य क्रियाएं यह सब एक विशेष रूपमें विशेष स्थानपर की जाती है नेत्र चिकित्सामें प्रयुक्त होनेवाली सुश्रुतने जितनी औषधियोंका उल्लेख किया है, वह प्रायः वातहर ३०, पित्तहर ४०, श्लेष्महर ५२, रक्तदोषहर ४५, औषधियाँ हैं। जिनमें काष्ठौषधि गणिमुक्ता शुक्ति शंखादि भी व कुछ धातुएं भी सम्मिलित हैं। यह संभव है कि और भी संख्या हो किंतु यथा शक्य प्रयाससे गणित संख्या इस प्रकार १६७ एकसो सड़सठ औषधियोंकी संख्या होती है। किंतु जब इसमें सर्व साधारण औषधियोंको गिने तो देख पायेंगे कि बहुत सी औषधियां तो एक ही है जो बार बार प्रयुक्त हुई है इनकी संख्या ३० है। जिनमें हल्दी, दारुहल्दी, लोभ्र, द्राक्षा, नागरमोथा, चंदन, मुलहठी, क्षौद्र, गैरिक, धातकी, उदुम्बर हरीतकी, आमलकी, विभीतक, सैधव, नेत्रवाला, शुंठी, कंटकाठी, गंभारी, रसाञ्जन, कपित्थ, एरण्ड, शंख, प्रवाल, समुद्रफेन, तुत्थ, अंजन (द्रव्य) मैन्सिल ताम्र इत्यादि मिश्रित है अगर इन उपरोक्त औषधियोंकी संख्याको घटा दिया जाय तो करीब नेत्ररोगमें प्रयुक्त होने वाली ८७ औषधियां रह जाती हैं। नेत्र रोगमें वर्षाके जल का पान वर्षाके जलमें, वर्तियां, अंजन, घिसकर लगाना या आश्च्योतन व अंजनादि द्रव्योंमें डालनेका ध्यान प्राचीन चिकित्सकोंने रक्खा है। वर्षाका जल परिश्रुत जल (Distilled water) की तरह शुद्ध होता है अतः आज्ञा दी है। पर्युषित जलका प्रयोग नेत्र रोगोंमें करना मना किया है। पर्युषित जलको

रग्वनेसे उसमें रासायनिक परिवर्तन होता है अ उसमें अम्ल प्रति किया (Acidic Reaction) पैदा होता है। यह उन्होंने अच्छी तरह अध्ययन किया था-यथा:—

न च पर्युषितं देयं कदाचिद्धारि जानता ।
 अम्लीभूतं कफोत्क्लेदि न हितं तत्पिपासवे ॥
 (वारिजल) (सु० सु० अ० ४५-४)

अंजन प्रयोग:—स्रोतोञ्जन व नीलाञ्जनका प्रयोग सुश्रुतने भी कई सहस्र पूर्व वैदिककालमें हम आचार्योंने किया था अधर्ववेदमें नेत्र रोगोंमें अंज उपयोग बहुत विचार पूर्वक लिखा है। प्राचीन काल अंजनका प्रयोग आजतक होता आ रहा है अ आधुनिक विद्वान भी अंजनके मूल भूत धातु यशद बहुत प्रयोग करते हैं।

त्रिफला:—यह आयुर्वेदमें नेत्ररोगोंके लिये अमृतका स्वरूप है। इसके शीत कषायसे नेत्र धो त्रिफलाका चूर्ण, काथ व घृतका सेवन, भोजनो त्रिफला सेवन भी नेत्र रोगकी अंतिम औषधि जरावस्थाको दूर करता है। “नरो नारायणो भवे त्रिफलामें कषाय रसयुक्त टेनिक एसिड मैलिक एसिड दो द्रव्य होते हैं जो वर्त्मकला व श्वेत पटलको व बलयुक्त बनाते हैं।

मधु:—नेत्ररोगोंमें शहदका उपयोग पद पद दृष्टिगोचर होता है। आचार्यों ने मधुकी आठ जाति बताई हैं। जैसे माक्षिक, भ्रामर, क्षौद्र, पौत्तिक, छ आर्ध्य, औदालक, दाल इनमें सबके सब नेत्ररोग लिये हितकारी होते हैं। किन्तु इनमें माक्षिक ने लिये परमोत्तम वस्तु है। माक्षिक मधु वह है कि मधु मक्खियां जो पीले वर्णकी होती हैं, भाव मि लिखा है कि “माक्षिक मधुरं श्रेष्ठं नेत्रामयहरं लघु इसका बाह्य एवं मुख द्वारा सेवन दोनों प्रकार ने लिये हितकारी है।

पुनर्नवा—इसका प्रयोग अंजन व शाक सेवन करनेसे पर्याप्त लाभ मिलता है, अभिष्य अभिमंथ, नेत्रशूल, स्त्राव व पक्ष्म कोपमें अच्छी होता है, यथा—

श्वेतं पुनर्नवा मूलं जलेनाज्यं च शूलनुत् ।
जलस्रावं निहन्त्याशु तन्मूलं च निशायुतम् ॥
इसी प्रकार अन्यान्य प्रयोग हैं ।

हिताहार उपानद् (जूते) का धारण, अंजन लगाना, नेत्रोंको त्रिफलासे नित्य धोना, तैलकी शिरपर व पैरों पर मालीश की क्रियाओं नियमित करनेसे नेत्ररोग नहीं होते । दृष्टि मंद नहीं । इसके लिये अधो लिखित वस्तुओंका सेवन अच्छा होता है । पुगना घृत, त्रिफला शतावरी, परवल, मूँग, आमले, यव इनको यत्न पूर्वक सेवन करनेसे भयंकर तिमिर रोग भी नहीं होते । शतावरी दुग्धका सेवन सुश्रुत ने तिमिरमें श्रेष्ठ माना है । नेत्रकी लालिमा व जलन होनेपर स्त्री दुग्धका निक्षेप अच्छा लाभ करता है । घृतमें भूनी लोत्रका लेप हर प्रकारके नेत्र रोग के दाह व वेदनाको दूर करता है । आहारमें नित्य घृतका सेवन नेत्ररोगको नहीं होने देता । प्रातःकाल तरी दूधपर नंगे पाँर टहलनेसे आँवोंकी ज्योति बढ़ती है । घृत व मधुके सेवनसे क्षय व दुर्बलता जन्म नेत्र रोग नहीं होता है । भोजनोत्तर नित्य मूध रपान

करनेकी आदत डालनेसे वृक्की खराबीसे होने वाला नेत्ररोग नहीं होता । इस प्रकार महर्षि सुश्रुतने नेत्र रोगोंपर अपना अनुसंधान सारे विश्वके हेतु दिया । किन्तु दुर्भाग्य है आज हमारा और आयुर्वेद जगतका कि उस महर्षिके श्रमका मूल्यांकन कर आगे बढ़ाना और उस दिव्य दिशापर कुछ नवीन खोज करना तो दूर रहा, मगर जो उनके तरीके थे वे भी भूल गये । और केवल उन महर्षियोंके पवित्र विज्ञान आयुर्वेदका नाम धारी चोला पहन कर स्वाथ उदर पोषण करना ही शेष रह गया । मैं इस संहिताके अध्येता छात्रोंसे अनुरोध करूँगा कि वर्तमानमें सुश्रुतकी दिशाका लाभ पाश्चात्य जगत ले रहा है । हमें भी पीछे नहीं रहना चाहिये । और शल्य शालाक्यकी अतीम ज्ञान राशिका चमत्कार इस दुनियाँको प्रत्यक्षका दिखानेका प्रयत्न करना चाहिये । हमने कुछ प्रयास किया तो हमारा शल्य शालाक्य इस संहिताके आधारपर अवश्य विकसित होगा । प्रयोग करें । सूत्रोंको समझें तो अवश्य जय सुश्रुत आज भी तैयार हो सकेंगे । इसमें दो राय नहीं हो सकती । जय आयुर्वेद ।

कृष्ण गोपाल का
उत्कृष्ट
शक्तिवर्धक
स्मृतिदायक
रसायन

च्यवनप्राश
[सुवर्ण भस्मादि युक्त]

च्यवनप्राश
कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा कृष्ण गोपाल (अजमेर)

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन, कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)



अपना डाक्टर आप बनीं

लेखक—डॉ० श्री कुलरंजनजी मुखर्जी

प्राकृतिक चिकित्सालय ११४१२ बी. हाजरा रोड कलकत्ता २६.

प्राकृतिक चिकित्सा एक श्रेणीकी गृह-चिकित्सा है। इसमें अपना तथा अपने आदमीको घरमें बैठाकर इलाज किया जा सकता है। इसलिए इस चिकित्सामें कोई खर्च नहीं होता है। इससे किसी रोगको दवाया नहीं जाता है। बल्कि देहमें जमा हुआ विष तथा कूड़ा-करकट देहसे निकालकर समूचा रोग आरोग्य किया जाता है।

बुखार एक मामूली रोग है। जिसे कोई बुखार न हो, पहले ही एक डूब देकर कोष्ठ साफ कर लेना जरूरी है। इसके साथ नीबूके रसके साथ पानी पीना उचित है। इससे सूत्रके साथ बहुत विष देहसे बाहर हो जाता है। दिनमें तीन बार रोगीका भिर घोटकर उसका तमाम शरीर, खासकर पेट भीगे गमछेन पोंछ देना भी कर्त्तव्य है। इसमें रोस कूड़ा-करकट देहसे बाहर हो जाता है। इसके अलावा रोगीको पूर्ण विश्राम लेना उचित है एवं फलोंका रस या सिंभाया हुआ शाक आदिका सूप पीकर रहना उचित है। इस मामूली चिकित्सासे ही ९५% बुखार मिट जाता है, और तमाम बुखारमें भी लाभ होता है।

कोष्ठवद्धता होनेपर दो एक घण्टेके लिए एक बार पेटको लपेट रक्खा जा सकता है। इसीसे दूसरे दिन आरसे आप कोष्ठ साफ हो जाता है। एक हाथ चौड़े भांगे हुए और निचोड़े हुये तीलियोंसे स्तन-रेखासे लेकर पेड़ूके शेष सीमा तक पेट और पीठ ढँककर एक सूखा हुआ भारी ऊनी कपड़ेसे उसे डुबारा ढँक देना, ऐसा पट्टी लेना ठीक होता है। इसके बाद उसे एक कपड़ेके टुकड़ेसे बांध देना उचित है। जरूरी अवस्थामें हमेशा ही इस ग्रहण किया जा सकता है। दस्तावर दवाईयें इस सहस्रगुना श्रेष्ठ हैं।

पतला दस्त होनेसे पहले पेटको साफ होने देना उचित है। इसके बाद देखना चाहिए कि पेट गर्म है, या ठंडा। गरम हो तो आधा ईश्र भागी गीली मिट्टीकी पुल्टीश रोगीके पेटपर एक घण्टेके लिए रखनेसे आपसे आप पेट अच्छा हो जाता है। और अगर पेट ठंडा रहे तो पेटके ऊपर पाँच-पात मिनटके लिए सेक कर पेटको लपेट देना उचित है। रोगीका हाथ पैर हमेशा गरम रखना चाहिए।

पेचिश होनेसे जरूरीसे जल्दी रोगीका पेट दो मिनटके लिए सेककर उसके बाद भीगे गमछेपे पुनः पेट ठंडा कर देना चाहिए। ऐसा तीन बार करना उचित है। उसे गरम ठंडा सेक कहते हैं। इसके बाद गुनगुना पानीमें एक डूब देना चाहिए, और एक घण्टा बाद-बाद बदलकर दो तीन बार पेटकी लपेट देना जरूरी है। इससे कठिनसे कठिन पेचिश भी मिट जाता है। रोगीको कमसे कम एक बेडा उपचार करना चाहिए। और इसके बाद मट्टा पीकर दूध पकत रहना चाहिए।

साधारणतः ठंडी लगकर सर्दी होती है। ठंडी लगनेसे ही गरम पानीमें दोनों पैर डुबानेसे ही असम्भव हो तो दोनों पैर अगममें सेंक लेनेसे ही ठंडी चली जाती है। किन्तु ठण्डा अगर शरीरमें बैठ जा तो हाथ पैर सेंकनेसे कुछ लाभ नहीं होता, बल्कि एक सूखी खाँसी पैदा होती है। तब सिर्फ एक घंटे लिए एक बार छाती लपेट लेनेसे ही सर्दी अच्छी जाती है। पेटकी लपेट छातीपर उठाकर नाभि गला तक ढकनेसे ही छातीकी लपेट हो जाती है। सभी प्रकारकी ठंडी हुई लपेटके नीचे कुछ ग (ताप) पैदा होना चाहिए।

यदि सर्दी साथ साथ रोगीको खाँसी भी

ब छातीकी लपेटसे ही वह मिट जाती है। अगर
 ाँसीके साथ कफ उठता है, तब हमेशा ही छातीको
 पेट देना चाहिए।

कभी-कभी रोगीकी सूखी हुई खॉंसी प्रकाश पाती
 । इस हालतमें स्नानके बाद छाती, गला तथा
 ठके ऊपरवाले हिस्सेको अच्छी तरह घिस देनेसे
 खॉंसी चली जाती है।

ब्रण (डुम्सा) होनेके साथ साथ ही इसके ऊपर
 म ठंडा देना ही ब्रण मिटानेका प्रधान उपाय है।
 न्तु ऐसा उसे दवा देना उचित नहीं है। ब्रणके
 पर पाँच-सात मिनटके लिए सँककर भीगा कपड़ा
 नी कपड़ेसे ढँककर लपेट देना ही उचित है।
 नीसे ब्रण फटकर अन्दरसे कजेद तथा पीव बाहर
 जाता है।

मुँद तथा जिह्वाका घाव होनेसे गरम-ठंडा कुल्ला
 उसकी प्रधान चिकित्सा है। एक मिनट गरम
 नीसे कुल्ला करना उचित है। ऐसा तीन बार
 रना चाहिए। मिट्टीसे दन्त संजन भी करना
 च्छा है।

दौत दर्दमें भी वही चिकित्सा करनी चाहिए।
 त अवस्थामें आदमी गरम-ठंडा कुल्ला करनेके
 द ही अन्न खा जाता है।

घाव हो जानेसे उसके ऊपर, दिनमें दो बार एक
 के लिए ढँकी हुई मिट्टीकी लपेट रखना जरूरी है।
 र दिनमें दो बार उसके ऊपर गरम ठंडा देना
 हिए। साधारणतया घावपर तीन मिनटके लिए
 म और तीन मिनटके लिए ठंडा देना उचित है।

लीवर कभी बड़ा हो जानेसे लीवरके ऊपर तीन
 पाँच मिनटके लिए तीन बार गरम और पर्याय
 मसे ठंडा देना चाहिए। करीब सात दिन ऐसा
 रनेसे ही लीवर स्वाभाविक आकारमें आ जाता है।

वातका दर्द मिटाना कभी सहज नहीं होता,
 न्तु हाथ या पैर, जहाँ वातका दर्द हो, वहाँपर कई

रोज तक १० से १५ मिनटके लिए भाप लगानेसे वह
 धीरे-धीरे कम हो जाता है। और अन्तमें स्थायी
 रूपसे मिट जाता है। भाप ऐसे ढंगसे लगाना चाहिए
 कि जिससे वह शरीरपर सीधा जाकर न लगे। तथा
 शरीरके लिए दाह जनक न हो।

साधारणतया ये सब रोग ही संसारमें अधिक
 देखे जाते हैं। प्राकृतिक चिकित्सासे एक पैसा भी न
 खर्च होते हुए ही इन सब रोगोंसे छुटकारा मिल
 जाता है। इसलिए रोगीका जिसमें कोष्ठ साफ रहे,
 मूत्रस्रोत परिष्कार होता है। और रोग कूप खुल
 जाँय, उसकी व्यवस्था करनी चाहिए। यह उद्देश्य
 साधन किया जाता है, काफी मात्रामें देशी फल,
 सलाद, सिझाया हुआ तरकारी खाकर और तरकारी
 का सूप तथा मट्ठा पीकर। उपवास भी हमेशा देह-
 शुद्धि करनेमें मदद डालता है।



दन्तप्रभाकर
मंजन

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन
 कालेड़ा, कृष्णगोपाल (अजमेर)

“सामयिक विचारगोष्ठी” के सुअवसर पर अध्यक्ष पदसे दिया गया

चिकित्सक चूडामणि, आयुर्वेदाचार्य, साहित्यरत्न, आयुर्वेद बृहस्पति

राजकैय पं० सुरेन्द्रनाथजी दीक्षित, डी० एस० सी० ए०

सुखनऊ का भाषण

२६ मार्च सन् १९६५ ई०

महामान्यवर !

हम जानते हैं कि आयुर्वेदकी वर्तमान समस्याओं पर विचार करनेके लिये “सामयिक विचार गोष्ठी” करनेका सर्व प्रथम आयोजन आपने ही किया है। और ऐसी महत्वपूर्ण गोष्ठीकी अध्यक्षता करनेका सु अवसर मुझ जैसे अकिंचन व्यक्तिको प्रदान कर आपने जिस उदारता और विशाल हृदयताका परिचय दिया है उसका मैं हृदयसे आभारी हूँ।

सम्भ्रान्त वैद्य महानुभाव !

हमारा विश्वास है कि आपकी यह विचार गोष्ठी सचमुच आयुर्वेदज्ञोंके अन्धकारमय भविष्यको दूर करनेमें न केवल सहायक सिद्ध होगी, अपितु एक सबे मार्गदर्शकका काम करेगी। इतिहास साक्षी है कि जब जब देशके सामने विषम समस्याएं आती रहीं, तब तब भारतके ऋषि-मुनि एवं विद्वज्जनोंने एक स्थानपर बैठकर बड़े बड़े सम्मेलन और गोष्ठियां की हैं। इसी भावनासे प्रेरित होकर स्वर्गीय शङ्करदाजी शास्त्री पदे ने भी “अखिल भारतीय आयुर्वेद महा-सण्डल” की स्थापना की थी। वे वैद्य तथा आयुर्वेद प्रेमी दोनोंको एक साथ लेकर चलना चाहते थे इसी लिये इसका प्रथमाधिवेशन सन् १९०७ में इलाहाबाद जिलेके तालुकेदार कुंवर सरजूप्रसाद नारायणसिंह बहादुर बरांव स्टेटकी अध्यक्षतामें नासिकमें हुआ था। हमारे इस महामण्डलकी अध्यक्षता हिज हाइनेस महाराजा श्रीराम वर्मा कोचीन, लेफ्टीनेण्ट कर्नल के. आर. कीर्तिकर, महामना मदनमोहन मालवीय तथा भारतके अनेक आयुर्वेद प्रेमी एलोपैथीके डाक्टर भी कर चुके हैं।

बिहारमें हिज हाइनेस महाराज। सर रामेश्वरसिंह
बहादुर दरभंगा तथा राजा हरिहरप्रसादसहामागमिनि

अमावां नरेश भी प्रदेश वैद्य सम्मेलनोंके अध्यक्ष रह चुके हैं, यूं तो स्वागताध्यक्ष तथा विशेष वक्ताओंके रूपमें अनेकोंके नाम गिनाये जा सकते हैं। हम समझते हैं कि “अखिल भारतीय आयुर्वेद महा मण्डल” जिसका नाम आज “अखिल भारतीय आयुर्वेद महा सम्मेलन” है, वह केवल वैद्योंकी ही संस्था नहीं थी, अपितु उसमें बड़े बड़े आयुर्वेद प्रेमियोंको उच्चपदोंपर आसीन होनेका सुअवसर मिलता रहा है। संस्थापककी भावना वैद्य तथा आयुर्वेद प्रेमियोंको एक साथ लेकर चलनेकी थी। इसीलिये आज भी आपके “अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन” के संरक्षक तथा आश्रयदाता कोई भी महानुभाव बन सकते हैं, किन्तु मान्य एवं आजीवन सदस्यतामें हमने आयुर्वेद प्रेमियोंके लिए द्वार बंद कर दिया है। आपके महासम्मेलनके वर्तमान विधानमें आज भी लिखा है कि “अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन” के अन्तर्गत प्रदेश आयुर्वेद सम्मेलन, जिला आयुर्वेद सम्मेलन, तहसील आयुर्वेद सम्मेलन, स्थापित किये जावेंगे। महा सम्मेलनके मुख्य अंग “प्रादेशिक आयुर्वेद सम्मेलन” होंगे किन्तु आज सर्वत्र आयुर्वेद सम्मेलनोंके बजाय “वैद्य सम्मेलनों” की ही स्थापना हम सब करते हैं जिसके कारण हमारी प्रगतिका मार्ग अवरुद्ध हो गया है और हम संकुचित हो गये हैं। यह सही है कि आप सबने लुद्ध हृदयसे बड़े बड़े वैद्यराजोंको वैद्य सम्मेलनोंका अध्यक्ष बनाया है, पर हमें लगता है कि जबसे आपने इन सम्मेलनोंको वैज्ञानिक संस्थाके रूपमें मान लिया है, तभीसे आयुर्वेद सम्मेलन या आयुर्वेद मण्डलके बजाय “वैद्य सम्मेलन” नाम रखने की भूल प्रारम्भ हुई है। आज हमारा आगे बढ़ने का प्रारम्भ आपकी आज्ञाका सरकार दरबारमें वास्तविक

मूल्यका होना बंद सा होता जाता है। प्रजातंत्रके इस युगमें आयुर्वेद प्रेमियोंको साथ लिये बगैर हमारा काम चलना संभव नहीं। हमारी मूल संस्थाका रजिस्टर्ड नाम "अखिल भारतीय आयुर्वेदिक कांग्रेस" है। अतः उसकी शाखाका नाम भी "आयुर्वेदिक कांग्रेस" ही हो सकता है "वैद्य सम्मेलन" कदापि नहीं। इसीके साथ हमारा यह भी कहना है कि अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलनका विधान भी अत्यन्त दोषपूर्ण है, उसे भी पलटना ही होगा। हम उसे संगठनात्मक विधान माननेको तैयार नहीं हैं। इसीलिये हमने अपने संशोधन ४४वें अधिवेशनमें विचारार्थ प्रधान कार्यालयको भेज दिये हैं, साथ ही आयुर्वेद संदेशके १० मार्च ६५ के अंकमें प्रकाशित भी कर दिये हैं और सदस्योंकी सेवामें भेज भी दिये गये हैं। हम चाहते हैं कि हमारा संगठनात्मक विधान इसी अधिवेशनमें बने, जिससे सर्वत्र एक रूपता आये और प्रत्येक स्थानपर अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलनका ही विधान चले, रसीद बुकें तथा सदस्य प्रतिज्ञा पत्रोंका उपयोग भी महासम्मेलन कार्यालयसे मंगाकर ही किया जाये। इस प्रकार प्रत्येक जिला, नगर, तहसील तथा समस्त प्रदेश एक सूत्रमें आबद्ध होंगे और सभी वैद्य तथा आयुर्वेद प्रेमी अपनेको आयुर्वेद कांग्रेसका सदस्य कहने और कहलानेमें गौरवका अनुभव करेंगे। भारतवर्षमें पृथक् पृथक् चलने वाले विधान रद्द हो जायेंगे और "अपनी अपनी ठपली अपना अपना राग अलापना बंद हो जायेगा।"

हमारा आज तकका अनुभव हमें शिक्षा देता है कि हम सब वक्ता ही हैं पर हमारे बीच श्रोताओंका होना तो नितान्त आवश्यक है ही। हम जानते हैं कि आयुर्वेद प्रेमियोंने ही हमारे लिये आयुर्वेदके बड़े-बड़े धर्मार्थ औषधालय बनवाये हैं उन्होंने ही दान देकर ट्रस्ट तथा धर्मादा समितियां बनाकर बड़े बड़े आयुर्वेदिक कालेज खोले हैं, जहां हम प्रधान चिकित्सक, चिकित्सक, लेक्चरर, प्रोफेसर, प्रिन्सिपल, अधीक्षक आदि पदोंपर नियुक्त होते आये हैं, और आगे भी होंगे, किन्तु यदि हम उन्हें अलग रखकर वेतन और अधिकारोंकी मांगमें ही उलझे रहें तो फिर यह आयुर्वेद प्रेमी अपनी मुट्ठी कस लेंगे और हमारे लिये

औषधालय तथा विद्यालयोंका खुलना बंद हो जायेगा। अतः हमारा अनुरोध है कि आप भारतवर्षकी सभी सभाओंमें ऐसा सुधार करायें जिससे कि आयुर्वेद प्रेमी जनता हमारे संगठनोंमें अधिकाधिक हिस्सा ले सके। हमारा विश्वास है कि बिना जन आन्दोलनके आयुर्वेदका आन्दोलन सफल होने वाला नहीं है और न ही आयुर्वेदका उद्धार ही संभव है। आज हमारे ऊपर सेन्ट्रल ड्रग एण्ड मेडिकल रेमीडीज एक्ट, अश्लील विज्ञापन एक्ट, मेडिसिनल टायलेट प्रिपेरेशन एक्ट, ड्रग एण्ड कासमेटिक्स एक्ट, इण्डियन मेडिसिन एक्ट आदि आदि अनेक कानून बनाकर थोप दिये गये हैं। इनमें बहुतसे कानूनोंको हम सचने पढ़ा भी नहीं है और जिन्हें पढ़ा भी होगा उन्हें समझा भी नहीं होगा क्योंकि हमारे पास कानूनी बुद्धि एवं समय दोनोंका अभाव है। प्रत्येक कानूनके नियम तथा जी० ओ० पृथक् होते हैं, जो कि समय समय पर बनते और निकलते रहते हैं। इनका जानना और संग्रह करना वैद्योंके लिये नितान्त आवश्यक है।

इन कानूनोंके अन्दर कुछ ऐसी धाराएं भी होती हैं जिनमें दूसरे दूसरे कानूनोंकी धाराओंको देखनेका उल्लेख मिलता है किन्तु हमारे वैद्योंका कहना है कि हमें उन कानूनोंको देखनेकी फुरसत ही नहीं है। हम इस प्रवृत्तिको अच्छा नहीं समझते।

आज हमारा रजिस्ट्रेशन "प्रदेश इंडियन मेडिसिन बोर्ड" द्वारा होता है इसके लिये प्रत्येक प्रदेशमें "इंडियन मेडिसिन एक्ट" बने हुए हैं, जिनमें बोर्डकी निर्वाचन प्रणाली, बोर्ड तथा वैद्योंके अधिकार दिये हुये हैं, किन्तु कितने वैद्यों ने इन्हें पढ़ने या जाननेकी कृपा की है।

आपके "भारतीय चिकित्सा अधिनियम राजस्थान" सन् ५३ की धारा ५०-५१-५२-५३ के अन्तर्गत आपको क्या क्या अधिकार मिले हैं? राजस्थान मेडिकल एक्ट सन् १७ द्वारा एलोपैथ चिकित्सकोंको क्या क्या अधिकार दिये गये हैं? क्या कभी दोनों कानूनोंको सावने रखकर आपने उनका मिलान किया है? इसी अधिनियमकी धारा ५० की उपधारा २ में वर्णित "इंडियन एक्सीडेंस एक्ट" सन् १८७२ की धारा ४५ तथा धारा

५३ में वर्णित "राजस्थान जावता कौजदारी एक्ट" सन् १८९८ की धारा १७४-२७४ २८०-२८४ तथा धारा ४२ की उपधारा १ के खंड (ख) में उल्लिखित "पब्लिक सेवेंट इन्क्वायरीज एक्ट" सन् १८५० की धारा ५८-६-१०-१४-१५-१६-१९-२० एवं "इंडियन पेनल कोड" की धारा २१ क्या कभी आप सबने पढ़ने समझने या देखनेकी चेष्टा की है? यदि नहीं तो फिर आज के युगमें बिना यह सब समझे वूझे अथवा समय-समयपर निकलने वाले सरकारी आदेशोंसे अपरिचित रहकर क्या हमारी या हमारे व्यवसायकी उन्नति संभव है।

हमारे उत्तर प्रदेशमें पहले ए. और बी. क्लासमें वैद्योंका रजिस्ट्रेशन होता था किन्तु अब वहां कोई क्लास नहीं है। इसी प्रकार आपको भी यह भेद धितानेका प्रयत्न करना चाहिये।

वैद्योंके बीच ऊंच-नीचका भेदभाव मैं अच्छा नहीं मानता। आज "मेडिशिनल टायलेट प्रिपेशन एक्ट" बनाकर हमें आसवारिष्ट बनानेसे भारत सरकार ने प्रतिबन्धित कर दिया है। "मैजिक रेमेडीज एक्ट" द्वारा शर्तिया, गारंटी, रामबाण जैसे शब्दोंका प्रयोग दंडनीय करार दिया गया है। अश्लील विज्ञापन एक्ट बनाकर हमें विज्ञापन करनेसे भी वंचित कर दिया गया है। आवकारी एक्टमें सुधार कर सरकार ने भोग-अफीम, मिश्रित आयुर्वेदकी औषधियोंके लिये लाइसेंस लेनेका नियम बना दिया है, किन्तु लाइसेंस लेनेके फार्ममें लिखा है कि विज्ञापनके लाइसेंस उन्हीं को दिये जा सकते हैं जो उस रोगके विशेषज्ञ हों, जिसकी औषधका वे प्रचार करना चाहते हैं। यह पृथक् पृथक् रोगोंमें विशेषज्ञ होनेका प्रमाण पत्र आयुर्वेदमें कहा मिलते हैं? कौन सी ट्रेनिंगकी व्यवस्था आयुर्वेदमें विशेषज्ञ तैयार करनेके लिये सरकार ने की है। इससे कोई सरोकार नहीं, पर नियम बन गया है, पालन भी करना ही होगा।

हाल ही में भारत सरकारने "ड्रग्स एन्ड कास्मेटिक्स एक्ट" बनाकर १२ मई सन् ६४ से लागू कर दिया है, शीघ्र ही इसके नियम भी लागू होने लगे हैं, इसके पूर्ण रूपसे लागू हो जानेपर आपको

आयुर्वेदकी औषधियाँ बनानेके लिये आयुर्वेदके प्रत्येक वर्गका पृथक्-पृथक् लाइसेंस लेना होगा, औषध निर्माणमें दक्ष वैद्य ही औषधि बना सकेंगे, किन्तु यह दक्षता कैसे आंकी जायेगी, इसे तो सरकार ही जानें, क्योंकि आयुर्वेदमें डी. फार्म या फार्मसिस्ट जैसा पाठ्यक्रम पृथक् नहीं है और आयुर्वेदाचार्य तथा भिषगाचार्य आदि स्नातक औषधि निर्माणमें दक्ष नहीं माने जायेंगे। फिर भी यह दक्षताकी दीवाल खड़ी करके हमारे सामने एक कठिनाई अवश्य उपस्थित कर दी जायेगी और लाइसेंस देनेका डंडा डूंग कन्ट्रोलरको थमाया जायेगा। इधर केन्द्रीय सरकार एक आयुर्वेदकी "फार्माकोपिया" भी बना रही है, जिसके न बनने तक आयुर्वेदकी जिन पुस्तकोंसे औषधियाँ बनानेका आदेश दिया गया है, उनमें "भैषज्यरत्नावली" जैसा प्रामाणिक ग्रन्थ भी नहीं रक्खा गया है, क्या यह एक जघन्य अपराध नहीं है? इसका जो स्वरूप अब तक सामने आया है, वह अत्यन्त भ्रष्ट और निष्ठुर ही है। इसका कारण यह है कि आज जो केन्द्रीय फार्माकोपिया बन रही है उसकी कमेटीमें २१ व्यक्तियोंमें १४ एलोपैथ डाक्टर रखे गये हैं। इनके संकेतपर यदि इसी प्रकारकी यह फार्माकोपिया बनी तो आयुर्वेद चिकित्सा प्रणालीको एक गहरी ठेस लगेगी। आज सरकारने आयुर्वेदके नामपर रिसर्च सेक्टर खोलना भी प्रारम्भ किया है, किन्तु तदर्थ बनाई गई आयुर्वेदिक रिसर्च कौंसिल में ९ सदस्य रखे गये हैं जिनमें ८ एलोपैथीके डाक्टर हैं, ऐसी दशामें क्या इन केन्द्रों द्वारा वास्तवमें आयुर्वेदके सिद्धान्तानुसार अन्वेषण संभव होगा? कहनेको आयुर्वेदमें स्नातकोत्तर शिक्षाका पाठ्यक्रम भी आरम्भ किया गया है, किन्तु वहां भी पल्लवप्राही पांडित्य चल रहा है। और शिक्षाका माध्यम अंग्रेजी रखा गया है। प्रवेश योग्यतामें विश्व विद्यालयके स्नातकोंको स्थान दिया जाता है जिसके कारण बाराणसीमें अधिकांश एम. बी. बी. एस. ने ही प्रवेश लिया है। जिन्हें २५०) रु० मासिक छात्रवृत्ति भी मिलती है। इन्हें स्नातकोत्तर उपाधि अंग्रेजीमें दी जायेगी जिसका नाम "डी. ए. एम." होगा। केन्द्रीय सरकारने वैद्योंके लिये परिवार नियोजनकी ट्रेनिंग

आरम्भ की है, किन्तु शिक्षाका साध्यम अंग्रेजी होनेसे विद्यापीठ तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलनके स्नातक इसका लाभ नहीं उठा सकते। एक ओर जब हमारे देशमें “शुद्ध आयुर्वेद” चलता था, तब सरकारने ही कहा था कि यदि तुम सब मिश्र कोर्स चलाओ तो सरकार आयुर्वेदके लिये सहायता देगी और इन कालेजोंके स्नातकोंके शल्यशालाकथमें सक्षम होनेपर हमारा काम कम खर्चमें चल जायेगा। सरकार उन्हें देहातोंमें नियुक्त कर एक ही चिकित्सा पद्धतिसे सब काम चला लेगी। हमारे वैद्योंने सरकारका सुभाव मानकर ही मिश्रित पाठ्यक्रम चलाया था, आज जब ये स्नातक पर्याप्त मात्रामें तैयार हो गये तो अब सरकार कहती है कि “शुद्ध आयुर्वेद” का पाठ्यक्रम चलाओ। क्योंकि यह मिश्र वाले अच्छे नहीं निकले। पहले जब हमारे यहां ८ वें दर्जेके बराबर प्रवेश योग्यता थी तो सरकारने ही हाई स्कूल करनेका दबाव डाला। जब हाईस्कूल प्रवेश योग्यता हो गई तो केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रिणी राजकुमारी अमृतकौरने कहा कि इंटर प्रवेश योग्यता होनेपर ही वैद्योंको डाक्टरोंके समान अधिकार तथा वेतनस्तर दिया जा सकेगा। आज जब सरकारी आदेशानुसार हम किनारेपर पहुँच गये हैं तो फिर हमें प्रवेश योग्यता हाई स्कूल या प्रथमा करनेको बाध्य किया जा रहा है। किन्तु हमारी समझसे “शुद्ध आयुर्वेद” आयुर्वेदके लिए “शुद्ध पट्यन्त्र” है, क्योंकि सरकार प्रत्येक २००० आवादीके पीछे एक एक उप स्वास्थ्य केन्द्र खोलनेका निश्चय कर चुकी है, जिनमें एलोपैथ डाक्टर ही रखनेका प्राविधान है। सरकार चाहती है कि जब तक यह उद्देश्य हमारा पूरा न हो जाय, तब तक वैद्योंको शुद्ध-मिश्रके नामपर लड़ा कर भुलावा दे दिया जाय, ताकि हमारी स्वार्थ सिद्धि हो जाये। और बादमें कह दिया जाये कि अब वैद्योंको रखनेके लिए भारतमें कोई स्थान ही नहीं है। आज हमारी सरकार एलोपैथीके कम्पाउन्डरोंके सहारे धड़ाधड़ एलोपैथ अस्पताल तथा प्रारम्भिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं उप स्वास्थ्य केन्द्र खोलती चली जा रही है, जिनमें एलोपैथ डाक्टर खोजे नहीं मिलते। हजारों एलोपैथीके अस्पताल खाली पड़े हैं किन्तु यह मिश्रित चिकित्सा

प्रणालीके पंचवर्षीय स्नातक वहां भी नियुक्त नहीं किये जा सकते, पर वहां डेढ़ सालके एलोपैथी पढ़े हुए कम्पाउन्डर नियुक्त हैं, आज वैद्योंका वेतन स्तर तथा उनके औषधालयोंके भवनोंको देखकर हमें लज्जा लगती है। हम सरकारसे पूछना चाहते हैं कि क्या कहीं एलोपैथीके लिए भी ऐसे निकृष्ट भवन हैं। क्या डाक्टर या कम्पाउन्डर भी कहीं बिना कार्टरके या क्वार्टर अलाउन्सके बिना रखे जाते हैं। एक ओर एलोपैथीके अस्पतालोंमें मेहतर तकके लिए कार्टर बना दिये गये हैं, दूसरी ओर राजकीय वैद्य-हकीमोंके लिए सरकार क्वार्टर बनानेको तैयार नहीं है। हमारी शिक्षाके सम्बन्धमें भी केन्द्रीय स्वास्थ्य परिषद् के महाबलेश्वर अधिवेशनमें प्रस्ताव पास हुआ था कि केन्द्रीय सरकार भारतवर्षमें शुद्ध आयुर्वेदका ऐसा पाठ्यक्रम चलायेगी जिसमें किसी प्रकारकी एलोपैथिक शिक्षा या आधुनिक विज्ञानकी किन्हीं पुस्तकोंका समावेश नहीं किया जायेगा। इसी आधारपर केन्द्रीय पाठ्यक्रम समिति बनाई गई थी। किन्तु केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्मित “शुद्ध आयुर्वेद पाठ्यक्रम समिति” ने जब “आयुर्वेद प्रवीण” और “आयुर्वेदाचार्य” नामक दो पाठ्यक्रम बनाकर सरकारको दे दिये तो उसमेंसे “आयुर्वेद प्रवीण” का पाठ्यक्रम स्वीकार कर लिया और “आयुर्वेदाचार्यका पाठ्यक्रम खटाईमें डाल दिया गया। मद्रासके केन्द्रीय स्वास्थ्य परिषद्के अधिवेशनमें “आयुर्वेद प्रवीण” का पाठ्यक्रम स्वीकार करते हुए भोर कमेटीकी आइमें ही एक प्रस्ताव पास किया गया है कि “आयुर्वेद प्रवीण” स्नातक शल्य चिकित्सा विज्ञान और प्रसूति तंत्रका कार्य नहीं कर सकेंगे। ऐसी दशामें यह “शुद्ध आयुर्वेद” का पाठ्यक्रम आयुर्वेदके लिए कहां तक उपयुक्त होगा, इसे तो सरकार ही जाने। एक ओर सरकार एलोपैथीकी पूर्तिके लिए डेढ़ सालका पाठ्यक्रम चलाकर आयुर्वेदके इन पंचवर्षीय स्नातकोंको एम. बी. बी. एस. बनाकर हजम कर जाना चाहती है, दूसरी ओर शुद्ध आयुर्वेदका साढ़े छ वर्षीय पाठ्यक्रम चलाकर आयुर्वेदको धक्का दे देना चाहती है, और कहती है कि “शुद्ध आयुर्वेद” के स्नातकोंको नौकरी नहीं दी जायेगी। सरकारकी यह दुरंगी नीति आयुर्वेदके

लिये घातक नहीं होगी ऐसा समझना भारी भूल है।
वैद्यों द्वारा बार बार मांग किये जानेपर भी
केन्द्रीय आयुर्वेदिक कौंसिल, केन्द्रीय इंडियन मेडि-
सिन एक्ट, अथवा केन्द्रीय आयुर्वेदिक डाइरेक्टोरेट की
स्थापनापर भारत सरकार आज भी विचार करने की
उद्यत नहीं होती, जिसके कारण हमारे वैद्य-हकीमों के
अधिकार केवल अपने प्रान्त तक ही सीमित रह गये
हैं। केन्द्रीय कर्मचारियों की बीमा योजना, रेल-जैल-
मिल आदिमें वैद्यों को कोई स्थान देना सरकार को
आज भी पसन्द नहीं है। "प्रारम्भिक स्वास्थ्य केन्द्र"
तथा "उप स्वास्थ्य केन्द्र" कहीं भी वैद्यों की पृष्ठ नहीं
है। इधर हमारे केन्द्रीय रजिस्ट्रेशन न होनेसे हमारी
मान्यता एक प्रदेश तक ही सीमित रह गई है।
केन्द्रीय कर्मचारी स्वास्थ्य बीमा योजना प्रचलित
होनेसे वैद्यों के व्यवसाय को गहरी ठेस लगी है। अब
दुकानदारों तथा प्राइवेट कर्मचारियों के लिए भी
केन्द्रीय बीमा योजना प्रचलित की जाने वाली है,
किन्तु उसमें भी वैद्य-हकीमों को स्थान मिलने वाला
नहीं दिखाई देता। सरकार के यहां "मैडिकल एन्ड
हेल्थ विभाग" होता है। कायदेमें मेडिकल (अर्थात्
चिकित्सा विभाग) प्रदेश सरकार के आधीन होता है
और हेल्थ (अर्थात् स्वास्थ्य विभाग) भारत सरकार के
आधीन होता है। जहां तक प्रादेशिक सरकारों का
संबंध है वहां तक हमें बहुत कुछ दिखाने को मान्यता
मिली भी है किन्तु केन्द्रीय सरकार ने भारत के स्वास्थ्य
विभागमें भोर कमेटी की सिफारिशों को कार्यान्वित कर
रखा है, जिसमें स्पष्ट लिखा है कि प्रादेशिक सरकारें
यदि चाहें तो आयुर्वेद को मान्यता दे सकती हैं किन्तु
उन्हें सोचना पड़ेगा कि यदि इन चिकित्सा पद्धतियों
को मान्यता दी जाय तो कितने दिन के लिए और किन
शर्तों पर। सरकार की इस प्रकार की खतरनाक रिपोर्ट
पर आप सबको गंभीरता पूर्वक विचार करना ही
होगा। इसे आंखों से ओझल कर देनेसे आयुर्वेद की
किसी भी समस्या का समाधान संभव नहीं है। मुदा-
लियार कमेटी की रिपोर्ट भी आयुर्वेदोन्नतिके मार्गमें
बाधक है।

हमारे ब्रह्मर्षि, आयुर्वेद पितामह, पूज्य जगन्नाथ-
मसाद शुक्ल का इसी लिये कहना है कि आयुर्वेद

अष्टांग नहीं, षोडशांग है। अर्थात् ८ अंग चिकित्सा के
और ८ अंग स्वास्थ्य विभाग के मानकर ही आयुर्वेद के
लिये लड़ना चाहिये। केवल अष्टांग कहनेसे स्वास्थ्य
विभाग हमसे सदा के लिए निकल जायेगा। पूज्य
शुक्लजी का यह भी सुझाव है कि आयुर्वेद के आन्दो-
लन को बलवान बनाने के लिये आयुर्वेद पताका सभी
को हाथमें उठाना चाहिये और उस झण्डे के नीचे
बैठकर आयुर्वेदोद्धार की प्रतिज्ञा करनी चाहिये। आयु-
र्वेद के झण्डे का स्वरूप हमने तथा पूज्य शुक्लजी ने
बहुत पहले ही प्रकाशित कर दिया है। हमारे उत्तर-
प्रदेश की प्रत्येक वैद्य सभाओं के अवसर पर यह तिरंगा
"आयुर्वेद ध्वज" फहराया जाता है। हम चाहते हैं
कि भारतवर्ष की समस्त सभाओं में इस "आयुर्वेद
ध्वज" को फहराया जाये और यह "अखिल भारतीय
आयुर्वेद महासम्मेलन" का आयुर्वेद ध्वज कहलाये।
आज हमारी उन्नत शिक्षा दीक्षा के लिए प्रत्येक प्रदेश
में स्वतन्त्र चार्टर्ड आयुर्वेदिक विश्वविद्यालयों का होना
नितान्त आवश्यक है, किन्तु सम्पूर्ण भारत में केवल
भांसी आयुर्वेद विश्वविद्यालय ही एक ऐसी संस्था
है, जिसे प्रदेशीय तथा केन्द्रीय सरकार से मान्यता
है और सहायता भी मिलती है। लेकिन उसके लिए
भी सरकार कानून बनाकर चार्टर्ड युनिवर्सिटी न
बनाना चाहती। आपके प्रदेश में तो मुख्यमंत्री जी
आयुर्वेद के कट्टर प्रेमी हैं और राज्यपाल जी भी, इस
लिये आपके प्रदेश में आयुर्वेद का स्वतंत्र मंत्रालय
है और डाइरेक्टोरेट भी जिसकी प्रशंसा किये बिना
नहीं रहा जा सकता। किन्तु शिक्षा के विषय में जैसा
आदर्श व्यवस्था यहां होनी चाहिये थी वैसी अब तक
नहीं हुई है, और न ही स्वतंत्र आयुर्वेद विश्वविद्या-
लय बनने की आशा ही बलवती दिखाई देती है।
आपके यहां अब तक वैद्य-हकीमों को "रजिस्-
मेडिकल प्रेक्टिशनर" लिखने का फैसला नहीं कि-
जा सका है, यह बड़े खेद की बात है। आपके य-
"राजस्थान इंडियन मेडिसिन बोर्ड" को भी पू-
अधिकार नहीं दिये गये हैं, और न ही वैद्यों का वेत-
स्तर ही एलोपैथ डाक्टरों के समान घोषित किया ग-
है। ऐसी दशा में आपकी सरकार आयुर्वेद के लिये
कुछ कर रही है उससे पूर्ण सन्तोष कदापि नहीं कि

जा सकता। इधर हमारे अखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठकी भी बड़ी दुर्दशा है। उसकी कहीं मान्यता है, और कहीं है ही नहीं। कहीं है तो कटती जा रही है। यह सब दोष वैद्योंका ही है। क्योंकि यह संस्था वैद्योंकी ही है। और इसके हजारों स्नातक आज भारतवर्षमें काम करते हैं और उनमेंसे प्रत्येक जोड़में कुछ न कुछ सदस्य भी है। इसीलिये उन्हें हर उपाय से अपनी संस्थाकी रक्षा करनी चाहिये और उसे उन्नत बनानेका प्रयत्न भी करना चाहिये। पीछे सरकारके मनाये हुए कुछ कानूनोंका परिचय हमने दिया है, किन्तु डेन्जर्स एक्ट, ड्रग एक्ट, ड्रग कंट्रोल एक्ट, एपेन्डिक्स डिस्सीज एक्ट, ओपियम एक्ट, प्लाइजंस एक्ट, स्नाटमी एक्ट, आबकारी एक्ट, पेटेन्ट मेडिसिन एक्ट, प्रोप्राइटरी एक्ट, रजिस्टर्ड पेटेन्ट एक्ट आदि आदि कानूनोंकी जानकारी एवं उनके अनुसार निकले हुए सरकारी आदेशोंका जानना और अपनी अपनी संस्था व अपने उद्देश्योंकी रक्षा करना हम सबका परम कर्तव्य होना चाहिये। हमें सरकारके छल छद्म भरे षड्यो और उपर्युक्त समस्त कानूनों तथा उनके नियमों से सदैव सावधान रहना चाहिये। हम चाहते हैं कि आपसके मतभेद भुलाकर आप एक संगठित मोर्चा बनायें। जब आपसमें लड़ने और एक दूसरे पर चिड़ उछालनेका समय नहीं रहा है। हमने उत्तर-प्रदेशमें जहां तीन तीन प्रदेशीय वैद्य सम्मेलन थे, उन्हें भी एक करा दिया है। "अखिल भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रचारक संघ" जिसके अध्यक्ष संस्थापक हैं महासम्मेलनके हितमें उसे हमने स्थगित कर दिया है। हम चाहते हैं कि आप सब मिलकर आयुर्वेद महासम्मेलन-सुधारें और उसमें आयुर्वेद सेवकोंको उदारता पूर्वक स्थान दिलाकर एक शक्तिशाली संस्था बनायें, जिससे कि हमारे वैद्य विधानसभा, विधान परिषद और लोकसभामें आसानीसे पहुंचाये जा सकें। हमारे लिये इन स्थानोंमें सीटें सुरक्षित की जा सकें। सब आयुर्वेदकी लड़ाई वैज्ञानिकताके साथ साथ जनैतिक ढंगसे भी लड़ना चाहते हैं।

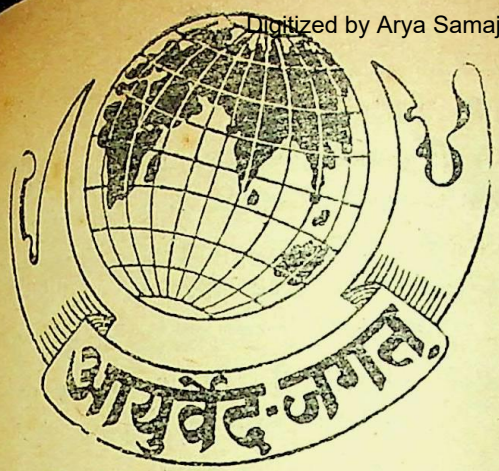
महोदय,

राजस्थान सरकार द्वारा अब तक की गई आर-

वेदकी सेवाओंसे मैं अत्यधिक प्रभावित हूं। आपको सरकार राजस्थान विश्वविद्यालयके अन्तर्गत आयुर्वेदिक फेकल्टी खोलने जा रही है यह बड़ा ही शुभ कार्य है। यहांकी सरकार संस्कृत-ज्योतिष तथा आयुर्वेदका एक संयुक्त विश्वविद्यालय बनानेकी योजना बना चुकी है यह प्रसन्नताकी बात है, किन्तु हम चाहते हैं कि यह कार्य शीघ्र कार्यान्वित किया जावे। अब तक प्रत्येक प्रदेशमें आयुर्वेदके राजकीय औषधालय केवल गांवोंमें ही खुलते हैं किन्तु राजस्थान सरकारने शहरोंमें आयुर्वेदके बड़े बड़े आयुर्वेदिक अस्पताल खोलकर आयुर्वेदका बड़ा ही उपकार किया है। राजस्थानके समस्त आयुर्वेदिक औषधालय आयुर्वेद निरीक्षकोंके देखरेखमें चलाये जाते हैं। प्रत्येक जिलेमें आयुर्वेदके निरीक्षकोंका कार्यालय खोलकर उन्हें जो अधिकार दिये गये हैं उससे हमारे उत्तर-प्रदेशके आयुर्वेद निरीक्षकोंको अधिकार दिलानेमें हमें बहुत बड़ा बल मिला है किन्तु हम नहीं समझ पाते कि राजस्थान सरकार आयुर्वेदके एक क्लास चिकित्सकों, आयुर्वेद निरीक्षकों एवं राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालयके अध्यापकोंको अब तक गजेटेड आफिसरका पद तथा उच्चतर वेतन मान देनेमें क्यों हिचक रही है। हमें यह भी पता चला है कि केन्द्रीय प्रारम्भिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा उप स्वास्थ्य केन्द्र जहाँ कहीं यहां खुलते हैं वहां से राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालयोंका स्थानान्तरण कर दिया जाता है। हमारी उत्तरप्रदेश सरकारने इस क्रिया कलापपर कड़ाई के साथ प्रतिबन्ध लगा दिया है। इसी प्रकार आपको यहां भी इस विषयमें सरकार से आदेश निकलवाकर चलते हुए सरकारी आयुर्वेदिक औषधालयोंके स्थानान्तरणपर तुरन्त रोक लगवानेका प्रयत्न करना ही चाहिये। प्लानिंग विभागकी यह नीति आयुर्वेदके लिये घातक है। इसके रोकनेका शीघ्र प्रयत्न करना चाहिये।

इसीके साथ हमारी यह भी अभिलाषा है कि हमारे उत्तरप्रदेश की भांति राजकीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सकों तथा कम्पाउण्डरोंका संघ यहां भी पृथक् पृथक् स्थापित करनेकी चेष्टा की जाये। जिससे कि ये अपनी मांगों स्वतंत्र रूपसे समय समय-

(सोप, पृष्ठ ११० पर देखें)



वैद्योंका वेतन बढ़ानेकी मांग

अजमेर (निस)। तृतीय राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन वैद्योंकी विभिन्न मांगोंके सम्बन्धमें कई प्रस्ताव पारित करनेके पश्चात् सोमवारको समाप्त हो गया। एक प्रस्ताव द्वारा केन्द्रीय आयुर्वेद परिषदकी स्थापना की मांग की गयी। केन्द्रीय सरकार इस परिषदकी सलाहसे एक आदर्श आयुर्वेद शिक्षण संस्थानकी स्थापना करे।

आयुर्वेद चिकित्सामें उपयोग होने वाली मूल औषधियोंको शुद्ध रूपमें प्राप्त करानेकी सरकार व्यवस्था करवाये।

राज्य सरकारसे वैद्योंके वेतनमें वृद्धिकी भी मांग की गयी।

आयुर्वेदालंकार डिग्रीकी मान्यता

जयपुर १ अप्रेल (नभाटा)। राजस्थान सरकारने गुर्गुलु कांगड़ी विश्व विद्यालयकी आयुर्वेदालंकार डिग्रीका एक सालके व्यवहारिक अनुभवके साथ मान्यता दे दी है।

राज्य सरकारने राजस्थान तकनीकी शिक्षा मंडलके ड्राफ्टमैनशिप सिविल सर्विफिकेटको भी अस्थायी तौरपर मान्यता दी है।

रतनगढ समाचार

रतनगढ (राजस्थान) में जो सुप्रसिद्ध श्री धन्वन्तरि मन्दिर है उससे वैद्य पं. घनश्याम जी ने त्याग पत्र दे दिया है और अपना निजी औषधालय खोल लिया है अब वे धन्वन्तरि मन्दिरकी सेवा नहीं करेंगे।

आयुर्वेद अनुसंधान सम्मेलन

देश विदेशके ५०० पांच सौ सुप्रसिद्ध विद्वान वैद्य आयुर्वेदिक रूपसे गर्मियोंमें सेवा सदन आयुर्वेदिक

कालेज देहरादून एकत्रित होकर निरन्तर ८ आठ दिन तक जनोपयोगी निम्न विषयोंपर विचार विमर्श करेंगे।

१. जनताके विगड़ते हुए स्वास्थ्यकी रक्षा।
२. देशमें बढ़ती हुई जन संख्याकी रोक थाम।
३. दीर्घायुकर प्राचीन रसायनोंकी पुनः खोज।
४. सरकारका अनुराग आयुर्वेदमें कैसे हो।
५. आयुर्वेदका समयोपयोगीकरण क्या हो।
६. राज्याश्रय विना आयुर्वेदोन्नति संभावना।
७. पांच लाख रजिस्टर्ड वैद्योंके अधिकारोंकी मांग।
८. देशी चिकित्सा बोर्डों, फैकल्टी, कौंसिल डाइरेक्टरोंके कार्य एवं अधिकार तथा योजनाओंमें सरकार और मंत्रियोंकी उपेक्षावृत्तिसे हुई हानियोंपर विचार।

सम्मेलन उद्घाटनार्थ प्रधान मन्त्री श्री शास्त्रीजी तथा विविध सम्मेलन प्रधान पदके लिये स्वास्थ्य मंत्रियोंसे प्रार्थनायें की जा रही हैं। कार्य सफलता हेतु रेलके रियायती टिकेट, आकाशवाणी द्वारा नित्य संवाद वहन, जड़ी बूटी तथा रस धातुमारणके चमत्कार, निराश रोगियोंकी चिकित्सा व्यवस्था प्रभृति कार्य पूर्ति प्रयत्न होंगें।

यह सम्मेलन धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक विचारोंसे दूर हो केवल आयुज्ञानका होगा। देश सुधारक व्यक्ति विशेष कर अपने वैद्य बन्धुओंसे इस स्वास्थ्य यज्ञमें सम्मिलित हो पूर्ण सहयोगकी आशा की जाती है।

इच्छुक व्यक्ति अभीसे स्थान सुरक्षितार्थ पत्र व्यवहार करें।

निवेदक—

जगन्नाथन बहुगुण

मन्त्री-सेवा सदन आयुर्वेदिक कालेज, देहरादून

पंजाब आयुर्वेदिक बोर्ड और विद्यापीठ

सम्पादकजी—पंजाबमें वैद्यों और हकीमोंकी रजिस्ट्रेशनके लिए आवेदन पत्र तीन फरवरी तक मांगे गये। कोई भी व्यक्ति सिर्फ हल्फियाता बयान देकर अपना रजिस्ट्रेशन करवा सकता था। परन्तु खेदकी बात है कि पंजाब आयुर्वेदिक बोर्डने निखिल भारत वर्षीय आयुर्वेदिक विद्यापीठकी परीक्षाओंको मान्यता नहीं दी। आजसे एक मास पूर्व तो भिषक्वालोंकी रजिस्ट्रेशन 'ए' क्लासमें की गयी थी, और अब आयुर्वेदिक परीक्षा की मान्यता भी समाप्त कर दी है।

महासम्मेलन और विद्यापीठके पदाधिकारी इस बारेमें जल्द ही कदम उठाये, वर्ना पंजाबमें विद्या-पीठके असंख्य स्नातकोंके साथ अन्याय होगा।

वैद्य दामोदरसिंह शास्त्री, सचिव यूनानी मंडल फाजिलका।

सरकार आयुर्वेद और यूनानी पद्धतिके १५ हजार स्नातकोंकी सेवाओंसे लाभ उठाए।

आयुर्वेद और यूनानी पद्धतिके रजिस्टर्ड ५ लाख चिकित्सकोंकी दयनीय आर्थिक स्थितिको सुधारने की ज़म्मेदारी सरकार की।

केन्द्रीय उपमन्त्री श्री नत्कर ने कहा है कि आयुर्वेदको बढ़ावा देनेके लिए सरकार जो कर रही है वह इसीसे अनुमान लगाया जा सकता है कि तीसरी योजनामें आयुर्वेद औषधि अनुसंधानके लिए ३ करोड़ रु. रखे गये थे जिसे बढ़ाकर चतुर्थ पंचवर्षीय योजनामें ९.८ करोड़ किया जा रहा है। उपमन्त्री महोदयके इस विचारसे सहमति प्रकट करते हुए सरकारके इस विचारको स्तुत्य ठहराते हुए भी इतना अवश्य कहेंगे कि यह विज्ञान जिस पर केवल ९.८ करोड़ रुपया औषधि अनुसंधानके लिए रखा है बहुत ही थोड़ा है। आयुर्वेद विज्ञान पर अनुसंधान एक ऐसा विस्तृत क्षेत्र है जिसमें जितना उतरा जायेगा उतना ही गहरा नजर आयेगा।

देशमें ढाई हजार तरहकी दवायें आयुर्वेद, यूनानी और घरेलू प्रचलित हैं। केन्द्रीय आयुर्वेद अनुसंधान परिषद् और मैडिकल रिसर्च कौंसिल मिलकर इन दवाओंके बारेमें जानकारी इकट्ठी कर रही है और मानक भी तैयार कर रही है। सरकार यह भी विचार रखती है कि आयुर्वेद अनुसंधान केन्द्रोंपर देशी और आधुनिक चिकित्सा पद्धतिके जानकारोंके दल मिलकर काम करेंगे। यह एक सराहनीय कदम है। परन्तु सरकारको इतना ध्यान अवश्य रखना पड़ेगा कि इन केन्द्रोंकी खोजोंसे लाभ उठानेका अधिकार सिर्फ आधुनिक पद्धतिके डाक्टरों तक ही सीमित नहीं रह जाय।

राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश और दक्षिण भारतके राज्योंमें आयुर्वेदकी ओर काफी ध्यान

दिया जा रहा है।

किन्तु कुछ बातें ऐसी हैं जिनपर सरकारको विचार करना और अवश्य ध्यान देना चाहिए। अगर ऐसा नहीं हुआ तो आयुर्वेद चिकित्सा पद्धतिके विकासके मार्गमें संकट आयेगा।

देशके प्रत्येक राज्यमें डाक्टरोंकी कमी है और लगभग एक तिहाई सरकारी अस्पताल डाक्टरोंके बगैर हैं जहां कम्पाउण्डर ही काम कर रहे हैं किन्तु सरकार आयुर्वेद और यूनानी पद्धतिके १५ हजार स्नातकोंकी सेवाओंसे लाभ उठानेकी बात नहीं सोचती। आयुर्वेदिक यूनानीके रजिस्टर्ड चिकित्सकोंकी संख्या लगभग ५ लाख है किन्तु उनकी आर्थिक स्थिति बड़ी दयनीय है। जिसकी सीधी ज़म्मेदारी सरकार पर है। जब तक डाक्टरों और वैद्योंके वेतन स्तर भेदको खरम नहीं किया जावेगा तथा व्यवहारिक दृष्टिसे उन्हें समानता नहीं दी जायेगी तब तक आयुर्वेद क्षेत्रमें प्रतिभाका विकास कैसे संभव है? आयुर्वेद एक विज्ञान है जो स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है। उस विज्ञानको जिसका प्रादुर्भाव भारतमें हुआ और भारतीय सरकार उस विज्ञानके आचार्यों अनुयायीओंको आधुनिक विज्ञानकी श्रेष्ठताके मिथ्या चकाचौंधमें पड़कर हर तरह भेद बर्ते तो यह उस सरकारकी स्वयं की ज़म्मेदारी है एक विज्ञानको हतोत्साहित करनेकी, हालांकि आयुर्वेद विज्ञान बगैर किसी मददक बढ़ा और लोकप्रिय रहा है परन्तु सरकारको अपनी ज़म्मेदारीसे नहीं मुकरना चाहिये इसीमें आयुर्वेद विज्ञानका हित निहित है।

(पृष्ठ ५०८ का शेष)

पर सरकारी दृष्टिकोणके अनुसार सरकारके समर्थ रखते रहें और अपनी उन्नतिके लिये पृथक् ही सरकारी नियमोंकी रक्षा करते हुए अपने विचार व्यक्त कर सकें। इन्हें अपना अधिवेशन करनेके लिये कम से कम ४ दिनका अवकाश प्रतिवर्ष प्रदान किया जाना चाहिये जैसा कि उत्तरप्रदेशमें भी होता है। इससे सरकार और सरकारी वैद्य समाज दोनोंकी ही लाभ होगा और अपनी वास्तविक उन्नतिके लिये वे राजनीतिके दलदलसे अलग रहकर जनताकी

— बसराई ऊंचे मुक्ता प्रधान द्रव्योंसे निर्मित —

मुक्तापञ्चामृत रस

इक्षुरस, गोदुग्ध, विदारी, शतावरी आदि ताजी वनस्पतियों की ४० भावनाओं और पुष्टीसे निर्मित किया गया है। यह रस जीर्णज्वरके लिये अद्भुत लाभ करता है तथा अनुपान भेदसे अनेक रोगोंको नष्ट करता है। कास, श्वास, शोष, रक्तपित्त एवं हस्तपादादिके दाहका शमन करता है। रस, रक्त, मांस, अस्थि, शुक्र और ओजकी क्षीणताको दूर कर शरीरके बल, वर्ण और उत्साहको बढ़ाता है। मस्तिष्क, हृदय और फेफड़ोंको बलदायक होनेसे ग्रीष्म ऋतुमें अत्यन्त शान्तिदायक है।

मात्रा—१ से २ रत्ती, पिप्पली चूर्ण १ से २ रत्ती व मधुके साथ दिनमें दो या तीन बार।

अनुपान—दुग्ध।

मूल्य—१० ग्राम ३५-००, ५ ग्राम १७-६५, २ ग्राम ७-१५, १ ग्राम ३-६५।

❀ भवनकी औषधियां तथा पुस्तकें भारतमें सर्वत्र मिलती हैं ❀

कैसरनाशक वटी

अयसे भी भयंकर, कुण्डसे भीषण, संसारके अधिक रोगियोंमें व्यापकरूपसे विद्यमान कैसर (कर्कटार्बुद) नामक घोर व्याधिसे मुक्ति पावेके लिये भवनने अनुभव के बाद हीरा (पुरुषसंज्ञक) भस्म तथा स्वर्णभस्मके साथ अति प्रभावशाली अन्य दवाओंका मिश्रण बनाकर ये वटियां बनाई हैं।

इस मारक रोगके लिये यह औषधि उत्तम लाभकारी सिद्ध हुई है। कैसरकी प्रथम व द्वितीय अवस्थामें पूर्ण लाभ करती है।

मात्रा—१ या २ गोली; घृत, गहूँके साथ अथवा केवल दूध या जलके साथ।

मूल्य—२ ग्रामकी शीशीका ६-१५ न. पै. पेकिंग पोस्टेज पृथक्।



आयुर्वेद जगत में दद्याति प्राप्त ग्रंथ
 उपलब्ध स्वरूप व
 सिद्धि प्रयोग संग्रह
 नवीन संस्करण

रामबाण-रस

चिकित्सा तत्त्व
 प्रदीप
 द्वितीय संस्करण



शारङ्गोक्त
 औषधि
 निर्माण करने
 का एक मातृ
 रसा

आमातिसार
 तथा
 आमसंग्रहणी

कृष्ण

पादपिप्पली
 गोशक
 कृष्ण गोपाल
 का

कृष्ण
 दंत
 मंजन

दंत द्रव्याव बल
 कष्ट दंतों को
 मजबूत बनाता है



रस र ग ज कि त आ ब ल व र्ध क
 ये हि क त आ उ त म त हि क
 च्यवनप्राश (अस्वगंधुक)

गौणार्थिक
 पारिश्रमी,
 भौतार्थ प्रमाधन
 युक्त

ब्राह्मी
 औषका
 तैल

का अमदा
 सेवन करें

तत्काल छुटकारा पाइये
 का सेवन कर पुत्रसु

भासिक-पत्रिका
 'स्वस्थ' के मुख पत्र

कृष्ण गोपाल
 कालिका कृष्ण



आयुर्वेद भवन
 गोपाल (अजमेर)



स्वास्थ्य

अंक १०]

ज्येष्ठ शुक्ल २ विक्रम सं० २०२२

[जून १]

आयुर्वेदकी गति रुकेगी नहीं

बिहारकी सूचनामंत्रिणी श्रीमती सुमित्रादेवीके उद्गार

पटना वैद्य समा द्वारा आमन्त्रित होकर, अध्यक्ष पदसे बोलती हुई श्रीमतीजीने कहा, आयुर्वेदपर आज पर्याप्त ध्यान भले ही न दिया जा रहा हो, किन्तु उसकी गति रुकेगी नहीं। उचरोत्तर बढ़ती ही जावेगी।

आयुर्वेदका विकास और सम्मान वैद्य समाजकी साधना और निष्ठापर निर्भर है। इसकी उन्नति और अवनति वैद्योंके हाथमें है। (सुमित्रादेवी बिहार सूचना मंत्रिणी)

मैं आयुर्वेदीय चिकित्साके असीम गुणोंसे प्रभावित होकर उसका अध्ययन करने भारत आया हूँ। —डा० जार्ज ओशप्पा

मैं जानता हूँ कि भारतीय चिकित्सक उच्चतम फिजीशियन और सर्जन थे।

—एलीफिष्टन

— परामर्श मण्डल —

वैद्य श्री प्रेमशंकरजी भिषगाचार्य
संचालक आयुर्वेद विभाग राजस्थान ।
वैद्य श्री नित्यानन्दजी आचार्य,
पिलानी ।

वैद्य श्री रमेशचन्द्रजी व्यास
भिषगाचार्य ध० अजमेर ।
वैद्य श्री अम्बालालजी जोशी
साहित्यायुर्वेदरत्न, जोधपुर ।

विषय-सूची *

| क्रमांक | विषय | लेखक | पृष्ठांक |
|---------|---|------------------------------------|----------|
| १. | सद्बोध | वैद्य श्री कपूरचन्द्रजी विद्यार्थी | ५११ |
| २. | घरेलू उपचार विधियाँ | श्रीमती सुमित्रादेवी | ५१२ |
| ३. | आजकलकी सभाएँ और सम्मेलन | सम्पादकीय | ५१३ |
| ४. | अनमोल चुटकले | श्री प्रिय जैन | ५१६ |
| ५. | शरीरशास्त्र तथा मानसशास्त्रमें भेदाभेद | डा० श्री साहबसिंहजी आर्य | ५१९ |
| ६. | प्रतिश्याय | डा० श्री निशिकान्तजी | ५२० |
| ७. | उत्तम सुखके भूखे हो तो सच्ची साधना कीजिये | वैद्य श्री मन्मथलालजी शर्मा कौशिक | ५३३ |
| ८. | रक्तचिकित्सा और मांसचिकित्सा | श्री सीतारामजी जोशी | ५३५ |
| ९. | नेत्र-रक्षा | श्री शङ्करलालजी शर्मा | ५३९ |
| १०. | मंदाग्निकी वैज्ञानिक चिकित्सा | वैद्य श्री मोहनलालजी | ५४५ |
| ११. | सबसे बड़ा रोग और उसकी चिकित्सा | श्री सीतारामजी जोशी | ५४७ |
| १२. | आयुर्वेद जगत् | | ५५३ |

आवश्यक निवेदन

हम अपने ग्राहकों एवं सभी एजेंटोंको यह सूचित करते हैं कि १ अप्रैल १९६५ के ग्राहक सूचीपत्रमें भावमें अन्तर रहा है। अतः पाठक वृन्द सुधा कर भाव देखकर ऑर्डर दिरावें।

| क्रमांक | नाम औषध | १० ग्राम | ५ ग्राम | २ ग्राम | १ ग्राम | ५०० मि.ग्रा. | २५० मि.ग्रा. |
|---------|---------------------------------------|------------|-----------|-----------|-----------|--------------|--------------|
| १८८ | सूतिकाभरण रस | | ... | | ... | १-४० | |
| २३३ | उपदंशसूर्य (दू० बि०) | | | ०-४० | | | |
| ३४१ | रक्तरोधक वटी | | १-१० | | | | |
| ६०४ | व्यवनप्राशवलेह (सुवर्ण आदि भस्मयुक्त) | १००० ग्राम | ५०० ग्राम | २५० ग्राम | १०० ग्राम | ५० ग्राम | २५ ग्राम |
| | | | २३-०० | १२-०० | ५-०० | | |
| ६२३ | चन्दनादि तैल (दू० बि०) | ४५४ लीटर | २२७ लीटर | ११४ लीटर | ०५७ लीटर | ०२८ लीटर | |
| ६३० | पञ्चगुण तैल | १०-१० | ५-३० | | | | |

एजेंट सूचीपत्रमें निम्न सुधार करें

| व्यवनप्राश (सुवर्ण आदि भस्मयुक्त) | ५०० ग्राम | २५० ग्राम | १०० ग्राम |
|-----------------------------------|-----------|-----------|-----------|
| | १८-४० | ९-६० | ४-०० |

व्यवस्थापक—कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन कालेड़ा

श्रीधन्वन्तरये नमः



स्वास्थ्य



(स्वास्थ्य संपादन और सुधार मन्त्रालय का मार्ग दिशक पत्र)

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः ।

यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

प्रधान संपादक—

वैद्य सीताराम शर्मा जोशी

सह संपादक—

वैद्य वद्रीनारायण शर्मा

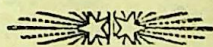
वर्ष १२. अङ्क १०]

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

[जून १९६५

—= सद्वोध =—

लेखक—वैद्य कपूरचन्द्र विद्यार्थी दमोह (म० प्र०)



देख दुखी जन हीनता मत कीजे उपहास ।

प्रतिक्षण परिवर्तन लिए लिए विकास विनाश ॥१॥

वे जन जीवित ही मरे हैं कर्त्तव्याभाव ।

उनको कहिये अधमरे जिन आलस्य स्वभाव ॥२॥

समय रहत चेते सजन बिगड़े काज बनाँय ।

दुर्जन दुर्गति को लहें शिर धुन धुन पछताँय ॥३॥

जन्में जब दो जन लगे मर हो लग हैं चार ।

ऐसी करनी कर चलो लगे नाहिं विकार ॥४॥

जो बिगड़ा सो बनेगा बना बिगड़वे वीर ।

चिन्ता करते मूढ़ जन चतुर बनहिं गंभीर ॥५॥

मानव वह जो मनन कर हो कर्त्तव्यारूढ़ ।

ठोकर खा सँभलत गिरत जन निश्चय कह मूढ़ ॥६॥

घरेलू उपचार विधियाँ

लेखिका—श्रीमती सुमित्रा देवी अग्रवाल "विशारद"

(१) असगंध, सिंघाड़ा, आँवला, अशोककी छाल और शीतलचीनी समभागका चूर्ण बनाकर दो मासे दिनमें दो बार दूधके साथ सेवन करनेसे प्रदर रोगमें लाभ होता है।

(२) दहीके साथ बालोंको धोनेसे बालोंकी जड़ें कोमल हो जाती हैं।

(३) खिरनीके पत्तोंको दूधमें पीसकर मुखपर लगानेसे मुँहके मुँहासे तथा काले दाग नष्ट हो जाते हैं।

(४) शीतल चीनीका चूर्ण चार-चार माशा दिनमें दो बार दूधके साथ सेवन करनेसे शरीरका दर्द, सुस्ती तथा पेशाबकी बीमारियाँ दूर हो जाती हैं।

(५) रातमें भिगोये गये त्रिफलाको प्रातः काल छानकर पी लेनेसे शौच जानेमें कष्ट नहीं होता तथा पेटका दर्द दूर हो जाता है।

(६) शतावरका चूर्ण दो माशाकी मात्रामें दिनमें दो बार सेवन करनेसे वीर्य सुदृढ हो जाता है।

(७) लौंग या बादाम घीमें घिसकर लगानेसे कनपटीका दर्द दूर हो जाता है।

(८) अदरकका रस पाव तोला, तुलसीके पत्ते भाठ, दोपान, चार अड़ूसेके पत्ते सभीका रस निकाल कर शहदके साथ दिनमें तीन बार चाटनेसे खाँसी दूर हो जाती है।

(९) मदारके फूलको सैधानमकके साथ गोली बनाकर देनेसे पेटका दर्द दूर हो जाता है।

(१०) साफ तिल चबानेसे दाँत मजबूत होते हैं और किसी प्रकारका रोग नहीं होने पाता।

(११) सैधानमक और कड़वा तेल मिलाकर अंजन करनेसे दाँतों एवं मसूड़ोंकी पीड़ा दूर हो जाती है।

(१२) नौसादर, कलीका चूना, और सुहागा इन तीनोंको एक साथ जलमें मिलाकर सूँघनेसे बिच्छूका जहर उतर जाता है।

(१३) नींबूके रसमें आँवला पीसकर रातमें सोते समय बालोंमें लेप करनेसे बाल काले लम्बे और चमकीले होते हैं।

(१४) लू लगनेपर प्याजके रसको दोनों कनपटी और छातीपर मालिश करनेसे तुरन्त लाभ होता है।

(१५) यदि मुखमें घाव या छाले पड़ गये हों तो कबावचीनी और मिश्री इन दोनोंको डाढ़के नीचे रखकर चूसनेसे शीघ्र ही आराम मिलता है।

(१६) लौंग भून कर मिश्रीकी चाशनीमें मिलाकर चाटनेसे सूखी खाँसी मिट जाती है।

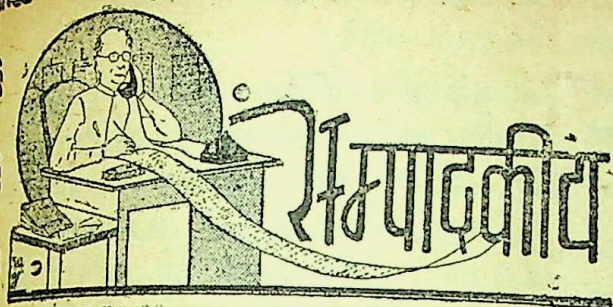
(१७) यदि कान दर्द करता हो तो नमकका पानी छानकर डालनेसे कानका दर्द तुरन्त दूर हो जाता है।

(१८) यदि पतले दस्त आते हों तो प्याजके रसमें थोड़ी-सी अफीम मिलाकर सेवन करनेसे शीघ्र ही आराम मिलता है।

(१९) गौमूत्रमें नमक मिलाकर पिलानेसे बालकों की पसली चलने तथा डुब्बेके रोगमें फायदा पहुँचता है।

(२०) नींबूमें नमक, कालीमिर्च मिला कर गरम कर सेवन करनेसे सिरदर्द दूर हो जाता है।

(२१) यदि दाँतोंसे मवाद निकलती हो तो बादाम के छिलकोंको जलाकर उसमें गेरु और सैधानमक मिलाकर दाँतोंमें मंजनकी तरह मलनेसे मवादका आना शीघ्र ही बन्द हो जाता है।



आजकलकी सभाएँ

और सम्मेलन

इनमें परस्पर मिलाप हो जाता है और कुछ लोग अपनी अपनी दलबन्दी भी कर लेते हैं।

भले ही कोई अपने मनकी बात छिपावे, परन्तु जब आवेशमें आता है तब हृद्गत भाव निकल ही जाते हैं।

एक प्रस्ताव रखता है, उसका दूसरा व्यक्ति अनुमोदन समर्थन कर लेता है। प्रस्तावको कुछ लोग पूरा समझ पाते हैं कुछ नहीं समझते इसलिए मौन रहते हैं।

बहुतसे जानबूझकर विपरीत दशा देखते हुए भी उपेक्षा कर देते हैं कि क्यों आफत मोल लेवें हैं विरोध करेंगे तो फिर प्रश्न उठेगा, पुनः उसका उत्तर देना होगा, चलो पास होने दो अपना क्या जाता है।

कई सभाके टाइमपर नहीं पहुँचते, पीछेसे प्रस्ताव बहुमतसे पास करा लेते हैं, और अपने मनमें मोद भर लेते हैं, मैंने जो प्रस्ताव रक्खा वह सर्व समितिसे पास हो गया। प्रस्तावक और समर्थकोंमें अपना नाम तो छप जावेगा और स्टेजपर खड़े होकर कुछ बोल लिए इसलिए परिचय भी हो गया।

लोग पूछते हैं कि प्रवक्ता कौन व्यक्ति हैं पासमें बैठे व्यक्ति उनका परिचय दे देते हैं।

कुछ पक्ष वाले परिमाणु मात्र गुणोंको पर्वत बनाकर परिचय देते हैं, और कई विपक्षी अवगुणोंको लेकर राईके पर्वत बनाते हैं। दोनों तरहकी चर्चा सुनकर व्यक्ति अपनेको धन्य मान लेता है कि मुझे पाँच पच्चीस लोग जान गये कभी कहीं मिलेंगे तो आदर होगा।

कभी हमारा भी नाम कार्यकारिणीमें आवेगा, निमंत्रण आवेगा, इस बहाने फिर आवेंगे मिलेंगे। करते करते यदि किसीने अधिकारी नहीं भी चुना तो स्वयं मनोनीत मंत्री सदस्य बन बैठेंगे।

कुछ वर्ष भरमें यात्रा और मनोविनोद हो जावेगा कुछ पार्टीमें भोजन कर लेंगे, तो कुछ दोनों परिचितों से मिल लेंगे वहाँ प्रसाद पालेंगे अतिथि सत्कार तो होगा ही, यही सभा और सम्मेलनोंका रूप है।

कई कहते हैं सम्मेलन पक्षियोंका भी तो होता है। एक जगह क्षेत्रमें कहीं धान पड़ा हो तो पक्षी पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिणसे चुगेंपर आजाते हैं और गूँजते हैं, लड़ते झगड़ते भी हैं, थोड़ी देर बाद वे सब दशों दिशाओंमें चारों तरफ अपने स्थानपर चले जाते हैं उड़ जाते हैं वैसे ही सम्मेलन सभाओंमें टीपार्टी वादाविवाद कुछ स्वार्थ सिद्धि करके व्यक्ति अपने अपने स्थानके लिए खड़ा हो जाते हैं। यह पक्षी और मनुष्योंकी सभा समान है। बहुतसे लोग कहते हैं भाई पक्षियोंकी सभा और सम्मेलनसे मनुष्योंकी सभाका सादृश्य मत बैठाओ।

पक्षी तो चाहे गुध्रोंकी सभा हो, चाहे कबूतरोंकी, वे तो चुगाके लिए भोजन मात्रके लिए ही इकट्ठे होते हैं भोजन मिला और उड़ जाते हैं।

परं यहाँ तो सभापति, मंत्री, सदस्य, कोषाध्यक्ष, अलग अलग बनकर सभाकी कार्यवाही सुन्दर रूपसे चलाते हैं।

बाकायदे चुनाव होता है सन्मान पुष्पमाल उत्थानसे स्वागत होता है परस्पर एक दूसरेको सम्मान देते हैं सभापति भाषण

प्रस्ताव, कार्यकारिणीकी कार्यवाही अपने परिश्रमका दिग्दर्शन करते हैं और अनुसन्धान कैसे हो इसका सुभाषण दो। दूसरोंसे पूछते हैं पाठ्यक्रम कैसा हो इसका सुभाषण दो। इस प्रकार दूसरोंकी बातें लेकर अनुसन्धान की पाठ्यक्रमकी दो चार बातें तो जान ही जाते हैं।

ऐसे ही प्रस्ताव करते सुनते सुनते एक दिन स्वयं पण्डित भी तो उस विषयके बन जाते हैं यह लाभ तो होता है।

वेचारे बड़े बड़े अधिकारी शास्त्र देखनेमें फुरसत पावें तो कुछ दिग्दर्शन करावें उन्हें तो अपने अधिकारियों को खुश रखनेके लिए दोड़धूप करनी पड़ती है वे कहाँसे विषयावगाहन करें। कहाँसे अनुसन्धानको समझें और कहाँसे पाठ्यक्रमकी पुस्तकें रचे।

उनका तो काम ही यह है कि इधर उधरकी बातें दूसरोंसे लेकर अपना भाषण करना, दूसरोंको टाइम न देना, अपनी ही आत्मश्लाघा सुनना परस्पर हाथ मिलाना यही तो सम्मेलन है।

सभा सम्मेलनकी बातें सुन एक व्यक्तिने कहा क्या समालोचना निन्दा ही करना जानते हो, अपने ही आपको विद्वान् मानते हो, और सब तो तुम्हारी निगाहमें सभी वैसे (उपेक्षणीय) पुरुष ही नजर आते हैं। परंतु जरा आप भी तो बताइए आप कैसे पधारें।

आप भी पक्षियोंकी सभाके एक पक्षी ही तो हैं। बताइए सुधार कैसे हो अनुसन्धान कैसे हो।

प्रतिवादी कहता है अनुसन्धान तो बड़े बड़े नामधारी विद्वान् ही कर सकते हैं जो अनुसन्धानके योग्य अपनेको समझते हैं और कोई अनुसन्धानमें प्रधान कोई उप प्रधान कोई सहायक होकर भारतमें अनुसन्धाता आविष्कर्ता अपने आपको प्रसिद्ध करते हैं।

मेरी रायमें अनुसन्धानमें वे ही व्यक्ति सफल हो सकते हैं जो दर्शनशास्त्रके विद्वान् हों, व्याकरण वेद उपवेदादिके ज्ञाता हों, चिकित्सक और अनुभवी हों ऐसे संस्कारी संयमी ही अनुसन्धानके योग्य हैं।

अन्यथा तो—नामधारी वेतन और स्थानके लिए प्रयत्न करके जो अनुसन्धान करते हैं वे वेचारे

जानते ही नहीं कि अनुसन्धान क्या चीज है और कैसे करना चाहिये।

मुझे माफ कीजिए—मेरी रायमें अनुसन्धान उपसंहार या निगमनको कहते हैं। जो ज्ञान प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, और उपनय, होनेके बाद निगमन निचोड़रूप है साररूप है वही अनुसन्धान है अनु पीछे संधान जोड़ना अर्थात् कई सन्दिग्धी प्रश्नोंके उत्तरके बाद जो सिद्ध हो वही तो सिद्धान्त तब अनुसन्धान है।

देखिए पर्वतो वहिमान इस पर्वतमें अनि सिद्ध करनेके लिए—स्वार्थपरार्थ जो अनुमान होते हैं, उनमें साधारण शिष्यको समझानेके लिए पञ्च-वयव वाक्योंका प्रयोग होता है—

पहले प्रतिज्ञा करते हैं, जिस बातको खोजना हो उसके लिए आद्य प्रयत्न प्रतिज्ञा है। साध्य क्या है यह बात कही जाती है। फिर उसके लिए (उपपत्ति) हेतु देते हैं, ऐसा होनेसे ऐसा अवश्य है। इसी प्रकार हेतुसाध्यको साथ रखने वाला ऐसे साध्यके और भी स्थलोंमें हम देखते हैं इसलिए हमारा अन्दाजा सही है जैसे अमुक स्थान उदाहरण महानसादि। फिर उदाहरणके साथ पूर्वज्ञानको मिलते हैं तथाचायं अन्तमें निगमन अर्थात् यह निश्चय कह देते हैं, कि इस लिये ऐसा दृढ निश्चय ही है।

जब व्यक्ति पर्वतपर जाकर प्रत्यक्ष देख लेता है तब दृढता आजाती है।

कहनेका तात्पर्य यह है कि—पर्वतो वहिमान यह प्रतिज्ञा धूमात् हेतु योयोधूमवान स सः वहिमान यथामहानसं यह उदाहरण, तथा चायं धूमात्हेतो पर्वतेनापि महिमतता भवितव्यं, यह उपनय, इसके बाद तस्मात्तथा पर्वतो वहिमान्। यह निगमन निचोड़ पूर्व पूर्वज्ञानका अनुसन्धान करते करते सबका सार निकाल लेना यही तो अनुसन्धान है या और कुछ।

जैसे—अयं स्रोतोरोधजो व्याधि इति प्रतिज्ञा सामलक्षणसद्भावात् । यत्र यत्र सामलक्षणानि तत्रतत्र स्रोतोरोधः यथा आमवाते, तथाचायं स्रोतोरोधः स्रोतोरोधजो व्याधि इति प्रतिज्ञा सामलक्षणसद्भावात् । यत्र यत्र सामलक्षणानि तत्रतत्र स्रोतोरोधः यथा आमवाते, तथाचायं स्रोतोरोधः

इत्युपनय । अतएवायं स्त्रोतरोधजो व्याधि इति निगमनम् ।

यहां पूर्व पूर्वज्ञानोंकी शृङ्खलाको जोड़कर एक डर देना, संशय मिटाकर ऊहापोहकर वस्तु तत्त्वको सिद्धकरदेना ही तो अनुसन्धान है ।

इसमें असाधारण धर्मका ज्ञान होना पहले शास्त्र से लक्षणोंसे आत्मोपदेशसे होता है । फिर अनुमान तर्क (निरुपाधि सम्बन्ध ज्ञान) से होता है ।

इतना ज्ञान तो कमसे कम अनुसन्धाताको होना चाहिये ।

आजकल लोग—पाश्चात्य पद्धतिसे द्रव्योंके तैसके मेलको मिलाकर अनुसन्धान करते हैं वह वास्तवमें ठीक सिद्ध नहीं हो रहा है ।

भाई साहब किस किसको समझावें कूएभांग पड़ी है । सभीने अहंकाररूपी मद पी लिया है और उसीसे सब क्रियाएँ व्यर्थका आलाप करते रहते हैं ।

अनुसन्धान करनेके लिए विद्वान् समदर्शी तिलोंभी निर्मोही ही उपयुक्त हो सकते हैं ।

उन्हें ही अनुसन्धानका कार्य सौंपना चाहिये, और वे ही परामर्शीदात्री कमेटीके सदस्य बनने चाहिये । और उच्चकोटिके विद्वानोंसे ही पाठ्यग्रन्थोंका निर्माणकर आयुर्वेदमें अनुसन्धान करना चाहिये । आपही सोचिए आजकलकी सभाओंमें सिवाय प्रस्ताव पास और पदलिप्साकी चर्चाके सिवाय किसने अनुसन्धान किया है कितने व्यक्ति एक सूत्रमें हैं ।

सभी बोटोंके लिए दुखी हैं । किसीको बोट मिलजाते हैं किसीको मृगतृष्णाके कारण व्यर्थमें ही दोड़धूर करनी पड़ती है । निष्पक्षपातसे सोचिए और सभा सम्मेलनोंमें होता ही क्या है आजकलकी सभा और सम्मेलन तो ऐसे ही हैं ।

चलो आपन भी फिर कानपुर वैद्य सम्मेलनमें एक बार और देख आवें, तथ्य होगा सो सामने आजायेगा मेरा और आपका सन्देह भी मिट जावेगा । असलियत तो यह है कि सही सही बात सभीको सुननी और माननी चाहिये ।

सबके देखों देख गतानुगतिक न्यायसे समय और धनका व्यर्थ अपव्यय नहीं करना चाहिये । तथा किसीके कहनेसे बुरा भी नहीं मानना चाहिये । सबमें सब दोष गुण रहते ही हैं । सर्वज्ञ भी कोई नहीं है । और तिलोंभी, निरभिमानी भी बहुत कम मिलते हैं ।

आयुर्वेदकी उन्नति सभा सम्मेलनोंसे ही होते होते होगी । आजकलके सम्मेलनोंमें भी हमारे ही भाई काम करते हैं, अतः मैत्री करुणामुदितोदेशावृत्तिसे लोक व्यवहार चलाना चाहिये, और सबको प्रसन्न रखते हुए अपने मनको भी खिन्न नहीं करना चाहिए । किन्तु प्रसन्न रखना चाहिये । सभा सम्मेलनोंमें जाना चाहिये, सुनना चाहिये, अवसर मिले तो सुनाना भी चाहिये । बुराईसे डरना अच्छाई को नहीं लेना यह भी तो अच्छा नहीं । बुद्धिमान्को चाहिये सुने सबकी, करे मनकी । आखिर बड़े बड़े वैद्योंसे संस्थापित सम्मानित संस्थाको मान देना शुभ कामनासे सहायता करना यह हमारा भी कर्तव्य ही हो जाता है ।

सम्मेलन एक संगठन भी तो है । वैद्य वैद्यत्वसे भाइयोंसे अलग रह कर भी तो शोभा पासकता है ।

सभी अवस्थाओंमें आयुर्वेदोन्नतिके लिए प्रयत्न करना प्रत्येक वैद्यका काम है । मिलकर रहना सबकी सहना थोड़े जीनेके लिए कुछ बुराई न कर भलाई करजाना ही अच्छा है ।

नैद्रा बिन्दु

आँखों की रक्षा के लिये

आँख आना, पानी गिरना, जलन होना, सूजन आना, लाली होना, मल आना, घाव होना, दृष्टि मंद होना, बाहर से कीटाणु या कचरा गिरजाना, पुन्निर्माण होना आदि सब आँखों के विकारोंको दूरकर दृष्टि बचाता है।

कृपा भोपाल आयुर्वेद भवन

डॉ. काले डा. कृपा भोपाल (भोपाल)

अनमोल चुटकुले

लेखक—श्री प्रिय जैन

- १—सोने जैसी देह पै, लादि पापका भार ।
सोचि अरे नर बावरे ! कौन भयौ भव पार ?
कौन भयौ भव पार, कहा लखि 'रामहि' भूला ।
ये जग माया जाल, वृथा सोने पै फूला ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, 'साँस नाँही खोनेकी ।
क्यों नहि 'सुकृत' करै, पाय घड़ियाँ सोनेकी ॥
- २—'भूलें' नाहि कबूलते, करें भूल पै भूल ।
बना लिए सबने यहाँ, ऐसे बुरे उसूल ॥
ऐसे बुरे उसूल, कान किस किसके खींचे ।
एक हि रँगमें रँगै, सभी ऊपर से नीचे ॥
बरनें 'प्रिय' कविराय, मस्त मस्ती में भूलें ।
'आँखें होत न लखें'-सुधारें भूलि न भूलें ॥
- ३—'चीनी' तू ! बैरिन भई, फुड़वावै शिर निच ।
तौहू, 'हाथ परै नहीं'-परेशान है चित्त ॥
परेशान है चित्त, क्यों न हो मुसलिम-ब्रह्मिन ।
'अदा' तेरी मन बसी, 'फिदा' है तो पै जनजन ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, लगाकर मुख तोहि चीनी ।
'आफत' लीनी मोल, भूलि गए नुकता चीनी ॥
- ४—'चीनी-चुपरी' खाइवे, हैं अमीर-उमराव ।
लेकिन, 'खून बहाइवे'-विकें दीन वे भाव ॥
विकें दीन वे भाव, मरें मन ही मन मारें ।
दीन बन्धु भी भूलि, गए दीन तु रखवारे ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, 'उपेक्षा' जितनी कीनी ।
'आस्तीन के सोंप'-बने उतने ही चीनी ॥
- ५—'ठौर' न काहू दीजिये, भले देहु 'मुख कौर' ।
गाँठि बाँधि दृढ़ लीजिये, यहै बात सिरमौर ॥
यहै बात सिरमौर, अन्तमें ठनै लड़ाई ।
'कौरों-पाण्डव' भिटे, ठौर हित भाई भाई ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, किए हू लाख किरोरन-
एक न चले उपाय'-दीजिये काहू ठौर न ॥
- ६—चिड़ियोंसे बीते गए, हो गए हम इनसान ।
वे 'श्रम' करि पेट नु भरें, करें न पर नुकसान ॥
करें न पर नुकसान, इतै है 'व्लैक बजारी' ।
'रोटी औरनु छीन-बने हैं सत्ताधारी' ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, लरें नित परें फजीते ।
'मन चीते' किमि होय, भए चिड़ियोंसे बीते ॥
- ७—'वेईमानी' पैकमरि, बाँधी सब ही लोग ।
वचा न कोई रोगसे, भोग रहे हैं भोग ॥
भोग रहे हैं भोग, न सोचें जोग-अजोगे ।
रचते रहते नित्त, न जानें कितने ढोंगे ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, कुगतिकी यहै निशानी ।
'ईमानी की बात-बढ़ी जग वेईमानी' ॥
- ८—'सस्ती' कोई वस्तु जग, नजरि न आवति भ्राता ।
केवल फिरते 'प्रेजुपेट'-दर दर ठोकर खाता ॥
दर दर ठोकर खाता, कहीं 'सरविस' नहीं पाते ।
'एक बुलावो'-भ्रष्टि हजारों दौरे आते ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, इसे कहते खरमस्ती ।
'राम राज' के भए-भई नहि चीजें सस्ती ॥
- ९—'कुशल' कहाँ है ? आप जो, पूछ रहे है मती ।
जैसे तैसे करि रहे, जीवन आज व्यतीत ॥
जीवन आज व्यतीत, 'शुद्ध मिलता नहि खाना' ।
चली 'मिलावट' खूब-बुरा आ गया जमाना ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, यही कर्मोंका फल है ।
फँसे 'नकल' में सभी, असलमें कहाँ कुशल है ?
- १०—पानी मर गया आँखका, उतरि गई सब लाज ।
सबके सब ही हो गए, 'बेलिहाज-बेलाज' ॥
बेलिहाज-बेलाज, यहाँ तक नौबत आई ।
'रक्तक-भक्षक' भए, भए 'न्याई-अन्याई' ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, गिने अपनी न समानी ।
'मन की मानी करें-मरा आँखों का पानी ॥

११—आए थे यह समझिकें, होंगे यहाँ बुधिमान ।
किन्तु, अन्त निकले सभी, झूठे ही अनुमान ॥
झूठे ही अनुमान, 'ठाठ ठगई के पाए' ।
देखे 'रुस्तम' सभी, एकदम छिपे छिपाए ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, होय क्या अलख जगाएँ?
सुनने वाला कौन—यहाँ जो सुनें सुनाएँ ॥

१२—'चीनी-गुड़-घोड़े गधे'—विके एक ही भाव ।
वानक ऐसे राजमें, कैसे बने जनाव ?
कैसे बने जनाव, 'न्याय करि जाय किनारा' ।
दुखियोंका दुख—जहाँ—न कोई देखन हारा ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, बढें हरकतहि कमीनी ।
'तजि दीजै वहि देश'—नीति ये है प्राचीनी ॥

१३—होय 'बदा' जो भाग्यमें, मिलै आप ही आप ।
'बदा बदी' करियै कहा, भाग्य न बदला जाय ॥
भाग्य न बदला जाय, यहै निश्चय करि जानो ।
'अदा कीजियै फर्ज'—काम है यही सयानों ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, 'तवांगर हो कि गदा हो' ।
'मिलना है बस वही—वही जो भाग्य वदा हो ॥

१४—'जोरावर' सों पेश कलु, चलै न एकहु यार ।
लिख लिख पत्र विरोधमें, भेजत रहो हजार ॥
भेजत रहो हजार, बैठि 'भख' मारत रहियै ।
सिरपै बीतै ताहि—अन्त चुपके रहि सहियै ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, चली नहि एकहु 'हर' से ।
'रुकिमिन' हरि लेगए, आपने जोर—जवरसे ॥

१५—बहती गंगामें पथिक ! लीजै पाँय पखार ।
ऐसा 'अवसर' जनममें, मिलै न बारम्बार ॥
मिलै न बारम्बार, 'धोय लै पाप पुराने' ।
तोहि, 'सीख' दै रहे, तेरे गुरु परम सयाने ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, फेंकि अपयश का भंगा ।
'आत्म शुद्धि' करि लेउ—मिली भागन सों गंगा ॥

१६—होड़ा होड़ीमें भला, नहीं काहुका होय ।
यहै दिखावा मात्र है, फूट रहे हैं बोय ॥
फूट रहे हैं बोय, बनाते सब को अन्धा ।
'अष्टाचारी—छोड़ि सकै, कब गोरख धन्धा ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, बुरी लत पड़ी निगोड़ी ।
लै डूबैगी यही, देश को होड़ा-होड़ी ॥

१७—छोटी छोटी माँग को, होकर के मजदूर ।
'हड़तालें' करि देत हैं, ये दुखिया मजदूर ॥
ये दुखिया मजदूर, 'बुरी होती लाचारी' ।
किन्तु, 'सुम्हसे काम—नहीं लेते अधिकारी' ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, 'पेट को चहियै रोटी' ।
उग्र रूप धरि लेत, बात ही छोटी-छोटी ॥

१८—'भूला उसे न जानियै, सच्चा यहै कलाम ।
'लौटि घरै आजाय जो, होते होते शाम' ॥
होते होते शाम, भूल अपनो को मानें ।
तजै चाल विपरीत, करै सबका सनमानें ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, नीति के है अनुकूल ।
नहीं भूलमें रहौ, सुधारो अपनी भूला ॥

१९—बोलचाल के मोथरे-मायामें मगरूर ।
ऐसे नर पिशाचसों, रहो दूरि ही दूर ॥
रहो दूरि ही दूर, परे भूलिन परछाँही ।
रूखी सूखी खाय, परे रहिये घर माँही ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, 'बेरूखे-रूखे कमाल के' ।
बचते रहिये सदा—न काविल बोल चालके ॥

२०—मति बढ़ावो जानिकें—'फुकों की तादाद' ।
इन ही के परशाद सों, भयो देश बरबाद ॥
भयो देश बरबाद, काम ये कब-कब आएँ ।
बनते काम बिगारि, 'सदा रोड़े अटकाए' ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, भूलिहू शिर न चढ़ावो ।
'मायाचारी' जानि, गुट इनका न बढ़ावो ॥

२१—ये तन-तेल फुलेल सों, कीन्हों नित सुवास ।
ताहि गुलबदन-नैनसुख, पहिनाए सुलिवास ॥
पहिनाये सुलिवास, खूब मलमलके पोसी ।
सो होते 'निर्जोब'—न दरसें, पार परोसी ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, न चेते अजहूँ चेतन ।
'याकी यारी बुरी'—अपावन है अति ये तन ॥

२२—'बलिदानी' बलिदान करि, करत जगत उद्धार ।
अब केवल 'बल' दान करि, करते नर संहार ॥
करते नर संहार, 'दान' विरले ही जानें ।
हँसि हँसि देते 'जान-पान' अपने मनमानें ॥
वरनें 'प्रिय' कविराय, अमर रहि जाय कहानी ।
नजरि न आते आज, कोई ऐसे बलिदानी ॥

२३—बनिया बनिकें बनिज करि, ठगा सकल संसार।
सोचा कबहुँ न, किन्तु यह, खोटा है रुजगार।।
खोटा है रुजगार, चारि दिन यहाँ बसेरा।
संग न जाये कछू, पड़ा रहि जाय बखेरा।।
वरनें 'प्रिय' कविराय, पायके नर भव मनिया।
फैंकि रहा क्यों व्यर्थ ? सोचिरे मूरख बनिया।।

२४—'आखें मूँदे' नहिं चलें, पालें प्रण दे प्रान।
'बलबूते खल दलमलें'—रखें देशकी शान।।
रखें देश की शान, परम 'प्राक्रम' दिखलावें।
दीन जननु अपनाय, परस्पर 'प्रेम' बढावें।।
वरनें 'प्रिय' कविराय, 'मान' सब ही का राखें।
'वापू' सेबित रहें, मूँदिके चलें न आखें।।

२४—जेती लगन कमाइवे, वलैक मेलसे आज।
ऐती यदि प्रभुमें लगे, सुधरें सारे काज।।
सुधरें सारे काज, कामना सब हों पूरी।
मिटै सकल भव व्यथा, मिलै भरपेट मजूरी।।
वरनें 'प्रिय' कविराय, फलै जीवनकी खेती।
प्रगटै 'सुख और शान्ति'-लगन हो प्रभुमें जेती।।

२६—अपना 'आपा' खोयकें, ठगता फिरे संसार।
हाथ पैर कुछ भी नहीं, सोचें नॉहि गमार।।
सोचें नॉहि गमार, 'सरल' बनिये व्यवहारी।
भए चोर कब धनी ? त्यागियै मायाचारी।।
वरनें 'प्रिय' कविराय, बुरा है जगमें ठगना।
'भाग्य' लिखा सो मिलै—परखियै आपा अपना।।

२७—अपनी जहाँ न देह है, तहाँ न 'अपना' कोय।
घर-सम्पति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय।।
पर है परिजन लोय, संग नहीं देत सँगाती।
वृथा बड़ा कर 'नेह'-बनें क्यों आत्मघाती।।
वरनें प्रिय, कविराय, 'कौनपति' किसकी पतनी।
भूल रहा है मूढ ! मान कर अपनी-अपनी।।

२८—तेरा, कुछ नहिं जब यहाँ, वृथारचै क्यों जाल ?
'ममता' बुरी बलाय है, दिलसे इसे निकाल।।
दिलसे इसे निकाल, नहीं क्या सूझै अन्धे।
'परिग्रह' पोट' उतारि, त्यागि सब जगके धन्धे।।

वरनें 'प्रिय' कविराय, चन्द दिन यहाँ बखेरा।
'बिन सुभिरन भगवान'-काज नहिं सरिहै तेरा।।

२६—सत्य कमाई से करो, निज जीवन निर्वाह।
'एक वेर चाहे मिलै'-याकी नहिं पर्वाह।।
याकी नहिं पर्वाह, नैम नियमित से पालो।
दे कितना कोई 'लोभ'-धर्म विपरीत न चालो।।
वरनें 'प्रिय' कविराय, न छोड़ो कबहुँ सचाई।
'प्रान' रहें या जाँय—खाउ अधरम न कमाई'।।

३०—मुख सों कबहुँ भूलिके-झूठ न बोलो बोल।
'ब्रह्मचर्य' पालो सदा, मनमें रहौ अडोल।।
मनमें रहौ अडोल, वचौ 'हिंसा' से हरदम।
'परिग्रह' में मति फँसौ, धारि दृढ़तासे संयम।।
वरनें 'प्रिय' कविराय, बितावो जीवन सुखसों।
मरते मरते-'राम नाम' ही निकसै मुखसों।।



दन्त रोगों को दूर कर
दांतों को मोती समान
स्वच्छ बनाता है।

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा, कृष्ण-गोपाल (अजमेर)

शरीरशास्त्र तथा मानसशास्त्रमें भेदाभेद

॥

(लेखक—कविराज डा० साहबसिंह आर्य 'सोवरन' एम० ए०, एल० टी०
आयुर्वेदरत्न, R. M. P.)

शरीर शास्त्र और मानस शास्त्रके भेदाभेदको स्पष्ट रूपसे समझनेके लिए शरीर शास्त्र और मानस शास्त्र किसे कहते हैं और शरीर शास्त्र एवं मानस शास्त्र किस-किस विषयका अध्ययन करते हैं, इनकी व्याख्या ज्ञातकर लेना अनिवार्य है। यह निम्न लिखित है:—

१-शरीर क्या है ?

विश्वके सभी पदार्थोंको आकार-रूपके कोणसे दो प्रमुख विभागोंमें विभाजित किया जा सकता है।

(१) साकार (Concrete), (२) निराकार (Abstract)। साकार वस्तुओंसे हमारा अभिप्राय उन वस्तुओंसे है जिन्हें ज्ञानेन्द्रियों (आँख, नाक, कान, जिह्वा, त्वचा) द्वारा जाना जा सकता है। निराकार वस्तुएँ हैं जिन्हें ज्ञानेन्द्रियोंद्वारा नहीं जाना जा सकता। उदाहरणके लिए जल, थल आदि साकार; तथा आत्मा, मन आदि निराकार वस्तुएँ हैं। साकार वस्तुओंको पुनः दो भागोंमें विभक्त किया जा सकता है:—

(१) स्थूल और (२) सूक्ष्म। सूक्ष्म पदार्थ वे हैं जिन्हें दृष्टि इन्द्रिय (सूक्ष्मदर्शक यन्त्र द्वारा या) से देखा जा सके, यथा पृथ्वी, जल, पहाड़, पेड़-पौधे आदि। सूक्ष्म पदार्थ वे हैं जो दृष्टि-इन्द्रियके विषय नहीं हैं यथा वायु, शब्द, आदि। स्थूल पदार्थोंको भी दो भागोंमें विभक्त किया जा सकता है:—(१) सजीव और (२) निर्जीव। सजीव पदार्थ वे हैं जिनके अन्दर आन्तरिक शक्ति (आत्मा, जीव या प्राण) होती है, यथा, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मनुष्य आदि। निर्जीव पदार्थ वे हैं जिनके अन्दर वह आन्तरिक शक्ति या शक्ति नहीं होता, यथा घर, सोता, मिट्टी, कपड़ा, चारपाई आदि।

सजीव पदार्थोंके अन्तर्गत ही शरीर आता है। यद्यपि प्राण या जीवरहित शरीर भी होता है, तथापि वह प्राणकी उपस्थितिसे ही निर्मित होता है और प्राण-रहित होनेपर शीघ्र ही विनष्ट हो जाता है। यह बिल्कुल उचित ही है कि प्राण और शरीर दोनों ही दो भिन्न वस्तुएँ हैं, एक नहीं। अपितु प्राण-रहित शरीर हमारे वर्तमान प्रसंगसे सम्बन्धित नहीं है। शरीर प्राण या जीवके रहनेका निवासगृह है। यद्यपि शरीर शब्दसे सभी प्राणियों—पेड़, पौधे, मनुष्य पशु-पक्षी आदि—के शरीरका बोध होता है, तथापि यहाँ शरीरसे हमारा तात्पर्य मनुष्य शरीरसे है। आयुर्वेदके अनुसार शरीरके अन्तर्गत ९ द्रव्य—आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, देश, काल, मन और आत्मा—होते हैं। आयुर्वेदानुसार रस, रक्त, माँस, मेद या वसा, अस्थि, मज्जा, वीर्य एवं ओज धातुओंका निवास; वात, पित्त, कफ दोषों; मल, मूत्रादि मलोंका निवास इनसे निर्मित अंगों-प्रत्यंगोंकी रचना, क्रियाका अधिष्ठान ही शरीर है। आधुनिक विज्ञान (Allopathy) के अनुसार शरीर भिन्न भिन्न संस्थानों, यथा, पचन-संस्थान (Digestive system), श्वास-संस्थान (Respiratory System), जनन-संस्थान (Genitive System) मल विमर्जन संस्थान (Excretory System) आदिकी रचना, क्रिया, विकास, क्षयका अधिष्ठान है।

२-मानस क्या है ?

महर्षि दयानन्दने मनको कभी विक्त न रहनेवाला इकाई या सत्ता माना है। मुख्यतः मानसके विषयमें दो भिन्न मत हैं—(१) पश्चिमीय (२) पूर्वीय या भारतीय। पश्चिमीय मतके अनुसार मन (Mind)

और आत्मा (Soul) में कोई भेद नहीं है। दोनों एक ही हैं। पश्चिमीय मानस-शास्त्रियों या मनोवैज्ञानिकों के अनुसार ज्ञान (Knowing), भावना (Feeling) क्रिया या इच्छा (Willing) करनेवाली इकाईको मन या आत्मा कहते हैं। पूर्वीय या भारतीय मतानुसार मन और आत्मामें अन्तर है। ये दोनों दो भिन्न वस्तुएँ हैं। उदाहरणके लिए कणादिकृत 'वैशेषिक दर्शन' में आत्मा और मन दोनों दो भिन्न द्रव्य माने गए हैं। कपिल कृत 'सांख्य दर्शन' के अनुसार पुरुष (आत्मा) और प्रकृतिके परस्पर संयोगसे ही मनकी उत्पत्ति कही गई है। कृष्णकृत गीताके अनुसार मन ही आत्माकी उन्नति और अवनतिका कारण है, यदि चाहे तो आत्मा मनको नियमित और संयमित कर सकती है। इन उदाहरणोंसे यही सिद्ध होता है कि भारतीय मतानुसार मन और आत्मा दो भिन्न भिन्न सत्ताएँ हैं और उनमें भी मन आत्मापर आश्रित रहता है। कुछ भारतीय ग्रन्थोंमें मनको छठवीं ज्ञानेन्द्रिय माना गया है। यद्यपि मन आत्मासे भिन्न स्वतन्त्र सत्ता नहीं है, तथापि वह आत्मासे अलग है। भारतीय मत अधिक उपयुक्त मालूम पड़ता है। इसकी पुष्टि आधुनिक मानस-रोग-विज्ञान (Clinical Psychology) और मनश्चिकित्सा विज्ञान भी करते हैं। यदि मन और आत्मा एक ही होते, तो मानसिक चिकित्सा (Psycho-therapy) असम्भव थी, क्योंकि मन रोगी होनेपर उसे स्वास्थ्यके लिए तथा संयमके लिए प्रेरित करनेवाला (आत्माके अतिरिक्त) और कोई था ही नहीं। शारीरिक स्वास्थ्य के लिए जीवन-शक्ति (Immunity) जितनी अधिक परमावश्यक है, उतनी ही अधिक परमावश्यक आत्मा मानसिक स्वास्थ्यके लिए है। बिना जीवन-शक्तिके व्यक्तिका शारीरिक स्वास्थ्य नहीं रह सकता। ठीक उसी प्रकार बिना आत्मा मानसिक स्वास्थ्य नहीं रखा जा सकता है। संक्षेपमें ज्ञान, इच्छा और भावना अनुभव करनेवाली इकाईको मन कहते हैं, परन्तु वह आत्माके आश्रित आत्माका सारथी है। मन और शरीरके सम्बन्धकी दृष्टिसे मन शरीरके उक्त वर्णित नौ द्रव्योंमेंसे एक है और शरीरका सर्व

३-शास्त्र क्या है ?

शास्त्रके लिए आधुनिक कालमें 'विज्ञान' शब्दका प्रयोग भी किया जाता है। विज्ञान (Science) की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है, 'Science is a Systematized and well-organized knowledge of a particular department of the world (based on observation and experimental methods)' अर्थात् 'विज्ञान (शास्त्र) (निरीक्षण और परीक्षण विधियोंपर आधारित) संसारके एक विशेष विभागका क्रमबद्ध तथा सुसंगठित ज्ञान (अध्ययन) है।' यदि कोष्ठकके अन्तर्गत आए हुए शब्दोंको इस परिभाषासे निकाल दिया जाय, तो शास्त्रकी प्रस्तुत परिभाषाके अनुसार विश्वके सभी विषयोंका क्रमबद्ध और सुसंगठित ज्ञान विज्ञान (शास्त्र) कहलाएगा। तदनुसार इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र, आयुर्वेद आदि सभी ज्ञान विभाग विज्ञान (शास्त्र) कहलाए जा सकते हैं। क्योंकि ये सभी ज्ञान विभाग संसारके विशेष विभागोंके क्रमबद्ध और सुसंगठित ज्ञान (अध्ययन) परन्तु यदि कोष्ठकके अन्तर्गत आए हुए शब्दोंको इस परिभाषामें जोड़ दिया जाय, तो विश्वके सभी विभागके क्रमबद्ध और सुसंगठित ज्ञानको विज्ञान कह सकते हैं जिसका अध्ययन निरीक्षण और परीक्षण विधियोंद्वारा किया जाता है। परीक्षण विधि बहुत अधिक व्यवहार्य और दुर्लभ है; सभी प्रकारके ज्ञानका अध्ययन इसके द्वारा नहीं किया जा सकता है सभी प्रकारके ज्ञानके अध्ययनमें प्रयोग सम्भव नहीं है; यथा नक्षत्र-शास्त्र (Astronomy) ज्योतिष-विज्ञान (Astrology) आदिमें। निरीक्षणका अर्थ भी व्यापक लेना पड़ेगा और इसके अन्तर्गत केवल दृष्टि-इन्द्रियद्वारा ज्ञान प्राप्त करनेकी निरीक्षण न कहकर प्रत्येक ज्ञानेन्द्रियसे ज्ञान करनेको निरीक्षण कहना पड़ेगा। अन्यथा मानस शास्त्र जैसे महत्वपूर्ण विज्ञानका अधिकतम ज्ञान शास्त्र ही कोटिमें नहीं आएगा, क्योंकि इसमें प्रयोग स्थानपर निरीक्षण और परीक्षण सम्भव नहीं। अतः शास्त्रकी उपर्युक्त परिभाषाको व्यापक

लेनेसे मानसशास्त्र भी एक शास्त्र या विज्ञानकी कोटिमें आता है। क्योंकि वह मानसिक क्रियाओंका क्रमबद्ध एवं सुसंगठित रूपसे अध्ययन करता है, साथ ही मानसिक क्रियाओंका अध्ययन या अनुभव ज्ञानेन्द्रियों द्वारा किया जाता है। शरीरशास्त्रका अध्ययन तो निरीक्षण और परीक्षण विधियोंद्वारा ही होता है। जैसे रसायनशास्त्र (Chemistry) भौतिक शास्त्र (Physics) और जीव-विज्ञान (Biology) क्या साथ, हाँ शरीर शास्त्रका ज्ञान क्रमबद्ध और सुसंगठित है ही। अतः यह निर्विवाद सिद्ध होगया कि प्रस्तुत परिभाषाके अनुसार शरीर शास्त्र और मानसशास्त्र दोनों ही विज्ञान हैं।

४. शरीर शास्त्र क्या है ?

वह शास्त्र जो शरीरके भिन्न-भिन्न संस्थानों यथा जनन-संस्थान, अस्थि संस्थान, रक्तसंवह-संस्थान आदि; शरीरके भिन्न-भिन्न अंगों, यथा हाथ, पैर, नाक, कान, मस्तिष्कादि; धातुओं यथा रस, रक्त, मूत्र, मेदादि; दोष, वात, पित्त, कफ, मल-मूत्रादि मलोंकी रचना और क्रियाका (क्रमबद्ध और सुसंगठित रूपसे) अध्ययन करता है, उसे शरीर शास्त्र कहते हैं। रचना और क्रियाकी दृष्टिसे शरीर शास्त्रको दो भागोंमें बाँटा जाता है—(१) शरीर रचना शास्त्र (Anatomy), (२) शरीर क्रिया विज्ञान (Physiology) शरीर रचना शास्त्रके अन्तर्गत शरीरके भिन्न-भिन्न अवयवोंकी रचना या बनावटका अध्ययन किया जाता है। शरीर क्रिया शास्त्रके अन्तर्गत उन अवयवोंकी क्रिया या कार्योंका अध्ययन किया जाता है।

५. मानस शास्त्र क्या है ?

मानस शास्त्रको मनोविज्ञान भी कहते हैं मनकी रचना या बनावट और क्रियाओंका अध्ययन सुसंगठित और क्रम बद्ध रूपसे करता है जो विज्ञान, उसे मानस शास्त्र या मनोविज्ञान कहते हैं। यों तो मानस शास्त्रियोंने मानस-शास्त्रकी अनेक परिभाषाएँ की हैं, परन्तु उनका सार निर्विवाद रूपसे उपर्युक्त ही है। मनकी रचना और क्रियापर शरीरकी रचना और क्रियाका अत्यधिक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि मस्तिष्क जो शरीरका अवयव है मनका अधिष्ठान है। अतः

मानस-शास्त्रको अच्छी प्रकारसे समझनेके लिए शरीर शास्त्रका अध्ययन भी मानस शास्त्रके अन्तर्गत ही करना पड़ता है। मानस-शास्त्र मनकी रचना और क्रियाका अध्ययन भिन्न-भिन्न परिस्थितियोंमें करता है। यही कारण है कि मानस-शास्त्रका क्षेत्र बहुत अधिक बढ़ गया है और इसे अनेक वर्गोंमें बाँटा गया है। उन सब वर्गोंको मैं निम्न लिखित दो शर्षकोंके अन्तर्गत रख रहा हूँ (१) सैद्धान्तिक मानस शास्त्र (Theoretical Psychology), (२) व्यावहारिक मनोविज्ञान (Applied Psychology)।

(१) सैद्धान्तिक मनोविज्ञान—

मनोविज्ञानका वह विभाग जो मानसिक क्रियाओं का अध्ययन सैद्धान्तिक रूपसे करता है, और मनकी रचना (बनावट) और क्रियाके सम्बन्धमें सामान्य सिद्धान्तोंका निर्माण करता है। उसे हम सैद्धान्तिक मनोविज्ञान कहते हैं। सैद्धान्तिक मनोविज्ञानकी आवश्यकता और उपयोग व्यावहारिक मनोविज्ञानमें भरपूर किया जाता है, जिसके लिए व्यावहारिक मनोविज्ञान सैद्धान्तिक मनोविज्ञानका बहुत अधिक आभारी है। सैद्धान्तिक मनोविज्ञानके अन्तर्गत मनोविज्ञानकी बहुत सी शाखाएँ आती हैं। यदि उन सबका वर्णन किया जाय तो अनेक पुस्तकें तैयार हो जायेंगी। प्रत्येक शाखा एक स्वतन्त्र विषय है। अतः उनका वर्णन यहां नहीं किया जा सकता है। यहाँ पर मैं केवल इतना ही संकेत करना उपयुक्त समझता हूँ कि अपने अपने क्षेत्रमें ये सभी शाखाएँ मनकी क्रियाओंका अध्ययन करती हैं। और उन क्रियाओंके सम्बन्धमें सामान्य नियमोंकी स्थापना करती है जिनका उपयोग व्यावहारिक मनोविज्ञानमें किया जाता है। सैद्धान्तिक मनोविज्ञानकी कुछ शाखाएँ या प्रकार निम्नलिखित हैं—

- (i) सामान्य मनोविज्ञान (General psychology)
- (ii) असामान्य मनोविज्ञान (Abnormal Psychology)
- (iii) पशु मनोविज्ञान (Animal Psychology)
- (iv) बाल मनोविज्ञान (Child Psychology)
- (v) किशोर मनोविज्ञान (Psychology of

Adolescence)

- (vi) प्रौढ़ मनोविज्ञान (Adult Psychology)
- (vii) तुलनात्मक मनोविज्ञान (Comparative Psychology) आदि ।

(२) व्यावहारिक मनोविज्ञान—

व्यावहारिक मनोविज्ञान मनोविज्ञानकी वह शाखा या वर्ग है जो मानव-जीवनके भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में मानसिक क्रियाओंका अध्ययन करता है, उनके विषयमें ऐसे सामान्य नियम खोजता है और उनका निर्माण करता है जिनका उपयोग मानव-जीवनको सुख और समुन्नत बनानेमें किया जाता है । व्यावहारिक मनोविज्ञानके कुछ प्रकार निम्नलिखित हैं:—

- (i) मानसिकरोग विज्ञान (Clinical Psychology)
- (ii) मनोचिकित्सा विज्ञान (Psychiatry)
- (iii) शिक्षा मनोविज्ञान (Educational Psychology)
- (iv) व्यक्तित्व मनोविज्ञान (Psychology of Personality)
- (v) औद्योगिक मनोविज्ञान (Industrial Psychology)
- (vi) व्यवसाय मनोविज्ञान (Vocational Psychology)
- (vii) विधि मनोविज्ञान (Legal Psychology) आदि ।

प्रयोगात्मक मनोविज्ञान (Experimental psychology) उपर्युक्त तथा अन्य सभी सैद्धान्तिक और व्यावहारिक मनोविज्ञानोंको उनके क्षेत्रमें सहायता करता है तथा उन्हें समुन्नत और प्रवृद्ध करता है ।

कुछ आधुनिक विद्वान मानस शास्त्र और आध्यात्म-शास्त्रमें अन्तर नहीं करते, और दोनोंको एक ही समझते हैं । परन्तु जैसा कि मनकी परिभाषा के अन्तर्गत बताया जा चुका है कि आत्मा और मन दो भिन्न सत्ताएँ हैं । इनके अध्ययनका क्षेत्र भी तदनुसार स्वतः ही भिन्न भिन्न है । आत्माका अध्ययन करने वाला

विषय दर्शन (Philosophy) है और मनका अध्ययन करने वाला विषय मानस शास्त्र (Psychology) है ।

६-शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रका क्या सम्बन्ध है ?

किसीका सम्बन्ध निम्नलिखित ३ प्रकारोंमें से एक हो सकता है:—(१) ग्रहण (२) दान (३) ग्रहण एवं दान । ग्रहण सम्बन्ध वह सम्बन्ध कहलाता है जिसके अनुसार सम्बन्ध रखनेवाला दूसरेसे कुछ ग्रहण ही करता है, देता कुछ नहीं है । दान वह सम्बन्ध कहलाता है जिसमें सम्बन्ध रखने वाला कुछ देता ही है, लेता कुछ नहीं ग्रहण एवं दान वह सम्बन्ध कहलाता है जिसमें सम्बन्ध रखने वाला दूसरेको कुछ देता भी और उससे कुछ लेता भी है । इस सम्बन्धको अन्योन्याश्रित सम्बन्ध भी कह सकते हैं । निम्नलिखित पंक्तियोंमें हम यहाँ देखेंगे कि ये दोनों शास्त्र एक दूसरेसे क्या लेते हैं, और एक दूसरेको क्या देते हैं । अर्थात् इन दोनों शास्त्रोंमें उपर्युक्त सम्बन्धोंमें से किस प्रकारका सम्बन्ध है ।

(१) जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि मानसशास्त्रका आधार शरीर-शास्त्र है, क्योंकि मानसिक क्रियाओंका आधार और अधिष्ठान मस्तिष्क है । व्यक्तिके मनकी रचना और क्रियापर शरीरकी रचना और क्रिया बहुत अधिक प्रभाव डालती है । कुछ नए अन्वेषणोंसे ज्ञात होता है कि प्रणाली सहित (Luct) तथा प्रणालीविहीन (Luetlbs) प्रस्थियोंके उचित विकास न होनेपर व्यक्तिका व्यक्तित्व बिगड़ जाता है । फलतः वह मानसिक रूपसे भी रोगी होजाता है । उदाहरणके लिए यह सिद्ध हो चुका है कि अग्न्याशय (Paucreas) के रस (Injalín) का उचित मात्रामें साव न होनेसे व्यक्तिको मधुमेह होजाता है और जिसके फल स्वरूप नीति (Phol-sia) स्तायुषिकार (Neruouy Qelility) द्विव्यक्तित्व (Luol Persanality) आदि मानसिक रोग (Mental Eiyeases) होजाता है । इससे सिद्ध हुआ कि मनकी रचना और क्रिया शरीरकी रचना और क्रियापर आश्रित है । अतः मानस-शास्त्र शरीर शास्त्रपर आधारित है । क्योंकि मानस-

शास्त्र शरीर शास्त्रसे बहुत कुछ ग्रहण करता है। यहाँपर शरीरशास्त्र दाता (Qusr) और मानसशास्त्र आदाता (Recesivs) है। अतएव मानसशास्त्रका शरीर शास्त्रसे प्रथम प्रकारका ग्रहण सम्बन्ध है।

(२) शरीरशास्त्र भी मानसशास्त्रसे बहुत कुछ ग्रहण करता है। उदाहरणके लिए जो व्याक्त अधिक विन्ता, शोक, दुःख आदि कष्टकारक मानसिक क्रियाएँ (विचार) करते हैं, उनका शरीर भी क्षीण (Hleble) होजाता है। और उन्हें अपचन (Audi- yestus) और रक्ताल्पता (Anaenma) आदि आदि शारीरिक व्याधियाँ होजाती हैं। इसके विपरीत जो व्यक्ति आमोद, प्रमोद, सुख, उत्साह युक्त मान- सिक क्रियाएँ करते हैं, वे दृष्ट-पुष्ट, विकसित और स्वस्थ रहते हैं शारीरिक रूपसे। इससे सिद्ध होता है कि शरीरकी रचना और क्रिया मनकी रचना और क्रियापर आधारित है। अतः शरीरशास्त्र मानस- शास्त्रपर आधारित हुआ। यहाँ मानसशास्त्र दाता और शरीरशास्त्र आदाता या ग्राहक हुआ और मानसशास्त्रका सम्बन्ध शरीरशास्त्रसे द्वितीय प्रका- रका अर्थात् दानका हुआ।

(३) इस प्रकार हम देखते हैं कि शरीरशास्त्र और मानसशास्त्र दोनों ही एक दूसरेको कुछ देते भी हैं, और एक दूसरेसे कुछ ग्रहण भी करते हैं। अतः दोनों एक दूसरेके आश्रित हुए। अतः इन दोनोंका सम्बन्ध न तो केवल ग्रहणका है, और न केवल दानका है। अपितु इन दोनोंका सम्बन्ध तीसरे प्रका- रका सम्बन्ध (ग्रहण और दान) है। इसे हम अन्यो- न्याश्रित सम्बन्ध भी कह सकते हैं। क्योंकि दोनों ही शास्त्र अपनी पूर्णता और स्पष्टताके लिए एक दूसरे पर आश्रित हैं।

७-शरीरशास्त्र और मानस शास्त्रमें क्या भेद है?

शास्त्र और मानसशास्त्र बहुत बड़े विज्ञान हैं और दोनोंके अन्तरको विस्तार रूपसे लिखनेके लिए बहुत अधिक समय और स्थानकी आवश्यकत है। अतः संक्षेपमें ही मैं इन दोनोंके अन्तरको निम्न- लिखित पंक्तियोंमें दर्शाऊँगा:—

शरीरशास्त्र शरीरका अध्ययन करता है, जबकि

मानसशास्त्र मनका अध्ययन करता है। शरीरशास्त्र अध्ययन करता है, कि शरीर क्या है, इसकी रचना किन-किन वस्तुओंके संयोगसे हुई है। शरीरके भिन्न २ अंगोंकी रचना क्या है, कैसी है किन-किन रासा- यनिक पदार्थोंसे हुई है। साथ ही शरीरशास्त्र अध्ययन करता है कि शरीरके भिन्न-भिन्न अङ्ग किम-किस समय क्या-क्या क्रियाएँ करते हैं, जिमसे शरीरकी दैनिक सत्ता (Lauly existencer) है। संक्षेपमें शरीरशास्त्र निम्नलिखित विषयोंका अध्ययन करता है:

(१) शरीरकी उत्पत्ति कैसे होती है? (२) शरीर क्या है? (३) शरीरकी उत्पत्तिमें सहायक भौतिक और रासायनिक कारण और साधन क्या है? (४) आँख, नाक, कान, आदि, शारीरिक अंगोंकी रचना, बनावट और क्रियाएँ क्या हैं? (५) रक्त, रक्त, मांस, मेद, आदि धातुआकी रचनाएँ, गुण तथा क्रियाएँ क्या है? (६) अस्थि संस्थान, पचन-संस्थान, श्वास, संस्थान, आदि संस्थानोंका रचना, गुण, क्रियाएँ क्या है? ७) वात, पित्त, कफ दोषोंकी रचना, स्थिति, गुण और कार्य क्या है? (८) मल- मूत्रादि मलोंकी रचना स्थिति और कार्य क्या हैं? (९) शरीरशास्त्र यह भी अध्ययन करता है कि भिन्न- भिन्न परिस्थितियोंमें शरीरके भिन्न-भिन्न या किसी विशेष अवयवकी रचना और क्रियामें क्या अन्तर होजाता है।

इसके विपरीत मानसशास्त्र अध्ययन करता है कि मन क्या है उसका स्वभाव, उसकी रचना, उसका गुण, उसकी क्रिया क्या है, वह भिन्न-भिन्न परिस्थितियोंमें किस प्रकारकी क्रियाएँ करता है। संक्षेपमें मानसशास्त्र अध्ययन करता है:—(१) सामा- न्यतः मन क्या क्रियाएँ करता है? (२) बचपनमें उसका कितना विकास होता है और वह क्या क्रियाएँ करता है? (३) किशोरावस्थामें मनके विकास और क्रियाएँ क्या हैं? (४) समूह और समाजमें सामूहिक मनकी रचना और क्रियाएँ क्या हैं? (५) पशुओंकी मानसिक रचना और क्रियाएँ क्या हैं? (६) शिक्षाके क्षेत्रमें मानसिक क्रियाओंका क्या महत्त्व है? (७) व्यापारिक, औद्योगिक, कानूनी आदि भिन्न भिन्न क्षेत्रोंमें मन का क्या क्या क्रियाएँ करता है और उसका

उक्त क्षेत्रोंमें क्या महत्व है ? (८) रोगावस्था तथा स्वस्थ अवस्थामें मानसिक क्रियाओंमें क्या परिवर्तन हो जाते हैं ? (९) अस्वस्थ मानसिक संरचनाओं और क्रियाओंको स्वस्थ मानसिक संरचनाओं और क्रियाओंमें परिवर्तित कैसे किया जा सकता है ।

इस प्रकार संक्षेपमें हम यही कह सकते हैं कि शरीरशास्त्र भिन्न-भिन्न अवस्थाओं और परिस्थितियोंमें शरीरका रचना और क्रियाओंका अध्ययन करता है जबकि मानस-शास्त्र भिन्न-भिन्न परिस्थितियोंमें मनकी और मानसिक क्रियाओंका अध्ययन करता है । यही शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रमें भेद है ।

८-शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रमें अभेद क्या है

शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रमें उपर्युक्त भेद होनेपर भी निम्नलिखित कुछ बातें ऐसी हैं जो इन दोनोंके भेदमें अभेदकी झलक प्रदान करती हैं:—

(१) बिना शरीरके मनकी स्थिति, रचना, क्रिया सम्भव नहीं है । इन दोनोंका अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है । अतः शरीर शास्त्र और मानसशास्त्र भी अन्योन्याश्रित रूपसे एक दूसरेसे सम्बन्धित हैं । शरीरके तथा मनके अन्योन्याश्रित सम्बन्धका वर्णन हम ऊपर संक्षेपमें कर चुके हैं । इस प्रकार ये दोनों शास्त्र भिन्न होते हुए भी अभिन्नताका दिग्दर्शन कराते हैं ।

(२) शरीरके निरन्तर अस्वस्थ रहनेपर मनका स्वस्थ रहना, और मनके निरन्तर अस्वस्थ रहनेपर शरीरका स्वस्थ रहना सम्भव नहीं । एककी स्थिति बिगड़नेपर दूसरेकी स्थिति भी बिगड़ जाती है, और एककी स्थिति सुधरनेपर दूसरेकी स्थिति भी सुधर जाती है । फलतः शरीरशास्त्र और मानसशास्त्र दोनों ही एक दूसरेकी सहयोग देने हुए एक ही उद्देश्यकी पूर्ति करते हैं, और वह उद्देश्य है स्वास्थ्य और सुखकी प्राप्ति । इस प्रकार दोनोंके भेदमें अभेदके दर्शन होते हैं ।

(३) व्यक्ति एक है । शरीर और मन इसके दो अभिन्न अंग हैं । इन दोनोंमेंसे एककी अनुपस्थितिमें दूसरा नष्ट होजाता है, और परिणामस्वरूप व्यक्तिकी सत्ता नष्ट होजाती है । अतः शरीरशास्त्र और मानस-

शास्त्र दोनों ही अभिन्न हैं । दोनों ही एक नदीके दो किनारे हैं, एक ही सिक्केके दो पहलू हैं । शरीर भौतिक साकार पहलू है, मन अभौतिक निराकार पहलू है ।

(४) यह निर्विवाद सिद्ध हो चुका है कि शारीरिक स्वास्थ्य और रोग, मानसिक स्वास्थ्य और रोग उत्पन्न करते हैं, और मानसिक स्वास्थ्य और रोग तदनुसार शारीरिक स्वास्थ्य और रोग उत्पन्न करते हैं । इसलिए इनके अध्ययन करनेवाले शास्त्रोंमें भी अभेदकी स्पष्ट प्रतीति होती है ।

(५) 'जैसा खावे अन्न, वैसा होवे मन' वाली कहावतसे भी यही स्पष्ट होता है कि एक प्रकारका भोजन शरीर और मन दोनोंको समान रूपसे प्रभावित करता है । और रोगी अथवा निरोगी समान रूपसे बनाता है । इस प्रकार शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रमें अभेद-प्रदर्शन होता है ।

(६) आयुर्वेद (Medical Science) में सहस्रों वर्ष पूर्व ही 'राजस, तामस' और सतोगुणोंके आधार पर यह सिद्ध कर दिया गया था कि शरीरके अन्दर यदि रजोगुण है, तो मन भी रजोगुणवाला होगा और यदि शरीरमें सतोगुण या तमोगुण की प्रधानता होगी तो मनमें तदनुसार ही गुणोंका प्रधानता अनिवार्य रूपसे हागो । इसके परिणाम स्वरूप ही मनमें जिस गुणका प्रधानता करना है, भोजनाचाराद्वारा शरीरके अन्दर उसी गुणकी प्रधानता करलें । इसके विपरीत यदि शरीरका जिस गुणवाला बनाना हो तो मनको विचार, मानना इच्छा द्वारा उसी गुणवाला बना लेना चाहिए । क्योंकि मनके प्रभावसे शरीर भी प्रभावित होकर मनवाले गुणको ग्रहण कर लेगा । इस प्रकार शरीरशास्त्र और मानसशास्त्र के भेदमें अभेद होजाता है ।

(७) पशु-पक्षियों और मनुष्योंके मनोंका अध्ययन करनेसे, तथा तुलनात्मक मनोविज्ञानकी सहायतासे यह ज्ञात हुआ है कि प्राणिको शरीर जिस प्रकारका होगा, उसका ज्ञान भी उसी प्रकारका होगा । उदाहरणके लिए पशुके शरीरमें मनुष्यका और मनुष्यके शरीरमें पशुका, मन निवास नहीं करता

है। इस उक्तिसे भी यही सिद्ध होता है कि शरीर और मनमें, फलतः शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रमें अभेद है।

(८) पश्चिमीय विद्वान् डाक्टर इटार्डने अपने लड़के डोनल्डको, तथा एक चिम्पान्जी नातिके बन्द-रको, एक ही प्रकारके वातावरणमें रखकर शिक्षा दी थी, और पालन पोषण किया था। दोनोंका जन्म एक ही समयमें हुआ था इस प्रयोगका परिणाम यह हुआ कि प्रारम्भमें चिम्पान्जी खाना खाने, चम्पचका प्रयोग करने, मोजा पहिनने आदिकी साधारण कलामें अधिक उन्नति करता दिखाई दिया और जीवनके प्रारम्भिक दिनोंमें डोनल्ड पिछड़ना प्रतीत हुआ। परन्तु कुछ अधिक समय बीतनेपर लगभग डेढ़ वर्षकी आयुमें डोनल्डने खाने-पीने, पहिनने-ओढ़ने, और रहने-महनेकी कलामें चिम्पान्जीको हरा दिया, और निरन्तर भविष्यमें उन्नति करता ही चला गया। और चिम्पान्जी पुनः भविष्यमें कभी-भी उसके साथ न लग सका। इसके स्थानपर, चिम्पान्जी कुछ निश्चित कला सीखकर (और वह भी बहुत शीघ्र ही) आगे कुछ अधिक न सीख सका। वह एक सीमित क्षेत्रसे आगे न बढ़ सका। इससे यही सिद्ध होता है कि पशुका मन सीमित होता है; और वह मनुष्यके शरीरमें स्थित मन जैसा कभी नहीं हो सकता है। फलतः पशुमें पशुका मन और मनुष्य शरीरमें मनुष्य मन रहता है। अतः एक शरीर और उसके मनमें अभेद है फलस्वरूप शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रमें भी अभेद है।

(९) मस्तिष्ककी शल्य चिकित्सासे यह ज्ञात हुआ है कि मस्तिष्कके एक विशेष विभागके नष्ट होजाने या निकाल देनेपर मन भी एक विशेष क्रिया, गुण या कार्य नष्ट होजाता है। उदाहरणके लिए अमेरिकाके एक दलालका मस्तिष्क छेदन किया गया। मस्तिष्क छेदनसे पूर्व वह दलाल बहुत ही गम्भीर और पवित्र विचारोंवाला था। परन्तु उसके सिर या मस्तिष्कके अपभ्रममें पीड़ा होती रहती थी। जब पीड़ा बमहा होगई तो उसे मनश्चिकित्सा (Psycho-therapy) के द्वारा स्वस्थ करनेका प्रयत्न किया गया। परिणाम स्वरूप उसके मस्तिष्कके अप्रभागकी शल्य

चिकित्साके द्वारा छेदा गया। शल्य चिकित्सा करनेपर पता लगा कि उसके मस्तिष्कके अप्रभागमें गंभीर शोथ और गन्दगी थी। मस्तिष्कका कुछ अप्रभाग बुरी तरह सड़ चुका था। उस सड़े हुए भागको निकाल देनेसे वह दलाल तो स्वस्थ होगया, परन्तु शरीरके एक प्रमुख भागको निकाल देनेके कारण अब उसकी मानसिक दशामें विस्कुल परिवर्तन होगया। पहले तो वह बहुत गम्भीर, शान्त और पवित्र विचारोंवाला था, परन्तु अब वह वाचाल, चंचल, हँसी-मजाक करनेवाला था, आम-पथपर स्त्रियोंको छेड़ने वाला होगया था। इस प्रयोगसे यह स्पष्ट है कि शरीरका प्रभाव मनपर अवश्य पड़ता है।

(१०) इसी प्रकारकी एक और घटना है। जिसके अनुसार एक व्यक्तिके मस्तिष्कमें इतना आघात लगा कि, वह मूर्च्छित होगया और जब वह मूर्च्छासे हुआ, तो उसे कुछ भी स्मरण नहीं रहा। यहाँ तक कि वह यह भी भूल चुका था कि वह कहाँ रहनेवाला है और उसका नाम क्या है। उसे पूरा स्मरण नाम तक क्यों नहीं रह गया था।

इन सब घटनाओंसे यह स्पष्ट होता है कि शरीर और मनमें घनिष्ठतम सम्बन्ध है दोनों अभिन्न हैं अतः दोनोंको अध्ययन करने वाले दोनों शास्त्र भी अभिन्न हैं।

९-शरीरशास्त्रका मानवजीवनमें क्या उपयोग

शरीरको स्वस्थ रखनेके लिए शरीर शास्त्र का ज्ञान परमावश्यक है। मनुष्यके जीवनका ध्येय सुख शान्ति प्राप्त करना है और सुख-शान्ति (मनके भी स्वास्थ्यपर निर्भर है और शरीरका स्वास्थ्य शरीर शास्त्रके ज्ञानपर आधारित है। इसीलिए आयुर्वेद (Mudicol Ecicene जिसमें एलोपैथी आदि सब आधुनिक चिकित्सा विज्ञानोंका भी बोध होता है) के अध्ययनमें सर्व प्रथम शरीर शास्त्र का अध्ययन किया जाता है। कारण यह है कि शारीरिक अस्वास्थ्यकी रचना और क्रियाएँ भली प्रकार जाने बिना यह नहीं जाना जा सकता है कि रोग विशेष कि अङ्गमें, कैसे, कब और क्यों होजाता है; और ज

भांति नहीं जाना जा सकता है, तो उस रोगकी चिकित्सा भी नहीं की जा सकती है। और मनुष्य स्वस्थ, सुखी और शान्त नहीं रह सकता है। इसप्रकार शरीरशास्त्रमें मनुष्यके शरीरकी रचना और क्रियाका अध्ययन करता हुआ अप्रत्यक्षरूपसे शरीरको स्वस्थ रखनेका ज्ञान देता है, जिस ज्ञानका उपयोग आयुर्वेद (Mediolsicincemeludiy oll neimt, medicinal and modrl medicl seilneees.) प्रत्यक्ष रूपसे करता है। उदाहरणके लिए पचन-संस्थानकी रचना और क्रियाका स्पष्ट ज्ञान प्राप्त किए बिना कोई भी व्यक्ति मधुमेहके सही कारणका पता नहीं लगा सकता, और रोगके कारणके स्पष्ट ज्ञानके अभावमें उसकी चिकित्सा होना और सफल चिकित्सा होना अमम्भव है। इसी प्रकारसे अन्य रोगोंके विषयमें भी कहा जा सकता है।

१०. मानस-शास्त्रका मनुष्यके जीवनमें क्या उपयोग है ?

जैसा कि वर्णन किया जा चुका है मानसशास्त्र मनकी रचना, स्वरूप और क्रियाओंका वर्णन करता है। इसके अध्ययनसे मनको स्वस्थ रखनेका ज्ञान अप्रत्यक्ष रूपसे होजाता है। जब स्वस्थ और अस्वस्थ अवस्थामें मनके स्वभाव और क्रियाओंका ज्ञान होजाता है, मानसिक रोगोंके कारण भली भांति जाने जा सकते हैं और जब मानसिक रोगोंके कारणोंका पता लग जाता है, तब मानसिक रोगोंकी चिकित्सा और मनको स्वस्थ रखनेका कार्य आसान होजाता है। आधुनिक समयमें तो मनको स्वस्थ रखने और मानसिक रोगोंको दूर करनेके लिए चिकित्सा-मनोविज्ञान (Madical Psyclolulogy) में कई प्रकारकी शाखाएँ और पाठ्यक्रम चल रहे हैं, जिनमें मानसिक रोग होनेके कारण सम्प्राप्ति तथा उन्हें दूर करनेके विषयमें अध्ययन किया जाता है। उदाहरणके लिए मानस-रोग-विज्ञान (Clnical Ps&clsology), और मनश्चिकित्सा विज्ञान आदि चिकित्सा-मनोविज्ञानकी शाखाएँ हैं। मानसशास्त्रके अध्ययनके बिना हिस्टोरिया, अपस्मार, भीति तथा कुपथ्यभोजनादि मानसिक व्याधियोंकी चिकित्सा सफलतापूर्वक नहीं की

जासकती है। अनेक शारीरिक रोग भी ऐसे हैं जो बिना मानसिक स्वास्थ्यके निर्मूल नहीं किए जासकते हैं। उदाहरणके लिए स्नायु-रोग, चय. उवरादि शारीरिक रोग। इस प्रकार हम देखते हैं कि मानसशास्त्र मनुष्यको वास्तविक रूपसे सुखी रखनेमें सहयोग देता है जिसके ज्ञानाभावमें व्यक्ति पूर्ण सुखी नहीं रह सकता है।

११. शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रका आयुर्वेद (Medical seumce) से क्या सम्बन्ध है ?

कोई भी रोग या तो शारीरिक होगा या मानसिक अर्थात् या तो शरीरमें होगा या मनमें और आयुर्वेद शरीर तथा मनको स्वस्थ रखने और उनके रोगोंको दूर करनेके ज्ञानका अध्ययन करता है। शरीर और मनकी स्वस्थ और अस्वस्थ अवस्थामें जो बनावट और क्रियाएँ होती हैं, उनका अध्ययन कमरा: शरीरशास्त्र और मानसशास्त्र करता है। शारीरिक तथा मानसिक रचना और क्रियाओंके ज्ञानाभावमें हम शारीरिक और मानसिक रोगोंके कारण, स्थान, सम्प्राप्ति आदिका ज्ञान नहीं कर सकते, फलतः शारीरिक और मानसिक रोगोंकी सफलतापूर्वक चिकित्सा नहीं हो सकती है। अतः शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रका ज्ञान आयुर्वेदके मूल हैं। आयुर्वेद अपनी सफलतासिद्धिके लिए इन्हींपर आधारित है। शरीर और मनकी रचना और क्रियाएँ जाने बिना आयुर्वेद अपने उद्देश्यकी पूर्ति नहीं कर सकता।

१२. मानसशास्त्र शरीर शास्त्रसे अधिक उत्तम है ?

अब प्रश्न यह उठता है कि शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रमें कौन अधिक श्रेष्ठ है ? यद्यपि शरीरका प्रभाव मनपर और मनका प्रभाव शरीरपर अवश्यमेव पड़ता है एवं शरीरशास्त्र तथा मानसशास्त्र अन्तर्निष्ठ और अन्तर्गत हैं। तथापि मानसशास्त्र शरीरशास्त्रसे अधिक उत्तम है, क्योंकि मन शासक है, और शरीर उसके अधीनस्थ शासित प्रजा है। जिस प्रकार प्रजाके पथ-भ्रष्ट होनेपर शासक या राजा उसे दण्ड विधानादिसं सुमार्गपर ला सकता है, परन्तु शरीर

१३-शरीर और मनके सम्बन्धमें कुछ अज्ञात बातें ।

शरीर और मनके सम्बन्धमें बहुत-सी बातें ज्ञात हो चुकी हैं, परन्तु इनके परस्पर सम्बन्धके विषयमें अभी बहुत सी बातें अज्ञात हैं। उदाहरणके लिए, किसी वस्तुका ज्ञान, भावना, इच्छा, क्यों और कैसे तथा कहाँ होती है; साथ ही उसके होनेके पूर्व, पश्चात् और तत्काल शरीरमें क्या क्या परिवर्तन हो जाते हैं? शरीरमें कौनसे परिवर्तन होनेपर कौन सा मानसिक ज्ञान, भावना, विचार या इच्छा होती है? रोग विशेषमें शरीर और मनका क्या सम्बन्ध रहता है और क्यों? अमुक शारीरिक रोग होनेपर अमुक मानसिक परिवर्तन करनेपर वह रोग दूर किया जा सकता है? अमुक मानसिक रोग होनेपर अमुक शारीरिक परिवर्तन करनेपर वह रोग दूर किया जा सकता है। उदाहरणके लिए आशा-तिराशा, भय-शोक, आनन्द, उर्वर, अजीर्ण, क्षय, प्रमेहादि शारीरिक-मानसिक रोगोंमें शरीर और मनका कितना और कैसा सम्बन्ध है? यद्यपि भारतीय आयुर्वेदके ग्रन्थोंमें शरीर तथा मनके इस प्रकारके सम्बन्धोंमें बहुत कुछ वर्णन मिलता है, लेकिन वह अपर्याप्त है और उसमें और अधिक अन्वेषण अनिवार्य है। वर्तमान युगकी यह माँग है।

१४-वर्तमान समयमें शरीरशास्त्र और मानस-शास्त्रकी स्थिति:--

आज संसारके प्रायः सभी उन्नत देशोंमें विशेष-तया संयुक्त राज्य-अमेरिका, इंग्लैण्ड, रूस आदि देशोंमें शरीर शास्त्र और मानसशास्त्र दोनोंका अध्ययन-अध्यापन बहुत उन्नत दशामें चल रहा है। उन देशोंमें इन क्षेत्रोंमें नए-नए अन्वेषण हो रहे हैं। विशेषतः अमेरिकामें तो मानस शास्त्र विशेष रूपसे इतनी अधिक उन्नत दशामें हैं कि वहाँ प्रत्येक प्रकारके महत्वपूर्ण सरकारी पदके लिए कर्मचारियोंका चुनाव मानसशास्त्र द्वारा परीक्षा लेकर ही किया जाता है। कानून, कारखाना, उद्योग धंधोंमें, पथ-प्रदर्शन (Vocational guidance) देनेमें, भिन्न भिन्न

राजा ही पथ-भ्रष्ट या अन्यायी हो, तो उसके कुकृत्य का प्रभाव सभी जनतापर पड़ेगा और जनता पथ-भ्रष्ट हुए बिना नहीं रह सकती। साथ ही उसे पथ-भ्रष्ट होनेसे नहीं रोक सकती। ठीक यही दशा प्रजा मन और शरीरकी है। शरीर रूपी प्रजाके पथ-भ्रष्ट या रोगी होनेपर (यदि रोग असाध्य न हो गया हो, तो) मन उसे अधिकतर स्वस्थ कर लेता है। मनोवहा नादियोंद्वारा मनका प्रभाव समस्त शरीरपर पड़ता है और शरीर धीरे-धीरे स्वस्थ हो जाता है। परन्तु मन रूपी शासकके अस्वस्थ होजानेपर शरीरको किसी भी प्रकार स्वस्थ नहीं रखा जा सकता है। औषधालयों तथा आम जनतामें मैंने स्वयं ऐसे अनेक रोगियोंको देखा है। जो शारीरिक चिकित्सा किए जानेपर कुछ थोड़े ही दिनोंके लिए स्वस्थ प्रतीत हुए; परन्तु मानसिक रोग दूर न होनेके कारण वे पुनः शारीरिक रागप्रभव हागए। कलतः मानसिक रोग दूर किए बिना काय-चिकित्सासे उनको पूर्ण लाभ नहीं हुआ, और वे रोगियोंके रोगी ही रहे। मैंने बहुतसे व्यक्ति स्वयं देखे हैं, जो मनसे स्वस्थ हैं, और शारीरिक रोग जब कभी उन्हें होजाता है, तब वे प्रायः किसी काय-चिकित्साका सहारा न लेकर मानसिक शक्तिसे (संयम, नियम, प्रसन्नता, विश्रामादिसे) स्वस्थ हो जाते हैं।

इसके अतिरिक्त, आत्माका मनसे प्रत्यक्ष और शरीरसे अप्रत्यक्ष सम्बन्ध है। आत्माका उत्थान-पतन मनके उत्थान पतनपर आधारित है। भारतीय नीतिशास्त्र और दर्शन-शास्त्र इस बातके साक्षी हैं। मनुष्यके ऊँच-नीच होने, जन्म-मरण होने, पाप-पुण्य, और बन्ध-मोक्ष आदिमें मन ही मुख्य हेतु है, शरीर केवल गौण तथा साधन मात्र है। गीतासे प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है, कि अर्जुन जैने वीर बलशाली भी सब प्रकारका शारीरिक बल रखते हुए भी मानसिक व्याकुलता के कारण कर्तव्य-च्युत हो गए; और पुनः भगवान् श्रीकृष्णद्वारा उपदेशित होनेपर मनसे स्वस्थ होकर ही कर्तव्यारूढ़ हो सके। काय-चिकित्सासे यह कार्य असम्भव है। इससे सिद्ध होता है कि मन शरीरसे और मानसशास्त्र शरीर शास्त्रसे अधिक महत्वपूर्ण है।

गंभीर समस्याओंको हल करनेमें, मानव जीवनको अत्यधिक स्वस्थ और सुखी बनानेमें मानसशास्त्रका प्रयोग अधिकतर किया जाता है। वहींपर चिकित्सामें तो मानस शास्त्रका इतना अधिक उपयोग किया जाता है कि वहाँ प्रत्येक प्रमुख चिकित्सालयमें कम-से-कम एक मनोचिकित्सक रहता है। क्योंकि उनके कथनानुसार वहाँ ५०% रोगी मानसिकसे ग्रस्त रहते हैं।

१५-निवेदनः--

भारतवर्षमें शरीरशास्त्र और काय-चिकित्साके विषयमें कुछ उन्नति अवश्य हो रही है, पर वह भी अपर्याप्त। मानसिक चिकित्साके क्षेत्रमें सरकारके

द्वारा ही कुछ इने-गिने मानसिक-चिकित्सालय संचालित हैं। कोई भी व्यक्तिगत रूपसे किसी मानसिक चिकित्सालयका संचालन करनेका साहस नहीं करता। मेरी जानकारीके अनुसार भारतवर्ष जैसे निर्धन तथा बहुत समयसे परतन्त्र देशमें ७५% से भी अधिक व्यक्ति मानसिक रोगोंके हैं। अतः देशको वास्तवमें, यदि सुखी और समृद्ध बनाना है, और दुःख, दर्द भ्रष्टाचार, बेरोजगार निर्धनता आदि भगानी हैं, तो आयुर्वेदज्ञों-से मेरी यही प्रार्थना है कि वे मानस शास्त्रको उन्नत बनाएँ। इस क्षेत्रमें नये नये अन्वेषण करें और वह भी भारतीय परिस्थितियोंके अनुसार। अन्यथा देशका सुधार, समृद्धि और सुख मृगवृष्णावत् ही रहेगी।

कुमार-कल्याण रस

(विशेष)

इस रसमें रससिन्दूरके स्थान पर सुवर्णयुक्त चन्द्रोदय मिला देनेसे यह बालकोंके समस्त रोगोंमें अद्भुत लाभकारी प्रमाणित हुआ है।

प्रायः देखा जाता है कि बाल्यावस्थामें बच्चोंके पाचक अङ्ग यकृत (Liver) आदि दुर्बल होनेसे उन्हें मन्दाग्नि, अतिसार, वमन आदि रोग आक्रान्त कर लेते हैं, जिनकी चिकित्सा न करनेसे बालशोष (Rickets) होकर बालक अस्थिपङ्कज-सा दिखाई देने लगता है और माता पिता उसके जीवन की आशासे भी निराश हो जाते हैं, ऐसी स्थिति में रोग होनेके पूर्व ही यदि बच्चे को प्रतिदिन अत्यल्प मात्रामें कुमारकल्याण रस खिलाते रहें, तो बच्चा किसी भी रोगसे आक्रान्त नहीं होकर अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट होगा तथा उसके दांत भी समय पर और आसानीसे निकलेंगे।

यह रस बच्चोंके ज्वर, श्वास, कास, वमन, तालुशोष, पारिगर्भिक, बालग्रह, मन्दाग्नि, यकृद्दुष्टि, अतिसार, पाण्डु, कामला, बालशोष, रक्ताल्पता और निर्बलता सभी को नष्ट करता है।

मात्रा— $\frac{1}{2}$ से $\frac{3}{4}$ रत्ती।

अनुपान—सितोपलादि चूर्ण, मधु या मक्खनके साथ, प्रातः सायं दिनमें दो बार।

प्रतिश्याय

लेखक—आयुर्वेदाचार्य डा० निशिकान्त B. A., A. L. I. M. (मद्रास)
 प्रोफेसर इ. एन. टी. एण्ड ओफथैल-वैद्य वाचस्पति मोलोजी,
 श्री मस्तनाथ आयुर्वेदिक कालेज अस्थल-बोहर (रोहतक)

प्रति पूर्वक श्वैङ्गतौ धातुमे प्रतिश्याय शब्द सिद्ध होता है। “वातं प्रति अभिमुखं श्यायो गमनं कफादीनां यत्र स प्रतिश्यायः” “मधु कोष” अर्थात् वातको अभिमुख करते हुए जहां कफादि दोषों का स्राव हो ऐसी नामा व्याधिको प्रतिश्याय कहते हैं, चरकमें भी प्रतिश्यायकी सम्प्राप्तिका वर्णन करते हुए लिखा है कि कुपित उदान वायुमे आध्मात (जकड़ा हुआ) है सिर जिसका, ऐसे मनुष्यके घ्राण-मूलमें स्थित कफ, रुधिर, अथवा पित्त, वायुको अभि-मुख करते हुए, जब नासा मार्गसे निकलते हैं, तब देहको कर्षण करने वाला भयंकर प्रतिश्याय रोग उत्पन्न होता है। जनताकी भाषामें इसे नाक बहना कहते हैं। यह रोग स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध, सबको सामान्य रूपसे घेर लेता है। वैसे तो यह रोग किसी भी ऋतुमें हो सकता है, परन्तु हेमन्त, शिशिर तथा ऋतु परिवर्तनके समय अधिक होता है।

निदानः—

अस्थित मल मूत्रादिके वेगोंको रोकनेसे, घूलि युक्त स्थानमें रहनेसे, अधिक भाषण, अधिक क्रोध, सिरमें अधिक गरमी तथा शैत्यके प्रभावसे, रात्रि जागरण, दिवा स्वप्न, ठण्डे पानी अथवा ओसमें बहुत देर तक रहनेसे, अधिक मैथुन, तीक्ष्ण वाय्व अथवा धूँआदिके लग जानेसे, और अजीर्णसे यह रोग हो जाता है। नासा और गलेमें होने वाले जीर्ण रोग यथा तुण्डो केरी (Tonsillitis), प्रसनिता पिण्ड बुद्धि (Adenoids), आदिका होना तथा नासामध्य प्राचीरका एक ओरको मुड़ा होना (Deviated Septum) इस रोगके सहायक कारण कहे जा सकते हैं। इनके अतिरिक्त मसुरिका, वातश्लेष्मिक

ज्वर इत्यादि रोगोंमें यह रोग हो जाता है।

पाश्चात्य मतानुसार यह एक संक्रामक व्याधि है, जिसका प्रसार रोगके खांसते, छींकते, तथा बोलते समय मुख, नासादिके निकलने वाले रोगाणुओं युक्त वायु (Droplet Injection) द्वारा मुख्यतया होता है। चाहे इसके लिए अभी तक किसी विशेष जीवाणुको निश्चित कारण नहीं कहा जा सकता, फिर भी रोगीके नासा स्रावमें सबक गोलाणु (Staphylococcus), माला गोलाणु (Streptococcus), श्वसनक गोलाणु (Pneumococcus) आदि विविध जीवाणु पाए जाते हैं, कई लोग इन जीवाणुओंके अतिरिक्त एक विशेष विषाणु (Virus) को इस रोगका कारण मानते हैं।

पूर्वरूपः—

प्रतिश्याय होनेसे पूर्व सिर भारी सा प्रतीत होने लगता है, छींकें आती हैं, शरीरमें भारीपन तथा वेदना प्रतीत होती है, रोमाञ्च होता है, शीत अनुभव होता है, मन्द ज्वर-वेचैनी तथा अरोचक आदि लक्षण होते हैं।

सम्प्राप्तिः—

प्रतिश्यायमें दोष प्रकोप अथवा रोगाणुओं आदि के कारण, नासारक्तवाहिनियोंके संकोचक मांस तन्तुओंमें शिथिलता और प्रसारक मांस तन्तुओंमें क्षोभ उत्पन्न हो जाता है। इससे नासाकी श्लेष्मिक-कलामें रक्ताधिक्य (Hyperemia) के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। आरम्भमें तो नासा मल बनता कम हो जाता है, परन्तु शीघ्र ही रक्तवाहिनियोंसे श्वेताणु, लसीकाणु तथा रक्तवाहिरि निकलने लगता

है। नासासे पतला जलीय (Serous) स्राव निकलने लगता है। २-३ दिनमें यह स्राव पिच्छिल (Mucoid) अथवा पूयमय (Muco Purulent) हो जाता है।

पुरः कपालस्थि जंतुकास्थि और ऊर्ध्व हन्वस्थिके वायु कोटरों (Sinuses) का नासाके साथ छोटे-छोटे छिद्रोंसे सम्बन्ध होता है, नासाकी श्लेष्मिक कलामें शोथ हो जानेसे इन छिद्रोंके मुख अवरोद्ध होजाते हैं, जिससे रोगीके शिरमें, आंखोंके आस पास, ललाटमें और कभी-कभी गण्ड प्रदेशमें भारीपन तथा मन्द वेदना होने लगती है, इन्हीं छिद्रों द्वारा वायु कोटरों (Sinuses) में संक्रमण पहुँच कर इनमें प्रदाह (Sinusitis) के लक्षण उत्पन्न कर देता है।

कण्ठ कर्णी नलिका (Eustachian Tube) द्वारा नासाका मध्य कर्णसे सम्बन्ध होता है। इस नलिकाके नासिका द्वारके अवरोद्ध होनेपर रोगीमें कर्ण नाद, क्ष्वेडादि और नलिका द्वारा मध्य कर्णमें संक्रमण पहुँच जानेपर कर्ण शूल मध्य कर्ण प्रदाह इत्यादि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

यदि संक्रमण गलेके पीछेकी ओर प्रसनिका तथा श्वास नलिकाकी ओर फैल जाए तो रोगीमें प्रसनिका प्रदाह (Pharyngitis) अथवा श्वास नलिका प्रदाह (Bronchitis) आदि उपद्रव हो जाते हैं, जिससे रोगीमें कास तथा कभी-कभी क्षय तकके भी लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

नासा-अश्रु नलिका (Naso-Lacrimal-Duct) द्वारा कभी-कभी संक्रमण आँखमें पहुँच जाता है जिससे नेत्राभिष्यन्दादि कई प्रकारके उपद्रव होनेकी आशंका होती है।

लक्षणः—

वातादि दोषोंके लक्षणोंको ध्यानमें रखते हुए प्रतिश्यायको पाँच प्रकारका कहा गया है।

१. वातिक प्रतिश्यायः—इसमें नासा बन्द तथा घुंकी सी प्रतीत होती है, नासामेंसे पतला स्राव निकलता है। रोगीका गला, तालु, ओष्ठादि सूखते हैं, शूल प्रदेशमें सूई चुभने सी वेदना होती है, रोगी

आती है मुखमें बिरसता तथा स्वर भेद होता है।

(२) पैत्तिक प्रतिश्यायः—इसमें नासिकामें स्राव और पीले रंगका स्राव निकलता है। रोगी का पाण्डु वर्ण, दाह और संतापसे व्याकुल होता है तथा रोगीमें ज्वर, नासापाक और तृष्णादि लक्षण पाए जाते हैं।

३. कफज प्रतिश्यायः—इसमें नासासे स्राव तथा पाण्डु वर्णका कफ निकलता है। रोगीके स्वर नेत्रादि शुक्लवर्णके हो जाते हैं। शिर भारी रहता है कण्ठ, तालु आदिमें कफ चिपकी रहती है। रोगीमें श्वास, कास, अरुचि तथा शिरा कण्डु आदि लक्षण सताते हैं।

४. सन्निपातज प्रतिश्याय—इसमें तीनों दोषों मिश्रित लक्षण पाए जाते हैं, प्रतिश्याय ठोक हो जाने पर फिर बार-बार होने लगता है तथा दुष्ट होनेपर दुःसाध्य वा असाध्य हो जाता है। इसमें प्रायः अरुचि नस जैसे लक्षण मिलते हैं।

५. रक्तज प्रतिश्याय—इसमें नासासे रक्तस्राव होता है अथवा रक्त मिश्रित स्राव निकलता है। रोगी का मुख तथा आँखें लाल हो जाती हैं, रोगीके मुख तथा निःश्वासमें दुर्गन्ध आती है, घ्राण शक्तिका हान तथा उरःघातके लक्षण प्रकट होते हैं। कभी-कभी पीनसके लक्षणोंके साथ रोगीमें ज्वर, कास तथा उरःस्तम्भादिके लक्षण भी पाए जाते हैं।

उपरोक्त सभी प्रकारके प्रतिश्यायमें रोगीको अवस्थाओंमें बाँटा जा सकता है।

प्रथमावस्था—“रोगारम्भ” इस अवस्थामें रोगी नासिकामें कुछ क्षोभ सा अनुभव करता है। नासिकामें शुष्क तथा बन्द सी प्रतीत होती है। नासिकामें शृंगाटक मर्मके क्षुब्ध होनेसे बार-बार छींक आती है। रोगीको कुछ शांत तथा रोमाञ्च होता है। शिर ललाटमें भारीपन, मन्द ज्वर तथा अरोचकादि लक्षण प्रकट होते हैं। नासाको अन्दरसे देखनेपर श्लेष्मिक कला शुष्क, स्राव रहित, लाल और फटीसी प्रतीत होती है परन्तु इसमें विशेष शोथ नहीं होती।

द्वितीयावस्था—इस अवस्थामें नासा रक्त

कलम प्रदाहके कारण शोथ हो जाती है, नासिका अन्दरसे गरम प्रतीत होती है। नासाभेसे लसीकामय (Serous) स्राव निकलने लगता है, यह स्राव कई बार इतना बढ़ जाता है कि रोगी नाक साफ करते करते दुःखी हो जाता है, एक-दो दिनमें यह स्राव गाढ़ा हो जाता है, शिरःशूल तथा वायु कोष्ठरोंके चारों ओर भी भारोपन अथवा मन्द वेदना होने लगती है।

रोगीमें कोष्ठवृद्धता, मन्दज्वर (९९-१००) तक, खासी, आवाजका भारी होना, कर्णनाद तथा आंखोंसे पानी निकलना भी प्रायः देखा जाता है, किसी-किसी रोगीमें नासासे निकलने वाले प्रदाहज स्रावके कारण नासाग्र भाग तथा ओष्ठके ऊपरकी त्वचामें जलन और लालिमा हो जाती है।

तृतीयावस्था—उचित रोगोपचार तथा पथ्यादिकी व्यवस्थासे इस अवस्थामें रोगकी उग्रता कम हो जाती है। ज्वर, शिरःशूलादि लक्षण शान्त हो जाते हैं, नासा की श्लैष्मिककला भी स्वस्थ होने लगती है और इसमें निकलने वाला स्राव कम हो जाता है, रोगी धीरे-धीरे स्वस्थ हो जाता है।

उपद्रव—ठीक चिकित्सा न करनेपर रोगके जर्ण होनेसे रोगीमें विविध प्रकारके कर्ण रोग, अक्षिरोग, कास तथा क्षयादि उपद्रव होजाते हैं।

रोग प्रतिषेध—विविध प्रकारके श्वास नलिकामें होने वाले रोग, प्रतिश्याय और अन्य संक्रामक रोगोंसे शरीरकी रक्षा करनेके लिए शरीरको कठोर बनाना आवश्यक होता है, इससे शरीरमें संयोजन क्षमता "Power of adaptation" उत्पन्न हो जाती है और श्रुत परिवर्तन जन्य ताप वैषम्यादिका शरीरपर दुष्प्रभाव नहीं होता। शरीरको नित्य नियमित रूपसे सुखी हवामें थोड़ी देर तक नंगा रखना, अभ्यङ्ग, ठण्डे जलसे स्नान, विभिन्न प्रकारके शारीरिक व्यायाम खेल-कूद, तीर्थ स्नान तथा अन्य व्रतोपवासादिसे शरीर कठोर होता है, इनसे रक्तवाह संस्थान, श्वास संस्थान तथा अन्य शारीरिक अंगोंको बल मिलता है, और वह बाह्य परिवर्तनोंको सहन करनेमें समर्थ हो जाते हैं।

इसके साथ-साथ संतुलित आहार, उचित वाता

द्वारा, शरीरका बाहरकी गरमी तथा शीतसे बचाव और स्वास्थ्यके नियमोंका पालन मनुष्यको प्रतिशय यदि रोगोंसे बचानेमें सहायक होते हैं।

चिकित्सा और रोगीकी व्यवस्था

रोग आरम्भसे ही रोगीको सिर ढाँप कर रखना चाहिए। शीत मारुत तथा ओससे बचाव चाहिए। यथा सम्भव उसे बिस्तरमें आरामसे ले रहना चाहिए। पीनेके लिए सदा गरम पानी तथा लघु और सुपाच्य भोजन करना चाहिए। उसे शारीरिक आयास, स्नान, शीतल जलपान, मैथुन तथा व्यायामादि नहीं करने चाहिए।

यदि रोगीको कोष्ठ वृद्धता हो तो मृदुरेचनसे कोष्ठोधन कर देना चाहिए। रोगीके सिरका भारीप अरुचि, नासासे पतला स्राव होना, स्वरभेद, बार-बार थूक आना इत्यादि लक्षणोंसे प्रतिश्यायकी आमावस समझ कर रोगीको थोड़ा लघन करवाना चाहिए। दोषोंके पाचनके लिए त्रिभुवनकीर्ति रस और कर्पूरे केतु १-१ रत्ती सितोपलादि १॥ माशा मिला कर दिनमें तीन चार मात्रा सिद्ध भेषज मणिमालामें दे गए (बड़ी एला, काली मरिच, तुलसी पत्र और सुकला) के काथसे देना चाहिए। इससे रोगीको पसंदा आकर ज्वर, अङ्गमर्द-शिरः शूलादिमें लाभ होता है।

रातको सोते समय कफ केतु रस और जाति फल १॥ माशा मिला कर रोगीको उपरोक्त क अथवा गरम जल दे दें।

यदि कोई अन्य औषध न मिल सके तो रात सोते समय ४-६ रत्ती काली मिर्च चूर्णको एक तो गुड़में मिला कर रोगीको खिला कर ऊपरसे गरम पानी पिला कर कपड़ा दे कर रोगीको सुला दें। रात छोटा-सा घरेलु योग कई बार बहुत लाभ प्रद होता है। इस प्रकार आम पाचन होकर आमदोष शान्त होता है। इस प्रकार आम पाचन होकर आमदोष उत्पन्न अंगमर्द, अरोचकादि लक्षण शान्त होजाते हैं।

पाश्चात्य वैद्य इस अवस्थामें प्रायः ऐशरीन 5 ग्रेन, डावरज पाउडर २ ग्रेन और किनोन ३-४ ग्रेन मिला कर ४-४ घण्टे पश्चात् २-३ मात्रा देते हैं। इससे भी प्रायः वैसा ही लाभ होता है। डावर पाउडरमें पानी मिलाकर रोगीकी घेचैनी, नासा

तथा शिरःशूलादिको विशेष लाभ होता है। निम्न लिखित किंनान सैलिसिलेट मिक्सचरसे भी आश्चर्य जनक लाभ होता है।

| | |
|----------------------|------------------|
| सोडा सैलिसिलेट | १० ग्रेन |
| पोटाशियम साइट्रेट | १० ग्रेन |
| टिन्डर किनीन अमोनिया | १-२ ड्राम |
| क्लोरोफार्म जल | १ औंस |
| | ४४ घण्टे पश्चात् |

नाकसे बहुत मात्रामें, पतला स्राव निकलनेपर, लक्ष्मीविलास रस अथवा कोई अन्य घृतरेखा योग विशेष लाभ प्रद सिद्ध होता है। डी. ए. बी. फार्मसी जालन्धरका मधुगुष्टि आदि कषाय, पञ्चव आयुर्वेद विभागका प्रतिश्याय हर कषाय नासा श्लेष्मिक कलाके प्रदाहको शान्त करनेमें विशेष लाभप्रद सिद्ध होता है। नव प्रतिश्यायमें उपरोक्त चिकित्सासे रोगी ३-४ दिनमें नीरोग हो जाता है।

जीर्ण प्रतिश्याय

इसमें प्रायः वातकी विगुणता मुख्य होती है,

इसलिए कफ, पित्तादिके बढ़े होनेपर भी पहले वायुको शान्त करना चाहिए। ऐसी अवस्थामें सर्पिः पान प्रशस्त होता है। वातिक प्रतिश्यायमें विदारिकन्दादि गणोक्त औषधियोंसे सिद्ध घृत पान कराएँ, पित्त प्रतिश्यायमें काकोल्यादि गणोक्त औषध सिद्ध घृतका प्रयोग करें। कफज प्रतिश्यायमें घृतसे स्निग्ध करके वामक द्रव्योंके साथ सिद्ध तिल और माषकी यवागु खिला कर वमन कराएँ। और फिर रोगीको कफ नाशक मण्ड प्रभृति खाद्य पदार्थ दें।

सन्निपातज प्रतिश्यायमें कटु, तिक्त द्रव्योंसे सिद्ध घृतका प्रयोग लाभकारी सिद्ध होता है।

इसके साथ रोगीको षड्विन्दु तैलादिकी नस्य दें, विविध प्रकारके कवलपह और अचपीडन भी इस अवस्थामें लाभ करते हैं।

महा लक्ष्मीविलास रस, वृद्धत् कस्तूरी भैरव, ब्राह्मी वटी, च्यवनप्राश, चित्रक हरीन की, तथा सर्पिः गुडका प्रयोग लाभकारी सिद्ध होता है।

यदि रोगका कारण कोई नासा तथा गलेका रोग हो तो उसका भी उचित प्रतिकार करना चाहिए।

कृष्णगोपालकी प्रतिश्यायपर औषधियाँ

कस्तूरी भैरव ❀ माणिक्यरसादि वटी ❀ आनन्दभैरव रस

नाग गुटिका ❀ व्योषादि वटी ❀ अमरसुन्दरी वटी

त्रिभुवनकीर्ति रस ❀ सञ्जीवनी वटी आदिसे

अवश्य लाभ उठावें

★ उत्तम सुखके भूखे हो तो--

--सच्ची साधना कीजिये! ★

लेखक—वैद्य मकखन लाल शर्मा "कौशिक" आ० आचार्य-आ० अलङ्कार
वैद्य इन्चार्ज राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय आहौर, जिला-जालौर

तत्त्वतः सच्ची साधना, नकलीपनसे नहीं, असली-पनसे सहज ही प्राप्त होती है। बस होना चाहिए-साधक असली! उस प्रेमाधीन, मनमोहन, मुरलीधर, तथा-प्रेमके भूखे, बनवारीके लिये, घर छोड़कर, वन-वनमें भटकनेकी आवश्यकता नहीं है।

और न किसी प्रकारका बाना बनानेकी जरूरत है ॥

—जैसे कहा भी।

"परबत परबत मैं-फिरी, नैन गंवायो रोय।

"सो बूझी पायी नहीं, जाते जीवन होय ॥

अस्तु.....

आत्मकल्याणकारी, साधनाके लिये-स्वयं सिद्ध है कि "मन विजय" साधना, ही असली साधना-करनी है। इस असली साधनासे देहका, आरोग्य आनन्द भी बढ़ता है। जैसे कहा गया है।

आनन्दो वर्धते देहे शुद्धे चेतसि राघवः।

योग वाशिष्ठ ६८।२१

हे गम! चित्त शुद्ध होनेसे देहका आरोग्य, आनन्द भी बढ़ता है। परन्तु मन शुद्धि बिना, आत्म कल्याणकारी साधना, सफल नहीं हो सकती। इसी तथ्यको सन्त कबीरदासजी इस प्रकारसे स्पष्ट ढंकेकी चोट प्रकट करते हैं। यथा:—

साला तो करमें फिरै, जीभ फिरै मुख मांहि।

मनुवां तो चहुँ दिशि फिरै यह तो सुमिरन नांहि ॥

वास्तवमें सच्ची साधनाके लिये, मनको हमें वशमें करना पड़ेगा।

अर्थात् मनकी साधना करनी पड़ेगी। जब तक मनकी साधना, भली भाँति नहीं हुई, तब तक आपकी, वह कच्ची साधना, "मणि विहीन सर्प" की भाँति अधूरी ही रहेगी।

यह अधूरी साधना, हमारी मोक्ष प्रदायिनी तथा आत्म कल्याणकारी सिद्ध नहीं हो सकती।

यदि आत्म कल्याणके तथा मोक्ष (परमपद) के सच्चे भूखे हो, तो निस्संदेह आपको "मन" निर्विषय करना ही पड़ेगा।

मनको निर्विषय किये बिना, आप उत्तमा-शान्ति तथा परमपद कदापि प्राप्त नहीं कर सकते। इस "आध्यात्मिक जीवन साधना" के रहस्यको हमारे त्रिकालदर्शी, मुनियोंने ढंकेकी चोट-स्पष्ट शब्दोंमें कहा है। यथा:—

"बन्धाय विषयासक्ति मुक्त्यै निर्विषयं मनः।

विषय भोगोंमें प्रस्त, "मन" बन्धनका कारण है, तथा निर्विषय "मन" मुक्तिका हेतु है।

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।

चित्ते चलति संसारो निश्चले योग उच्यते ॥

मन ही मनुष्यके बन्धन और मोक्षका कारण है। चित्तके चलनेमें ही यह सारा प्रपंच संसार है। और चित्तके स्थिर होनेसे मोक्ष है।

और भी कहा है।

यतो निर्विषयस्यास्य मनसो मुक्तिरिष्यते।

अतो निर्विषयं नित्यं मनः कार्यं मुमुक्षुणा ॥

अर्थात्:—

मनका निर्विषय होना मुक्ति है। इसलिये बन्धन से मुक्तिकी इच्छा करनेवालोंको अपना मन निर्विषय करना चाहिए।

अन्यदपि:—

तावदेव निरोधव्यं यावद्धृदि गतं क्षयम् ॥

एतद् ज्ञानं च ध्यानं च शेषोऽन्यो ग्रन्थ विस्तरः ॥

मनका तब तक निरोध करें, जब तक कि, हृदयकी वासनाएँ नष्ट न हो जाय, यही ज्ञान है। यही ध्यान है। और तो सब शास्त्र विस्तार है। ... वास्तवमें इस चंचल "मन" को वैराग्य भावनाओंसे ही वशमें किया जा सकता है। इस मनकी चंचलताको देखकर अर्जुनने श्रीकृष्ण भगवान्से पूछा था।

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथी बलवद्दृढम् ।

तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥

॥ गीता अ० ६।३४ ॥

हे कृष्ण ! मन बड़ा ही चञ्चल, बलवान्, और दृढ़ है। इसको वशमें रखना तो मुझे हवाको बान्ध रखनेके समान कठिन मालूम होता है।

इस आध्यात्मिक प्रश्नपर भगवान् उत्तर देते हुये क्या ही सुन्दर मनकी सफल चिकित्सा बताते हैं जिसे हर साधन पथके, पथिकको सम्यक् प्रकारेण समझ लेनी चाहिए।

"असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।

"अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥

गीता अ० ६।३५

श्री भगवान्ने कहा :—

हे महा बाहो ! इसमें तो कोई सन्देह नहीं, कि यह मन बड़ा ही चञ्चल है। और इसे वशमें कर लेना बड़ा ही कठिन है। तो भी हे कौन्तेय ! अभ्यास और वैराग्यसे यह वशमें कर लिया जा सकता है।

अतः "मन" की साधना वैराग्य भावनाओंसे करते रहना चाहिए।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर, इन जीवनका सत्यानाश करने वाले दुष्ट विकारोंको कुचल डालने वाले, शुभ विचारोंमें ही रमण कीजिये।

अशुभ विचारोंसे मनको हटाइये ।

इसे सद् ग्रन्थ अध्ययन में लगाइये ॥

निकम्मा तथा व्यर्थ की कल्पनाओंमें मत लगाइये,

कहावत है यथा:—

"खाली दिमाग शैतानका घर है।" अतः हमेशा अपनी स्मृति पटलमें, कल्याणकारी तथा परोपकारी भावनाएँ, जागृत रखनी चाहिए।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

"कविता" छन्दरोला

जीवन साधना के, मार्गको क्यों छोड़ रहे।
मौतके मुँहसे अरे, न कोई बचा रहे ॥
प्राणी निरन्तर काल, के गालमें जा रहे।
आश्चर्य शेष प्राणी, रहनेकी सोच रहे ॥ १ ॥
सत्यको गंवाकर, असत् को क्यों खोज रहे।
स्नेह पात्र फोड़कर, प्रेमको क्यों ढूँढ़ रहे ॥
ईर्ष्याको जगाकर, मानवता क्यों खो रहे।
प्यारा श्रमको भूल, सुखको कहाँ खोज रहे ॥ २ ॥
अज्ञान पिशाच से, क्यों अरे मोह कर रहे।
शान्ति बसे अन्दर, क्यों खोज बाहर कर रहे ॥
दयाको गंवाकर, धर्मको क्यों ढूँढ़ रहे।
जीवन साधना के, मार्गको क्यों छोड़ रहे ॥ ३ ॥



दन्तरोगों को दूर कर
दांतों को मोती समान
स्वच्छ बनाता है।

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेडा, कृष्ण गोपाल (भजमेर)

रक्तचिकित्सा और मांसचिकित्सा

लेखक—सीताराम जोशी

रक्त क्षयमें सूचीवेधसे रक्त चढ़ाते हैं उसके बजाय रक्त पिलाया जावे, या मांस खिलाया जावे तो अच्छा ।

चरक, सुश्रुत, वाग्भटके सभी स्थानोंमें जहाँ चिकित्सा है कोई ऐसा स्थान नहीं न कोई ऐसा अथाय है जिसमें मांसका प्रयोग न हो ।

सभी जगह आहाररूपसे, शाकाहारमें, पेयामें, औदनके साथ, वस्तिद्वारा, तैल, घृत, मांस-रससे सिद्ध करके उनका इतना अधिक प्रयोग है कि रुपयेमें चार आना तो औषध अन्नमें और द्रव्य है परन्तु बारह आने मांस ही मांसके प्रयोग भरे पड़े हैं ।

इसका तात्पर्य क्या है ? इसका उत्तर यही है कि शरीरमें रक्त और मांस दो ही तत्त्व ऐसे हैं जिनमें सभी धातु समा जाते हैं । इसलिए सद्यः क्षीण हो चहो, क्रमशः दुर्बल हो, मांस रससे मांस रस सिद्ध अन्य पेया, विलेपी, ओदन आदि आहार द्वारा या वस्ति, अभ्यंग, लेपादि बाह्य प्रयोग द्वारा, जैसे भी मांस शरीरमें पहुँचाया जावे तत्काल चिकित्सा होजाती है ।

वैद्योंने इस प्रयोगसे घृणा की, तभी इनको चिकित्सा में लाभ कम प्रतीत होने लगा ।

हाकिम लोग कॉडलिवर आइल देते हैं यह नगण्य जैसा है, फिर भी लाभ होता है ।

रक्त सीरम चढ़ाते हैं रक्तका वैक बना हुआ है । रक्त जमा करना, आवश्यकताके समय निकाल लेना मेरी सम्मतिमें ऐसा प्रयोग मिथ्या प्रयोग है ।

जहाँ सद्यो मांसका या ताजे रक्त पीनेका प्रयोग है वहाँ सूचीवेधसे तोला दो तोला रक्त कभी अधिक न सकल

है । रक्तके क्षयमें रक्तका कटोरा भर पीना, या साबुत यकृतको खिलाना लिखा है । वहाँ वासी सड़ा हुआ, रक्खा हुआ विजातीय रक्त इतना फायदा नहीं कर सकता जैसा कि ताजा रक्त ।

इसीलिए महर्षियोंने जगह जगह रक्त क्षयमें रक्तके प्रयोग लिखे हैं ।

यदि तत्काल न मिल सके तो, सद्यो मांससे भी रक्तके सारतत्त्व प्राप्त होजाते हैं ।

परन्तु इनको समझावे कौन ? विलायतसे यह बात शुरु हो जावेगी, उस दिन तो ये बातें वेदकी ऋचाएँ समझी जावेंगी । आज चरक सुश्रुतादिमें भले ही सर्वत्र मांस चिकित्सा की व्याप्ति है, पर कोई माननेको तैयार ही नहीं, श्रद्धा और विश्वास ही नहीं ।

संशय बना रहता है । अनिश्चय जब खुदको है, तब "संशयात्मात्रिनश्यति" वाली कहावत चरितार्थ है ।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि बृहत्सूत्री, लघुसूत्री, आप्त वाक्य हैं, वीतराग, निर्लोभी, निरहंकारी, दयापर महर्षियोंने बड़ी भारी कृपा की है जो ऐसी उत्तम चिकित्सा बताई है । साधारण वनस्पतियाँ और साधारण उपयोगी मांस चिकित्सा सर्वत्र प्राप्त हो सकती है ।

मेरा यह तात्पर्य नहीं कि जगह जगह ग्राम-ग्राम में पशु हिंसा हो ।

परन्तु मेरा आशय तात्पर्य यह है कि स्वस्थ मनुष्य प्रसादके लिए जो मांस आहार करते हैं, वे यह त्याग दें । और रोगीके प्राण बचानेके लिए पशु शालाएँ अथवा वनचर विभागको काममें लिया जावे । यदि

हिंसासे भी घृणा हो, और छिपकर अण्डोंका प्रयोग किया जावे, या सूची वेधसे रक्त चटाकर जिलानेका प्रयत्न किया जावे, उस कुरिसत घृणित प्रयोगसे तो यह प्रयोग जो शास्त्रीय है अच्छे हैं। जिन महर्षियोंने "अहिंसा प्राणिनां प्राणवर्धनानां उत्कृष्टा" यह लिखा है, उन्हीं महर्षियोंने मांसके प्रयोग स्नेहनमें स्वेदनमें आहारादि विहारादिमें खूब लिखे हैं।

धर्मका तत्त्व गूढ़ रहता है-महर्षियोंके तात्पर्य गहन है। उसको समझना समझाना गुरुका काम है-गीतामें लिखा है—

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्मयः।

स बुद्धिमान् मनुष्येषु सयुक्तः कृत्स्न कर्मकृत् ॥४ अ०

अर्थात्—कर्म रागद्वेषरहित, स्वाभाविक, सहज, नियत, कर्मको अकर्म देखें (यह कर्म भी बन्धनकारक न होनेसे अकर्म ही है ऐसा समझें)। और अकर्म कहते हैं ज्ञानको, अकर्ममें ज्ञानमें कर्म देखें (ज्ञानपूर्वक कर्म करे) वह बुद्धिमान् है।

इस प्रकार कर्म, कर्तव्य कर्म, और अकर्म जिससे बंधन न हो, ऐसा ज्ञान, इसमें चलने वाला मनुष्य ही योगी है, और कर्मके रहस्यको जानता है।

हे अर्जुन ! कर्म और अकर्म तथा विकर्म तीनोंको ही जानना चाहिये, कर्मकी गति बड़ी गहन है।

इसीको चरकमें स्पष्ट किया है कि—

उत्पद्यते च सावस्था दोष काल बलं प्रति।

यस्यां कार्यमकार्यं स्यात् कर्म कार्यं विवर्जितम् ॥

अर्थात् देशकाल दोष बलादिके कारण अवस्था शरीरके अवयवोंमें परिवर्तन लक्षणोंमें आविर्भाव-तिरोभाव, होता रहता है-सम्प्राप्तिवशात् जब परिवर्तनोंका प्रवाह चले, तब किन लक्षणोंको देखकर कौनसा रोग नाम निर्देश पूर्वक निर्णय किया जावे, जो रोगकी आकृति २० मिनट पहले थी इस समय नहीं है लक्षण भी औरके और ही हो गये, ऐसी स्थितिमें रोग निर्णय कर उसकी चिकित्सा करना बड़े बुद्धिमान वैद्यका काम है। पहले कफोत्पन्न सन्निपात निर्धारित किया था वापिस आकर देखा तो पित्तोत्पन्नके लक्षण उपस्थित हैं ऐसी स्थितिमें पहले जो

व्यवस्था पत्रमें भेषज व्यवस्था थी, वह रद्द हो गई अर्थात् थोड़ी देर पूर्व जो चिकित्सा करना चाहते थे वह इस समय अकार्य हो गई। और जो चिकित्सा निषिद्ध थी उसे करना पड़ा।

यह है कार्याकार्यके ज्ञानकी दुरुहता। इसीके कारण कार्य अकार्य हो जाता है और अकार्य कार्य हो जाता है इसी आशयको लेकर भगवान् कहते हैं—

कर्मणो गहनागतिः कर्तव्यं कर्म किस टाइमपर क्या करना, क्षणमें प्रोग्राम बदल जाते हैं अतः कर्मकी गति समझनी मुश्किल है। सूक्ष्म दृष्टिसे सावधान होकर ज्ञान पूर्वक कर्म करने चाहिये।

यही अकर्मको कर्म, कर्मको अकर्म बनानेका अभिप्राय है। ज्ञानमें रहो, अज्ञानमें अन्धे होकर कर्म मत करो, अन्धे होकर चलोगे तो गिरोगे।

पूर्व प्रसंगका यहां जोड़ देनेका मतलब यही है कि मांसका औषध आहारमें विवेकपूर्वक शास्त्रोक्त विधिसे प्रयोग किया जावे तो आयुर्वेदका प्रत्यक्ष चमत्कारी लाभ सबके दृष्टि गोचर हो सकता है। जहाँ पावभर रक्तकी शीघ्र शरीरमें पहुँचानेकी आवश्यकता है, जहाँ तत्काल रक्त अधिक मात्रासे पिलाना चाहिये, वहाँ सूचीसे तोले दो तोले रक्तके पहुँचानेमें विशेष लाभ नहीं हो सकता।

जहाँ आधासेर एक गिलास पानी पिलाना चाहिये, वहाँ एक चुल्हू पानीसे प्यास नहीं बुझ सकती।

बहुतसा समाज निरपराधी जीवोंकी अकारण अनर्थकारी हिंसा कर रहा है। उसके बजाय यदि चिकित्सा मात्रके लिए हिंसा की जावे तो वह प्रचुर मात्रामें अनर्थकारी न होगी।

यद्यपि सूक्ष्म दृष्टिसे हिंसासे कोई प्राणी बच नहीं रहा है, किसी न किसी रूपमें सबसे हिंसा हो रही है। परन्तु अनर्थकारी अकारण हिंसा विशेष अधर्म रूपमें गिनी जाती है ऐसा शास्त्रका सिद्धान्त है।

अच्छे वैद्य लोग आज भी छागलाय घृत, सर्पिर्गुंड, आदिका प्रयोग करते हैं। मनुष्य जीवनके लिए थोड़ी हिंसा नगण्य है बजाय महती हिंसाके। जैने सुना है—बादशाहके भोजनके थालमें १०० चिड़ियों

हिंसा होती है। और थोड़ा थोड़ा स्थलचर जलचर
जीवोंका मांस भी परोशा जाता है।

मेरी रायमें यह हिंसा अनर्थ दण्डकारी हिंसा
है। भोजन मात्रके लिए स्वस्थ मनुष्यके लिए चाहे
वह राजा क्या महाराजाधिराज क्यों न हो अनर्थ है।

बिना सैकड़ोंकी हिंसाके भी भोजन तृप्तिपूर्वक
किया जा सकता है।

पर जहां किसीके छुरा पेटमें घुसो दिया हो, और
उस व्यक्तिके रक्त निकल गया हो, मरणासन्न स्थिति
हो, ऐसी दशामें एक बकरेका रक्त उसे पिलाकर उसे
बचा लिया जावे तो यह हिंसा उपरोक्त बादशाहके
भोजनकी हिंसाकी तुलनामें कम अनर्थकारी होगी।

यदि कोई ऐसा कहे कि हिंसा हिंसा सब एक है,
थोड़ा अनर्थ, ज्यादा अनर्थ, एक है। पर ऐसा करनेसे तो
संसार की स्थिति ही नहीं रह सकती जिसे पूर्ण अहिंसा
पालन करनी हो वह तो, अपने जीवनकी बाजी
लगाकर भी हिंसा टाल सकता है पर अर्थ अनर्थ एक
समझा जावे यह समझदारका काम नहीं।

क्या जैसे एक वेतके प्रहार और १०० वेतके
प्रहारसे एकसी ही वेदना होती है ?

उसके उसके दुखमें कुछ भी अन्तर नहीं। विषय
विवृत इसलिए किया गया है कि व्यक्ति समझ ले
कि अनर्थ (व्यर्थमें हिंसा) और सार्थक हिंसाको भी
समझ ले। यह लोक स्थिति मात्र है।

राग द्वेष रहित वैद्य शास्त्र विधिसे मांसका प्रयोग
करे तो वह अनर्थ दण्ड नहीं। अतः रक्त क्षयमें सैकड़ों
का रक्त संचय कर विजातीय रक्त सूचीबद्धसे चढ़ानेके
बजाय, एक प्राणीकी हिंसाकर जीवको बचाना—
रक्तपिलाना अच्छा है। सद्योबलकर जितना रक्त और
मांस है वैसा अन्य कोई तत्त्व नहीं।

सांसांमांसमाप्यायते साम्यात् रक्ताद्रक्तम्।

यह सिद्धान्त सर्वोपरि और श्रेष्ठ है।

वैद्योंको इसके अनुसार चलनेमें हिचकिचाता
नहीं चाहिये और बिना विवेकके एक पांव भी आगे
नहीं चलना चाहिये यह भी एक रिसर्चका दिग्दर्शन है।

एक बार एक करोडपति सेठने मजाक ही मजा-
कमें कहा कि वैद्यजी हम आप लोगोंपर अद्धा करते
हैं, पर वास्तवमें आयुर्वेदमें कुछ ही नहीं है। वैद्य
लोगोंके पास जाते हैं तो सभी खानेकी चीजोंकी
मनाई करते हैं। डा० सब कुछ खानेकी राय देते हैं।
तभी उनका बोलबाला है। वेचारेको जो पहले ही
बीमारीसे मरा हुआ है अन्न बन्द कर वैद्य लोग उसे
और कमजोर बना देते हैं। ऐसा क्या पथ्य है जो
सभी बन्द, खाली मूंगकी दाल ही दाल खानेको दे।
क्या मांसाहारी, अङ्ग्रेज, पारसी आपकी दवा पसंद
करेंगे।

मैंने उत्तर दिया—आप ठीक कहते हैं परन्तु हम
तो वैद्य ही नहीं हैं न शास्त्रोक्त विधिसे आहार और
औषध देते हैं। सिर्फ गोलियां या रस मात्रकी अवक-
चरी चिकित्सा कर अपनेको वैद्य मान लेते हैं।

शास्त्रानुकूल चिकित्सा की जावे तो हमारे यहां
भी सब कुछ खानेकी इजाजत है। पर कोई आयु-
र्वेदके अनुकूल चिकित्सा करे ही नहीं और आयुर्वे-
दको दोष दे तो क्या किया जावे।

सेठ साहब !

चरक, सुश्रुत, वाग्भट, हमारे वैद्य लोगोंके मुख्य
ग्रन्थ हैं। उनमें आहारमें, औषधमें, मांस ही मांसके
साक्षात् या परम्परासे संस्कारसे प्रयोग बताये हैं।
चिकित्सा मांससे की जाती है। आहारके प्रकार है।
पेयाविलेपी, यूष, औदन सभीमें साक्षात् या संस्कारसे
मांस रोगीको दिया जाता है।

मांस दे दिया या दिला दिया तो क्या मनाई की गई
सभी कुछ बता दिया। पर इन प्रयोगोंमें युक्ति योजनाएँ
वैद्यकी बुद्धिपर निर्भर हैं। वैद्य चाहे जैसे मांसका
प्रयोग करे, तो शीघ्र ही लाभ है।

मनाई अपथ्य रूपसे सब द्रव्योंकी है। चाहे वह
साबूदाना हो या बरान्डी हो।

और युक्तिपूर्वक अवस्था विशेषसे मांस, घी, दूध,
मद्य सभी छूटसे दिये जाते हैं।

डाक्टर तो क्या छूट देंगे हमारे यहां वैद्योंको राज-
यक्ष्माम सपक मांसकी प्रयोग करना बतलाया है। और

पेटभर मद्य पीनेकी छूट दी है। क्या ऐसी व्यवस्था इतना विधान अन्य कोई डाक्टर दे सकता है ?

आजकल परिस्थिति बदल गई है। वैद्योंको मांस छूना भी पाप प्रतीत होता है।

यदि कोई मांस प्रयोगका साहस करे भी तो उसे अधर्मी बताते हैं। इस कारण आयुर्वेदमें जो मांस प्रयोगकी प्रथा थी, लुप्त होगई है। अब नई जैसी लगती है।

वास्तवमें देखा जावे तो तीन हिस्से मांस और एक हिस्सेमें वनस्पतियोंका प्रयोग कर चिकित्सा लिखी है। वैद्य ग्रन्थानुसार चिकित्सा न करे तो इसमें शास्त्रका क्या दोष है सारे ग्रन्थ मांस प्रयोगोंसे पूर्ण हैं।

यह सुनकर सेठजीने आश्चर्य माना कि, हम तो समझते थे आयुर्वेदमें जड़ी बूटी ही है। मांसका नामोनिशान ही नहीं होगा। आपने यह अजीब बात कही जो वैद्योंके मुखसे कभी नहीं सुनी।

मैंने कहा ऐसा प्रश्न भी कभी आपने नहीं पूछा होगा, तब आपका संशय कैसे दूर होता।

सेठजी ने कहा कि जब तो वैद्योंको भी चाहिये कि मरनेसे कोई बचता हो तो मांस खिलाना चाहिये। वास्तवमें बड़ा अन्धेर है।

वैद्य जी ! मुझे तो यह आज ही मालूम हुआ चमा करें मेरा कहना अनुचित लगा हो तो।

मैंने कहा यह हमारी कमजोरी है परम्परा ऐसा चल पड़ी है। वैद्य लोग लोक लज्जासे अग्रणी होकर मांस प्रयोग करनेका साहस नहीं करते।

यदि शास्त्र विधिसे चिकित्सा की जावे तो आयुर्वेद जैसी अच्छी चिकित्सा और क्या हो सकती है।

और मैं तो यह भी कहता हूँ कि आजकल तो वैद्य लोग जड़ी बूटी भी तो नहीं प्रयोगमें लेते। काय पिलाना बन्दकर इन्जेक्शन देना शुरू कर दिया है। यह हमारा अज्ञान, हमें ही दुख दे रहा है इसमें दोषी हम ही हैं।

इस गर्मी की मौसम में शीतलता प्रदान कर पेटको साफ

— एवं —

स्वस्थ रखने वाली

आमलकी रसायन

— सेवनकर —

अम्लपित्त, विदग्धाजीर्ण एवं पित्तोत्पत्ति को नष्ट कीजिये।

नेत्र-रक्षा

लेखक—वैद्य शङ्करलाल शर्मा, भिषगाचार्य, फतेहपुर (राज०)

प्रकृतिने मानव शरीरका निर्माण करते समय बहुत ही समझदारीका परिचय दिया है। शरीरमें ऐसा कोई भाग नहीं है, जिसका अपना पृथक् महत्त्व न हो। शरीर निर्माणके विषयमें आजका विज्ञान भी प्रकृतिके रहस्यको पूर्णतया हृदयङ्गम नहीं कर सका है। प्राणिमात्रके शरीरमें अङ्ग-प्रत्यङ्गोंका अलग-अलग कार्य नियत है—जैसे हाथोंका काम विविध कार्य करना है, पैरोंका कार्य शरीरको इधर उधर ले जाना तथा अपनी स्थितिमें शरीरको रखना है, उदर खोले हुए अन्नको पचाकर सभी अङ्गोंका पोषण करता है। मस्तिष्क सम्पूर्ण शरीरको आज्ञा प्रदान करता है। इसी तरह आँखें देखनेका काम करती हैं। प्राणिमात्रके शरीरमें यदि आँखोंका निर्माण न किया होता तो प्राणियोंके शरीर ही बेकार हो जाते। संसारकी सभी वस्तुएँ आँखोंसे ही देखी जाती हैं। प्रत्येक प्राणी आँखोंसे देखकर ही हर एक कार्यको ठीक तरहसे कर लेता है। अधिक क्या ! बिना आँखोंके मानव अपनी रक्षा भी नहीं कर सकता, मानव-शरीरमें यदि आँखें न हों तो वह चाहे कितना ही समृद्धिशाली व बुद्धिमान् क्यों न हो, सब बेकार हैं। अतएव सभी अङ्ग प्रत्यङ्गोंकी अपेक्षा आँखोंका विशेष महत्त्व है, आचार्य वाग्भटने भी लिखा है—

चक्षुरक्षायां सर्वकालं मनुष्यैः

यतनः कर्तव्यो जीविते यावदिच्छा ।

व्यर्थं लोकोऽयं तुल्य रात्रिन्दिवानां

पुंसामन्धानां विद्यमानेऽपि वित्ते ॥

आँखोंके महत्त्वके साथ साथ ये इतने कोमल हैं कि, ये न अधिक गर्मी सहन कर सकते हैं और न

अधिक ठण्ड। जो वस्तु विशेष महत्त्वकी होती है उसकी रक्षा करना भी बहुत आवश्यक होता है। वैसे प्रकृतिको भी इनकी रक्षाकी बड़ी चिन्ता हुई होगी तभी तो इनका स्थान शरीरमें ऊपरकी तरफ रक्खा है। कोई भी बाह्य वस्तु इनके भीतर न जा सके, एतदर्थ इनके आगे पक्ष्म (बाल) और वर्त्म (पलकें) लगा दी हैं। जिससे धूली, कंकड़ आदि न जा सकें। मानव मात्रका यह परम पुनीत कर्तव्य है कि वह अपने नेत्रोंकी सर्वदा रक्षा करे। यहाँ यह आवश्यक प्रतीत होता है कि सर्व साधारणके सम्यग् ज्ञानार्थ संक्षेप रूपमें नेत्रोंकी बनावटके विषयमें कुछ लिखा जावे।

प्रत्येक मनुष्यके नेत्रका व्यास (विस्तार) अपने अपने अंगुष्ठके भीतरी भागके समान होता है और मुटाईमें अनुमानतः दो अंगुलका होता है। नेत्रमें पाँच मण्डल (चौकुर भाग होते हैं—प्रथम पक्ष्म (नेत्र के बाहरके बाल) मण्डल, दूसरा वर्त्म (भाँफती) मण्डल, तीसरा श्वेतमण्डल (सफेद भाग), चौथा कृष्णमण्डल (काला भाग) और पाँचवाँ दृष्टिमण्डल इस तरह पाँच मण्डल होते हैं। आँखमें ६ पटल (परदे) होते हैं इनमें दो वर्त्म पटल (भाँफती) नेत्रके बाहर होते हैं और चार भीतर। भीतरके चार पटलोंमें पहला पटल रक्त और रसका होता है, दूसरा मांसका, तीसरा मेदका और चौथा अस्थिका। इनकी मुटाई दृष्टिकी मुटाईके पाँचवें भागके बराबर होती है। दृष्टिकी मुटाई मसूरकी दालके बराबर होती है। मानव नेत्र बहुत छोटा होता है किन्तु फिर भी इस नेत्रमें होनेवाले रोगोंका सख्खा छिन्तन है।

यहाँ इन सबका वर्णन करनेसे बहुत विस्तार हो जावेगा, अतः यहाँ केवल इतना लिखना ही पर्याप्त है कि पीछे जो आँखके भीतर चार पटल बताये गये हैं उनमें प्रत्येकमें विकृति होनेपर क्या क्या लक्षण होते हैं; उनका निर्देश करना आवश्यक प्रतीत होता है जिससे सर्व साधारण मनुष्य अपने नेत्रोंकी विकृति समझकर तदनुसार वैद्य या किसी आँखोंके विशेषज्ञ डाक्टरसे राय लेकर उनका प्रतीकार सके।

जिस व्यक्तिकी आँखके प्रथम पटल (यहाँ प्रथम पटलसे अस्थ्याश्रित चौथा पटल समझना चाहिये, अर्थात् सबसे भीतरी पटल) में खराबी होती है वह सभी आकृतियोंको अस्पष्ट देखता है। यह देखनेमें भी आया है कि कई व्यक्ति यह कहते सुने जाते हैं कि मुझे साफ नहीं दिखाई देता और कभी कभी साफ भी दिखाई देता है। ऐसे व्यक्तियोंके भीतरी पटलमें खराबी समझनी चाहिये।

द्वितीय (मेदके आश्रित) पटलमें खराबी होनेपर दृष्टिसे किसी भी वस्तुको ठीक तरहसे नहीं देख सकता। मक्खी, मच्छर, बाल आदिको मकड़ीके जालेके समान देखता है। मण्डल (गोलाकार) पताका (ध्वजा) किरणें न होती हुई भी देखता है। चमकते हुए कुण्डल देखता है। कई तरहकी गतिशील प्रतिच्छायाओंको देखता है। बिना ही वर्षा, बादल, अन्धकारके इनको देखता है। दूरकी वस्तु नजदीक और नजदीककी वस्तु दूर दीखती है। बहुत प्रयत्न करनेपर भी सुईका छेद नहीं देख पाता।

तृतीय (मांसाश्रित) पटलमें खराबी होनेपर ऊपरकी ओरकी वस्तुओंको तो देख सकता है किन्तु नीचेकी ओर स्थित वस्तुओंको नहीं देख सकता। बड़ीसे बड़ी वस्तुको भी वस्त्रसे ढंके हुएके समान देखता है। कान, नाक, आँखों युक्त प्राणिको भी इनके बिना देखता है। दृष्टिमें विकृति होनेपर वातादि दोषोंके अनुसार दृष्टिका रंग हो जाता है। यदि दृष्टिके नीचे बलवान दोष स्थित हों तो निकटकी वस्तुको नहीं देख सकता है और दृष्टिके ऊपर दोष स्थित हो तो दूरकी वस्तुको नहीं देख सकता है। दृष्टिके पार्श्वमें दोष स्थित होनेपर शरीरके पार्श्वमें स्थित वस्तुओंको नहीं देख सकता है।

है। यदि दृष्टिके चारों ओर दोष स्थित हो तो प्रत्येक वस्तुको परस्पर मिली हुई-सी देखता है। दृष्टिके मध्यमें दोष स्थित हो तो बहुत बड़ी वस्तुको भी बहुत ही कष्टसे देख पाता है। दृष्टिमें दोष तिरछा हो तो एक ही वस्तुको दो रूपोंमें देखता है। यदि दृष्टिमें दोष दो भागोंमें स्थित हो तो एक ही वस्तुको तीन भागोंमें विभक्त देखता है। यदि दृष्टिमें दोष कभी कहीं और कभी कहीं अनवस्थित रूपमें हो तो एक ही वस्तुको बहुत रूपोंमें देखता है। इन ऊपर कहे हुए लक्षणोंसे युक्त रोगको तिमिर रोग कहते हैं।

चतुर्थ (रक्त और रसाश्रित सबसे बाहरका) पटलमें खराबी होनेपर अर्थात् तिमिर रोगका असर जब चौथे पटलमें हो जाता है तो दृष्टिसे दीखना बन्द हो जाता है, इस अवस्थाका नाम लिङ्ग नाश है। आजकल इस रोगको मोतिया बिन्दु कहते हैं। यह रोग जब नया होवे तब मनुष्य चन्द्रमा, सूर्य, अधिक रोशनी वाले तारे और आकाशीय विजलीकी चमकको देख सकता है। पुराना होनेपर वे भी नहीं देख सकता।

आगे यह विचार किया जाता है कि आँखोंमें होने वाले रोगोंके क्या कारण हैं—कई मनुष्य तेज धूम धूम फिर कर घर आते ही बिना थोड़ा विश्राम किये, स्नान कर लेते हैं जिससे गर्म हुए मस्तक और आँखोंपर ठण्डा या गर्म पानी पड़नेसे आँखें खराब हो जाती हैं। कुछेक व्यक्ति स्नान करते समय शिरपर बार बार अत्युष्ण जल डालते रहते हैं, इससे भी आँखें खराब हो जाती हैं; अतएव आचार्योंने लिखा है कि "शिरः स्नानमचक्षुष्यमत्युष्णेनाऽम्भसा सदा" अर्थात् बहुत गर्म पानीसे शिर धोनेसे नेत्रोंको हानि पहुँचती है। बहुत दूरकी वस्तुको देखना या अत्यन्त समीपकी वस्तुको लगातार देखना या एक ही तरफ लगातार देखना, दिनमें अधिक सोना और रात्रिमें जगना, आँखोंपर गर्म वस्तुओंसे सेक करना, अधिक मिट्टी और धूँओंमें रहना, उलटीके वेगको रोकना, सिरका, काँजी आदि अधिक खट्टे पदार्थोंका सेवन, कुलथी, ठण्डका अधिक सेवन, मल-मूत्र, वायुके वेगको रोकना किसी प्रिय वस्तुके नष्ट होनेसे उत्पन्न दुःखके कारण निरन्तर रोनेसे, शिरमें चोट

लगनेसे, शीघ्र यानसे चलनेसे, ऋतु विपरीत आहार विहार करनेसे, अधिक काम, क्रोधसे उत्पन्न दुःखसे, अधिक मैथुन करनेसे, आंसुओंके रोकनेसे, बहुत सूक्ष्म पदार्थके देखनेसे, जैसे कि आजकलके अध्यापक या छात्र बहुत महीन अक्षरोंको पढ़ते हैं। इनके अतिरिक्त अधिक लाल मिरच व लवणों (सैन्धानमकको छोड़कर) का अधिक सेवन, अधिक धूपमें या अधिक ठण्डमें बिना खड़ाऊँके फिरना, अधिक चमकते हुए पदार्थोंको बार बार देखना, जैसे सूर्यकी ओर या तेज बिजलीकी रोशनीकी ओर लगातार देखना या तेज बिजलीके प्रकाशमें पढ़ना अथवा सीना या सूता काटना, रातमें सोते हुए पढ़ना, सूई पिरोना आदि आदि ऐसे कारण हैं जिनसे आँखें खराब होजाती हैं।

चिकित्साका यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि जिन कारणोंसे जो रोग हों उनका परित्याग किया जावे। अतः नेत्रोंकी रक्षाके लिए यह आवश्यक है कि उक्त कारणोंसे बचनेका हर समय उपाय किया जावे। नेत्रोंके जितने रोग होते हैं उनकी शुरुआत अभिष्यन्द (नेत्रोंमें पानी आना, उनका लाल रहना) से होती है इसलिए अभिष्यन्द (इसका अधिक स्पष्ट अर्थ है आँखोंका दुःखना), रोग होनेपर बहुत ही सावधानी पूर्वक उसका प्रतिकार करना चाहिये। इसकी शान्तिके लिए सर्वोत्तम उपाय यह है कि तैल, लाल-मिरच, नमक (सैन्धाको छोड़कर), खटाई आदि गर्म पदार्थोंको छोड़कर लघु भोजन या रहा जावे तो एक दो दिन कुछ नहीं खाना चाहिये। शुरु शुरुमें कोई तेज दवा भी नहीं डालनी चाहिये। एक दो दिन बाद बड़िया गुलाब जलमें समभाग ओलोंका पानी मिला, उसमें एक बोतलके हिसाबसे २ तोला साफ रसोत और १ तोला फुलाई हुई लाल फिटकरीको कपड़ेमें धान्यकर पोटली-सी बना उसे १२ घण्टेतक ओलोंके पानीसे मिश्रित गुलाब जलमें डूबोये रखें। बादमें उस पोटलीको अलग कर दें। इसकी दो चार बूंदें सुबह शाम झोपरसे डालनेसे नेत्रोंकी जलन, खाज, लालिमा, पीड़ा आदि शान्त होजाते हैं। आँखें दुःखनी आनेपर रातके समय बकरीके दूधमें साफ रुई भिगोकर नेत्रोंपर बांधनेसे भी नेत्रोंकी जलन, लालिमा, पानी गिरना आदि ठीक हो जाते हैं। इस

अवस्थामें इन पंक्तियोंके लेखकके अनुभवके अनुसार स्त्री स्तन्य सर्वश्रेष्ठ सिद्ध हुआ है। उसका प्रयोग भी बकरीके दूधके समान करना चाहिये। नेत्र गोलकके बाहर बबूलकी हरी पत्तियोंको खूब महीन पीसकर टिकिया बना, बान्धनेसे या लेप करनेसे भी बहुत अच्छा लाभ होते देखा गया है। इसी तरह श्वेत फिटकरी और रसोतका लेप भी बहुत लाभदायक है।

यह पहले लिखा जा चुका है कि आँखोंकी कष्ट-दायक बीमारियाँ अभिष्यन्द रोगमें असावधानी करनेसे ही होती हैं इसलिए इस अवस्थामें आँखकी रक्षाके लिए पूरा ध्यान देना चाहिये। तेज हवा और धूपसे नेत्रोंको बचाना चाहिये। जब तक नेत्र पूरे स्वस्थ न हों तब तक पूर्ण विश्राम करना चाहिये। नेत्रोंपर हरे रंगके कांचका उपनेत्र (चश्मा) लगाना चाहिये। कब्ज न रहे, एतदर्थ रातमें गोदूधसे या पानीसे त्रिफलाका चूर्ण ले लेना चाहिये। इससे मल प्रवृत्ति ठीक हो जाती है और त्रिफला आँखोंके लिए भी बहुत ही लाभदायक है।

हालों (चन्द्रशूर) ३ माशा और मिश्री ३ माशा दोनोंको मिलाकर शीतल पानीसे लेनेपर अभिष्यन्द रोग बहुत जल्दी ठीक हो जाता है। इसी तरह महा-निम्ब (बकायन) के फलोंका सेवन भी उक्त रोगकी निवृत्तिके लिए परम लाभदायक है।

अञ्जन (सुर्मा) का प्रयोग—हमारे प्रातः स्मरणीय पूज्य महर्षियोंने नेत्रोंकी रक्षाके लिए अञ्जनका प्रयोग बतलाया है। सामान्यतया सुर्माका प्रयोग प्रातः सायं हमेशा ही करना चाहिये जिससे नेत्रोंमें कोई खराबी न होने पावे। नेत्रोंके कई रोगोंमें भी इनका प्रयोग किया जाता है, जैसे शुक्र (फूला), अर्जुन (चाँव) तथा तिमिर रोगोंमें। नेत्रोंकी रोग-वस्थामें इनका प्रयोग तब किया जाता है जब कि आँखमें ही विकृति हो तथा शरीरको उल्टी और दस्त से शुद्ध करके, जब कि नेत्रमें सूजन अधिक न हो, खुजली न हो, आपसमें आँखें चिपती न हों, रगड़ कम हों, पानी कम आता हो किन्तु आँखोंमें मल गाढ़ा हो।

सभी अञ्जन (सुर्मा) एक जैसे नहीं होते, इसलिए

इसके तीन भेद शास्त्रकारोंने लिखे हैं—(१) लेखन (जो विकृतिको खुरच खुरच कर निकाले, इसका प्रयोग फूला और आंखमें मांस बढ़नेपर किया जाता है) (२) रोपण (घावको भरने वाला, इसका प्रयोग यदि नेत्रमें कोई घाव हो तब किया जाता है) (३) दृष्टि प्रसादन (नेत्रको प्रसन्न करनेवाला, जब कि तेज सुर्माके प्रयोगसे आंखें लाल और पीड़ा युक्त हो जाती हैं तब किया जाता है)

अञ्जनका समय—ऊपर सुर्माका प्रयोग प्रातः सायं करनेको लिखा गया है अतः साधारणतया उक्त समयमें आंखोंमें सुर्मा डालना चाहिये। रातके समय, सोते समय, मध्याह्नमें और सूर्यकी तेज धूपके कारण आंखें कुछ मलिन सी हों तब, सुर्माका प्रयोग नहीं करना चाहिये; कारण कि इन समयोंमें सुर्माके प्रयोगसे आंखोंमें खराबी हो जाती है। विशेष ध्यान देनेकी बात यह है कि तेज सुर्माका प्रयोग दिनमें नहीं करना चाहिये, क्योंकि नेत्रकी ज्योतिको हानि पहुँचती है। इन पीछेकी पंक्तियोंमें यह विचार किया गया है कि आंखोंमें रोग होनेपर किस अवस्थामें सुर्माका प्रयोग करना चाहिये। आयुर्वेदका यह सिद्धान्त बहुत ही उच्च कोटिका है कि मनुष्य कभी रोगी ही न हो, अतएव नेत्र सदा स्वस्थ रहें; एतदर्थ प्रत्येक मनुष्यको प्रतिदिन श्वेताञ्जन (सफेद सुर्मा) का प्रयोग प्रातः सूर्योदयके आसपास और सायं सूर्यास्तके समय करना चाहिये। ऐसा करनेसे नेत्रोंमें मल नहीं रहता और साफ दिखाई देता है, नेत्र सुन्दर भी लगते हैं। इसी तरह बढिया गुलाब जलमें घुटा हुआ काला सुरमा भी नेत्रोंमें डालना चाहिये, जिससे नेत्रोंका मल, खाज, पानी आना आदि शान्त होजाती है। नेत्रोंकी शक्ति भी बढ़ती है। दृष्टिकी शक्ति आलोचक पित्त, जो कि नेत्र गोलकके भीतरी पटलपर स्थित है, जिसे पीत बिन्दु भी कहते हैं, के आधीन है। आलोचक पित्तकी रक्षार्थ न अधिक गर्म और न अधिक ठण्डे द्रव्योंका उपयोग कभी भी नहीं करना चाहिये।

प्रति सातवें या आठवें दिन रसौतका प्रयोग भी आंखोंके लिए बहुत ही लाभदायक है। जैसा कि ऊपर लिखा गया है कि आलोचक पित्तकी रक्षा हर

समय करते रहना चाहिये। इसको (आलोचक पित्त) कभी कभी किन्हीं कारणोंसे कफ बढ़कर रोक लेता है और अधिक उपेक्षा करनेसे यही कफ आगे चलकर लिङ्ग नाश (मोतिया बिन्द) का रूप धारणकर लेता है; इसलिए कफको निकालनेके लिए हर सातवें या आठवें दिन आंखोंमें रसौत डालनी चाहिये। रसौत आंखोंके लिए बहुत ही लाभदायक है। आचार्य भावमिश्रने इसके गुण वर्णन करते समय लिखा है कि—रसौत चरपरी, कफविकारको नष्ट करनेवाली, विप और नेत्रोंके सभी रोगोंको नष्ट करनेवाली है। यह गर्म तथा कटु होनेसे कफको नष्ट करनेवाली है। घावको भी ठीक करती है।

जिस तरह वस्त्र, चूना आदिसे साफ किये हुए दर्पणमें प्रत्येक वस्तुका प्रतिबिम्ब साफ साफ दिखाई देता है वैसे ही ऊपर लिखे अनुसार अञ्जनके प्रयोगसे दृष्टि स्वच्छ हो जाती है, जिससे प्रत्येक दृश्य साफ साफ दीखता है। कुछ अवस्थाएँ ऐसी हैं जिनमें नेत्रोंमें सुर्मा नहीं डालना चाहिये। रातमें जागनेपर, थकनेपर, भोजन करनेपर, वमन होनेपर, उरमें शिरःस्नान करनेपर।

यहाँ से आगे नेत्रोंकी रक्षार्थ कुछ साधारण नियम लिखे जाते हैं, इनके ठीक तरहसे पालन करनेपर दृष्टि शक्ति ठीक रहती है। अधिक धूप या अधिक ठण्डके कारण अधिक गर्म या अधिक ठण्डी जमीनपर बिना खड़ाऊ पहने नहीं चलना चाहिये। पैरोंका नेत्रोंसे सम्बन्ध दो विशेष सिगाओं द्वारा हमारे आचार्योंने माना है। पैरोंमें मालिश करना भी आंखोंके लिए बहुत लाभदायक है। तेज धूप और तेज हवामें अधिक नहीं घूमना चाहिये। प्रातःकाल उठकर शीतल जलसे मुखको धोना आंखोंके लिए बहुत हितकर माना है। भोजनके बाद दोनों हाथोंको खूब मसलकर आंखों एवं मुखको खूब मलना चाहिये जिससे दृष्टि शक्ति बढ़ती है। हर समय नेत्रोंको साफ रखना चाहिये प्रातः उठते ही रातका बासी पानी पीनेसे नेत्रोंकी बीमारियाँ नहीं होती, इसी तरह प्रातःकाल नाक द्वारा पानी पीनेसे भी दृष्टि शक्ति बढ़ती है।

पुराने चावल, जौ, गेहूँ, कोदू, मूंग, अरहर इनका

उपयोग खानेके लिए करना चाहिये। मांस खानेवालोंके लिए पक्षियोंका मांस तथा जंगलमें रहनेवाले प्राणियोंका मांस हितकर है। शाकोंमें बथुआ, बौलाई, परवल, ककोड़ा, करेला, बैंगन, इनका शाक धृत भोजितकर खाना चाहिये। फलोंमें अनार, दाख आंखोंके लिए हितकर है। चीनी या मिश्री भी आंखोंके लिए हितकर है। आंखोंके स्वास्थ्यके लिए त्रिफला (समभाग बड़ी हरड़, आमला सूखा, बहेड़ा) का विशेष उपयोग आंखोंको धोने और खानेके लिए भी करना चाहिये। धोनेके लिए २-३ तोला कुटी हुई त्रिफलाको रातमें किसी मिट्टीके स्वच्छ पात्रमें १६ तोला पानीमें भिगो देना चाहिये। प्रातः उस पानीको नितारकर या छानकर उससे आंखोंको धोना चाहिये। खानेके लिए त्रिफला चूर्ण ३-३ माशा सोते समय ताजा पानी या गर्म दूधसे लेना चाहिये। इस प्रयोगसे पेट साफ रहता है और आंखें भी ठीक रहती हैं। त्रिफलाका गुण वर्णन करते हुए आचार्य भाव मिश्रने लिखा है कि—“चक्षुष्या दीपनी मेध्या विषमज्वर नाशिनी” त्रिफला आंखोंके लिए हितकर, अग्निवर्धक, बुद्धिवर्धक तथा विषमज्वरको नष्ट करने वाली है। अतएव त्रिफलाका प्रयोग हर मनुष्यको हर ऋतुमें आंखोंको स्वस्थ रखनेके लिए उक्त दोनों विधियोंसे करते रहना चाहिये। इसके अतिरिक्त मधुर (मीठे) और कड़ुआ रसवाले पदार्थ भी लाभदायक हैं। लवणोंमें सैन्धानमक और कूएका पानी या आकाशसे गिरा हुआ पानी, जो किसी साफ पात्रमें लिया गया हो, लाभदायक है। शहद भी आंखोंके लिए लाभदायक है। धूरके समय बिना छत्ते बाहर नहीं जाना चाहिये। बिना जूते पहने थोड़ी दूर भी नहीं जाना चाहिये।

यदि आंखोंकी कोई बीमारी, जो शल्यक्रिया (सर्जरी) साध्य न हो तो उसमें महा त्रिफला घृतका प्रयोग कई दिनों तक करना चाहिये। इसके कुछ दिन सेवन करनेसे आंखोंके रोग तो ठीक होते ही हैं, यदि कोई व्यक्ति चरमा (उपनेत्र) का आदी होगया हो तो उसका चरमा भी छूट सकता है। महा त्रिफला घृत किसी योग्य वैद्यसे बनवा लेना चाहिये।

बहुतसे व्यक्तियोंकी आंखोंमें कोई बीमारी नहीं आती।

होनेपर भी उनकी आंखें कमजोर हो जाती हैं, इसका प्रधान कारण मस्तिष्ककी कमजोरी है, क्योंकि सभी आंख आदि इन्द्रियोंका प्रधान स्थान मस्तिष्क ही है; यह आयुर्वेदमें स्पष्ट लिखा है, अतः ऐसी अवस्थामें मस्तिष्कको शक्ति देने वाले आहार विहार-वृत्त, दूध आदिका विशेष सेवन करना चाहिये, और नियम-पूर्वक ब्रह्मचर्यका पालन करना भी अत्यावश्यक है। कभी कभी दाँत निकालते समय अधिक रक्त निकल जानेपर भी दृष्टि-शक्तिको हानि पहुंचती है; अतः ऐसी अवस्थामें नेत्रोंका ध्यान विशेष रखना चाहिये।

कुछेक आहार-विहार नेत्रोंके स्वास्थ्यको हानि पहुंचाते हैं अतः उनका सेवन कभी भी नहीं करना चाहिये, वे ये हैं—चरपरे, खट्टे, भारी तीखे, (लाल-मिरच आदि) गरम पदार्थ तथा उड़द, लोबिया एवं अधिक मैथुन, अत्यधिक मद्यपान, शुष्कमांस, तिलखली, मछलीका मांस, कुछेक शाक और अंकुरित धान्य एवं जलन पैदा करने वाले अन्न पान। इनके अतिरिक्त मलमूत्रादिके वेतोंको नहीं रोकना चाहिये। अजीर्णमें भोजन भी नहीं करना चाहिये। एक बार किया हुआ भोजन जब तक न पचे तब तक दुबारा भोजन नहीं करना चाहिये। मानसिक चिन्ता, क्रोध, दिनमें सोना और रातमें जगना तथा कब्ज कारक भोजन भी आंखोंके लिए हानिकारक हैं। उगते हुए एवं अस्त होते हुए सूर्यको, एवं जब कि सूर्य ग्रहण हो रहा हो तब भी उसकी ओर नहीं देखना चाहिये।

सर्व साधारणके ज्ञानार्थ यहाँ नेत्रोंके लिए परम लाभदायक कुछ सरल योग लिखे जाते हैं—

नेत्र पीयूष—गुलाबजल १ बोतल, ओलोंका पानी १ बोतल, फुलाई हुई लालफिटकरी १ तोला, बढिया रसौत २ तोला, विधि पहले लिखी जा चुकी।

पीतनयनाञ्जन—शंखनाभिकी भस्म १ तोला, शुद्ध मैतसिल ४ तोले, श्वेतमिर्च ४ तोले, सैन्धानमक २ तोले, पीपल २ तोले, हल्दी २ तोले, सफेद फिटकरी २ तोले, सनी द्रव्योंका खूब महीन चूर्ण फुलाई हुई १० तोले। सभी द्रव्योंका खूब महीन चूर्ण वस्त्रसे छान लें। यह सुर्मा तेज है, इसका प्रयोग दुःखती आंखोंमें न करें। इस अञ्जनका उपयोग प्रातः

आंखोंमें न करें। इस अञ्जनका उपयोग प्रातः आंखोंमें न करें। इस अञ्जनका उपयोग प्रातः

मलका इकट्ठा होना, फूला ये सब विकृति ठीक हो जाती हैं। दृष्टि-शक्ति भी बढ़ती है। यह अञ्जन मेरा कई बारका अनुभव किया हुआ है।

श्वेतनयनाञ्जन—बड़ी हरड़, शुद्ध मैन्सिल, सेंधानमक, शङ्खभस्म, शुद्ध नीलाथोथा, सुवर्णमाक्षिक भस्म, सोनागेरूँ, समुद्रस्नाग, कालीमिर्च ये सब समभाग लेकर खूब बारीक चूर्ण करलें। इसका उपयोग सोते समय मधुके साथ करनेसे रतौंधी, नेत्रका बहना, कीच आना, पढ़नेमें नेत्रोंका थकना आदि सभी रोग ठीक हो जाते हैं। थोड़े दिनका फूला भी कट जाता है।

चन्द्रोदयावर्ति—बड़ी हरड़, वच, कूठ, पीपल, कालीमिर्च, बहेंडेकी गुठ्ठीकी मज्जा, शंखनाभि भस्म और शुद्ध मैन्सिल ये सभी द्रव्य समभाग लेकर

कूटने लायक दवाओंको कूट, कपड़ेसे छानकर गौ या बकरीके दूधसे खूब मर्दनकर बत्ती बना छायामें सुखालें। प्रातः सायं काँसीकी कटोरीमें थोड़ा बकरीका दूध डाल, उसमें उक्त बत्ती को घिसकर आंखमें डालनेसे तिमिर रोग (आंखोंसे कम दीखना, धूँखला दीखना), खाज, पटल, अर्बुद ये आंखोंके रोग ठीक होजाते हैं। तीन वर्ष पुराना फूला भी कट जाता है। रतौंधी एवं आंखमें यदि मांस अधिक बढ़जावे तो इसके प्रयोगसे ठीक हो जाते हैं। यह भी स्वानुभूत योग है। वैसे यह योग भावमिश्र रचित भावप्रकाश का है।

लेखककी अप्रकाशित आरोग्य सोपान पुस्तकका एक अंश।

कृष्णगोपालकी नेत्रौषधियाँ

कृष्ण नेत्राञ्जन—नेत्रके फूले, मांसवृद्धि, कुकूणकपर।

नेत्रप्रभाकर अञ्जन (मोतीयुक्त विशेष)—नेत्रदाह, दृष्टिमांद्य, जल गिरना, नेत्रकी निर्बलतापर।

पुष्पहर अञ्जन—फूला, मांसवृद्धि, आदिपर लाभ पहुँचाता है।

रक्तनेत्राञ्जन—नेत्रकी लाली, नेत्रप्रदाह, पूयमय स्राव होना, जलन, नेत्रमें घाव हो जाना, नया कुकूणक (रोहे) आदि पर।

श्वेतनेत्राञ्जन—आंख आना, लाली, मांसवृद्धि आदिपर।

कल्याण काजल—इसके अञ्जनसे नेत्र ज्योति बढ़ती है।

चन्द्रोदयावर्ति—फूला, मांसवृद्धि, नेत्र शुक्रको दूर करनेके लिए।

नेत्र बिन्दु—नेत्रोंकी लाली, खुजली चलना, आंख आना आदिपर।

नेत्र सुदर्शन अर्क (पलासांजन)—मोतियाबिन्दुकी प्रारम्भावस्थामें एवं लाली, तिमिर, दाह, रतौंधी और दृष्टिमांद्यमें भी हितकर है।

मंदाग्निकी वैज्ञानिक चिकित्सा

लेखक—वैद्य मोहनलालजी सहल, नवलगढ़

मंदाग्नि या अग्निमांश रोग मिथ्याहार, बेगौके अहित व अमित भोजन एवं कुपथ्यादिसे उत्पन्न होने वाले रोगोंमेंसे है। इस रोगमें जठराग्निकी उष्माके अभावमें रोगीकी पाचन शक्ति बिगड़ जाती है, पाचन शक्ति ठीक न होनेसे भूख धीरे-धीरे बिल्कुल बंद हो जाती है यहाँ तक कि सुपाच्य पथ्य भोजन और दूध तक हजम नहीं होता है। ऐसी स्थितिमें रोगीके सामने जीवन मरणका प्रश्न उपस्थित हो जाता है। खान पानकी असावधानी, खास करके आवश्यकतासे अधिक भोजन रोग नाशक शक्तिको काम नहीं करने देता है, वह उसको ढके रहता है। अनेक प्रकारकी औषधियोंका अनावश्यक सेवन भी रोगमें लाभकी अपेक्षा हानि ही करता रहता है। परमात्माने मानव शरीरमें ऐसी रोग नाशक शक्ति दे रखी है जिसको सुरक्षित रख कर मानव हर प्रकारके रोगोंसे बच सकता है। उक्त शक्ति परिमित पथ्य भोजनको खूब चबा-चबाकर खानेसे सुरक्षित रहती है।

हमें सबसे अधिक इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि हमें कभी अजीर्ण न हो, कभी कब्ज न रहे। हमारा पेट प्रति दिन साफ रहेगा तो ईश्वरदत्त हमारी रोग नाशक शक्ति निरन्तर कार्य संलग्न रहेगी और हमें न मंदाग्नि होगी और न कोई अन्य रोग। हमारी रोग नाशक शक्तिके कार्यशील रहनेसे सर्दी, गर्मी और वर्षा जन्य कोई रोग नहीं होगा। जुकामका भी सीधा सम्बन्ध पेटकी खराबी याने अजीर्ण और कब्ज आदिसे ही रहता है, सर्दी और ठंडी हवा से नहीं।

महात्मा पुरुषोत्तम का कथन है कि स्वादके वशीभूत हो आवश्यकतासे अधिक भोजन कदापि नहीं खाना चाहिये, क्योंकि जब वह भली भौँति भोजन नहीं जो

उपद्रव किये बिना नहीं रहेगा। आवश्यकतासे कम खानेमें जितना लाभ और आनंद मिलता है उतना आवश्यकतासे अधिक खानेमें कदापि नहीं मिलता है। हमने आजतक किसीको ऐसा कहते नहीं सुना है कि हमने कुछ कम खालिया था जिससे अमुक गड़बड़ होगयी। सदा यही सुनते आये हैं कि कुछ अधिक खा लेनेसे अमुक बीमारी होगई है। पता नहीं, कुछ लोगोंका यह कहना कहाँ तक सत्य है कि आदमी भूखसे मरता है, खानेसे नहीं। आधुनिक वैज्ञानिक युगका तो ऐसा मन्तव्य होना चाहिये कि आदमी भूखसे न मरकर खा डालनेसे ही मरता है। वास्तवमें यदि ऐसा देखा जाय तो कम खाना स्वास्थ्यमें वृद्धि करता है तथा अधिक खाना स्वास्थ्यमें हानि करता है। वशर्ते कि भली भौँति उसका पाचन न हो। हम समझ लेते हैं कि पाचन हो गया किन्तु उसमें हम भूल खाजाते हैं, वह वास्तवमें भली भौँति पचता नहीं है। आप देखेंगे कि जिसको हम पचना समझ लेते हैं, उसके बाद हमें आलस्य आता रहता है, जी खिन्न सा रहता है। पच जानेकी स्थितिमें तो स्फूर्ति आती है, तवियत प्रसन्न रहती है।

खानेका तो हमारे यहाँ नियम बना हुआ है। पेटका आधा भाग अन्नादिसे पूर्ण कर चौथाया भाग जलसे पूणे करना चाहिये। अवशेष चौथाया भाग वायु संचारके लिये खाली छोड़ा जाना चाहिये, तभी स्वास्थ्य ठीक रह सकता है। इस नियमका पालन न करनेसे ही हम रोग ग्रस्त रहते हैं।

चूँकि मंदाग्नि रोग जठराग्निमें उष्माकी कमीसे उत्पन्न होता है अतः प्रासंगिक विषयमें उष्मा विषयक विचार विमर्ष अनुपयुक्त नहीं होगा। मंदाग्नितसे बचानेके लिये हमें हमारे पेटकी जठराग्निमें

उष्माकी आवश्यकता है। इस उष्माकी क्षति पूर्ति कर दिये जानेपर ही यह रोग निर्मूल हो सकता है। भौति भौतिकी अनावश्यक औषधियोंके दिये जानेसे जठराग्निको बहुत आघात पहुँचता है और परिणाम स्वरूप यह निर्वल होजाती है। इस निर्वल हुई जठराग्निको सबल बनानेके लिये हमें सर्व प्रथम उष्मा की व्यवस्था करनी है। उष्मा भी ऐसी होनी चाहिये जो सर्वथा निर्दोष, प्रकृति अनुरूप मानव शरीरके अनुकूल व अमृतके समान लाभप्रद हो। हमारे आयुर्वेदमें जल अमृत माना गया है जिसके बिना मानवका जीवित रह सकना संभव नहीं है। इसीलिये उष्माकी उत्पत्ति हमें इस अमृत रूपी निर्मल जलसे करनी चाहिये।

मंदाग्नि वाले रोगीको चाहिये कि ४ किलो ताजा स्वच्छ जलको कलई किये हुये वर्तनमें डालकर अग्निपर तब तक गरम करता रहे जब तक उसमेंसे ३ किलोके करीब जेल न जाय। अवशेष करीब १ किलो जल उतारकर स्वच्छ वस्त्रसे छान कर मिट्टीके वर्तनमें भर लेवें। ठण्डा होजानेपर रातको सोते समय इच्छानुसार यह पीकर सोवे। यह प्रक्रिया करीब ७ दिन चालू रहनी चाहिये। यदि किसी बन्धुको आशंका रहे कि यह जल बहुत गरम होता है तो समाधानमें रोगीको मीठी छाछका सेवन भोजनोपरान्त कराते रहना चाहिये। अनेक रोगी इस प्रक्रियासे भीषण मंदाग्नि रोगोंसे छुटकारा पा चुके हैं। न कोई दवा लेनी पड़ती है, न किसी प्रकारके पथ्यादिकी आवश्यकता है और मंदाग्निसे निस्सन्देह अनायास छुटकारा मिल जाता है। वास्तवमें इसीको तो मंदाग्निकी वैज्ञानिक चिकित्सा कहते हैं।

इस लेखके लेखकने मानव शरीरमें मंदाग्निकी यह वैज्ञानिक चिकित्सा करनेसे पूर्व पशुओंपर इसका सफल परीक्षण किया था। एक गायका दूध मंदाग्नि अर्थात् खुराक कम होजानेके कारण बहुत कम हो गया था। लोहेकी एक कड़ाहीमें दो घड़े जल डाल-

कर उसे अग्निपर चढ़ाया गया था। करीब आधा घड़ा जल शेष रह जानेपर उतार लिया गया। ठण्डा होजानेपर शामको यह शीतल जल गायको पिलाया गया। यह प्रक्रिया केवल ३ दिन चालू रखी गई। कुल ७ दिनमें गायकी खुराकके साथ-साथ गायका दूध भी द्विगुणित हो गया। इस आधारको सही मान कर मानव शरीरमें मंदाग्निपर वैज्ञानिक चिकित्सा की गयी है। जिससे इतना आशातीत लाभ हुआ कि वैद्य डाक्टरों तकको चकित होजाना पड़ा। मंदाग्निके अनेक दुःसाध्य रोगी भी पूर्ण स्वस्थ होगये। आशा है, दुःसाध्य मंदाग्निसे पीड़ित हमारे ऐसे भाई बहिन, जिनको कहीं लाभ ही नहीं हुआ हो, इस वैज्ञानिक प्रक्रियासे स्वास्थ्य लाभ करेंगे तो लेखक अपना परिश्रम सफल समझेगा।

कृष्ण गोपाल की

ऊर्कष्ट
शक्तिवर्धक
स्मृतिवर्धक
रसायन



च्यवनप्राश
(सुवर्ण भस्मादि युक्त)

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

सबसे बड़ा रोग और उसकी चिकित्सा

लेखक—सीताराम शर्मा इनाणी जोशी नवलगढ राज०

मनुष्यकी बुद्धि भी त्रिगुणात्मिका प्रकृतिका परिणाम है। या ऐसा कहें कि हमारी बुद्धि मायाके तीन गुणोंसे उत्पन्न होती है। गुण हमेशा परिवर्तनशील होते हैं। अतएव हमारी बुद्धि हमारे विचारज्ञान भी प्रतिक्षण परिवर्तित होते हैं। ये गुण कर्मरज हैं।

बुद्धि कर्मानुसरणी ऐसा है तो, हमारे विचार भी कर्मानुसार प्रतिक्षण बदलते रहते हैं ?

कभी सत्त्वाधिकसे विरागकी ज्ञानकी लहर बुद्धिमें उत्पन्न होती रहती हैं। कभी पापकर्मोंके (संचित कर्मोंके) उदयमें आनेसे हमारे विचार बुद्धि या ज्ञान वीतराग जैसे हो जाते हैं।

इसीलिए मनुष्य विचारोंही विचारोंसे पाप या पुण्य अथवा अच्छे कर्म या बुरे कर्म संचित करता रहता है।

कभी अच्छी लहरें कभी बुरे विचार ये बुद्धि-वृत्तियाँ और इसका व्यापार समुद्रके तरङ्गोंकी तरह अनवरत चलता ही रहता है। जैसे समुद्रकी लहरें बन्द नहीं होती, इसी तरह विचारधाराएँ स्थिर नहीं होती।

बुद्धि जैसी आज्ञा दे, वैसे ही मन इन्द्रियाँ अशुभ-शुभ संचित करती रहती हैं।

ये ही विचार धी, धृति, स्मृति, कहलाते हैं। और ये भी तीन तीन तरहके हैं। ये ही ज्ञान, ये ही बुद्धि-वृत्तियाँ हैं।

इनके कारण हम काया, वाणी, और मनसे, पाप कर्म संचित करते रहते हैं, और इनका फल जन्म मरण और नाना योनियोंके दुःख सहते रहते हैं।

हमारा यह चक्र कभी विषयोंमें राग, कभी दुःखके अनुभवके बाद विराग भी होना रहता है।

इससे पिण्डा नहीं छूटता। कभी हम विषयोंमें सुख समझते हैं, कभी तत्त्वोदयसे दुःख मानते हैं। इसी कारण कभी सुखी कभी दुःखी होते रहते हैं।

अर्थात् सुख भी तो दुःख ही है। हम उस दुःख

नहीं मानते। यह बीच बीचमें सुखमें जो दुःखकी लहरसे वापिस सतोगुणकी तरफ मुड़ जाना, या विचारोंका विषयोंसे विराग होना अवरवैराग्य या श्मशानिया वैराग्य कहलाता है। और यह तमोगुण, रजोगुणके सतोगुणसे थोड़ी देर दब जानेसे होता है।

अर्थात् पाप कर्म सुविचारोंसे चीण होकर थोड़ी देर आत्मा अनावृत होकर विरागके सुखको समझता है। परन्तु फिर वे अशुभ कर्म आजाते हैं।

कहनेका तात्पर्य यह है कि—शुभ कर्मोंसे अशुभ कर्म दबादिये जावें तो थोड़ी देर वैराग्य आजाता है। तब धैर्य और स्मृति (पूर्वज्ञानानुभवसे) स्मृति ज्ञानमें और ज्ञानसामान्यमें भी बल आजाता है। परं यह थोड़ी देरके लिए ही।

जहाँ अशुभ कर्मका उदय आया, धैर्य भी छूट जाता है, और स्मृति भी नष्ट हो जाती है तो सत्त्वज्ञान भी नहीं रहता।

इन सबका तो चक्र तभी छूटे, जब कि शुभ अशुभ कर्मोंका एक कर्म परिमाण भी हम अपने पास नहीं रखें। हमारे पूर्ण रूपसे अशुभशुभ दोनों ही नष्ट हो जावें। तभी पराधी, पराधृति, परास्मृति, रह सकती है। और उसके रहनेसे परवैराग्य निरन्तर रहने लगता है।

विरागाग्निकी प्रचण्ड ज्वालासे हमारे रागके द्वारा विषय भोगोंको भोगनेसे संचित कर्म नष्ट होसकते हैं।

तभी हमारा परवैराग्य रूप, ज्ञान इस अज्ञानसे उत्पन्न जन्म मरण रोगको मिटा सकता है।

अधूरा ज्ञान, अधूरी धी, धृति, स्मृति, कभी जन्म मरणकी महावेदनाएँ नहीं मिटा सकती।

कुण्ठसे निकलकर खड्डे में, खड्डेसे निकलकर पुनः कुण्ठमें हम गिरते ही रहेंगे।

इस समय परवैराग्य नहीं हो सकता। और कलि की ज्वालासे सारे जीव तमरजकी ज्वालामें जल रहे हैं। कभी कभी सत्त्वकी हवा लगनेसे वैराग्य भी आता है। धैर्य भी अल्पवृत्ता है, और स्मरण भी

होता है, कि सभी स्वार्थके साथी हैं। शरीर भी सुन्दर सदान रहकर हमारे लिए दुखदायी हो जावेगा, परिवार वालोंकी तो मनोकामना पूर्ण होवे तब तक ही ये हमारे हैं, यह स्मृति भी आजाती है परंपरवैराग्य पराधी, धृति स्मृति नहीं आती।

इस समय तो—कलौकैशवकीर्तनात्, कलियुगमें एक नाम अधारा सुमर सुमर भव उतरो पारा एक ही प्रभुका नाम और उनके गुण कर्मोंका स्मरण उपाय है।

जब ऐसे उपाय आप अपनाएंगे तो प्रभुपराधी, धृति, स्मृति, देंगे। और आपका जन्म मृत्यु महारोग शान्त हो जावेगा। और कोई उपाय नहीं है।

सबसे बड़ा रोग जन्म मरणकी वेदना है। जन्म मरण कैसे मिटे, इसके लिए भगवान् आत्रेय कहते हैं, पराधी, पराधृति, और परास्मृति, परवैराग्यके कारण हैं परवैराग्यसे ही यह रोग मिट सकता है शरीर और मन इसके मूल हैं।

छिन्नेमूले नैवशाखानपत्रम् इस नियमसे जड़ उखाड़नेसे पेड़ नहीं उगता, इनकी जड़ उखाड़नेका उपाय चरक बतलाते हैं—

तयोरवृत्तिः क्रियते पराभ्यां धृतिस्मृतिभ्यां परयाधिया च
च० शा० २ अ०

पराधृतिका अर्थ है पूर्ण धैर्य। मायाका बल उसके धैर्यको ढिगा न सके। परास्मृतिका तात्पर्य है सूक्ष्मकालमें भी स्मृति (तत्त्वज्ञान) विस्मृत न हो, और पराधी उसको कहते हैं जो पूर्णज्ञान (केवलज्ञान) प्राप्त हो जावे।

इन तीनों बुद्धियोंमें परवैराग्यके कारण बलाघान होता है। या पराधी, धृति, स्मृति प्राप्त होनेपर वैराग्य हो जाता है। अर्थात् पर अपर दो वैराग्य हैं। स्थूल विषय भोगोंमें थोड़ी धीधृतिसे अवर वैराग्य हो जाता है, तथा सूक्ष्म गुणोंसे, (विषयोंके सूक्ष्म रागसे भी जब पूर्ण विराग हो जावे,) विराग हो जावे, तब आत्मज्ञानके पूर्ण होनेपर परवैराग्य हो जाता है।

तत्परं पुरुषख्यातेर्गुणवैतण्यम् योगसूत्र।
यो समक्षिये कि कुछ संतसंग सदाक्यास थोड़ी

देर स्मशानिया वैराग्य विषयोंसे हो जावे वह अवर और फिर कभी भी विषयोंमें आसक्ति न हो, जैसे गीतामें लिखा है—

यास्मिन् स्थितो न दुखेन गुरुणापि विचाल्यते।
पर धैर्यका लक्षण है।

स्मृतिर्यस्य न लुप्यते, यह स्मृतिका लक्षण है। तथा ज्ञानेन तु यद् ज्ञानं येषां न शित मात्पन्नः, यह ज्ञानका लक्षण है। ये तीनों ज्ञान परवैराग्यसे होते हैं। या इन तीनोंसे परवैराग्य होता है, तभी जन्ममरणके मूल शरीर और मनका नाश हो सकता है और प्राणी सुखी रह सकता है।

वैराग्यकी बातें तो बहुत लोग करते हैं। पर जब विपत्ति आपड़ती है तब धैर्य छूट जाता है, ज्ञान और स्मृति दोनों नष्ट हो जाती हैं।

यह अवर छोटा वैराग्य है। पर ज्ञान, पराधृति, परास्मृति, में कितनी भी जोरदार आफत पड़े, कितने ही कोई भय दिखावें, या ऐश्वर्य सम्पत्तिके लोभ दें।

उस वैराग्यसे उसकी धी, धृति, स्मृति नष्ट नहीं होती।

श्रीमद्भागतका प्रसंग है, इन्द्रने उर्वसी अप्सराको भगवान् नारायणके तपभंगके लिए भेजा, पर वे च्युत न हुए। तथा शंकर भोले भी तपश्च्युत न हुए, पराधी, धृति, स्मृतिके उदाहरण ध्रुव प्रह्लादादि हैं।

पर वैराग्य
पूर्ण प्रज्ञा व निर्बीज समाधिसे प्राप्त होता है और जिनके अष्टाङ्गयोगसे पाप नष्ट हो गये हों वे ही पराधी, धृति, स्मृतिके अधिकारी हैं। अर्थात् कर्मबीज निःशेष हुए बिना ये तीनों (बुद्धि) ज्ञान नहीं प्राप्त हो सकते।

मनुष्य कुएसे निकलकर खड्डेमें, खड्डेसे निकलकर कुएमें पहुँच जाता है। कभी सत्कर्म, कभी दुर्कर्म, इससे बनते ही रहते हैं। पर निर्जीव समाधि प्राप्त नहीं हो सकती। अर्थात् थोड़ी बहुत आसक्ति बँधी (सुख दुखों) में रहती है। इसलिए वह मुक्त होने पाता। परवैराग्य भी नहीं होता। और इसीलिए वह स्वर्ग, नरक, सुख, दुख, में पड़ा रहता। सुख

सब है दुख कूआ है, (ये दोनों खड़े ही तो हैं) ।
इसलिए वह जन्म मरणके चक्करमें घूमता
ही रहता है चरक लिखते हैं—

येवां द्वन्द्वे परासक्ति रहंकार पराश्रये ।
उदयप्रलयौ तेषां न तेषां ये स्वतोऽन्यथा ॥
परवैराग्य बिना, थोड़ेसे श्मशानिया ज्ञान वैराग्य
से मुक्ति नहीं हो सकती ।

हम बड़ों बड़ोंको देखते हैं, बड़ा दान देते हैं,
परवार त्याग देते हैं, पर स्त्रीका त्याग, राजपाट भी
त्याग देते हैं । परन्तु मान, बड़ाई, उनसे नहीं छोड़ी
जाती । तुलसीदासजी कहते हैं—

कज्जन तजबो सहज है, सहज तिरिया को नेह ।
मान बड़ाई ईरखा, तुलसी दुर्लभ येह ॥

थोड़ा सा भी अहंकार रहे, स्तुतिसे मन प्रसन्न
होवे तो, परवैराग्य नहीं गिना जा सकता ।

पर वैराग्यके उदाहरण जनक आदि कई हैं,
उनमें निर्मोही, राजाका कथानक श्रेष्ठ माना जाता
है । क्योंकि और तो ऐसे उदाहरण हैं । उनमें एक
एक व्यक्ति वैरागी हुआ है । परन्तु निर्मोही राजाका
तो सारा कुटुम्ब ही निर्मोही, परवैरागी हुआ है—

प्रसंग इस प्रकार है कि एक समय स्वर्गमें इन्द्रदेव
ने देवी देवताओंसे निर्मोही राजाकी प्रशंसा सुनी,
कि एक मृत्युलोकमें राजा है जिसका सारा कुटुम्ब
निर्मोही तथा विषयोंमें अनासक्त है । हम उसका
गुणगान करते हैं ।

यह सुनकर इन्द्र को आश्चर्य हुआ, कि राजा
जिसके पास रानियां

समृद्धि बल, धन, सेना, और सभी मोहनेकी
सामग्री चारों तरफ है । वह निर्मोही कैसे हो सकता
है । फिर राजा तो किसी हालतमें निर्मोही हो ही
नहीं सकता ।

और यदि राजा एक हो भी जावे तो, सारा परि-
वार निर्मोही हो, यह तो असंभव है । इसका निर्णय
मैं स्वयं जानता हूँ विषयभोग पतनके कारण हैं,

मैं स्वयं जानता हूँ विषयभोग पतनके कारण हैं,
पर मेरे विराग नहीं होता ।
यह बृहस्पतिसे ऋषि सुनियोंके दर्शनसे मुझे कभी

कभी विषयोंको त्याग देनेकी भावना जागृत होजाती
है, परन्तु पुनः रागकी आवृत्ति हो जाती है । यह
कार्य परवैराग्यका होना अतिदुष्कर है ।

ऐसा सोचकर इन्द्र स्वयं साधुका वेश बनाकर
निर्मोही राजाके राज्यमें एक बन था उसमें आश्रम
बनाकर बैठ गया ।

इस बनमें निर्मोही राजाका राजकुमार साधु
संगतके लिए प्रायः हमेशा जाया करता था ।

वह देवराज इन्द्र, जो साधुके वेशमें था, उसके
आश्रममें आया । इन्द्रने (साधुने) राजकुमारका
आतिथ्य किया किया, और नाम पूछा । आप कौन
हो, किसके पुत्र हो, यहां बनमें कैसे, आये हो ।

राजकुमारने उत्तर दिया, मैं निर्मोही राजाका पुत्र
हूँ और सरसंगके लिए बनमें साधुओंको ढूँढा
करता हूँ ।

साधुने जान लिया कि कि यह राजकुमार निर्मोही
का पुत्र है । पुत्र जैसी प्यारी वस्तु नहीं हो सकती ।
चलो इसीके मृत्युका समाचार लेकर चलें, राजाकी
परीक्षा लें ।

पुत्र जैसी प्रिय वस्तुके मृत्युका समाचार सुनकर
किसको मूर्छा नहीं आती, मैं जब दासीको, राजाको,
रानीको, और उसकी स्त्रीको, मृत्युके समाचार सुना-
ऊंगा तो, सारा परिवार शोक सागरमें डूब जावेगा,
और सारे राजमहलमें हाहाकार मच जावेगा ।

मेरे शोक समाचारसे एक को दुख न होगा तो
उसकी प्यारी स्त्रीको, तथा माताको, पिताको, कहूँगा—

तुम्हारा राजकुमार मेरे आश्रममें आया था अचा-
नक सिंहने उसे मेरी अनुपस्थितिमें मार दिया है । मैं
भी इस दुखसे दुखी हूँ मैंने भी अन्नजल त्याग दिया
है, और मेरा तप ध्यान छूट गया है । आप उसका
फिकर मत करो, और उत्तर कर्म करो ।

यह मनमें विचारकर साधुजी राजकुमारको यह
कहते हैं कि मैं कार्य वश जारहा हूँ, जब तक मैं न
आऊँ, आप इस आश्रममें विराजे रहें ।

ऐसा कहकर राजकुमारको आश्रममें स्थिर करके
साधुवेशधारी इन्द्र, राजा निर्मोहीके राजमहलमें
पहुँचे, और दासीको बुलाकर यह समाचार
सनाते हैं—

सुनतू चेरी श्यामकी बात बताऊं तोय ।
कंवर विनाशयो सिंहने, आसन पड़ियो मोय ॥
हे दासी तेरे अन्नदाताके पुत्र राजकुमारको मेरे
आश्रममें सिंहने खा लिया है, उसकी लाश मेरे
आसनपर पड़ी है । तू चिन्ता विलाप मत करो, और
उसके उत्तर कर्म कराओ । यह सुनकर दासी
जवाब देती है—

नां मैं चेरी श्यामकी, नां कोई मेरो श्याम ।

प्रारध्व भेगा हुया, सुनो ऋषीश्वर राम ॥

वह कहती है नां मैं किसी की दासी हूँ और न
कोई मेरा मालिक है । इस राजकुलमें कर्म (पूर्व
प्रारध्वसे) से संयोग हो गया है, ऋण परस्परका
चुकाने इकट्ठे हो गये हैं । हे योगीश्वर आप इस
चिन्तासे चिन्तित न होवें कि मेरा मालिक मर गया ।

इतनी बात सुनकर इन्द्रने देखा दासीने बड़ा
निर्मोहपना दिखलाया, जैसे किसीका सम्बन्ध ही न
हो, और उसे दुख भी नहीं हुआ ।

अस्तु उसने विचार किया कि यह तो दासी है ।
मोल ली हुई वस्तु है । इसको क्या दुख हो, जिसके
लगे उसके पीड होती है । इसको दर्द नहीं ।

राजकुमारकी स्त्रीके पास चलें, और उसे यह
समाचार सुनावें, वह अर्धाङ्गिनी है । उसको जो
दुख होगा किसीको नहीं, क्योंकि उसका तो सौभाग्य
और सुख सारा ही पतिके साथ रहता है ।

साधु—स्त्रीके पास आया—

और राजकुमारकी स्त्रीको सुनाने लगा—साधु बोला—

सुन तू चातुर सुन्दरी अबला जोवन वान ।

देवी वाहन तिलि मिल्यो तेरो श्री भगवान् ॥

कहा—हे जोवनमें भरपूर अबला, चतुर सुन्दरी
तू सुन । मेरेसे सुनाया तो नहीं जाता, पर मैं विवश
होकर सुनाता हूँ देवीवाहन (सिंह) ने तेरे श्री
भगवान्को (तेरे पतिको) मशाल डाला और मार
डाला है । वह कुछ खाया हुआ बचा खुवा लोथड़ा
मेरे आश्रममें पड़ा है ।

अब वह स्त्री उत्तर देती है—

तपस्या पूर्व जन्मकी, क्या जानत है लोग ।

जिने तपस्या आन हम अवधि किया वियोग ॥

अर्थात् पूर्व जन्मके पुण्य पापको कौन जानता है
मनुष्यका किसके साथ कितने दिन संयोग होकर
इतने दिन बाद वियोग हो जावेगा । विधाताकी गति
कोई नहीं जानता, अपने अपने कर्मोंके कारण सुख
दुख लेना देनेके सम्बन्धसे विधाताने इतने दिन संयोग
कर रक्खा था, अब अवधि समाप्त होनेपर, सम्बन्ध
विच्छेद विधिने कर दिया, यह कर्मानुसार विधाताका
कार्य स्वाभाविक है चलता ही रहता है । अर्थात्
जवानीमें मुझे सुन्दर पतिके मरनेका वियोगका कोई
दुख नहीं है ।

स्त्रीको इतना दर्द नहीं जितना माताको होगा ।
इतनी बात स्त्रीकी सुनकर साधु विचारमें पड़ गये ।
कि वास्तवमें दासीको भी दुख नहीं हुआ, और स्त्रीने
भी विलाप नहीं किया, वापिस मुझे ही उसने हान
दिया । खैर स्त्री पराई जाई है । वह भी सुख स्वार्थकी
संगिनी है, न सही । चलो आगे—माताके पास चलें
उसको पुत्र शोक अगर होगा । वह सुनकर दुखसे
दुखी हो जावेगी । स्त्री को दासी को उतना दर्द नहीं
जितना माताको होगा ।

इसके बाद—साधु माताके द्वारपर जाकर पुकार
करता है—

रानी तो मैं विपत घनी, सुत खाये मृगराज ।

हमने भोजन नां कियो, इसी मृतक के काज ॥

हे माता आपकोमें बड़ी विपत्तिमें डूबी देखता हूँ
क्या कहूँ राजकुमार मेरे आश्रममें मेरे पास सरसोंके
लिए पधारे थे, परन्तु अचानक सिंहने उनको भगद
कर मार डाला । मैं आश्रमसे बाहर चला गया था
आया तो राजकुमारको मरा पाया । क्या कहूँ माता
मैंने अभी सभी कर्म छोड़ दिये, और भोजन तक
नहीं किया है । जब तक राजकुमारकी अस्थियाँ भगद
वशेष मेरे आश्रमसे नहीं उठेगीं, तब तक मैं भोजन
नहीं लूंगा । आप धैर्य धारण करो, ओर हरिस्मरण
करो, गई वस्तु मिलनेकी नहीं है ।

सुनकर—माताने उत्तर दिया—

एक वृक्ष शाखा घनी, पंखी बैठे आया ।

पोया टी पगडो भयो, उड उड चहुँ दिशि जाया ।

माता बोली है साधो एक वृक्षके ऊपर

शाखाओंपर कहीं कहींसे आकर कई तरहके पत्ती रातको आकर बैठ जाते हैं, रात्रिमें विश्राम ले लेते हैं।

जब प्रातः काल सूर्य देव उदय होते हैं, तब सभी पत्ती कोई पहले कोई पीछे उड़ उड़कर अपने चुगोके लिए कोई पूरब, कोई पश्चिम, कोई दक्षिण, उत्तर चले जाते हैं। वैसे ही यहां इस राजघरानेमें, मैं, राजा साहब, राजकुमार, उसकी स्त्री, दास, दासी थोड़ी देरके लिए जब तक जिसकी आयु है, या लेना देना है बन्धे हैं। एक जगह इकट्ठे हैं। जब जानेका काल आवेगा, अपना अपना ऋण चुक कर सम्बन्ध विच्छेद होता जावेगा, ज्ञान रूपी सूर्य उदय होता जावेगा, सभी अपनी-अपनी जन्मान्तरकी गति कर जायेंगे।

ऐसे ही राजकुमारका इस कुलमें थोड़ी देर तकका वासा था, वादा था, अब प्रातः काल होगया, दूसरे स्थानपर जानेका उदयकाल आगया, वे वहाँ चले गये हैं।

इसमें शोक फिकरकी क्या बात है। यह तो हमेशा अनादि कालसे चलता हुआ नियम है। नई बात क्या है।

राजकुमार एक जगहसे दूसरी जगह चले गये मुझे इसका क्या फिकर। मेरा उसका इतने दिनोंका माता पिताका सुख दुखका सम्बन्ध था, हम दोनों एक जगह थे। अब उनको अपने कर्मानुसार कहीं दूसरी जगह जाना था चले गये।

आप फिकर न करें। यहाँ तो ये बातें मैं बहुत दिनोंसे देखती आई हूँ इस घरमें कई आगये, और चले गये, आगे भी कई इस राजघरमें जन्म लेंगे और जावेंगे इसका क्या शोक।

इतनी बातें सुनकर इन्द्रदेव चकित होगया, कि वास्तवमें जैसा सुना था परिवार वैसा ही निकला। देव दुर्लभ ऐसी विराग भावना वाले मनुष्य धन्य हैं।

अब परिवारके तीन व्यक्तियोंसे मिल चुका हूँ चौथा राजा है उससे भी मिल लूँ। जब उसका परिवार निर्मोही है तो वह तो ? अवश्य होगा ही इसमें सन्देह क्या है।

ऐसा विचार कर राजाके पास जाता हूँ—और उदास मुखसे कहते हैं—

राजा मुखसे राम कहो, पलपल जात घड़ी।
कुंवर विनाशयो सिंहने, मेरे पाय पड़ी ॥

हे राजन् मेरे आश्रममें तेरे कुंवरको सिंहने मार दिया है। और उसकी लाश हड्डियां मेरे पास आश्रममें पड़ी हैं।

यह सुनकर आप शोक सन्तप्त न बनो और मुखसे राम राम कहो। जीवनकी पल पल व्यर्थ जा रही है जाना सबको है, चिन्ता मत करो, यह तो स्वाभाविक घटना है। किसीन किसी निमित्तसे शरीरका वियोग होता ही है। आपके साथ इतने समय तकका ही योग था।

सुनकर राजाने-तत्काल उत्तर दिया—

तपसी तप क्यों छोड़िया यहाँ पलक नहीं शोक।
वासा रैन सरायका सभी मुसाफिर लोग ॥

आपने तपको छोड़कर यहाँ आकर समाचार सुनानेका क्यों कष्ट किया। आपने मोहमें पड़कर ऐसा ठीक नहीं किया जो तपको छोड़ा।

ऐसी दया, लोक व्यवहार किस कामका, जिसमें अपने स्वार्थकी हानि हो, तपमें विघ्न हो।

मरता जीता तो योगीराज कोई वस्तु नहीं है। क्या लड़का, क्या मैं, और आप मैं ही नहीं, सारा संसार ही मुसाफिर खाना है।

कोई धर्मशास्त्रामें दो दिन ठहरता है, कोई पांच दिन। जाना सबको है। आपने मेरे पास सहानुभूति दर्शानेका क्यों कष्ट किया, यहाँ मेरे परिवारको और मुझे तो जरा भी शोक नहीं है। हमेशा बीतने वाली बातोंका हर्ष शोक क्या है।

राजाके वचन सुनकर इन्द्रदेव जो साधुके वेशमें थे, वहाँ ही प्रगट हो गये, और कहने लगे। राजन् ! मैं इन्द्र हूँ, आपकी प्रशंसा सुनकर आपकी परीक्षा लेने आया हूँ मोहकी महिमा अगार है। आपने यह महादुर्लभ वैराग्य प्राप्ति का लाभ कैसे लिया, कृपाकर मुझे समझाइए, मैं विषयासक्तिसे और राजसुखसे कैसे विरक्त होऊँ ?

राजाने उत्तर दिया, अनेक जन्मोंकी भक्तिसे भगवान् हृदयका अज्ञान दूर कर देते हैं। अज्ञानसे

ही रागान्धकारमें प्रवृत्तिकर जीवकर्मबान्धता है और जन्म मरणके दुःख भोगता है ।

आप भी श्रीपति ब्रजेन्द्रनन्दन श्री कृष्णके चरणारविन्दका शरण लो, और तत्त्वचिन्तनका अभ्यास करो । करते करते पहले थोड़ा विषयसे विराग होगा, फिर सूक्ष्म वासना भी मिट जावेगी, और परवैराग्य हो जावेगा । मोह छूट जावेगा । मैंने और मेरे परिवारने सदा साथ रहकर भगवानकी अनन्य प्रेमलक्षणाभक्ति की थी, हमारा सारा परिवार ही श्रीमत्चरणानुरागी रहा था । अब मेरा अन्तिम शरीर है । कुछ काल बाद निर्वाण पद हम सबको होने वाला है । आप भी श्री कृष्णके चरणोंकी शरण लें ।

इतना ज्ञान ले, इन्द्र आश्रममें लौटे, और राज-कुमारको सारा वृत्तान्त सुनाकर, सम्मान सहित क्षमायाचनाकरते हुए राजकुमारको विदा किया, और स्वयं भी स्वर्गमें लौट आये ।

अपनी यात्राका सभामें प्रवचन किया सभी देवी देवताओंके समक्ष वे बोले । देखो मैंने निर्मोही राजाकी प्रशंसा सुनी, और मुझे आश्चर्य हुआ कि जैसे मेरे पास सुख साधन हैं, अप्सरायें हैं, खानपान से कल्पतरु, मेरी सब इच्छाएँ पूरी करते हैं । सभी विमानोंमें चलने वाले देव, और ऊपर नीचेके देव, मेरी आज्ञा मानते हैं । इन्द्राणी रूपसौन्दर्यकी निधि; भोग सामग्री सब मेरे पास है, इसी तरह मृत्युलोकके राजाओंके पास भी भोग साधन मेरी अपेक्षा थोड़े कम हैं, परं मेरा विराग नहीं होने पाता ।

मैं सदा इन भोगोंमें उलझा रहता हूँ । वह निर्मोही राजा कैसे विरागी हुआ, हो नहीं सकता । मुझे आपकी बातपर संशय हुआ था, तब मैंने स्वयं जाकर सब देखा, परीक्षा ली, सब बातें यथार्थमें मिली ।

मैंने पहले साधुका वेष बनाकर वनमें आश्रममें अपना जमाव डाला, वहाँ राजकुमार सत्सङ्गके लिए आया था । उसके सब समाचार पूछने सुननेके बाद, मैं उनको छोड़कर राजमहलोंमें, जहाँ जिस जगह गया, अलग अलग सबके रहनेके महल बने हुए थे । सारा परिवार वीतराग था ।

पहले मैंने दासीकी राजकुमारकी मृत्युका

समाचार सुनाया । उसने भी शोक नहीं किया, तब मैंने सोचा यह तो दासी है खरीदी हुई है, इसे राज-कुमार की मृत्युका दुःख क्यों होने लगा ।

चलो स्त्रीके पास चलें, वह अर्धाङ्गिनी है, उसको दर्द होगा । वहाँ भी वैसा ही उत्तर मिला, बादमें स्त्री भी सुखकी संगिनी होती है । परायें घरकी नार है, उसको भी क्या दुःख होगा, राजमहलमें सभी सुख रहते हैं । स्त्रीको क्या परवाह है ।

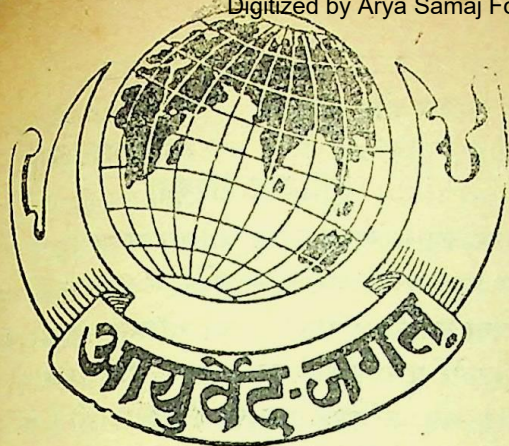
माताके पास चलें, उसे सुनकर जरूर दुःख होगा । क्योंकि उसने ९ मास उदरमें पाला, फिर बाहर पाला पोषा, माताका स्नेह अधिक होता है ।

पर माताने भी पुत्र मृत्युके समाचार सुनकर दुःख नहीं प्रकट किया, तब मुझे उसके कुटुम्बकी विरागतापर विश्वास हो गया ।

फिर मैं पिताके पास गया, पुत्र पिताका अंश होता है । भगवान रामकी वनवासकी सुनकर, दशरथजीकी मृत्यु होग गई । पिता पुत्रके वियोगकी भी नहीं सह सकता । मृत्यु तो कैसे सहनकर सकता है । परन्तु मैंने पिताके पास भी वही उत्तर पाया । तब मैं दङ्ग रह गया, और मैंने स्वयंका रूप बताकर राजासे क्षमा मांगी, और ज्ञान पूछा । उन्होंने मुझे कहा श्रीकृष्ण चरण शरणसे ही यह सब कुछ सुलभ हो सकता है । अन्यथा तो यह वैराग्य असंभव है ।

देवताओं ! कुटुम्ब परिवारका सुख सम्बन्ध क्षणिक है, अनिरय है । दासीने कुलमें परिवारका एकत्र होना, पूर्वकर्मसे बताया । स्त्रीने भी पूर्व जन्मके संस्कार ही पतिपत्नी संयोग वियोगके कारण बतलाये । माताने कुटुम्बको, पक्षियोंके वास वृक्षकी उपमा दी, और पिताने मुसाफिर खाना बतालाया । इस प्रकार उसके कुटुम्बके सभी निर्मोही विरागी व्यक्ति थे । मेरी यह यात्रा सर्वोत्तम रही । मेरा अज्ञान दूर हुआ । आप लोग भी उस ब्रजेश्वरकी शरण लें और मोक्षकी तैयारी करें ।

वास्तवमें निर्मोहीकी कथा घर घरमें मनन करने लायक है मैं तो अपने परिवारके व्यक्तियोंको सुनाता हूँ । सभी पाठकोंको ऐसा करना चाहिये । सुख शान्ति मिलती है ।



श्री हनुमान आयुर्वेद महाविद्यालय रतनगढ़ प्रवेश भूचना

नया सत्र ७ जुलाई सन् १९६५ से प्रारम्भ हो रहा है। भिषग्वर राजस्थानके पाठ्यक्रम को पढाने की सुव्यवस्था है। चाटर्स, मोडर्ल्स, मृणमय प्रतिकृति, तरफकाल, प्रभृति विभिन्न साधनों द्वारा शिक्षा दी जाती है। योग्य छात्रों को १५ व १० रुपये छात्र वृत्ति भी दी जाती है। इसके अतिरिक्त बोर्डिंगमें विजली की रोशनी, नोकर, पाचक, फरीश आदिका निःशुल्क प्रवन्ध है। छात्रोंके स्वास्थ्य लाभके लिये खेल कूदका समुचित प्रवन्ध है।

विकृति विज्ञान, औषध निर्माण, व द्रव्यगुण विज्ञानके प्रत्यक्ष ज्ञानके लिये उचित उपकरणोंसे सजित लेबोरेटरी, रसायनशाला और वस्तु संग्रहालय है तथा रोगी, रोग परीक्षण व मात्रा परिचय आदिके लिये अतुरालय व औषधालय की भी सुव्यवस्था है।

उक्त महाविद्यालयमें वे ही छात्र प्रविष्ट किये जावेंगे जो प्रवेशिका या विद्वत्संस्कृत मेट्रिक या हायर-सेकेंडरी या तत्सम परीक्षोत्तीर्ण होंगे। उपाध्याय और मध्यमोत्तीर्ण छात्रों को प्राथमिकता दी जावेगी।

जूनके तृतीय सप्ताह तक आवेदन पत्र प्रिंसिपल हनुमान आ० महा विद्यालय रतनगढ़ राजस्थानके पते पर भिजवाना चाहिये।

प्रिंसिपल

नगर वैद्यसभा जोधपुर

राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलनके अध्यक्ष श्री सौतारामजी मिश्रके कर कमलों द्वारा जिला वैद्य सभा जोधपुरका उद्घाटन सम्पन्न हुआ।

दिनांक २६-४-६५ को सायं ६ बजे राज वैद्य सत्यदेव शर्मा जिला निर्वाचन अधिकारीके

जिला वैद्य सभा जोधपुरका सर्व सम्मतिसे निर्वाचन सम्पन्न निम्न प्रकारसे हुआ।

१. श्री वैद्यराज अम्बादत्त व्यास अध्यक्ष
२. श्री " बाबूलालजी पुरोहित उपाध्यक्ष
३. श्री " मदनलालजी पनिया "
४. श्री " सत्यदेव शर्मा प्रधान मंत्री
५. श्री " लालचंदजी सोनी सयुक्त मंत्री
६. श्री " छांगामलजी संगठन मंत्री
७. श्री " सोहन लालजी जैन आयोजन मंत्री
८. श्री वैद्या त्रिवेणी कुमारी शर्मा कोषाध्यक्ष
९. श्री लक्ष्मीप्रसादजी जालान सदस्य
१०. श्री पुरुषोत्तम लालजी पुरोहित "
११. श्री कृष्णदासजी शर्मा "
१२. श्री मोहन लालजी रांकावत "
१३. श्री मित्र सेनजी "

जिला वैद्य सभा जोधपुरका उद्घाटन करते हुवे सम्मेलनाध्यक्षजी ने अपने भाषणमें संगठनपर बल दिया तथा प्रदेश सम्मेलनको हानि पहुंचाने वाले तत्त्वोंसे सावधान रहनेकी चेतावनी दी। तथा जिन व्यक्तियोंने सम्मेलनको छिन्न भिन्न करने की साजिश की है उनकी कटु आलोचना की और कहा कि ऐसे व्यक्तियोंके द्वारा ही आयुर्वेदका नाश हो रहा है। लेकिन हम अपने उद्देश्योंकी पूर्ति हेतु दृढ़ प्रतिज्ञा है। और इन कठिनाईयोंका सामना करते हुए और भी द्विगुण वेगसे अग्रसर होंगे। और जोधपुर जिला वैद्य सभाको मजबूत बनानेके लिये जिलेके वैद्योंको आव्हान किया।

इस ही अवसरपर महा सम्मेलन पत्रिकाके सम्पादक महोदय श्री अम्बालालजी जोशी ने अपने भाषणमें व्यक्त किया कि राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलनको जो छिन्न भिन्न करनेकी चल रही प्रवृत्तियाँ है उससे मुझे बहुत दुःख हुआ। संगठनको एक सूत्रमें बांधनेकी प्रदेशके वैद्योंसे अपील की और बताया कि हम संगठित होकर ही आयुर्वेदको उन्नत कर सकते हैं। आयुर्वेदमें हो रहे कुठाराघातकी ओर भी संकेत किया।

इसके पश्चात् नव निर्वाचित अध्यक्ष वैद्य अम्बादत्त व्यासने सम्मेलनाध्यक्ष महोदय व उपस्थित वैद्य बन्धुओंको विश्वास दिलाया कि मैं हर प्रकारसे वैद्योंका संगठनकर राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलनके झण्डेके

निचे उठा रहा हूँ। प्रधानमंत्री-नगर वैद्यसभा जोधपुर

-: गुजरात राज्यका सही कदम :-

(आयुर्वेद महा सम्मेलन पत्रिका सितम्बर १९६४
के पृष्ठ ४४० से ४४२ का हिन्दी अनुवाद)

स्वास्थ्य एवं श्रममंत्री गुजरात राज्य
एम।एच.एम. ४४२९. सचिवालय अहमदाबाद १५
१३ अगस्त १९६४

प्रिय श्री जोशी,

मैंने आपकी इस मासकी पत्रिका आयुर्वेद महा-
सम्मेलन बड़ी रुचीसे पढ़ी। मैं आपके आयुर्वेदके
वैद्योंके स्तरके सम्बन्धमें विचार जानकर बहुत प्रसन्न
हुआ। मैं आपके विचारोंसे सहमत हूँ कि जब तक
उनका वेतन नहीं बढ़ाया जायगा, तब तक उनका
स्तर नहीं बढ़ सकता।

आप यह जानकर प्रसन्न होंगे कि गुजरात सर-
कारने इस सम्बन्धमें विद्रोहात्मक कदम बढ़ाया है
जहाँ तक एलोपैथिक और आयुर्वेदिक डाक्टरोंकी
नयी भर्तीका सम्बन्ध है और कर्मचारी राज्य बीमा
विभागसे सम्बन्धित बात है वहाँ तक हमारी सर-
कारने यह निश्चय किया है कि उनके वेतनमें अन्तर
न हो। एक आयुर्वेदिक वैद्य-कर्मचारी बीमायोजनाके
अन्तर्गत गुजरात राज्यमें भर्ती होगा उसका वेतन वही
होगा जितना एलोपैथिक डाक्टर इस योजनामें भर्ती
होगा। मुझे यकीन है कि आप गुजरात सरकारके
निर्णयकी प्रशंसा करेंगे जो निर्णय संपूर्ण भारतमें
पहली ही बार लिया गया है। आप यह जानकर भी
प्रसन्न होंगे कि इन वैद्योंको जो वेतन दिया गया है
उनको इस सेवामें प्रवेश करने तथा अपनी योग्यताको
साबित करनेमें सही सिद्ध होगा।

दोनों तरहके डाक्टरोंकी भर्तीके सम्बन्धमें विज्ञा-
पनोंकी प्रतिलिपियाँ जो राज्य सरकार द्वारा प्रसा-
रित की गई हैं वे सूचना हेतु साथमें संलग्न हैं।

ये विज्ञापन योग्यता, वेतन, भँदगाई तथा अन्य
सुविधाओंका विस्तार पूर्वक बनाती है। इन विज्ञाप-
नोंके अतिरिक्त वैद्योंको ३०) २० मासिक शहरका
अलाउन्स तथा ७० प्रतिशत लोगोंको निःशुल्क
सकानकी भी व्यवस्था रहेगी। आप अपनी आयुर्वेद
महासम्मेलन पत्रिकामें यह प्रकाशित कर सकते हैं।

शुभ कामनाओंके साथ।

आपका शुभेच्छु
मोहनलाल व्यास

गुजरात सरकार

कर्मचारी राज्य बीमा योजना अहमदाबाद मेडि-
कल विभाग जो व्यक्ति आयुर्वेदिक योग्यताएँ रखते
हैं तथा कर्मचारी राज्य बीमा योजना अहमदाबादमें
इन्सियोरेंस मेडिकल आफिसर वेंटेगरी एल सी एल
वरिष्ठ और कनिष्ठमें नियुक्त लेना चाहते हैं वे अपने
प्रार्थना पत्र भेजें।

वेतन शृंखला

१. क्लास द्वितीय रु० ४८५-२०-५५५ ए. बी.
२५-६१०

२. क्लास तृतीय वरिष्ठ रु० २७०-८-३१० इ. बी.
१०-४६०

३. क्लास तृतीय कनिष्ठ रु० २३०-८-३३० इ.
बी १०-४६०

तथा विशेष कर्मचारी राज्य बीमा संघ अला-
उन्स १००) रु० प्रतिमास और अन्य भत्ते इस कैटेग-
रीके सम्बन्धित नियमानुसार मिलते रहेंगे। उपरोक्त
वेतन शृंखला बँहगाई भत्ता तथा प्राइवेट प्रेक्टिसकी
हानिको ध्यानमें रखकर सम्मिलित की गई है।

१. क्लास द्वितीय

(अ) एच पी ए आक पोष्ट ग्रेजुएट ट्रेनिंग सेंटर
आयुर्वेद, जामनगर। तीन वर्षीय अनुभव
सहित। अथवा

(बी) एल एच एम (पाटन) अगर १९४२ के पूर्व
उत्तीर्ण किया हो। अथवा:-

(सी) आयुर्वेदालंकार, गुरुकुल विश्व विद्यालय,
कांगड़ी, कमसे कम तीन वर्षीय अनुभव युक्त।
या

(डी) रजिस्टर्ड मेडिकल प्रेक्टिशनर बी एम पी
एक्ट १९३८ अथवा जी. एम. पी. एक्ट १९६३
के अनुसार, शुद्ध आयुर्वेदकी प्रेक्टिशका अनु-
भव, तथा डिस्पेंसरी या हॉस्पिटलके चलानेका
२५ वर्षीय अनुभवको प्राथमिकता दी जायगी।

२. क्लास तृतीय-वरिष्ठ

(ए) डी एस सी (आयुर्वेद प्रवीण) गुजरात या
बम्बई, साथ ही ५ वर्षीय अनुभव किसी भी
डिस्पेंसरी या अस्पतालमें काम करनेका।

तथा उच्च योग्यताएँ। जैसे-एच पी ए। या:-
(बी) आयुर्वेदिक विशारद राजकोट, संस्कृत मद्रास विशालय बड़ौदा अथवा एम एस विश्व-विद्यालय बड़ौदा, या भावनगर। साथ ही पञ्च-वर्षीय चिकित्सा करनेका अनुभव अथवा:-
(सी) रजिस्टर्ड मेडिकल प्रेक्टिशनर बी एम पी एकट १९३८ या जी एम पी एकट १९६३ साथ ही डिस्पेंसरी या अश्रमाल शुद्ध आयुर्वेदिक ढंगसे चलानेका १५ वर्षीय अनुभव।

१. क्लास तृतीय कनिष्ठ:-

(ए) डी एस ए सी (आयुर्वेद प्रवीण) गुजरात अथवा बम्बई या

(बी) रजिस्टर्ड मेडिकल प्रेक्टिशनर बी एम पी एकट १९३८ या जी एम पी एकट १९६३ साथ ही स्वतंत्रता पूर्वक १० वर्ष तक डिस्पेंसरी या अश्रमाल शुद्ध आयुर्वेदिक ढंगसे चलाने का अनुभव।

अवस्था:- ४५ वर्षसे अधिक नहीं। विशेष स्थितिमें ४० वर्ष तक।

अवधि:- एक सालसे अधिकके लिये अस्थाई नियुक्ति अथवा पब्लिक सर्विस कमीशनकी ओरसे स्थानोंकी पूर्ति करने तकके लिये।

प्रार्थना-पत्र:- असिस्टेंट डायरेक्टर मेडिकल सर्विसेज इ एस आई स्कीम गुजरात राज्य औ न्यू मैटल होस्पिटल अहमदाबादसे किसी भी कार्य दिवसको १०। से ५। के बीच प्राप्त कर सकते हैं २५ पैसेके स्टाम्पके साथ अपने पते सहित लिफाफा भेजनेपर प्राप्त कर सकते हैं। प्रार्थना-पत्र भेजने की अन्तिम तिथि १६ जुलाई १९६४ है।

वास्ते एलैपैथिक ग्रेजुएटस:- ५७ स्थान पुरुषों तथा ४७ स्थान महिलाओंके लिए जिसमें नियुक्ति राज्य कर्मचारी बीमा योजनाके अन्तर्गत लेना चाहे वे अपने प्रार्थनापत्र भेजे (गजेटर्ड) सी एल द्वितीय वेतन शृंखला:- ४८५-२०-५८५ इ बी २५-९१० साथ ही विशेष भत्ता १०० रु० प्रतिमास तथा नियमानुसार अन्य भत्ते प्राप्त कर सकेंगे। प्राइवेट प्रेक्टिस नहीं कर सकेंगे।

योग्यताएँ अनिवार्य हैं:-

आफ स्टेज्युटरी युनिवर्सिटी गुजरात राज्य अथवा दूसरी विशेष योग्यता जो कि प्रथम या द्वितीय सिडियूल भारतीय मेडिकल कौंसिल एकट १९५६ के अनुसार प्राथमिकता दी जानेवाली योग्यता:-

किसी भी राज्यमें अनुभव या प्राइवेट संस्था पोष्ट ग्रेजुएट योग्यता और गुजरातीका जानना आवश्यक।

अवधि:- एक सालसे अधिककी अस्थाई नियुक्ति नहीं दी जायेगी या जब तक गुजरात पब्लिक सर्विस कमीशनसे स्थानोंकी भरती नहीं की जाये तब तक।

अवस्था:- ४५ वर्षसे अधिक नहीं।

प्रार्थना-पत्र:- २५ पैसेके पोस्टेज स्टाम्प भेजनेपर असिस्टेंट डायरेक्टर आफ मेडिकल सर्विसेज (ए एस आई स्कीम) न्यू मैटल होस्पिटल औ ८ वलीक असारवा, अहमदाबाद १६ को ३०-६-६४ के पूर्व या उसी दिन तक भेज दें।

दिनांक:- ३० अप्रैल १९६४ ई० प्रस्तुत कर्त्ता
(वैद्य उदयलाल महात्मा, देवगढ़)

कार्यालय, राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन, पंजीकृत

मई. १९६५ स्वामी लक्ष्मीराम चिकित्सालय, जयपुर

राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन पंजीकृतके विधान की धारा ८, उपधारा २ में अंकित शक्तिका उपयोग करते हुए निम्न हस्ताक्षरकर्ता निम्नांकित व्यक्तियोंको सम्मेलनके पदाधिकारी मनोनीत करता है। सभी पदाधिकारी यथाशीघ्र अपने कार्यका उत्तरदायित्व ग्रहणकर निम्न हस्ताक्षर कर्ताको सूचित करें:-

१. वैद्यराज श्री भवानीशंकरजी उदयपुर उपाध्यक्ष
२. वैद्यराज श्री मुनीम देवेन्द्रजी जोधपुर उपाध्यक्ष
३. वैद्यराज श्री ठाकुरप्रसादजी शर्मा बीकानेर प्रधानमंत्री

४. वैद्यराज श्री स्वामी मंगलदासजी महाराज, जयपुर प्रधान संपादक

५. वैद्यराज श्री गोपालदत्तजी शर्मा जयपुर कोषाध्यक्ष

६. वैद्यराज श्री मुनीदेवजी उपाध्याय अजमेर

७. वैद्यराज श्री फूलचन्दजी शर्मा जयपुर संयुक्तमंत्री

पांच संगठन मंत्रियोंकी घोषणा बादमें की जावेगी।

अध्यक्ष

-- मेरे सब कुछ --

(स्व० श्रीरामदयाल जोशीके प्रथम वार्षिक-श्राद्धपर
भाँसीमें आयोजित श्रद्धांजलि-दिवस पर
श्रीरामनारायण वैद्यका भाषण)

अपने अग्रज गोलोकवासी पं० रामदयाल जोशीके सम्बन्धमें आज कुछ भी कहते समय अपने गलेको साफ और आँखोंको सूखा रख पाना, मेरे लिये बहुत कठिन सा जान पड़ता है। कहनेको तो वे मेरे बड़े भाई थे, परन्तु मेरे जीवनके निर्माणमें उनका इतना महत्वपूर्ण योग रहा है कि वस्तुतः वे मेरे माता-पिता, गुरु, रक्षक और बन्धु, मेरे सब कुछ थे।

शैशवावस्थासे ही उनका सहज स्वाभाविक और संरक्षणात्मक स्नेह मेरा संवल रहा। मुझे याद नहीं पड़ता कि बाल-सुलभ चापल्यकी अवस्थामें भी उन्होंने कभी मेरी उपेक्षा की हो, या मुझसे उदासीन हुए हों। बाल्यावस्थासे उनका जो स्वच्छ ममत्व मुझे मिला, वह उत्तरोत्तर बढ़ा और अन्त तक बना रहा।

हमारा जन्म स्थान राजस्थानके जयपुर क्षेत्रान्तर्गत एक छोटा सा गाँव कांसली है। पूर्वज ब्राह्मणवृत्ति पर निर्वाह किया करते थे। लगभग तीन पीढ़ी पूर्व ही, हमारे पूर्वजोंने ब्राह्मणवृत्ति छोड़कर महाजनी (लेनदेन) का कार्य अपना लिया था। भाई साहबकी ग्रहण-मेधा इतनी तीव्र थी कि पिताजीके जीवन-कालमें ही उन्होंने महाजनी व्यवसायके तौर-तरीके अपनेमें विकसितकर लिये, उनमें वे सब गुण आगये थे, जो एक बड़े घरके कुशल कर्त्तामें हुआ करते हैं यही कारण रहा कि यद्यपि वे हमारे मंझले भाई थे, तथापि परिवारमें उन्होंने अपना सर्वाधिक प्रभाव स्थापित कर लिया था।

महाजनी व्यवसायिक वातावरणसे पूर्ण उस परिवारमें जब मेरे अन्तर्मनके ब्राह्मणने जोर मारा और मुझे संस्कृत अध्ययनकी लालसा उसगी तो परिवारके प्रायः सभी जन इस कारण अवरोध बने कि मुझे पढ़नेके लिए घर छोड़कर बाहर जाना पड़ेगा। उस समय मेरे भाई साहबने ही मेरी पीठपर हाथ रक्खा, पढ़नेके लिए प्रोत्साहन दिया और अपने प्रभावसे परिवार जनोंको राजी कर लिया, इस प्रकार

मेरे संस्कृत और आयुर्वेदके अध्ययनका सबसे प्रेरक प्रश्रय वे ही थे।

ज्ञानार्जनके लिए उन्होंने जितने उत्साह पूर्वक मुझे घरसे दूर जानेकी अनुमति और सहायता दी थी, जब मैं आयुर्वेद पढ़कर आया और जीविकार्जनके लिए अन्तर्प्रदेश जाने की इच्छा की तो उन्होंने उससे अधिक निरुत्साह और अन्यमनस्कता पूर्वक मुझे वर्जित कर दिया। वे मुझे आत्मीय ममत्ववश अपनेसे दूर नहीं जाने देना चाहते थे और उनकी कुछ ऐसी मान्यता थी कि मैं वैद्यकका पेशा करके भला काम-कमा भी क्या? दूसरी ओर महाजनीके पैतृक व्यवसायमें इतनी पर्याप्त आय थी; साथ ही अपने पुत्रपथ पर उन्हें इतनी अधिक आस्था थी कि वे यह आवश्यक समझते थे कि मैं कमाने धमानेकी चिन्ताका बोझ उठाऊँ। इधर मेरा मन स्वावलम्बनके आधार पर कुछ न कुछ करनेको अकुलाता था, और उधर उनका स्नेह मुझे अपनेमें समेटे रहनेपर तुला हुआ था। बड़ी कठिनाईसे मैं निवारणकर पाया और एक प्रकारसे बाल-हठ जैसा रुख बनाकर मैंने उनकी अनुमति ले ली। कदाचित् यह वातावरण और संसर्गका ही प्रभाव था कि मुझे महाजनी व्यवसायके प्रति रत्ती भर रुचि नहीं थी। पैसेका महत्व मेरे मन-मस्तिष्कपर जमता ही नहीं था, जबकि भाई साहब बचपनसे ही पिताजीके साथ महाजनीमें रुचि रखनेके कारण द्रव्यके अर्जन, संग्रह और उपयोगके प्रति अत्यधिक सावधान, सचेष्ट और समर्थ थे। घरमें इतनी सुविधा थी कि मैं पर्याप्त धन लगाकर आस-पास या दूर कोई व्यवसाय कर सकता था, भाई साहब उसके लिए सहमत थे, परन्तु संस्कृत और आयुर्वेदके अध्ययनमें जो वातावरण उस कालमें मुझे मिला था और पठन हेतु एकाकी रहनेसे स्वावलम्बनकी जो प्रवृत्ति मेरी बन गई थी, वह मुझे अपने बलपर ही कुछ करनेके लिए उकसाया करती थी। भाई साहब निश्चय ही उसे मेरा अत्युत्साह समझते थे। और प्रयत्नपूर्वक उसका निवारण करना चाहते थे। मेरा हठ देखा तो उन्होंने लगाम कुछ ढीली करवा और यह सोचकर कि थोड़े दिनों बाद भटककर स्वयं घर लौट आयेगा, मुझे बिना घरसे पैसा लिये कहीं

भी जानेकी अनुमति दे दी। भाई साहबका उस समयका वह सोचना ही शायद मेरे विकासका बीज रूप बन गया। अपने मनमें थोड़ा सा सशक्त होकर भी, मैं प्रणकी गांठमें यह निश्चय बांधकर घरसे निकला कि अपने बलवृत्तेपर ही कुछ करके रहूंगा। श्री वैद्यनाथ-धाम (बिहार) में मेरे गांवके एक दो बालमित्र रहा करते थे, इसलिए मैं देवघर पहुंचा और उस समय गांठमें जो पांच रुपये थे, उनकी पूंजीसे ही मैंने श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवनका श्री गणेश किया। निश्चय ही मेरा यह प्रयास भाई साहब और परिवार-जनोंकी रुचिके एकदम विपरीत था, इसलिए उन्होंने मुझे निरुत्साहित करके घर लौटा लेनेकी कामनावश, प्रत्यक्षमें तो ऐसा प्रदर्शित किया कि उन्हें मेरी कोई चिन्ता नहीं, परन्तु वास्तवमें वे मेरे लिए कितने चिन्तित रहते थे और देवघरमें मेरी गतिविधियोंकी कितनी जानकारी रखते थे, यह मेरा अन्तर्मन आज भी कृतज्ञता और गौरवके साथ अनुभव करता है।

मेरे भाई साहब भावना और कर्तव्यके बीच समन्वय रखनेमें बड़े दक्ष थे। फूलसे भी कोमल और पथरसे भी कठोर। मैंने अपने प्रति उनके व्यवहारमें उनके इस गुणके अनेकशः साक्षात् दर्शन किये। देवघरमें अकेला रहता था, हठ पूर्वक परिश्रम करता था जिसका स्वाभाविक प्रभाव मेरे स्वास्थ्यपर पड़ा। जब यह बात भाई साहबको ज्ञान हुई तो उनकी ओसें भर आई। उन्होंने कड़ा आदेश भेजकर मुझे अधिक मेहनत करनेसे वर्जित किया।

भाई साहब बड़ेसे बड़े उत्तरदायित्वको सहज ही सहाल लेने और बखूबी निभा देनेमें भरपूर समर्थ थे। हमारे पूज्य पिताजीका देहान्त जब १९१८ के दिसम्बरमासे हो गया, तब एक बड़े परिवार और महाजनी जैसे उलझन पूर्ण व्यवसायका पूरा भार उठा लेना सामान्य बात नहीं थी। हम तीनों भाइयोंमें, जहां तक मेरा प्रश्न है, यह ईमानदारीकी बात है कि महाजनीके कार्य सञ्चालनके लिए मैं सिरसे पैर तक नाकाबिल था। उसमें मेरी रुचि नहीं थी बल्कि मेरे जीवनके कुछ ऐसे संस्कार बन गये थे कि मुझे उससे घृणा थी। सबसे बड़े भाई साहब स्वभाव,

व्यवहार और विचारमें एकदम सीधे-साधे। अन्ततः परिवारके कर्ताका उत्तरदायित्व मंभले भाई साहब (जोशी जी) पर पड़ा और उन्होंने जिस हृदयता, दूरदर्शिता और चातुर्य पूर्वक उस भारको सन्हाला, वह आश्चर्यजनक है। पिताजीके कार्यको उन्होंने कई गुना बढ़ाया। थोड़े ही दिनोंमें वे अपने क्षेत्रके स्वाभाविक पञ्च और श्रेष्ठ महाजन माने जाने लगे।

गांवमें परिवार एवं व्यवसायकी व्यवस्थाके अतिरिक्त ग्रामीण जनोंकी व्यक्तिगत और सामूहिक समस्याओंको सुलभानेके व्यस्ततम कालमें भी भाई साहब मेरे स्वास्थ्य और मेरी गतिविधियोंपर नियंत्रण रखनेमें कभी निश्चेष्ट नहीं हुए। इधर देवघरमें जब श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवनका काम कुछ उन्नत हो गया, तो व्यवसाय सुविधाके लिए मैं उसे कलकत्ता उठा लाया। एकाकी किया करता था। न कोई सहयोगी न कोई साझेदार। कलकत्तेकी जलवायु और मेरी परिश्रमवृत्ति एवं अनियमित जीवनने मेरे स्वास्थ्यको खोखल किया। भाई साहब मेरे स्वास्थ्यकी दुर्गतिका हाल सुन कर तिलमिला गये और कलकत्ता आ धमके। प्रताड़नाके साथ मुझसे उन्होंने कहा कि तुम्हारा स्वास्थ्य गंवाकर हमें वैद्यनाथ भवन नहीं चाहिए, घर वापस चलो। परन्तु मैं उन दिनों अपने स्वास्थ्यमें बहुत पीछे जाकर भी व्यवसायमें इतना आगे बढ़ चुका था कि पीछे कदम रखना मुझे बड़ी कायरता लगी। फलतः मैं अपने हठसे न हटा। अपने व्यवसायके भविष्यका अपना कल्पना चित्र मैंने साहस पूर्वक भाई साहबके सामने रखला व्यवसायबुद्धिमें भाई साहब मुझसे हजार गुना आगे थे, इसलिए उनकी समझमें तुरन्त आगया। मैंने उनका अनुकूल रुख देखा तो लगे हाथ यह प्रार्थना करदी कि यदि आप वर्ष भरमें दो माहका समय भी वैद्यनाथ भवनकी देख देख करनेमें यहां आकर दे दिया करें तो मेरा यह पौधा दिन दूना फूलेगा-फलेगा। उस समय व्यवसाय बुद्धिकी आशासे तो नहीं, परन्तु मेरी सुरक्षाकी भावनासे वे सहयोग देनेको सहमत हो गये। उन्होंने घरसे पूंजी लगानेका भी प्रस्ताव किया, परन्तु मुझे वह अपनी स्वावलम्ब्यवृत्तिकी अवहेलना लगा, और यह भी भय लगा कि कहीं कुसंयोगसे घरकी

पूँजी डूब न जाय, इसलिए मैंने विनम्र वर्जन कर दिया।

उसके बाद मेरे साथ, या यों समझिये कि मेरे हेतुसे श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवनपर भी भाई साहबकी कृपाका वरदहस्त छागया। उनके थोड़ेसे योग ने ही मेरे अध्यवसायको ऐसा चमत्कृत किया कि भवन व्यवस्थित संस्थानका रूप लेने लगा। यहां स्पष्ट कह दूं कि मेरी कल्पनामें यह बात नहीं थी कि श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन इतना विकास पा सकेगा, यह भाई साहबके मेरे प्रति पितृसुर्य आशीर्वादका ही प्रति फल कहा जा सकता है।

कुछ वर्षोंमें ही भवनका कार्य इतना विस्तार पा गया कि मैं भाई साहबसे यह आग्रह करनेको बाध्य होगया कि वे अपना पूरा समय भवनको दें। भाई साहबके हटते ही घरके पैतृक व्यवसायके शिथिल पड़ जानेका खतरा तो था ही, परन्तु वैद्यनाथका भविष्य उस समय तक कुछ निश्चित रूपरेखा पा गया था, इसलिए भाई साहबने कृपा पूर्वक पूरा समय देना स्वीकार कर लिया। उस समय तक भवनकी रजिस्ट्री मेरे नाम थी, ट्रेड लाइसेंस, ड्रग्स लाइसेंस, टैक्स आदि सब कुछ एकाकी मेरे नामसे थे, यह इस कारण कि मैं ही उस कार्यको करता था-वैसे हम तीन भाई सम्मिलित परिवारमें थे। जब भाई साहब भवनके लिए पूरा समय देने लगे तो उनके रहते उसका वैधानिक उत्तरदायित्व अपने नाम रखना मुझे स्वाभाविक अनुचित लगा, परन्तु भाई साहब वैसे परिवर्तनको अपेक्षित नहीं मानते थे, इधर काम बढ़ रहा था, निदान १९४७ में हम लोगोंने श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवनको लिमिटेड करा लिया और भाई साहबका मेरे प्रति जैसा पितातुल्य स्नेह था; तदनुसार ही मैंने भवनके अपने समग्र व्यक्तिगत स्वत्वाधिकार उनके चरणोंमें अर्पित करके आत्म-संतोष पा लिया। गांधीका महाजनी व्यवसाय बड़े भाई साहबके सुपुर्द कर दिया गया और हम दोनों भाई समग्ररूपेण वैद्यनाथके काममें लग गये। लिमिटेड करा लेनेपर हम दोनों ही भवनके प्रबन्धक संचालक बने। भवनका कार्य भार भाई साहबके सम्हाल लेनेसे एक बहुत बड़ा लाभ यह हुआ कि मेरा जीवन बच

गया। एकाकी कार्यमें इतना अधिक परिश्रम सुकर पड़ता था कि मेरा स्वास्थ्य एक दम साथ छोड़ गया था, उस समयकी बीमारी आज तक मेरे प्राणोंसे अटकी चली आरही है। मेरा बार बार बीमार होना भाई साहबको कितना क्लेशित करता था, इसके अनेक संस्मरण चित्र मेरी स्मृतियोंमें उभर कर आते भी मुझे हिला देते हैं।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवनको आज जो रूप स्वरूप मिला है उसका बहुत श्रेय मैं भाई साहबको कुशल व्यवसाय बुद्धिको ही मानता हूँ। अर्थके विषय में वे जितने सावधान थे, मैं उससे कई गुना अधिक असावधान था मेरा यह दुर्गुण उन्हें बहुत अखरता था और बड़ी अवस्था तक लगभग अन्त तक ही वे मुझे उसके लिए प्रताड़ित करते रहे। समझानेसे मैं न सुधरा तो उन्होंने जमकर डांट फटकार दी, उससे भी मेरी स्वाभाविक भावुकता और अर्थके प्रति असावधानता न सुधरी तो उन्होंने एक प्रबुद्ध अभिभावककी भांति मुझपर आर्थिक प्रतिबन्ध लगानेमें भी संकोच नहीं किया। वे यह जानते और मानते थे कि यदि मेरे हाथमें सब सम्पत्ति आ जाय तो मैं भावुकतावश इसे सब लुटा दूंगा (जिसे वे दान कर देना कहा करते थे) इसलिए भवनके समग्र अर्थ तन्त्रपर उन्होंने अपना सीधा और कड़ा नियंत्रण रक्खा। मुझे अपने समान ही कुशल व्यदमायी बनानेकी भावनासे कठोरता पूर्वक भी, ठीक वैसे, जैसे कोई सावधान पिता अपनी संतानके सुधारके लिए किया करता है भाई साहबने मुझे व्यवसाय और आर्थिक क्षेत्रमें ऐसे करंट लगाये जो दूसरोंके देखनेमें अनुचित लग सकते थे; परन्तु उनका हृदय इतना विशाल इतना निर्मल और मेरे प्रति इतना कृपालु था कि उनके प्रति मेरी आन्तरिक पितृव्य भावनापर कभी कोई प्रभाव पड़ ही नहीं सका। ऊपरसे कुपित बनने पर भी मेरे प्रति उनके भीतरके दुतारमें कभी बाधा बराबर भी अन्तर नहीं आया। इसी कारण आज अन्तर्धन यह अनुभव करसे मुरझा जाता है। १९१८ में नहीं; वस्तुतः मेरे पिता अब नहीं रहे।

—रामनारायण वैद्य

— बसराई ऊंचे मुक्ता प्रधान द्रव्योंसे निर्मित —

मुक्तापञ्चामृत रस

इस रस, गोदुग्ध, विदारी, शनावरी आदि ताजी वनस्पतियों की ४० भावनाओं और पुष्पोंसे निर्मित किया गया है। यह रस जीर्णज्वरके लिये अद्भुत लाभ करता है तथा अनुपान भेदसे अनेक रोगोंको नष्ट करता है। कास, श्वास, शोष, रक्तपित्त एवं हस्तपादादिके शमन करता है। रस, रक्त, मांस, अस्थि, शुक्र और ओजकी क्षीणताको दूर कर शरीरके बल, वर्ण और उत्साहको बढ़ाता है। मस्तिष्क, हृदय और फेफड़ोंको बलदायक होनेसे ग्रीष्म ऋतुमें अत्यन्त शान्तिदायक है।

मात्रा—१ से २ रत्ती, पिप्पली चूर्ण १ से २ रत्ती व मधुके साथ दिनमें दो या तीन बार।

अनुपान—दुग्ध।

मूल्य—१० ग्राम ३५-००, ५ ग्राम १७-६५, २ ग्राम ७-१५, १ ग्राम ३-६५।

❀ भवनकी औषधियां तथा पुस्तकें भारतमें सर्वत्र मिलती हैं ❀

कैंसरनाशक वटी

भयसे भी भयकर, कुष्ठसे भीषण, संसारके अधिक रोगियोंमें व्यापकरूपसे प्रचलित कैंसर (कर्कटार्बुद) नामक घोर व्याधिसे मुक्ति पानेके लिये भवनने अनुभव किया कि वाद हीरा (पुरुषसंजक) भस्म तथा स्वर्णभस्मके साथ अति प्रभावशाली अन्य औषधियोंका मिश्रण बनाकर ये वटियां बनाई हैं।

इस मारक रोगके लिये यह औषधि उत्तम लाभकारी सिद्ध हुई है। कैंसरकी प्रथम व द्वितीय अवस्थामें पूर्ण लाभ करती है।

मात्रा—१ या २ गोली; घृत, शहदके साथ अथवा केवल दूध या जलके साथ।

मूल्य—२ ग्रामकी शीशीका ६-१५ न. पै. पैकिंग पोस्टेज पृथक्।

ऋण-गोपाल आयुर्वेद भवन कालेड़ा (अजमेर) की पित्त एवं उष्णता शामक उत्तम औषधियाँ

(१) मुक्तापिष्टी—उत्तम बसराई मोतीकी यह पिष्टी मधुर एवं शीतल होनेसे वात एवं पित्तका शमनकर हृदय, मस्तिष्क, तथा फुफ्फुसको बलवान बनाती है तथा रक्त, शुक्र और ओजोवर्द्धक है। क्षयज व्रणोंमें उत्तम-वटिकाभरण (Calcification) करती है। अम्लपित्त, समस्त शरीरका सन्ताप, मूत्रदाहको नष्ट कर रक्तस्रावका बन्द करती है। भ्रम, मूर्च्छा, धराराहट, निद्रानाश, उन्माद और हृदयके रोगोंमें अद्भुत लाभ करती है।

(२) ब्राह्म रसायन (सुवर्णयुक्त विशेष)—बुद्धि स्मृति-मैधावर्द्धक, उत्तम रसायन, शक्तिप्रद, उदरशोधक। बालक, वृद्ध, युवा, स्त्री पुरुष सबके लिए हितावह है।

(३) कामदुघा रस—यह उत्तम बसराके मोती, प्रवालपिष्टी, गिलोयमल आदि प्रधान रस होनेसे शीतवीर्य, मधुर एवं वातपित्तका संशामक तथा शक्तिदायक है। हृदय और मस्तिष्कको बलवान् बनाता है। जीर्णज्वर, सर्वांग सन्ताप, अम्लपित्त, मूर्च्छा, श्वेत रक्त-प्रदर, सोमरोग तथा सगर्भा स्त्रियोंका वमन नष्ट करनेमें लाभप्रद है।

(४) बृहत् सुवर्णमालिनी वसन्त—सुवर्ण, मुक्ता, केसर, कम्तूरी, गोतीचन, शतपुटी नागभस्म तथा सहस्रपुटी अभ्रकभस्म यह विशेष योग सुवर्णमालिनी वसन्त की अपेक्षा गुणोंमें अत्यधिक उत्कृष्ट प्रमाणित हुआ है। जीर्णज्वर, राजयक्ष्मा, शुक्रक्षय, अग्निमांघ, यकृद्दौर्बल्य, पाण्डु तथा रक्तालसतामें शीघ्र चमत्कारी प्रभाव दिखाता है।

(५) सूतशेखर रस (सुवर्णयुक्त)—वातप्रकोप तथा पित्तकी अम्लता और तीक्ष्णताका शामक है। भ्रम, निद्रानाश, अम्लपित्त, खट्टे और गरम वमन, अम्लोद्गात, गलदाह और शीतपित्तमें विशेष लाभकारी है।

(६) नवरत्नकल्पामृत रस—नवरत्नोंकी पिष्टीसे निर्मित यह रस एक बरतक कल्परूपमें लेनेसे शरीरको जरा, वार्द्धक्य और क्षीणतासे मुक्त कर अद्भुत बलवान् बना देता है। जीर्णज्वर, क्षय, मधुमेह, र्वास, कास, प्रमेह, पाण्डुता और रक्तान्यता पूर्ण लाभकारी है।

J. 2

धियां

होनेसे

था म

cation

द करनी

रती है।

उत्तम

वह है

होयसत्

यक है।

मृच्छा

गोरो

वसन्त

शुकवय

है।

ता और

शोद्धान

एक व

लशाल

गान्धता



अंक ११]

आषाढ शुक्ला २ विक्रम सं० २०२२

[जुलाई १६]

* श्री नेहरूजीके वार्षिक श्राद्धपर हमारी श्रद्धांजलि *

भारतके सभी प्रान्तोंने नेहरूजी
निर्वाण तिथिके दिन उनके साकार
श्राद्धोंका स्मरणकर श्रद्धाञ्जलियां
अर्पण की।

देश विदेशोंमें भी प्रदर्शनीके
रूपमें यह वर्षी विश्वके बड़े बड़े
राष्ट्रपति और मंत्रियोंने बड़े उत्साहके
साथ मनाई।

हम भी स्वास्थ्य परिवारकी
ओरसे अपने नवभारतके निर्माता,
विश्वहितैषी श्रीर-वीर, शान्तिके दूतको
भारतमाताके लालको, बच्चोंके चाचा
को, और विश्ववन्द्य महात्मा गांधीके
उत्तराधिकारीको हृदय भरे भावोंसे
विमोह होकर श्रद्धाञ्जलि अर्पण
करने हैं।



— परामर्श मण्डल —

वैद्य श्री प्रेमशंकरजी भिषगाचार्य
संचालक आयुर्वेद विभाग राजस्थान ।
वैद्य श्री नित्यानन्दजी आचार्य,
पिलानी ।

वैद्य श्री रमेशचन्द्रजी व्यास
भिषगाचार्य ध० अजमेर ।
वैद्य श्री अम्बालालजी जोशी
साहित्यायुर्वेदरत्न, जोधपुर ।

विषय-सूची *

| क्रमांक | विषय | लेखक | पृष्ठानक |
|---------|-------------------------------------|-----------------------------|----------|
| १. | आयुर्वेद पद्यावली | वैद्य श्री मोहनलाल दीक्षित | ५६३ |
| २. | सरकार वैद्य डाक्टरोंका सदुपयोग करें | सम्पादकीय | ५६५ |
| ३. | स्वच्छ रक्त स्वस्थ शरीर | श्री लक्ष्मीनारायणजी अलोकिक | ५६७ |
| ४. | आन्त्रिक उबरका निदान | श्री कन्हैयालालजी | ५७१ |
| ५. | बबूलका उपयोग | डा० सत्यनारायणजी खरे | ५७३ |
| ६. | बच्चोंकी खांसी | श्री सीतारामजी जोशी | ५७६ |
| ७. | विश्वकी समस्या—मधुमेह रोग | पं० गौरीशंकरजी श्रोत्रिय | ५८१ |
| ८. | प्याज और लहसुनके घरेलू उपयोग | श्रीमती सुमित्रादेवी | ५८३ |
| ९. | शिरःशूल चिकित्सा (स्वानुभव) | श्री सीतारामजी जोशी | ५८५ |
| १०. | बन्ध्यात्व | श्रीकृष्णगोपालजी गुप्ता | ५८७ |
| ११. | पक्षाघातादिपर प्रयोग | श्री सीतारामजी जोशी | ५९२ |
| १२. | घुटनेके दर्दकी वैज्ञानिक चिकित्सा | वैद्य श्री मोहनलालजी | ५९३ |
| १३. | प्रीष्म ऋतु और स्रुतका उपयोग | श्री द्वारका मिश्र | ५९५ |
| १४. | चरकीय भावतत्त्वका दिग्दर्शन | श्री सीतारामजी जोशी | ५९७ |
| १५. | आयुर्वेद जगत् | | ६०४ |

—अब तकके सभी बाल काले रखने वाले केश तैलोंमें—

—पूर्णतः सफलता प्राप्त कराने वाला कृष्ण-गोपालका—

श्याम केश तैल व्यवहारमें लेकर दिमागी असन्तोष

—को दूर कीजिये—

श्रीधन्वन्तरये नमः



स्वास्थ्य



(स्वास्थ्य सुप्रति आयुर्वेद शास्त्र का भाग दशक १२)

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः ।
यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

प्रधान संपादक—

वैद्य सीताराम शर्मा जोशी

सह संपादक—

वैद्य बद्रीनारायण शर्मा

१२. अंक ११] काळेडा-कृष्णगोपाल (अजमेर) [जुलाई १९६५

आयुर्वेद पद्यावली

लेखक—वैद्य मोहन लाल दाक्षित लाडनू (राजस्थान)

(आयुर्वेद अथाह ज्ञान-सिन्धु है, यह पद्यावली है उसका एक नन्हासा जल-करा। पाठन पद्यावलीको बिन्दुस्तर पर लें, सिन्धु स्तर पर नहीं। पद्यावली "स्वास्थ्य" के लिए प्रेषित है। लाभ उठानेके सभी अधिकारी हैं।

आयुर्वेद क्या है, रोग और आरोग्य क्या ?

चोपाई

आयु हिताहित आयुष माना, जानहि आयुर्वेद घखाना ।
रोग कहावे दोष विषमता, तनु-आरोग्य कहावे समता ॥

दोहा

कफ पुषिष अरु पित्त-धरा, रक्त मांश अरु मेद ।

नर-तनु शुक्धरा सहित, सात कला के मेद ॥

वात-जिह्वा-कफ-पित्त-रक्त-मांश-मेद-सप्त-धरा ॥

आमाशय व रक्ताशय, है जग में प्रख्यात ॥

नर से नारी-तनु अधिक, आशय पूरे तीन ।
 गर्भाशय, दो स्तन्याशय, यह मत है प्राचीन ॥
 धातु सात शरीर में, रस शोणित अरु मांस ।
 मेद अस्थि मज्जा क्रमशः, सप्तम तनु शुक्रांश ॥
 प्रथम दूध रज दूसरे, वसा पसीना दन्त ।
 केश ओज उप-धातु भी, सात बताते सन्त ॥
 प्रथम त्वचा अवभासिनी, लोहित श्वेता जान ।
 ताम्रा वेदनी रोहिणी, सप्तम स्थूला मान ॥
 नवसौ स्नायु अस्थि तीनसौ, मर्म एकसौ सात ।
 दौसौ दस सन्धि कहीं, शिरा सातसौ गात ॥
 मांस पेशियां पांचसौ, रन्ध्र सहित दस छेद ।
 गर्भ-मार्ग स्तन छिद्रों का, नर-नारी में भेद ॥
 नाड़ी सोलह कण्डरा, धमनी है चौबीस ।
 यकृत प्लीहा वृक्क वृषण, ऋद् है देहाधीश ॥
 फुफ्फुस कहो या फेफड़े, श्वास चलाना काम ।
 शिरा धमनियां धातुएं, पहुंचाती अविराम ॥
 श्रोतस् छिद्र अनेक हैं, है चौदह संघात ।
 छह कूर्चा कुश-पुंज सी, जगह सीवनी सात ॥
 नार्यातव नर वीर्य का, यह शरीर संयोग ।
 दोष धातु क्षय-वृद्धि से, होते हैं सब रोग ॥

रोग-परीक्षाके आठ प्रकार

चोपाई

नाड़ी मूत्र मल जिह्वा नैना ।
 स्पर्श आकृति सुनि मुख-वैना ॥
 रूग्ण-परीक्षा आठ प्रकारा ।
 करहु निदान श्रेष्ठ उपचारा ॥

त्रिविध रोग-परीक्षा

दोहा

दर्शन स्पर्शन प्रश्न कर, त्रिविध रोग पहिचान ।
 धीरज से अनुमान कर, नाम व्याधि का जान ॥
 नाड़ी-परीक्षा स्पन्दन एवं तापमान परिचय

दोहा

नाड़ी-परीक्षा त्याज्य है, जब रोगी हो कलान्त ।
 नाड़ी देखो प्रात ही, जब रोगी हो शांत ॥

चोपाई

वक्षस्थान श्लेष्म का मानो ।
 वक्ष-बस्ति बिच पित्त पिछानो ॥

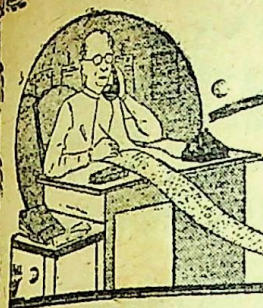
बस्ति बस्ति-तल वायु वासा ।
 दोष मुख्यतः करहु निवासा ॥
 नर-नारी कर दक्षिण-वामा ।
 नाड़ी चलती धमनी नामा ॥
 एक हाथ निश्चय ना होई ।
 तो नाड़ी दोनों में जोई ॥
 मरणासन्न हाथ नहीं चाले ।
 कंठ शिश्न कानन संभाले ॥
 पग-टखनों की नाड़ी दूटे ।
 तो निश्चय ही श्वासा छूटे ॥
 प्रथम पित्त की नाड़ी जानो ।
 जीवन की रखवाली मानो ॥
 दूजे कफ की नाड़ी कहाई ।
 वायु स्थान तीसरे आई ॥
 रावण मत विपरीत बताई ।
 वात पित्त कफ क्रमशः जताई ॥
 वायु वक्र-गति नाड़ी कहाई ।
 जोंक सर्प की गति अपनाई ॥
 पित्त चपलता उष्ण लखावे ।
 सेंहक काक गति से धावे ॥
 कफ नाड़ी गति हंस-कपोता ।
 मन्द चाल भारीपन होता ॥
 वायु तर्जनी नाड़ी आई ।
 पित्त मध्यमा तल रहजाई ॥
 कफ अनामिका नीचे आवे ।
 नाड़ी व्याधि का ज्ञान करावे ॥

दोहा

दक्षिणांग की व्याधि का, नाड़ी दाहिनी मान ।
 वाम अंग की व्याधि का, वाम नाड़ी हो ज्ञान ॥

चोपाई

वायु नाड़ी से रोग पिछानो ।
 वात-रोग नस-व्याधि जानो ॥
 प्रदर प्रमेह नपुंसकताई ।
 गर्भाशय-व्याधि दर्शाई ॥
 मासिक-धर्म वीर्य-रज रोगा ।
 लिंगज योनिज गद-संभोगा ॥
 पथरी अण्ड-वृद्धि बहु-मूत्रा ।
 कब्जी अर्श भगंदर सूत्रा ॥ (क्रमशः)



समादानीय

सरकार--

वैद्य डाक्टरोंका सदुपयोग करें

योजकस्तत्रदुर्लभः

सायंकाल ५। बजेका समय था। सभ्य लोग बीचोंमें टहलने गये। पहुँचकर फिर वे हरी हरी दूधपर बैठकर चर्चा करने लगे। अलग अलग मण्डल बनाकर मित्र मण्डल परस्पर वार्तालाप, सामयिक चर्चा, हाँसी मजाक करने लगे। उनमेंसे एक मण्डलके एक मित्रने कहा दोस्त। अखबारोंमें यह समाचार सुननेमें देखनेमें आता है कि सरकार स्वास्थ्य व चिकित्सा विभाग गावोंमें चिकित्साका समुचित प्रबन्ध नहीं कर रही है।

दवाखाने गांवडोंमें खोल तो दिये हैं परन्तु वहाँ वैद्य हैं न डाक्टर हैं। डाक्टर तो गांवडोंमें रहना ही पसन्द नहीं करते। वैद्योंको थोड़े साधन थोड़ा वेतन देकर भेजा जाता है। तो वे जाते तो है परन्तु उनका सादा जीवन होते हुए भी इतना वेतन कम पड़ता है कि वे यदि दूर पहाड़ी गावोंमें रख दिये गये तो एक मासका वेतन तो रेल किरायेमें ही खर्च हो जाता है।

खाना कपड़ा परिवारके पढाई आदिकी व्यवस्था तो छिन्न भिन्न ही होजाती है। स्वयं परेशान रहते हैं। छुट्टियाँ लेते रहते हैं। स्थानान्तरणके लिए लिखा पढी करते रहते हैं टिककर चिकित्सा नहीं कर पाते। मत्तलब यह हुआ, वैद्योंका वेतन कम। डाक्टरोंको जाना ही पसन्द नहीं। ऐसी परिस्थितिमें ग्रामीण जनताकी बीमारीकी हालतमें क्या दशा बीतती है भगवान ही जानते हैं बिना डाक्टर वैद्यके वहाँकी जनता चाहे जितनी परेशान हो, सरकार वहाँ न तो वैद्यका वेतन बढ़ाकर उसको स्थिर चिकित्सा करनेका

आदेश देती है, न डाक्टरोंको ही बलपूर्वक आदेश कर भेजती है।

दूसरे मित्रने कहा—फर्जी करो यदि आपको उस विभागका मंत्री, व अध्यक्ष बना दिया जावे तो आप क्या करो।

दोस्तने उत्तर दिया यदि सारी सत्ता इस विभागकी मुझे सौंप दी जावे तो मैं सर्व प्रथम तो ग्रामीण जनताको ऐसी शिक्षित करा दूँ कि वह रोगी ही न हो।

अर्थात् दो दो मास वैद्योंको शिक्षणार्थ भेजकर ऋतुचर्या, दिनचर्या और रात्रिचर्याका ऐसा पाठ पढा दूँ और ऐसे आहार-विहार करनेकी दृढ श्रद्धा पैदा कर दूँ जिससे रोगी होवे ही नहीं।

दोस्त—यदि दैवसे हो जावे तो क्या करो। आखिर एक दो व्यक्ति तो बीमार हो ही सकता है? बच्चे और बुढ़े तो बीमार हो ही सकते हैं?

उत्तर—भाई साहब, शिक्का बड़ी चीज है। बच्चे पनसे ही ऐसे आहार-विहारका रिवाज डाल दिया जावे, ऋतु सन्धिमें परिवर्तनीय, ऋतु ऋतुके भोजनादिकी विधि समझा दी जावे तो स्त्री बच्चे कोई भी बीमार नहीं हो सकते यह मेरा दृढ विश्वास है।

यदि हो जावे तो उसके लिए गांवडोंमें क्या करें इसका उत्तर दो। छोटे छोटे गांवोंमें औषधालय और उसी गांवका हॉसियार वैद्य वहाँ नियुक्त कर दें जिसको थोड़ा वेतन देना पड़े और उसे स्थानान्तरण करनेकी पीड़ा मिट जावे।

और क्या करो—तार टेलीफोनका साधन कर लें और गांवोंमें चिकित्सा करनेवाला डा० भी वहाँ पहुँचें

सके। जरूरत हो तो दो तीन और भी बन्दूकें चिकित्सक आ सकें।

जैसे व्यापत् सिद्धिके लिए कदाचित औषधोंका संग्रह जरूरतके लिए पहले ही से रक्खा जाता है, वैसे वहाँ भी थोड़ी मात्रामें सभी साधन स्थिर रखे जावें।

जैसे रक्षाके लिए फौज अलग अलग स्थानोंमें तैनात रहती है, इसी तरह समय समयपर रोग व महामारीका कदाचित आक्रमण हो जावे तो, गांवमें जरूरी जरूरी औषधोपचार संग्रह तैयार रहे। अधिक आवश्यकता होनेपर अथवा लाय लग जावे, शास्त्राशास्त्र प्रयोगमें आपसमें लड़कर घायल हो जावें, तो तत्काल टेलीफोनतार जाते ही केन्द्रीय डा० वैद्योंका समूह वहाँ जाकर सेवा कर सके।

और क्या करो—डाक्टरोंको एक वर्षकी आयु-मैदीय शिक्षा देकर भेषज निर्माण, और उनका प्रायोगिक, गौगानुसार अभ्यास कराया जावे। सिर्फ काय-चिकित्सा और औषध निर्माण दो ही डाक्टरके मुख्य विषय हों।

वैद्योंको सिर्फ शल्यतंत्रका प्रायोगिक अभ्यास, अस्थि सन्धान, शल्य क्रिया, एक वर्षमें शिक्षा दी जावे।

प्रश्न—बी. ए. तककी इङ्गलिश योग्यता चाहिये। और डाक्टरोंके लिए मध्यमा व्याकरण संस्कृत योग्यता चाहिये। यदि ये दोनों इङ्गलिश व संस्कृत न जाने तो दोनों ही कैसे हो सकते हैं।

दोस्तका—जवाब-मानी तुम्हारी बात। इस समय तो मित्र यही हाल शिक्षाका है।

परन्तु दोनोंको ही हिन्दीमें अभ्यास कराया जावे तो डाक्टरको संस्कृत नहीं पढ़नी पड़े। और वैद्यको इङ्गलिशकी जरूरत नहीं पड़े। हिन्दीमें भी तो शिक्षा हो सकती है। यही सरल तरीका है।

नहीं तो मित्र चालीस वर्षतक तो भाषाका ज्ञान करो, माँयने रटते रटते बुढ़े हो जावो, फिर प्रायोगिक हाथसे सीखो। फिर स्वयं अनुभव बढ़ाओ, तो आयुके तो गिने चुने वर्ष ही सेवामें आ सकते हैं। शिक्षामें

ही आयु पूरी हो जावेगी। इसलिए भाई साहब जहाँ थोड़ी आयु है, काम आधरू है, बुद्धि मन्द है ऐसा जगह सुधार और जनताकी सेवाका यहाँ मांग है कि नया पाठ्य क्रम हिन्दीमें हो। और शल्य-ज्ञान ऐको-पैथीस, शेष ज्ञान आयुर्वेदमें लेकर हिन्दीमें पढ़ाई कराओ, और प्रायोगिक शिक्षण दोनोंको दी जावे ऐसा कार्य कर दें।

और क्या सुधार करो! और यह कहें कि वैद्य डाक्टरोंकी मीटिंग बुलाकर उनको प्रसन्नकर दोनोंको सलाहसे जो जिस योग्य हो, शहरोंमें या छोटे गांवोंमें नियुक्त कर दें। कोई गाँव ऐसा न हो जिसमें तार टेलीफोन साधन न हों और डाक्टर या वैद्य न हों।

जब सरपञ्च सभी व्यवस्था पर लेता है तो अपने गांवमें एक वैद्य भी चुन लें। तो क्या हर्ज है।

अथवा—प्रत्येक पञ्च समिति अपने गाँवसे एक व्यक्ति स्वास्थ्य चिकित्साके अध्ययनके लिए गाँवकी ओरसे एक व्यक्ति भेजे। वही उस ग्रामका अपना जन्म भूमिका चिकित्सक हो।

ऐसा करनेसे गांव वालोंको यह लाभ है कि वैद्यकी स्थानान्तरण न होनेसे अनुपस्थिति नहीं रहती और जनताको सदाके लिए विश्वस्त सेवक मिल सकता है जो वरु वैद्य जैसा है। वह गांवमें अपने बच्चोंको पढ़ाना, खेती कराना, घर सम्भालना, इत्यादि कार्य भी साथ साथ कर सकता है। वेतन भी देते मिले, या कम मिले तो, अपना निर्वाह कर सकता है।

सरकारको कम खर्चा करना पड़े, और वैद्यको भटकना न पड़े। वैद्य भी चाहिए कि अपने जन्म भूमि गांवमें ही व्यक्तियोंकी सेवाके लिए तन-मनसे भरसक प्रयत्न करे। और अच्छी अच्छी शिक्षा प्राप्त करके तैयार रहे।

जैसे प्रान्तीय चुनाव होनेमें सेवा सहायक होता है वैसे ही सेवा कार्य करनेवाला वैद्य या डाक्टर या सरपंच ने। कोई भी हो सपूत समझा जाता है।

यदि यह व्यवस्था सरकार न करे तब भी तो प्रकृतिसे ही गांवगांवमें रक्षा होती है। स्वयं गांवके ही वैद्य काम आते हैं बाहरका व्यक्ति उतनी सेवा नहीं करेगा।

स्वच्छ रक्त स्वस्थ शरीर

लेखक—लक्ष्मी नारायण 'अलोकिक, शामगढ़ (मध्य प्रदेश)

रक्त जीवनका अनिवार्य आहार है। या यूँ कहें कि रक्त ही जीवन है तो भी दूसरी बात नहीं होगी। रक्त मानव शरीरके लिए एक महत्वकी तथा चर्चाकी वस्तु है। चर्चाकी इसलिए कि रक्तके कार्य और उसके महत्वको न जाननेसे समाजमें नाना प्रकारके रोग उत्पन्न होकर फैल रहे हैं। रक्त स्वच्छ रहे तो स्वस्थ शरीरमें विपर्यय होनेका लेश भी संभावना न रहे। वस्तुतः प्रकृतिने शरीरका निर्माण इस तरह किया है कि वह स्वस्थ रहे, अस्वस्थ होकर भी स्वस्थ हो सके।

रक्त शरीरकी चेतन सम्पदा है। मानव शरीरमें इसका प्रमाण शरीरके वजनका तेरहवां हिस्सा होता है। यदि साधारण कदके किसी आदमीका वजन ५२ किलो हो तो उसके शरीरमें ४ किलो रक्त होगा। सम्पूर्ण रक्तमें लगभग ६० प्रतिशत रक्त तरल होता है शेष ४० प्रतिशत गाढ़ा मांस सूत्रोंकी तरह। तरल रक्तको रक्तके नामसे तथा गाढ़े को रक्त कणोंके नाम से जाना जाता है। रक्तमें दो किस्मके कण होते हैं, लाल व श्वेत। श्वेत कण हालांकि लाल कणोंकी अपेक्षा बहुत कम तादादमें रहते हैं, पर उनका कार्य बड़ा महत्वपूर्ण है। शरीरस्थ जहरको पी जानेमें वे बड़े कुशल व कुर्नीले होते हैं। रक्तकणोंके भीतर होम्योग्लोबिन नामका रासायनिक तत्व रक्तशुद्धिका जो कार्य करता है वही कार्य श्वेत कण बड़े कुर्नीले साथ रोगाक्रांत स्थानपर इकट्ठे होकर करते हैं। होम्योग्लोबिनका अस्तित्व लाल रक्त कणोंके भीतर अत्यन्त सूक्ष्म मात्रामें रहता है। एक साधारण व्यक्तिके शरीर में लाल रक्तकणोंकी संख्या एक अरबसे भी अधिक होती है जबकि इन सब कणोंके भीतर पाये जाने-वाले होम्योग्लोबिनका वजन २५ ग्रामसे अधिक नहीं होता। होम्योग्लोबिन एक उपनारी रासायनिक पदार्थ है। यह तरल रक्तमें रहकर विष अथवा काबनको

को रक्तकणमें खींच लेता है और फेफड़ोंमें पहुँचनेके दौरान जब रक्तकणोंसे प्राण वायुका सम्पर्क होता है उस समय वह विष अथवा काबन डाइऑक्साइडको तुरन्त उगल देता है और प्राणवायुसे ओषजन ग्रहण करके रक्तकणोंको फिर पहिलेकी तरह लाल व चमकीला बना देता है। स्मरण रहे जब होम्योग्लोबिन रक्तके काबनको पी लेता है तब रक्तकणोंका रंग कुछ नाला हो जाता है।

रक्तको संक्षिप्त चर्चा करनेके पश्चात् अब हम यह जानना जरूरी समझते हैं कि रक्त गन्दा क्या हो जाता है तथा गन्दे रक्तसे शरीरमें कौन कौनसी बीमारियाँ होती हैं।

रक्तदोषके मुख्य कारण निम्न हैं:—

१. गरिष्ठ खाद्य तले भुने व्यंजन, बासी खाद्य खाना।
२. दूषित वातावरणमें रहना, बंद कमरोंमें सोना।
३. आवश्यकतासे कम पाना पीना।
४. नियमित स्नान न करना।
५. तम्बाखू, गांजा, भांग, शराब, अफीम, चाय, काफी इत्यादि विष उद्विषाका सेवन करना।
६. बीमार होनेपर रोगोंकी तुरन्त रोकथाम करने-वाला औषधशास्त्री ग्रहण करना।
७. कब्जयत्न, मल मूत्रका वेग रोकना।
८. उदास व चिंतित रहनेसे, विषाद भय ग्लानि एवं ईर्ष्याको पाले रखनेसे।
९. अधिक मैथुनसे। अत्यधिक मैथुन रक्तकणोंकी होम्योग्लोबिनका क्षय करता है साथ श्वेत कणोंका दुबल व मृतप्राय बना देता है।
१०. बहुत कम नींद लेकर गुजारा करनेसे।
११. प्राकृतिक लवणांशु फल सब्जी इत्यादि पर्याप्त मात्रामें ग्रहण न करनेसे।

रक्तके गन्दे होनेमें हमने ऊपर जो ग्यारह कारण बताये हैं, उन्हें आप दुबारा निबारा ध्यानसे पढ़ें। यदि आपको लगे कि आप भी उन व्याक्तियोंकी कतारमें खड़े हैं जो अपने ही हाथों बीमारियोंका घर तैयारकर रहे हैं तो कृपया तुरन्त सावधान हो जाइयेगा। रक्तको गन्दा करके रोगोंमें खड़ा करना, और फिर उन रोगों के इलाजमें समय व धन नष्ट करनेको अपेक्षा क्या यह उचित नहीं है कि रक्तको गन्दा ही न होने दिया जाय ?

स्मरण रहे रक्तमें विजातीय द्रव्य (गन्दगी) संप्रद होनेन एक नहीं अनेक प्रकारके रोग पैदा हो सकते हैं। सर्दी जुकाममें नाकसे निकलनेवाला पानी क्या है ? विजातीय द्रव्य। खाँसमें छातीसे निकलनेवाला बलगम क्या है ? विजातीय द्रव्य। ज्वरमें गन्दी श्वान व गन्दा पसीना निकलता है वह क्या है ? विजातीय द्रव्य। गाँठ गुम्हे फोड़े फुंसीमेंसे जा मवाद पीप निकलता है वह क्या है ? विजातीय द्रव्य। कहनेका तात्पर्य यह कि हर रोगके पीछे रक्तमें घुला हुआ विजातीय द्रव्य ही कारण रूपमें रहता है। शिरदर्द, आधासीसी, छाताका दर्द, पेटका दर्द, फेफड़ोंका दिक, हड्डियोंका दिक, सुजाक, बवासीर, पेचिस, मिर्गी, लकवा, संघिवात, पोलिया, पथरी, दाद, खाज, खुजली, गंज, फुलभरी इत्यादि आदमी, औरतों और बच्चोंके सभी तरहके रोग रक्तकी स्वच्छता नष्ट होनेसे ही होते हैं। रक्तमें दोषोंकी सम्प्राप्तिसे ही रोग होते हैं। इस तथ्यको शरीरधारी मानव जान ले तो रोग होनेपर वह कभी भी वैद्य, हकीम या डाक्टरके पास दौड़ा हुआ नहीं जायगा। बल्कि वह स्वयं रक्तको शुद्ध करनेके उपायोंपर अमल करेगा।

यह कितने आश्चर्य और दुखकी बात है कि संसारमें रोगोंका उपचार करनेके लिए कितने ही अस्पताल, डॉक्टरों, वैद्यों, हकीमों, नर्सोंका प्रबन्ध किया जा चुका है तथा हजारों किस्मकी औषधियोंका आविष्कार मानवी शरीरके साथ दुखांत खिलवाड़ करनेके लिए छोड़ दिया गया है पर रोग न होने पाए इसके लिए रक्तको स्वच्छ रखनेकी प्रथाका प्रचलन नहीं किया जा रहा है। आत्म कष्टके साथ हमें कहना पड़ेगा कि जब विज्ञानमें सद्गुणोंने जितनी प्रगति की

उतनी ही अवनति स्वस्थ दृष्टिकोणसे शरीर विज्ञानमें हुई है। शरीरकी प्रकृति व्यर्थके विज्ञान व कृत्रिम आकर्षणोंको जरा भी पसन्द नहीं करती है जो वर्तमान के शरीर वैज्ञानिकोंके द्वारा सम्पन्न हो रहे हैं। चूंकि स्वस्थ शरीरका सम्बन्ध सीधा स्वच्छ रक्तसे है और औषध विज्ञानमें रक्तकी स्वच्छता की ओर कम-बहुत ही कम ध्यान दिया जाता है।

अस्तु। हम रक्तकी शुद्धिका बहुत ही सरल तरीका "स्वास्थ्य" के कृपालु पाठकोंको बताना चाहते हैं। यह न तो खर्चीला है न सशस्त्रात्मक। दवा रागीके तन्दीरसे संबंध रखता है और यह तरीका सीधा स्वास्थ्यसे सम्बन्ध रखता है। यह तो सर्वथा असंभव है कि इस तरीकेपर चला जाए और लाभ हासिल न हो। चूंकि रक्तको शुद्ध करनेमें प्राकृतिक चिकित्साका यह तरीका किसी भी सूरतमें नाकामयाब नहीं होता। जैसे भोजनसे भूख और पानीसे प्यास मिट सकती है ऐसे ही इस तरीकेसे रक्तकी सफाई आसानीसे हो सकती है इसमें दो मत नहीं हो सकते। चूंकि यह औषधि नहीं बल्कि उपचार है। उपचार औषधिसे दस गुनी कामयाबी दिखाता है यह अगर हम कहें तो जरा भी ज्यादाती नहीं होगी।

रक्त शुद्धिकरणकी हम तीन विधियाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। सामान्यसे शिरदर्द, जुकाम, ज्वार, खाँसी, कब्ज, दस्त, मुँहके छाले, ओंठ फटना, दांत दादना दर्द, बदनके किसी भी हिस्सेका दर्द, फोड़े फुंसी इत्यादि साधारण रोगोंमें एक नम्बरकी विधि काफी है।

भयंकर आँधासीसी, सिर चकराना, काली खाँसी, सूखी खाँसी, हैजा, पेचिस, पायरिया, मुँहमें बहुत दिनोंके छाले, तीन महीनेसे कमका मधुमेह, हिवर, आमाशयका दर्द, पुरानी कब्ज, पेटके कीड़े, जिगरका दर्द, कानसे पीब, नकलीर, हृदयकी नई बीमारी, गुर्देका दर्द, मूत्रकृच्छ्र, बहुमूत्र, खूनी पेशाब, खारि खुजली, बवाई, घाव इत्यादि मझली किस्मके रोगोंके लिए नम्बर दोकी विधि उपयुक्त रहेगी।

दमा, अस्थि ज्वर, तपेदिक, हृदयावसाद, पुरानी गठिया, बाढ़ी, गुर्देकी पथरी, रक्तचाप, स्नायु रोग, शिरदर्द, दाद, फुलभरी, बवासीर, मिर्गी, लकवा, संघिवात, पोलिया, पथरी, गंज, फुलभरी इत्यादि रोगोंके लिए नम्बर तीनकी विधि उपयुक्त रहेगी।

दृष्टिमांघ, पूरे शरीरकी बादी, कोढ़ इत्यादि असाध्य रोगोंके लिए तीन नम्बरकी विधि संतोषजनक फल देगी।

रक्तकी शुद्धिकी विधि नं० १

सिर्फ २४ घंटेका उपवास कीजिये। उपवासके दिन प्रातः शरीरके वजनके चालीसवें हिस्से जितने पानीका एनिमा लेकर बड़ी आंत साफ कर लीजिये। गर्मीके दिन हों तो ठण्डे पानीका और ठंडके दिन हो तो गर्म पानीका एनिमा लीजिये। और संभव हो तो एनिमाके पानीमें एक दो नीबू या नारंगीका रस अवश्य निचोड़ लीजिये। जिन भाई बहनोंके घर एनिमा न हो उन्हें चाहिए कि वह ऐसे उपयोगी यंत्रको किसी केमिस्टकी दुकानसे पांच रुपया खर्चा करके खरीद लें। एनिमा हर घर में होना चाहिए। लगभग ५० प्रतिशत रोगोंमें एनिमा स्वयं सब कुछ कर देता है बाकीमें वह रोगोन्मूलक उपचारमें भरसक मदद करता है। इतना सब होनेपर भी जो एनिमाका प्रयोग करनेमें व्यर्थकी लज्जा या कठिनाई महसूस करते हों उन्हें चाहिए कि पेट साफ करनेके लिए सुबह ३ तोला केस्टर आइल (अरेंडी का तैल) गर्म पानी या दूधके साथ ले लें। अथवा १० तोला पानीमें रातकी भिगोई हुई त्रिफला मसल छनकर पी लें। पेट साफ करनेके लिए १ तोला सनाय एवं १ तोला मौफको एक पाव पानीमें उबालिये। उबलते उबलते पानी आधा पाव रह जाय उस समय थोड़ा-सा मधु या शक्कर डालकर खान लें और पी लें। यह काढ़ा १८ घण्टेमें अमर करता है। इसलिए उपवास शुरू करनेके पहले रातको पी लेना उचित है। यह काढ़ा रक्तको शुद्ध करनेमें भी बहुत कुछ योग देता है। पेट तो इमने ऐसा साफ हो जाता है मानो पेटमें कुछ हो ही नहीं। पेट साफ हो जानेके बाद नीबू मिला पानी पीजिये। रक्तको स्वच्छ करनेमें नीबूके समान और कोई औषधि नहीं। उपवास कालमें तथा खाली पेट दिनमें दो तीन बार नीबूका रस पानीके साथ पीना चाहिये। उपवास कालमें तो अधिक बार पिया जा सकता है।

उपवासके दिन अच्छी तेज धूममें पानी पीकर व शिर गोला करके आधा घंटेके लिए हलका-सा चादर

ओढ़कर लेट जाइये। आकाश बादलोंसे घिरा हो या जरूरत न समझी जाए तो रहने दें। धूप स्नान लेनेके बाद सूखे तोलियेसे पसीनेको पोंछ लें व ताजे पानीसे खूब अच्छी तरह बदनको मसल-मसलकर नहाएं। रातको पूरे शरीरकी ठंडी मालिश लें। ठंडी मालिश याने घर्षण स्नान, स्पंज बाथ। किसी पतले वस्त्रको बार बार पानीमें भिगोकर शरीरपर रगड़नेको ही ठंडी मालिशके नामसे जाना जाता है। ठंडी मालिश लेनेमें २० मिनट से ३० मिनट लगने चाहिए। पीठ गर्दन व पेड़पर अन्य अंगोंकी अपेक्षा कुछ अधिक समय तक ठंडी मालिश चलानी चाहिए। ठंडी मालिश लेनेके बाद थोड़ा पानी पीकर सो जाएं। अगली सुबह एनिमासे पेट व ठंडी मालिशसे शरीरको साफ व ताजा कर लीजिये। उपवास एक पाव धारोष्ण अथवा एक उफानके फीके या शहदसे मीठे किये दूधसे तोड़ें। पका पपीता, टमाटर, शहतूत, नारंगो, मौसम्बीसे भी तोड़ा जा सकता है। दोपहरको हमेशा किये जानेवाले भोजनका आधा लीजिये। त सरे पहर एक पाव कोई सा भी फल या खूब पके केले खाएं। रातको दूध या दूध खिचड़ी अथवा फलपर निर्भर रहें। सुबहके भिगोये २ छटांक मुंगफलीके दानोंपर भी निर्भर रह सकते हैं। सोनेके पहले ठंडी मालिश ले सकें बहुत अच्छा। तीसरे दिन दोनों समय भोजन कर सकते हैं। पर आहारकी मात्रा कम व मठनीकी ज्यादा रखें। चौथे दिन पूरा भोजन कर सकते हैं।

रक्त शुद्धिकी विधि नं० २

४८ घण्टेका उपवास कीजिये। विधि नम्बर १ की तरह। उपवास कालमें जिस समय ज्यादा कमजोरी महसूस हो पानी पीकर या एनिमा लेकर तथा ठंडी मालिश लेकर तुल्य दूर कर सकते हैं। उपवासके दूध या फलसे तोड़नेके दिन सिर्फ दूध या फलपर ही निर्भर रहें। दिनमें तीन या चार बारसे उगाड़ा फल दूध प्रहण न करें। इसी तरह सप्ताह भर रह लें त बहुत अच्छा वर्ना जितने भी दिन रह सकें। चूंकि उपवास बार-बार नहीं किया जा सकता और उपवास के बाद जितने दिनतक फल, सब्जी व धारोष्ण दूधप खाया जाता है शरीरका ठीक होना ही उपकार होता है

अन्नहारकी शुरुआत आधी रोटी व सब्जीसे करनी चाहिए। दूसरे समय एक और तीसरे समय दो रोटी ली जा सकती है। ऐसे धीरे धीरे पूरे आहारपर आया जा सकता है। रोटी सब्जीपर आने तक हमेशा एनिमाकी जरूरत पड़ सकती है चूंकि ठोस आहारके बिना आँ में मलोत्सर्गका वेग कम ही पैदा होता है।

रक्त शुद्धि की विधि नं० ३

एक मप्पाहका उपवास कीजिये। निराहार उपवास न चला सकें तो जितने समयतक निराहार रह सकें, रहें। और बादमें रसाहारपर निर्भर रहें। रसाहारमें नारंगी, मौसम्बी, टमाटर आदि रसीले फलोंका एक पात्र रस एक समयमें तथा दिनमें तीन बार पिएं। अठारें दिन २ छटांक दूधसे उपवास तोड़े। उपवास तोड़नेके २ या ४ घण्टे बाद आधी रोटी व

सब्जी खाएं। शानको फल दूधपर निर्भर रहें। आखी सुबह रातकी भीगी हुई ५० ग्राम किशमिश अथवा ५०० ग्राम पपीता या कोई दून्ग फल लें। दोहरको एक रोटी व रातको वही फल व दूध। तीसरे दिन सुबह व रातको पिछले दिनकी तरह फल व दूध प्रयोग करें। हाँ दोहरको आहारकी पूरी खुशक ले सकते हैं। इसी तरह एक महीनेतक कार्यक्रम चलाएं। बीसगी बहुत पुगनी और अमाध्य हो तो थोड़ी मियाद और बढ़ाई जा सकती है। वैसे भयंकरसे भयंकर और अमाध्य रोग एक महीनेके भीतर भीतर ही दस तीड़ बैठते हैं। ठंडी मालिशको उपचार कालतक दोनों समय लेना कभी न भूलें। खूनको बढ़ाने व साफ करनेमें तथा शरीरको फुर्तीला व प्रसन्न रखनेमें इसके समान दूसरी भी कोई चीज है या नहीं, इसे आप ठंडी मालिश लिये बगैर कैसे समझ सकेंगे।

— सरकार वैद्य डाक्टरोंका सदुपयोग करें —

(पृष्ठ ५६६ का शेष)

कर सकता, जितनी वह करेगा।

चाहे कैसा भी हो देशके प्रति उसका समर्थन तो रहेगी।

वाह ! मित्र बाह !! आपने बड़ी अच्छी बुद्धिमत्ता पूर्ण बातें बताईं। मैं तो अनुसन्धान अनुसन्धानकी वर्चा सुनता था। वैद्य डाक्टर मिलकर अनुसन्धान करें। परन्तु तूने यह तारकालिक जनताके हितका बड़ा अच्छा रिसच बताया थोड़े समयमें, और अधिक लाभका रास्ता निकाला।

भला इससे बढ़कर अच्छा क्या अनुसन्धान हो सकता है। जो जनताके हितमें अच्छा कोई भी सुखोपाय हो, वही तो श्रेष्ठ अनुसन्धान है।

दोस्त:- मैंने आपकी सब योजनाएँ सुनीं। स्वास्थ्य मंत्रीके पास आपके सुभाव अवश्य भेजूंगा। प्रिय मित्र ! यदि ऐसा प्रबन्ध सरकारने कर दिया तो आप

तो स्वास्थ्यसे भी उच्च स्थानके भागी होगये।

क्योंकि सेवा-भावनासे बढ़कर कोई उच्च पद नहीं। यदि आपके मनमें ऐसी भावना है तो आप वहाँ भी अवश्य पहुँच जावेंगे। मैं तो आपको आजने स्वास्थ्य मंत्री कहा करूंगा। दोस्तोंके बीच इसी नामसे पुकारूंगा।

उस मित्रने ऐसा ही किया और वह थोड़े दिनोंमें दूसरा स्वास्थ्य मंत्री बन गया। जनता उसे स्वास्थ्य मंत्री कहने लगी। सरकारको वृद्ध वैद्योंको वापिस बुलाकर उनसे इस कार्यमें योग लेना चाहिए।

और जिस ही जिस प्रकारकी योग्यता हो नियुक्त करना चाहिये। स्थान रिक्त न रहें सबको सुख मिले। वैद्य डा. नर्स कम्पोंडरोंका सदुपयोग हो। जनताकी सेवा हो। बतर्दायी सरकारको ऐसा अवश्य करना चाहिये।

आन्त्रिक ज्वरका निदान

लेखक—कन्हैयालाल जैन “मालवी” मु० पो० चावण्ड,

यह एक प्रकारका बुखार है। जो कीटाणुओं द्वारा होता है। आन्त्रिक ज्वरके दण्डाणु होते हैं। जो शरीरमें पहुँचनेपर शरीरमें आन्त्रिक ज्वर (Typhoid Fever) उत्पन्न कर देते हैं।

प्रत्येक दण्डाणु या कीटाणु शरीरमें उसी स्थान पर जाकर पनपते हैं जहाँपर उनके पनपनेका स्थान अच्छा होता है। ठीक इसी प्रकार आन्त्रिक ज्वरके कीटाणुओंके लिये शरीरमें जो आन्त्र है; वहाँपर वे अच्छी तरह पनप सकते हैं। जिस किसीके शरीरमें ये आन्त्रिक ज्वरके दण्डाणु पहुँचते हैं और उस व्यक्तिकी आँतें कमजोर हों तथा उस व्यक्तिकी रोग-क्षमता कम होती है, तो ये आन्त्रिक ज्वरके दण्डाणु उत्तर क्षुद्रान्त्रकी पेरर्सकी ग्रन्थियोंमें जाकर बढ़ने लगते, तथा धीरे-धीरे आन्त्रिक ज्वर उत्पन्न कर देते हैं। इस आन्त्रिक ज्वरमें प्रायः प्रथम सप्ताहमें ताप बढ़ता है। तथा दूसरे सप्ताहमें वही रहता है। तथा तीसरे सप्ताहमें सोपान क्रमसे ताप उतरता है। अगर किसी प्रकारका कोई अन्य इन्फेक्शन न हो तो इस आन्त्रिक ज्वरमें ताप धीरे २ बढ़ता है। जब एक दम ताप १०२ होता है, तब रोगीको पता पड़ता है। मैं बीमार हूँ। फिर वह शय्या पकड़ता है। इसमें बिल्कुल Bedrest करना चाहिये।

सूक्ष्म स्वरूप—जब शरीरमें आन्त्रिक ज्वर दण्डाणुका प्रवेश होता है तो ये दण्डाणु सर्व प्रथम हमारे शरीरकी आँतोंमें जाकर इन दण्डाणुकी वृद्धि करनेका काम करते हैं। उसके बादमें विजातीय कोषोंसे शरीरके श्वेताणुओं (R. B. C.) द्वारा प्रतिक्रिया करते हैं। जिससे शरीरमें श्वेताणुओंका अत्यधिक नाश होने लगता है। जब श्वेताणुओंकी कमी हो जाती हो तो स्वाभावतः प्लीहाकी वृद्धि हो जाती है। इसलिये आन्त्रिक ज्वरके रोगीको प्लीहा बढ़ी हुई

मिलती है। इस प्रकार दण्डाणुओंका आँतोंपर प्रभाव पड़ता है। वहाँपर ये दण्डाणु अपनी संख्यामें वृद्धि कर विजातीय कोषोंसे श्वेताणुओंद्वारा प्रतिक्रिया कराते हैं। जिससे प्लीहावृद्धि हो जाती है।

इसके बादमें इन दण्डाणुद्वारा शरीरकी आँतोंके लसीका ग्रन्थिके कोषाणुकी वृद्धि होती है। तथा स्थूल भक्ष्य कोषाणु तथा प्लाज्मा कोषाणु या रक्तस कोषाणुओंकी वृद्धि होती है। इन सब कोषाणुओंकी वृद्धिके कारण आन्त्रमें शोथ उत्पन्न हो जाता है। जिसके कारण व्यक्तिको दुःखका ज्ञान होता है। वहाँपर रक्त ज्यादा मात्रामें आता है। इस प्रकार रक्तवृद्धि होजाती है उस स्थानपर आन्त्रिक ज्वरके दण्डाणु वहाँसे खूनमें मिलकर वे दण्डाणु आन्त्रकी ग्रन्थियोंमें उत्पत्ति पाते हैं। तथा ये दण्डाणु प्लीहा-युक्त आदि सभीपर प्रभाव डालते हैं। परन्तु पेयर्सपेचेजपर उत्तरान्त्रपर विशेष प्रभाव पड़ता है।

आन्त्रावस्था—आन्त्रिक ज्वरमें उत्तर क्षुद्रान्त्रकी पेयर्सपेचेजमें अधिक विकृति पायी जाती है। सर्व प्रथम इन दण्डाणुओंका विकास उत्तर क्षुद्रान्त्रमें होता है। उसके पश्चात् धीरे २ जब दण्डाणुका प्रभाव बढ़ता जाता है तो उसके वहाँसे ऊपर व नीचेकी ओर इन दण्डाणुओंकी वृद्धि होती है। और आन्त्र खराब होती रहती है। सर्व प्रथम १ फीट नीचेकी ओर ज्यादा विकृत होती है। व धीरे धीरे ऊपर नीचे ९ फीटतक खराब हो जाती है। यह नीचे उल्टुकतक विकृत हो जाती है। इसके विकृत होनेकी चार अवस्था हैं। वे अवस्थाएँ निम्न लिखित हैं।—

१. शोथावस्था

२. संकोचनावस्था

३. संव्रणावस्था

४. संरोपणावस्था

शोथावस्था—यह अवस्था प्रथम सप्ताहमें होती है। इसमें आन्त्रिक ज्वरके दण्डाणु आँतमें जाकर

आन्त्रमें शोथ उत्पन्नकर देते हैं। (पेयर्स पेचेज) शोथके कारण वहाँकी जो रक्त संवाहिनियाँ होती हैं उनमें विकाश हो जाता है। यह शोथावस्था आन्त्रिकज्वरमें ८ से १० दिनतक रहती है। इसको Swelling कहते हैं।

२. संकोचनावस्था—इसमें आन्त्रोंकी सड़न क्रिया प्रारम्भ हो जाती है। उन शोथवाले भागोंमें संकोच होता है। इस अवस्थामें जब संकोच होता है तो वहाँकी रक्तवाहिनियाँ दबती हैं जिसके कारण इसमें रक्तविसार होने लगता है। तथा इसी अवस्थामें आंत्रनिश्च्छेदन होता है। यह अवस्था दूसरे सप्ताहमें उपस्थित होती है। इसको Slugling कहते हैं।

३. संव्रणावस्था—इस अवस्थामें आन्त्रकी कलामें व्रण उत्पन्न हो जाते हैं। जिससे रोगीको वेदना होती है। इस अवस्थामें पहले आन्त्रकी उपश्लैष्मिक कला-पर व्रण उत्पन्न हो जाते हैं। धीरे २ वहाँसे बढ़कर रक्तवाहिनियोंमें, फिर मांस भागमें बढ़ते २ ये व्रण उदर्याकलातक पहुँच जाते हैं। आंत्रमें छिद्र हो जाता है। यह व्रण अवस्था आनेसे रोगीके बचनेकी बहुत कम सम्भावना रहती है। इस अवस्थामें शरीरका ताप एक दम एक हो जाता है। तथा नाड़ी गति तीव्र हो जाती है। तथा रक्तका अमण होने लगता है। यह एक उपद्रव है। इसमें शल्य करना अत्यावश्यक है। अगर इसी अवस्थाके आनेपर शीघ्र शल्य कर्म किया जाय तो रोगी बच सकता है। अन्यथा किसी भी हालतमें रोगी नहीं बच सकता है। यह आन्त्रिक ज्वरकी भयंकर अवस्था है। इसको Sperialion कहते हैं। यह अवस्था तीसरे सप्ताहमें होती है।

४. संरोपणावस्था—यह संरोपणावस्था चतुर्थ सप्ताहमें आती है। इसमें तीसरी अवस्थाके ही बढ़े हुये तीव्र लक्षण प्राप्त होते हैं। इसमें रोगी नहीं बच सकता है। इसमें आन्त्रमें छिद्र पड़कर वे आन्त्रिक ज्वरके दंडाणु उदर्याकला जो आँतोंके पास रहती है। उसको गलाने लग जाते हैं।

इस प्रकार आन्त्रिक ज्वर आन्त्रोंमें निम्न लिखित चार अवस्थाएँ होती है। ये अवस्थाएँ क्रमशः आती हैं। और अपना प्रभाव शरीरपर दिखाती हैं।

आन्त्रिक ज्वरमें अन्य पीड़ित अंग

इससे निम्न अन्य अंग पीड़ित होते हैं।

१. आन्त्रबन्धनियों पीड़ित होती हैं।

२. लसिका ग्रन्थियाँ विकृत व पीड़ित होती हैं। इसकी वृद्धि हो जाती है।

३. इससे पश्चिमोदर विकृत हो जाता है।

४. आन्त्रिक ज्वरके दण्डाणु प्लीहाको चार गुनी बढ़ा देते हैं। क्योंकि श्वेताणु ज्यादा बनते हैं। पहले प्लीहावृद्धि होती है। तदनन्तर यकृतवृद्धि भी हो जाती है। तथा पित्ताशयमें शोथ हो जाता है।

आन्त्रिक ज्वरमें रक्त

इसमें रक्तमें श्वेतकणापकर्ष होता है। इनकी कमी होती है। ये आन्त्रिक ज्वरके दंडाणु रक्तमें एक अभिश्लेषी प्रतियोगी पदार्थ तैयार करते हैं। तथा ये कोषोंको आपसमें लड़ाते हैं। जिससे श्वेताणुओंका अधिक मात्रामें नाश होता है। इस प्रकार रक्तमें श्वेतकणापकर्ष हो जाता है। सामान्य अवस्थामें रक्तमें ४००० से ४५०० तक श्वेताणु होते हैं। परन्तु इस आन्त्रिक ज्वरकी तीव्र अवस्थामें २००० की संख्या रहती है।

श्वेताणुओंका Differential count करनेपर या सापेक्ष गणना करने पर—

बहुरूप श्वेताणु ५% तक। सूक्ष्मलसिकाणु वृद्धि ५०% अम्लरङ्गेच्छु पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। प्रथम सप्ताहमें रक्तकी जाँच करनेपर तृणाणु अधिक पाये जाते हैं। दूसरे सप्ताहमें अभिश्लेषी पदार्थ (Vidal Test After Blood culturing तथा Macrofagus) पाये जाते हैं।

—आन्त्रिक ज्वरके लक्षण—

आन्त्रिक ज्वरके निम्न लिखित लक्षण हैं।—

१. पतली टट्टीयाँ आती हैं।

२. आन्त्र कूजन या पेटमें गुड़गुड़ाहट होता है।

३. स्पर्शसहता होती है।

आन्त्रिक ज्वरके दंडाणु आँतोंमें रहते हुये अपनी वृद्धि करते हुये अपने विषको रक्तमें छोड़ते रहते हैं।

तथा आँतोंमें शोथदि उत्पन्न करते रहते हैं। पहले सप्ताहमें दण्डाणु अधिक होते हैं। दूसरे नहीं, परन्तु प्रतियोगिक पदार्थ पाये जाते हैं।

हृदयपर प्रभाव पड़नेपर—जब आन्त्रिक ज्वरके कीटाणु रक्तमें मिलकर जब हृदयमें जाते हैं तब हृदय-पर निम्न प्रभाव पड़ता है।

हृदयकी गति मन्द हो जाती है। नाड़ी गति मन्द होती है। नाड़ी द्विस्पन्दिक चलती है। एक बार स्पन्दन आनेपर फिर एक बार और स्पन्द आता है। इस प्रकारमें नाड़ीमें स्पन्द प्रतीत होते हैं।—

मस्तिष्कपर प्रभाव—जब उस रक्तका मस्तिष्क-गत अवयवोंसे सम्पर्क होता है। तब मस्तिष्कपर निम्न प्रभाव पड़ता है।

आन्त्रिक ज्वरमें तन्द्रावस्था रहती है। रोगी प्रलाप करता है। ज्वरके दूसरे सप्ताहमें रोगी प्रायः दिनमें तन्द्रावस्थामें रहता है। तथा रात्रिको प्रलाप करता है। प्रलाप विस्मयतापर निर्भर करता है। जब विस्मयता बढ़ जाती है। तब प्रलाप भी बढ़ता है। जब विस्मयता कम हो जाती है, तब प्रलाप भी कम हो जाता है। रोगीको बेचैनी रहती है।

सार्वदेहिक लक्षण—ज्वर रहता है। दुर्बलता रहती, अरोचक, शारीरिक कल्पना इस अवस्थामें रोगक्षमता कम होनेसे अन्य प्रकारके रोगके कीटाणु आकर शरीरमें फैल सकते हैं। जैसे न्यूमोटाईकाईड, दंडाणुमेय इत्यादि, रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार इसमें अन्न विकृति दण्डाणुओंद्वारा उत्पन्न होती है।

संचयकाल—आन्त्रिक ज्वरके दण्डाणुका संचय काल ५ से २३ दिनतक है। तथा औसत संचयकाल १० से १५ दिनतक रहता है।

पूर्यरूप—अरुचि, आलस्य, बेचैनी, नासिक रक्त-स्राव होता है।

सप्ताहके अनुसार आन्त्रिक ज्वरके लक्षण—

प्रथम सप्ताह—शिरके अग्र भागमें (सामने) दर्द होता है, दाँगोंमें दर्द होता है। रोगीको नींद नहीं आती है। नासासमें रक्तस्राव होता है। छोटे बालकको प्रायः ज्वर प्रारम्भमें मन्द फिर धीरे-धीरे

सोपान क्रमसे शरीरका ताप बढ़ता है। सप्ताहके अन्तमें चर्मोत्कर्ष हो जाता है। १०३ से १०५ तक तापक्रम हो जाता है। उच्चतम तथा न्यूनतम तापमें प्रायः १ से १½° से ज्यादा अन्तर नहीं रहता है। प्रायः ताप अविसर्गिक तथा अर्द्धविसर्गिक ताप रहता है।

नाड़ी—नाड़ीकी गति मन्द रहती है। २० से लगभग ४५ तक नाड़ी कम मिलती है। तथा नाड़ी द्विस्पन्दिक मिलती है। रक्त दबाव-कम मिलता है।

श्वास व नाड़ी गतिके अनुपातमें अन्तर आ जाता है। सामान्य १:४ होता है। परन्तु इसमें बदलता है। इसमें यह अनुपात नाड़ी गतिके कम होनेसे बदलता है।

जिह्वा—जिह्वा मलावृत, सूखी और श्वेत। मध्यमें श्वेत, प्रान्त भाग लाल (श्वेत मलावृत) होता है। मुख सूखे हुये।

आन्त्र—अग्निमान्ध्य, उदरमें आध्मान, ठेपनमें टिमटिमकी आवाज प्राप्त होती है। प्लीहा बड़ा हुआ मिलता है। प्लीहा प्रदेशपर स्पर्शमें मालूम होती है। प्रथम सप्ताहमें प्लीहा पसलियोंके नीचे ही बड़ी हुई मिलती है, इसलिये गहराईसे दबानेपर प्लीहवृद्धिका ज्ञान होता है। आन्त्रमें शोथ तथा वेदना मालूम होती है।

चमड़ी—त्वचा गरम और शुष्क होती है। प्रथम सप्ताहके अन्तमें तथा दूसरे सप्ताहके प्रारम्भमें त्वचाके ऊपर गुलाबी रंगके विस्फोट उठते हैं। जो अक्सर कर छातीपर ही निकलते हैं। ये गुच्छे तीन चार दिनतक रहते हैं। बादमें ये गुच्छे गायब हो जाते हैं। इस प्रकार ये तीसरे सप्ताहके अन्ततक गुच्छे बनते रहते हैं तथा खतम होते रहते हैं। परन्तु ये गुच्छे भारतीयोंमें नहीं दीखते हैं। अक्सर गोरे मनुष्योंमें दीखते हैं।

मुखचर्या—प्रथम सप्ताहके अन्तमें रोगी सुस्त व उदासीन मिलता है। नेत्र चमकीले, पुतलियें फैली हुई, चेहरा फीका, गाल लाल, होट काले, सूखे तथा दरारयुक्त होते हैं। प्रथम सप्ताहके अन्तमें या ७ दिनसे १० दिनके मध्यमें प्लीहा स्पर्श करनेसे प्लीहा वृद्धि प्राप्त होती है। गुलाबी विस्फोट प्रकट होते हैं। अभि-प्रेषिक प्रतियोगी परीक्षण अस्थिरामक (पोजेटिव) यान प्राप्त होते हैं।

द्वितीय सप्ताह—ज्वरः—ताप अपनी उच्चतम सीमापर रहता है। सुबह और शामके तापक्रममें १ से १½ से ज्यादा अन्तर नहीं पड़ता है। तथा ताप निरन्तर रहता है।

नाड़ी—अपेक्षाकृत तीव्र याने जैसी नाड़ी प्रथम सप्ताहमें रहती है उससे कुछ तीव्र चलती है। तापके अनुसार नहीं चलती है। तथा नाड़ीकी प्रकृति द्विस्पन्दिक रहती है।

जो शिरःशूल प्रथम सप्ताहमें मुख्य लक्षण रहता है, वह इस द्वितीय सप्ताहमें (शिरःशूल) नहीं रहता है।

आन्त्रिके जो विकृत लक्षण होते हैं। वे पहले सप्ताहसे अधिक विकृत मिलते हैं।

उदरमें आध्मान रहता है। ठेपण करनेपर डिम डिम ध्वनिका लाभ होना, दक्षिण जघन कपालिक खातमें स्पर्शासहिष्णुता याने हाथ लगानेपर वेदना मालूम होना, व बिना हाथ लगाये भी यह वेदना मालूम पड़ती है। यह लक्षण करीब १०वें दिन जाकर स्पष्ट होता है।

मलः—मल मटरके जूसके समान पीला रहता है। मल पतला आता है। व संख्यामें ४ या ५ बार आता है। आन्त्रिक ज्वरमें दस्त आते हुये भी उदरमें आध्मान रहता है। यह खास लक्षण है। आन्त्रिक ज्वरमें कब्ज रहना बहुत अच्छा रहता है। यह हमेशा ध्यान रखना चाहिये कि आन्त्रिक ज्वरसे पीड़ित रोगीको कभी भी विरेचन नहीं देना चाहिये।

दूसरे सप्ताहमें पहले सप्ताहसे अधिक प्लीहाकी वृद्धि होती है। परन्तु पशुकाओंसे १ अंगुल नीचेसे अधिक बड़ा हुआ नहीं मिलता है। इसमें प्लीहाकी वृद्धि धीरे-धीरे होती है (मलेरियामें प्लीहाकी वृद्धि अत्यधिक व शीघ्र होती है।

रोगी—दूसरे सप्ताहमें रोगी दिनमें तन्द्रावस्थामें रहता है। तथा रात्रिको अस्पष्ट प्रलाप करता है। तथा सुस्ती, दुर्बलता, शारीरिक कृशता, हृद्दुर्बलता ये पहले सप्ताहकी अपेक्षा अधिक प्राप्त होते हैं।

अगर आन्त्रिक सौम्य होना है तो इस सप्ताह

के अन्तमें सर्व लक्षणोंमें सुधार होता है। परन्तु तीव्र आन्त्रिक ज्वर होता तो विस्मयता (Heart Fail) आन्त्रनिच्छेदन, रक्तका निकलना आदि ये लक्षण उपस्थित हो जाते हैं।

तृतीय सप्ताहः—

अगर रोग सौम्य होता है तो ताप सोपान क्रमसे उत्तरोत्तर अवरोह या नीचे गिरता है तथा उत्तरोत्तर पूर्वकी स्थितिमें सुधार होता है। तथा जैसे बुखार उतरता है वैसे-वैसे जिह्वा साफ होती रहती है। अगर रोग तीव्र अवस्थाका हो तो रोगमें गम्भीर उपद्रव उत्पन्न होते हैं। तथा विस्मयताकी वृद्धि हो जाती है।

उपद्रवः—मस्तिष्क विकृत लक्षण मिलते हैं। प्रलाप, तन्द्रा, कम्प (अक्सर कम्प हाथोंमें होती है) वस्त्र लुंघन करता है। अनजानेमें मूत्र-त्याग तथा मूत्रावरोध हो जाता है।—

इसमें ताप उच्च रहता है। परन्तु कभी कभी उच्च वृद्धिको भी चला जाता है।

इसमें हृद्दौर्बल्यकी वृद्धि हो जाती है।—

फुफ्फुसके उपद्रव—इसमें निमोनिया भी हो जाता है तथा फुफ्फुस अधः रक्ताधिक्यके कारण फुफ्फुसके अधःप्रान्तमें रक्ताधिक्य) हो जाता है।

अधिक शारीरिक कृशता, अत्यधिक दुर्बलता—

जिह्वा शुष्कता, होठ भी सूखे हुये तथा होठोंपर पपड़ी-सी प्राप्त होती है। अत्यधिक आध्मान रहता है। आन्त्रसे रक्तका श्रवण होता है। इसमें आन्त्र निश्च्छिद्रण हो जाता है।—

चतुर्थ सप्ताहः—

रोगी सामान्य अवस्थामें रहता है। इसमें रोग निवृत्ति प्रारम्भ होती है। रोगीको भूख लगती है। धीरे-धीरे ताप स्वाभाविक होने लगता है। जिह्वा साफ होती है।—जिस प्रकार रोगकी स्थितिमें सुधार होता है उसी प्रकार धीरे-धीरे जिह्वा स्वच्छ होती है। यह मुख्य लक्षण है। मस्तिष्क तथा

आन्त्रिक विकृतिमें धीरे-धीरे सुधार होता है। रोग निवृत्तिके बाद रोगीमें दौर्बल्य रहता है।

तीव्र रोगः—अगर तीव्र होता है तो विस्मयता बढ़कर उसके परिणाम होने वाले उपद्रव उत्पन्न होते हैं।—

—: आन्त्रिक ज्वरके प्रकार :—

१. सौम्य प्रकार—इसमें ज्वरादि लक्षण सौम्य रहते हैं:—सामान्य प्रकारकी तरह उत्पन्न होकर एकाएक समाप्त होजाता है।

२. भ्रमणशील प्रकार—इसमें ज्वरादि लक्षण सौम्य ताप कम रहता है। आगे जाकर यह रोग तीव्र स्वरूप धारणकर उपद्रव उत्पन्नकर रोगीकी मृत्युकर देता है।

३. तीव्र प्रकार—ज्वरका आक्रमण सर्दी तथा बरटीके साथमें अकस्मात् होता है। दूसरे सप्ताहमें उपद्रव होकर रोगीकी मृत्यु हो जाती है।

४. विशेष प्रकार—रोगीके सामान्य लक्षणोंके अलावा अन्य संस्थानोंकी विकृति दीखती है। (साथ में दूसरे रोग और उत्पन्न) जैसे फुफफुसमें विकृति

हो जाती है तो नफ्रोटाईफाईड, व इसका प्रभाव मस्तिष्कपर हो तो “मेनिंगोटाईफाईड” होजाता है, आदि इस प्रकार।

बालकोंमें आन्त्रिक ज्वर

१—४०% रोगियों (बालकों) में रोगका अकस्मात् आक्रमण।

२—तीव्र प्रकार होनेपर भी मस्तिष्क विकृतिके सम्बन्धित तन्द्रा प्रलापादि लक्षण नहीं होते।

३—ज्वर व नाड़ी अनुपातमें फर्क नहीं पड़ता।

४—नाड़ी द्विस्पन्दित नहीं चलती है।

५—रक्तस्राव, आन्त्रनिश्चिद्रण इत्यादि घातक उपद्रव कम होते हैं।

मुखमें मिलनेवाली विकृतियाँ—(बालकोंमें)

(१) प्लीहावृद्धि (२) खांसी (३) शरीरकृशता (४) मुखपाक (५) रोगका पुनरावर्तक (रिलेप्स)

उपद्रव—१ आन्त्रनिश्चिद्रणके लक्षण (नाभिके दक्षिण पार्श्वमें तीव्र पीड़ा)

२—नाड़ी गति अधिक (३) तापगिरना (४) रोगी बेचैन (५) अचानक तीव्र वेदना (६) पसीना।

आन्त्रिक ज्वरपर भवनकी औषधियाँ

मधुरान्तक वटी (मुक्तायुक्त)

जवाहर मोहरा (रत्नप्रधान)

बृहत् सुवर्णमालिनी वसंत

बृहद् ब्राह्मी वटी (विशेष)

अमरसुन्दरी वटी (प्र०वि०)

प्रवाल पिष्टी (विशेष)

चन्द्रोदय वटी (सिद्धमकरध्वज वटी विशेष) मुक्ता पिष्टी

बबूलका उपयोग

आयुर्वेदाचार्य डा० सत्यनारायण खरे ए०. एम, बी०, एस०
C/o श्री राम सेवक श्रीवास्तव ककवारा (भाँसी) उ० प्र०

प्रकृतिने जो भी पदार्थ व वनौषधि उत्पन्न किये हैं उनमेंसे प्रत्येकका महत्व मानव जीवनके लिये उपयोगी है। जितनी व्याधियाँ हम देख रहे हैं उनके शमनका उपाय भी प्रकृतिने किया है। जितने भी लताएँ व वृक्ष हम देख रहे हैं उनका उपयोग कुछ न कुछ रोग शमनार्थ किया जाता है।

प्रत्येक वृक्षका उपयोग औषधार्थ किस प्रकार किया जाता है इससे सभी भारतीय परिचित नहीं हैं। केवल आयुर्वेद शास्त्रके ज्ञाता व पाठक ही वनौषधियोंका उपयोग करते हैं अतः इस संकटके युगमें हम भारतीयोंका कर्तव्य है कि रुग्णावस्थामें अपने निकटकी वनौषधिका उपयोग करके ही आरोग्य प्राप्ति करें। रोगकी प्रारम्भिक अवस्थामें ही पासकी वनौषधि प्रयोगमें लाई जा सकती है इससे रोगका शमन भी शीघ्र हो जावेगा और रोगीको अन्यत्र जाकर किसी मूल्यवान औषधिका आश्रय नहीं लेना पड़ेगा।

अस्तु आज हम भारतीय जनताकी सेवामें 'बबूल' नामक वनौषधिके उपयोगका उल्लेख कर रहे हैं जो कि भारतके सभी क्षेत्रोंमें पाया जा सकता है और सभी लोग इससे परिचित हैं। बबूल एक काँटेदार वृक्ष है। इसके पत्ते आँवलेके पत्ते समान होते हैं। यह पेड़ जलासन्न भूमि व काली मिट्टीमें अधिक उगते हैं। इसके नाम विभिन्न भाषाओंमें इस प्रकार हैं—

१. संस्कृत—बबूल, आभा व षट्पदमोहिनी।
२. हिन्दी—बबूर व कीकर।
३. बंगाली—बाबूल गाछ।
४. मराठी—बाँभूल।
५. गुजराती—बाबूल।

६. कन्नड़—पुलई।

७. तैलगू—बलवंतडु।

८. अंग्रेजी—एकेशिया ट्री (Acacia tree)।

९. लैटिन—माइमोसा अराविका (Mimosa Arabica)।

इसके वृक्षसे सफेद गोंद (Gum) निकलती है जो बहुत पौष्टिक होती है। बबूलकी छाल रंगके काम आती है।

बबूलके गुणः—

“बबूलः कफनुद्ग्राही कुष्ठ क्रिमि विषापहः।”

यह ग्राही और कफ, कोढ़, क्रिमि तथा विषनाशक है।

बबूल वृक्षके गुण—यह ग्राही, कड़वा, मधुर, स्निग्ध, शीतल, उष्ण और फीका होता है। यह रक्तविकार, पेचिस, कफ, कुष्ठ, कृमि, पित्त, दाह, ऊर्ध्व रक्तपित्त, रक्तातिसार, वायु और प्रमेहको नष्ट करता है।

बबूलके पत्तेके गुण—यह ग्राही, रुचिकर, तीक्ष्ण और उष्ण होते हैं। एवं अर्श, कफ, वायु, खाँसी और पुंसत्वका नाश करते हैं।

बबूलकी दातौन (दन्त धावन) दाँतोंकी जड़को जमाती हैं एवं दाँतोंकी उम्रको बढ़ाती है। दन्तमूलको मजबूत बनाती है।

इसकी फलियोंका अचार और शाक बनाया जाता है। इसको गाय, भैंस व बकरीको खिलानेसे दूध अधिक निकलता है।

उपरोक्त गुणोंके अनुसार निम्न रोगोंमें बबूलका

इस प्रकार उपयोग किया जाता है—

(अ) बाह्य प्रयोग—

१. मुखरोग—बबूलकी छालके चूर्णको पानीमें उबालकर, उससे कुल्ले करना चाहिये। इससे मुख शोध, व्रण आदिमें लाभ होता है।

२. नहारु—बबूलके बीजोंको गोमूत्रमें घिसकर लेप करना चाहिये।

३. बदनके शोथपर—सर्पकी कँचुलीपर बबूलका गोंद चुपड़ कर उसकी पट्टी बाँधना चाहिये।

४. नेत्ररोग—बबूलके पत्तोंका गाढ़ा काढ़ा बनाकर उसमें थोड़ी शहद मिलाकर अञ्जन करना चाहिये। इससे नेत्रोंका आँसू बहना बन्द होजाता है।

५. दन्तमूल शोथ—बबूल और जामूनकी छालका काढ़ा बनाकर उसमें फूली हुई फिटकरी डालकर कुल्ला करनेसे लाभ होता है।

६. उपदंशके व्रण—बबूलके पत्तोंका चूर्ण करके व्रणपर लेप करनेसे लाभ होता है।

७. नेत्रोंकी जलन—बबूलके पत्ते पीस कर, रातको उसकी टिकिया-सी बनाकर आँखपर बाँधना चाहिये। इससे नेत्रोंका शूल व जलन शान्त हो जाती है।

८. कर्ण रोग—बबूलकी छालका काढ़ा पतली धारसे कानमें डालना चाहिये। इसके बाद एक सलाईमें रुई लपेट कर-कान को सुखा लेना चाहिये। तत्पश्चात् फूली हुई फिटकरीका पानी कानमें डालनेसे कर्ण-स्त्रावमें लाभ होता है।

(आ) आभ्यन्तर प्रयोग—

१. अतिसार—बड़े बबूलके पत्तोंका रस निकाल कर पिलाना चाहिये। इससे सभी प्रकारके अतिसार नष्ट होते हैं।

२. उदर शूल—बबूलकी छालका रस दहीमें मिलाकर पिलानेसे शूल शान्त हो जाता है और अतिसारमें लाभ होता है।

३. अस्थिभंग—बबूलके बीजोंका चूर्ण तीन दिन तक शहदके साथ सेवन करनेसे अस्थिभंग दूर हो

जाता है और अस्थि वज्रके समान मजबूत होजाती है।

४. धातुपुष्टिके लिये—एक हाथ लम्बा और एक हाथ चौड़ा स्वच्छ कपड़ा ले इसके बाद बबूलकी कच्ची फलियोंके रसमें कपड़ेको भिगोकर सुखा दें। जब सूख जाय तब फिर इसी प्रकारके रसमें भिगो दें। इस प्रकार इस कपड़ेको १४ बार भिगोना सुखाना चाहिये। इसके बाद इस कपड़ेके चौदह टुकड़े करके रोजाना एक टुकड़ेको पाव भर दूधमें उबालें और मिश्री डालकर पी जाँय इससे धातुकी पुष्टि होती है।

५. पागल कुत्ते के विषपर—बबूलके पत्तोंके रसमें गायका घी और करतूरी मिलाकर सेवन करना चाहिये।

६. अम्लपित्त—बबूलके पत्तोंका काढ़ा करके उसमें १ माशा आमका गोंद मिलाना चाहिये। यह काढ़ा रात्रिको बनाना और प्रातःकालमें पीना चाहिये। इससे लाभ होता है।

७. रक्तप्रदरपर—बबूलकी फलियाँ, आमके मौर और मोचरसके वृक्षकी छाल और लसोड़ेके बीजका चूर्ण दूधमें मिलाकर पिलाना चाहिये। इससे शीघ्र लाभ होता है।

८. कोष्ठबद्धता—बबूलकी फलियोंका चतुर्थांश काढ़ा बनाकर पीना चाहिये। उसके बाद जितने पान खाये जायेंगे उतने ही दस्त होंगे।

९. प्रमेह—बबूलके अंकुर सात दिनतक सुबह शाम एक-एक तोला शक्करके साथ खानेसे प्रमेह नष्ट हो जाता है।

१०. शारीरिक दुर्बलतापर—गेहूँकी सूजी और बबूलके गोंदका चूर्ण करके घीमें सेकना चाहिये। इसके बाद शक्करका पाक बनाकर बादाम, चिरोजी, पिशता, वेदाना और सालम मिश्री इत्यादि मसाले मिलाकर उसके लड्डू बनाकर खाना चाहिये।

बबूलका पारचात्य मतानुसार उपयोग—

इसकी छालका काथ गलक्षत या अधिक लाला-स्त्रावमें केवल धारण करने एवं व्रणादि घावोंमें व्यव-

यह शरीरमें जाकर रक्तमें शर्करा नहीं बनने देता। अतः मधुमेह व सोमरोगमें लाभदायक है। यह श्लेष्मधराकलाकी उत्तेजनासे होनेवाले रोग खाँसी, गलक्षत, अन्त्रगत, श्लेष्मदोष, रक्तातिसार, श्वेतप्रदर, मूत्राघात व मूत्रकृच्छ्रादि पीड़ाओंमें लाभप्रद है। विषजन्य वमन और विरेचन होनेपर इसका काथ उपकारी है। इसका फल खाँसीमें हितकर है। दुष्ट व्रणोंमें इसके पत्तोंका लेप लाभदायक है।

कच्चा पत्ता सेवन करनेसे आमातिसार व प्रमेह शान्त हो जाता है।

भैषज्य रत्नावलीमें बबूलका योग "बबूलाद्यरिष्ट" का वर्णन किया गया है। इसको १॥ से २॥ तोलाकी

मात्रामें बराबर जल मिलाकर भोजनोपरान्त पीनेसे क्षय, कुष्ठ, अतिसार, प्रमेह, श्वास और खाँसीमें लाभ मिलता है।

व्यवहारांश—पत्र, त्वक् निर्यास एवं बीज।

मात्रा—पत्र कल्क २-४ माशे, काथ-५ तोला, गोंद ६ माशा, बीजकल्क-२ आने भर व त्वक् चूर्ण ३ से ५ माशेतक।

अस्तु उपरोक्त उपयोगोंको देखते हुये बबूल महत्वपूर्ण वनौषधि है। प्रत्येक 'श्वास्थ्य' के पाठको इसके गुणोंसे लाभान्वित होना चाहिये। जिससे रोग अल्प समयमें ही नष्ट हो सकें और हम भारतीय स्वयं होकर देशोन्नति करनेमें संलग्न रहें। इति आरोग्यम्।

कुमार-कल्याण रस

(विशेष)

इस रसमें रससिन्दूरके स्थान पर सुवर्णयुक्त चन्द्रोदय मिला देनेसे यह बालकोंके समस्त रोगोंमें अद्भुत लाभकारी प्रमाणित हुआ है।

प्रायः देखा जाता है कि बाल्यावस्थामें बच्चोंके पाचक अङ्ग यकृत (Liver) आदि दुर्बल होनेसे उन्हें मन्दाग्नि, अतिसार, वमन आदि रोग आक्रान्त कर लेते हैं। जिनकी चिकित्सा न करनेसे बालशोष (Rickets) होकर बालक अस्थिपञ्जर-सा दिखाई देने लगता है। और माता-पिता उसके जीवनकी आशासे भी निराश हो जाते हैं, ऐसी स्थितिमें रोग होनेके पूर्व ही यदि बच्चेको प्रतिदिन अत्यल्प मात्रामें कुमारकल्याण रस खिलाते रहें, तो बच्चा किसी भी रोगसे आक्रान्त नहीं होकर अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट होगा तथा उसके दांत भी समयपर और आसानीसे निकलेंगे।

यह रस बच्चोंके ज्वर, श्वास, कास, वमन, तालुशोष, पारिगर्भिक, बालग्रह, मन्दाग्नि, यकृद्दुष्टि, अतिसार, पाण्डु, कामला, बालशोष, रक्ताल्पता और निर्बलता सभीको नष्ट करता है।

मात्रा— $\frac{1}{2}$ से $\frac{3}{4}$ रत्ती।

अनुपान—सितोपलादि चूर्ण, मधु या प्रक्खनके साथ, प्रातः सायं दिनमें दो बार।

बच्चोंकी खांसी

लेखक:—सीताराम जोशी



प्रायः देखा गया है छोटे छोटे ५-६ वर्षके बच्चे खांसीसे बहुत व्याकुल हुए फिरते रहते हैं।

इससे छोटे शिशु स्तनन्धय भी इस रोगसे बहुत दुखी देखे गये हैं।

छोटे शिशुओंके खांसीके साथ वमन भी होजाता है। इनके रोगका कारण उनके माता पिता या संरक्षक ही हैं। क्योंकि बच्चोंको यह ज्ञान नहीं कि मैं शर्दीमें न फिऊँ। ठंडी वस्तु न खाऊँ। ठण्डा पानी न पीऊँ। दही न खाऊँ।

इधर नाक बहता रहता है। शिर खुले रहनेसे ठंड बैठती रहती है। प्रातः दही रोटी खाते हैं। स्कूलमें ठंडा पानी पीनेको मिलता है। मानो खांसीको रोग ही नहीं समझते।

परन्तु जिसको पीड़ा होती है। वह जानता है कि कितना दर्द छाती कण्ठमें होता है। पेट दूखने लगता है। आँतें तन जाती हैं, दम घुटता रहता है।

माता पिता परवाह नहीं करते। छोटे बच्चोंको थोड़ी खांसी रहते हुए भी स्कूलमें भेज देते हैं।

स्कूलके कमरोंमें खिड़कियाँ खुली रखनेका आम-रिवाज है। अतः ठंडके दिनोंमें ठंडी हवा आती रहती है। नीचेका फर्स ठंडा रहता है। इस तरह ठंडा दही रोटीका खाना, वासी भोजन, ठण्डी हवा, ठण्डे पानी पीनेसे बच्चोंकी खांसी दिनोंदिन बढ़ती जाती है।

पहले तो कण्ठ-नाली-फुफ्फुस प्रणालीतक ही ठंड सीमित थी अब सारा फुफ्फुस ठण्डसे आक्रान्त होजाता है। रक्तमें ऊष्मा-अग्नेयांशसे मन्द पड़ जाता है। रक्त जाड़ा, कफवृद्धि हो जाती है। दम घुटता है। धास ठीक नहीं आता। प्राणवायु कफके द्वारा स्रोतोंके रक्तसे प्रतिहत होकर निकलता है। यह कास रोग है।

यह ठंडका कफ वायुका रोग है। इस रोगमें कण्ठ, मुख, फुफ्फुस और आमाशय तक के स्रोत कफसे व्याप्त रहते हैं। सब रसोंमें द्राव्य

बढ़ जाता है। पित्तका आग्नेयांश कम होजाता है। अतः हमको सबसे पहले निदान परिवर्जनरूप चिकित्सा करनी चाहिये। खांसीवाले बच्चोंको गरम दूध रोटी आहार चाहिये। या सिर्फ दूधपर ही रहे तो बच्चा आहार और जल दोनोंके गरम रहनेसे शीघ्र ठीक होजावेगा। अधिक भी नहीं तो पाव दूध, पाव पानी, एक छटांक शकर, सुबह। और इतनी ही मात्रामें मध्याह्नमें। सायं भी यही आहार देनेसे बच्चा अवश्य ठीक हो जावेगा।

स्नान बन्द रखें। प्यासमें गरम पानी पीनेको दें। और गरम कपड़े, गरम हवामें, मकानके भीतर गद्दोंपर बैठा रखें। दो तीन दिनसे कुछ ठुकसान नहीं होता है। स्कूलसे छुट्टी दिलावें।

औषध—कालीमिर्च १ तोला, सोंठ १ तोला, पीपल १ तोला, नीम्बूसत्व १३ माशे, सैन्धवनमक ३ माशे। गुड़में गोली बनाकर (जितनेमें बन सके उतना गुड़ देकर छोटी बड़ी गोली बनालें) चूषनेको देते रहें। खटाईकी गोली व्योषादि वटी, लवंग, मिश्री मुँहमें रखें।

या सोंठ, कालीमिर्च जितनी बड़ी मृत्युञ्जयकी या त्रिभुवन कीर्ति रसकी गोली एक दो बार पानमें खिलावें।

बच्चोंको खेलमें रखें। एक व्यक्ति बच्चोंकी सेवापर पहरेपर रहे। अपव्यय न होने पावे। ऐसे चार पांच दिनमें खांसी अवश्य मिट जावेगी। गरम पानी निवात शयन और क्षीर आहार यह साधारण चिकित्सा नहीं है। इससे बड़े बड़े रोग ठीक हो जाते हैं।

यह तो हुई ५ से १० वर्षके बच्चोंकी खांसीकी चिकित्सा। छोटे शिशु स्तनन्धय तो और भी अज्ञानमें रहते हैं। वे परतन्त्रवृत्ति हैं। माता पिता-रातको सोते हैं। सोते समय बालकको ठंडी हवा प्रवेश

करके ठंडा कर देती है।

माता-पिता समझते हैं। बच्चे को उठा रक्खा है, पर यह उनकी अज्ञानता है।

छोटा शिशु मुँहसे तो बोल नहीं सकता। मुझे ठंड है। हवा एक तरफसे ठंडी आरही है। माता-पिताको ज्ञान नहीं।

जब बच्चा अधिक बीमार होजाता है, खांसी, बुखार ज्यादा बढ़ जाते हैं, तब डाक्टरके पास पहुँचते हैं। डा० सूई लगाते हैं।

वे डाक्टर पीनेकी दवा भी नहीं देते। इधर माता-पिता झंझटोंसे बरी होकर सूचीवेध ही ठीक समझते हैं।

कितने अज्ञानकी बात है? खेद और दयाके साथ लिखना पड़ता है कि उस अबोध बालकके रोते चिल्लातेके सूचीवेध करते हैं।

माता-पिताके अज्ञानके कारण थोड़ीसी सर्दीकी असावधानीसे-शर्दीसे बचाव न रखनेसे बच्चे बहुत दुखी रहते हैं। ज्वर काससे व्याकुल रहते हैं। बहुतसे माता-पिता तो रोते हुए बच्चोंको, ज्वर-कासमें भी साबुन लगाकर स्नान कराते हैं। दुःखी करते हैं। बड़ी दयनीय स्थिति है। अज्ञानकी पराकाष्ठा है।

बच्चोंका शरीर संतप्त रहता है। शिरदर्द, खांसीकी पीड़ाका तो उन्हें अनुभव नहीं। वे तो समझते हैं हमारे बच्चे सजे हुए रहें, गन्दे न रहें। बच्चोंकी अनिच्छासे स्नान कराते हैं। यदि बच्चा रोवे नहीं तो स्नान ठीक हो। परन्तु उन्हें सोचना चाहिए, इस सजावट ही सजावटसे बच्चे मर जाते हैं।

दूसरे स्तन पीने वाले बच्चोंके सर्वाधिक रोगका कारण है-माताका भारी दूध। माताको शर्दी लगी हो, या ठंडा भोजन करती हो, तो दुग्ध भी कफ प्रधान होगा, भारी दूध होगा। सर्दी दूधमें उतर आवेगी। इसलिए जाड़ा कफवाला क्षीर मन्दाग्नि करता है। बारम्बार माता रोते हुए बच्चेको स्तनपान कराकर रोना बन्द कराना चाहती है।

परिणाम यह होता है बच्चा कफोत्पन्नक्षीर जाड़ा गलकेदार ररयान (घन) दुग्ध बच्चेके पेटमें जाता है और अग्निमान्य करता है। ज्वर बढ़ाता है। खांसी

अतः इसका यही इलाज है कि माता उठते समय चारों तरफसे बच्चेको ढँक दे। ठंडी हवा आनेको अवकाश न रहे ऐसे उठावे स्वयं गरम पानी पीवें। गरम भोजन दूध रोटी या गरम शाक; दाल-रोटीका भोजन करें।

हो सके तो एक दिनका उपवास भी करे। इससे माताका क्षीर हल्का गरम हो जावेगा। बच्चेका अर्जीर्ण भी दूर हो जावेगा। चूँकि दूध कम जावेगा। उपवाससे दूध गरम हो जावेगा।

माताके उपवाससे शिशुका अर्जीर्ण आमाशयमें जो श्लेष्मा भरा रहता है, कम हो जाता है। स्रोत शुद्ध होकर कफ द्रुत होकर बच्चेका कास और ज्वर मिट जाता है।

शिशुको माताका दूध भी यदि न मिले, या दूधित हो तो, अजादुग्ध पतला कर गरम देना चाहिये। पानी ठंडा न पिलावें, माता स्नान न करे, गरम पानी पीवें।

दवा:—टंकण ३ रत्नी, संजीवनीवटी ३ गोली, पीसकर दोनों गरम पानीमें घोलकर या मधुसे चटावें।

यह सब अनुभूत चिकित्सा है। मिश्रीका पानी, गरम पानी, मिश्रीका काथ; दिनमें चार बार देनेसे बच्चे ठीक हो जाते हैं।

यदि और भी शर्दी हो तो गरम कोयलोंकी अंगीठी सुलगाकर रुक्ष, स्वेद, कपड़ेको गरम करके निवात स्थानमें बच्चेको सेक (खूब सिकताव) देना चाहिए। खूबका मतलब जब तक स्वेद पसीनासे बह तर न हो जावे।

स्वेदनके बाद बच्चेको पेशाब उतरता है। तब बदन कर दें। सब काम छोड़कर बच्चेकी सेवापर एक व्यक्ति रहे।

प्रातः सायं चतुरस्र चतुष्पथमें (चौराहेमें) गुं रोटी बच्चेके हाथसे स्पर्श कर रक्खें। कोई भी पानी जो बच्चेको पीड़ा देते हैं वलि लेवें जमा करें। देना भाव रखकर रोटी रख दें।

निश्चित रूपसे खांसी और ज्वर ठीक हो जाते हैं। यह शिशु और बड़े बच्चेकी उत्तम चिकित्सा है। गंदे हैं। आजमावें यह हमारी प्रार्थना है।

विश्वकी समस्या—

— मधुमेह रोग —

ले०—पं० शिवशंकरात्मज गौरीशंकर श्रोत्रिय भिषगाचार्य, आयुर्वेदाचार्य
राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

वर्तमानमें, मधुमेहकी व्यापकतापर विचार आया कि प्राचीन युगमें इस रोगकी इतनी व्यापकता नहीं थी; किंतु जटिलता तो थी ही। और आज वास्तवमें यदि कोई रोग संसार-व्यापी है तो मधुमेह जिससे सारे विश्वकी जनता सबसे बड़ी संख्यामें आक्रान्त है। यह रोग संक्रामक नहीं होते हुवे भी जिस संख्यामें यह बढ़ रहा है। और स्थायी रूप धारणकर रक्खा है उतना कोई भी भयंकर संक्रामक रोग भी शायद नहीं फैला। मधुमेह रोगपर कुछ नैदानिक दृष्टिकोणसे विचार करें तो आधुनिक सभ्यता और उद्योगीकरण की ही यह महान देन है। उद्योगोंके चक्रमें फँसा हुआ व्यक्ति २४ घण्टे उसके सिवा कोई चिन्ता नहीं रखता। पारस्परिक स्पर्धा ही एक मात्र मानव जीवनका उद्देश्य और ध्येय है। इस प्रकार ये उत्पन्न होनेवाली चिन्ताएं इस रोगका और अन्य रोगोंका भी मुख्य कारण है। वैज्ञानिक अनुसंधानोंने भी यह प्रमाणितकर दिया है कि पाचन संबन्धि विकार, आमाशयिक व्रण, आंत्रशोथ, हृद्‌रोग, यकृतविकार, शूक्ररोग, मधुमेह अन्य भी अनेक रोगोंकी उत्पत्तिका मूल कारण ये मानसिक दशाएँ ही होती हैं।

इस महा रोगके पर्याय मधुमेह (डायबिटीज मेलिटस), शर्करामेह, आदि मधुमेहमें रोगी मधुके समान मधुर मूत्रका त्याग करता है। अतः इस रोगको मधुमेह कहते हैं। इस रोगमें कार्बोहाईड्रेट्सके साथ २ प्रोटीन्स तथा फेट्सका मैटोबोलीज्म-(समवर्त) ठीक प्रकारसे नहीं हो पाता। इसमें मूत्रके साथ ओजका चरण होता है। इसीलिए महर्षि चरक मधुमेहको ओजोमेह भी कहते हैं। चरकने क्षौद्रमेहको मधुमेह कहा है। कारण

आचार्योंके मतानुसार मधुमेहका प्रधान कारण वायु है। प्रमेहोंके दोषादि विचारसे २०-२० भेद किये हैं। मधुमेह इन्हीं २० भेदोंमेंसे एक भेद है। मधुमेह अथवा क्षौद्रमेह आचार्य माधव वर्णित चार २ अर्थात् वसामेह, मज्जामेह, क्षौद्रमेह-मधुमेह-हस्तिमेह, इन वातज प्रमेहोंमेंसे एक मेह है। अतः प्रमेहोत्पत्तिके कारणोंमें व्यायामाभाव अत्यधिक मानसिक श्रम जैसा कि पूर्वमें अंकित किया है, चिन्ता करना मेदो-कारक पदार्थोंका सेवन यथोक्त मधुरं यच्च मेहेषु प्रायो मध्विव मेहति सर्वेऽपि मधु निहाय्याः माधुर्याच्च तनोरतः—

आयुर्वेदीय मधुमेहका सामान्य निदानः—
आस्यासुखं स्वप्नसुखं दध्नीति ग्राम्योदकानूप रसा प्यासि नवान्न पानं गुडवैकृतं च प्रमेहं हेतु कफ कृच्च सर्वम्—सर्वमसे तात्पर्य आचार्यका द्रव्यगुण कर्मसे है, परन्तु मधुमेह वातज प्रमेहोंका भेद है। अतः इस वातज व्याधिके निदानमें भी अन्तर आना चाहिये। आयुर्वेदमें मधुमेहजन्य प्रमेहकी परिणतिके रूपमें भी उत्पन्न हो सकता है। सर्व एव प्रमेहास्तु कालेनाप्रति कारिणः मधुमेहत्व मायान्ति तदासाध्याः भवन्तिहिः—
मधुमेहको पाश्चात्य विज्ञानमें पाचन क्रिया संबन्धि असामञ्जस्योत्पन्न एक व्याधि कही गई है। और आजके युगमें आधुनिक जीवन-यापन प्रणालीके दबाव प्रभावके कारण यह व्याधि दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ऐसा माना जाता है। समयपर उचित उपचार नहीं होनेसे सभी प्रमेह मधुमेहमें परिणत होकर असाध्य कोटिमें पहुँच जाते हैं। कार्बोहाईड्रेट मेटा-बोलीज्मका नियंत्रण शरीरकी चार अन्तःस्रावी प्रस्थियां (Duct less glands) करती हैं, जो निम्न हैंः—

अग्न्याशय, चुल्लिका ग्रन्थि, पीयूषग्रन्थि, अधिवृक्क, अग्न्याशयका अन्तस्त्राव, इन्सुलीन है। यह रक्त प्रवाहमें मिलकर क्रिया करता है। पेशियोंद्वारा शर्कराका उपयोग तथा यकृतके द्वारा उसका संचय करता है। इसके अभावमें रक्तगत शर्करा बढ़कर वृक्क मर्यादाका अतिक्रमण करके मूत्रके साथ २ बाहर निकलने लगती है। शेष तीनों ग्रन्थियाँ इन्सुलीनकी क्रियाको रोकती हैं। इन्सुलीनकी क्रिया बढ़जाने तथा अन्य तीन ग्रन्थियोंकी क्रिया घटजानेपर रक्तगत शर्करा प्राकृत अवस्थासे कम हो जाती है। उसे उप मधुमयता कहते हैं। इसप्रकार शर्करा समवर्तका प्रभाव वसा तथा प्रोटीनपर भी पड़ता है। वसा समवर्तकी विकृतिसे अम्लोत्कर्ष जिससे रक्तकी क्षारीयता प्राकृतसे बहुत न्यून हो जाती है, और रोगीको संन्यास सदृश लक्षण दीखने लगते हैं। पूर्वमें जैसा कि कहा है, आयुर्वेद महर्षियोंके मतानुसार इस रोगका मुख्य कारण वायु है। इसका प्रकोप धातुक्षय या अन्य दोषोंके आवरणसे हो सकता है, और वास्तवमें यह रोग वृद्धावस्थामें जब सभी धातुएँ क्षीण होने लगती हैं, उत्पन्न होता है। सभी प्रमेह त्रिदोषज होते हैं। धातुक्षयजनित वातसे उत्पन्न मधुमेहमें वातिक लक्षण मात्र होंगे और यदि वह स्वतंत्र रूपसे उत्पन्न है तो असाध्य ही होगा। कफज और पित्तज, प्रमेह जो साध्य है, उचित और समयपर चिकित्सा न होनेपर मधुमेहमें परिणत होकर कष्टसाध्य हो जाते हैं।

रोग लक्षणः— (१) अत्यधिक तृषा, (२) अधिक भोजनमें रुचि न होना (३) अपच रहना (४) अधिक मूत्रका त्याग करना (५) वजनमें कमी होना, (६) मूत्रकी स्पैसिक प्रेविटी १०४०, १०५०, तक हो जाना, मूत्रमार्गमें शर्कराका जाना, प्रालस्यभाव जिह्वाशुष्क एवं रक्तवर्णकी होना, काम शक्तिका अतीव हास। इनमें भी प्रमुख लक्षण शरीरमें प्रमेह पिडिकाओंका होना है।

संप्राप्तिः— रक्त व्यायाम चिन्तानाम, संशोधनमूर्ध्वताम, श्लेष्मा पित्तश्च मेदश्च मांसश्चातिप्रवर्धते। तैः प्रवृत्त गतिर्वायु रोज आदाय गच्छति यदा वस्ति तथा रुच्छो मधुमेह प्रवर्तते। जो मनुष्य श्लेष्मवर्द्धक आहारका सेवन करता है, पहले भोजनके पाचन हुवे बिना

और आहारकर लेता है तथा व्यायामाभाव दिनमें भी सोते रहता है, ऐसे मनुष्यका पाचन क्रियासे उत्पन्न रस आमरहकर ही विशेष मधुरतालिये संपूर्ण शरीरमें भ्रमण करता हुआ स्नेहके अतियोगसे मेदकी उत्पत्ति करता है। मेद और कफसे सूक्ष्म मार्गोंका अवरोध हो जाता है। जिससे सर्वाङ्गमें धातुपोषण नहीं होता और दुर्बलता बढ़ने लगती है। ओजका क्षय होने लगता है। अतः महर्षि चरक कहते हैं—ओजः पुनर्मधुर स्वभावं तद्रोक्ष्याद् वायुश्च कषायत्वेनाभिसंयुज्य मूत्राशयेऽतिवहन् मधुमेहं करोतिः—

अथवा पित्त कफ की वृद्धिसे वातका मार्ग अवरुद्ध हो जानेसे व धातुक्षयसे वायु प्रकुपित होता है। और मूत्र शहदके तुल्य हो जाता है। एक और पाचन कम, दूसरी और शर्करा निर्माणमें वृद्धि। अर्वाचीन विद्वानोंके मतमें मूत्र साथमें शर्करा लिए अधिक मात्रामें आता है। क्योंकि शर्कराकी दहन क्रियामें अग्नि ग्रन्थिका अन्तःस्त्राव जिसे इन्सुलीन कहते हैं, सहायता करता है। यह शर्करा कैसे आती है :—

यकृतमें ग्लाइकोजनसे ग्लूकोज निर्माणकी जो शक्ति है, उसका नियंत्रण अग्न्याशयके भीतर स्थित कोषोंसे निकलने वाला (इन्सुलीन) नामका पदार्थ है। यह इन्सुलीन रक्तके साथ मिलकर यकृतमें जाता है और आवश्यकतासे अधिक शर्करा बनानेसे यकृतको रोकता है। जब मनुष्यमें अधिक द्राक्षोज पैदा होने लगता है, और अग्न्याशयके कोष उसपर नियंत्रण करनेके लिए अधिक कार्य करते हुवे, नष्ट हो जाते हैं। क्योंकि उन्हें इन्सुलीनकी अधिक उत्पत्ति करनी पड़ती है, तब यकृतके ऊपर नियंत्रण करनेवाला कोई नहीं रहता, और यकृत अधिक द्राक्षोज निर्मित करता है, और मूत्रके साथ त्याग करता है। अतः आत्रेय महर्षि चरक लक्षण देते हैं, (च० चि० स्थान) मेंः—

शीत प्रियत्वं, गलतात्सु शोषो,

माधुर्य मास्ये करपाद दाहः।

भविष्यतो मेह गदस्य रूपं,

मूत्रेऽभि धावन्ति पिपिलिकाश्च॥

मधुमेहके उपद्रवः—निद्रानाश, शरीरमें चिड़पन, शोष, शरीर अस्थिपंजर, शूल, शिराकम्प, (शोष, पुष्टि पर देखें)

श्रीष्मश्रुतुमें उपयोगी--

प्याज और लहसुनके घरेलू उपयोग

श्रीमती सुमित्रा देवी अग्रवाल "विशारद"

यदि कान दर्द करता हो तो प्याजके रसमें मूलीके रस मिलाकर तथा कुछ गरम करके कानमें डालनेसे कानका दर्द शीघ्र ही दूर हो जाता है।

यदि पतले दस्त आते हों तो प्याजके रसमें थोड़ी-सी अफीम मिलाकर खानेसे शीघ्र ही लाभ होता है।

लू लग जानेपर प्याजके रसको दोनों कनपटी और छातीमें मालिश करनेसे शीघ्र ही लाभ होता है।

घरमें सफेद प्याज रखनेसे सांप नहीं आता।

प्याजका रस और सिरका दोनों मिलाकर पक्के ब्रेश या स्टीलपर चुपड़नेके बाद थोड़ी देरसे माँज डालनेपर लोहे और स्टीलके बर्तन चमकने लगते हैं।

प्याजके रसको बिस्तरपर छिड़कनेसे मच्छर तुरन्त भाग जाते हैं।

दाँतके दर्द या मसूड़ेकी पीड़ामें प्याजका टुकड़ा दाँत या मसूड़ेके नीचे रख देनेसे दर्द शीघ्र ही दूर हो जाता है।

श्रीष्मश्रुतुमें प्याज खानेसे लू लगनेका भय नहीं रहता।

शहदकी मक्खीके काटनेकी जगहपर प्याजका रस लगा देनेसे शीघ्र ही लाभ होता है।

दीपकमें प्याजके टुकड़े डालनेसे पतंगे पास नहीं आते हैं।

काँड़ेके कटे हुये स्थानपर कच्चा प्याज लगानेसे रक्त तुरन्त दूर हो जाता है।

यदि मिरगी आती हो तो प्रतिदिन सुबह प्याजका रस तीन औंस पीनेसे मिरगी आना बन्द हो जाता है।

प्याजका रस शहदमें मिलाकर लगानेसे नेत्रोंकी पीड़ा शीघ्र ही मिट जाती है।

फोड़ा पकाने और शीघ्र कोड़नेके लिए एक प्याजका

आधा टुकड़ा अधमुना करके बांधनेसे शीघ्र ही लाभ होता है।

यदि कोढ़ हो गया हो तो प्याजकी पुतटिस बांधनेसे कोढ़का रोग शीघ्र ही दूर हो जाता है।

यदि मस्से हो गये हों तो प्याजका रस मस्सेपर रगड़नेसे मस्से शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

यदि आँखोंमें बिलनी हो गई हो तो शीघ्र ही उस पर प्याजका टुकड़ा बांध देनेसे बिलनी तुरन्त दूर हो जाती है।

यदि कान बहता हो तो प्याजका रस टपका देनेसे कानका बहना शीघ्र ही बन्द हो जाता है।

यदि खुजली हो गई हो तो शराबमें प्याज पकाकर खुजलीमें लगानेसे शीघ्र ही आराम मिलता है।

यदि नींद न आती हो तो तेज गंधवाला एक प्याज गर्दनके पीछेकी तरफ बांध देनेसे शीघ्र ही गहरी नींद आ जाती है।

लहसुनका उपयोग

लहसुनको कुचलकर एक साफ कपड़ेमें छानकर कुनकुना करके कानमें डालनेसे कानका दर्द शीघ्र ही दूर हो जाता है।

लहसुनको छील कूटकर शहद मिलाकर कनपटी पर लेपकर देनेसे आधाशीशीका सिरदर्द दूर हो जाता है।

तीन तोला लहसुनका रस, तीन तोला शहदमें मिलाकर चाटनेसे बिच्छू तथा जहरीले कीड़ोंका जहर दूर हो जाता है।

लहसुन और नमकको एकमें मिलाकर कूट पीसकर काटे हुए स्थानपर लेप कर देनेसे बिच्छूका जहर उतर जाता है।

लहसुन और अमचूरको पानीमें मिलाकर लेप करनेसे बिच्छूका दर्द शीघ्र ही दूर हो जाता है।

पागल कुत्तेके काटनेपर लहसुनको सिरकेमें पीस

कर काटे हुए स्थानमें लेपकर देनेसे शरीरमें विष नहीं फैलने पाता और विष उसी स्थानपर दब जाता है।

लहसुनको पीसकर लेपकर देनेसे नेवलाका विष दूर हो जाता है।

यदि सिरमें जुएं पड़ गये हों तो लहसुनका रस पानीमें मिलाकर धो लेनेसे जुएं शीघ्र ही मर जाते हैं।

उठते हुये फोड़ेमें लहसुनको सिरकामें पीसकर लेपकर देनेसे फोड़ा शीघ्र बैठ जाता है।

यदि बच्चेको मामूली खांसी आती हो तो लहसुन

को मीठे तेलमें गरम करके छान फिर मालिशकर देनेसे सर्दीकी खांसी शीघ्र ही दूर हो जाती है।

सरसों या नारियलके तेलके साथ लहसुन पकाकर लगानेसे चर्मरोग तथा कानमें डालनेसे कानके रोग दूर हो जाते हैं।

लहसुनको सिरकेके साथ सेवन करनेसे गला साफ हो जाता है।

लहसुनके तेलकी मालिश करनेसे लकवा तथा वादी रोगमें लाभ होता है।

— मधुमेह रोग —

(पृष्ठ ५८२ का शेष)

हृदयकी गति कम, तालुशोष, रक्त्करूक्षता हस्तपाद-दाह आदि। चिकित्साके विषयमें भी यही विचार है कि मधुमेह रोग आजके वैज्ञानिक युगमें भी वैसा ही जटिल है, और माना जाता है, जैसाकि प्राचीन कालमें माना जाता था। रक्त व मूत्रमें शर्कराको विलीन करनेके लिये अनेक औषधियोंके आविष्कार हुये। वे लाभप्रद ही हुई, किंतु यह दावा किसी भी औषधि व चिकित्साप्रणालीने सिद्ध नहीं किया है कि असुख दवा व चिकित्सासे आजीवन तकके लिये इस रोगसे छुटकारा मिल गया या मिल जाता है, किंतु फिर भी आधुनिक चिकित्सा पद्धतिकी औषधियोंसे उपराम करनेवालोंके आयुर्वेद चिकित्सा पद्धतिकी औषधियां मधुमेहपर अधिक लाभ करती हैं। बहुत पहलेकी बात है, मैं राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय उदयपुरका स्नातक था, तब मधुमेहके लिये आयुर्वेद पद्धतिसे निर्मित यशद विश्वकी एकमात्र औषध है, बम्बईके अनुसंधान विशेषज्ञोंकी विज्ञप्ति थी। इसके सेवनसे मूत्र उचित मात्रामें होना प्रारंभ हो जाता है। मूत्र शर्करा बंद होजाती है। थोड़ी मात्रामें रह जानेपर भी कुछ दिन और सेवनसे आराम होजाता है। इन्सुलीनकी आवश्यकता नहीं रहती। अधिक आयुके पुरुषोंको लाभ होता है। नवयुवकोंके लिये अधिक उपयुक्त सिद्ध नहीं होती। सेवन अवधि ४-६ सप्ताह तक सेवन आवश्यक है। लेखकने भी प्रयोग किया है। इसके साथ-साथ शिलाजतु, स्वर्णवासक

प्रयोग तथा चूर्णके रूपमें मधुमेहान्तक चूर्ण जिसके द्रव्य विल्वपत्र, निम्बपत्र, हरिद्रा, चन्दन, जामूनकी गुठली, आंवला, करेला, आदि उत्तम लाभ करता है। बहुमूत्रपर विल्वस्वरस, अच्छा लाभ करता है। जामूनकी गुठलीके प्रयोगका निदर्शन भगवान् स्वयं गणपति हैं। “कपित्थ जम्बूफल चारु भक्षणं” इस पौराणिक कथाका भी मधुमेहके निर्मूलनमें काफी सम्बन्ध है। इस दिशापर ध्यान देना चाहिये। लेखक प्रयोगकर रहा है। प्रमेह पिडिकाओंमें आमलकी चूर्णकी भरमके बाहर प्रयोगसे जल्दी लाभ होता है। अब इस महान व्याधिको कुछ मानसिक कारणोंके वर्जनके साथ-साथ आयुर्वेद ही निर्मूल करनेमें सक्षम है। बशर्तेकि हमारी यूनिट वैद्य वृन्द कुछ वैज्ञानिक पहलुओंको काममें लेवें, समझें और वैज्ञानिकतासे कार्य करें। आयुर्वेद जीवित विज्ञान है, जिसका संबंध जीवन और मृत्युसे है। अतः पीयूषपाणी बननेके लिये आयुर्वेद जिज्ञासुओंको चाहिये कि नवीनतम वैज्ञानिक विचारोंसे अपनेको अवगत रखें, और तभी हम आधुनिक संसारमें जीवित रह सकेंगे। जीवन यापनकर सकेंगे। केवल अतीत इतिहासकी दुहाईसे, कब तक काम चल सकता है? अन्तमें एक बार पुनः विद्वान वरिष्ठ पाठकोंसे विनम्र निवेदन है कि इस दिशामें आप अपने विचार लेखकको प्रस्तुत करेंगे तो मैं आपका अपनेको आभारी समझूंगा।

शिरःशूल चिकित्सा (स्वानुभव)

वैद्य सीताराम जोशी भिषगाचार्य लोहागल तीर्थ (शेखावाटी)

एक रोगीने मुझसे कहा कि मेरी सारी खोपड़ी दूखती है। सभी इलाज करा लिए, एस्प्रीन भी खाली, बिजलीका सेक भी करा लिया परन्तु मिटता नहीं।

हर दम माँथा इतना भारी रहता है जैसे बोझा रक्खा हो। और वेदनासे घबके मारता रहता है। यह क्या रोग है। रात दिन चैन नहीं पड़ता, इसका इलाज कर दें और अच्छी तरह निदान बता दें तो बड़ी सह-खानी हो। मैं तो इससे बहुत दुखी हूँ। मैं सब इलाज करा धापा।

रोगी साथमें एक अपने घर प्राईवेट वैद्यजीको भी लाया था कि ये निदान चिकित्सा समझ लेंगे। और मेरी चिकित्सामें सहायक होंगे। मैंने उन वैद्यजी को निदान चिकित्सा समझा दी। दूरका रोगी था, उसने निदान चिकित्सा उसी प्रकार श्रद्धासे की। तब रोगी ठीक हो गया।

वैद्यजीने कहा यह क्या रोग है? मैंने उत्तर दिया यदि कब्ज है, शिरमें दर्द है, तो वातिक, मूर्छा भी आती हो, प्यास, दाह, पित्त, ज्वर, रहता हो तो पैतिक, और भोजनमें अरुचि हो, शिरदर्द हो, माथा भारी, वेदनाके साथ हो तो, श्लैष्मिक शिरोरोग समझो। शीतमें वृद्धि हो तो वात श्लैष्मिक, उष्णसे वृद्धि हो तो वातपैतिक, और सदा ही निरन्तर एक सी वेदना हो तो सान्निपातिक शिरोरोग, समझना चाहिये।

यह लक्षण और उपशयसे निदान तथा काय चिकित्सकोंकी सामान्य चिकित्सा है। सिद्धान्त पक्ष है—और विकार नामा कुशलोत्त जिह्वायात्कदाचन नहि सर्वविकारणां नामतो स्तिध्नुत्रस्थितिः।

अर्थात् दोषोंके अनवरत वृद्धि क्षयसे रोग नानारूपा-न्तर ग्रहण करते रहते हैं। यदि नामन भी कह सकें तो कोई बात नहीं। दोष दूध विकार प्रकृति सामान्य

रोग निर्णय करना चाहिये।

मेरे ध्यानमें यह वातश्लैष्मिक रोग है।

प्रश्न—यह क्यों हुआ?

उत्तर—रोगोंके सन्निकृष्ट विप्रकृष्ट कई निदान होते हैं

रात-दिनके आहार विहार भी कारण पड़ते हैं और ऋतुओंमें दोषोंके संचयादिसे भी रोग होते हैं।

वसन्तमें श्लेष्माका प्रकोप होता है। और हेमन्त शिशिरमें संचय होता है। यदि संचयावस्थामें पञ्च कर्मोंमें निर्दिष्ट विधिसे नस्यके द्वारा श्लेष्मा दोषके निकालनेका विधान है। नस्यकर्म समयपर न किय जावे तो, ऋतु कालज रोग अवश्य होंगे ही। इस सन्देह ही क्या है।

आजकल नस्य लेना वसन विरेचनादिसे दोष शुद्ध करना छोड़ दिया है। अतः वह संचित दोष स्थान संचय प्रकोप करता हुआ शिरमें शिरोरोग पैदा करता है। सन्निकृष्ट आहार उसके सहायक कारण हैं, जो क वृद्धिमें तथा वात वृद्धिमें मूल हैं।

चिकित्सा—शिरका दर्द कफ वातसे है। अतः यह दोष शुद्धिके बिना हो नहीं सकता। संशोध जहाँ अपेक्षित है, वहाँ ऐस्प्रीन जैसी या अन्य संशम दवा कैसे अनुकूल पड़ेगी। अतः नस्यसे शिरोरोग दोषोंकी शुद्धि करो फिर औत्तरभक्तिकसर्पि उ जत्रुग रोगोंमें श्रेष्ठ संशमन भेषज माना गया है अतः रात्रिमें या भोजनोत्तर घृतपान कराओ। शिर रोग मिट जावेगा।

पहले कट्फलके चूर्ण नस्य दो, फिर शिरोरोग विकारोक्त घृत पिलाओ अथवा शुद्ध गोघृत तोला, कालीमिर्च चूर्ण ४ रत्ती, मिश्री १) तोला मिट कर गरम करके पीनेको दो।

शिरोरोग विकारोक्त पथ्यादि काय दो, ऐसा क

से शिरदर्द अवश्य मिट जावेगा। जब अच्छी तरहसे विश्वास दिला दिया गया, तब रोगीने ऐसा ही किया, १ मासमें उसका शिरदर्द चला गया। पथ्य गेहूँका दलिया दूध दिया गया।

शिरोरोग वातिक तीव्र वेदना वाला होता है। पित्तवाला जलता है इसमें श्लेष्माका प्रकोप है लक्षण श्लेष्माके हैं। अतः यह श्लैष्मिक शिरोरोग है। ऐसा मानकर इसकी चिकित्सा करनी चाहिये।

वसन्तमें कफकी शुद्धि न करनेसे वर्षामें वायुकी तथा शरदमें पित्तकी शुद्धि न करनेसे ये स्वाभाविक रोग होते हैं। कफ यानी द्रवरूप है, यदि संचित रहे तो शिरस्तोय। शिरमें पानी भरना, उरस्तोय, फुफ्फुसमें जल भरना, प्ल्यूरसी आदि तथा जलोदर आदि रोग शुद्धि न होनेसे उत्पन्न होते हैं। दाढमें दर्द, कानमें पूय ये रोग भी मुखके गलेके कण्ठ शालूक, जिह्वारोग उक्त अनुक्त दोषोंके रोग, पाप कर्मोंके द्वारा, शुद्धि न होनेसे ही होते हैं।

अतः रोगोंको कफज व्याधिमें अन्तर्भाव करके कफकी चिकित्सासे ठीक किया जा सकता है।

बहुतसे लोग उरस्तोय प्ल्यूरसीमें डाक्टरोंके द्वारा जल निकालते देखकर आश्चर्य चकित हो जाते हैं। यह रोग क्या है और माथेमें जल भरनेसे भी शीर्षास्थि रोग डाक्टरोंसे सुनकर स्तब्ध रह जाते हैं, कि यह रोग तो चरक सुश्रुतमें है ही नहीं डाक्टरोंका आविष्कार है।

परन्तु ऐसा नहीं है। यह श्लेष्माके संचयावस्थामें न निकालनेसे प्रकोप होकर पित्तोष्मासे श्लेष्मा द्रुत होकर पानी होकर उसी स्थानमें संचित हो जाता है।

यह कफका रोग है। इसमें आश्चर्यकी क्या बात है, और क्या चरकादिमें दोष निकालनेकी जरूरत है। यह तो वैद्योंका ही अज्ञान है। निदान नहीं सम्भक्ते हैं। शास्त्रोंके मनन किये बिना ज्ञान नहीं होता। यह रोग प्रायः प्रसूता स्त्रियोंको प्रसवकालमें पौष्टिक तत्त्व न मिलनेसे रह जाता है।

पथ्यादि क्वाथ-त्रिकला (हरड़, बहेड़ा, आंवला) नीमगिलोय, हल्दी, चिरायता, नीमकी छाल, सब समान भाग लेकर २॥ तोले इस कूदे हुए कथ

द्रव्यको आधा सेर पानीमें औटाकर चतुर्थांश शोष रखकर छान लें। २॥ तोले गोघृत डालकर पिलावें। शिरःशूल अवश्य दूर हो जाता है। दाल रोटी साधारण खावें। शिरःस्नान न करें और भोजनके बीचमें जल पीवें। भोजनके अन्तमें जल न पीवें।

४ रत्ती गोदन्ती भस्म हलुवेके प्रासमें मिलाकर खानेसे तथा १५ दिन हलुवा खानेसे शिरदर्द मिट जाता है। फल-फूल शाक भोजन बन्द रखें।

अथवा—बदाम गिरी १) छटांक, पिस्ता ४) तोले चारोली ४) तोले, खसके दाने ५) तोले।

मतीरा, ककड़ी, खरबूजा, कूष्माण्डके बीजोंकी सींगी १० तोले, नारियल गिरी १० तोले, मावा ५ पाव, घी ५॥, मिश्री ५२ सेर।

विधि—मावा, घी, मिश्रीको अलग रखें। शेष सब द्रव्य इमामदस्तेमें कूट लें, खसके दानेके जैसे सब कुट जावें, तब मावेको घीमें डालकर कहाड़ीमें सेकें। बादमें इस मावे घीमें सभी द्रव्य मिलाकर एक एक छटांकके लड्डु बनालें।

रातको सोते समय एक लड्डु खा लें। इससे शिरदर्द शान्त हो जाता है।



श्री गदांतक अंक

स्त्रियों के प्रदर, गर्भाशय विकार और मासिक धर्म के विकारपर उपबोध

वन्ध्यात्व (STARILITY)

लेखक—श्रीकृष्णगोपाल गुप्ता

श्री रामकृष्ण राजपुताना औषधालय जुरहरा, भरतपुर (राजस्थान)

“माँ” कितना प्यारा शब्द है “माँ”। स्नेह भरा हुआ है, प्यार टपकता है, वात्सल्य उमड़ पड़ता है, तत्समियत नजर आती है इस शब्दमें।

हर युवती यह चाहती है वह भी एक चाँदसे तुरमूरत फूलसे कोमल सलौने बच्चे की माँ बने। हर लोकी हर युवतीकी यही चाह होती है कि वह माँ बने। कोई उसे माँ कहकर पुकारे। नहीं तो धिखौं उससे अपने बच्चोंको दूर रखेंगी, कहीं उन्हें कुछ हो न जाये। उसके आँचलसे भी दूर रखेंगी। इसीलिये नहीं बल्कि बच्चेको लेकर वे स्वप्नों का संसार बनाती हैं कि बच्चा होगा, माँ बहेगा, वह सन्तोषियों मनायेगी कि, उसका बच्चा यह काम करेगा तो वह प्रसाद बाँटेंगी, आदि अनेक बातें जो हमारे विषय से बाहर हैं।

माँ बननेकी चाह प्रत्येक युवती ही-नारीकी होती है, पर क्या प्रत्येक स्त्री माँ बन जाती है? बस जाता है प्रत्येक स्त्रीका यह स्वप्नोंका संसार। हो जाती है बसकी यह अभिलाषा पूर्ण। नहीं! कुछ प्रतिशत ऐसी अभागिनियाँ भी होती हैं जो इस स्वप्नके संसारको नहीं बसा सकती हैं। जो इस सुखसे वंचित रह जाती हैं। उनकी शादी भी हो जाती है परन्तु फिर भी वे माँ नहीं बन पाती हैं। इसके अनेक कारण हैं। अनेक रोग हैं। जिस औरतको बच्चा नहीं होता उसे वन्ध्या कहा जाता है।

जिस औरतको गर्भ तो होता है परन्तु समय पूर्व ही गर्भस्त्राव या गर्भपातके रूपमें बाहर आ जाता है। वह भी वन्ध्या ही कहलाती है।

इसका कारण क्या है? आयुर्वेदके प्रकारण आचार्य सुश्रुतने बीस प्रकारके योनिरोग बताये हैं। उनमें वन्ध्यारोग भी एक रोग है। जिसका लक्षण उन्होंने बताया है—

वन्ध्यां नष्टार्तवां ॥

अर्थात् जिसमें आर्तव हो ही नहीं। जिसे मासिक स्त्राव हो ही नहीं। उसे वन्ध्या कहते हैं। सुश्रुत संहितामें बीस प्रकारके योनिरोगोंमेंसे अचरणा, अतिचरणा, षण्डी, फलिनी, अतिविवृता, सूचीवक्त्रा, सन्निपातजा नामसे जिस योनि रोगोंका वर्णन किया है, उन रोगोंसे पीड़ित स्त्री भी कभी सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकती है। उनके लक्षण निम्न प्रकारसे हैं—

“मैथुनेऽचरणा पूर्व, पुरुषादतिरिच्यते।

बहुश्रद्धाति चरणाद्वन्ध्या, बीजं न विन्दते ॥

अतार्क्षप्रतना षण्डी, खर स्पर्शा च मैथुने।

अतिकाय गृहीतास्तद्वन्ध्याः फलिनी भवेत् ॥

विवृताऽति महायोनिः सूचिवक्त्राऽति संवृता।

सर्व लिङ्ग समुत्थाना, सर्वदोष प्रकोपजा” ॥

अचरणा योनिमें मैथुन क्रियामें पुरुषसे पूर्व ही स्त्राव हो जाता है।

अतिचरणा योनिरोगमें बहुत मैथुन करनेसे बीजको ग्रहण नहीं करती। इस योनिरोगमें बहुत बार स्खलन हो जाता है।

अतः इन अचरणा तथा अतिचरणा नामक योनि रोगमें गर्भ नहीं रह सकता है। षण्डी योनि रोगमें न तो आर्तव ही आता है। और न स्तन ही पुष्ट होते हैं। फलितः उससे पीड़ित नारी वन्ध्या हो जाती है। क्योंकि भगवान् पुनर्वसुके कथनानुसार इस व्याधिमें बीज (माता पिताके शोणित एवं शुक्र) के दोषसे गर्भ निर्माण कालमें ही वायुद्वारा गर्भाशयका उपघात हो जाता है। और यह नारी नरसे द्वेष रखती है। इसके स्तन अपुष्ट होते हैं। अर्थात् सर्व प्रकारसे यह नारी अपूर्ण नारी है। चरकमें भी कहा गया है। सच तो यह है कि नारीके स्तन तथा गर्भाशय ही उसके

नारीस्वके सूचक हैं। ये जितने पुष्ट होंगे नारी भी उतनी ही अधिक पुष्ट होगी।

अति लम्बे या पुष्ट मेदा वाले पुरुषके साथ छोटी उम्रकी स्त्री मैथुन करनेमें कलिनी योनि होती है। हल्लनाचार्य इसे अप्रजा अर्थात् इसमें गर्भाधान नहीं होता, ऐसा कहते हैं।

अतिविवृता योनि महायोनि इस व्याधिमें योनि व गर्भाशयका मुख सर्वथा खुला ही रहता है। पुनर्वसुके कथनानुसार गर्भाशयपर मांस अधिक संचित हो जाता है। सर्वदा वेदना होती है रुक्ष एवं मायु रजः स्राव होता है। तथा पोर-पोर एवं वंक्षणमें शूल होता है। सूचकका इस रोगमें योनि का छिद्र बहुत सूक्ष्म होकर अर्थात् नहीं के बराबर होता है। अतः उस स्त्रीके शुक्र जानेका प्रश्न ही नहीं होता।

सन्निपातजमें सब दोषोंके सर्व रोग मिलते हैं। इस प्रकार हमने देखा कि उपरोक्त रोगसे पीड़ित स्त्री माँ बननेके स्वप्नसे वंचित रह जाती है।

इन बीस प्रकारके योनिरोग होनेके निम्न लिखित चार कारण माने जाते हैं—

(१) नारीका मिथ्या आचार अर्थात् प्रकृति विरुद्ध आहार एवं विहार,

(२) आर्तव अर्थात् रजकी विकृति।

(३) बीजदोष, माता एवं पिताके शुक्र और शोणितकी विकृति। जैसे कुष्ठ, अर्श, उपदंश, व अन्य व्याधियोंके द्वारा हो जाता है।

(४) दैवयोगः—उपरोक्त कारणोंके न होते हुए भी दैवके कारण भी योनि व्याप्त हो जाती है।

वैसे सामान्य तौरपर वन्ध्याकी तीन किस्में हो सकती हैं। कुछ ऐसी स्त्रियाँ जो न तो अविवास अर्थात् पण्डी और सूचिवक्त्राकी दृष्टिसे वृद्धियुक्त हों और जो शीतल भी हों। अविवास अर्थात् पण्डी और सूचिवक्त्राकी दृष्टिसे वृद्धियुक्त हों, उनमें भी गर्भ धारण नहीं हो सकता है। इन्हींको आमतौरसे बाँझ कहा जा सकता है। अविवासयुक्त स्त्रियाँ भी इसी श्रेणीमें आती हैं।

१. ऐसी स्त्रियाँ जो अविवासके कारण गर्भ धारण में असमर्थ हों।

२. ऐसी स्त्रियाँ जो मैथुनिक दृष्टिसे शिथिल या शीतल हैं। साथ ही गर्भ धारणमें असमर्थ हैं।

३. ऐसी स्त्रियाँ जो शीतल नहीं हैं परन्तु गर्भ धारणमें असमर्थ हैं।

कई क्षेत्रोंमें बाँझपन प्रकृति की एक सजाके रूपमें भी उत्पन्न होगया। पहिले स्त्रीने गर्भपात कराये, और फिर चाहनेपर भी सन्तान नहीं हुई।

वैसे माँटे तौरपर बाँझपनको दो भागोंमें बाँटा जा सकता है।

१. एक वह जिसको गर्भ धारण होता ही न हो।

२. एक वह जिसको गर्भ धारण तो होता है परन्तु समयसे पूर्व ही गर्भपात या गर्भस्रावके द्वारा बाहर आ जाता हो।

प्रथम श्रेणीको तो मैं काफी विस्तृत कर चुका हूँ। यहाँ मैं दूसरी श्रेणीको ले लेता हूँ।

बाँझपन और गर्भपात (यहाँपर मेरा तात्पर्य कृत्रिम गर्भपातसे नहीं है) दोनोंका बड़ा निकट संबंध है। यदि यह कहा जाय कि दोनों एक ही रोगके दो रूप हैं तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। गर्भस्राव चौथे माह तक होता है। इसके बाद गर्भाधानके ५ माह बाद जो गर्भ बाहर आजाता है वह गर्भपात कहलाता है। किन्हीं कारणोंसे मृत सन्तान भी होती है। यह भी वन्ध्या ही कहलाती है।

कुछ स्त्रियोंमें मैथुनिक शिथिलता पाई जाती है। ऐसी स्त्रियोंके साथ कोई भी पुरुष समागम कर सकता है। अवश्य स्त्रीको इससे कुछ आनन्द प्राप्त न होगा। पर ऐसा होने हुए भी वह स्त्री एक सन्तानकी जननी हो सकती है। अतः जैसाकि कुछ लोगोंका ख्याल है कि मैथुनिक शिथिलता बाँझपन है यह गलत है। ऐसे कई केम मेरे सामने हैं कि मैथुनिक शिथिलता होते हुए भी वह कई बच्चोंकी माँ है।

आधुनिक मतः—आधुनिक मत भी वन्ध्यापन रोगको दो प्रकारका मानता है जो ऊपर बताया जा चुके हैं। इसके अनुसार—

1. Absolute—इसमें गर्भ रहता ही नहीं है।

2. Relative—इसमें गर्भ तो रहता है परन्तु

पूर्ण गर्भ नहीं होता है। गर्भपात या गर्भस्राव

हो जाता है।

Causes of Absolute (कारण):—

इसमें गर्भाशयमें शुक्राणु और स्त्रीके डिम्बकीटका संयोग ही नहीं होता इसका कारण निम्न है:—

१. **शुक्राणु**—की अनुपस्थिति अथवा गर्भाशय तक पहुँचनेमें असमर्थ रहना, अथवा शुक्राणुओंका रास्तेमें ही नष्ट हो जाना। गर्भाशय प्रीवाका छिद्र छोटा होना। गर्भाशयका पश्चात् भ्रूश या बीजग्रन्थिका विकास न होना, वहाँपर डिम्बोंकी अनुपस्थिति होना। संयोगके समय पीड़ा होना। ये कारण होते हैं।

(२) **विकृतिके कारण**:—मौर्फीन या अल्कोहल-की आदत होना, सिफिलिसका होना, या विषयकी कम जानकारी होना। प्रोटीनकी कमीसे, ठीक प्रकारसे भोजन न मिलनेसे। पोषणक ग्रन्थि या प्रैवे-यक ग्रन्थिका विकास न होना। आदि बातोंका होना।

क्योंकि ये ग्रन्थियाँ गर्भाशय और डिम्ब ग्रन्थिके विकासमें एक क्रियाशील कार्य करती हैं।

इस प्रकार उपरोक्त कारणोंसे स्त्री बन्ध्या हो सकती है।

एक प्रमुख बात:—एक प्रमुख लक्षण यह देखनेमें आता है कि कुछ स्त्रियोंको तो मासिकस्त्राव होता ही नहीं है कि वे बन्ध्या होती हैं। लेकिन कुछको मासिक स्त्राव होता है, वे बन्ध्या होती हैं। सोचना यह है कि इस रोगसे मासिक स्त्रावका सम्बन्ध क्या है? अक्सर देखा जाता है कि मासिक स्त्राव होनेपर गर्भधारण नहीं होता। अर्थात् गर्भधारण होते ही मासिकस्त्राव स्वयं बन्द हो जाता है। और तब तक बन्द रहता है जब तक कि बच्चा कुछ बड़ा न हो जाय। मासिक-धर्म प्रारम्भ होनेपर स्त्री पुनः गर्भ धारण कर सकती है।

आधुनिक विज्ञान मानता है कि मासिक स्त्रावके समय डिम्ब ग्रन्थिसे एक डिम्ब छिटककर गर्भाशयमें जाता है। और वहींपर मासिक स्त्रावके बन्द होनेपर पुरुषके संसर्गसे शुक्रकीटका संयोग होता है। तो गर्भ धारण हो जाता है। अन्यथा कुछ दिनोंमें वह डिम्ब कीट समाप्त हो जाता है।

परन्तु कुछ स्त्रियोंमें ऐसा भी होता है कि मासिक स्त्राव होनेपर भी गर्भ धारण होता है।

है 'मेरे सामने एक ऐसी लड़की आई जो गर्भाशयमें ही मासिक धर्मसे हो लेती थी। तथा वह दो बच्चों की माँ है। इस प्रकार इस सम्बन्धमें कुछ अपवाद भी हैं। मासिकधर्मके सम्बन्धमें डा० एक्सनरका यह कथन कि, जब गर्भाशय यह देख लेता है कि उर्वीकृत स्त्री अण्डको स्वागत करनेकी उसकी सारी तैयारी व्यर्थ गई है तो फिर वह मासिकधर्मकी प्रक्रियाके द्वारा सारे अलाय बलायको धोकर अलग कर देता है। ध्यान देने योग्य है।

इस प्रकार हमने देखा कि मासिकधर्मसे गर्भधारणका कुछ सम्बन्ध अवश्य है। परन्तु कभी-कभी यह देखा जाता है कि पहिली सन्तान होनेके बाद मासिक-धर्म खुला भी नहीं, बल्कि दूसरी बार गर्भधारण भी हो जाता है।

इसलिये इसके कुछ अपवाद भी हैं।

बाँझपनकी चिकित्सा:—

बाँझपनका ईलाज कई क्षेत्रोंमें हो सकता है। प्राचीन कालसे ही इसे दूर करनेके लिये तरह तरहकी दवाईयाँ, यन्त्र-मन्त्र, जादू-टोना प्रचलित हैं। पर इस सम्बन्धमें वैज्ञानिक खोज अनुवोक्षण यन्त्रकी खोजके बाद ही प्रारम्भ हुई है। असलमें जो स्त्रियाँ बाँझ समझी जाती हैं, उनमेंसे अधिकांशतः बाँझ नहीं होती हैं। इसलिये बाँझपनसे पीड़ित प्रत्येक स्त्रीको अपनी जाँच अच्छी तरहसे करा लेनी चाहिये।

डा० जेक्सनका बाँझपन निवारक केन्द्रसे बहुत दिनोंतक सम्बन्ध रहा। उसमें उन्होंने अनुभव किया कि बाँझपनके सम्बन्धमें अन्तिम निर्णय और सही उपचार बतानेके लिये पति पत्नी दोनोंकी अच्छी तरह से जाँच की जाये। बताया गया है कि इस जाँचको पूर्ण करनेके लिये यौन संसर्गके बाद स्त्रीके प्रजननांगों का निरीक्षण किया जाय। डा० जेक्सनके अनुसार मोटे तौरपर निम्न छः बातोंपर इस जाँचमें ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

(१) क्या स्त्रीका गर्भाशय पूर्ण रूपसे स्वस्थ, सुगठित तथा अपने सही स्थानपर है? तथा उसमेंसे काकी मात्रामें चिकना पदार्थ योनिमार्गकी ओर पड़ता है।

(२) क्या स्त्रीकी योनि की रजोवाहिका नलियाँ ठीक हैं ? और वे अपना कार्य सही ढंगसे करती हैं ?

(३) क्या स्त्रीका रजोदर्शन नियमित है ? और नियमित अर्सेमें वह रजडिम्ब उत्पन्न करती है ।

(४) क्या गर्भाशयके मुखके पास वह चिकना पदार्थ यथेष्ट उत्पन्न होता है जिसमें पुरुषके शुक्राणु आवद्ध होकर जीवित रह सकते हैं ? और यात्राकर सकते हैं ।

(५) क्या पुरुषके वीर्यमें पर्याप्त मात्रामें सजीव और स्वस्थ शुक्राणु होते हैं ।

(६) क्या पुरुष शुक्राणु पर्याप्त मात्रामें और सही ढंगसे गर्भाशयके मुखके पास जमा होते हैं ।

इस प्रकार उपरोक्त कारणोंका यथा विधि परीक्षाकरके देखना चाहिये कि, पति क्या खाता पीता है ? अगर उसमें कमी है तो वह कारण दूर करना चाहिये ।

पछे जो बाँझपनके कारण बताए हैं उनको दूर करनेका यथा-विधि उपचार करना चाहिये । यदि निम्नोक्त ग्रन्थियोंके कारण बाँझपन हो तो उसे Secretion या Extract देना चाहिये । या गर्भाशयको उत्तेजित करना चाहिये ।

कई क्षेत्रोंमें ऐसा देखा गया है कि अपूर्ण मैथुन (जिसमें स्त्रीकी पूर्ण वृत्ति न हो) के कारण भी स्त्री बाँझ हो जाती है । इसलिये चिकित्सकको सभी बातें सोचकर चिकित्सा करनी चाहिये ।

वैसे आयुर्वेद व एलोपैथी दोनोंमें इसकी चिकित्साके लिये बहुत योग हैं । कन वार मुख्य योग निम्न प्रकारसे हैं ।

(१) वारियार, खांड, कंधी, महुआ, बड़का अक्षुर, नागकेसर, इन सबको शहद, दूध और घीके साथ पीते रहनेसे बन्धा रोग दूर हो जाता है ।

(२) जो स्त्री पारिस पीपलके डोडेको जीरा व सफेद सरफोंका साथ पीती है वह निश्चय ही गर्भ धारण करती है ।

महत्त्वपूर्ण औषध बताया है । इसका योग इस प्रकार है । मंजीठ, मुलेठी, कूठ, हरड़, बहेड़ा, आँवला, खांड, वरियारा, मेदा, महामेदा, चौर काकोली, काकोली, असगन्धकी जड़, अजमोदा, हरदी, दास हल्दी, फूल प्रियंगु, कुटकी, नीला कमल, कोरु, मुनक्का, सफेद व लाल चन्दन, ये प्रत्येक पदार्थ एक एक तोला लेकर कल्क बनालें । इस घृतमें चौदह तोला घृत, घृतसे दुगुना दूध और दुगुना शतवारस रस डाल दें । इसे पाक करें । घृत निकाल लें । वह घृत अवश्य सन्तान उत्पन्न करता है । ऐसा अश्विनी-कुमारोंने बताया है । आयुर्वेदमें इसकी अन्य भी चिकित्सा है ।

आधुनिक मतसे

अगर बाँझपनका कारण किसी ग्रन्थिकी खराबी है तो "सेक्स विगर" नामक इन्जेक्सन एक सप्ताह की मात्रा में दूसरे या तीसरे दिन देना चाहिये । यह दो तरहका आता है । स्त्रियोंके लिये अलग व पुरुषोंके लिये अलग । यह बाँझपनको ठीक करता है ।

(२) अगर मासिकस्त्राव रुक गया है या बाँझपनका कारण मासिकधर्मकी खराबी है तो निम्नमेंसे कोई एक इन्जेक्सन देना चाहिये ।

(A) प्रोजेनोन एक या दो इन्जेक्सन प्रति सप्ताह मासान्तर ।

(B) प्रोजेस्टोन रोजाना या तीसरे दिन ।

(C) प्रोलेन १०० से ३०० यूनिट तक आवश्यकता अनुसार रोजाना ।

(३) अगर बाँझपनका कारण गर्भपात या गर्भ स्त्राव हो तो निम्न इन्जेक्सनमें से कोई एक देना चाहिये ।

(A) ल्यूटोस्टैब (Luteostab) रोजाना ।

(B) ल्यूट-एस्ट्रोन (Lut-Estron) तीसरे दिन ।

(C) ल्यूटो-ओवोसाईक्लोन सप्ताहमें एक बार इन्जेक्शन । सात मासतक ।

(D) ल्यूटो साईक्लोन तीसरे दिन या रोजाना ।

इस प्रकार इन्जेक्सन चिकित्सा देवकर (का)

(४) अगर स्त्री मैथुनिक दृष्टिसे शिथिल है, तो उसे शान्तिपूर्वक कामोत्तेजक करें और उसकी योनि-मँलोबानका सत लगा दें। इससे स्त्री शीघ्र कामोत्तेजक हो जाती है।

इसके साथ साथ निम्न योगोंमेंसे कोई एक अवश्य करते रहें।

(१) ऐनेट्रिस कोर्डियल १ ग्राम
ऐक्वा १ औंस
(दिनमें तीन बार दें)

(२) हर्मोटोन 'टी' Hormoton 'T'
(एक एक टिकिया दिनमें तीन बार दें)

(३) स्ट्रिकनीन सल्फ ३ १/२ ग्रोन
जिन्क फोस्फाइड १ ग्रोन
ऐस्स० डमियपाना २ ग्रोन
ऐस्स० कैनेबिस इन्डिका १/२ ग्रोन
योहिम्बीन हाइड्रो १/२ ग्रोन
फैरम फोस्फेट २ ग्रोन
(ऐसी एक गोली दिनमें दो तीन बार)

(४) फौस्फोरस १ १/२ ग्रोन
ऐकम नक्सवमिका १ ग्रोन
ऐकस डमियाना २ ग्रोन
ऐकस कोका १ ग्रोन
फैरम रिडेकटम २ ग्रोन
(ऐसी एक दो गोली ३ बार दें)

(५) स्ट्रिकनीन सल्फ ३ ग्रोन
जिन्क फोस्फाइड २ ग्रोन
गोल्ड क्लोराइड १ ग्रोन
ऐसिड आर्सेनिक १/२ ग्रोन
कैलिसियम ग्लोस्टो फोस्फेट १ ग्राम
(इसके सबसे २० केपसूल बनालें
और दिनमें ३ बार दें)

(६) टि० फेरीपक्लोराइड १५ मि०
ऐसिड फोस्फेरिक ड्रिल १५ मि०
लिकर स्ट्रिकनीन १५ मि०
ऐकस डमियपाना १ ग्राम

ऐक्वा कुल १ औंस

(ऐसी एक मात्रा दिनमें दो तीन बार दें)

इस प्रकार उपरोक्त किसी योगसे तथा इञ्जेक्शन चिकित्सा करते रहना चाहिये।

कई घर बाँझपनके कारण बर्बाद हो गये हैं। बात यह है कि मातृत्वकी भूल एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है।

इसके अतिरिक्त हमारे वर्तमान समाजमें सम्पत्ति आदि बहुतसी बातोंका सम्बन्ध, कई अधिकारोंका सम्बन्ध, सन्तानसे जुड़ गया है। मनुष्य अपनी सम्पत्ति सन्तानके लिये छोड़ता है। यदि स्त्री बिधवा हो ग और उसके सन्तान नहीं है तो वह उसके वे सा अधिकार समाप्त हो जाते हैं। इसलिये बाँझपन दुखी होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है।

नामर्दा और बाँझपनके कारण सैकड़ों घर बर्बाद हो गये हैं। इन त्रुटियोंके कारण हर साल लाख रुपयेकी दवायें, गड़वा और न मालूम ताबीज आदिक कया चीजें बाजारमें बिक रही हैं। सबसे आश्चर्यकी बात तो यह है कि अविास त्रुटियुक्त तथा मैथुन शक्तिहीन पुरुषोंकी भी शादियाँ होती हैं। और ज इनकी सन्तान नहीं होती तो नीम हकीमोंके पास जाते हैं और वे सोचते हैं कि मुर्गी फँसी।

योहिम्बीन वृत्तसे निकली हुई योहिम्बीन ही ऐसी दवा है जो पुरुषकी मैथुन शक्ति को बढा सकती है और स्त्रीकी शिथिलताको घटा सकती है। यह दवा डाक्टरके पास ही मिल सकती है।

अतः वैद्य समाजको इस व्याधिका ठीक प्रकार निरीक्षण करके महिला समाजके दुखको घटाना चाहिये।

इस रोगके कारण कई पुरुष तो प्रौढ़ावस्थामें नहीं बल्कि वृद्धावस्थामें भी नई शारीकर युवतियोंके जीवन बरबाद करते हैं। कई स्त्रियाँ आरमघात करती हैं। कहना न होगा पुरुषकी कमजोरी और बननेकी चाह युवतियोंको व्यभिचारकी तरफ खेंच ले जाती है।

अतः इस दारुण व्याधिसे महिला समाजकी रक्षा करना परम कर्तव्य है।

पक्षाघातादिपर प्रयोग

वैद्य सीताराम जोशी भिषगाचार्य लोहार्गल तीर्थ शेखावाटी

वृन्ताकका हलुवा

५= वैगुनके फलको धोकर छोटे-छोटे टुकड़े बनाकर हलुवा बनालें। थोड़ा पानी और बराबरका घा डालकर पकावें। फिर घीमें सेका हुआ जीरा ४ रत्ती, शर्करा ५= छटांक डालकर प्रातः सायं ठंडा करके खावें। भांसाहारी कबूतरका मांसरस लेवें तो ठीक है। इसके एक सप्ताह सेवनसे शरीरका दर्द, सन्धिवात, कब्जीका रोग मिट जाता है। पच्य-दूध-रोटी, गेहूँकी खावें। गरम पानीसे स्नान करें व गरम पानी पीवें। यह ३५ वर्षसे ऊपरकी आयु-वालेको खाना चाहिये। लम्बे प्रयोगसे पुगना लकवा-तक इससे मिट जाता है।

मूली—मूलीके रसमें गेहूँको एक मन रसमें २० बांस सेर साबुन गेहूँको भिगो दो और छाया शुष्क कर दो। उसके आटे की रोटी सभी प्रकारकी पेटकी बीमारीमें फायदा करेगी। रोटी घीसे खूब तर करके खावें। साथमें मूलीका शाक या लहसुनका शाक खावें तो भयंकर जलोदर यकृतप्लीहा रोग भी शान्त हो जाता है।

गुड़—सोठ २॥ तोला, गुड़ ५ तोला प्रातःसायं खानेसे अग्निमान्द्य मिटकर ताकत आजाती है। वर्षा और सर्दीके दिनोंमें यह प्रयोग करें।

आँवला—सूखा आँवलाका चूर्ण एक छटाँकको (५ तोले) गरम पानीसे फाँकता जावे तो पेटके सब दर्द मिट जाते हैं। पन्द्रह दिनके प्रयोगसे लाभ होता है। मात्रा अधिक है इसका विचार नकर अनुभव करें।

गुड़—पुगने लकवे व श्वासके रोगी प्रतिदिन ५ पाव भर गुड़ खावें। अन्न न खावें। प्यास लगनेपर गरम पानी पीवें तो १५ दिनमें लाभ होता है। गरमी, मात्रा अधिकका, कोई संयश न करें।

अर्क निम्ब घीका महरम

मिलाकर पत्थरपर पीसकर बारीक महरम जैसा बना लें। घावमें ५ दिनके लगानेसे ही बड़ेसे बड़ा घाव भर जाता है। पीड़ा शान्त होजाती है। क्रिमि नहीं पड़ते। व्रण दुर्गन्धित नहीं होता।

व्रणकी शुद्धिमें पानी न लगाकर तैल पिचुसे साफ कर दें। पानोके सम्पर्कसे व्रण दुष्ट हो जाता है, चाहे वह गरम व भयंकरका पानी ही क्यों न हो। पानी लगाना त्याज्य है।

तैल—कमजोरी मिटानेके लिए वृद्ध पुरुषको ५ पाव भर तिल तैल पीकर थोड़ा गुड़ खाना चाहिये श्वास रोगमें भी फायदा करता है।

प्रसूता स्त्रियोंको प्रसवमें घी नहीं खिलाया जाता और वेदना प्रसूति ज्वर होनेसे वैद्य भी पौष्टिक तत्व वन्दकर देते हैं। कमरमें दर्द, शिरमें दर्द, रक्तस्राव होता रहता है। कमजोरी, रक्तक्षय हो जाता है—

उनको-४ महीने निम्नलिखित प्रयोग करना चाहिये। उससे उनकी कमजोरी और दर्द दोनों मिटते हैं। सुबह साम एक-एक लड्डु भोजनमें लेवें। रातको सोते समय ५ दूध पावें। गरम पानीसे स्नान, सादा ताजा पानी पावें। अन्य आहार कुछ न लेवें।

लड्डु (भाहार-द्रव्य) बनानेकी विधि

गेहूँका आटा ५२ दो सेर, घी ५१॥ सेर, मावा ५॥ सेर, चीनी ५३ सेर।

आटे की घीम भूनकर मावा और चीनी मिलावें। ठंडा होनेपर पाव भरका एक लड्डु बना लें। प्रातः सायं यही खावें और कुछ नहीं। नमकीन का इच्छा हो तो बेशनकी पकोड़ा एक छटाँक या पापड़ मूँगका ले सकती है। प्रयोग परीक्षित है।

हिष्टिरियाकी रोगिणीको—लहसुन २॥ तोले, गरम दूध ५१ सेर, शर्करा दो छटाँक डालकर रक्खे। लहसुनके टुकड़े बनाकर एक सेर दूध पीना चाहिये। अथवा लहसुनके प्रयोगसे भयंकर बरि

घुटनेके दर्दकी वैज्ञानिक चिकित्सा

ले०—वैद्य-मोहनलाल सहल, नवलगढ़

हमारे भारतमें वृद्धावस्थामें ४५ वर्षकी आयुके पश्चात् कतिपय व्यक्तियोंके घुटनोंमें दर्द होजाता है और धीरे-धीरे यह रोग इतना उग्ररूप धारण कर लेता है कि घुटनेमें सूजन आजाती है, चटके चलने लग जाते हैं, पैदल चलना फिरना दूभर होजाता है और रातको नींद हराम होजाती है। चिकित्सा विशेषज्ञोंका मत है कि गोड़ेमें पानी जमा होजानेसे इस रोगकी उत्पत्ति होती है। घुटनेका Operation हानिकर समझा जाता है। औषधि प्रयोगसे यह ठीक नहीं होता है। औषधि खिलाना भी इस रोगमें हानिप्रद ही देखा गया है। ये सब उपद्रव वृद्धावस्थाके कारण होते हैं अतः वृद्धावस्थाके विषयमें कुछ विचार विमर्श अनुपयुक्त नहीं होगा।

संक्षेपमें शारीरिक विकासके अभावका नाम वृद्धावस्था है अथवा यों कहिये कि ५० वर्षके आस-पासकी अवस्थामें हाथ, पैर, आँख, कान आदि इन्द्रियोंकी शिथिलताको बुढ़ाग कहते हैं। बुढ़ापेमें विशेषतः घुटनोंमें दर्द, हाथ, पैर, कमर आदिमें दर्द अथवा श्रवण शक्ति, नेत्र ज्योति व स्मरणशक्ति आदिका अभाव तथा माथेमें चक्कर आना, बालोंका पक जाना, दाँतोंमें दर्र होकर दाँतोंका गिर जाना, आदि उपद्रव होते हैं।

श्रीमद् भगवद्गीतामें भगवान श्री कृष्ण कह गये हैं कि 'नामतो विद्यते भावो, नाभावो विद्यते सतः' अर्थात् अमन् वस्तुका अस्तित्व और सत् वस्तुका अभाव कदापि संभव नहीं। हमारी युवावस्थामें हमारी सभी इन्द्रियाँ बलवती थीं, यह तो निर्विवाद सत्य है ही तो फिर उन इन्द्रियोंका वह बल कहाँ अदृश्य व नष्ट हो गया, यही एक विचारणीय प्रश्न है। भगवान श्री कृष्णके वचनानुसार उस बलका, जो पहिले हमारी इन्द्रियोंको प्राप्त था, अभाव तुम्हारे

हम अभावका प्रत्यक्ष अनुभवकर रहे हैं तो फिर आखिर यह क्या रहस्य है। तर्ककी कसौटीपर चढ़नेसे हमारी समझमें आजाना है कि उस बलका अभाव नहीं हुआ है। हुआ क्या है कि प्रकृतिने समयका आवरण चढ़ा दिया है जिससे हमें बुढ़ापेका अनुभव करना पड़ रहा है।

हमने देखा है कि नेत्र विशेषज्ञ डाक्टर आँखका Operation करता है तो वह आँखके प्रमुख स्थानसे, जहाँ नेत्र ज्योति केन्द्रित है, केवल उस आवरण मात्र को पृथक् करता है और हमारी अदृश्य नेत्र ज्योति हमें पुनः प्राप्त हो जाती है। इसी प्रकार हमारी इन्द्रियों आदि की शक्तियोंपर प्राकृतिक आवरण चढ़ जानेसे हम वृद्धावस्थाका अनुभव करने लग जाते हैं।

हमारे कतिपय बन्धुओंका मत है कि हमारे आयुर्वेदमें ऐसी कोई चिकित्सा-पद्धति नहीं जो प्रकृति-द्वारा चढ़ाये गये सामयिक आवरणको हटा सके। यह बुढ़ाग तो निरन्तर प्रयत्नशील भगवान बुद्धसे भी नहीं रोका जा सका तो आजका संतप्त मानव आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धतिद्वारा बुढ़ापेको रोक सके ऐसा संभव नहीं। उनका कहना है कि आधुनिक मानवके पास ऐसी कोई पद्धति नहीं, कोई उपचार नहीं, किन्तु आजका युग तो वैज्ञानिक युग है, इस युगमें जो न हो जाय सो थोड़ा।

४१ वर्षकी आयुके पश्चात् मानव शरीरमें ह्रास होने लगता है, यह प्राकृतिक नियम है। विकास ऊर्ध्व गति तथा ह्रास अधोगतिकी ओर संकेत करते हैं। गिरते हुये शारीरिक तत्त्वोंको यदि हम गिरनेसे रोक सकें तो बुढ़ापेके उपद्रव रुक जाते हैं। इसी निष्कर्षपर हमें करना क्या चाहिये कि प्रातः ठीक शरीर नितान्त शान्त व

शिथिल अवस्थामें हो, प्रतिदिन शयन स्थानपर बैठकर एहीसे चोटी तक अर्थात् नीचेसे ऊपरकी ओर पूरे शरीरपर अपने दोनों हाथ धीरे-धीरे कम से कम ५ बार नित्य फेरते रहें। कुछ ही दिनोंमें हम देखेंगे कि हममें स्फूर्ति आने लगी है, आलस्य भगने लग गया है, काम करनेमें रुचि बढ़ने लगी है, खूनका दौरा समुचित ढंगसे चलने लगा है और हमारे घुटनेके दर्दमें कमी अनुभव होने लगी है। वास्तवमें यदि देखा जाय तो हमारे द्वारा की जानेवाली यह प्रक्रिया हल्के शीर्षासनका काम करती है। स्वर्गीय हमारे प्रधानमंत्री श्री नेहरूजी नित्य शीर्षासन किया करते थे और इसी कारण ७० में ऊपरकी आयुमें भी क्रिकेट खेला करते थे और जीवन पर्यन्त उनके घुटनोंमें कभी दर्द नहीं सुना गया। यह सब शीर्षासनका ही कारण था। यदि हम शीर्षासन करनेमें असमर्थ हों तो हमारा यह लघु शीर्षासन करना हमें नहीं भूलना चाहिये। यदि हम ऐसा करते रहेंगे तो हमारे घुटनोंमें कभी दर्द नहीं होगा और यदि पहिलेसे है तो वह जाता रहेगा। हमें अपने शीर्षासनकी विधिपर विशेष ध्यान रखना चाहिये। वह नीचेसे शुरु होकर ऊपर तक की जाती है। यदि हम विपरीत प्रक्रिया करने लगेंगे तो प्रकृतिको अपना कार्य करनेमें सहारा मिल जानेसे दर्द कम होनेके स्थानपर बढ़ने लग जायगा। इस छोटेमे लेखका लेखक इसी प्रक्रिया द्वारा घुटनेके दर्दको सर्वथा निर्मूल करनेमें समर्थ हुआ है और अब भी यह प्रक्रिया करीब २० वर्षसे चालू है।

जन साधारणके द्वितीय घुटनेके दर्द नाशके लिये पूरी प्रक्रिया पुनः निवेदन की जा रही है। जो भाई बहिन घुटनोंके दर्दसे पीड़ित हों उन्हें यह प्रक्रिया प्रतिदिन करनी चाहिये। जिसे भूल जायें तो फिर दूसरे ही दिन ठीक समयपर करना चाहिये। इसमें न तो किसी दवाका सेवन करना पड़ता है न कपड़े खराब होनेका भय है और न ही किसी पथ्य परहेजका बन्धन है। एक नियमका अवश्य पालन करना चाहिये कि रातके भोजनकी मात्रा २५% कम कर देनी चाहिये। इससे यह सम्भत्ता चाहिये कि भोजन कम

खानेसे हममें निर्वलता आ जायगी। नहीं, प्रत्युत कुछ ही दिनोंमें हम देखेंगे निर्वलताके बजाय हममें शक्तिका संचार हो रहा है, काम काज करनेमें आलस्य नहीं आ रहा है। अधिक क्या, ऐसा निरन्तर करते रहनेसे हमें रोग कम सतायेंगे। मेरा तो यहाँ तक अनुमान है कि हम कभी बीमार होंगे ही नहीं क्योंकि किसी भी बीमारीका सीधा संबंध अजीर्णसे है। अजीर्ण नहीं तो बीमारी नहीं। ताकतका सीधा संबंध पाचनसे है, भोजनकी अधिक मात्रासे नहीं।

हाँ तो अब दर्द वाले घुटनेपर हाथ फेरनेकी प्रक्रिया इस प्रकार है:— घुटनेमें दर्द वाले स्थानसे चार अंगुल नीचेसे चार अंगुल ऊपर तक हम केन्द्र नियतकर लेवें। गोडेके केन्द्रित भागपर हल्के हाथोंसे धीरे-धीरे नीचेसे ऊपरकी ओर ऊपर नीचे चारों ओर करीब ५ मिनट तक प्रतिदिन ठीक प्रातः शयन त्यागके समय शयन स्थानपर बैठकर हाथ फेरते रहें। इस क्रियाका निश्चित समय प्रातः ठीक शयन त्यागका समय है, राति नीचेसे ऊपरकी ओर है और यात्राजीवन यह क्रिया करनी पड़ती है, इस क्रियाकी ये ३ खास शर्तें हैं।

यदि घुटनेके दर्द नाशके लिये हम यह क्रिया करना आरंभ कर देंगे तो कोई कारण नहीं कि हमें भविष्यमें कभी घुटनेका दर्द सता सके। प्रथम वर्षमें ५ चार आक्रमण समय-समयपर हो सकते हैं जो ३ दिनसे अधिक स्थायी नहीं होंगे। मानव शरीरकी प्रकृति भिन्नताके कारण किसीको १ मास बाद तो किसीको ३ चार मास बाद फायदेका पता लगता रहेगा किन्तु यह डंकेकी चोट कहा जा सकता है कि समय पाकर हमारे घुटनेका दर्द अवश्य निर्मूल होगा। इसे ध्रुव सत्य समझें।

दर्द ठीक हो जानेपर, जिन भाई बहनोंका घुटनेका दर्द इस प्रक्रियासे ठीक हुआ है, वे लोग मुझे समयपर सूचित करते रहेंगे कि उनके दर्दने कितने दिनोंसे फायदा होने लगा और कुल कितने दिनोंसे हो गया तो मैं उन महानुभावोंका बड़ा आभार होऊँगा।

ग्रीष्म ऋतु और सत्तुका उपयोग

लेखक—श्री द्वारका मिश्र वैद्य ओढ़ो (गया)

कृषिप्रधान भारतमें कृषक वर्ग अन्न स्वयं खानेके पहले उस अन्नके बल-वीर्य विपाककी जाँच कर पाता है। इसलिये ऐसे उपजका हर्षोल्लासमें विभिन्न ऋतुमें उपज अन्न भक्षणके लिये एक खास २ पर्व निश्चित हैं। यथा—मकर संक्रान्ति (निल संक्रान्ति) । इस रोज लोग तिल शक से बने मिष्ठान और चूड़ा (चपु-टका) खाते हैं और इसी गोजमे चूड़ा दारु-ऋतु यावत् लोग खाते हैं। होलिकादाहके समय चना, गेहूँ, मसूर मटरका होंहा बनाकर खाते हैं। इस जाँचके बाद ग्रीष्मवालीन फसलोंमें चना (बूट), जौऊ (बालि) मसूर, मटर आदि के दुदिल (दाल) गोटीके रूपमें उपयोग करते हैं। परन्तु इन फसलोंका इससे श्रेष्ठ एवं जरूरी भोजन-पूर्तिके लिये सत्तुके रूपमें उपयोग सर्वश्रेष्ठ माना गया है। सत्तु मेघ संक्रान्ति (विशुओं) पर्वसे लोग खाना प्रारंभ करते हैं और ग्रीष्म एवं कुछ वर्षाकालतक विशेषतः सत्तुका उपयोग सर्वत्र होता है। भुस्मी शीतल बुकनी सत्तु नामसे यह प्रसिद्ध है। अमीर गरीब सबको समयपर सत्तु प्राण रक्षा तथा भोजनके साधनमें मदद करता है। चनाको भूना भूजकर दाल निकालकर जाता (चर्का) में पोंस चलनासे चालकर उत्तम सत्तु बनाते हैं। यह घने (बूट) का सत्तु बहाता है। इसी तरह जऊका सत्तु। जबको पहले जलमें भिगाकर कूटके छलका निकाल भूतकर चक्कीमें पोंस चलनासे छानके जबके सत्तु बनाते हैं। यह बूट जो दोनों मिलाकर उत्तम सत्तु बहाता है। बूटका सत्तु घी-चीनी मिलाकर खाया जाता है। तथा सर्व साधारण इसे जयका खास का चूर्ण मिलाकर चटनी आदि साथ खाने हैं। ग्रीष्म-ऋतुका सत्तु भोजन विशेषतः उपयोगमें आता है। सत्तुके गुणः भावमिश्रते इस प्रकार कहे हैं।

यवजाः सक्तवः शीताः दीपना लघवः सरा ।
कफ पित्त हृग रुक्ता लेखनाश्च प्रकीर्तिता ॥
ते पीता बलदा वृष्ट्या वृंहणाः भेदनास्तथा ।
तर्पणा मधुग रक्त्या परिणामे बलावहा ॥
कफ पित्तश्रम मुट्टड व्रण नेत्रा मया पद्मा ।
प्रसस्ता धर्मदाहाध्व व्यायामार्त्त शरीरिणाम् ।

यवके सत्तु—कफ, पित्त, थकावट, भूख, प्यास, व्रण, नेत्र पसीना आना, दाह आदि रोगोंमें प्रशस्त है। तथा शरीरमें बल मिलता है। और कुस्ती व्यायामसे पीड़ित शरीरमें सत्तु घी चीनी पीनेसे थकावट दूर होता है।

यवके सत्तु—चनी साथ घोलकर पीनेसे प्यास, दाह, भूखकी व्याकुलता नाशकर वृत्तकर पित्तज रोग नष्ट करता है।

धकावटमें भी यवके सत्तु पीनेसे आगम मिलता है। नेत्ररोगके पथ्यमें यवका सत्तु उपयोगी है।

हीजा या सन्निपात रोगमें पसीना आता हो तो उस समय यव मूह्रा सामाका सत्तुका सूखा प्रलेपसे पसीना आना बन्द होता है।

यवका सत्तु—इलदी दोनों पीसकर लेप करनेसे पाया, बरहू, व्रण आदि रोग नष्ट होते हैं। इस मिश्रणका रपटन (प्रलेप) के बाद सर्प तेल लगानेसे शरीरका रीतक स्वस्थ सुन्दर होता है।

यव बूटके सत्तुका शर्बत (पानक)—

सत्तुमें चीनी या शर्करा अथवा तमक जोरिका चूरा डालकर साधारण रस बनाकर पीनेकी विधिसे पानी मिला कर पीनेसे बुख, रुग्णा, दाह, थकावट, हृष्यका रोग मूच्छा, छर्दी (कै-इलदी), पित्तज उमर शान्त होकर

शरीरमें बल देता है ।

यथा:—

वरुणं रुच्यं लघु स्वादु घात पित्त प्रणाशनम् ।
मूर्छा च्छर्दी तृषादाह ज्वर शान्ति करं परम् ॥

अंशुघात—लू लगनेपर उपरोक्त पानकमें कच्चे आम पकाकर मसलके मिलाकर एक साथ पीनेसे लूका दोष शान्त होता है ।

बूटका सत्तु—चीनी घी साथ खानेसे परिणाम-शूल नष्ट होता है । उदरशूल, परिणाम शूलमें, अन्न न खाकर केवल चनेका सत्तु चीनी खाना उत्तम पध्य है । इससे शूल शान्त होता है । तथा रेचक है । सर्शो-व्रणबन्धके लिये यवका सत्तु गरमकर लेप दें ।

और भी भाव मिश्रने अपने प्रकाशनमें लिखे हैं कि सत्तु रातमें खाना मना है । तथा थालीमें सत्तु को भातके तरह अलग काटकर, दाँतसे काटकर, गर्म पानीके साथ खाना मना है । सत्तु आगेमें (सामने) जो भी एक बार अन्दाजसे खाने भर आजाय उतने ही खायें । फिरसे भातके तरह परोसा लेना तथा सत्तु खाकर अलगसे पानी पीना, दाँतसे काटकर खाना, मांस, दूध, दहीके साथ खाना, रातमें खाना, गरम जल साथ खाना मना है । सत्तु जब भी खायें अवलेहके तरह गोला ही खाय और सत्तु घोला हुआ ही पानी पीए

ऊपरसे पानी कम पीए । यथा—

पृथक दानं पुनर्दानं सामिपं पयसा निशि ।
दन्तच्छेदन मुष्णञ्च सम सत्तुपु वर्जयेत् ॥

शालिधानका सत्तु:—

सक्तवः शालि सम्भूता वह्निदा लघवो हिमाः ।
मधुग्राहिणो रुच्या पथ्याश्च बलशुक्लाः ॥

अर्थात् शालीधानका सत्तु अग्निको दीप्त करता है । शीतल है । अतः गरमीके दिनोंमें पित्त प्रकृतिके मनुष्यों रोगियोंके लिये हित, रुचिकारक, मधुर, बलदाता, धातु वृद्धिकारक है । यह आँव, पेशिस, अतिसार, ग्रहणी रोगवालोंके लिये तथा पथ्यमें उपयोगी है । घर्म-पसीना नष्ट करनेके लिये इस धान्यका सत्तु का लेप लाभप्रद है । रोग-बल अवस्था विचारकर वैद्य अपने रोगियोंको पथ्यमें सत्तुका उपयोग करे तो गरीबोंको लाभ हो सकता है ।

सत्तु का अंगार कर्करी (लिट्टी)—गेहूँका आटा में बूटका सत्तु में नमक, जीरा, खटाई, लहसून, प्याज, तेल, अजवाइन, मगरैला मिलाकर लिट्टी या रोटीमें भरकर पकाकर खानेसे उत्तम स्वादिष्ट बलकर भोजन होता है । बहुतसे लोग बूटका सत्तुमें ऊपर मसाला मिलाकर आटेमें भरकर कचौड़ी घी में छानकर खाते हैं । सत्तु भरा रोटी, लिट्टी, कचौड़ी सर्वत्र प्रसिद्ध है ।

इस गर्मी की मौसम में शीतलता प्रदान कर पेटको साफ

— एवं —

स्वस्थ रखने वाली

आमलकी रसायन

— सेवनकर —

अम्लपित्त, विदग्धाजीर्ण एवं पित्तोत्पत्ति को नष्ट कीजिये ।

चरकीय भावतत्त्वका दिग्दर्शन

लेखक—सीताराम शर्मा इनाणीजोशी नवलगढ राज०

भगवान् चरकने भाव शब्दका प्रयोग करीब करीब सभी स्थानोंमें किया है। उसका कुछ दिग्दर्शन पाठकोंके समक्ष अपनी बुद्धि अनुसार कराया जाता है।

महर्षि चरक कितने गम्भीर अर्थमें भाव शब्दका प्रयोग करते हैं, यह तो बड़े बड़े विद्वान ही जान सकते हैं। परन्तु इतना अवश्य है कि परमदार्शनिक भाषामें या वैदिक भाषामें उपनिषद् संकेत शब्दोंमें भाव शब्द लिखा है, वह बहुत ही महत्त्वका है।

अद्वैत सिद्धान्त, व द्वैत सिद्धान्त द्वैताद्वैतको लेकर किया है या यह सांख्यके सार तत्त्वोंके निरूपणार्थ यह प्रयोग किया है, यह ठीक तरहसे नहीं मालूम होता। विषय गम्भीर है। आयुर्वेदकी अगाधताका द्योतक है। सभी शास्त्रोंका सार है।

अधिक क्या कहें, जिस जिस भावको लेकर उन्होंने भूत, भविष्यत, वर्तमान कालिक भावावस्थानोंको लेकर किया है उसे तो वे स्वयं ही जानते हैं अर्थात् उस भावात्मा प्रभुको स्वयं भावात्मा प्रभु ही जान सकते हैं। दूसरा नहीं।

स्वमेवात्मनात्मानं वेत्थत्वं पुरुषोत्तम। गीतामें सत्य भी कहते हैं।

वेदाहं सन्तीतानिर्वर्तमानानि वार्जुनः।

भविष्याणि च भूतानि मां तु वेदन कश्चन ॥ गीता ५

अर्थात् मैं सब भावोंको जानता हूँ। मुझे कोई नहीं जानता।

वह अलौकिक भाव है। उस भावतत्त्वको हम-सबका अनन्तानन्त प्रणाम है।

वह एक अद्वैत अलौकिक तत्त्व है, जिसे हम श्रुति द्वारा ही जान सकते हैं। प्रत्यक्ष अनुमानका तो वह विषय ही नहीं है। क्योंकि लिङ्ग लिङ्गी ज्ञान ही अनुमान है। जब लिङ्ग ही नहीं तो लिङ्गी कैसे हो-

सर्ववित् सर्वसंन्यासी, सर्व संयोग निःसृतः।
एकः प्रशान्तरे भूतात्मा कै लिङ्गै रूपलभ्यते ॥

॥ च० शा० १ ॥

उत्तरमें-लिखा है—

नैकः कदाचित् भूतात्मा लक्षणै रूपलभ्यते।

विशेषोऽनुप लभ्यस्य तस्य नैकस्य विद्यते ॥

॥ च० शा० १ ॥ ८३ ॥

अतः परं ब्रह्मभूतो भूतात्मा तोप लभ्यते।

निःसृतः सर्वभावेभ्यो चिह्नं यस्य न विद्यते ॥

॥ च० शा० १ ॥ ५४२ ॥

अद्वैतको हृदयमें रखकर कहा है कि उसका द्वैतमें पता नहीं। यहां दूसरा कोई चिह्न ही नहीं है। सभी भावोंसे नानाभावोंसे निकल कर एक भाव वहाँ है।

चेतना धातुरप्येक स्मृतः पुरुष संज्ञकः स्पष्ट कर दिया है। परं चिकित्साशास्त्रमें तो सांख्य वालोंकी उपयोगी प्रकृति पुरुषात्मक द्वैतकी ही बात विशेष मान्य है।

सांख्यमें जैसे-लिखा है-गीतामें जो कुछ भी है सब प्रकृति पुरुष या जड़ चेतन तत्त्वोंके संयोगसे ही उत्पन्न है।

यावत्संजायते किंचित् सत्त्वं स्थावर जंगमम्।

क्षेत्र क्षेत्रज्ञ संयोगान् तद्विद्धि भरतर्षभ ॥ गीता ॥

अर्थात् दोके संयोगके बिना सृष्टिमें कोई भी भाव तत्त्व नहीं।

वही बात चरक कहते हैं—

नह्यो को वर्तते भावो वर्तते नाप्यहेतुकः। च० शा० १

संयोगान् वर्तते सर्वं तस्मै नास्ति किंचन। च०

नैकः प्रवर्तते कर्तुं भूतात्मा नाश्रुते फलम्।

सत्त्वा—संयोगान् वर्तते सर्वं तस्मै नास्ति किंचन। च०

॥ च० शा० १ ॥

तात्पर्य यह हुआ कि लौकिक कोई भी भाव दोके बिना जड़ चेतनके बिना या दो अवयवोंके बिना अवयवी भाव नहीं उत्पन्न होता।

भाव चाहे कार्यरूप हो, चाहे कारणरूप हो, दोका संयोग उसमें अनिवार्य है।

अब इन दो भावोंका विचार करें। इन दोनों एक चेतन है एक जड़ है। अर्थात् हमारा देह जड़ भावोंकी राशि है।

चेतन आत्मा चेतन, ज्ञान स्वरूप है।

तात्पर्य यह है कि आत्मा नित्य है। अपरिणामी है। अव्यक्त है। और देह या देहसंयुक्त देहीपुरुष देहका कार्य होनेसे अनित्य है।

चरक लिखते हैं—अनादि पुरुषो नित्यः विपरीतस्तु हेतुजः। च० शा० १ अ०।

पुरुषका विशेषण है नित्य। एक अनादि पुरुषके अतिरिक्त उत्पत्तिधर्मी, देहीपुरुष देहके साथ उत्पन्न और नष्ट भी होता रहता है। नाना योनियोंमें जाना, एक देह से दूसरे प्रकारका देही बन जाना।

यह कारण (जड़ प्रकृति) के योगसे कारणवान पुरुष अनित्य भी है। यह संयोगी पुरुष है। नाना संयोगी भावोंसे संयुक्त रहनेसे, नाना मातृ पितृजादि भाव, या पञ्चभूतदि भावोंसे मिले रहनेके कारण, इसमें संयोग वियोग भावोंका बना रहता है। इसलिये इसे अनित्य भाव कहते हैं।

भाव यह हुआ कि असंयोगी केवल चिदात्मा नित्य भाव है। और संयोगी पड़ धातु पुरुष क्षेत्र क्षेत्रज्ञ संयोगज राशि पुरुष अनित्य भाव है।

नित्य अनित्यकी परिभाषा, सद् कारण वज्रित्यं दृष्टं हेतुज मन्यथा। यह है। जो त्रिकालमें विद्यमान रहे, और जिसका कोई उत्पत्ति हेतु न हो; वह नित्य है, और जो असत् हो, क्षण-क्षणमें बदले, या मरे, वह असत् है। देही पुरुष सदा नश्वर है अतः असत् है। यह तो हुई नित्यानित्य भावकी व्याख्या।

अब इसी नित्य अनित्यके सिवाय दो विशेषण और हैं जो नित्य है वह अव्यक्त है और अचिन्त्य भी है।

जा सकता है। वह व्यक्त है।

और जिसकी चिन्ता हो सकती है जो विचार मन, बुद्धिवा विषय है, वह चिन्त्य है। और जो मन बुद्धिकी गमसे परे है। वह अचिन्त्य है। इसी बातको चरकने स्पष्ट किया है।

तदेव भावात्प्रज्ञा नित्यत्वं नकुतश्चन।

भावाद्ज्ञेयं तद वाक्त मचिन्त्यं व्यक्त मन्यथा ॥

च. शा. १।५३

यहाँ यह बात विशेष ध्यानमें रखने लायक है कि जिसे नित्य कहा है, वह तत्त्व किसो अनित्य तत्त्वसे नहीं पकड़ा जा सकता। अर्थात् वह अलौकिक तत्त्व, नित्य भाव है। किसी भी प्राकृत भाव, या अनित्य तत्त्वसे नहीं ग्रहण हो सकता। किन्तु नित्य तत्त्व तो नित्य तत्त्व (आत्मा) से ही जाना जा सकता है।

अनित्य तत्त्व, या प्राकृत भाव, अनित्य तत्त्वोंसे स्थूल तत्त्वोंसे ग्रहण किया जा सकता है। नित्य भाव नित्य भावको, अनित्य भाव अनित्य भावको ग्रहण कर सकता है।

अर्थात् आत्मा सबसे अत्यन्त सूक्ष्म है। वह आत्मा आत्मासे ही जाना जा सकता है। स्थूल व सूक्ष्म तत्त्वोंसे भी वह नहीं जाना जा सकता।

इन्द्रियां सूक्ष्म गानी हैं। मन सूक्ष्म औ बुद्धि तत्त्व उससे भी सूक्ष्म है। जो वस्तु बुद्धिका विषय है वह सूक्ष्म होते हुए भी बुद्धि प्राण होनेसे व्यक्त या चिन्त्य उसे कह सकते हैं। बुद्धि भावसे वह प्राण है।

ऐन्द्रिय भी है। इन्द्रियां उसे जान सकती हैं। जो इन्द्रियोंसे भी परे सूक्ष्म भाव हैं वह बुद्धि प्राण है। यहाँ तक तो भाव भावको पकड़ता है।

परं इसमें आगे जा जो भाव है योबुद्धेपरतः सूक्ष्म वह भाव सबसे सूक्ष्म होनेसे या अनित्य भावोंसे अप्राण होनेसे अव्यक्त अचिन्त्य है।

अर्थात् आत्मा नित्य है वह बुद्ध्यादि प्राण अनित्य भावोंमें नहीं जाना जा सकता। यहाँ इन्द्रियां बात और समझनी चाहिए कि, प्रकृति पुरुष तो ही नित्य है।

बुनावपि सर्वं गती। दोनों ही नित्य और अलिङ्ग है।
पर मूल प्रकृति अव्यक्त है, प्रकृति है, नित्य है, आगेकी
प्रकृतियों ३ त्वेव तत्त्व उत्तरोत्तर स्थूल हैं। व्यक्त
हैं। और नित्यानित्य हैं। इसलिए बुद्धि तत्त्व अनित्य
भाव है। उससे भी वह नहीं जाना जा सकता।

व्यक्त व्यक्तकी व्याख्या यह की गई है कि।
व्यक्तमैन्द्रियकं चैव गृह्यते तद् यदीन्द्रियैः।
ओऽन्यत् पुनरव्यक्तं बुद्धिं ग्राह्य मनीन्द्रियम्।

ये ऐन्द्रियिक भाव हैं, इन्द्रिय ग्राह्य हैं वे तो
सब व्यक्त हैं। और जो इन्द्रिय बुद्धिसे परे हैं वे सब
अव्यक्त अचिन्त्य हैं। इसलिए प्रकृति पुरुष अपरिणा-
मावस्थाम दोनों ही नित्यतत्त्व सांख्य मतमें हैं और
दोनों ही भाव अप्राप्य हैं।

आत्मा तो सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म है। वह भाव सदा
ही अव्यक्त है द्रष्टा मात्र है। न वह व्यक्त होता है न
वह दृश्य बन सकता है।

होवें भी कैले-लिखा है, नतत्र सूर्यो भाति न च
चन्द्र तारकं नैवा विद्युतो भान्ति, कुनोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनुभान्ति सर्वं तस्य भाषा सर्वामदं विभाति।

अर्थात् आत्मा नित्य है। नित्यभाव अथवा,
नित्यत्व, नित्यभाव में ही भले ही प्राह्य हो अन्य
किसी भी अनित्यभाव में स्थूलभावसे-या प्राकृत इन्द्रिय
बुद्धि आदिसे वह नहीं प्राह्य होता। नहीं जाना जा
सकता।

अतः सागंश यह हुआ राशि अनित्य पुरुष
अनित्य भाव है। संयोगी तत्त्व है संयोगी तत्त्वोंके
संयोगसे उनकी स्थिति और वियोगसे उसका नाश
समझो। यही तदेवभावादप्राह्य इत्यादि पद्यका भाव है।

आप जानते हैं कि स्थूल वस्तुके पकड़नेके साधन,
संदंश (चीमटा) भी स्थूल ही होते हैं।

तथा सूक्ष्म वस्तुको पकड़नेके साधन भी सूक्ष्म ही
होते हैं जैसे स्थूल शल्यके उद्धरणके लिए स्थूल संदंश
पत्र चाहिये। सूक्ष्मके लिए छोटी चीमटी चाहिये।

ऐसे ही इन्द्रियाँ, बुद्धि, मन, आत्माकी अपेक्षा
स्थूल हैं। इनके विषय भी सादृश्यादि स्थूल हैं। बुद्धि
मन और सूक्ष्म हैं तो इनके विषय भी सूक्ष्म हैं।

इससे परे अति सूक्ष्म तत्त्व प्रकृति है। और
उससे भी सूक्ष्म पुरुष है।

सूक्ष्मका तात्पर्य उसकी हृदय प्रकृति पर्यन्त ही है।

सूक्ष्म त्वं च अलिङ्गपर्यव-ानम्। योग सूत्र।

अर्थात् देखते देखते इनका सूक्ष्म हो जावे कि देखे
हैं नहीं, देखनेसे भी रह जावे, वह अति सूक्ष्म है।
सूक्ष्मताकी पराकाष्ठा है।

ऐसी स्थितिमें प्रकृति पुरुष दोनों ही भाव अति
सूक्ष्म हैं। अलिङ्ग हैं। नित्य हैं। भावाप्राह्य हैं।
अन्य स्थूल भाव सभी स्थूल सूक्ष्म भावोंसे प्राह्य हैं।

यही चरकका आशय है। कि आत्मा पुरुष सूक्ष्म
है। प्रकृति, क्षेत्र, देहावयव भी सूक्ष्म है। जो दाख
रहा है वह स्थूल प्राकृत शरीर है। सूक्ष्म शरीर भी
अत्यन्त सूक्ष्म है। उपरोक्त कथनानुसार जड़ चेतन,
प्रकृति, पुरुष, दोनों ही नित्य है।

अब इनकी विकिरसोपयोगी उपयोगिताके लिए
इन दोनों का भावाको फिर रूपान्तरसे समझना
चाहिये।

ये दोनों ही भाव परस्पर सहयोगी भी हैं परस्पर-
रोपकारक है।

जड़ बिना चेतनके क्या करे। चेतनके बिना जड़
भी कुछ नहीं कर सकता।

नैऋत प्रवर्तते कर्तुं च. शा. अ. १।

क्षेत्र क्षेत्रज्ञ शरीर शरीरा दो ही भाव संसारमें
मुख्य हैं।

अब आयुर्वेदका ऐसा सिद्धान्त है कि एक जड़
भाव चेतनका साधन है, उपकरण है।

यद्यपि जड़की जगह जड़तत्त्व प्रधान है, चेतनके
स्थानपर चेतन मुख्य है, परन्तु फिर भी चिकित्सामें
भौतिक या लौकिक चिकित्सामें लौकिक भाव, जड़
भाव सामान्यात् जड़को घटाते बढ़ाते हैं।

उपकार करते हैं।

नैष्ठिकां चिकित्सामें चेतनका चेतन तत्त्व ही ज्ञान
सामान्यको बढ़ाकर या अज्ञान घटाकर नैष्ठिकी
चिकित्साकर सकता है।

अब जड़ चेतन दोनों भावोंमेंसे जड़ भावपर विचार करनेके लिए प्रकरण आरम्भ किया जाता है।

सात पदार्थ माने हैं—द्रव्य, गुण, कर्म सामान्य, विशेष समवाय और अभाव। इन सातोंके भी दो ही भेद करें तो जड़ चेतन दो विभाग होते हैं।

भौतिक, और आध्यात्मिक भेदसे दो भाव हैं,

शरीर जड़ भाव है। आत्मा चेतन भाव है। जड़ भावसे जड़ भावोंकी वृद्धि क्षय होता है। और चेतन अपरिणामी भाव है। उसमें कभी वृद्धि क्षय नहीं होता।

यद्यपि चेतन भावकी प्रधानताका जहाँ उपयोग है, वहाँ चेतन प्रधान है जैसे सभी कर्मोंके कर्तृत्व भोक्तृत्वमें चेतन ही प्रधान भाव है। वहाँ आत्मा ही कर्ता है। जड़ भाव पञ्चभूत या अन्य द्रव्यादि उसके उपकरण हैं। साधन हैं। उसकी अपेक्षा गौण हैं।

क्योंकि जड़ चेतन दोनों भावोंमें चेतन भाव मुख्य हैं। चरक कहते हैं—

नतेपुसम्भवेज ज्ञानं नचतैः स्यात् प्रयोजनम्।

च. शा. १।

अर्थात् जड़ जड़ ही रहेगा। जड़में ज्ञान नहीं, ज्ञान बिना सभी जड़ तत्त्व बेकार हैं। अगर चेतन न हो तो जड़को कौन जाने यह अच्छी वस्तु है यह बुरी है। यह उपयोगी है। यह अनुपयोगी है।

कौन सुख दुखको समझे। बिना चेतन भावके संसारके सभी योग्य पदार्थ भोक्ताके बिना नगण्य है। इनमें ज्ञान नहीं। इसलिए ज्ञानवान आत्मा ही मुख्य है। वही कर्ता भोक्ता है। चेतन भावका ही देहमें (देहीका ही) अधिक महत्त्व है, ऐसा मानते हैं।

उस कर्तृत्व भावको लेकर भले ही आत्मा मुख्य हो, परं जड़ तत्त्व भी (पञ्चभूत भी) चेतन भावसे न्यून (महत्त्वकी दृष्टिसे) नहीं है।

शरीरके वृद्धि, क्षय व चिकित्साका जहाँ प्रसंग है वहाँ तो पञ्चमहाभूत जड़ भावको ही अच्छी तरह समझकर उपयोग करना होगा।

चरक शरीर स्थानमें गर्भोत्पादक भाव, गर्भ धारक भाव, गर्भ विनाशक भाव, गर्भ

वे सब आहार-विहार रूप जड़ भाव हैं।

अर्थात् पञ्च महाभूतोंके सम्यक् योगसे उत्पत्ति, वृद्धि और असम्यक् योगसे विकृति व विनाश माना गया है।

वास्तवमें देखा जाय तो गर्भके रूप आकृति गुण दोष सभी शारीर भाव नित्यानित्यभाव, जड़ भावके अधीन है। पांच भौतिक है। जड़ चेतन इस गर्भमें दो तरफ हैं। दोनों ही नित्य अनित्य हैं।

चरक शरीरस्थानमें लिखा है—

सन्ति खलु, अश्मिन् गर्भकेचिन्नित्या भावाः सन्तिचानित्याः केचिन् च. शा. ४ अध्याय गद्य १४।
कुछ आगे चलकर

ततःस्त्री पुरुषयो र्ये वैशेषिका भावा प्रधान संश्रया, गुण संश्रयाश्च, तेषां यतो भूयस्त्वं ततोऽन्यतर भावः।
च. शा. ४ गद्य नं. १५

स्त्री बने, चाहे पुरुष बने, गर्भमें नानात्वपञ्चमहाभूतोंकी या जड़ भावोंकी विशेषतासे विशेषता होती है। आत्मा तो स्त्री पुंनपुंसक, तीनोंमें एक ही है। भूतोंके परिवर्तनसे या जड़के अनित्य भाव (परिवर्तनशील अवस्थान्तरों) से नाना रूप होते रहते हैं। देवदत्त काला, पीला, गौर, ह्रस्व, दीर्घ, स्थूल, कृश इत्यादि सभी जड़ोंका परिवर्तन और उत्पत्ति विनाश, बाल्य युवा स्थावर शरीरकी स्थिति ये सभी अनित्य भाव हैं, और जड़के हैं। प्रकृतिके हैं। गुणोंके हैं।

नित्य भाव तो सिर्फ एक आत्मा (ज्ञानस्वरूप) ही है। सांख्यमें मूल प्रकृतिको अविकृति कहा है। यह नित्य भाव है।

उससे आगेके २३ (तेवीस) भाव महत्त्वसे लेकर सभी विकृति, व परिवर्तनशील, अनित्य कहे जा सकते हैं।

जो शरीरमें वृद्धिक्षयका परिवर्तन प्रवाह चलता रहता है, वह इन्हीं २३ तत्वों जड़भावोंका रूप है।

ये जड़भाव जड़भावकी उत्पत्तिमें हेतु हैं। बिना जड़ भावोंके (पाञ्चभौतिक आहारके) उत्पत्ति संभव नहीं।

क्योंकि यह सिद्धान्त है कि पञ्चभूत देहके उपा-

दान कारण हैं, और सब निमित्त या सहकारी कारण हो सकते हैं। मुख्य कारण उपादान कारण ही होता है और वह पञ्चभूत हैं। जड़भाव ही है।

बिना जड़के उपयोगके कोई उत्पत्ति हो ही नहीं सकती। जैसा उत्पत्ति हेतु होगा वैसा ही कार्य (भाव) होगा। ऐसा समझें कि कार्यभाव और कारण भाव दो तरहके भाव हैं। कारण भावके बिना, उत्पत्ति हेतुके बिना कार्य नहीं होता।

उत्पत्ति भाव हेतुपञ्चारसे ही हो सकता है।

विनाश भाव, अर्थात् क्षय तो भावकी स्वाभाविक दशा है। वह तो स्वतः ही होता है। आशय यह निकला कि मूल प्रकृति-या नित्य परिमाणोंको छोड़कर सभी जड़भाव संसारकी उत्पत्ति, या सभी कार्यभावोंकी उत्पत्तिमें मुख्य कारण है।

परिमाणुजन्य भिन्नानां कारणत्वमुदाहृतम्।

इससे परिमाणु भाव भी भाव हों, परं वे उत्पादक भाव नहीं।

अब दो भावतत्त्व होगये। एक उत्पादक भाव, और दूसरा विनाश भाव। विनाश भाव भी तो भाव है। परन्तु यह स्वाभाविक अर्थात् भावस्वभाव होनेसे इसको औपपत्तिक भाव नहीं माना जा सकता।

यहाँ कोई उपपत्ति हेतु नहीं है, कि अभाव क्यों होता है। इसलिए जड़ भाव शरीरके जड़ भावोंके रक्षितमें हेतु हुए। यह सिद्ध हुआ।

अब यह देखना है—इसके जाननेका प्रयोजन क्या हुआ? तो यही उत्तर है कि—

सारी चिकित्सा, स्वास्थ्य, साम्य, वैषम्य, इस उत्पत्ति हेतु भावपर निर्भर है।

यदि समता उत्पन्न करनेवाले, द्रव्य गुण, कर्म या (जड़ आहार विहार)-सेवन किये तो, समता रूप साम्यभाव पैदा होगा, और यदि वैषम्योत्पादक विषम-भाव सेवन हुआ तो, विषमभाव, रोगरूप कार्य (भाव) उत्पन्न होगा।

भावोंकी उत्पत्तिमें, जड़ भावोंके या पाञ्चभौतिक भावोंके, या प्राकृत दोषकारक भावोंकी उत्पत्तिमें, उत्पादक, भाव स्वभाव जानना चाहिये।

भाव चाहे सम हों, चाहे विषम हों, उत्पादमें भावोंकी अपेक्षा रखते हैं।

अर्थात् यह स्वाभाविक नियम है कि न तो स्वतः (बिना उपयोग किये बिना आहार विहारके) समभाव उत्पन्न होंगे, चिकित्सा होगी। और न कोई रोग व विषमता ही धातुओंकी स्वतः उत्पन्न होगी। जैसा करोगे वैसा भरोगे। जैसा कर्म करोगे, वैसा फल पावोगे। यह भावोंका स्वभाव है और नित्य है।

हाँ! अभाव विनाश स्वतः बिना प्रयत्न किये ही होगा। यह भी भाव स्वभाव ही है।

अर्थात् जैसे गुरुभिरभ्यस्य मानैः गुरुणामुपचयो भवति लघुभिर्लघुनाम्।

यह भावस्वभाव है कि भारी द्रव्य गुण कर्म जड़ भावोंके सेवनसे शरीर भारी होगा, पुष्ट होगा और लघु आहार विहार करोगे तो लघु शरीर होगा।

कुछ भी नहीं करोगे तो, धातुओंका विनाश अभाव तो स्वभावतः ही होगा उसमें आपको प्रयत्न नहीं करना पड़ेगा।

यह सब भावस्वभावका महत्व है। कहा है कि—
न समायान्ति वैषम्यं विषमा समतां न च।

हेतुभिः सद्गुणान्तर्यं जायन्ते देहधातवः॥

तथा-प्रवृत्ति हेतुभूतानां, न निरोधेऽस्ति कारणम्।

यही भाव स्वभाव आयुर्वेदका ज्ञेय तत्त्व है।

चिकित्सा प्रधान चरक ग्रन्थमें इस प्रसंगको बड़े सुन्दर ढंगसे-पहले सूत्रस्थान चिकित्साप्राभृतीयमें, फिर शारीर स्थानके प्रथम अध्यायमें उठाया है, और समाधान किया है।

वहाँ कहा है कि—हे प्रिय शिष्य, कारणानुरूप कार्य हुआ करता है। इसलिए समधातुको शरीरमें उत्पन्न करना हो तो, साम्यहेतु आहार-विहार या सम-द्रव्य गुणकर्मोंको सेवन करना चाहिये, और यदि उसे दुख पाना है, तो विषम धातुत्पादनार्थ विषम अपध्य आहार विहार और औषध सेवन करने चाहिये।

कारणानुरूप कार्य होता है। चिकित्सकको या किसी भी कार्यकर्ताको यह सिद्धान्त खूब अच्छी तरह समझ लेना चाहिये, कि—

जायन्ते हेतु वैषम्यं विषमा देहधातवः हेतुसाम्यात् समा स्तेषां स्वभावोपरमः सदा।

अर्थात् यह जो कारणानुरूप कार्योत्पादन है यह भावस्वभाव है और इस भावको भी स्थिर सदा नहीं

मानना चाहिये । क्योंकि प्रतिकृति उत्पन्न ध्वंस होता ही रहता है ।

इसलिए चाहे कारण रूप भाव हो, चाहे कार्यरूप भाव हो, चाहे साम्यधातुत्पादन किया गया हो, चाहे (विषम भाव) अपथ्योपसेवनसे रोगोत्पत्ति हो गई हो,

भाव कैसा भी हो क्षणिक और शीघ्र उत्पन्न ध्वंसात्मक होता है । अर्थात् स्थिर नहीं रहता । शीघ्र ही उत्पन्न हुआ कि आगक्षणमें उत्पन्न हुआ, द्वितीय क्षणमें स्थिर रहा. तृतीय क्षणमें नष्ट हो जाता है । यह सभी भावोंके स्वभावकी बात है ।

चाहे पथ्य सेवनसे चिकित्साके लिए समधातु-त्पादक भाव हो, चाहे विषम अपथ्यसे अर्जर्ण रूप अपथ्य रोगरूप भाव हो, दोनों ही स्थिर नहीं रहते ।

परन्तु एक बात है एक भाव जब नष्ट हो जाता है तो उसके पहले एक अपने जैसा ही भाव तत्सदृश भाव छोड़ जाता है । उत्पन्न ध्वंस उत्पन्न होते हुए भी परम्परा बनी रहती है ।

इसलिए वह भाव साम्य या सादृश्यसे तत्त्वमान (वैसा ही) स्थिर दिखाई देता है । यह भाव स्वभाव प्रत्येक क्षणमें एक स्थितिमें नहीं रहता ।

लिखा है—शीघ्रगतरान् यथा भूतस्थानाभावो विपद्यते । निरोधे धारणं तस्य नास्ति नैवान्यथा क्रिया ।

अर्थात् आज वेष्टा जन्मा, जन्मते ही मर गया । न उसका लाड़ प्यार हुआ न कोई उसकी अगेही अच्छी बुरी अवस्थाएँ देखी जामकी । उत्पन्न होते ही नष्ट ।

यही संसारकी सब क्रियाओंका हाल है । कोई स्थिर नहीं रहती ।

उत्पन्न तो की जा सकती है; परन्तु विनाशको कोई रोक नहीं सकता । अभाव स्वयं हो जाता है । जब तक उत्पादक हेतु सेवन होता रहता है ।

चाहे साम्योत्पादक हो चाहे वैषम्योत्पादक आहार विहार हो. जब तक सेवन होता रहता है तब तक वह कार्य पैदा होता रहता है । उत्पादक हेतु बन्द किया, तुरन्त कार्य बन्द हुआ ।

जैसे दीपकमें तैल चर्नि आदि है तब तक उत्पादक हेतुके होते हुए तो दीपज्वाला है । उत्पादक हेतु न रहा ज्वाला बन्द ।

वह क्यों हुई ? इसके लिए व ई कहते हैं ।

केचित्त्वत्रापि मन्यन्ते हेतुं हेतौ उपवर्तनम् ।

अर्थात्—तैल वत्यादिका प्रवृत्ति हेतुके न होनेको दीप ज्वालाके अभावमें कारण मानते हैं ।

प्रिय वरस ! यह भाव स्वभाव उत्पन्न ध्वंस होते रहना स्थिर न रहना, सभीको ज्ञात रहना चाहिये । सभी बात भावें हैं अनित्य हैं क्षणिक हैं ।

इस बातको सुनकर शिष्य हो विचार हुआ और वह पूछने लगा गुरुदेव ? एव मुक्तार्थमाचार्य मनि-वेशोऽभ्यभाषत । च. सू. १६. ३८)

फिर ये वैद्यलोग क्या किया करते हैं । जो इतने सारे उपकरण चिकित्साके लिए इव ठे करके सज्जत कर बैठे हैं ।

जब सभी भाव स्वतः विनष्ट होते रहते हैं, तब रोगीने अपथ्य सेवन किया और उसके शरीरमें रोग हुआ । आपके भाव स्वभावके सिद्धान्तानुसार वह रोग भी द्वितीय क्षण तक स्थिर है । तृतीय क्षणमें रोग रूप कार्य भाव भी नष्ट हो जाता है और उत्पादक भाव अपथ्य (जिससे वह रोग पैदा हुआ था) वह भी अस्थिर है । तृतीय क्षणमें नष्ट हो जाता है ।

जब स्वयं ही रोग पैदा हो जाता है और स्वयं ही उसके उत्पादक परम्परा भी नष्ट हो जात है न रोग न रोगका पिता । दोनों ही शरीरमें स्थिर नहीं रहते । तो फिर यह चिकित्सा शास्त्र क्यों किसलिए बनाया है ।

और वैद्यजी फिर इस विवश कार्यमें क्या व्यापार कर सकते हैं ।

वैद्यजीकी जरूरत ही क्या है । स्वयं प्रकृतिसे ही भाव स्वभाव ही सब कुछ क्षणमें रोगोत्पत्ति क्षणमें विनाश फिर न चिकित्साकी जरूरत न वैद्यजीकी बताइए ये वैद्य लोग क्या करते हैं ?

रोग टिके जब तो कुछ करें भी । जब कोई बुरा है ही नहीं, तब उसकी समता शृंगार क्या किया जा सकता है ।

यदि घट होवे तब तो उसपर रंग चित्रादि बिछा दें । घट है ही नहीं तब क्या हो ।

ऐसे ही वातादि दोष वैषम्य टिका रहे, रोग पैदा हो तब तो स्नेहनादि कर्म चिकित्सा दीप साम्य रूप की जावे । टिके नहीं तो क्या हो ।

गुरुजी उत्तर देते हैं कि देख वत्स ! यद्यपि सम, विषम, भाव दोनों ही नहीं टिकते, और न उनपर या उनका संस्कार किया जा सकता है ।

अर्थात् न हम भावोंको स्थिर कर उनको बदल सकते हैं, न उनको नष्ट होते रोक सकते हैं । वह तो काल स्वभावकी तरह अनिवार्य अपरिहार्य भाव है । उन पर हमारा वश नहीं ।

परं हम उत्पादन करनेमें तो स्वतंत्र हैं । अर्थात् हम साम्य हेतुपचारसे पथ्य आहार विहारके सेवनसे साम्य धातु परम्पराका उत्पादन तो कर सकते हैं ।

और तत्सम परम्पराके उत्पादनसे जो हमें अभीष्ट है जैसे चिकित्साके लिए साम्य धातु उत्पादन हम चाहते हैं तो साम्य धातुके हेतुके सेवनसे समधातु उत्पादन करावें, या करें तो समधातु रहेंगे ।

बस समधातुत्पत्ति ही वैद्यका कर्म है, यही चिकित्सा है । जब हम समधातु उत्पादनको करेंगे, तो साम्य उत्पाद होगा ।

रहा विषमताका नाश, सो तो वह स्वयं नष्ट हो जावेगा ।

क्योंकि हम पहले कह चुके हैं कि अभाव तो स्वाभाविक है भावको उत्पन्न करनेमें ही प्रयत्नवान बनना पड़ता है । भावका विनाश ध्वंस तो स्वतः ही हो जाता है । यही भाव स्वभाव है ।

इसलिए सार यह हुआ कि हम साम्योत्पादन बढावें । वैषम्य विनाशकी तरफ कुछ प्रयत्न न करें । अभाव तो स्वयं हो जाता है । पथ्य सेवन करें । सम दोषोत्पत्तिका यत्न करें, विषमताका नाश तो स्वतः हो जावेगा । यही वैद्यका कर्तव्य है । जो कि समानुबन्ध जोड़ देनेका है ।

उदाहरणके लिए जैसे दधि, मत्स्य, गुड़, नवान्नादि सेवनसे श्लेष्माकी वृद्धि होकर उत्पादक हेतुसे श्लेष्मा बढकर धातुदोष वैषम्य पैदा होगया और अरुच्यादि रोग पैदा हो गये ।

यहाँ जैसे हमने श्लेष्मल पदार्थोंसे श्लेष्मा पैदाकर वैषम्य पैदा किया, और अरुचि, श्वास, कासादि उत्पन्न किये ।

वैसे ही कट्वम्ल लवण मरिच अम्ल लवण सेवन कर पित्तवर्धक द्रव्योंसे शरीरमें पित्त की प्रवृत्ति पैदा होगी ।

सकते हैं । या पञ्चकोलादि दवाओंसे श्लेष्माशामक द्रव्य भी भीतर पैदाकर सकते हैं ।

पित्तवृद्धिकर हेतुको जोड़ देना और श्लेष्मा वृद्धि में पित्तवृद्धिकर देना यही तो हमारी चिकित्सा है ।

क्योंकि वृद्धा हासपित्तव्या, क्षीणा वर्धयितव्या, समाः पालयितव्या । इस भाव स्वभावके अनुसार जो हम पित्तोत्पाद करेंगे वही हमारे वशकी चीज है । श्लेष्मा का क्षय तो श्लेष्मोत्पादक भावोंके त्याग देने मात्रसे, स्वयं क्षीण होजावेगा ।

फिर इस प्रकारकी पित्तवृद्धि करें कि, हमारे समधातु उत्पन्न हों ।

कुछ कालमें ही साम्यपरंपरा उत्पन्न होकर कफ क्षय पित्त वृद्धिमें समानता आजावेगी । रोग शान्त हो जावेगा । यही वैद्योंका कर्म है, यही चिकित्सा है ।

दध्यादिके सेवनसे पहले श्लेष्माका प्रतिक्षण उत्पाद विनाश होते हुए भी श्लेष्मोत्पादक हेतु साम्य में तत्समान ही श्लेष्माकी परम्परा बढकर रोग होगया ।

यद्यपि यहाँ पूर्वक्षणमें श्लेष्मा उत्पन्न हुआ था, उसका द्वितीय क्षणमें अभाव होगया, परन्तु तृतीय क्षणमें दूसरा तत्सम श्लेष्मा पैदा होगया । इसलिए श्लेष्मावृद्धि ही दिखाई देने लगी ।

ऐसे ही पित्तोत्पादक भावोंमें भी उत्पाद विनाश होते हुए स्थिरता भावोंकी न रहते हुए भी तरसदृश परम्परोत्पादसे चिकित्सा करनी चाहिये ।

भावका उत्पाद विनाश होते हुए भी व्यक्ताव्यक्ती भाव या रूपान्तर ही समझना चाहिये ।

क्योंकि कभी भी किसी भावका अत्यन्ताभाव नहीं होता । आविर्भाव तिरोभाव होता रहता है ।

द्विविधं यत्तु सर्वं सञ्ज्ञामञ्च च. सू ११ अ. यह जो कहा है उसका यही तात्पर्य है कि जो है सो है ही उसका तीन कालमें भी अन्यन्ता भाव नहीं हो सकता । जो नहीं है, सो नहीं है । उसका कभी भाव नहीं होता ।

नामतो विद्यते भावो ना भावो विद्यतेऽमतः । गीता जो जड़ है चेतन नहीं होसकता, चेतन है, वह त्रिकालमें जड़ नहीं होसकता । ऐसे सभी गुण कर्मोंकी अवस्थाएँ जैसी हैं वैसे ही समझनी चाहिये । यह

अवस्थाएँ जैसी हैं वैसे ही समझनी चाहिये । यह



आयुर्वेद विश्व भारती, गान्धी विद्या मन्दिर,
सरदारशहर: राजस्थान:

७ जुलाई १९६५ से नया सत्र प्रारम्भ

राजस्थान विश्व विद्यालय, जयपुर द्वारा संचालित प्री आयुर्वेद तथा आयुर्वेदाचार्यका शुभारम्भ। प्री. आयुर्वेद एक एक वर्षका पाठ्यक्रम है। जिसमें संस्कृत सहित मेट्रीक अथवा प्रवेशिका या तरसम परीक्षा उत्तीर्ण छात्र प्रवेश पा सकते हैं।

अंग्रेजी सहित मध्यमा या उपाध्याय अथवा संस्कृत सहित प्री युनिवर्सिटी, हायर सेकेंडरी या इन्टर पास छात्र आयुर्वेदाचार्य प्रथम वर्षमें प्रवेश पा सकते हैं।

यहां राजस्थान सरकार द्वारा संचालित त्रिवर्षीय भिषग्वर डिप्लोमा कोर्स एवं द्विवर्षीय भिषगाचार्य डिग्री कोर्स भी चालू हैं।

प्रवीण वैद्य उपाधि प्राप्त करनेके लिए एक वर्षीय प्रत्यास्मरण (रिफ्रेसर) कोर्समें पंजीकृत वैद्य तथा विशारद परीक्षोत्तीर्ण छात्र प्रवेश पा सकेंगे।

योग्य तथा निर्धन छात्रोंके लिए सीमित छात्र-वृत्तिका भी प्रयत्न है।

आयुर्वेद विश्व भारतीमें भव्य भवन, समस्त साधन सामग्री, सुयोग्य प्राध्यापक, उत्तम छात्रावास, सर्व साधन सम्पन्न आतुरालय, रसायनशाला, वनस्पति उद्यान, शवच्छेदनशाला, विज्ञानकी प्रयोगशाला, व अनुसंधानका उत्तम प्रबन्ध है। नवीन सत्रसे स्नातकोत्तर प्रशिक्षणकी भी योजना है।

प्रवेश नियमावली एवं प्रवेश पत्रके लिए १५ जून १९६५ से पूर्व आवेदन करें। वैद्य सोहनलाल शर्मा

प्रिंसिपल, आयुर्वेद विश्व भारती, गान्धी विद्या मन्दिर, सरदारशहर: राजस्थान:

श्री पं० रा० आयुर्वेद कालेजका नवीन सत्रारम्भ

श्री राजस्थान आयुर्वेदिक सोसाइटी वंबई द्वारा संचालित तथा राजस्थान सरकार द्वारा सहायता व मान्यता प्राप्त इस कालेजका नवीन सत्रारम्भ ७ जुलाई १९६५ से हो रहा है। अतः प्रवेश प्राप्त करने वाले छात्रोंको ७ जुलाईसे ही अपने अपने स्थान सुरक्षित करवा लेने चाहिए। प्रवेश योग्यतामें प्रवेशिका, मध्यमा, उपाध्याय, हाईस्कूल व हायर सेकेंडरी परीक्षोत्तीर्ण छात्र ही वांछित हैं। यहां त्रिवर्षीय भिषग्वर कोर्सका सैद्धान्तिक व प्रायोगिक कर्माभ्यास सहित अध्ययन करवाया जाता है। प्रायोगिक कर्माभ्यासके लिए आतुरालय, औषधालय, रसायनशाला, प्रयोगशाला द्रव्यगुण संग्रहालय, आदिका सुप्रबन्ध है। गरीब व सुयोग्य छात्रोंको राजस्थान सरकार व विद्यालय द्वारा ४००, ६०० तककी वार्षिक छात्रवृत्ति भी दी जाती है। छात्रावासीय छात्रोंके लिए मकान, जल, पाचक, मार्जक, भृत्य आदिका निःशुल्क प्रबन्ध है। प्रवेशार्थी निम्न पतेसे पूर्ण जानकारी प्राप्त करें।

प्रिंसिपल:—

श्री पं० रा० आयुर्वेद कालेज
सीकर, राज०

श्री सनातनधर्म आयुर्वेद महाविद्यालय बीकानेर
प्रवेश सूचना

पूर्व वर्षोंकी तरह महाविद्यालय आगामी ७ जुलाईको खुलेगा। पिछले २० बीस वर्षोंसे यह महाविद्यालय राजस्थानमें आयुर्वेद विभागीय परीक्षा भिषग्वर तकका उच्च एवं आदर्श आयुर्वेद शिक्षण कार्य करता आ रहा है। पठन पाठनसे सम्बन्धित प्रायोगिक (प्राैक्टिकल) के सभी साधन विद्यमान हैं। यही कारण है कि इसका परीक्षाफल हमेशा सर्वोत्तम रहता आया है। विद्यालयका निजीभवन छात्रावास, तथा आरोग्यशाला है।

सुयोग्य एवं असमर्थ छात्रोंको विद्यालय द्वारा छात्रवृत्तियाँ भी प्रदान की जाती हैं। इस प्रकारकी सुविधाएं मिला देनेसे छात्रोंको यह सहायता प्रति छात्र आनुमानिक ३० रुपये तक हो जाती है। छात्रावासमें रहनेवाले प्रत्येक छात्रके लिए आवास रोशनी तथा प्रवेशार्थी छात्रोंको

आवेदन पत्र तथा नियमावली मंगानेपर निःशुल्क भेजे जाते हैं। छात्रवृत्ति देनेका निश्चय छात्रोंके विद्यालयमें आजानेके बाद ही उनसे मिलकर किया जावेगा।

प्रवेश योग्यता प्रथमा-वाराणसी, प्रवेशिका राजस्थान, अथवा मैट्रिक या हायर सेकेण्डरी उत्तीर्ण है। आवेदनपत्रके साथ प्राप्तांक सूचीकी सही प्रतिलिपि प्रस्तुत करनी चाहिये। सुयोग्य छात्रोंको राज्य सरकार द्वारा भी छात्र वृत्तियाँ दिलाई जाती हैं। प्रवेशके इच्छुक छात्रोंको अपने आवेदन पत्र निम्न हस्ताक्षर कृतीके पास शीघ्र भेजने चाहिये।

वैद्य-विद्याधर शर्मा, प्रिन्सिपल सनातन धर्म
आयुर्वेद महाविद्यालय, बीकानेर

अनुभूत योगमालामें विशेषांक

श्री नेहरू आयुर्वेदिक स्मृति अंकके लिये सब वैद्य वन्धु अपने दो चार अनुभूत योग लिखकर निम्न पते पर भेजें।

वैद्य कवि श्री कृष्ण त्रिवेदी
ईस्ट पार्क रोड, मानवपुराक, रोल बाग,
दिल्ली ५.

आवश्यकता है।

आयुर्वेद विश्व भारती गान्धी विद्या मन्दिर सरदार शहर राजस्थानमें चार प्राध्यापकों, चार प्रवक्ताओं तथा चार विवेचकोंकी:—

योग्यता—भिवगाचार्य (राजस्थान) प. एम. एम. (बनारस) या तत्सम परीक्षोत्तीर्ण। प्राध्यापक तथा प्रवक्ताके लिये पांच तथा दो वर्षका शैक्षणिक अनुभव कमशः अतिवर्त्य है। वेतन श्रृंखला कमशः २५०-१५-४००। १५०-१०-२२०। १००-५-१३५ मंहगाई भत्ता ३० रु० मासिक।

दो बी. एस. सी.- एक गणित तथा एक जीव विज्ञान। वेतन ११०-५-१३५ मंहगाई ३० रु० मासिक।

भिवक् या उपवैद्य परीक्षोत्तीर्ण दो उपवैद्योंकी। वेतन ५०-४-०० मंहगाई भत्ता २५ रु०

प्रामाणिक प्रतिलिपियों सहित ३० जून १९६५ से पूर्व आवेदन करें।

शुद्ध आयुर्वेदीय पाठ्यक्रमके विरुद्ध दुष्प्रचार

भारतके ऐलोपैथ डाक्टर तो आजसे नहीं बल्कि अंग्रेजी शासनकालसे ही अन्य चिकित्सा पद्धतियोंके विरोधी रहे हैं। स्वातिरिक्तके लिये उनके हृदयमें अपार द्वेष तथा घृणाके अलावा और कुछ नहीं है। अतः उनको विनष्ट करनेका कोई अवसर डाक्टरगण नहीं चूकते हैं। डाक्टरोंकी इस प्रवृत्तिका मूल कारण हैं असहिष्णुता। यह सदा ईर्ष्या और अज्ञानसे उत्पन्न होती है। चूंकि होम्योपैथी, प्राकृतिक चिकित्सा, जलचिकित्सा आदिका तो जुम्मा है। चार दिनसे घोड़ा मैदानमें आया है, फलतः अब तक आयुर्वेदको ही डाक्टरोंके दुष्ट स्वभावका शिकार बनना पड़ा है। यहाँ के डाक्टर आयुर्वेदके साथ अहितकुलम् का व्यवहार कर रहे हैं। राजशक्तिके भीतर डाक्टरोंका मान-सन्मान आज भी उसी प्रकार कायम है जैसा ब्रिटिश शासन कालमें था। इसलिये आयुर्वेदके हितार्थ बनायी गई कमेटियोंमें, शिक्षा संस्थाओंमें एवम् अन्यान्य महत्वपूर्ण स्थानोंमें वे अपना प्रवेश कर लेते हैं और शासनको आयुर्वेदके विरुद्ध प्रभावित किया करते हैं। यही कारण है जिससे वे आयुर्वेदको पश्चात्पद करनेमें सफल हो जाते हैं।

दूसरी ओर वैद्योपर दृष्टिपात कीजिये। संघटनमें ये यदुवंशियोंकी समता कर रहे हैं। इनमें जो सरकारी सेवारत हैं उनका आयुर्वेदके सम्बन्धमें अपना कोई मत नहीं होता है। जो अफसर की राय वही बन्दे की राय। इन दोनों बातोंका यह परिणाम होता है कि डाक्टरोंके सम्पर्कमें आनेवाले वैद्य भी अधिकांश उनके चक्करमें फँस जाते हैं। कहीं वे अल्पमतमें होनेके कारण डाक्टरोंके आयुर्वेद विरोधी कार्योंके देखा अनदेखा करते रहते हैं। कभी मिथ्या सम्मानके लालचमें डाक्टरोंका समर्थन करते हैं। कहीं जोविका की रक्षाके मोहमें पड़कर डाक्टरोंकी हाँ में ह मिलानेको विवश हो जाते हैं। आयुर्वेदिक विद्यालये और आयुर्वेदीय पाठ्यक्रमोंकी दुर्दशा तथा वैद्योंके अवततिके इतिहासका निर्माण ऐसे ही स्वार्थ परायण वैद्यों एवम् ऐलोपैथ डाक्टरोंके हाथोंसे हुआ है।

इसके अतिरिक्त वैद्योंमें एक नया वर्ग उभयज्ञ-वैद्योंका तैयार हो गया है। हम इनका आदर करते हैं और ये हमारे ही भाई हैं। परन्तु इनके द्वारा आयुर्वेदका उपकार कम हुआ है और अपकार अधिक। जिस प्रकार सूर्यका ताप उतना असह्य नहीं होता है जितना उसके तापसे उत्पन्न बालू कष्ट दायक होती है उसी तरह एलोपैथ डाक्टरोंसे हमें उतनी हानि नहीं हुई जितनी इनसे पहुँच रही है। ये शुद्ध आयुर्वेदका संघटित विरोध कर रहे हैं। खेद है कि स्वाथ वश या अज्ञान वश कुछ पुराने वैद्य भी इनके साथ सम्मिलित हो गये हैं। यद्यपि ये वैद्य ऐसे हैं जिनकी बानी और बाना आवश्यकतानुसार बदला करता है ये कभी मिश्र आयुर्वेदका झण्डा उठा लेते हैं तो कभी शुद्ध आयुर्वेदकी जय जयकार करने लगते हैं। इनके कौल-फैलका कोई भरोसा नहीं। फिर भी :—

बुद्धू मियां भी हजरते गाँधीके साथ हैं।

गो रवाक-मुरत हैं मगर आंधीके साथ हैं॥

इन नव्य विज्ञान दीक्षा दीक्षित बन्धुओंके आक्षेप इस प्रकार हैं :—

(१) श्री पं० शिवशर्मा स्वयं यह स्वीकार कर चुके हैं कि शुद्ध आयुर्वेद उनका एक स्टन्ट है। वैद्योंमें एक हलचल पैदा करनेके लिये यह नारा उन्होंने लगा दिया था। वे जानते हैं कि शुद्ध आयुर्वेद नहीं चल सकता। अब तो वे यहाँ तक कहने लगे हैं कि शुद्ध आयुर्वेद केन्द्रीय सरकारका एक पड्यन्त्र है जिसमें हम लोग फंस गये हैं।

(२) शुद्ध आयुर्वेदमें इतना पाठ्यक्रम नहीं है जो ५ वर्ष तक पढ़ाया जा सके। प्रैक्टिकल ज्ञानका नितान्त अभाव है।

(३) शुद्ध आयुर्वेदका पाठ्यक्रम चालू हो जानेसे सरकारी पदोंपर आसीन सभी उभयज्ञ वैद्य हटा दिये जायेंगे।

(४) शुद्ध आयुर्वेद पढ़नेके लिए छात्र ही नहीं प्राप्त होंगे।

(५) डिप्लोमा कोर्स ही सरकार प्रारम्भ कर रही है बिपी कोर्स नहीं।

(६) वेतनस्तर तथा अधिकार सरकार ने निर्धारित नहीं किया है।

(७) शुद्ध आयुर्वेदके लिये बजटमें पैसा नहीं है अतः यह सब सरकारका ढोंग है।

(८) शुद्ध आयुर्वेदके स्नातकोंको प्रसूति तथा शल्य कर्मकी आज्ञा नहीं मिलेगी।

(९) यदि आयुर्वेदका पाठ्यक्रम पूर्ण होता तो फिजिक्स कैमिस्ट्री आदिका समावेश उसमें क्यों किया जाता।

इस सब प्रकारका उद्देश्य यही है कि जनता वैद्य और सरकार शुद्ध आयुर्वेदके विरोधी बन जायें। मिश्र आयुर्वेदज्ञोंमें विभीषिका उत्पन्न कर उन्हें शुद्ध आयुर्वेदके विरुद्ध खड़ा कर दिया जाय।

वस्तुतः मिश्र आयुर्वेदके पक्षमें दिये गये ये तर्क अत्यन्त हीन बल हैं। जिन पाठकोंने मृत्युञ्जय आयुर्वेदका शुद्ध आयुर्वेदाङ्क एवम् परिशिष्टाङ्क ध्यान पूर्वक पढ़ा है उनके सम्मुख किसी समाधानकी आवश्यकता नहीं है।

हाँ, जहाँ तक श्रीमान् पं० शिवशर्मा जीका सम्बन्ध है। उनकी नेत्र नियती, विद्वता और प्रतिभा पर वैद्योंको विश्वास है। उनके व्यक्तित्वके प्रति पूर्ण आदर रखते हुये हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि भलेही शर्माजी ने शुद्ध आयुर्वेदका नारा किसी अन्यथा भाव से लगाया हो पर जिन हजारों वैद्योंने शुद्ध आयुर्वेदका समर्थन किया है उन्होंने सबे हृदयसे किया है। बहकावेमें आकर या धोखेमें पड़कर नहीं किया है। यदि यह सत्य भी हो कि श्री शर्माजी केन्द्रीय सरकारके पड्यन्त्रमें फंस गये हैं तो यह भी सत्य है कि किसी बड़ेसे बड़े पड्यन्त्रके भेदनकी क्षमता भी उनमें है। यह दुष्प्रचार भी वैद्योंकी दृष्टिमें कोई मूल्य नहीं रखता है। कि शुद्ध आयुर्वेदके सम्बन्धमें शर्माजी की राय बदल गयी है। वैद्योंने शुद्ध आयुर्वेदका समर्थन किया है, शर्माजीकी रायका नहीं। क्या विरोधी यह समझते हैं कि आजके श्री पं० शिवशर्माजी यदि कल जनाव सैय्यद शम्सुद्दीन बन जायें तो वैद्य भी अपना धर्म परिवर्तन करा लेंगे। वैद्योंने अनुभव किया कि ५० वर्षतक मिश्रित मार्गपर चलनेके बाद

भी आयुर्वेद विनाशके कगार पर ही खड़ा है। बिना शुद्ध अवलम्बके उसे भूतिसात होनेसे नहीं बचाया जा सकता। वैद्योंकी अन्तरात्मा ने शुद्ध आयुर्वेदकी आवश्यकता समझी और नान्यःपन्था मानकर उसका समर्थन किया। उन्होंने जो कुछ किया है वह सोच समझकर किया है। उन्हें अपने निर्णय पर पश्चात्ताप नहीं है।

शुद्ध आयुर्वेदमें पाठ्यक्रम ही नहीं है यह सूझ किसी मिश्र आयुर्वेदज्ञकी हो सकती है। इन्हें आयुर्वेदके पूर्ण रसको देखनेका अवसर ही नहीं मिलता है। ऐलोपैथि बहुत पाठ्यक्रममें यह सम्भव भी नहीं है। उनका सारा ध्यान ऐलोपैथीकी ओर केन्द्रित रहता है, आयुर्वेदकी ओर फूटी आँख देखनेका मौका नहीं लगता है। सितो-पलादि चूर्णमें भांग पड़ती है और आँखले दूधमें पकाकर च्यवनप्राशमें डाले जाते हैं यही उनका प्रेकटिकल ज्ञान होता है। अतः इस कथनपर हमें आश्चर्य नहीं है।

भय सदैव दुर्बलताका द्योतक होता है। हम उभयज्ञ वैद्योंको इतना कमजोर नहीं समझते हैं कि नौकरी छूट जानेकी बात सुनते ही वे विचलित हो जायेंगे और कुछ सोचविचार नहीं करेंगे। उनमें बहु-वैरे तो हमारे मित्र हैं। सगे सम्बन्धी हैं। वे जहाँ जहाँ हैं वहाँ अपना कार्य ईमानदारी और पूर्ण योग्यतासे सम्पन्न कर रहे हैं। फिर शुद्ध आयुर्वेदके समर्थक तो आयुर्वेदकी प्राण रक्षाके लिये तत्पर हैं। अपने भाइयोंकी जीविका छीननेकी बात सोच ही कैसे सकते हैं। न तो उनकी ऐसी परम्परा है और न इतना संकुचित दृष्टिकोण है।

शुद्ध आयुर्वेदके लिये गुजरात राज्यकी सरकारने जो कुछ किया है तथा जो कुछ कर रही है उसे जान समझ लेनेके बाद वेतनस्तर, अधिकार, आदिके सम्बन्धमें सन्देहकी अधिक गुंजायश नहीं रह जाती है। अधिकारोंकी प्राप्तिके लिये बाहुबल अपेक्षित है। वे माँगनेसे भी मिलते हैं और छीने भी जाते हैं। आजसे ५० वर्ष पूर्व, अंग्रेजी शासन कालमें जब आन्दोलन द्वारा मिश्र पाठ्यक्रम प्रारम्भ कराया जा सकता था तो अपने शासनमें उचित अधिकार हम नहीं प्राप्त कर

सकेगे यह मान बैठना कायरता है। फिर शल्य तो हमारे पंचकर्मोंमें से अन्यतम है।

वमौ विरेचने नस्ये वस्तौ शस्त्र क्रियासु च।

शस्यन्ते भिषजः सम्यक् निष्णाताः पंचकर्मसु॥

जहाँ तक हमारी जानकारी है उत्तर प्रदेशने मध्य-माको प्रवेश योग्यता मानकर डिप्लोमा कोर्सकी सत्ता ही समाप्त कर दी है। सुना है माननीय पं० दरबारी लालजी शर्मा अध्यक्ष विधान परिषदके प्रभावसे यह निश्चय हुआ है। इससे संस्कृत भाषाको प्रचार होगा। संस्कृतज्ञोंके सम्मुख आजीविकाका एक सुरक्षित क्षेत्र उपस्थित हो जायगा और आयुर्वेदपर श्रद्धा रखने वाले योग्य चिकित्सक देशको उपलब्ध होंगे।

उभयज्ञ चिकित्सकोंसे हमारा यह निवेदन है कि वे बीतीको बिसार दें। बहुमतके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर खड़े हों। पारस्परिक सहयोग द्वारा उत्तम श्रेष्ठको प्राप्त करें न कि लड़ें भिड़ें और कटुता उत्पन्न करें। साथ आयुर्वेदके धनी धोरियोंसे हमारा आपह है कि पार्थक्यकी भावनाको समाप्त कर दें। यदि पहिले से ध्यान दिया जाता उनके सुख दुःखमें आप हाथ बढ़ायें तो उभयज्ञ वैद्योंको अपना अलग संघटन न बनाना पड़ता। आजका कटुनापूर्ण वातावरण न होता।

आयुर्वेदको लोकप्रिय बनानेका लक्ष्य

राजस्थानमें चतुर्थ पञ्चवर्षीय योजनाके दौरान हर तीन ग्राम पञ्चायतोंके लिये कमसे कम एक आयुर्वेदिक दवाखाना खोलनेका लक्ष्य बनाया गया है। इस समय राज्यमें ७ हजारसे अधिक ग्राम पञ्चायते हैं।

हिसाब लगाया गया है कि इस कार्यके लिये कमसे कम ८८५ योग्य वैद्यों, १३५० नर्सों तथा कम्पाउण्डरोंकी जरूरत होगी। वर्तमान आयुर्वेद कालिजोंसे ये आवश्यकतायें पूरी नहीं हो सकती, अतः चौथी योजनाके दौरान एक और आयुर्वेद कालिज खुलेगा।

उक्त अवधिमें राज्यमें तीन फार्मेशियाँ भी स्थापित होंगी।

राज्यमें ७५० आयुर्वेदिक दवाखानोंकी इमारतें बनानेकी साका द्वारा पंचायत समितियोंको सहायता

अनुदान दिये जायेंगे।

गांव वालोंको चिकित्सा-सुविधायें जुटानेके लिए सफरी आयुर्वेदिक दवाखाने खोलनेका भी प्रस्ताव है।

राज्यमें आयुर्वेदके विकासार्थ पौने दो करोड़ रुपएकी एक रूपरेखाका प्रस्ताव किया गया है।

आयुर्वेदपर पूर्वापेक्षा आज अधिक संकट

डा० सम्पूर्णानन्द

“आजके युगमें आयुर्वेदको जिन परिस्थितियोंका सामना करना पड़ा है, वह पठानों और मुगलोंके जमानेके हमलोंसे भी बुरी है। पठानों व मुगलोंके जमानेमें इस शास्त्रकी उपेक्षा हुई, किन्तु इसका खुल कर विरोध किसी ने नहीं किया। यूनानी चिकित्सा-पद्धतिको प्रोत्साहन अवश्य मिला, परन्तु आयुर्वेदको समाप्त कर देनेकी बात किसी ने नहीं उठायी। किन्तु आज तो आयुर्वेदको खुले विरोधका सामना करना पड़ रहा है।” ये हैं वे उद्गार जो राजस्थानके राज्य-पाल डा० सम्पूर्णानन्द ने राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन (पंजीकृत) जोधपुरके तृतीय अधिवेशनका उद्घाटन करते हुए प्रकट किए।

उन्होंने कहा कि आयुर्वेद केवल व्यक्तिके लिए नहीं, समष्टि के लिए है। यह ऐसी कल्याणकारी पद्धति है जिसे जानने वाला मानव मात्रकी शारीरिक और आध्यात्मिक सेवा करता हुआ अपने जीवनको पवित्र बना सकता है। इस शास्त्रकी उन्नतिके लिए जितने भी प्रयत्न किए जायें वे सब उचित होंगे।

राज्यपालने सहस्रोंकी संख्यामें उपस्थित वैद्यों और आयुर्वेदमें अभिरुचि रखने वाले व्यक्तियोंको सम्बोधित करते हुए कहा कि एक समय था जब इस देशमें हिन्दु साम्राज्य था, आयुर्वेद जीवित शास्त्र था और निरन्तर उन्नति कर रहा था। नवीन बातोंका समावेश करनेकी शक्ति इस विभागमें थी और देशमें ही नहीं तिब्बत और श्रीलंका आदि देशोंमें भी प्रवेश करके मानवकी सेवा इस विज्ञानने की। राजनीतिक घटनाएँ घटी जिनसे भारतीय प्रतिभाका उन्नति पक्ष प्रत्येक दिशामें अवरुद्ध हो गया। ज्योतिष, गणित और अ.यु. विज्ञानकी उन्नति के बावजूद आयुर्वेदकी

बात तो दूर किन्तु समयकी उन थपेड़ोंसे जो बच रहा, उसके लिए उस समयके विद्वान धन्यवादके पात्र हैं।

उन्होंने कहा कि एलोपैथी पद्धतिको अंग्रेजोंके जमानेसे मिला विशेष स्थान आज भी कायम है। इस पद्धतिको जानने-मानने वाले आयुर्वेदकी उन्नतिमें अपनी क्षति मान कर इसका विरोध करनेमें लगे हुए हैं। दुर्भाग्यसे इसे सरकारका सहारा मिला हुआ है मुकाबला करनेमें धन्वन्तरि जैसे वैद्यको भी कठिनाई हो सकती है। विचित्र बात तो यह है कि आयुर्वेदके लिए व्यय होनेवाला धन भी डाक्टरोंके हाथोंमें रहता है।”

उन्होंने कहा कि “सौभाग्यसे कुछ लोग आगे बढ़े हैं, कुछ लोग उनकी सहायता करना चाहते हैं। प्रयत्न है कि शुद्ध आयुर्वेदकी शिक्षा दी जाय। इन कार्योंमें प्रादेशिक सरकारें बहुत-कुछ कर सकती हैं। परन्तु केन्द्रीय सरकार जब तक इस विज्ञानमें सहायक नहीं होगी, तब तक कार्य पूरा नहीं हो सकेगा।”

राज्यपालने वैद्योंको संगठित होकर कार्य करनेकी सलाह दी और कहा—यदि समय रहते इस ओर ध्यान नहीं दिया गया तो जो सफलता मिल सकती है वह असफलतामें बदल जायगी।

राजस्थानमें डाक्टरों व नर्सोंकी भारी कमी

कार्यकारी दलकी रिपोर्ट

जयपुर २४ मई। यहाँ ज्ञात हुआ है कि चौथी पंचवर्षीय योजनाके लिए चिकित्सा व स्वास्थ्य कर्मचारियोंके लिये कार्यकारी दलने सरकारको भेजी गयी अपनी रिपोर्टमें सुझाव दिया है कि योजनाकालमें राजस्थानमें चिकित्सा व स्वास्थ्य कर्मचारियोंकी वर्तमान कमीको पूरा करनेके लिये प्रशिक्षणकी सुविधाएँ बढ़ाना बहुत जरूरी है।

इस रिपोर्टके अनुसार प्रशिक्षणकी सुविधाएँ बढ़ानेके बावजूद डाक्टरों, वैद्यों, कम्पाउंडरों, नर्सों, शिष्यों आदिकी संख्या मांगके अनुपातमें नहीं बढ़ रही है और वर्तमान व्यवस्थाके अनुसार निकट भविष्यमें बढ़नेकी सम्भावना नहीं है। इसको देखते हुए कार्यकारी दलकी रिपोर्टमें सुझाव दिया है कि प्रशिक्षण की सुविधाएँ चौथी योजना

में बढ़ायी जानी चाहिए। जिससे पांचवी योजनामें भी कमी न पड़े।

डाक्टरोंकी भर्ती

कार्यकारी दलने सुझाव दिया बताया जाता है कि प. बंगाल जैसे राज्योंसे डाक्टर अधिकसे अधिक संख्यामें भर्ती किये जायं, अवकाश ग्रहणकी आयु ६० कर दी जाय और अवकाश प्राप्त स्वस्थ डाक्टरोंको पुनः कामपर लगाया जाय। दलने यह भी सुझाव दिया है कि स्टाफ कम कंपाउण्डरोंके प्रशिक्षणके लिए दो और केन्द्र खोले जायं। आयुर्वेदिक वैद्यों और हकीमोंकी कमी पूरी करनेके लिये एक और आयुर्वेदिक कालेज खोला जा सकता है जिसमें तीसरी योजनाके अंतिम वर्षमें कमसे कम पचास छात्र प्रवेश पा सकें।

रिपोर्टके अनुसार १९६५-६६ में ३२६ डाक्टरोंकी कमी रहेगी। इस प्रकार नर्सों, दाइयों और कम्पाउण्डरों की कमी रहेगी।

राजस्थानमें आयुर्वेद अकादमी

स्थापित करनेका फैसला: १ लाखका बजट मंजूर जयपुर। बोर्ड आफ इन्डियन मैडिसिन, राजस्थानके कार्यालयमें महन्त मुरली मनोहर शरणकी अध्यक्षतामें हुई बोर्डकी बैठकमें सर्व सम्मतिसे राजस्थान आयुर्वेद यूनानी चिकित्सा अकादमीकी स्थापनाका निश्चय किया गया और अकादमीकी नियमावली व लगभग १,००,०००, रु० का प्रारम्भिक बजट स्वीकृत किया गया।

निरन्तर ५ घण्टे तक इस बैठकमें काफी विचार-विमर्शके बाद अकादमीके कार्य एवं उद्देश्य व कार्यक्रमों को स्वीकृत किया गया। भारतीय चिकित्सा विज्ञान को व्यापक रूपसे प्रसारित करनेके लिए स्वस्थ व सतन्त्र भारतीय चिकित्सा विज्ञानकी विचार धाराको परिपुष्ट करना अकादमीका निर्देशक सिद्धांत स्वीकृत किया गया।

यह अकादमी बोर्ड आफ इन्डियन मैडिसिन, राजस्थानके अन्तर्गत होगी, और बोर्ड व राज्य सरकार द्वारा मनोनीत "संचालन समिति" द्वारा संचालित की जायगी।

सीकर जिलावैद्यसभाके वार्षिक चुनाव

सीकर (निस) सीकर जिला वैद्य सभाके वार्षिक

चुनावोंमें वैद्य सतीशचन्द्र अध्यक्ष, वैद्य शिवप्रसाद उपाध्यक्ष और श्री श्यामसुन्दर मंत्री चुने गये।

नवनिर्वाचित कार्य समितिने एक प्रस्ताव द्वारा सीकरके परशुरामपुरिया आयुर्वेदिक कालेजकी सरकारी आर्थिक सहायतामें ५०००) की कटौती करनेका विरोध किया और सरकारसे अनुगोष किया कि कालेजमें महत्वको देखते हुए या तो सहायता पूर्ववत् कर दी जाय या कालेजको सरकार स्वयं चलाये।

पं० रूपराम शास्त्री आयुर्वेद औषधालय का वार्षिकोत्सव

पिलानी। १६ जून ६५। आज यहां पं० रूपराम शास्त्री आयुर्वेद औषधालयका वार्षिकोत्सव सूरजगढ़के पीयूषपाणि चिकित्सक वैद्य छोटेलाजजी शर्मा प्राणाचार्यकी अध्यक्षतामें सम्पन्न हुआ। इस अवसरपर पं० मनसाराम शर्मा ने औषधालयमें विद्यामार्तण्ड पं० रूपरामजी शास्त्रीके चित्रका अनावरण किया और श्रीरामजी मित्तल एम० ए० ने पंडितजीकी अपनी श्रद्धाजलि भेंट की।

अध्यक्ष महोदयने अपने भाषणमें बताया कि स्वर्गीय पंडितजीने जीवन भर संस्कृतका प्रसार, वेदाध्ययन, हरिजन सेवा, खादी और आर्यसमाजोपयोगी कार्य किये थे। उनके पद चिन्हों पर चल कर औषधालय द्वारा जनता जनार्दनकी सेवा करना अपना परम कर्त्तव्य है। आचार्य नित्यानन्दने औषधालयकी समस्त योजना पर प्रकाश डाला और अन्त में सबको धन्यवाद दिया। मंत्री—आयुर्वेद सहकार भारती

बीकानेर जिला वैद्य सभाका निर्वाचन सम्पन्न बीकानेर २३ मई। राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलनके मन्त्री एवं निर्वाचनाधिकारी वैद्य श्री मकखन लाल शास्त्री की देख रेखमें बीकानेर जिला वैद्य सभाका निर्वाचन निर्विरोध सम्पन्न हुआ। जिसमें वैद्य श्री जयशंकर देवशंकरजी शर्मा अध्यक्ष, वैद्य श्री इन्द्राजमल आचार्य एवं वैद्य श्री लक्ष्मीचन्द्र यति उपाध्यक्ष, वैद्य श्री देवेन्द्रदत्त शर्मा मन्त्री, वैद्य श्री हरिप्रसाद सारस्वत एवं वैद्य श्री विद्याधर शास्त्री एम. ए. सह मन्त्री तथा राजवैद्य श्री त्रिकोलचन्द्र व्यास कोषाध्यक्ष निर्वाचित हुए।

देवेन्द्र शर्मा

मन्त्री—बीकानेर जिला वैद्य सभा

अयोध्या शिवकुमारी आयुर्वेद महाविद्यालय, वेगूसराय, (मुंगेर)

१९६५ का वार्षिक परीक्षा फल

सूचना ५३/६५

सूचित किया जाता है कि उक्त कालेज वार्षिक परीक्षा प्रथम, द्वितीय एवं चतुर्थ वर्षके निम्नांकित छात्र वरीयता क्रमसे उत्तीर्ण घोषित किये गये हैं।

जी० ए० एम० एस० प्रथम वर्ष

१. रविप्रकाश सिंह, २. रामनिवास, ३. फूलचन्द्र सिंह, ४. चन्द्रभान सिंह, ५. रामचन्द्र सिंह, ६. विद्याभूषण मेहता, ७. श्यामनारायण कामत, ८. चन्द्र मोलेश्वर मिश्र, ९. रामसहाय यादव, १०. घनश्याम पाठक, ११. नूनूलाल मिश्र, १२. जगन्नाथ त्रिपाठी, १३. रामपाल वर्मा, १४. चितरंजन प्रसाद अम्बष्ट, १५. जयप्रकाश, १६. मालती लता सिंहा, १७. महेन्द्र प्रसाद गुप्त, १८. सदानन्द चौधरी, १९. श्रीधर मिश्र, २०. कपिलदेव सिंह, २१. ओमप्रकाश साह, २२. पशुपति मिश्र, २३. उमेशचन्द्र झा, २४. शत्रुघ्न झा, २५. वासुदेव शर्मा, २६. वासुदेव प्रसाद सिंह, २७. स्नेहलता सिन्हा, १८. रामपवित्र ठाकुर, २९. रामाशंकर राय, ३०. नवलकिशोर सिंह, ३१. गणेशलाल विश्वकर्मा, ३२. शंभुमुनि, ३३. शिवनारायण सिंह।

जी० एम० एम० एस० द्वितीय वर्ष

१. हरिनारायण प्रसाद, २. शिवनन्दन प्रसाद यादव, ३. रामचन्द्र चौधरी, ४. स्वामीनाथ मिश्र, ५. सत्यवान अवस्थी, ६. अपूर्वचन्द्र चक्रवर्ती, ७. कामेश्वर सिंह, ८. रामचन्दन सिंह, ९. परमानन्द ठाकुर, १०. प्रतापनारायण सिंह, ११. धीरेन्द्र मिश्र, १२. युगलकिशोर सिंह।

जी० ए० एम० एस० चतुर्थ वर्ष

१. उमेशचन्द्र पाठक, २. दामोदर प्रसाद सिंह, ३. उमानाथ सिंह, ४. मो० नूरआलम, ५. अनूपलाल मेहता, ६. अजाप्रसाद मंडल, ७. ताराकान्त मिश्र, ८. भोलाशंकर मिश्र, ९. पंचेश्वर मिश्र, १०. नागेश्वर मिश्र, ११. मदनमोहन मिश्र, १२. रामाशेष राय

१३. उदितनारायण सिंह, १४. मो० अमीर खाँ, १५. गिरिन्द्र मोहन पाठक।

जिला अयोध्या शिवकुमारी आयुर्वेद महाविद्यालय, वेगूसराय, (मुंगेर) महाविद्यालय अगामी दिनांक २८ मई १९६५ से १४ जुलाई ६५ तक, प्रीष्मावकाशके उपलक्षमें बन्द रहेगा। दिनांक १५ जुलाई ६५ को महाविद्यालयका कार्य नियमानुसार प्रातः १०.३० बजेसे प्रारंभ होगा।

प्राचार्यः—

जगन्नाथ बहुगुणा
२६/५/६५

आयुर्वेदिक चिकित्साको प्रोत्साहन दे

गुप्त द्वारा सहारनपुरमें औषधालय भवनका-
शिलान्यास

सहारनपुर (निस)। श्री हिन्दू पंचायती धर्मार्थ आयुर्वेदिक औषधालयके नये भवनका शिलान्यास भू. पू. मुख्यमंत्री श्रीचन्द्रभानु गुप्तने किया। इस अवसरपर उन्हें एक मानपत्र भेंट किया गया। श्री गुप्तजीने कहा—‘‘मंत्री तथा मुख्यमंत्रीकी हेतुयत्से काफ़ी समयतक मैंने स्वास्थ्य विभागको देखा है और स्वास्थ्य समस्याके समाधान सम्बन्धी अपने अनुभवोंका उपयोग किया है। अपने समयमें मैंने चिकित्साकी सभी पद्धतियोंको पनपानेका प्रयास किया। आयुर्वेदका महत्त्व कम नहीं हो सकता ऐसी भी बीमारियाँ हैं, जिनका इलाज केवल आयुर्वेद द्वारा ही सम्भव है। आवश्यक है कि हमारी नीति कठ मुल्लापन की न हो और हम दूसरी पद्धतिको अवैज्ञानिक सिद्ध करनेका प्रयास न करें।

डाक्टरोंका अभाव

श्री गुप्तने बताया कि प्रदेशमें लगभग ४०० ऐसे अस्पताल हैं, जहाँ डाक्टर ही नहीं है। योग्य डाक्टर देहातोंमें नहीं जाना चाहते, क्योंकि वहाँ बिजली, सड़क स्कूल आदि आधुनिक आवश्यक सुविधाएँ नहीं हैं। डाक्टरोंकी कमी तथा अंग्रेजी दवाके बढ़ते हुए दामोंका देखते हुए भी आवश्यक है कि हम चिकित्साकी आयुर्वेद-पद्धतियाँ अधिकाधिक पनपानेका प्रयास करें।

शुभ सूचना

हमारे एजेंटों व ग्राहकों को सूचित करते हर्ष होता है कि अब निम्न लिखित २७ आसव विक्रीके लिये तैयार हो गये हैं। जितना चाहें उतना माल मंगा सकते हैं।

- | | | |
|------------------------|------------------------|--------------------|
| १. अरविन्दासव | १०. चन्दनासव | १९. पुनर्नवासव |
| २. अभयारिष्ट | ११. त्रिफलारिष्ट | २०. फलासव |
| ३. अमृतारिष्ट | १२. दशमूलारिष्ट | २१. वन्बूलारिष्ट |
| ४. अजुनारिष्ट | १३. देवदार्वारिष्ट | २२. भृंगराजासव |
| ५. अश्वगंधारिष्ट | १४. द्राक्षासव (विशेष) | २३. रक्तशोधकारिष्ट |
| ६. ऊशीरासव | १५. द्राक्षासव (नं० १) | २४. लोघ्रासव |
| ७. कुमार्यासव (हर्ड) | १६. द्राक्षारिष्ट | २५. लोहासव |
| ८. कुमार्यासव (भस्मसह) | १७. पत्राङ्गासव | २६. सारिवासव |
| ९. खदिरारिष्ट | १८. पिप्पल्यासव | २७. खजूरासव |

❀ सुवर्णप्रधान दवाओंमें निम्न दवायें तैयार हैं ❀

योगेन्द्ररस, सुवर्णमालिनीवसंत नं० १, सुवर्णमालिनीवसंत (विशेष) मृतशेखर रस, बृहत्सुवर्णमालिनीवसंत तैयार होगये हैं।

व्यवस्थापक—

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा (राजस्थान)

* ग्राहकोंको आवश्यक सूचना *

सितम्बर मासमें जिनका वार्षिक चन्दा समाप्त होने वाला है। अपना चन्दा आगामीपत्रके लिए जल्दी भेज दें। रुपया भेजनेपर पत्रिका वन्द न होगी बरगुर सदा उनको मिलती रहेगी। —सम्पादक

July. 1965.

Swasthya

Regd No. J. 2.

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद मवन कालेड़ा (अजमेर) की पित्त एवं उष्णता शामक उत्तम औषधियां

(१) मुक्तापिष्टी—उत्तम बसराई मोतीकी यह पिष्टी मधुर एवं शीतल होनेसे वात एवं पित्तक शमनकर हृदय, मस्तिष्क, तथा फुफ्फुसको बलवान बनाती है तथा रस, रक्त, शुक्र और ओजोवर्द्धक है। क्षयज ग्रन्थोंमें उत्तम-वर्टिकाभरण (Calcification) करती है। अम्लपित्त, समस्त शरीरका सन्ताप, मूत्रदाहको नष्ट कर रक्तस्रावको बन्द करती है। भ्रम, मूर्च्छा, घबराहट, निद्रानाश, उन्माद और हृदयके रोगोंमें अद्भुत लाभ करती है।

(२) ब्राह्म रसायन (सुवर्णयुक्त विशेष)—बुद्धि-स्मृति-मेधावर्द्धक, उत्तम रसायन, शक्तिप्रद, उदरशोधक। बालक, वृद्ध, युवा, स्त्री पुरुष सबके लिए हितावह है।

(३) कामदुधा रस—यह उत्तम बसराके मोती, प्रवालपिष्टी, गिलोयसल आदि प्रधान रस होनेसे शीतवीर्य, मधुर एवं वातपित्तका संशामक तथा शक्तिदायक है। हृदय और मस्तिष्कको बलवान् बनाता है। जीर्णज्वर, सर्वांग सन्ताप, अम्लपित्त, मूर्च्छा, श्वेत रक्त प्रदग्, सोमरोग तथा सगर्भा स्त्रियोंका वमन नष्ट करनेमें लाभप्रद है।

(४) बृहत् सुवर्णमालिनी वसन्त—सुवर्ण, मुक्ता, केसर, कस्तूरी, गोरोचन, शतपुटी नागभस्म तथा सहस्रपुटी अभ्रकभस्म यह विशेष योग सुवर्णमालिनी वसन्त की अपेक्षा गुणोंमें अत्यधिक उत्कृष्ट प्रमाणित हुआ है। जीर्णज्वर, राजयमा, शुक्रक्षय, अग्निमांघ, यकृद्दौर्बल्य, पाण्डु तथा रक्ताल्पतामें शीघ्र चमत्कारी प्रभाव दिखता है।

(५) मृतशेखर रस (सुवर्णयुक्त)—वातप्रकोप तथा पित्तकी अम्लता और तीक्ष्णताका शामक है। भ्रम, निद्रानाश, अम्लपित्त, खट्टे और गरम वमन, अम्लोद्गार, गलदाह और शीतपित्तमें विशेष लाभकारी है।

(६) नवरत्नकल्पामृत रस—नवरत्नोंकी पिष्टीसे निमित्त यह रस एक वर्ष तक कल्परूपमें लेनेसे शरीरको जरा, वार्द्धक्य और क्षीणतासे मुक्त कर अद्भुत बलशाली बना देता है। जीर्णज्वर, क्षय, मधुमेह, श्वाम, काम, प्रमेह, पाण्डुता और रक्ताल्पतामें पूर्ण लाभकारी है।



अङ्क १]

भाद्रपद शुक्ल, ६ विक्रम सं० २०२२

[मितम्बर १]

न हि सर्वमनुष्याणां सन्ति सर्वपरिच्छदाः ।
 न च रोगा न बाधन्ते दरिद्रानपि दारुणाः ॥
 यद्यच्छक्यं मनुष्येण कर्तुमौषधमापदि ।
 तत्तत्सेव्यं यथा शक्ति वसनान्यशनानि च ॥
 चरक । सूत्रस्थान । अ० १५ । श्लो० २२-२३ ॥

सभी मनुष्योंके पास सब प्रकारके साधन नहीं होते । साथ ही यह बात भी नहीं है कि धन हीन पुरुषोंको दारुण रोग न होते हों । फिर भी स्वस्थताकी प्राप्ति और आवश्यक कार्य करना तो सभीके लिए अनिवार्य है । अतः साधनहीन पुरुषोंको भी आपत्तिके समय सामर्थ्यानुसार औषध करनी ही चाहिये और यथाशक्ति वस्त्रोंको धारण करना और भोजनका सेवन भी करना चाहिये ।

विद्वान् लेखकोंसे

१. मासिक 'स्वास्थ्य' में आयुर्विज्ञानसे सम्बद्ध अनुसन्धान, अन्वेषण, विशेष विचार, शास्त्रीय पर्यालोचन विषयक तथा सर्वहितकारी स्वास्थ्य सम्बन्धी लेख एवं सामग्री प्रकाशित की जाती है।
२. उत्तम उपादेय लेखोंपर शक्यनुसार पुरस्कारकी व्यवस्था भी की गई है।
३. जो लेख 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ भेजे जावें वे कागजके एक ओर स्पष्ट लिखे हुए होने चाहिये जिसमें कि लेख शुद्ध रूपमें प्रकाशित हो सके।
४. लेखोंमें जो उद्धरण आदि दूसरे ग्रन्थों, अन्य लेखकोंके लेखों अथवा पुस्तक आदिसे लिये जावें उनका निर्देश, लेखकोंके सदाचारके अनुसार, अवश्य करना चाहिये।
५. जो लेख 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ स्वीकृत और पुरस्कृत किए जाते हैं उनका प्रकाशन 'स्वास्थ्य' में प्रकाशित होनेसे पूर्व अन्यत्र न होना चाहिये। उनके अन्यत्र प्रकाशित करानेके लिए भी 'स्वास्थ्य' सम्पादककी स्वीकृति लेना उचित है।
६. जिन लेखोंके प्रकाशनमें हम असमर्थ हैं उन्हें शीघ्र ही लौटा देना हम अपना कर्तव्य समझते हैं। ऐसी स्थितिमें पोस्टेजके टिकट प्राप्त होनेपर दोनों ओर ही सुविधा रहती है।

विशेष सूचना

भविष्यमें 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ लेख एवं सभी प्रकारकी समाचार आदि सामग्री सुविधार्थ निम्न लिखित पतेपर भेजनी चाहिये।

श्री वैद्य ब्रह्मानन्द त्रिपाठी,
प्रधान सम्पादक—'स्वास्थ्य'
आनन्द चिकित्सा सदन, केसरगंज,
अजमेर

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

नार्थार्थ

नापि कामार्थ

अथ भूतदयां प्रति

भवनके सभी प्रेमी, ग्राहकों और अनुग्राहक जनोंको यह तो भलीभाँति विदित है कि भवनकी प्रवृत्तियोंका उद्देश्य—

न तो धन कमाना है ।

न किसी लौकिक कामनाकी पूर्ति करना है ।

अपितु, प्राणियोंके प्रति दया और प्रेमके भावसे प्रेरित होकर इन सब प्रवृत्तियोंका संचालन मात्र परोपकारके लिये किया जाता है । इसकेद्वारा होने वाले लाभका उपयोग परोपकारी कार्योंमें किया जाता है ।

एतदर्थ औषधोंके निर्माणमें विशेष प्रयत्न स्वाभाविक है । भवनकी अनेक औषधियाँ विशिष्ट रूपसे शोधित एवं संस्कृत द्रव्योंके योगसे विशेष प्रक्रियाद्वारा उत्तम प्रभावशाली ढंगसे विशेष अवधानपूर्वक निर्मित होती हैं । औषध निर्माणमें निम्न बातोंका विशेष सतर्कतासे ध्यान रक्खा जाता है ।

१. औषधोंमें प्रयुक्त होने वाले द्रव्य, चाहे वे कितने ही मूल्यवान् हों, पूरी मात्रामें विधानके अनुसार ही सम्मिलित किये जाते हैं ।
२. इसलिए औषध यदि बनाई जाती है तो उसमें सभी द्रव्य उचित मात्रामें होते ही हैं । यदि कोई द्रव्य कारणवश नहीं मिलता तो वह औषध नहीं बनाई जाती ।
३. सभी औषधियोंका निर्माण शास्त्रीय, अनुभूत विधिसे होता है ।
४. कोई सुवर्ण आदि द्रव्य यदि प्राप्त नहीं होते तो उनकी प्राप्तिके लिए चाहे जितनी हानि हो कभी अनुचित प्रयत्न करनेका विचार भी नहीं किया जाता ।

इस प्रकार शुद्ध साधनोंसे, शुद्ध द्रव्योंसे, शुद्ध शास्त्रीय विधिसे उत्तमसे उत्तम औषधियोंका निर्माण किया जाता है ।

निश्चय ही जो महानुभाव भवनकी औषधियोंका प्रयोग करते हैं वे स्वास्थ्य प्राप्तिके अतिरिक्त भवनके लोकोपकारक कार्योंमें भी भागीदार होते हैं ।

व्यवस्थापक—

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन

स्वास्थ्य

इस अंक में

*

—संचालक—

अध्यक्ष, ट्रस्टवोर्ड,

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेड़ा-कृष्णगोपाल

*

प्रधान सम्पादक,

वैद्य पं० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी बी. ए.

आयुर्वेद शिरोमणि, आयुर्वेदशाचार्य

*

सं० सम्पादक

वैद्य पं० बद्रीनारायण शर्मा

आयुर्वेदशाचार्य

*

प्रकाशक एवं मुद्रक

पं० नवरत्नमल जोशी

व्यवस्थापक-कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन

*

मुद्रणालय

कृष्णगोपाल मुद्रणालय

कालेड़ा-कृष्णगोपाल

१. राष्ट्रकी समृद्धिके लिये ३
२. सम्पादकीय—द्वितीय दशा, वैद्योंका सामयिक कर्त्तव्य, श्री स्वामीजी महाराजका स्वास्थ्य ४
३. दीर्घायुष्यकी समस्या और उसका प्राचीन समाधान—कुमारी मनोरमा ९
४. मनोदोषोंकी सञ्चयादि छः अवस्थाओं एवं दोषभेदोंकी कल्पना क्या संगत है ? आचार्य श्री सुदेवचन्द्र 'पाराशरी' १३
५. विश्वका प्रमुखरोग—रक्तचापवृद्धि पं० श्री शिवशङ्करात्मज गौरीशङ्कर १७
६. श्वासरोगकी चिकित्सा—वैद्य सुरेशचन्द्र शर्मा १९
७. कुकूणक, शिशुओंका एक नेत्ररोग—रायजादा श्री जगदम्बाप्रसाद २१
८. अश्मरी—श्री कृष्णगोपाल गुप्त २३
९. अनुभूत योग—पीपल बूटी द्वारा अफीमविषपर विजय श्री गदाधर वर्मा 'गन्तु' २८
१०. भोजनसे अरुचि होजानेपर—श्रीमती सुमित्रादेवी अग्रवाल ३१
११. समाचार समीक्षण—श्री नारद ३३
- हिरोशिमा परमाणु बमके परिणाम, बच्चोंको दूधकी आवश्यकता नहीं रही, प्राकृतिक चमत्कार, गोली भयङ्कर हो सकती है, राजाजी भी बोले, एलोपैथिक औषधियोंके कारखाने, लूप्का चमत्कार, नए कारखाने, एक नवीन रोग, ३९
१२. चिकित्सा परामर्श— ४२
१३. आयुर्वेद जगत्— ४७
१४. नीरक्षीर (साहित्य समालोचना)



श्रीधन्वन्तरये नमः

स्वास्थ्य

(स्वास्थ्य, सुमति, सुख और शान्तिके मार्गका प्रदर्शक मासिक पत्र)

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः ।

यश्च सर्वभयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

वर्ष १३. अङ्क १]

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

[सितम्बर १९६५]

राष्ट्रकी समृद्धिके लिए

ओम् । ऊर्जे त्वा बलाय त्वोजसे सहसे त्वा ।

अभिभूयाय त्वा राष्ट्रभूत्याय पर्यूहामि शत शारदाय ॥

अथर्ववेद । काण्ड १६ । सूक्त ३७ । मन्त्र ३ ॥

(हे अग्ने)

ऊर्जे त्वा,

बलाय त्वा,

ओजसे सहसे त्वा,

अभिभूयाय त्वा,

राष्ट्रभूत्याय त्वा,

शत शारदाय

पर्यूहामि ।

समस्त ज्ञान, विज्ञानके प्रकाशक भगवन् !

अन्नादि द्वारा पोषण प्राप्त करनेके लिये मैं आपका आश्रय लेता हूँ ।

शारीरिक, आत्मिक बलकी उपलब्धिके लिए आपकी उपासना करता हूँ

ओज, पराक्रम और शत्रुका धर्षण करनेके लिए मैं आपके अद्विती

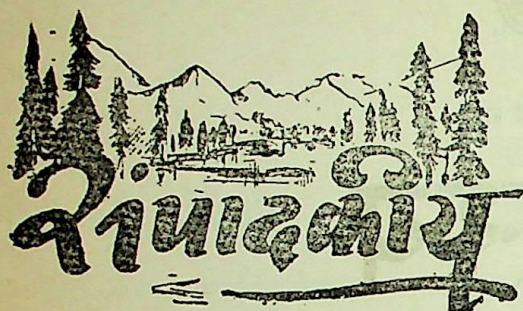
पराक्रमकी कामना करता हूँ ।

दुष्ट एवं अविचारशील आततायी शत्रुओंके पराभवके लिए,

राष्ट्रके भरण, पोषण, समृद्धि और उन्नतिके लिए आपसे प्रार्थना करता हूँ

प्रभो, मैं राष्ट्रके सभी जनोके लिए, सज्जनों और सुकर्म रत पुरुषोंके लि

कमसे कम सौ सौ वर्षके स्वस्थ जीवनके लिए आपसे याचना करता हूँ ।



दयनीय दशा



लोग बहुत प्रसन्न हैं कि आयुर्वेदकी उन्नति हो रही है। बात भी ठीक ही है। सरकार इस ओर प्रयत्न कर रही है। आयुर्वेदीय सेवा संस्थाओंका विस्तार हो रहा है। वैद्योंकी एक बड़ी संख्या सरकारी संस्थाओंमें काम कर रही है। सरकारकी ओरसे अनुसन्धानपर भी बल दिया जा रहा है। अनुसन्धान संस्थाओंके स्थापित करनेका भी प्रयत्न किया जा रहा है। निश्चय ही इन सभी कार्योंमें सहयोगी एवं सहायक जन धन्यवाद एवं बधाईके पात्र हैं। सरकारको भी इसके लिए धन्यवाद न देना अपने कर्तव्यकी भारी अवहेलना ही होगी।

फिर भी हम ऐसा अनुभव कर रहे हैं कि आयुर्वेदिक चिकित्साका पूर्वसे ही संकुचित क्षेत्र अब पहिलेकी अपेक्षा भी अधिक संकुचित होता जा रहा है। यह बात दिनके प्रकाशके समान सबको ज्ञात है कि शल्य एवं शालाक्य चिकित्सापर वैद्योंका अधिकार नहीं है। इसमें दोष किसका है यह यहां विचार नहीं करना है। प्रसूति तन्त्रपर भी उन्हीं लोगोंका अधिकार है जिनके पास आज इसके साधन हैं। विषतन्त्रमें वैद्य आगे बढ़ ही नहीं सकते क्योंकि वह विधानकेद्वारा एक निषिद्ध क्षेत्र है। संक्रामक रोग

तब वह क्षेत्र कौनसा है जिसमें वैद्यका कार्य रह जाता है। स्पष्ट ही वह क्षेत्र कायचिकित्साका वह शेष भाग ही है, जो कि नवीन नियमों, व्यवस्थाओं और सामान्य विश्वासके अनुसार दूसरे चिकित्सकोंके क्षेत्रमें जानेसे अवशिष्ट है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस संकुचित क्षेत्रमें वैद्य नवीन चिकित्साविधिको सब प्रकारसे पीछे छोड़कर बहुत आगे बढ़े हुए हैं। आज भी जिन शारीर रोगोंकी चिकित्सा वैद्य कर सकते हैं उनका प्रतिकार नवीन चिकित्सापद्धतिसे नहीं हो पाता। परन्तु हमें जो आश्चर्य है वह यही है कि यह अतिसंकुचित क्षेत्र भी वैद्य जीके हाथसे शीघ्र ही खिसकने वाला है।

आज जिसको अनुसन्धान नाम दिया जाता है वह आयुर्वेदके विषयमें तो केवल प्राचीन औषधोंका नवीन रूपसे परीक्षण या पुनर्मूल्याङ्कन मात्र है। इस पुनर्मूल्याङ्कनसे आयुर्वेद किसी नवीन औषध द्रव्य अथवा नवीन औषध योगकी वृद्धि तो होती नहीं है। अपितु होता इसके विपरीत है। इस प्रक्रियाका मूल प्रारम्भ ही इस बातसे होता है कि प्राचीन औषध संग्रह संशयित, अनिश्चित और अवैज्ञानिक ढंगसे एकत्र किया हुआ संग्रह मात्र है। अतः इसे अब वैज्ञानिक रूप दिया जा रहा है। ऐसी स्थितिमें आयुर्वेदके इस अनुसन्धानसे क्या यह माना जावे कि समस्त आयुर्वेदिक औषध संग्रह अवैज्ञानिक है और अब उसमेंसे वैज्ञानिक कसौटीपर खरे उतरने वाले तत्वोंकी खोज की जा रही है? क्या यह समझ जावे कि अवैज्ञानिक आयुर्वेदको अब वैज्ञानिक 'जामा' पहिनाया जा रहा है? माननीय केन्द्रीय स्वास्थ्यमन्त्री श्रीमती डा. सुशीला नायरका कहना है कि "आयुर्वेद शास्त्रमें अब भी ऐसे नायब तथ्य हैं, जिनका अब तक वैज्ञानिक अध्ययन नहीं हुआ। मुझे प्रसन्नता है कि इस संस्था (डा० लक्ष्मीपति आयुर्वेद अनुसन्धान संस्थान) में आयुर्वेद और आधुनिक चिकित्सा पद्धतिके प्रतिभाशाली व्यक्ति अनुसन्धान कर रहे हैं।" +

+ इसी अङ्कमें "आयुर्वेद जगत्" पृष्ठ ४३ में देखिये,

समाचार, 'आयुर्वेद गवेषणा केन्द्रका उद्घाटन'।

ऐसी स्थितिमें आयुर्वेदीय चिकित्साके प्रसारका सभी तथाकथित प्रयत्न एक ऐसी चिकित्साके प्रसारका प्रयत्न है जिसे अभी सन्दिग्ध और अवैज्ञानिक चिकित्सा समझा जाता है।

दूसरी ओर कायचिकित्साका जो भी अंश आज वैद्यके हाथमें बचा हुआ है उसकी भी बुरी स्थिति है। काय चिकित्साके सम्बन्धमें जो निश्चित योग आजके उपलब्ध आयुर्वेदिक ग्रन्थोंमें मिलते हैं उनकी संख्या सहस्रोंमें है। लगभग दस सहस्र। संसारके अन्य किसी चिकित्सा शास्त्रमें शायद निश्चित योगोंका इतना विस्तृत संग्रह उपलब्ध नहीं है। प्राचीन लेखकोंने विविध रोगोंपर उनके विविध प्रकारके प्रयोगोंकी चर्चा की है। उन्हें उन रोगोंपर तद् तद् अवस्थाओंमें विशेष प्रभावकारी बताया है। जिस प्रकार आज चिकित्सक अपने विशेष अनुभव और अनुसन्धानसे अनुभूत योगोंका संग्रह और निर्णय करता है इसी प्रकारसे आजकी अपेक्षा अधिक दत्तचित्त, अधिक ईशानदार, अलोलुप और आर्थिक लाभके प्रति उदासीन व्यक्तियोंने, आयुर्वेद विज्ञानके विशेषज्ञ मुनियोंने, ऋषियोंने उन योगोंका संग्रह और निर्माण अपनी आजीवन साधना और तपस्याके अनन्तर किया है। जो लोग अनुभूत और सिद्ध योगोंके लिये मारे मारे फिरे हैं उन्हें यह समझ लेना चाहिये कि यह सभी अनुभूत सिद्ध योग हैं। आवश्यकता है केवल उनके विषयमें अपने अज्ञानको दूर करनेकी और उन्हें अपने अनुभवमें उतारनेकी। प्राचीन विद्वान् ऋषि और आप इसीलिए कहे जाते थे कि वे निःस्वार्थ होकर सत्यका अन्वेषण कर सर्व भूतहितकेलिए ही उस सत्यका यथार्थ उपदेश करते थे। इसीलिए उनका वाक्य असंशय और निर्भ्रान्त माना जाता था।

आप्ताः शिष्टाः विबुद्धास्ते, तेषां वाक्यमसंशयम् ।
सत्यं वदन्ति ते कस्मादसत्यं नीरजस्तमाः ॥
चरक, सूत्रस्थान, अ० ११, श्लोक १९।

परन्तु आज यह सभी योगसंग्रह नवीन विज्ञान-वादियोंके मतसे अवैज्ञानिक योगोंका ढेर मात्र ही समझना चाहिये। जब तक इसका वैज्ञानिक परीक्षण न हो जावे तब तक इसका कोई मूल्य नहीं है।

इतने अधिक योगोंका तथाकथित वैज्ञानिक परीक्षण सैकड़ों वर्षोंमें भी सम्भव नहीं है। क्योंकि इन परीक्षणोंमें लगे हुए, इनके प्रति अनास्थावान् वैज्ञानिक सरकारी अनुसन्धान संस्थानोंमें बैठकर एक वर्षमें एक योगके विषयमें भी निश्चित तथ्य खोज निकालनेमें भी असमर्थ हैं। अभी तक इन बीते हुए वर्षोंमें इस प्रकारका जो भी अनुसन्धान हुआ है उसके आधारपर ही आगेका अनुमान लगाया जा सकता है। उक्त अनुसन्धान कार्यको देखकर सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि आगामी पूरी एक शतीमें भी कुछ औषध द्रव्यों तथा इने गिने प्रचलित आयुर्वेदिक योगोंकी चिकित्सा सम्बन्धी सम्भावनाओंका पुनर्मूल्यांकन किया जासका तो वह एक बहुत बड़ी आश्चर्य जनक बात ही समझी जावेगी। ऐसी स्थिति में यह विचारकरके और आशाकरके बैठे रहना कि इन अनुसन्धान संस्थाओंके बलपर ही आयुर्वेदका पुनरुद्धार होगा एक मृगतृष्णामात्र है। यह एक असन् कल्पना है, जिसका परिणाम है एक भयङ्कर निराशा, जो कि इतना धन, समय और परिश्रम व्यर्थ खोनेके बाद प्राप्त होगी।

इसके अतिरिक्त आजकी परिस्थितियोंमें वैद्योंका यह योग कोश संकुचित होता जा रहा है। जो लोग सरकारी औषधालयोंमें कार्य करते हैं, वे स्वामधिक रूपसे रोगियोंको वही औषध देपाते हैं जो कि औषधालयमें विद्यमान हों। जो औषध वहां न हो, पर आवश्यक हो वह रोगीको बाहरसे लेनेको बताई जाती है। ऐसी औषध भी वही होनी चाहिये जो फार्मसियों द्वारा प्रस्तुत बनी बनाई मिलती हैं। अन्यथा आजका रोगी उस औषधके प्रयोगसे वंचित रहता है। ऐसी स्थितिमें यह चिकित्सा क्षेत्र केवल उन्हीं औषधोंपर विशेष रूपसे निर्भर करता है जिन्हें कि सरकारी आयुर्वेद विभागीय फार्मसियां तथा अन्य स्वतन्त्र निर्माण शालाएं प्रस्तुत करती हैं। इस प्रकारसे प्रस्तुत की जाने वाली औषधोंकी संख्या भी अति सीमित ही रहती है अधिक नहीं। सभी निर्माण शालाएं कुछ औषधोंके अतिरिक्त प्रायः सभी औषध एक जैसी ही प्रस्तुत करती हैं। यद्यपि यह एक विशेष प्रशंसाकी ही बात है कि जैसा कि हम संकुचित औषध श्रेणीके द्वारा बहुतसे

कष्ट साध्य रोगोंकी सफलता पूर्वक चिकित्सा कर आयुर्वेदकी प्रतिष्ठाको बढ़ाता है। परन्तु इसी प्रकार चलते रहनेसे आयुर्वेदिक योगोंका शेष उपयोगी एवं वृहत् कोश अछूता, अपरिचित और कुछ समयके अनन्तर विस्मृत भाग बन जावेगा। साथ ही यह चिकित्सा विधि भी इतने ही योगोंमें संकुचित होकर वामन रूप धारण कर लेगी।

इतनेपर ही दुर्दशाकी इति श्री नहीं है। यह जो औषध प्रस्तुत की जाती हैं इनमें भी प्रयुक्त होने वाले द्रव्य आज सरलतासे तथा शुद्ध रूपमें न तो विभागीय राजकीय निर्माण शालाओंको प्राप्त होते हैं न स्वतन्त्र निर्माण शालाओंको। यहां तक कि स्वयं सरकारी निर्माण शालाओंको भी ऐसे द्रव्योंका विवश होकर प्रयोग ही बन्द कर देना पड़ता है। सामान्यतया सभी वैद्योंद्वारा प्रयुक्त होने वाली औषधोंमें पड़ने वाले यह सामान्य द्रव्य भी आज अप्राप्य हैं। साधारण स्वतन्त्र वैद्योंको इनके प्राप्त हो सकनेकी कैसे कल्पना की जा सकती है।

परिणाम बिल्कुल प्रत्यक्ष है। एक ओर तो आयुर्वेदिक औषधको वैज्ञानिक न मानकर उसे वैज्ञानिकत्व प्रदान करनेके लिए कभी अपने लक्ष्यपर न पहुँचने वाला अनुसन्धान रूपी प्रयत्न किया जा रहा है। दूसरी ओर शुद्ध और उत्तम द्रव्य निर्माण-शालाओं अथवा वैद्योंको मिल सकें इसका कोई भी उपाय नहीं किया जा रहा है। यहां तक कि शायद-इसपर ध्यान भी नहीं दिया जाता। बहुत ज्ञान तो वैद्योंकी रहस्यको प्रकाशित न करनेकी वृत्तिसे, बहुत-सा ग्रन्थोंके विलुप्त होजानेसे, कुछ आततायियोंद्वारा विनष्ट कर दिये जानेके कारणसे और कुछ हमारी असाधधानीसे पहिले ही नष्ट हो चुका है। अब जो उपलब्ध है वह भी हमारे देखते ही देखते 'अदर्शन लोपः' का आदर्श उदाहरण बन रहा है।

इस प्रकार प्राचीन योगोंकी जानकारी, उनका निर्माण कर अपने प्रयोगके रूपमें पुनः अनुभव, तथा निजी परीक्षणोंके अनन्तर प्राप्त होने वाले परिणामोंका प्रकाशन आज वैद्यको अपने आप ही करना है। यह

ध्यान रखनेकी बात है कि आयुर्वेद जनताका अपना व्यावहारिक चिकित्सा विज्ञान है। ऐसे अगणित योग हैं, जो सदा ही बने बनाए नहीं प्राप्त हो सकते। उनको बनाना और प्रयोग करना भी आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। आज भी वैद्यका काम वैसा सरल नहीं है कि औषधोंके नाम लिख दिये, रोगी बाजारमेंसे बने बनाए लेकर प्रयोग कर लेगा। आज भी वैद्यको तपस्याकी आवश्यकता है। जो वैद्य जितनी अधिक और अच्छी स्वयं औषध निर्माणकी व्यवस्था कर सकता है वह उन्तना ही अधिक पीड़ित मानवका सेवामें समर्थ हो सकता है। उतना ही अधिक असाध्य समझे जाने वाले रोगोंकी चिकित्सामें सफलता प्राप्त कर सकता है।

परन्तु यहां तो 'जलेपर नमक' की कहावत चरितार्थ हो रही है। परीक्षण और पुनर्नवीकरणका यह मार्ग भी अवरुद्ध किया जा चुका है। ड्रग्स एक्टने उन्नतिका यह प्रशस्त एवं स्वतन्त्रराजपथ (जीवन पथ) भी काट दिया है। एक ओर तो कहा जाता है कि आयुर्वेदकी उन्नतिका प्रयास पूरी शक्तिसे किया जा रहा है। दूसरी ओर उन्नतिके मार्गोंको जाने या अतजाने बराबर रोका जा रहा है। आवश्यकता इस बातकी है कि प्रत्येक सुशिक्षित एवं रजिस्टर्ड वैद्यका औषधालय एक प्रकारका अनुसन्धान केन्द्र हो। जिसकी जैसी शक्ति हो उसके अनुरूप वह इस कार्यको करे। तभी इस विस्तृत एवं महान् कार्यको पूर्ण करनेका प्रयास किया जा सकता है। उसके मार्गको रोक देने से तो सब खेल ही बिगड़ता है।

तब सरकार क्या करे और क्या कर सकती है? हम समझते हैं कि निम्न आवश्यक कार्य सरकार सरलतासे कर सकती है और इस महान् एवं पवित्र कार्यमें सचमुच सहायक बन सकती है—

१. प्रत्येक रजिस्टर्ड, सुशिक्षित वैद्यको सब प्रकारके औषध द्रव्य शुद्ध रूपमें प्राप्त होसकें इसकी व्यवस्था की जावे।
२. औषधोंमें प्रयुक्त होने वाले विष तथा मादक द्रव्योंकी प्राप्ति के लिए सरल मार्ग बनाया जावे।

३. जो द्रव्य आयातकी कमीसे अनुपलब्ध प्राय हो रहे हैं उनके आयातकी सुविधाएं दी जावें।
४. जो औषध वैद्य बनावें उन्हें विक्रय करनेकी बाधाओंको दूर किया जाये, जिससे कि आय-वृद्धिसे वे अपने अनुसन्धान कार्यको आगे बढ़ा सकें।
५. जो वैद्य इस कार्यके लिए आगे आवें उनके कार्यों का सामञ्जस्य करनेके लिए सरकार द्वारा नियुक्त तन्त्र इस कार्यको करनेके विषयमें आवश्यक निर्देश कार्य कर्त्ता वैद्योंको देवे और अनुभवके परिणामोंका संग्रह कर प्रकाशन योग्यका प्रकाशन करे।

हमारे विचारसे इस प्रकार कार्य करनेसे सरकारी अनुसन्धान शालायें अपना कार्य प्रयुक्त, जैसा भी उचित सम्भवा जावे उस मार्गसे कर सकेंगी। औषध निर्माण शालायें अपना कार्य अबाध रूपमें करेंगी साथ ही उन्हें नवीन अनुभवोंका भी लाभ मिल सकेगा। वैद्योंको स्वयं अपने अनुभूत परन्तु लिखित योगोंको बनाने, उनका उपयोग करने, उनके विषयमें नए अनुभव प्राप्त करने तथा नवीन परीक्षण कर अनुसन्धान कार्यमें प्रवृत्त होनेके लिए प्रेरणा मिलेगी और आयुर्वेदीय औषधोंकी सेवा सम्बन्धी सम्भावनाओंके क्षेत्रका विकास भी होगा।

वैद्योंका सामयिक कर्त्तव्य—

आज हमारा राष्ट्र संकट कालीन स्थितिमें है। हमारे ही अङ्गसे बना पाकिस्तान अपनी असद् बुद्धिके कारण आक्रान्ता चीनके साथ दुरभिसन्धि करके जहां भी, जैसे भी सम्भव हो हमें हानि पहुँचाने, हमारे भूमि भागको हड़पने और हमारी प्रतिष्ठाको विनष्ट करनेके लिए सर्वात्मना प्रयत्नशील है। सर्वत्र सीमापर होनेवाले उसके अनुचित कार्यों और प्रहारोंके अतिरिक्त अभी हालमें ही उसने कच्छपर आक्रमण कर अपनी दुर्भावनाओंका रूप प्रकट किया था। उसके विषयमें वार्तालाप अभी ठीकसे प्रारम्भ भी नहीं होपाया था कि उसने कश्मीरमें अपने सैनिक हथियारोंके प्रयोग

एक नवीन युद्ध स्थिति उत्पन्न कर दी है। आजकी स्थितिकी भयङ्करता और गम्भीरताका आभास प्रधान-मन्त्री तथा रक्षामन्त्रीके वक्तव्यों, कश्मीर निवासियोंके प्रत्यक्ष दृष्ट समाचारों वहाँके मुख्य मन्त्रीके वक्तव्यों और अन्य प्रत्यक्षदर्शियोंके विवरणोंसे अच्छे प्रकार मिलता है।

यह स्थिति तब और भी भयानक तथा विषम होजाती है जब कि देशमें आपाधापी, अन्धवस्था और अविश्वासकी काली छायायें बढ़ती जा रही हों। कुछ वर्ग देशके सुरक्षा प्रयत्नोंको खोखला और प्रभाव हीन बनानेमें व्यस्त हों और राष्ट्रकी सामूहिक उन्नतिकी दृष्टिसे विचार करनेकी शक्ति और प्रवृत्तिका लोप होता जा रहा हो। स्वार्थके सम्मुख राष्ट्रके हितको तुच्छ और त्याज्य समझनेकी निन्दनीय प्रवृत्ति निर्लज्ज भावसे बढ़ रही हो।

यह एक सर्वसम्मत तथ्य है कि भारतीय सैनिक प्रखर एवं प्रचण्ड योद्धा है। उसकी भुजाओंमें वह बल है कि सभी बाधाओंको पारकर, शत्रुको विध्वस्त कर बलात् विजय श्री को लाकर राष्ट्रकी सेवामें अर्पित कर दे। उसने अपने रक्तसे विजयका स्वर्णिम इतिहास लिखना सीखा है। परन्तु यदि राष्ट्र दूषित वृत्तियोंके प्रभावसे अपनी आन्तरिक सुरक्षा, निश्चिन्तता और उदात्त, प्रसन्न रूपको बनाए रखनेमें असमर्थ रहेगा तो हमारे रक्षकोंके रक्तमें शीतलता, उत्साहमें मन्दता तथा हृदयमें निराशाका संचार होनेकी पूरी सम्भावना है। ऐसी स्थितिकी कल्पना भी राष्ट्रके लिए भयावह एवं विनाशकारी है।

आज सभी विचारशील व्यक्तियों और वर्गोंका कर्त्तव्य है कि राष्ट्रको इस भयङ्कर स्थितिसे बचानेका प्रयत्न करें। अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं, उच्च आदर्शों और उदात्त परम्पराओंके कारण वैद्यका राष्ट्रकी जनताके हृदयमें एक आदरपूर्ण स्थान है जिसे कि उसने सच्ची सेवा, प्रेम और सबके कल्याणकी भावनाके बलपर प्राप्त किया है। वाणीमें वह बल है जिससे कि वह जनताका मार्ग दर्शन कर सकता है। स्वतन्त्रता संग्रामके समय वैद्यने अपना कर्त्तव्य प्रथम

स्वतन्त्रता प्राप्ति और

राष्ट्र निर्माणमें उसकी सेवाएँ प्रोज्ज्वल रूपसे देदीप्यमान हैं।

आज वह समय आगया है कि वह अपनी शक्तिको पहिचान कर राष्ट्रको संकटसे बचानेके कार्यमें उसका प्रबल उरसाहके साथ प्रयोग करे। आज प्रत्येक व्यक्ति और दलकी दल गत भावनासे ऊपर उठकर राष्ट्रकी पवित्र सेवामें अपने सभी साधनोंको समर्पित कर देना चाहिये। इस हेतु वैद्य अपने स्थानपर रह कर जनताके सम्मुख राष्ट्रकी आवश्यकताको असन्दिग्ध रूपमें रखकर उसके अनुसार कार्य करनेकी प्रवृत्ति और प्रेरणा दे सकता है। जो बुद्धि भेद अनेक दलों और अनेक वादोंके कारण जनतामें फैल रहा है उसको दूर करनेमें वह अपना अमूल्य सहयोग दे सकता है। इस प्रकार वह अपने अप्रतिम वीर, योद्धा सैनिकोंके हृदयों, बाहुओं और शस्त्रोंको वह बल प्रदान कर सकता है जिससे कि राष्ट्रकी विजय असन्दिग्ध एवं अवश्यम्भावी बन जाती है। सिद्धान्तों और वादोंपर लड़ने भगड़नेका आज समय नहीं है याद रखिये—

"शस्त्रेण रक्षिते राष्ट्रे शास्त्र चिन्ता प्रवर्त्तते"

श्री स्वामीजी महाराजका स्वास्थ्य—

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवनके यशस्वी एवं वीतराग संस्थापक श्रीमान् स्वामी कृष्णानन्दजी महाराज इस समय पुष्कर राजमें विराज रहे हैं। महाराजका स्वास्थ्य इधर पर्याप्त समयसे ठीक नहीं है। उदरमें वातवृद्धि एवं मन्दाग्निसे उन्हें कष्ट रहता है। आँखोंमें मोतियाबिन्दु बढ़ रहा है। परन्तु स्वामीजी हैं कि अपनी समस्त दिनचर्याका पूर्ण नियमपूर्वक निर्वाह करते हैं। उनका अधिकांश समय अब भी स्वाध्याय, लेखन, त्रस्त मानवके शुभ चिन्तन तथा भवनकी अभिवृद्धि एवं उन्नतिके निमित्त उपायान्वेषणमें ही व्यतीत होता है।

इस प्रकारकी स्वास्थ्यकी स्थितिमें भी संस्था उनके द्वारा उचित मार्ग निर्देश सदा प्राप्त करती रहती है। संस्था और उसके द्वारा पीड़ित जनताके लिए समग्र किये जाने वाले परोक्षार सम्बन्धी कार्योंके विषयमें वे किसी प्रकारकी शिथिलता अनुभव नहीं करते हैं। भवनके सभी कार्यकर्त्ता तथा 'स्वास्थ्य' परिवारके सदस्य भगवान्से श्री स्वामीजी महाराजके स्वास्थ्यके निमित्त प्रार्थी हैं।

कृष्ण-गोपालकी गैसहर वटी

आजकल अनेक मनुष्योंके पेटमें मन्दाग्नि, अजीर्ण तथा आंतोंमें सड़ान होनेसे गैस (वायु) बना करती है, जिससे पेटका फूलना, उदरशूल, खट्टी या वादीकी डकारें आना तथा घबराहट आदि अनेक लक्षण उत्पन्न होते हैं। इस रोगका उपचार न करनेसे आगे चलकर आंतमें वातक रोग उत्पन्न होते देखे गये हैं। भवनने अपने ३० वर्षके अनेक रोगियोंपर अनुभवसे जनहितार्थ इन गोलीयोंका निर्माण किया है।

जब भी पेटमें गैस उत्पन्न हो १ या २ गोली जलानुपानसे ले लेनेपर तुरन्त अपानवायु खुलकर पूर्ण शान्ति प्राप्त होती है। भोजनोत्तर दोनों समय वटी ले लेनेसे अन्नपाचन सुखपूर्वक होता है, शौच साफ हो जाता है तथा यकृतके विकार दूर होकर स्वास्थ्यवृद्धि होती है।

मूल्य—१० ग्राम, ०-९०। ५ ग्राम, ०-५५।

दीर्घायुष्यकी समस्या और उसका प्राचीन समाधान

लेखिका—कुमारी मनोरमा

इस लेखकी लेखिकाने आयुर्वेदके एक सर्वोत्तम परन्तु आज उपेक्षित एवं विस्मृत अध्यायकी ओर ध्यान आकृष्ट किया है। यह भी प्रतिपादित किया है कि कई सौ वर्षोंकी आयु प्राप्त करना एक ऐतिहासिक तथ्य है। उसके लिए पुनः आयुर्वेदिक आधारपर अनुसन्धान और प्रयत्न करना विशेष लाभदायक होगा। दीर्घ जीवनके अभिलाषी मानवको ग्राम्यवास, ग्राम्य आहार, और ग्राम्य विहारके परिणाम स्वरूप जो अशान्ति और दुःख प्राप्त हो रहा है उसका निवारण करनेके लिए वह सात्त्विक, वृत्ति तथा संयमके मार्गपर चलनेकी इस प्रेरणा ले सकेगा। प्राचीन रसायनोंके व्यावहारिक अनुभूत प्रयोगके विषयमें यदि विद्वज्जन कुछ प्रकाश लेंगे तो "स्वास्थ्य" उसका स्वागत करेगा।

—सम्पादक

जैसे कि मनुष्य अनादि कालसे जन्म लेता आया है वैसे ही वह सदासे मृत्युकी विभीषिकाको भी देखता आया है। सदासे ही वह शैशवमें जितना निर्द्वन्द्व और आनन्दी रहता आया है, यौवनमें जितना ही उल्लास, उमङ्ग और उत्साहका अनुभव करता आया है, वार्धक्यमें उतने ही दुःख, द्वन्द्वके संताप, ग्लानि और अनुत्साहको विवश होकर भोगता आया है। परन्तु दुःखसे कातर होकर भी, जराभृत्यकी अनिवार्यता और निश्चिन्तताको देखते हुए भी वह इनका प्रतिकार करनेमें अनादिकालसे जुटा रहा है। इनसे युद्ध करता रहा है। वृद्धावस्थाके दूर करनेके लिये उसने सहस्रों उपायोंका परीक्षण किया है। मानव इतिहासकी प्राप्त होने वाली सामग्री उसकी साक्षी है।

वैदिक ऋषियोंकी कामना—

वैदिक ऋषि सौ वर्ष तक और सौ वर्षसे भी अधिक समय तक सभी इन्द्रियोंको शक्तिमान् रखकर 'अदीन' रहते हुए जीवित रहनेकी कामना करते रहे हैं।

"जीवेम शरदः शतम्।"

शरदः शतम्। भूयश्च शरदः शतात् ॥"

"हम सौ वर्ष जीवित रहें।सौ वर्ष तक अदीन, आत्मनिर्भर रहें और उससे भी अधिक काल तक 'अदीन' होकर जीवित रहें।"

कमसे कम आयु जिसकी प्रार्थना और कामना की जाती थी सौ वर्ष थी। इतना ही नहीं वे इस अनेक गुनी अधिक आयुकी भी कामना करते और उसके लिए प्रयत्नशील रहते थे।

"व्यायुपं जमदग्नेः कश्यपस्य व्यायुषम्।"

यद् देवेषु व्यायुपं तन्नो ऋस्तु व्यायुषम्।"

"चक्षु आदि इन्द्रियोंको सशक्त रखते हुए सौ वर्षोंसे अनेक गुणित आयुकी प्राप्त हो। विद्वान् और कर्मठ पुरुष जिस सुदीर्घ आयुष्यको प्राप्त करते हैं उस सुदीर्घ आयुष्यको प्राप्त हों।"

उपायोंकी खोज—

आयुर्वेद शास्त्रको देखनेसे ज्ञात होता है कि इस व्यावहारिक और सफल उपाय भी खोजकर प्रयुक्त किये गए थे। उनका उपयोग किया जाता था।

पायोंको कार्यमें लेकर किन प्रमुख व्यक्तियोंने दीर्घ-
जीवन प्राप्त किया था, इसका भी उल्लेख प्राप्त होता
है। चरक संहिता, चिकित्सित स्थानके तृतीय रसायन
पादमें आमलकायस रसायनके प्रकरणमें लिखा है—

“एतद् रसायनं पूर्वं वसिष्ठः कश्यपोऽङ्गिराः ।
जमदग्निर्भरद्वाजो भृगुरग्नये च तद्विधाः ॥
प्रयुज्य प्रयता मुक्ताः श्रम-व्याधि-जराभयात् ।
यावदैच्छन्तपस्तेपुस्तत्प्रभावान् महाबलाः ॥

‘पूर्वकालमें इस आमलकायस रसायनको वसिष्ठ,
कश्यप, अङ्गिरा, जमदग्नि, भरद्वाज, भृगु और इसी
प्रकारके अन्य ऋषियोंने प्रयोग किया था। उसके
भावसे वे संयत रहते हुए वे श्रम, रोग तथा वार्धक्यके
भयसे मुक्त हो गये थे। बलवान् रहकर उन्होंने
प्रपत्नी इच्छानुसार सुदीर्घ काल तक तपस्या की ॥”

प्राचीन आविष्कार—

यही नहीं, अति प्राचीन कालमें भारत देश और
उसके आस पास बसनेवाले भिन्न वर्गों और जातियोंमें
वार्धक्यको दूर करने और दीर्घायुको प्राप्त करनेके
लिए अपने अपने ढंगपर पृथक् प्रयत्न भी किए जाते
हे हैं। प्रागैतिहासिक कालमें इस प्रदेशमें वास
करनेवाले वर्गों या जातियोंमेंसे देवजाति, नाग जाति
और मनुष्य जाति प्रधान रही हैं।

तीनों ही जातियां किसी समय बहुत समुन्नत थीं।
दीर्घ जीवनकी प्राप्तिके लिए इनके अनेक वैज्ञानिक
विद्वान् विविध प्रकारसे अन्वेषणों और परीक्षणोंमें
लगे रहते थे। ऐसे अन्वेषणोंके परिणाम स्वरूप
देवोंका आविष्कार ‘अमृत’ बताया गया है।
नागोंके अनुसन्धान और परीक्षणोंका फल ‘सुधा’
भी कहा गया है। देवोंके और नागोंके समान ही
मनुष्योंके अप्रणी, विद्वान् ऋषियोंने ‘रसायन’ का
आविष्कार किया था। वृद्ध जीवकोंद्वारा विरचित तथा
ग्रन्थद्वारा प्रति संस्कृत काश्यपसंहिता, सुप्रसिद्ध
चरकसंहिता और सुश्रुत संहितामें इस विषयमें स्पष्ट
लंके मिलते हैं।

“रसायनमिवर्षीणां देवानाममृतं यथा ।

सुधेवोत्तमनागानां भैषज्यमिदमस्तु ते ॥”

सुश्रुत, सूत्रस्थान अ. ४३, श्लोक ३

“जिस प्रकार—ऋषियोंके लिए ‘रसायन’ परम
लाभकर है, देवोंके लिए जैसे ‘अमृत’ सुखद है, उत्तम
नागोंके लिए जिस प्रकार ‘सुधा’ आनन्दप्रद है उसी
प्रकार यह भैषज्य तुम्हारे लिए सुखद हो ॥”

चरक संहितामें तो इसको और भी स्पष्ट कहा है—

“यथा सुराणाममृतं, यथा भोगवतां सुधा ।

तथाऽभवन्महर्षीणां रसायनविधिःपुरा ॥”

चरक०, चिकित्सास्थान, रसायनाध्याय, प्रथम, पाद ७८

‘प्राचीन कालमें जिस प्रकार सुरों (देवों) को
अमृतका आविष्कार सुखद था, जैसे नागोंके लिए
‘सुधा’ थी उसी प्रकार महर्षियोंके लिए ‘रसायन विधि’
लाभकारी थी ॥”

“यथा सुराणाममृतं नागेन्द्राणां यथा सुधा ।

तथाचं प्राणिनां प्राणा अन्नं चाहुः प्रजापतिम् ॥”

काश्यपसंहिता, खिलस्थान । श्लोक १६। पृष्ठ २८६

इस प्रकार स्पष्ट ही ज्ञात होता है कि ‘अमृत’
और ‘सुधा’ शब्द एक दूसरेके पर्यायवाची नहीं थे।
यह देवों और नागोंके द्वारा आविष्कृत पृथक् वस्तुओंके
नाम थे। परन्तु दोनोंके गुण समान थे। दोनों दीर्घ
जीवन देनेवाली और वृद्धावस्थाको दूर करनेवाली
थीं। इसलिए कालान्तरमें वास्तविक स्थितिके अज्ञानसे
दोनों शब्द परस्पर पर्यायवाची माने जाने लगे। आज
तो कोई यह विश्वास भी नहीं करना चाहता कि
‘अमृत’ और ‘सुधा’ दोनों पृथक् वस्तुएं थीं।

रसायनका आविष्कार—

चरक संहितामें लिखा है कि एक समय ग्राम्यवास,
ग्राम्य आहार और विहारके कारण म्लान और
निस्तेज होकर ऋषि लोग अपने प्राचीन स्थान
हिमालयके प्रदेशमें इन्द्रके पास पहुँचे। वहाँ इन्द्रने
उन्हें दीर्घजीवन देनेवाली और वृद्धत्वको दूर करनेवाली
अनेक औषधियोंके विषयमें आवश्यक सूचनाएँ दीं।
दीर्घजीवन ही वह समस्या थी जिसके कारण ऋषि
लोग इन्द्रके समीप पहुँचे। चरक संहिताका प्रथम
अध्याय ही इस कारणसे ‘दीर्घ जीवितयाध्याय’ कहा
जाता है। परन्तु यह दीर्घजीवन ऋषि लोग सांसारिक
जीवनके निमित्त प्राप्त करनेकी चेष्टा नहीं

करते थे। उनके तप, उपवास, अध्ययन, ब्रह्मचर्य व्रत आदिके पालनमें वार्धक्ययुक्त इस छोटेसे जीवनमें महान् विघ्न रहता था। शुभ कर्मोंके सम्पादनार्थ जरा रहित दीर्घजीवनकी उन्हें आवश्यकता थी। इसीलिये रसायनोंका आविष्कार हुआ। उसके परिणामस्वरूप उन्होंने जब तक चाहा-अपनी इच्छाके अनुसार-जीवित रहकर तपस्या की—

“यावदैच्छन्स्तपस्तेषुः”

सोम नामकी एक प्रसिद्ध औषधि थी। जो कि इस कार्यके लिए विशेष रूपसे प्रयुक्त होती थी। सुश्रुतसंहितामें एक पूरा अध्याय “सोम कल्पाध्याय” नामसे सोमके प्रयोगकी विधि, उसके परिणाम सोमके रूप, प्राप्तिके स्थान आदिके विषयमें लिखा गया है। सुश्रुतने सोम अनेक प्रकारका बतलाया है। सोमके समान प्रभाव शाली अठारह औषधियां और भी बताई हैं। इनकी मुख्य पहिचान और प्राप्त होनेके स्थान भी लिखे हैं। परन्तु दुर्भाग्यसे, प्रचार न होनेसे और स्थितिके परिवर्तन आदि कारणोंसे यह एक भूला हुआ प्रकरण बन गया है।

यदि इन अपरिचित औषधियोंको छोड़ भी दिया जावे तो भी सुश्रुत चरक आदि ग्रन्थोंमें रसायनोंके बहुतसे ऐसे प्रयोग मिलते हैं, जिनके द्रव्योंको सुगमतासे प्राप्त किया जासकता है और लिखे हुए प्रकारसे उन्हें बनाया भी जासकता है।

रसायन सेवन—

रसायनानां द्विविधं प्रयोगमृषयो विदुः।

कुटीप्रावेशिकं चैव वातातपिकमेव च ॥

“चरक, चिकित्सित स्थान, अध्याय १, १६ ॥

“रसायनोंका प्रयोग करनेकी दो प्रकारकी विधि ऋषि लोग जानते थे १. कुटी प्रावेशिक और २. वातातपिक। जिस गृहमें रहकर रसायन प्रयोग किया जाता था उसे कुटी कहा जाता था। इसीलिए कुटीमें प्रवेश करके रसायन सेवनकी विधिको कुटीप्रावेशिक विधि कहते हैं। कुटी किस प्रकारकी हो, उसमें क्या क्या विशिष्ट स्थान हों, कौनसे उपकरण उसमें रखे जावें आदि सभी बातोंपर सुश्रुत विधि और चरक विधि

दृष्टि कोणसे अच्छा प्रकाश डाला गया है।

क्योंकि रसायन सेवनमें समय भी अधिक लगता है और द्रव्यकी भी आवश्यकता है इसलिए जो लोग सम्पन्न, समर्थ, बुद्धिमान्, संयमी और साधनयुक्त हैं साथ ही जिनके पास समय भी हो उन्हें कुटी प्रावेशिक विधिसे रसायन सेवन करना कल्याण कारक है परन्तु जो ऐसे न हों उन्हें भी रसायनका लाभ, चा वह आंशिक ही हो, मिलना चाहिये। इस दृष्टिसे लोग ‘सौर्यमारुतिक’ विधिसे रसायन सेवन कर सकते हैं। बाहरकी धूप और वायुमें रहते हुए ज रसायनका सेवन किया जावे तो उसे ‘सौर्यमारुतिक’ या ‘वातातपिक’ विधि कहा जाता है।

रसायन सेवियोंके अवश्य कर्तव्य—

यह तो हुई रसायन सेवनकी विधिकी बात। परन्तु इसके अतिरिक्त भी कुछ आवश्यक कर्तव्य ऐसे जिनका करना रसायन सेवकों के लिए अनिवार्य है उनके अभावमें रसायन सेवनका लाभ नहीं होता है

चरक संहितामें बताए गये ‘नित्य रसायन पुरुष’ के लक्षणोंमें उक्त आचरणको सुन्दर ढंगसे प्रतिपादित किया गया है। वे कहते हैं—

“सत्यवादी, अक्रोधी, मद्यपान तथा मैथुनसे दूर रहने वाले, अहिंसक, अतिश्रमसे रहित, प्रशान्त, प्रियवादी, यज्ञ और शुद्धतामें तत्पर, धीर, सदा दानशील, तपस्वी एवं देव, गो, ब्राह्मण, आचार्य, गुरु, वृद्ध तथा अन्य पूजनीय व्यक्तियोंकी पूजामें मन लगानेवाला, दयालु, प्राणिमात्रको कारुण्यकी भावनासे आतुर, सदृश माननेवाला, जागरण और निद्राको सन्तुलित, सदा उचित विधिसे सेवन करने वाले, नित्य दूध और घृत का उपयोग करने वाले, देश, काल और प्रमाण ज्ञाता, युक्तिज्ञ, अहंकार रहित, शुद्ध आचारशील, अध्यात्म विचारमें संलग्न, वृद्ध, आस्तिक, जितेन्द्रियजनोंके उपासक, धर्म शास्त्रपरायण व्यक्ति ‘नित्य रसायन’ पुरुष जानना चाहिये।”

चरक, चिकित्सित स्थान अ. १ श्लोक २९ से ३३ तक

गुणैरेतैः समुदितः प्रयुंक्ते यो रसायनम्।

रसायनं गुणान् सर्वान् यथोक्तान्स समश्नुते।

“इन उपर्युक्त गुणोंसे युक्त होकर जो व्यक्ति रसायन बन करता है वह रसायनके कहे हुए गुणोंको पूर्ण रूपसे प्राप्त करता है।”

.....“तहि किञ्चिद्रसायनम् ।
ग्राम्याणामन्यकार्याणां सिध्यत्यप्रयतात्मनाम्॥”

चरक. चिकित्सित० अ. १। श्लो० ५॥

“ग्राम्य आहार विहार वाले, अन्य कार्योंमें आसक्त जितेन्द्रिय पुरुषोंको किसी रसायनकी सिद्धि नहीं होती।”

वास्तवमें रसायनका पूर्ण लाभ प्राप्त करनेके लिए यह आवश्यक शर्तें हैं। आहार, आचार, विचारमें किसीमें भी व्यतिक्रम और कमी होनेसे, शरीर या मनको किसी प्रकारकी हानि पहुंचनेसे आयुष्य क्षीण होता है। उपर्युक्त नियमोंको पालन करने वाला व्यक्ति जोदा आनन्दी रहता है। जिसप्रकार स्वच्छ प्रसन्न मूलमें कमल अधिक सुन्दरता और रमणीयतासे विकसित होता है उसीप्रकार इस आनन्दके सरोवरमें शरीरका अङ्ग अङ्ग और छोटेसे छोटा कोष्ठ (Cell) अधिक विकसित, प्रसन्न और पुष्ट बनता है। अधिक मजबूत सुस्थिर रहता है। जरारहित दीर्घायु प्राप्त करता है।

उपर्युक्त लक्षणोंमें उन सभी बातोंका समावेश कर दिया गया है जिनसे शरीर और मन दोनोंके ही स्वास्थ्यका सम्पादन होता है।

रसायन सेवनका समय—

सामान्यरूपसे यह समझा जाता है कि जब शरीर क्षीण होने लगता है और बुढ़ापा शीघ्रतासे चारों ओरसे घेरता चला आता है उस समय रसायनका सेवन करना चाहिये। शायद उसी समय रसायन सेवनसे कायाकल्प हो जाता है। वास्तवमें यह बड़ी भ्रान्ति है। जिस रथको दीर्घकाल तक चलाना हो उसकी देखभाल पुराना होनेपर यालकड़ीके घुन जानेपर नहीं की जाती। उसकी साज सम्भाल तो हिलेसे ही आवश्यक होती है। सभी वस्तु ‘दादा

खरीदे पोता बरते’ की कहावतपर पूरी उतरती है। इसीप्रकार शरीरमें जब तक बल रहता है, नवीन शक्ति और अभिनव उत्साह रहता है तब तक ही रसायनके सेवनसे विशेष लाभ होता है।

सुश्रुतमें लिखा है कि—

“पूर्वे वयसि मध्ये वा मनुष्यस्य रसायनम् ।
प्रयुञ्जीत भिषक् प्राज्ञः स्निग्धशुद्धतनोः सदा॥”

सुश्रुत चिकित्सित स्थान, अध्याय २७ श्लो. १॥

यदि कभी रसायनका सेवन भी न किया जावे तो भी केवल अपना आचरण, रहन-सहन, उपर्युक्त नित्य रसायन पुरुषके आचरणके अनुरूप रखनेपर भी निस्सन्देह दीर्घ जीवन प्राप्त होता है।

आज आयुर्वेदके अभ्युत्थानके प्रयत्नोंमें यदि उपलब्ध रसायनोंके परीक्षणों और अनुसन्धानको भी जोड़ लिया जावे तो आयुर्वेदकी और मानवकी महती सेवा हो सकेगी, ऐसी आशा है।

कृष्ण गोपाल का

ऊत्कृष्ट
शक्तिवर्धक
स्मृतिवर्धक
रसायन



रसायनप्राश
(सुवर्ण भस्मादि युक्त)

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

मनोदोषोंकी सञ्चयादि त्रः अवस्थाओं एवं दोष-भेदोंकी कल्पना क्या संगत है ?

लेखक—ग्राचार्य श्री सुदेवचन्द्र पाराशरी, शास्त्री, D. I. M. S.

प्रोफेसर, गवर्नमेण्ट आयुर्वेदिक कॉलेज, जयपुर

विद्वान् लेखक ने इस लेखमें जो स्थापनाएं रखी हैं वे विज्ञानजनोंके लिए विशेष विचारणीय हैं। इसके ऊपर विशेष ऊहापोहसे मानस व्याधियोंके निदान एवं चिकित्साके क्षेत्रमें अभिनव उपलब्धियोंकी सम्भावना हो सकती है। विषय गम्भीर और लेख संक्षिप्त होनेके कारण कुछ स्थल विशेष स्पष्टताकी अपेक्षा रखते हैं। आशा है, तज्ज्ञ विद्वान् जन उनपर प्रकाश डालेंगे।

—सम्पादक

‘मनस्’ शब्द अवबोधन अर्थात् ज्ञानके साधन भूत इन्द्रियका वाचक है। सभी कर्मेन्द्रियाँ शरीरसे अभिन्न शरीरान्तर्गत अधिष्ठित हैं। उसी भाँति समस्त ज्ञानेन्द्रियोंके अधिष्ठान भी शरीरान्तर्गत ही हैं। वस्तुतः इन्द्रियोंको अलग करके शरीरकी सत्ता ही नहीं रह सकती। ज्ञान और कर्मके सम्पादक दशों इन्द्रियोंसे अप्राप्य और सूक्ष्म तथा दशों इन्द्रियोंका सञ्चालक परमेन्द्रिय अतीन्द्रिय मन है। किन्तु, मनका अस्तित्व भी शरीरसे बाहर नहीं, शरीरसे अभिन्न शरीरान्तर्गत ही है। शरीरकी रचना शुक्र-शोणितके संयोगसे आरम्भ होती है। शुक्र-शोणितके उपादान पञ्च महाभूत विकार हैं जिन्हें वात-पित्त-कफ कहा जाता है। इन पाञ्चभौतिक तीन तत्वोंसे ही देहप्रकृतिका आरम्भ होता है। संयोगके समय इन तीनमें जिस तत्वकी उत्कटता होती है उसके अनुसार ही देहकी प्रकृति बनती है। आगे चलकर गर्भावस्थामें जब तक भ्रूणके रूपमें प्राणी परतन्त्रवृत्ति रहता है, पञ्चमहाभूत विकारोपहित माताके आहार रससे नाभिनाड़ी द्वारा उसका पोषण होता है। जन्मके बाद स्वतन्त्रवृत्ति होनेपर भी आजीवन पञ्च महाभूतात्मक आहार द्रव्योंके सेवन द्वारा भौतिक विकारों द्वारा ही शरीरका संवर्धन और यापन चलता है। शरीरमें अभिन्न होनेके

कारण इन्द्रियों और मनका पोषण और यापन भी शरीर-सम्पादक पाञ्चभौतिक विकार सम्मूर्च्छित आहार रसके द्वारा होना स्वाभाविक है। अतः यह सहज सिद्ध है कि शरीरकी भाँति मन भी पाञ्चभौतिक है। आयुर्वेद शास्त्रियोंने इस व्यावहारिक तथ्यको ध्यानमें रखकर यह निष्कर्ष घोषित कर दिया है कि “भौतिकानीन्द्रियाणि आयुर्वेदे वर्यन्ते तथेन्द्रियाथः” सुश्रुत।

अर्थात् आयुर्वेद इन्द्रियों और इन्द्रियार्थों दोनोंको ही भौतिक मानता है। जो ज्ञानेन्द्रिय जिस भूतके बाहुल्यसे बनी है वह उसी भूतके विषयका ग्रहण करती है।

“इन्द्रियेणोन्द्रियार्थं तु स्वं स्वं गृह्णाति मानवः।
नियतं तुल्ययोनित्वान्नान्येनान्यमिति स्थितिः॥”
सुश्रुत।

मनके विषय हैं इन्द्रियोंका नियन्त्रण, आत्म-नियन्त्रण तथा चिन्तन, विचार, ऊहः, ध्यान, संकल्प आदि। इन सभी संवेदनाओंका आधार पाञ्चभौतिक अर्थ ही हैं। अतः, उनका नियामक संवेदनाका साधन भूत मन भी तुल्य योनि अर्थात् पाञ्चभौतिक है।

आयुर्वेद ही मनको पाञ्चभौतिक विकार जन्य

मानता हो, ऐसी बात नहीं। वेदों और उपनिषदोंमें भी इस तथ्यको स्पष्ट रूपमें प्रतिपादित किया गया है छान्दोग्य उपनिषत्का वचन है —

“अन्नमणितं त्रेधा विधीयते तस्य यः स्थविष्ठो धातुस्तत्पुरीषं भवति, यो मध्यमस्तन्मांसं, योऽणिष्ठस्तन्मन इति”। खाए हुए आहारके तीन भाग होते हैं उसका स्थूलतम भाग पुरीष बन जाता है, मध्यम-भाग मांसके रूपमें परिणत होता है, और अणिष्ठ अर्थात् सूक्ष्मतम भाग मनके रूपमें निष्पन्न होता है। इसी आधारपर मनु भगवान् ने कहा है कि “आहार शुद्धौ सत्त्व शुद्धिः” आहार शुद्ध होनेपर ही मन शुद्ध बनता है। भगवान् कृष्णने श्रीमद् भगवद्गीतामें सात्त्विक, राजस, तामस आहारका वर्गीकरण भी इसी आधार पर किया है। “जैसा खावे अन्न। वैसा बने मन” इस लौकिक कहावतका आधार भी यही है।

“अन्नमयं हि सौम्य मनः” श्रुतिके इस कथनसे मनकी पाञ्चभौतिकता सिद्ध है। स्पष्ट है कि शरीरकी भांति उसकी प्रमुख इन्द्रिय संज्ञा और चेष्टाओंका मूल मन भी पाञ्चभौतिक है। अस्तु; जिस भांति शरीरके जीवन व्यापारोंका सम्पादन पाञ्चभौतिक विकार भूत वात, पित्त, कफ नामक क्रियाशील तत्त्वोंसे होता है उनकी समतासे प्रकृति या स्वास्थ्य एवं विषमतासे विकार या रोगकी स्थिति बनती है; पाञ्चभौतिक द्रव्योंद्वारा ही पुनः प्रकृति स्थापन इसी-लिए सामान्य और विशेषके सिद्धान्तानुसार सम्भव होता है; उसी भांति मानस विकारों और मानस स्वास्थ्यका कारण भी पाञ्चभौतिक विकार भूत त्रिदोष ही है।

जहां तक शरीरकी उत्पत्तिका प्रश्न है; पञ्चभूतोंसे त्रिदोष और त्रिदोषसे शरीर बनता है पञ्चभूत, पञ्चतन्मात्रसे, पञ्चतन्मात्र अहङ्कारसे अहङ्कार महान्से तथा महान् सत्त्व, रजस्, तमस्के समावस्थ अव्यक्त या प्रकृतिसे बने हैं। इसीलिए त्रिदोष भी सत्त्व-रजस् तमसात्मक हैं। वायुको रजोबहुल, पित्तको सत्त्वबहुल एवं कफको तमोबहुल बताया गया है। त्रिदोषोंके सूक्ष्मतम नियामक ये सत्त्व, रजस्तम उनमें अनुस्यूत रहते हैं। मनका पोषण या यापन वात-पित्त-कफात्मक

आहार प्रसाद रसके अणिष्ठ भागसे होता है जिसमें सत्त्व-रजस्-तमस्के क्रियाशील घटक ही सूक्ष्मतम रूपमें अभिन्न रूपमें अनुस्यूत रहते हैं। जिनके आधार पर, भौतिक या त्रिदोषात्मक व्याख्यात आहारको पुनः सात्त्विक, राजस या तामस कहा जाता है। स्वास्थ्यके प्राकृतिक व्यापारोंमें भी त्रिदोषोंद्वारा मनोव्यापार भी शारीर व्यापारोंकी भांति सम्पन्न किए जाते हैं। वातकलाकलीय अध्यायमें आचार्य चरकने ‘वायु’ को मनका नियन्ता और प्रणेता बताया है (नियन्ता प्रणेता च मनः), और सब इन्द्रियोंका उद्योजक तथा सब इन्द्रियार्थोंका वाहक और सब तरहकी चेष्टाओंका प्रवर्तक (सर्वेन्द्रियाणामुद्योजकः, सर्वेन्द्रियार्थानामभिवोढा, प्रवर्तकश्चेष्टानामुच्चावचानां) कहा है। इसी भांति दर्शन, ज्ञान, भूख-प्यास, प्रसन्नता, मेधा जैसी संवेदनाएँ पित्तके कर्म बताए गए हैं। धैर्य, दृढ़ता, स्थिरता आदिका आधार कफ है। प्राकृतिक व्यापारोंके अतिरिक्त वायु पित्त, कफके प्रकोपसे विभिन्न मनोविकारों और मानसरोगोंका प्रतिपादन किया गया है। वात प्रकृतिको चपल और अस्थिर तथा हीन सत्त्व, पित्त प्रकृतिको शीघ्र कोपी और संवेदनशील, बुद्धिमान् तथा कफ-प्रकृतिको धीर, प्रमादी और दीर्घसूत्री बताना त्रिदोषोंके मानसप्रभावका ज्ञापक है। मनोविकारोंका प्रभाव भी त्रिदोषोंपर विपुल पड़ता है—‘काम-शोक-भयाद् वायुः क्रोधात् पित्तं’ तथा ‘हर्षात् कफः’ में नियत मनोविकारोंसे नियत शारीर दोषोंकी वृद्धि बताई गई है। अस्तु—

‘मन’के उपादान भूत सत्त्व, रजस्, तमस्की प्रकृति भी शुक्र शोणित संयोगके भीतर ही अनुस्यूत रहती है जिसके आधारपर उसकी महा प्रकृति सत्त्विक, राजस या तामस रूपमें बनती है। अतः सादृश्यसे प्रकृति भेदोंका निरूपण चरकादि ग्रन्थोंमें देख सकते हैं। ‘सत्त्व’ मनका निर्विकार उपादान है। अतः, उसे दोष नहीं कहा गया; रजस् चल और तमस् आवरक है अतः रागात्मक और द्वेषात्मक वृत्तियाँ रजस्का परिणाम हैं तथा मोहात्मक और अज्ञानात्मक वृत्तियाँ तमस्का परिणाम हैं। रजस् और तमस्के तारतम्य मनके विभिन्न विकारोंके मूल हैं इसलिए इन

हो को ही मनका दोष कहा गया है। परन्तु सत्त्व भी मनका घटक है यह न भूलना चाहिए। सत्त्व, रजस्, तमस्की स्थिति शरीरमें वात-पित्त-कफात्मक आहार रसके प्रसादांश, सूक्ष्मतम मनः पोषक तत्त्वसे अलग नहीं। अतः, दोषोंका सञ्चय, प्रकोप, प्रसरादि छै अवस्थाएँ रसके माध्यम से ही सम्पन्न होने वाली हैं। वात-पित्त-कफके सञ्चय, प्रकोप, प्रसरादिपर ही मानस उपादानों रजस् और तमस् दोषों या सत्त्वकी स्थितिका प्रभावित होना निर्भर है। अतः, रजस् और तमस्के संचयप्रकोप प्रसरादिका प्रतिपादन न तो युक्तिसंगत है न आवश्यक ही।

इसीलिए पूर्वाचार्योंने जहांपर उन्माद, अपस्मार, अपतन्त्रक, अतत्त्वाभिनिवेश आदि मानस-रोगोंकी सम्प्राप्तिका निरूपण किया है वहां, वात-पित्त-कफ दोषरूप मलोंसे ही हृदयकी दुष्टि बताई है। बुद्धिका निवास स्थान चेतनाका आश्रय हृदयको बताया है, मन और उसके चिन्त्यका आश्रय भी हृदयको कहा है। हृदयके दूषित होनेपर मनोवह स्रोतस् प्रभावित होते हैं एवं उनके माध्यमसे व्यक्तिका मन रोग जुष्ट होता है। यह विशेष स्मरणीय है कि मन या ज्ञानका केन्द्र हृदय होते हुए भी संज्ञाओं या सम्बेदनाओं रूपी मनोव्यापारोंका अधिष्ठान समूचा शरीर है क्योंकि मनोवह स्रोतस् सारे शरीरमें व्याप्त हैं। महर्षि चरकने लिखा है—“केवलमेवाऽस्य मनसः शरीरमधिष्ठान भूतम् (वि० अ० ५)” इस मनका अधिष्ठान भूत सारा शरीर है। ‘मन’ अणु होनेके कारण मनोवह स्रोतसोंके द्वारा समस्त देहमें अगणनीय कालमें यातायात करता रहता है। चक्रपाणिका कहना है कि “स्रोतांसि च मनोवहानीत्येनेन हृदयदेश सम्बन्धि-धमन्यो विशेषेण मनोवहा दर्शयति, किंवा केवलमेव शरीरं मनोऽभ्यनुस्यूतं जग्राह।” अर्थात् ‘हृदय देश सम्बन्धि धमनियां विशेषकर मनोवहा होनेसे उन्हें ही मनोवह स्रोतसोंका नाम दिया गया है; अथवा मन या संवेदनाओंसे अभितः अनुस्यूत शरीरको मनोवह स्रोतस् कहना आचार्यको अभिप्रेत है।’ स्पष्ट है कि धमनियों द्वारा रसके माध्यमसे वातादि दोष हृदयदुष्टिके उपरान्त मनोदुष्टिके कारण बनते हैं। इसीलिए वात, पित्त, कफ और मज्जापातसे

होनेवाले चार भेद उन्मादके करके पांचवां आगन्तुज भेद किया गया है। अपस्मारकी सम्प्राप्तिमें तो साफ तौरपर आचार्यने विभ्रान्त त्रिदोषों द्वारा ही मनोदोषों (रजस्तम) के द्वारा सत्त्वगुणके विहत करनेकी बात कही गई है—

“विभ्रान्त बहुदोषाणामहिताऽशुचिभोजनात् ।
रजस्तमोभ्यां विहते सत्त्वे दोषावृते हृदि ॥”

चक्रपाणिने ‘विभ्रान्त बहुदोषाणां’ का अर्थ लिखा है; ‘विभ्रान्ता उन्मार्गागामिनो बहवश्च दोषा येषां तेषां विभ्रान्त बहुदोषाणां’ इति। ‘विहते सत्त्वे इति सत्त्वाख्यगुणे विहते; न तु सत्त्वशब्देन मन उच्यते, तस्य ‘मनस्यभिहते’ इत्यनेन ग्रहणं करिष्यति।’ अर्थात् सत्त्वसे मतलब मनके उपादानभूत सत्त्वगुणसे है न कि मनसे; मनका ग्रहण अगले श्लोकमें ‘मनस्यभिहते’ कहकर (वाक्यपूर्ति करते समय) करेगा। यथा—

“चिन्ताकामभयक्रोध शोकोद्वेगादिभिस्तथा ।
मनस्यभिहते नृणामपस्मारः प्रवर्त्तते ॥”

उक्त शारीर दोषों द्वारा रजस्तमकी वृद्धिसे सत्त्वके अभिहत होनेके अलावा मनोविकार भी मनकी विकृतिके कारण इस श्लोकमें बताए गए हैं; इन मनोविकारोंसे शरीरमें वात और पित्तका, तथा आदिसे लोभ, मत्सर आदि द्वारा कफका प्रकोप होकर रजस्तमका उद्रेक विशेषकर होता है कारण, इन मनोविकारोंका रजस्तमके साथ साक्षात् अव्यव्यतिरेक सम्बन्ध है। तात्पर्यको स्पष्ट करनेके लिए आचार्य पुनः कहते हैं—

“धमनीभिः श्रिता दोषा हृदयं पीडयन्ति हि ।
सम्पीड्यमानो व्यथते मूढो भ्रान्तेन चेतसा ॥”

‘रसवाहि धमनियों द्वारा दोष (वात-पित्त-कफ) हृदयको पीड़ित करते हैं जिससे मनके भ्रान्त होनेसे रोगी पीड़ित होकर दुःखी होता है।’

उक्त उद्धरण देनेका आशय यही है कि ‘रजस्तम’ के सञ्चयका कोई पृथक् स्थान नहीं है न उनके वहन करनेके लिए कोई पृथक् स्रोतस ही हैं। वात-पित्त-कफका अधिष्ठानभूत रसवात ही इतका भी आश्रय है, क्योंकि वात-पित्त-कफके अन्तर्गत अणिष्ठ रूपमें अनुस्यूत रजस् और तमस् तथा सत्त्वके पोषक

उपादान भी रहते हैं, जिनसे हृदय, मन और मनोवह स्रोतसोंका पोषण या विकृति सम्भव होती है। अतः रजस्-तमस्की स्वतन्त्र सञ्चयादि छः अवस्थाएं होनेका कोई अवकाश नहीं है।

यद्यपि सत्त्व-रजस्-तमस्के ऊनाधिक तारतम्य भेदसे वातादि शारीर प्रकृतियोंकी भांति किए गए हैं, जिनके आधारपर सत्त्व-परीक्षाके अन्तर्गत प्रवर-अवर और मध्यम सत्त्वका निर्णय किया जाता है। अनुक-सादृश्यसे इनके उपभेद करके सूक्ष्मतारतम्यके आधारपर असंख्य भेदोंकी सम्भावना बताई गई है। परन्तु ६२ दोषभेदोंको संसर्ग एवं सन्निपातद्वारा वर्गीकृत करके ६२ रस भेदोंद्वारा उनकी चिकित्साका सार्थक होना लक्ष्य है। इस भांति सरव, रजस्, तमस्के संसर्ग और सन्निपातका अवसर नहीं। क्योंकि मन अणुरूप अत्यन्त सूक्ष्म है, उसके पोषक सत्त्व-रजस्-तमस्के विद्युन्मय शक्तिस्फुलिंग ही उपादान हैं जो वात-पित्त कफमय रसके अणिष्ठ अणुओंद्वारा ही मनमें सञ्चरित होते हैं। ठीक इसतरह जैसे कि बैटरीको विद्युन्मय शक्तिद्वारा चार्ज किया जाता रहना आवश्यक है उसी भांति मनके विद्युन्मय उपादानों (सत्त्व-रजस्-तमस्) को दैनिक आहार द्वारा चार्ज होना (पोषण मिलना) आवश्यक है। जो कि वात पित्तकफात्मक आहाररसके माध्यमसे जीवन पर्यन्त होता रहता है। अस्तु—

मनके तथाकथित दोषों (रजस्तमस्) के संसर्ग और सन्निपातकी कल्पना करना अव्यावहारिक ही है। मनोरोगोंकी सम्प्राप्तिमें भी जब वात-पित्त-कफ ही मूल आधार हैं; रजस्-तमस् के उद्रेकके माध्यम भी वे ही हैं एवं रोगप्रतीकारके लिए भी मानस प्रशमके उपायों-सत्त्वावजय चिकित्साके साथ साथ शारीर दोष विपरीत औषधान्न विहारका उपयोग अनिवार्य है, तो स्पष्ट है कि मानस दोषोंके संसर्ग-सन्निपातकी न तो आवश्यकता है न ही शक्तिपुञ्ज विद्युन्मय सत्त्व-रजस्-तमस् के संसर्ग सन्निपातकी भौतिक मात्राके आधारपर तारतम्य नियामक भेद कल्पना करना सम्भव ही है।

मस्तिस्क और नाड़ी संस्थानके संवेदना और चेष्टा

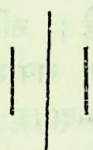
व्यापार विद्युन्मय हैं, यह आधुनिक शारीर शास्त्री एवं जीव रसायनविदोंने प्रयोगोंसे सिद्ध कर दिया है। विद्युत्की यह शक्ति आहार रसके उपादानों (वात-पित्त-कफात्मक) जैवरासायनिक तत्त्वोंसे ही रूपान्तरित और निष्पन्न होकर मनोव्यापारों (Faculty of Mind) का सञ्चालन करती है। सत्त्व-रजस्-तमस् रूपमें इस शक्तिके उपादान तीन प्रकारके परस्पर संयुक्त विद्युन्मय कणोंका विश्लेषण और पृथक्करण आजके अणुविज्ञानके युग (Atomic age) में भी सम्भव नहीं हुआ है। यदि यह सम्भव हो जावे तो रजस् और तमस् को अणुशक्तिद्वारा अभि-भूत करके सत्त्वके उद्रेकद्वारा प्राणीकी सत्त्व प्रकृतिको भी बदला जाना सम्भव हो जावे। समस्त वैयक्तिक और सामाजिक अशान्तिके मूल ये रजस् और तमस् ही हैं। इनके कारण ही मनुष्य प्रज्ञापराध करता है, तथा शारीरिक मानसिक आधि व्याधियोंसे ग्रस्त होकर दुःख भोगता है। इन्हींके कारण जाति, राष्ट्र और समाजके रागद्वेष और अज्ञान मूलक संघर्ष चलते हैं। समूचा मानव समाज सुख और सन्तोषकी सांस ले सकता है समस्त, अन्ताराष्ट्रिय भ्रमंस्त सुलटकर विश्व शान्तिकी सहज ही स्थापना हो सकती है। प्रत्येक जीव दुःखोंसे चरम मोक्ष भी पा सकता है यदि रजस्-तमस्के गुणात्मक और मात्रिक परिमाणका पता लगाकर उसे सत्त्वकी मात्राके साथ समीकृत किया जा सके।

मनकी विद्युन्मय अणुरूप सत्ताका पार्श्वभौतिक रूप एवं पांचभौतिक त्रिदोषात्मक आहारगत सत्त्व-रजस्तमसात्मक एकीभूत विद्युन्मयद्रव्यद्वारा उसका निरन्तर पोषण, सम्पद्, विपद् और प्रतीकार आयुर्वेद रूपी जीवन विज्ञानकी अनुपम देन विध्वको है। आधुनिक अणु-विज्ञान सत्त्व-रजस्-तमस्के मौलिक विभेदकी दिशामें कुछ खोज कर सके तो मानस-शास्त्र और जीवन विज्ञान (Biology) के क्षेत्रमें एक अपूर्व प्राप्ति हो सकती है। किन्तु यह सम्भावना साकार हो सकती है यह गगनारविन्दवत् मात्स्य होता है। तब तक सत्त्व, रजस्, तमस्के संसर्ग-सन्निपातज भेदोंकी कल्पनाका आधार भी शून्य में समझना चाहिए।

7636

विश्वका प्रमुख रोग—

रक्तचाप वृद्धि



लेखक—पं० शिवशङ्करात्मज गौरीशङ्कर

श्रोत्रिय, भिषगाचार्य, आयुर्वेदाचार्य,

राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, उदयपुर (राज०)



प्राचीन आर्य ग्रन्थोंमें यद्यपि इस महारोगका रक्तचापवृद्धि नामसे उल्लेख नहीं मिलता है, फिरभी हमारी मान्यता स्पष्ट है कि उस समयमें इस रोगकी इतनी व्यापकता नहीं थी। किन्तु वर्तमानमें यदि कोई रोग वास्तवमें संसार व्यापी है, जिससे सारे विश्वकी जनता बड़ी संख्यामें आक्रान्त है तो रक्तचापकी वृद्धि या हाई ब्लडप्रेसर (High Blood Pressure) है।

सन् १९४६ में एक वरिष्ठ वैज्ञानिकके अनुमानके अनुसार केवल उत्तरी अमेरिकामें १॥ करोड़ व्यक्ति इस रोगसे ग्रस्त थे। यूरोपीय देशोंकी भी यही स्थिति है। इङ्ग्लैंड, जर्मनी, फ्रांस, इटली, रूस सभी देशोंमें इस रोगसे ग्रस्त व्यक्तियोंकी बहुत बड़ी संख्या है और हर रोज बढ़ती जा रही है। भारत देश भी इस महान् रोगसे अछूता नहीं है। देशकी महान् आत्माओंकी भी इस रोगने अपना ग्रास बनाया है। यह रोग संक्रामक नहीं होते हुए भी जिस प्रकारसे बढ़ रहा है, और स्थायीरूप धारण कर रहा है, उतना कोई भी भयंकर संक्रामक रोग नहीं फैला। मधुमेह और रक्तचाप वृद्धि (High Blood Pressure)

के कारणके दृष्टिकोणसे विचार किया जाय तो ज्ञात होगा कि यह इस युगकी सभ्यता और उद्योगीकरण की महान् देन है। उद्योगों व्यवसायोंके चक्रमें फँसा हुआ व्यक्ति २४ घण्टे उसके कारण चिन्तित रहता है। आज इतने रूपयोंका घाटा, आज इतना लाभ, मंदी तेजीमें करोड़पती बन जाऊँ यह पारस्परिक स्पर्धा ही एक मात्र मानव जीवनका उद्देश्य और ध्येय है। इस प्रकार ये उत्पन्न होने वाली चिन्ताएँ इन रोगोंका कारण हैं। प्रमुखतया रक्तचाप या हाई ब्लड प्रेशर (High Blood Pressure) के सम्बन्धमें चिकित्सा विज्ञानके नये अन्वेषणोंने जो कि १५-१६ वर्षोंमें हुए हैं, यह प्रमाणित कर दिया है कि मन और इन रोगोंका विशेष सम्बन्ध है। मानसिक दशाओंका रोगोत्पत्तिपर विशेष प्रभाव पड़ता है। मानसिक उद्विग्नता, चिन्ताएँ, विभिन्न प्रकारकी परिस्थितियोंका भय, ईर्ष्या आदि अनेक रोगोंके कारण हैं। इन दशाओंका हृदयपर तात्कालिक प्रभाव होता है। इनको हमारे 'तपस्स्तेजसा दीप्ता ह्यमाना इवाग्नयः' महर्षियों ने काफी समय पूर्व ही ज्ञात कर लिया था। क्रोध, भय, शोक आदिसे हृदयकी धड़कन, नाड़ीका वेगसे चलना, मुख मण्डलकी रक्तिमा-अर्थात् लाल हो जाना, माथेपर पसीना आना, स्वेद, ये साधारण बातें तो सबको ही ज्ञात हैं। किन्तु वैज्ञानिक अनुसन्धानोंने भी यह सिद्ध कर दिया है कि पाचन सम्बन्धी विकार आमाशय व्रण, आंत्रशोथ, अम्लपित्त, हृद्रोग यकृद्विकार, वृक्कुरोग, मधुमेह तथा अन्य भी अनेक रोगोंकी उत्पत्तिका मूलकारण ये मानसिक दशाएँ ही होती हैं, उनमें भी विशेषकर रक्त चाप वृद्धि की। अभी तक इस रोगके कारणका पता नहीं था किन्तु अब सभी बड़े बड़े विद्वान् भिषगाचार्य और आंग्ल आयुर्वेदाचार्य सहमत हैं कि यह रोग मानसिक कारणोंसे उत्पन्न होता है। लन्दन ७ मार्च ६५ की ब्रिटिश चिकित्सा पत्रिकामें मनोविज्ञानकी सहायतासे की जाने वाली चिकित्साके विषयमें जो अनुभव लिखे हैं, उनमें भी रोगोंका कारण मानसिक अवसाद है। विश्वप्रसिद्ध अमरीकी डाक्टर नैथन एस्को क्लाईनने यह मत व्यक्त किया है कि आज मानवको जो अधिकतर रोग हैं, उनका सबसे बड़ा कारण है

रक्तका दाब (Pressure) बढ़ जानेकी अवस्था शरीरके लिये भयंकर है। कभी कभी दाब इतना बढ़ जाता है कि उससे सूक्ष्म धमनी फट जाती है रक्तस्राव होता है यह स्थिति मस्तिष्ककी सूक्ष्म धमनियोंमें अधिक होती है, जहाँ धमनीसे रक्त निकलकर जमा होजानेसे मस्तिष्कके उस स्थानके सूक्ष्म अणु (Cell) नष्ट हो जाते हैं, और इससे पक्षाघात और मृत्यु हो जाती है। अति रक्तचाप वृद्धिसे शरीरके सभी अंगोंको हानि पहुँचती है। हृदयके तीव्ररोग कोरोनरी थ्रम्बोसिसकी यह दशा विशेष कारण होती है। उससे धीरे धीरे धमनियाँ कठिन होती चली जाती हैं, जिससे टूटने या फटनेका डर रहता है। तीसरा अंग जिसको हानि पहुँच सकती है, वह है वृक्क उसकी क्षतिसे यूरिमिया (Urimia) की दशा उत्पन्न होकर प्राणान्त हो सकता है। रक्तदाबकी सामान्यतया आयुके अनुसार निम्नांकित तालिका स्वाभाविक रक्तचाप को बताती है।

| अवस्था | रक्तभार |
|---------------|---|
| २१ से ३० वर्ष | $\frac{128}{72}$ संकोचीय रक्तभार प्रसारीय रक्तभार |
| ३१ से ४० वर्ष | $\frac{126}{78}$ संकोचकीय रक्तभार प्रसारीय रक्तभार |
| ४१ से ५० वर्ष | $\frac{130}{76}$ संकोचीय रक्तभार प्रसारीय रक्तभार |
| ५१ से ६० वर्ष | $\frac{138}{90}$ संकोचीय रक्तभार प्रसारीय रक्तभार |

रक्तदाबके अधिक होनेके लक्षण—(१) सिरदर्द, शिरःशूल, (२) सिरमें चक्कर आना (भ्रम), (३) आँखोंके सामने तारे टूटना, (४) धूँधला दिखाई देना, (५) नेत्रोंके सामने अँधेरा हो जाना, (६) बिना किसी विशेष कारणके दुर्बलता प्रतीत होना, (७) हाथ पाँवोंका सुन्न होना ये मुख्य लक्षण हैं। आयुर्वेदके संहिता ग्रन्थोंमें रक्तचाप-वृद्धि जैसा कि मैंने पूर्वमें निवेदन किया है नामसे इस रोगका वर्णन नहीं है, किन्तु अध्याय ४७ सुश्रुत उत्तरतन्त्रके श्लोक ६७, ६८ को देखिये। लक्षण स्पष्ट है।

“कृत्स्न देहानुगं रक्तमुद्रितं दहति ह्यति।
संचूष्यते, दह्यते च ताम्राभस्ताम्रलोचनः॥
लोहं गन्धाङ्गं वदनो वह्निनेवावकीर्यते॥”

उपरोक्त लक्षण प्रगट होनेपर तुरन्त काम चलाकर रोगीको शय्यामें विश्राम करना चाहिये। सभी प्रकारकी मानसिक चिन्ताओंका उद्भिन्नताओंका पूर्ण परित्याग आवश्यक है। रुधिर दाबको घटानेका प्रयत्न करना चाहिये। सर्पगन्धाका प्रयोग गुलाब-जलके साथ काफी लाभदायक है। अभी अभी विद्वानोंने जटामांसीका प्रयोग भी बहुत लाभप्रद बताया है। जिसका प्रयोग सभी वरिष्ठ चिकित्सक महोदयोंको करना चाहिये। शारीरिक दृष्टिकोणसे चिकित्सक के क्षेत्रमें औषध द्वारा तथा मानसिक कारणोंकी शान्ति हेतु निदान परिवर्जनके सिद्धान्तानुसार “धी धैर्यस्मृति विज्ञानं मनो दोषौषधं परम्” मानसशुद्धि, चिकित्साका बहुत सहयोगी कारण होगा। मेरी मान्यता है कि हमें “दूष्यं देशं बलं कालं अनलं प्रकृतिं वयः। सत्त्वं सात्स्यं तथाहारं अवस्थाश्च पृथक् विधाः।” के अनुसार ही प्रयोग करने होंगे और त्रिदोष सिद्धान्तकी मूल भित्तिको मजबूत करना होगा। हर विज्ञानकी खोजका लाभ लेना चाहिये, मगर अपने सिद्धान्तके अनुसार।

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवनका

बाह्यरसायन

भ्रम, अनिद्रा तथा विस्मृतिको दूर करता है।

मेधा, बुद्धि और आयुष्यका वर्द्धक

उत्तम रसायन है।

अनुभवी चिकित्सक

रक्तभार वृद्धिको स्थायी रूपसे दूर भगानेके लिए

इसका प्रयोग कराते हैं।

श्वास रोगकी अनुभूत चिकित्सा

लेखक—वैद्य सुरेशचन्द्र शर्मा 'गौड़'

प्रधान चिकित्सक, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
मोहनगढ़ (जैसलमेर)

आयुर्वेदिक पद्धतिके अनुसार चिकित्सा करनेमें उसी पद्धतिके आधारपर परीक्षण करना अधिक अच्छा है। दो पद्धतियोंको मिलाकर विज्ञानकी दृष्टिसे कोई विशेष सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती जब तककि मिश्रणका सिद्धान्त निश्चित न हो। फिर भी लेखकने जो परीक्षण किया है वह प्रकाशित किया जा रहा है क्योंकि सभी परीक्षण जिज्ञासु विद्वानोंके लिए कुछ न कुछ नई दिशा देते ही हैं।

सम्पादक

आज भारत सरकारके लिये जिस प्रकार राज-यक्ष्माने एक विकट समस्या उत्पन्न कर दी है, उसी प्रकार श्वासरोग ने भी एक समस्या उत्पन्न कर दी है। आजकल यह रोग उग्र रूप धारण कर फैलता ही जा रहा है। चूंकि आजके युगमें मनुष्य मात्रको कृत्रिम एवं अशान्तिके वातावरणमें गुजरना पड़ रहा है। आज क्षयके लिये बी० सी० जी० के टीकेका ही आविष्कार नहीं हुआ है, अपितु अनेक शोधनात्मक कार्य हुए हैं। क्षयका रोगी शनैः शनैः क्षीण होकर मरता है। परन्तु श्वासके रोगीको कष्ट भी उससे अधिक सहन करना पड़ता है एवं असमयमें ही मृत्युका शिकार भी होना पड़ता है। अतः यह रोग उससे भी अधिक कष्टदायक है। अभी तक इसकी रोक थामका भी कोई उचित समाधान नहीं निकला है।

कारण—यह रोग सीसा, पित्तल, जस्ताके कारखानों और शुगर मिल आदिमें कार्य करने वालोंको अधिक होता है। डाल्डा एवं धूल तो इस रोगके प्रमुख सहायक हैं। इसलिये ही श्वास रोगका ध्वंसात्मक रूप अधिक बढ़ता जा रहा है।

हमारे आयुर्वेद शास्त्रोंमें एवं अनेक पुस्तकोंमें इस रोगकी काफी विवेचना मिलती है। उसके पिष्ट-पेषणसे कोई लाभ नहीं अतः यहाँ मैं वही बात रखूंगा जो शतप्रतिशत सत्य एवं विश्वास योग्य होगी। चूंकि आयुर्वेद औषधके मूल द्रव्योंके पूर्ण शुद्ध रूपमें सर्वत्र प्राप्त न होनेसे चिकित्सामें विशेष कठिनाता होती है। अतः सर्वत्र सुलभ निम्न चिकित्सा प्रस्तुत है :—

योगः—(१) वत्सनाभ (अशुद्ध) १ तोला, (२) हल्दी १४ तोला, (३) सुहागा भुना हुआ १० तोला, (४) पीपल १० तोला।

विधि :—उपरोक्त सभी द्रव्योंको कूटकर कपड़-छान चूर्ण करलें।

सेवन विधि :—किसी भी प्रकारके श्वासमें २ रत्ती उपरोक्त औषध एवं २ रत्ती स्फटिक भस्म शहदके साथ दिनमें ३ बार सेवन करावें।

पथ्य :—प्रातः काल १० बजे चनेकी दालक वेसन, हल्दी, गुड़ या खाण्ड एवं घृत सब समान भाग लेकर विधिवत् हलुवा बनाकर सेवन करें। सायं ५ बजे हल्का एवं पुष्टिकर भोजन कर सायं काल टहलें।

की दिनचर्या बनावें।

सूचना :—हलुवा खानेके बीचमें और पश्चात् भी दो घण्टे तक पानी नहीं पीना चाहिये। इसके लिये यह आवश्यक है कि प्रातः काल शौच जानेसे पूर्व इच्छासे कुछ अधिक मात्रामें जल पीलें। इससे उदर भी साफ हो जावेगा, एवं हलुवा खानेके पश्चात् प्यास भी नहीं लगेगी। और इस रोगके निवारणमें भी सहायता मिलेगी।

इस रोगमें कोष्ठवद्धता नहीं रहनी चाहिये। कोष्ठ-वद्धता मालूम होनेपर मधुयष्ट्यादि चूर्ण अथवा पंच-कोल चूर्णसे उदर साफ करा दें। किन्तु जिन रोगियोंमें पाचक पित्तकी कमीसे बराबर कोष्ठवद्धता बनी रहती है, ऐसे रोगियोंको भोजनोत्तर द्राक्षासव या अम्रितुण्डी वटी देनी चाहिये।

किन्तु जीर्ण तमक एवं महाश्वासमें केवल इस औषधिसे कार्य नहीं चलता। क्योंकि जिस समय श्वासका वेग प्रबल होता है, उस समयकी वेदना भुक्त-भोगी ही जानता है। उस समय तो उसको तात्कालिक लाभ देना ही पड़ता है। तदर्थ एमिनोफाईलिन १० सी० सी० इन्ट्राविनस इन्जेक्शन करनेके पश्चात् जिस वेनमें इन्जेक्शन लगाया गया है, उसीमेंसे १० या २० सी० सी० रक्त वापिस सीरीजमें खैंच लेवें, एवं तुरन्त पश्चात् उस रक्तको नितम्ब प्रदेशमें इन्ट्राम-स्कूलर इन्जेक्ट कर दें। इस प्रकारकी क्रियासे वेग तो शान्त होगा ही अपितु रोगमें स्थाई लाभ भी होगा। अगर रोगका वेग बहुत अधिक ही हो तो धत्तूर बीज एवं विजयाका धुस्रपान करानेसे वेग तुरन्त शान्त हो ही जावेगा।

नवीन पुरातन एवं प्रबल वेगमें पहले ४-५ दिन तक एमिनो फाईलिन १० सी० सी० का इन्जेक्शन देकर यह क्रिया की जावे। तदुपरान्त कैलसियम ग्लुकोनेट १०% १० सी० सी० अथवा कैलसियम सैण्डोज विटामिन सी० 500 M. g. के प्रयुक्त करके यह क्रिया करें। इससे शरीर भी पुष्ट होगा एवं लाभ भी अधिक होगा। कैलसियम सैण्डोजके इन्जेक्शन, एमिनोफाईलिनके इन्जेक्शनोके साथ-साथ प्रयुक्त करनेसे त्वरित एवं स्थायी स्वस्थतामें शीघ्रतासे लाभ

होगा। किन्तु स्वास्थ्यकी अप्रावस्थामें एमिनोफाईलिन बन्द ही कर देना उचित होगा।

नवीन एवं साध्य श्वासमें एक मास तक यह क्रिया करते रहनेसे एवं पुरातन असाध्य कहे जाने वाले श्वासमें उपरोक्त औषध एवं क्रिया २ माह तक करनेपर यह रोग सर्वदाके लिये चला जाता है एवं पुनः होनेकी सम्भावना भी नहीं रहती। इस प्रकारके श्वासके रोगियोंको प्रातःकाल जल पीनेकी दिन चर्या आजन्म तक कर लेनी चाहिये। ध्यान रहे कि एक दम सोकर उठनेके पश्चात् जल न पीवे। अपितु कुछ ठहर कर पीवे।

यह रक्त परिवर्तनकी चिकित्सा श्वासके हृदयके रोगियोंमें भी लाभ दायक है, एवं उपद्रव शून्य है, किन्तु ध्यान रहे हृद्दौर्बल्यके रोगियोंमें प्रारम्भकी क्रियामें 15 सी० सी० से अधिक रक्त न खैंचा जावे। 10-15 दिनकी चिकित्साके पश्चात् 20 सी० सी० रक्त रक्त परिवर्तनादिनिमित्तक ले सकते हैं। ऐसे रोगियोंमें उपरोक्त इन्जेक्शन धीरे-धीरे लगाने चाहिये। जो रोगी सशक्त हों उनमेंसे शुरुआतकी चिकित्सामें 25 से 30 सी० सी० रक्त परिवर्तनादि निमित्तक ले सकते हैं।

आंशिक श्वास रोगकी अवस्थामें अवस्था श्वास प्रति-रोधक शक्ति प्राप्त करनेके लिये वर्षा ऋतुमें कैलसियम ग्लुकोनेट इन्जेक्शन एवं रक्त परिवर्तनकी क्रिया प्रति वर्ष २-३ दिन तक करानेसे अद्भुत रोग क्षमता प्राप्त होती है।

उपरोक्त आयुर्वेदिक योग बहुत कठिनःइसे प्राप्त हुआ था। इस योग एवं इस क्रियासे बहुतसे रोगी ठीक हुए हैं। कुछ चिकित्सक इस रोगमें सोमल ठीक ठीक हैं। कुछ चिकित्सक इस रोगमें सोमल प्रधान औषधिको अथवा सोमलको महत्ता देते हैं किन्तु प्रमेह जन्य श्वास रोग अथवा प्रमेहके रोगियोंमें इससे लाभके बजाय हानि ही होती है। किन्तु इस योग एवं क्रियासे प्रमेहके रोगियोंमें भी पूर्ण तथा लाभ होता है। यह योग श्वास कुठार रसके स्थानपर ही नहीं अपितु कासकी सभी अवस्थाओंमें भी श्वास कुठारसे एवं अन्य बहुमूल्य रसोंसे कहीं उत्तम कार्य करता है।

कुकूणक

शिशुओंका एक नेत्ररोग

लेखक—रायजादा जगदम्बाप्रसाद श्रोवास्तव
तेजापुरवा, फर्रुखाबाद (उ० प्र०)

—०—

परिचय—यह एक शिशुओंको होनेवाला नेत्र रोग है। इसमें नेत्रोंमें श्लेष्म, कोथ हो जाता है और नेत्रोंमें बारि भरता है। काश्यप संहितामें इसका निम्न प्रकार वर्णन किया गया है।

यदा माता कुमारस्य मधुराणि निषेवते ।
मत्स्यं मांसं पयः शाकं नवनीतं तथा दधि ॥
सुरासवं पिष्टमयं तिलपिष्टांश्च काञ्जिकम् ।
अभिष्यन्दीनि सर्वाणि काले काले निषेवते ॥
भुक्त्वा भुक्त्वा दिवा शेते विसंज्ञा च विबुध्यते ।
तस्या दोषः प्रकुपितो दूरं गत्वा च तिष्ठते ॥
दोषेणाकृतमार्गायास्ततः स्तन्यं हि दुष्यते ।
प्रदुष्टदोषसंज्ञं तु यदा पिवति दारकः ॥
लवणाम्ल निषेवित्वान्मातापुत्रौ रसादिह ।
आहार दोषान्तस्यास्तु बालस्यानन्नभोजिनः ॥
अनुप्रवेशादाक्षेपादुष्णसत्त्वावनादपि ।

जायते नयनव्याधिः श्लैमलोहित सम्भवः ॥
काश्यप संहिता । खिल स्थान । अ० १३ । श्लोक ३ से ६

जब शिशुकी माता समय समयपर मत्स्य, मांस, दूध, शाक, नवनीत, सुरा, आसव, पिष्टीके पदार्थ, तिलपिष्ट, अम्ल, काञ्जी आदि तथा मधुर और अभिष्यन्दी, पदार्थोंका सेवन करती है तथा उन्हें सेवन कर दिनमें खूब सोती है, घण्टों निद्रा तन्द्रामें बनी रहती है तब उसके दोष प्रकुपित होकर शरीरके भीतरी अङ्गोंमें प्रविष्ट होजाते हैं। दोषोंसे मार्ग अवरुद्ध हो जानेसे उसका दूध दूषित होजाता है। माता जैसा भोजन करती है वैसा दूध भी बनता है। इस दूषित दूधको जब उसका शिशु पान करता है। तब माताका अम्ल लवण मधुर रस प्रधान दूध पीनेसे, स्तन्यके

अधोपपन्न होकर शिशुको वह दूषित दुग्ध कफ, रक्त जन्य नेत्र व्याधि उत्पन्न कर देता है जिसे कुकूणक कहते हैं।

श्री माधवाचार्य कहते हैं—

“कुकूणकः क्षीरदोषाच्छिशूनामेव वर्त्मनि ।

“क्षीरके दोषसे शिशुओंको ही वर्त्ममें यह रोग होता है।” इसीप्रकार सुश्रुतने कहा है कि—

“स्तन्य प्रकोप कफ मारुत पित्त रक्तैर्वालाक्षिवर्त्म भव एव कुकूणकोऽन्यः ॥”

श्री कण्ठ इसे एक प्रकारका ‘कोथ’ मानते हैं।

“कुकूणकः कोथ इति ख्यातः ।”

इसके लक्षण—

अभीक्ष्णमसं स्रवते न च क्षीवति दुर्मनाः ।

नासिकां परि मृदनाति कर्णं बाह्यति दुःखितः ॥

ललाटमक्षिकूटं च नासां च परिमर्दति ।

नेत्रे करड्ढयतेऽभीक्ष्णं पाणिना चाप्यतीव तु ॥

स प्रकाशं न सहते अश्रु चास्य प्रवर्त्तते ।

वर्त्मनि श्वयथुश्चास्य जानीयात्तं कुकूणकम् ॥

काश्यप संहिता । खिल स्थान । अ. १३ । श्लोक ६ से ११ ॥

१. शिशुकी आंखोंसे आंसू गिरते रहते हैं।

२. दुखी शिशुको छींकें नहीं आती

३. वह नाकको रगड़ता रहता है

४. कानोंको पकड़कर खींचता या मीजता है

५. उसका हाथ प्रायः माथा, भौंह और नाकपर ही रहता है

६. वह हाथसे सदा नेत्रोंको खुजलाता रहता है

वह प्रकाशको सहन नहीं करता, आंखें बन्द रखता है। आंखें सूजी रहती हैं। प्रकाश या धूपको सहन नहीं कर पाती। यदि आंखें खुलती हैं तो उनसे पानी भरने लगता है।

[आंखोंकी पलकें सूजी होती हैं उनमें पीला द्रव या पूय भरा होता है। आंखोंके भीतरी भागोंमें भी कुछ सूजन होती है।

अंगुलियोंसे जोर लगाकर खोलनेसे आंखें खुलती हैं। शिशु आंखें स्वयं नहीं खोलता और न सहजमें खोलने देता है। आंखोंमें पीड़ा तथा खाज होती रहती है। इसीसे उसका हाथ आंखोंके आस-पास ही रहता है।]

इसी प्रकार सुश्रुत भी कहते हैं—

मृदनाति नेत्रमतिकण्डुमथाक्षिकूटं
नासाललाटमपि तेन शिशुः स नित्यम् ।
जायते तेन तन्नेत्रं कण्डूरं च सवेन्मुहुः ।
(सुश्रुत उत्तरतन्त्र)

माधवकरने भी कहा है—

“शिशुः कुर्याल्ललाटाक्षिकूट-नासावधर्षणम् ।
शक्तो नार्कप्रभां द्रष्टुं न वर्त्मन्मीलनक्षमः ॥
माधवनिदान-बालरोगनिदान ।

आजकल ट्रैकोमा (Trachoma) के लक्षण
निम्नप्रकार बताये गए हैं—

Subjective Symptoms-

More or less photophobia 1, laci-
mation 2, itching 3 and burning sen-
sation 4, feeling of foreign body 5, pain
and visual disturbance. In a good
many cases there are no subjectives.

Objective Symptoms-

Swelling of the lids 6, narrowing
of the palpebral apperture and droop-
ing of the upper lid (with weight and
swelling) there is mucopurulent dis-
charge..... conjunctiva is redend
and thickened uneven.

इनको संक्षेपमें यों कहना चाहिये—

१. प्रकाश सन्त्रास—प्रकाशमें आंखें खोलनेसे
कष्ट, आंखोंको प्रकाश सहन न होना ।
२. नेत्रवारिस्राव ।
३. नेत्रकण्डू ।
४. नेत्रोंमें दाह ।
५. नेत्रोंमें शूल ।
६. वरममें शोथ ।

ऐसी स्थितिमें दोनों लक्षणोंको तुलनात्मक
दृष्टिसे देखकर कुकूणक या कुक्कुणकको Trachoma
कहना उचित है ।

चिकित्सा—जो माता या धात्री शिशुको दुग्ध-

पान कराती हो उसके स्तन्यका शोधन करना
आवश्यक है । अथवा उसका दूध पिलाना बन्द
कर देना चाहिये । गायके अथवा बकरीके दूधको
उचित रीतिसे पिलाना ठीक है । मैसका दूध नहीं
देना चाहिये । धात्री (दूध पिलाने वाली) की भोजन
व्यवस्था बदलकर निदानके प्रकरणमें ऊपर बतलाये
हुए आहारको बदलकर उचित आहार देना चाहिये ।

औषध प्रयोग निम्न प्रकार किया जा सकता है—

१. एरण्ड पत्र स्वरस १ तोलामें रात्रिमें १ माशा
त्रिकला भिगोकर प्रातः छान लें । पिचकारीसे नेत्रोंमें
ही धारापात-बिन्दु डालें । इससे नेत्र साफ हो जाते
हैं और पीड़ा तथा कण्डू भी शान्त होजाती है ।

२. एक तोला एरण्डपत्र स्वरसमें चार रत्ती
चन्द्रोदयावर्त्ती पीसकर मिला दें । छानलें । इसे ही
चार-चार बूंद नेत्रोंमें डालें । दो दिनोंमें सभी विकारों
का शमन हो जाता है ।

३. हल्दी और दालचीनी मिलित १ तोला लें ।
५ तोला गोमूत्र तथा २ तोला एरण्डपत्र स्वरसमें
खरलकर वर्त्ती बनाकर रखें । इन्हें जलसे घिसकर
नेत्रोंमें भरण करें (लगावें) ।

४. अथवा लोध्र, हरिद्रा मधुमें घिसकर लगावें ।

५. शुण्ठीभृंग निशाकल्कः पुटपाकः ससैन्धवः ।
कुकूणकेऽक्षिरोगेषु तद्रसाश्च्योतनं हितम् ॥

६. क्रिमिघ्नालशिलादावी-लाक्षाचन्दन-गैरिकैः ।
चूर्णाञ्जनं कुकूणे स्यात् शिशूनां पोथकीषु च ॥

७. सुदर्शना मूलचूर्णादञ्जनं स्यात् कुकूणके ।
(भै० रत्नावली)

८. गर्मजलमें बोरिक पाउडर डालें । उसमें हई
भिगोकर हथेलीपर रखकर पानी निचोड़ डालें और
उससे नेत्रोंका सेक करें ।

९. दारचिकना १ चावल लें । नौसादरकी डलीसे
ताम्बेके पात्रमें रखकर घिसें । नौसादर २ रत्ती तक
घिसें । इसे शीशीमें रखलें । आधा आधा चावल
नेत्रोंमें भरें ।

१०. रसतन्त्रसार द्वितीय खण्डमें नेत्राञ्जन लिखे

गाये हैं उनका विवेचानुसार प्रयोग करें ।

शुक्र और शैक्म वेदना, ज्वर, मूत्रकृच्छ्र ये सब अश्मरीके पूर्व रूप हैं ।

लक्षण —

अश्मरीके उत्पन्न होनेपर मूत्र प्रवाहणके समय बरित, सेवनी, और मेहन इनमेंसे किसी एकमें वेदना मूत्रकी धारामें अवरोध, रक्त मिश्रित मूत्रका आना, अश्मरीके मूत्र मार्गसे हट जानेसे गोमेदके समान गंदला मूत्र आता है ।

ये अश्मरियां चार प्रकारकी होती हैं ।

- | | |
|-----------|-----------|
| १. वातज | ३. कफज |
| २. पित्तज | ४. शुक्रज |

वातज अश्मरीके लक्षण---

यदि अश्मरीमें वायुकी अधिकता हो तो रोगीको अत्यन्त वेदना होती है । दाँतोंको चबाता है, कांपता है, लिंगको मलता है और निरन्तर चित्लाता हुआ नाभिको दबाता है । अपान वायु मिश्रित मल त्याग करता है । तथा बारम्बार बूंद बूंद मूत्रका त्याग करता है । यह अश्मरी श्याव वर्ण, रुक्ष तथा कांटेके समान लगने वाली होती है ।

पित्तज अश्मरीके लक्षण---

पित्तोत्पन्ना अश्मरीमें अग्निसे पकनेके समान पित्तके कारण वस्तिमें दाह होता है । इसमें अश्मरी भिलावेकी गुठलीके समान, लाल, पीली तथा श्वेत वर्णकी होती है ।

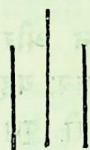
कफज अश्मरीके लक्षण ---

कफसे उत्पन्न अश्मरीमें मूत्राशयमें सुई चुभनेकी सी पीड़ा होती है तथा अश्मरी शीतल और गुरु होती है । बड़ी, चिकनी, मधुके समान वर्ण वाली अथवा श्वेत होती है । यह अश्मरी प्रायः बच्चोंमें अधिक देखी जाती है ।

शुक्रज अश्मरीके लक्षण ---

मैथुनके वेगसे स्थान च्युत तथा मैथुनके वेगका निवारण कर देनेसे बाहर नहीं निकले हुए वीर्यवायु लिंग तथा अण्ड कोषके बीचमें मूत्राशयके मुख पर सुसाकर घन कर देता है ।

अश्मरी



लेखक—श्रीकृष्णगोपाल गुप्त

श्रीरामकृष्ण राजपूताना औषधालय
जुरहरा, भरतपुर (राजस्थान)



अश्मरी पथरीको कहते हैं । यह वृक्की विकृतिसे मूत्राशयमें आगत श्लेष्माको केन्द्रित करके धीरे धीरे निर्मित होती रहती है । और कभी कभी वृक्में भी इसका निर्माण हो जाता है । जैसे पाषाणकी खानमें पत्थरका छोटासा कण भी कालान्तरमें अपने उपादानका संग्रह करके बड़ा होजाता है उसी तरह अश्मरी भी धीरे धीरे बड़ी हो जाती है ।

जो व्यक्ति कभी वमन, विरेचन नहीं करता तथा अपथ्यका सेवन करता है । उसमें कफ कुपित होकर मूत्रके साथ मिलकर वस्तिमें पहुँच कर अश्मरीको उत्पन्न करता है । जैसे कहा है—

“संहन्त्यपो यथा दिव्या मारुतोऽग्निश्च वैद्युतैः ।

तद्वद्वबलासं वस्तिस्थमूष्मा संहन्ति सानिलः ॥

अश्मरियां संक्षेपमें मूत्रके घन अवयवोंके एकत्र होनेसे बनती है । प्रथम किसी वस्तुसे, जैसे श्लेष्मिक कलाका कुछ भाग, शुष्क हुआ श्लेष्मा, जमा हुआ रक्त इत्यादि अश्मरीका केन्द्र बन जाता है । जिससे चारों ओर घन अवयव एकत्र होने लगते हैं और कुछ समयमें अश्मरी हो जाती है ।

अश्मरीके पूर्वरूप---

ज्वर, बरित पीड़ा, अकृच्छ्र, मूत्रकृच्छ्र, शिरः

शुक्राश्रमरीके उत्पन्न होते ही मूत्राशयमें पीड़ा, कठिनाईसे रह रह मूत्रका उतरना तथा अण्डकोषके बीचमें दबानेसे अश्रमरी अन्तर्लीन हो जाती है तब वीर्य निकलता है। अवस्था भेदसे वही अश्रमरी शर्करा तथा सिकता भी हो जाती है। यदि कण बड़े होते हैं तो शर्करा, अगर छोटे होते हैं तो सिकता कहलाती है।

आधुनिक मत--

जिस प्रकार आयुर्वेदमें वातज, पित्तज, कफज तथा शुक्रज भेदसे ४ प्रकारकी अश्रमरी होती है उसी प्रकार आधुनिक मतमें भी यूरिक अम्ल, अमोनियाके यूरेट लवण, आक्जलेट लवण अथवा चूनेके फास्फेट लवणोंसे यह बनती है ऐसा माना जाता है।

उनमें निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं--

(१) फास्फेटजन्य--

इन लवणोंसे बनी अश्रमरी खड़ियाके समान श्वेत और चिकनी होती है। यह सुरैरी होनेके कारण सहज ही टूट जाती है। साधारण तथा चूनेके फास्फेट लवणोंसे बनी हुई होती है। प्रायः फास्फेट लवणोंके साथ अन्य लवण भी देखे जाते हैं। अन्य प्रकारकी अश्रमरियोंपर भी फास्फेट लवणोंका स्तर चढ़ जाता है। वह देखनेसे अश्रमरी जैसी ही लगती है।

फास्फेटकी अश्रमरियोंको काटनेपर उनके भीतर मध्य भागमें एक वस्तु समूह स्थित मिलता है। उनके चारों ओर एक केन्द्रीय श्वेत रंगके स्तर पाये जाते हैं। अन्य अश्रमरियोंके भी इसी भाँतिके स्तर होते हैं। किन्तु इनका स्तर पृथक् होता है।

इस प्रकार यह अश्रमरी आयुर्वेदकी कफज अश्रमरीसे एक दम मिलती है।

यथा--

“तत्रात्यर्थं श्लेष्मलमज्जमभ्यवहरतः श्लेष्मा सङ्घातमुपगम्य यथोक्तां परिवृद्धिं प्राप्य वस्ति मुखमधिष्ठाय स्रोतो निरुणद्धि, तस्य मूत्रप्रतिघाता-
दात्यते, भिद्यते, निस्तुद्यत इव च। वस्तिगुरुः शीतश्च भवति। अश्रमरी चात्र श्वेतः स्निग्धः

महती कुक्कुटाण्ड प्रतीकाशा मधूक पुष्पवर्णा वा भवति, तां श्लैष्मिकीमिति विद्यात्”

सुश्रुत, निदान० अ० ३।

(२) यूरिक अम्लकी अश्रमरी--

यह अश्रमरी कठिन और सघन होती है। यह सहजमें टूटती नहीं। प्रायः यह अण्डाकार व चिपटी होती है। उसके बाहरी पृष्ठ साधारणतया चिकने होते हैं। कभी कभी उसपर छोटे छोटे अंकुर उठे रहते हैं। बहुधा उसपर फास्फेटका स्तर चढ़ा रहता है। यह अश्रमरी पैत्तिक अश्रमरीसे मेल खाती है।

यथा--

“पित्तयुक्तस्तु श्लेष्मासङ्घातमुपगम्य यथोक्तां परिवृद्धिं प्राप्य वस्तिमुखमधिष्ठाय स्रोतो निरुणद्धि तस्यमूत्र प्रतिघातादुप्यते, चूष्यते दह्यते, पच्यत इव वस्तिरुष्णवातश्च भवति। अश्रमरी चात्र सरक्ता, पीतावभासा, कृष्णा भट्ण्णातकास्थि प्रतिमा मधुवर्णा वा भवति तां पैत्तिकीमिति विद्यात्।”

सु०। निदान०। अ० ३।

(३) अमोनियाके यूरेट लवणसे उत्पन्न हुई अश्रमरी-की रचना साधारण यूरेट अश्रमरीकी तरह ही होती है।

(४) चूनेके आक्जलेट लवणकी अश्रमरी--

यह अश्रमरी अत्यन्त असम होती है। उसका पृष्ठ किसी बड़े कंकड़के समान कटा-उभरा हुआ और कहींसे गहरा होता है। उसकी समानता शहतूतसे की गई है। क्योंकि उसके पृष्ठपर शहतूतकी भाँति चारों ओर अंकुर उठे रहते हैं। यह अश्रमरी अत्यन्त कठिन होती है। भीतरसे यह अश्रमरी भी अन्य अश्रमरियोंकी भाँति स्तरित एवं कठिन होती है। उत्पत्तिके समय इसमें प्रायः कुछ रक्त मिल जाता है। जिससे इसका रंग लालिमायुक्त गहरा भूरा होता है। अथवा काला हो जाता है। यह अश्रमरी पूर्णतया वात अश्रमरीसे मिलती है यथा--

वातयुक्तस्तु श्लेष्मा सङ्घातमुपगम्य यथोक्तां परिवृद्धिं प्राप्य वस्तिमुखमधिष्ठाय स्रोतो निरुणद्धि

तस्य, मूत्रप्रतिवातात्तीव्रा वेदना भवति । अत्यर्थं पीड्यमानो दन्तान् खादति, नाभिं पीडयति मेढूं मुदनाति पायुं स्पृशति विशर्धते विदहति वा मूत्रपुरीषाणि कृच्छ्रेण चाऽस्य मेहतो निःसरन्ति, अश्मरी चात्र श्यावा पुरुषा विषमा खरा कदम्ब-पुष्पवत्कण्टकचिता भवति, तां वातिकीमिति विद्यात् ।”

५—सिस्टीन और जैन्थीन नामक वस्तुओंसे निर्मित अश्मरी भी पाई गई है ।

६—शुक्राश्मरी—

शुक्राश्मरी वास्तवमें कोई अश्मरी नहीं है । क्योंकि उत्पन्न होते ही तुरन्त मसल देनेसे वीर्य ही होनेके कारण विलीन हो जाती है । किन्तु कालान्तरमें यही वीर्य वायुके प्रकोपसे सूखकर कठोर अश्मरीमें परिणित हो जाता है । वास्तवमें वीर्यका संचय मात्र ही रहता है । जो आरम्भमें आसानीसे विलीन हो सकता है । किन्तु क्रमशः वही वीर्य चूर्णाभवन होनेके कारण कठोर हो जाता है । कई टीकाकारोंने लिखा है कि कि शुक्राश्मरी वस्तुतः अश्मरी नहीं होती अपितु शुक्र प्रथित होकर मूत्र मार्गमें अवरोध उत्पन्न करके अश्मरीके समान लक्षण उत्पन्न कर देता है अतः उसे अश्मरी कहते हैं । परन्तु यह कुछ गलत सा ही प्रतीत होता है ।

मूत्राशयमें अश्मरीकी स्थिति—

अब यह देखना है कि मूत्राशयमें अश्मरीकी स्थिति क्या होती है । कभी कभी अश्मरी मूत्राशयके पार्श्विक भागमें उत्पन्न होकर श्लैष्मिक कलासे वेष्टित हो जाती है । इस कारण वह स्वतंत्र नहीं होती । किन्तु एक प्रकारके कोष्ठमें जो कि मूत्राशयका ही एक भाग होता है बन्द रहती है ।

प्रायः अश्मरीकी मूत्राशयके भीतर स्वतन्त्र स्थिति होती है । ऐसी अवस्थामें मूत्र त्याग करनेमें कठिनाई होती है । यह अपनी स्थिति बदलती रहती है । रोगीके करवट लेनेपर यह मूत्राशयके पार्श्वमें चली जाती है । मूत्रके निकल चुकनेपर मूत्राशयके संकुचित हो जानेके कारण उसकी भित्तियाँ अश्मरीपर चारों

ओरसे चिपट जाती हैं । जिससे अश्मरीको इधर उधर हिलनेका स्थान नहीं मिलता ।

मूत्राशयकी अश्मरियोंकी उत्पत्ति प्रायः वृक्से आई हुई अश्मरीके कारण होती है । यह अश्मरी जिसका आकार छोटा होता है प्रायः केन्द्रका काम करती है । इसके चारों ओर लवणके कण उत्पन्न हो जाते हैं । जिनसे कुछ समयमें ही पूर्ण अश्मरी बन जाती है । जो बाह्य वस्तुएं भीतर रह जाती हैं जैसे—केथेटरका टूटा हुआ भाग, उसके भी चारों ओर इसी प्रकारकी अश्मरी उत्पन्न हो जाती है ।

शारीरिक दशायें भी अश्मरीकी उत्पत्तिमें भाग लेती हैं । पीनेके जलके साथ अश्मरीका बहुत कुछ सम्बन्ध होता है । पर्वतीय स्थानोंपर रहने वालोंको यह रोग अधिक होता है । जिसका मुख्य कारण होता है वहाँके लवणों, वहाँके पानीमें चूनेका अधिक भाग । उष्ण देशोंमें अश्मरीकी अधिकताका कारण शरीरसे जलका वाष्पीभवन है । जिसके कारण मूत्रमें घन अवयवोंकी मात्रा बढ़ जाती है ।

लक्षणः—

यह रोग स्त्रियोंकी अपेक्षा पुरुषोंमें अधिक होता है । इसका कारण स्त्रियोंके मूत्रमार्गका छोटा और चौड़ा होना प्रतीत होता है । छोटे आकारकी अश्मरी सहज ही मूत्र मार्गद्वारा बाहर निकल जाती है । बच्चोंमें विशेषतया लड़कोंमें यह रोग अधिक पाया जाता है ।

अश्मरीके आकार और स्थिति, मूत्र मार्ग और मूत्राशयकी श्लैष्मिक कलाके शोथपर निर्भर करते हैं । छोटी अश्मरीसे बड़ी अश्मरीकी अपेक्षा अधिक पीड़ा होती है । वह छोटी होनेके कारण चारों ओर फिरती रहती है । किन्तु बड़ी अश्मरियोंको मूत्राशयकी भित्तियाँ अधिक नहीं फिरने देती ।

बालक और युवा व्यक्तिकी अपेक्षा वृद्ध पुरुषको कष्टकी अनुभूति कम होती है क्योंकि उनकी श्लैष्मिक कला कड़ी होकर कुछ चेतना हीन हो जाती है ।

इस रोगके विशेष लक्षण—

पीड़ा, मूत्रका बारम्बार त्याग व रक्त प्रवाह होते

है। दौड़ने, विषम स्थानों पर किसी सवारी से जाने तथा थोड़े इत्यादि पर चढ़ने से इन लक्षणों में वृद्धि हो जाती है। शिशु, पेड़, मल द्वार के चारों ओर के भाग तथा दोनों ओर के उस प्रान्त में तीव्र पीड़ा होती है। कभी कभी मूत्र त्यागते त्यागते मूत्र प्रवाह अकस्मात् बन्द हो जाता है। क्योंकि कोई अश्मरी मूत्र मार्ग में आ जाने से प्रवाह रुक जाता है परन्तु शरीरिक स्थिति बदलने से फिर प्रवाह आरम्भ हो जाता है।

रोग निश्चिती—

वैसे तो इस रोग का निश्चय करना कठिन नहीं है। उपरोक्त लक्षणों से व रोगी के कथन से ही रोग का निश्चय हो जाता है। परन्तु फिर भी रोगी के रोग निश्चय करने के लिये परीक्षा करनी चाहिये। इस परीक्षा की मुख्य दो विधियाँ हैं।

(१) ऐक्स रे परीक्षा—

रोगी को ऐक्स रे मेज पर लिटाकर वस्ति की ऐक्स रे द्वारा परीक्षा की जाती है। ऐसे करने से अश्मरी की छाया दिखाई पड़ जाती है। यह मेज इस प्रकार की होती है कि किरणोत्पादक नलिका मेज के नीचे लगी रहती है। उसको चाहे जहाँ हटा सकते हैं। इससे अश्मरी देखने से पूर्णतया निश्चय हो जाता है। इसमें आक्जलेट अश्मरी की गहरी छाया बनती है और फास्फेट अश्मरी की हल्की छाया बनती है।

इस प्रकार की जांच करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि अस्थियों के उत्पन्न होने वाले अर्बुद मूत्राशय के अर्बुद, जिन पर फास्फेट के लवण एकत्र होगये हों, गर्भाशय के अर्बुद तथा आन्त्र में स्थित मल भी छाया दे सकते हैं।

(२) संकिरण शलाका—

इसके द्वारा मूत्राशय में स्थित अश्मरी को प्रतीत किया जाता है। रोगी को मेज पर लिटाकर मूत्राशय से मूत्र को निकालकर उसमें आठ, दश औंस गर्म बोरिक विलयन भर दिया जाता है। रोगी की टाँगें ऊपर उठा दी जाती हैं। चिकरसक दाहिने हाथ में शलाका को पकड़कर उसके अग्रभाग पर शुद्ध तैल लगाकर उसको

मूत्राशय में प्रविष्ट करा देता है। उसको मूत्राशय के भीतर चारों ओर फिराता है। ऐसा करने से शलाका कहीं न कहीं अश्मरी पर लगती है। जब शलाका यूरिक और ओक्जलेट अश्मरी पर लगती है तो शब्द उत्पन्न होता है। किन्तु फास्फेट की अश्मरी की केवल रगड़ प्रतीत होती है। इस प्रकार से भी अश्मरी प्रतीत न हो तो गुदा के भीतर दो अंगुली डालकर उनको ऊपर की ओर दबाना चाहिये सम्भव है पौरुष ग्रन्थि के बढने से उसके आगे की ओर जहाँ एक गड्ढा सा बन जाता है, अश्मरी स्थित हो। आज कल मूत्राशय दर्शक यन्त्र की सहायता से भी अश्मरी तथा मूत्राशय के अन्य रोगों का पता लगाया जाता है।

अश्मरी की चिकित्सा

आयुर्वेद मत से—

वातज अश्मरी की चिकित्सा—

वातज अश्मरी में सर्व प्रथम स्नेहन आदि कर्म करने चाहिये। फिर निम्न योगों में से कोई एक योग देते रहना चाहिये।

१—सोंठ, अरणी, पाषाण भेद, सहजना, बरना, गोखरू, खम्मार तथा अमलतासका गूदा इनका क्वाथ बनाकर उसमें हींग जवाखार तथा सैन्धव तमकका चूर्ण डालकर पीने से अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र आदि रोग दूर हो जाते हैं।

२—पाषाण भेद, अपामार्ग, कोविदार, शतावरी, गोखरू, बड़ी कटेरी, छोटी कटेरी, त्राही, कट सरैया, कचनार, खस, गुन्द्रवृण, बाँदा, सोनापाठा, वरुणा, शाक नामक वृक्ष, सागोन के फल, जौ, कुलथी, बेर तथा निर्मली के फल, इन औषधियों के क्वाथ में ऊषकादि गण की औषधियों को डालकर सिद्ध किया हुआ घृत वातजन्य अश्मरी को तत्काल ही नष्ट कर देता है। यह पाषाण भेद घृत कहलाता है।

३—वीर तरादि गण भी इस रोग में बहुत कार्य करता है। निम्न लिखित वीर तरादि गण की औषधियों में क्षार, यवागू, पेया, क्वाथ, दूध तथा भोजन को सिद्ध करके देना चाहिये। अर्जुन, अरनी, कास, बाँदा, कड़ा, ईख की जड़, नीला कमल, हुल हुल, गोखरू, सोता-

पाठा, मदारकी जड़, अपामार्ग, डाम, कट सरैया यह सब वीरतरादि गण कहलाता है यह अश्मरी, मूत्र कृच्छ्र तथा वात जन्य रोगोंको नष्ट करता है।

पित्त अश्मरीकी चिकित्सा—

कुश, काश, रामसर, गुन्द्रवृण, इत्कट, ईखकी जड़, पाषाण भेद, डाम, विदारी कन्द, वराही कन्द, शालि धान्यकी जड़, गोखरू, स्योना पाठा, पाढल, पाठा, कचूर, कटसरैया, पुनर्नवा तथा सिरसा इनके क्वाथमें घीको पकाकर शिला जीत, मुलेठी, खीरेके बीज तथा ककड़ीके बीजोंके चूर्णको मिलाकर खानेसे पित्ताश्मरी तत्काल नष्ट होजाती है।

कफ अश्मरीकी चिकित्सा—

वरुणादिगणकी औषधियोंमें गुग्गुलु, छोटी इलायची, रेणुकाके बीज, कूठ, नीम, कालीमिर्च, चित तथा देवदारुको डालकर सिद्ध हुआ बकरीका घी अथवा ऊषादिगणकी औषधियोंद्वारा पकाये बकरीके घीका सेवन करनेसे अथवा सत्यादि गणकी औषधियों द्वारा, श्यामादि गणकी औषधियोंद्वारा सिद्ध बकरीके घीका सेवन करनेसे शीघ्र कफ जन्य अश्मरी नष्ट हो जाती है।

शुक्राश्मरीकी चिकित्सा—

जिसके शुक्राश्मरी हो उसकी साधारण अश्मरीकी चिकित्सा करनी चाहिये। पाषाणभेद, गोखरू,

एरण्डमूल, बड़ी कटेरी, छोटी कटेरी, तथा तालमखानेके दूधमें अच्छी तरहसे पीसकर दहीके साथ पीनेसे सिकता तथा अश्मरी नष्ट होजाती है।

इस प्रकार उपरोक्त किसी भी क्रमसे चिकित्सा करते रहें।

आधुनिक मतसे चिकित्सा—

आधुनिक मतसे अश्मरीकी चिकित्सा आपरेशन करके ही की जाती है या शलाका डालकर अश्मरीको काट दिया जाता है। फिर भी यह एक योग है जिसे अच्छी तरहसे खुलकर पेशाब होता है।

| | |
|-----------------------------------|----------|
| हेक्सेमीन | १० ग्रेन |
| सोडा वैन्जोयस | १५ ग्रेन |
| टि० हायसाइमस | ३० मि० |
| ऐक्वा कुल | १ औंस |
| ऐसी एक मात्रा दिनमें तीन बार दें। | |

| | |
|---------------------------------------|----------|
| (२) सल्फा डायजीन | २ गोली |
| सोडा बाई कार्ब | ३० ग्रेन |
| (ऐसी एक पुढ़िया चार चार घण्टेमें दें) | |

वास्तवमें आधुनिक तथा प्राचीन मतसे इसकी चिकित्सा विशेष रूपसे शल्यक्रिया द्वारा ही होती है। आयुर्वेदिक औषधियोंके ऐसे अनेक योग हैं जिनसे अनेक बार अश्मरी भिन्न होकर निकल जाती है।

चतुर्भुज रस (विशेष)

यह रस पारद भस्म, सुवर्ण भस्म, मुक्ता पिष्टी आदि मूल्यवान् द्रव्योंको यथा विधि मिलाकर तैयार कराया जाता है। पारद भस्म भी पारदको १६ गुना गन्धक जारण करके बनायी हुई मिलायी जाती है। जिससे यह रस वृक् पीड़ासह वातरोगमें भी निर्भय रूपसे दे सकते हैं।

इस रस का उपयोग वातसंस्थानकी विकृति से उत्पन्न सब प्रकार के वात रोगोंपर होता है। इसके अतिरिक्त वातप्रकोपज रोग, अपस्मार, ज्वर, कास, श्वास, राजयक्ष्मा, अग्निमांघ, शारीरिक शोष, हस्तकम्प आदि व्याधियों में भी हितावह है। विद्याध्ययन करने वालों और मानसिक परिश्रम अधिक करने वालोंको सेवन करानेपर मस्तिष्कको बल प्रदान करता है।

मूल्य—१ ग्राम रु. ८.६५, २ ग्राम रु. १७-१५।

अनुभूत योग—

पीपल बूटी द्वारा अफीम विषपर

— विजय —

लेखक—श्री वैद्य गदाधर वर्मा 'गन्तु'

पुवायां, जि० शाहजहाँपुर (उत्तर प्रदेश)

बहुत समयसे पाठकोंका आग्रह है कि 'स्वास्थ्य' में अनुभूत प्रयोगोंका स्तम्भ नियमित रूपसे प्रारम्भ करना चाहिये। परन्तु हम जहां तहांसे एकत्र किये योगोंकी अनुभूत प्रयोगावली प्रकाशित करनेके पक्षपाती नहीं हैं। उससे कोई विशेष लाभ दृष्टि गोचर नहीं होता। हमारी आकांक्षा है कि अनुभूत प्रयोगके रूपमें उन्हीं योगोंका प्रकाशन किया जावे जिनके विषयमें लेखकने स्वयं अनुभव किया हो। उसके किसी रोगकी किन किन परिस्थितियोंमें अनुकूल और प्रतिकूल क्या परिणाम हुए, आदि सभी बातोंका याथा तथ्य रूपमें पूर्ण विवरण दिया हो। हमें श्री वैद्यराज गदाधर 'गन्तु' के लेखको देखकर अतिशय प्रसन्नता हुई है। उन्होंने निश्छल रूपसे एक सच्चे अनुसन्धानशील वैद्यके अनुरूप अपना अनुभव लिखा है।

इसी प्रकार यदि अन्य विद्वान् सनीपी वैद्यजन अपने अनुभव लिखनेका कष्ट करेंगे तो 'स्वास्थ्य' उनका सदैव स्वागत करेगा।

—सम्पादक

पुवायां (शाहजहाँपुर) के डा० वृजकिशोरके कनिष्ठ भ्राताके चार दिनसे पेटमें दर्द हो रहा था, खानेकी औषधिसे जब लाभ न हुआ तो दि० ७-५-६४ गुरुवारको दिन मुंदे (छिपने) के बाद सुना गया कि मार्फियाका सूची वेध किया जिसके प्रभावसे रोगी शान्तिसे सोया और घर वाले भी शान्तिसे सोये। सुबह ४ बजे रोगीको देखा तो संज्ञाहीन अवस्थामें मूर्छित पाया। तब सब लोग घबराये और तत्काल अस्पतालके डाक्टरको बुलाया और कस्बाके प्रसिद्ध डा० सतीश एम० बी० बो० के भी बुलाया गया।

दोनों डाक्टरोंने मिलकर उपचार शुरू किया। किन्तु ४ से ८ बजे दिन तक कोई आशाजनक लाभ न देख कर डा० वृजकिशोरने शाहजहाँपुरके प्रसिद्ध डा० बहल जी को टेलीफोनसे बुलाया।

डा० बहलको आनेमें कुछ विलम्ब हुआ सा जात कर रोगीको जीप द्वारा शाहजहाँपुरको लेकर चल दिये। मार्गमें इधरसे डा० वृजकिशोर उधरसे डा० बहल कारपर आते मिले और वहींपर ठहरकर रोगीका निरीक्षण किया तथा चिकित्साका पूरा प्रबन्धकर पुवायांके लिये रोगीको लौटाया। घरपर आकर डा०

बहलकी तजवीजसे और पुवायों अस्पतालके डाक्टर व डा० सतीशने फिर मिलकर उपचार प्रारम्भ हुआ, सूचीवेध और सूँघने आदि क्रियायों द्वारा कुछ हाथ पैर हिले मुख भी खुला, दवा दी गई किन्तु रोगी बोला नहीं मूर्च्छित अवस्था ही में रहा।

रातके १० बजे मुझे भी तलाश किया गया किन्तु मैं घरपर नहीं था। उस दिन लखपेड़ा बागकी कोठीमें एक परमहंस स्वामी जी ठहरे थे मैं वहाँ गया था और स्वामीजीसे सांख्य शास्त्रके विषयमें कुछ जानकारी कर रहा था। इधर मेरे लिये पुवायोंका हर स्थान देखा गया। अन्तमें यह जानकर कि स्वामीजीके पास हैं, वहाँ भी आदमी भेजा गया। १० बजेके बाद स्वामी जीके पाससे मैं आ रहा था मार्ग में उस आदमी से भेंट हुई। तब मुझे मालूम हुआ कि डा० वृजकिशोर बुला रहे हैं। मैं अपने घर न जाकर सीधे डाक्टर साहबके घर गया तो उन्होंने मुझे रोगी दिखलाया, तब तक रातके १०½ बज चुके थे। रोगीकी नाड़ी बड़ी हुई भीगी सी महामन्द सर्पाकार विपाक्त चल रही थी। रोगी संज्ञा हीन मूर्च्छित अवस्थामें था।

डा० वृजकिशोरने कहा आप बूटी द्वारा विष दूर कर देते हैं। ऐसा सुना है। इसपर भी कुछ कीजिये हम सब असमर्थ हैं। मैंने कहा कि बूटी द्वारा सर्प विष दूर करनेकी क्रिया मैं जानता हूँ यदि आपकी इच्छा है तो प्रयोग करूँगा। और पीपलकी टहनियाँ संगी ली गई ठीक ११ बजे मैंने प्रयोग प्रारम्भ किया। और ५-५ मिनट बाद पत्ता कानमें लगाकर बदलने लगा। अब हमारेपर तरह तरहके प्रश्न होने लगे और देखने वाले घरके व कस्बेके सब आश्चर्य चकित थे कि बड़ी बड़ी औषधियाँ कर चुके अब इस क्रियासे क्या होगा आदि आदि। डा० वृजकिशोरने भी पूछा क्या बूटियोंमें ऐसी शक्ति है। कितनी देर लगेगी। क्या १०-१२ पत्तोंमें विष दूर हो जायेगा। मैंने कहा नहीं ३ घण्टेसे २½ तक तो सर्प विष दूर करनेमें मेरे अनुभवमें आ चुके हैं, इसमें कितनी देर लगे कहा नहीं जासकता। आध घण्टेके बाद कुछ कह सकूँगा। रहा बूटियोंकी शक्तिके बारेमें। उसका उत्तर यह है कि जितनी औषधें तैयार होती हैं, जितने आप प्रयोग करते हैं,

इन्हीं बूटियोंका कृत्रिम रूप है। वैद्य इन बूटियोंकी शक्ति इसलिये जानता है कि वह दोनों प्रकारसे कृत्रिम और प्रकृतिरूपमें प्रयोग करता है। यह जो क्रिया मैं कर रहा हूँ यह प्राकृतिक रूप है।

आध घण्टेके बाद रोगीने शरीरमें हरकत की और मुख खोलनेकी चेष्टा की मैंने कहा अब मैं सफलता प्राप्त कर लूँगा समय कुछ भी लगे। बूटी अपना काम कर रही है। अब घर वालों और डाक्टरजीको भी यकीन होने लगा और सबके चेहरोपर प्रसन्नता आ गई। कुछ देरमें मैंने सोचा कि जवानपर यदि सोंठ कपड़छन कराके मली जावे तो शीघ्रता हो सकती है। मेरे कहनेसे सोंठ तो आ गई पर मली कैसे जावे। तब चम्मचके डोंड़े द्वारा जीभपर बड़ी कठिनतासे मलवा पाई। अब एक घण्टेमें रोगी हाथ पैरोंसे काफी चेष्टा करने लगा और मुँहसे हूँ हूँ की आवाज तथा बोलनेके प्रयत्न करने लगा किन्तु फिर एकदम शान्त हो गया दो घण्टे बीतनेपर डा० सतीशको बुलाया गया परन्तु वह नहीं आये। बुलाने गये डा० वृजकिशोरके भाई लौट आये। तब तक रोगी पुनः हरकत करने लगा और बोला भी कि मेरे कानोंमें दर्द है तथा कुछने नाम पूछनेपर बताये। फिर १५ मिनटको शान्त होगया तब मैंने पुनः जवानपर सोंठका चम्मचके डोंड़ेसे प्रयोग कराया फिर रोगीने कहा भूख लगी है। इसपर मुझसे पूछा गया, खानेको क्या दिया जावे। मैंने कहा खानेके बारेमें डाक्टरसे सशविरा लो क्योंकि रोगी विषाक्त है। मैं तो पूर्ण निर्विष हो जाने पर निश्चय करूँगा।

इतना कहनेपर अस्पतालसे डाक्टरको लानेके लिये रातके २ बजे रिक्शा लेकर रोगीके भाई गये और लौटकर यह कहा कि डाक्टर साहब सुबहको आयेगे चाय देनेको कहा है। तीन घंटा पूरे प्रयोगके बाद रोगीने अपने पैर स्वयं समेटकर मुझसे कहा अब आप घर जायें, मैं ठीक हूँ, मेरे शरीरमें अब कहीं दर्द नहीं है। मैंने बूटी प्रयोग बन्द कर दिया किन्तु डा० वृजकिशोरकी राय थी कि कुछ देर और प्रयोग किया जावे कदाचित् फिर वे दोषी हो जायें। मैंने कहा य आपका मोह है रोगी अब ठीक हो चुका है। इसे सो

दो चिन्ताकी बात नहीं है। तब डा० बृजकिशोरने कहा कि मुझे बड़ा ताज्जुब है कि इस प्रकार बूटी फायदा करती है। मुझे तो पूर्ण विश्वास हो गया है कि यह बूटी सब प्रकारके विषोंको दूर करेगी। मैं घरको चलने लगा तो कुछ रुपया मेरे जेबमें डालने लगे। मैंने हाथ जोड़े कि मेरे गुरु (आयुर्वेदकी शिक्षा देने वाले) की आज्ञा नहीं है कि इस प्रकारसे रुपया लें, यह तो डाक्टरों शिक्षाका व्यवहार है लूटा जाय सो लूट। तो डाक्टर जी हँस पड़े, कि 'मैं तो नहीं ऐसा करता।' मैंने कहा यह तो विनोद रूपमें कह दिया हम आप हमपेशा हैं, कह कर घर चला आया।

अनुभव

१. जिस प्रकार सर्प विषका रोगी चिल्लाता और भटका देता तथा तड़पता और उछलता है और जो चार आदमी रोगीको दबाते हैं उन्हें भी बलकर फेंक देता है। इसमें यह हरकतें बिलकुल नहीं हुई।

२. रोगी हाथ पैर हिलाता रहा ऐंठता रहा बोलनेकी चेष्टा करता रहा। गरदन उठाकर उठनेका उपक्रम भी कई बार किया तथा कभी साफ कभी लड़खड़ाता जुवान बोला। एक बार हाथ ले जाकर मेरी अँगुली पकड़ली और कानसे मेरा हाथ हटा दिया।

३. अपने हाथोंको पेटपर मुखपर मत्थापर आदि अंगोंपर फिराता रहा चुपचापसे।

४. अंग प्रत्यंग अन्त तक शिथिलसे ही रहे।

नोट—यह अनुभव सर्वप्रथम है इसके पहिले सर्प विषपर, मूच्छापर तथा औरतोंपर चुडैल उतारनेमें सफलता प्राप्त कर चुका हूँ। एक मित्रके द्वारा विदित हुआ कि पाराके विषको भी पीपलकी यह क्रिया दूर करती है। मेरे विचारसे पीपल सर्व विषहर बूटी है। इस विषयमें जो भी पूछना चाहें पत्र भेजकर पूछ सकते हैं।

पूर्णचन्द्रोदय रस (सिद्ध मकरध्वज)

इस पूर्ण चन्द्रोदयमें शास्त्र विधिसे संस्कारित तथा गन्धक जारित पारद उप-योगमें लिया गया है। इस चन्द्रोदयके सेवनसे वात और कफ प्रकृति वालोंको शास्त्रकथित पूरा-पूरा लाभ मिलता है। यह चन्द्रोदय उत्तम हृदय पौष्टिक, वाजीकर, विषघ्न, कीटाणुनाशक और रसायन (वृद्धावस्थाकी निर्बलताको दूरकर पुनः युवावस्थाके समान शक्तिप्रद) है। शारीरिक निर्बलता, मानसिक निर्बलता, शक्तिक्षीणता, श्वास, कास, क्षय, अपस्मार, विषविकार, जीर्णज्वर, पाण्डु आदि जीर्ण रोगोंसे पीड़ितोंके लिए अमृतके समान उपकारक है।

मूल्य—१ ग्राम - रु० १०.१५।

अरुचि उत्पन्न हो जाया करती है, जैसे मनसे भोजनका चिन्तन करके, भोजनको देखकर तथा भोजनका स्पर्श करके भी भोजनपर द्वेष एवं अश्रद्धा उत्पन्न हो जाती है।

भोजनमें अरुचि, अश्रद्धा अथवा द्वेष, उत्पन्न हो जाने पर निम्नलिखित सुगम विधियाँ एवं गुणकारी औषधियोंका उपयोग करके अरुचि दूर की जा सकती है। आप भी निम्नलिखित प्रयोगोंसे लाभ उठाये। कुछ उत्तम, सरल व घरेलू उपचार विधियाँ इस प्रकारसे हैं—

(१) भोजनसे पहिले सर्वदा सैधानमक तथा अदरकका सेवन करनेसे अरुचि दूर होती है। यह रुचिकारक, अग्निप्रदीप्त करने वाला तथा जिह्वा और कण्ठको शुद्ध करने वाला है।

(२) मधुके साथ आर्द्रक स्वरसको पीनेसे, अरुचि, श्वास, कास, प्रतिश्याय तथा कफ नष्ट हो जाता है।

(३) पकी हुई इसली तथा मिश्रीको ठण्डे जलमें घोलकर वस्त्रद्वारा छान लें। तत्पश्चात् इसमें छोटी इलायची, लौंग, कपूर, तथा कालीमिर्च डाल दें। इसका गण्डूष मुखमें बारम्बार धारण करनेसे अरुचि नष्ट हो जाती है तथा पित्तका प्रशमन हो जाता है।

(४) सुनी हुई राई, सुना हुआ जीरा, सुनी हुई हींग, सोंठ, सैधानमक और गायका दही इन सबको मिलाकर वस्त्र द्वारा छान लें। फिर उसमें इतने परिमाणमें छाछ मिलावें कि उसका स्वाद उत्तम बना रहे। इस तक्रके सेवनसे तत्काल रुचि उत्पन्न हो जाती है तथा अग्नि प्रदीप्त हो जाती है।

(५) भली प्रकार औटाया हुआ दूध और वस्त्रसे बँधा हुआ जल रहित दही, इनको एकत्र करके उसीके बराबर सफेद चीनी मिलाकर एक मोटे कपड़ेपर घिसकर छान लें। तत्पश्चात् उसमें छोटी इलायची, लौंग, कपूर, और कालीमिर्चका चूर्ण डाल दें। तो यह शिखरन सिद्ध हो जाती है। इस शिखरणीका सेवन करनेसे अरुचि दूर हो जाती है क्योंकि यह सभीको प्रिय होती है।

(६) खट्टे अनारके दाने आठ तोला, खांड बारह तोला, दालचीनी, इलायचीनी, तेजपात एक-एक तोला लेकर सबका चूर्ण बनाकर इच्छानुसार खानेसे

भोजनसे अरुचि हो जानेपर

श्रीमती सुमित्रा देवी अग्रवाल 'विशारद'
पो० कपसा, रीवां (म० प्र०)



कभी कभी यह देखा गया है कि भोजनको परोस कर भोजन करनेवालेके सामने रखा गया, परन्तु भोजन करने वालेने अकारण ही परोसे गये भोजनको खानेसे अतिच्छा प्रकट करदी। कभी कभी बिना मनके थोड़ा बहुत जो कुछ भी खाया जाता है उससे मनको तृप्ति नहीं होती। भोजनमें अरुचि उत्पन्न हो जानेके कई कारण हैं उनमेंसे कुछ प्रमुख कारण इस प्रकार से हैं जैसे:—मनके विरुद्ध भोजन, रूप तथा गन्धको देखकर ही भोजनमें अरुचि उत्पन्न हो जाना। साथ ही साथ शोक, भय, पीड़ा, लोभ, क्रोध आदि मानसिक एवं मनोवैज्ञानिक कारणोंसे भी कभी कभी भोजनमें अरुचि उत्पन्न हो जाया करती है।

भोजनमें अरुचि उत्पन्न हो जानेसे मुखका स्वाद कड़वा, खट्टा, विरस तथा दुर्गन्धित रहता है। मुखका स्वाद नमकीनसा हो जाता है। शोक, भय, अत्यन्त लोभ, क्रोधादि, अप्रिय भोजन, अप्रिय रूपदर्शन तथा अप्रियगन्धको सूँघने इत्यादि अनेक कारणोंसे उत्पन्न हुई भोजनमें अरुचि होनेपर सामान्यतः मुखका स्वाद स्वाभाविक ही बना रहता है।

भोजनमें अरुचि हो जानेपर कभी कभी हृदयमें खर्ची चुभानेके समान असह्य वेदना होती है। पिपासा, अरुचि, दाह आदि लक्षण भी देखे गये हैं। उपरोक्त अनेक कारणोंके अतिरिक्त आयुर्वेद शास्त्रके मतानुसार खाये जाने वाला भोजनका प्रास मुखमें रखते ही यदि स्वादिष्ट न प्रतीत हो तो उसे भोजनमें अरुचिका लक्षण बताया गया है। भोजनमें अरुचि वात-पित्त-कफ आदि विरोधोंके कारण होती है। इसके साथ ही साथ अन्य

अरुचिको नष्ट करता है। यह पूर्ण अग्निको प्रदीप्त करने वाला तथा पाचक है, साथ ही पीनस ज्वर और क्षय रोगमें भी समानरूपसे उपयोगी है।

(७) लौंग, कंकोल, मिर्च, खश, सफेदचन्दन, तगर, नीलकमल, कालाजीरा, सुगन्धवाला, अंगूर, कालीमिर्च, नागकेशर, पिप्पली, सोंठ, इलायची, भीमसेनीकपूर, जायफल, वंशलोचन, सबके आधे परिमाणमें मिथी लेकर सबका चूर्ण कर डालें। इस चूर्णका सेवन करनेसे रुचि उत्पन्न होती है, तृप्ति होती है, जठराग्नि प्रदीप्त होती है और बल बढ़ता है। मैथुन शक्तिकी वृद्धि होती है साथ ही साथ छातीका जकड़ना, तमकश्वास, कास, हिका, अरुचि, यक्ष्मा, पीनस, ग्रहणी, अतिसार, उरःक्षत तथा सम्पूर्ण प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

(८) अजवाइन, अनारके बीज, सोंठ, इमली, अम्लवृंत और जंगली घेर ये उपरोक्त प्रत्येक पदार्थ एक एक तोला, कालीमिर्च साढ़े सात माशे, पिप्पली ढाई तोला, दालचीनी, कालानमक, धनियाँ तथा जीरा ये पदार्थ आधा आधा तोला लें। खांड है तोला लेकर सबको एकत्रकर चूर्ण कर लें। इस चूर्णके सेवन करनेसे पाण्डुरोग, हृद्रोग, ग्रहणी, ज्वर, वमन, शोष, अतिसार, प्लीहा, मलबन्ध, अरुचि, शूल, मन्दाग्नि, अर्श और जिल्हा तथा गलेके रोग नष्ट हो जाते हैं।

आशा है कि जब कभी भोजनके प्रति अरुचि उत्पन्न होगी। उपरोक्त घरेलू उपचारों द्वारा आप भी अपने स्वादको पहिलेकी तरह बनाए रखकर स्वास्थ्य एवं सौन्दर्यको बनाए रखेंगे।

आजके डालडायुगमें जो अनेकानेक बीमारियाँ अकस्मात् पैदा हो जाती हैं, उन सभी को

कृष्ण-गोपाल की गम्भीर चुनौती

पाचन सुधा

उदर की ऊष्मा, तज्जनित उदरस्थ अवयवों की अव्यवस्थिततासे होने वाली समस्त

बीमारियाँ इसके सेवनसे भाग खड़ी होती हैं। जैसे—

★ बवासीर

★ यकृत-प्लीहावृद्धि

★ गुल्म

★ आमग्रहणी

★ अजीर्ण

★ आम्रातिसार

— आदि —

पेटमें गैस की उत्पत्ति होती है। उन सबों को 'सुधा' की तरह 'पाचन सुधा' दूर कर देती है।

परीक्षा प्रार्थनीय है।

स मा चा र स मी क्ष ण

श्री नारद

इस मासमें नारदजीने जो विश्वका दौरा किया है उसमें उन्हें यह अनुभव करनेका सुअवसर प्राप्त हुआ है कि संसार शायद नये जीवोंको जन्म लेनेसे रोकने (जन्म निरोध) के लिए उतना प्रयत्नशील और चिन्तित नहीं है जितना कि मर्त्यलोकमें जन्म लेकर वर्तमानमें विद्यमान जनोंके जीवनको बचानेके लिए। परमाणुबम आदि विनाशक पदार्थोंको वह भयभीत होकर बड़ी चिन्तासे देख रहा है। इस बमके प्रयोगका जो भयङ्कर रूप मानव ने पहिले देखा है उससे अधिक अविचार पूर्ण विनाशकी कल्पना करनेके लिए वह तैयार नहीं है। इसके विषयमें ठीक अनुमान पाठकोंको हो सके इसलिए कुछ समाचार प्रारम्भमें इसी सम्बन्धमें देनेकी इच्छा नारदजी ने व्यक्त की है।

हिरोशिमा परमाणु बमके परिणाम—

बहुत लोगों को शायद स्मरण भी नहीं है कि "द्वितीय विश्व युद्धके समय अमेरिकाद्वारा छोड़ा गया परमाणु बम दि० ९ अगस्त १९४५ को जापानके नागासाकी नगरसे २ किलोमीटर ($1\frac{1}{4}$ मील) दूर गिरा था। उसके जो भयङ्कर परिणाम उस समय हुए थे उनको सुनकर संसार स्तब्ध एवं त्रस्त हो उठा था। तबसे लेकर आज २० वर्ष बाद तक भी उसके भीषण परिणाम दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

अभी ही ज्ञात हुआ है कि किमिको मत्सुदा नामकी २० वर्षकी लड़की परमाणु विस्फोट जन्य रोगसे मर गयी है। कुछ समय पूर्व तक वह अच्छे प्रकार स्वस्थ थी। नागासाकीके परमाणु अस्पतालमें निर्णय किया गया कि उसको परमाणु विस्फोट जन्य ल्यूकेमिया

(Leukemia) रोग था। परमाणु बमका यह दयनीय सुन्दर शिकार आजसे बीस वर्ष पूर्व विस्फोटके समय पालनेमें झूलने वाली नन्हीं बच्ची थी। उसके पिताका देहान्त भी इसी रोगसे १९६३ के नवम्बर मासमें हुआ। उसकी माताने भी इसी रोगमें १९६२ में प्राण दिये। उसकी बहिन, जो कि २३ वर्षकी है, नागासाकी परमाणु बम अस्पतालमें इसी रोगकी चिकित्साके लिए पड़ी हुई है। केवल उसका २६ वर्षीय भाई ही अभी तक इस रोगसे मुक्त कहा जाता है।

बमके विस्फोटके समय जो लोग हीरोशिमामें विद्यमान थे उनमेंसे प्रति वर्ष १० से २० तक व्यक्ति इस रोगसे काल कवलित हो जाते हैं।

दि० ६ अगस्तको पांच लाख बीस हजारकी आबादी वाले हिरोशिमा नगरने इस बमसे मारे गए लोगोंका २० वां वार्षिक श्राद्ध दिवस मनाया और इस बमके विस्फोटसे मरने वाले लोगोंकी संख्यामें ४६९ नाम और जोड़े गये। शान्त एवं बृहत् जनसमुदायके

समुख काले वस्त्र पहिने हुए नगरके मेयर श्री शिन्जो-हमाईने इन मृतजनोंकी नवीन सूची स्मारकके नीचे कङ्करीटसे बने आलयमें रखी ।

इस बम्बेके फटनेसे १० लाख सेन्टीग्रेडके ताप वाले अग्निके गोलेसे प्रादुर्भूत संहारकारी अग्नि ज्वालाओं, गामा किरणों और न्यूट्रन विस्फोटोंसे ४५ मेंसे ४२ हास्पिटल २९० मेंसे २६० डाक्टर, १७८० मेंसे १६५४ नर्स मृत्युको प्राप्त हुई और २२५ मेंसे ७८ पुल चौरासीमेंसे ६५ स्कूल और १,२५,८४६ मकानोंमेंसे ६२,९२१ सर्वथा विनष्ट होगए । जापान वासियोंकी गणनानुसार लगभग २००००० जन मृत्युके प्रास बने ।

लगभग ५,००० रेडियेशनसे होने वाले रोगोंसे प्रस्त व्यक्ति हैं । २० से ४० तक व्यक्ति रेडियेशनसे प्रतिवर्ष अब भी मर जाते हैं । विस्फोटके ग्यारह वर्ष बाद उत्पन्न बालक भी ल्यूकेमियासे सन् ६४ में मरा है । आज २० वर्ष बाद भी डाक्टर लोग यह नहीं कह सकते कि न जाने कब कौन उक्त रोगोंका शिकार बन जावे और मर जावे । कौन रोगी अच्छा हो जावेगा अथवा मर जावेगा ।

यह स्मरण रखने योग्य है यह २० किलोटन शक्तिका परमाणु बम आजके सुपर परमाणु बमोंकी की तुलनामें अत्यन्त क्षुद्र था ।”

वह दिन बड़े ही दुर्भाग्यका था, जिस दिन कि परमाणु बमका प्रयोग किया गया । जो परिणाम तात्कालिक नर संहार और उसके अनन्तर मानव कष्टोंके विविधरूपोंमें सामने आया वह रोमाञ्चकारी है । आज २० वर्ष बाद भी उससे छुटकारा नहीं हो रहा है । परमाणु बम जन्य नवीन कष्टोंके निवारणके लिए जो परीक्षण और प्रयत्न किये जा रहे हैं उन्हें आज नवीन अनुसन्धानका नाम दिया जा रहा है । परिणाम सामने है फिर भी राजनीतिज्ञ और वैज्ञानिक उस संहारकारी भयंकर परिणाम वाले कार्यको आगेसे आगे करते ही जा रहे हैं । आज इतने परमाणु बम भण्डारमें भरे पड़े हैं कि संसारका विनाश उनकेद्वारा बात की बातमें किया जा सकता है ।

नारद जी सोचते हैं कि लम्बी आयुको बुरा

साहस वीरता और चतुराईका कार्य है । परन्तु यदि आग न लगी हो तो उसे स्वयं लगाकर साहस वीरता और चतुराईका परीक्षण और अभ्यास करना उससे उत्तम कार्य है । तथा उससे उत्पन्न दुःख परिणामोंकी जांच करना बड़ा प्रशंसनीय अनुसन्धान कार्य माना जावेगा ।

बच्चोंको दूधकी आवश्यकता नहीं रही—

“सेन्ट्रल कमिटी आफ् फूड स्टैन्डर्ड्स्” ने सिफारिश की है कि वानस्पतिक प्रोटीन्के आधारपर बने हुए भोजन शिशुओंके लिए दूधके स्थानपर प्रयोग किये जा सकते हैं ।

सेन्ट्रल फूड टेक्नोलॉजिकल् रिसर्च इन्स्टीट्यूट मैसोरमें प्रयत्न किया जा रहा है कि कोई दूधके स्थानपर प्रयोग करने योग्य कृत्रिम (Synthetic) भोजन प्रस्तुत किया जा सके । यह भोजन फिलिपीन् में विशेष रूपसे प्रयोग किये जा रहे— “फिलर् मिल्क” के समान ही होगा ।

उक्त केन्द्रीय समितिने बताया है कि वानस्पतिक प्रोटीनोंका उपयोग दूधकी अपेक्षा अधिक सस्ता है । क्योंकि गाय तो जितनी वानस्पतिक प्रोटीनको खाती है उसका केवल १०% प्रतिशत ही उपयोग्य रूपमें परिवर्तित करती है । शेष व्यर्थ ही जाता है ।

इसलिए दूधके रूपमें घुसा फिराकर प्रयोग करनेकी अपेक्षा वानस्पतिक प्रोटीनका सीधा ही प्रयोग करना अधिक अच्छा है ।”

क्या ही सुन्दर खोज है । निश्चय ही इस पर तो भारतीय वैज्ञानिकोंकी पीठ ठोकना चाहिये । जो पतेकी बात योरोप और अमेरिकाके लोग अभी तक न जान पाए उसे हमारे गोता खोर गहरे जाकर निकाल लाए हैं । नारद जी सोचते हैं कि इससे देशको कई लाभ होंगे । प्रथम तो बालकोंके दूधकी समस्या अब चुटकियोंमें हल हो जावेगी । दूसरे उन्हें पोषक तत्व भी अधिक मात्रामें उपलब्ध हो सकेगा । तीसरे गायोंकी

आवश्यक भोजन देनेकी

समस्यासे भी छुटकारा हो जावेगा। चौथे यह कि फिर गौमाता जी का चाहे जैसा सुन्दर उपयोग कर डालो और दो मूछोंपर ताव।

प्राकृतिक चमत्कार—

“शेल्बी विले, टिनेसीका समाचार है कि श्रीमती होनाल्ड मूरने वेडफोर्डके काउन्टी अस्पतालमें २७ जुलाई ६५ को युगल शिशुओंको जन्म दिया है। उन्होंने गत वर्ष १९६४ में भी ठीक इसी दिन, अर्थात् २७ जुलाईको इसी प्रकार दो शिशुओंको पहिले भी जन्म दिया था। पहिले युगलमेंसे प्रथम शिशुका शरीरभार ५ पौण्ड और ६ औंस था और दूसरेका ४ पौण्ड नौ औंस। इस बार जो शिशु जन्मे हैं उनका भी भार ठीक वही है जो पहिलेके शिशुओंका था। सचमुच ही यह एक प्राकृतिक चमत्कार ही है।”

नारदजीकी सम्मति है कि विलायतमें इसी प्रकार दो दो और चार चार बालकोंके जन्मको प्रोत्साहित करना चाहिये। इससे वैज्ञानिकोंको इस सम्बन्धमें नवीन परीक्षण करने और नवीन सत्यकी खोज करनेका अवसर मिलेगा। साथ ही भारतमें जन्म निरोध अभियानसे होने वाली जन संख्याकी कमीकी भी पूर्ति हो सकेगी।

गोली भयङ्कर होसकती है—

“ब्रिटिश डाक्टरोंने गर्भ निरोधके लिए खाई जाने वाली गोलीयोंके विषयमें तीन नई चेतावनियां दी हैं।

१. मैन्चेस्टरके एक विशेषज्ञ डाक्टरने सूचना दी है कि उक्त गोलीका प्रयोग करने वाली ४० महिलाओंकी जांचसे ज्ञात हुआ है कि इस गोलीमें ‘फैक्टर सात’ की बढ़ी हुई मात्राके कारण प्रयोग करने वालों की रक्तप्रणालियोंमें रक्तकी गांठ पड़ जाने (Thrombosis) की विशेष सम्भावना होजाती है।

२. एक पारिवारिक चिकित्सकने सूचना दी है कि उनकी एक २९ वर्षीया गोलीपीकी, जो कि इस

गोलीका प्रयोग कर रही है, एक हाथ और एक पैरमें थ्रोम्बोसिस (Thrombosis) हुआ है। उसके गत इतिहासमें ऐसे कोई रक्त स्कन्दनकी प्रवृत्ति नहीं देखनेमें आई थी।

३. ब्रिटिश मेडिकल जर्नलने चेतावनी दी है कि इस गोलीके प्रयोगसे जननेन्द्रियोंके रोगोंकी वृद्धि हो सकती है, क्योंकि इससे निश्चय ही बिना विवाहके तथा चाहे जिस प्रकार अनियमित यौन सम्भोगकी प्रवृत्तिको प्रोत्साहन मिलेगा।”

नारदजी सोचते हैं कि ब्रिटेनके डाक्टर एक साधारणसी बात भी नहीं समझ सकते। भारतमें उक्ति प्रचलित है कि नीच लोग तो विघ्नके भयसे कोई कार्य प्रारम्भ ही नहीं करते। मध्यम गुणवाले लोग प्रारम्भ भी कर देते हैं तो विघ्न आनेपर बीचमें ही उसे छोड़कर बैठ जाते हैं। परन्तु उत्तम गुणवाले लोग बार बार विघ्न आनेपर भी प्रारम्भ किये हुए कामको नहीं छोड़ते।

“प्रारब्धमुत्तमगुणा न परित्यजन्ति।”

भला बताइये कि थ्रोम्बोसिससे भी क्या डरना ?

रही अनियमित और बिना विवाहके यौन सम्भोगकी वृद्धि और गुप्त रोगोंके प्रसारकी बात। उसके विषयमें तो सोचना ही व्यर्थ है। क्योंकि यह भय इङ्ग्लैण्ड जैसे देशोंमें तो हो सकता है। भारत जैसे सदासे ही सदाचार प्रधान देशमें ऐसे अनर्थकी शङ्का ही नहीं होनी चाहिये।

निश्चिन्त होकर करे जाइये गोली और लूप् (I.U. C. D.) का प्रयोग।

राजाजी भी बोले—

“श्री राजगोपालाचार्यने परिवार नियोजनके उन साधनोंकी निन्दा की है जिनकी आजकल चर्चा चल रही है।

इस सप्ताहके ‘स्वराज्य’ में एक जोरदार लेखमें उन्होंने कहा है कि देशकी समृद्धिसे ही कुछ परिणाम

प्राप्त हो सकते हैं, गर्भ-निरोधक उपायोंसे नहीं। देशमें समृद्धि गर्भ-निरोधक उपायोंसे नहीं लाई जा सकती। आवश्यकता देशमें उत्पादन बढ़ानेकी है। देश समृद्ध होगा तो बिना लूप् अथवा सर्जरीके भी परिवार-नियोजन हो जाएगा।

यदि हम गर्भ-निरोधक उपायों तथा वन्ध्यकरणसे संतति नियमन करेंगे तो हमारे यहां स्वार्थी आराम-पसंद स्त्री-पुरुषोंकी संख्या बढ़ जाएगी जो किसी भी संकटमें न कोई त्याग करना चाहेंगे और न कोई खतरा उठाना चाहेंगे।

गर्भ-निरोधकी ये योजनाएं न केवल स्वयंमें घृणास्पद है किन्तु जिन परिस्थितियोंमें हम रह रहे हैं। उनमें ये बहुत अयुद्धिमत्तापूर्ण भी है।

उन्होंने पूछा कि गांधीजी जो यह महसूस करते थे और कहा करते थे कि आत्म संयमके बिना संतति नियमनका यह प्रयत्न शरीर और मन दोनोंके लिए अनैतिक अप्राकृतिक, और हानिकारक है, उसमें क्या कुछ सच्चाई नहीं है।”

नारदजी ने राजाजीकी सम्मतिपर विचारकर निष्कर्ष निकाला है कि राजाजीको अब अपना सम्पूर्ण समय भगवद् भजनमें ही व्यतीत करना चाहिये। वे दिन गए और वह बहार भी गई जब कि सब कुछ हरा ही हरा दिखाई देता था। अब तो उन दिनोंकी तरङ्गोंकी कल्पना भी करना उनके लिए कठिन है। अब उन्हें अनधिकार चेष्टा करना शोभा नहीं देता। नई बातें, नये ढंग, नई हवा और नई दवा तो बच्चों और नवयुवकोंके लिये ही छोड़ देनी चाहिये। जो बातें नववयस्क विचार सकते हैं जो अनुसन्धान वह कर सकते हैं उनको अब राजाजी समझ भी नहीं सकते हैं।

एलोपैथिक औषधियोंके कारखाने—

ज्ञात हुआ है कि—

“एशियाके एलोपैथिक औषधि निर्माणके सबसे बड़े दो कारखाने और यन्त्र निर्माणका एक कारखाना

इसी वर्ष कार्य प्रारम्भ कर रहा है। औषधियोंके कारखाने ऋषिकेश और हैदराबादमें तथा यन्त्रोंकी निर्माणशाला मद्रासमें होगी।

ऋषिकेशके एण्टीबायोटिक औषध निर्माणशालाकी एक प्रेस कॉन्फ्रेंसमें इन्डियन् ड्रग्स एण्ड फार्मेस्युटिकल्स् लिमिटेडके चेयरमैन श्री आर० आर० बहलने कहा कि सोवियत सहयोगसे स्थापित होने वाले तीनों कारखानोंपर कुल ४८ करोड़ रुपया व्यय होगा इसमें वस्तियोंका व्यय भी सम्मिलित है।

मद्रासमें स्थापित होने वाली शल्ययन्त्रोंकी निर्माणशालापर ५३ करोड़ रुपये व्यय किये जा रहे हैं। ऋषिकेश और हैदराबादकी औषधनिर्माणशालाएं परीक्षाके रूपमें अक्टूबरमें औषध निर्माण प्रारम्भ कर देगी।

समाचार तो निस्सन्देह उत्तम है। एलोपैथिक औषधियोंके क्षेत्रमें देशको आत्म निर्भर होनेमें इससे भारी सहायता मिलेगी। इतना ही नहीं निकट भविष्यमें ही भारत अन्य देशोंको भी इसका निर्यात कर सकेगा। इससे विदेशी मुद्राकी समस्याका हल करनेमें भी यह कारखाने विशेष सहायक सिद्ध होंगे।”

नारदजीकी सलाह है कि वैद्योंको इस समाचारको सुनकर असन्तोष अथवा ईर्ष्या नहीं होनी चाहिये। आयुर्वेद तो इस देशका अपना विज्ञान है अपनी सम्पत्ति है और आयुर्वेदीय औषध निर्माणके विषयमें तो देश पहले ही आत्म निर्भर है। विदेशोंसे तो आयुर्वेदिक औषधियोंका आयात होता ही नहीं है। अतः सरकारको इस ओर कुछ करनेकी आवश्यकता ही नहीं है। रही शुद्ध और उत्तम औषध द्रव्योंकी प्राप्त करनेकी सुविधाकी बात। उसमें भी सरकारको क्या करना है। आयुर्वेदिक ऋषि तपस्वी थे। वैद्योंको उनकी तपस्या भी ‘दायभाग’में प्राप्त हुई है। उन्हें तपस्या और प्रयत्न करके वन और पर्वतोंका भ्रमणकर सर्वसाधारणको अप्राप्य औषधोंका संग्रह त्रस्त मानवकी सेवाके लिए स्वयं ही करना चाहिये। इस महान् आदर्शके वे ही प्रवर्तक और रक्षक हैं।

लूप्का चमत्कार—

“वर्तमानमें इन्स्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर, आनन्द (गुजरात) की रिप्रोडक्टिव् वायोलॉजी रिसर्च इन्स्टीट्यूटमें काम कर रहे विस् कोन्सिन विश्व-विद्यालय के स्नातक डा० एन्० सी० बुशके अनुसार लूप् (आई० यू० डी०) बैसोमें भी जन्म निरोधके कार्यमें उपयोगी एवं सफल सिद्ध हुआ है।

बताया गया है कि यह रिसर्च यूनिट फोर्डफाउन्डेशनकी सहायतासे निम्नकोटिके पशुओंको उत्पादन में असमर्थ बनानेके कार्यमें आई० यू० डी० की उपयोगिताकी जांच कर रही है। इसके परीक्षण बैसों, बकरियों और गायोंपर इन्स्टीट्यूटमें किये जा रहे हैं।”

नारदजीको आशा है कि इस अनुसन्धानका क्षेत्र विस्तृत करके शीघ्र ही पक्षियों, सरीसृपों और विविध प्राणियोंपर भी परीक्षण प्रारम्भ कर देने चाहिये। उससे सभी प्राणियोंकी उत्पत्तिपर मानवका अधिकार हो जावेगा और भविष्यमें जिसे हम चाहेंगे उसी जीवको इस मरत्यलोकमें प्रविष्ट होने देंगे। मरत्यलोककी इस थर्डक्लासका नियम ही यह है कि चाहे जैसी भीड़ हो स्वयं डिब्बेमें घुस जानेपर बाहरके लोगोंका प्रवेश पूरी शक्तिसे रोकना ही चाहिये।

नए कारखाने—

“कानपुर उत्तर प्रदेशमें लूप् बनानेके कारखानेका समाचार तो प्राप्त हुआ ही था अब भारत सरकारके स्वास्थ्य मन्त्रालयके सहसचिव श्री के० एन्० श्रीवास्तवने बताया है कि केन्द्रीय सरकार ‘कोण्डम-शीथ’ (गर्भनिरोध साधन) निर्माण करनेके लिए केरलमें एक कारखाना खोलेगी।

दो मासमें ही पांच लाख रुपयेकी अधिकृत पूंजी से एक कम्पनी प्रारम्भ की जावेगी। यह कम्पनी वर्षमें ८० लाख “शीथ” बना सकेगी। विदेशी सहयोगके लिये वार्ता चल रही है।”

अच्छा ही है। स्वतन्त्रराष्ट्रके लोगोंमें स्वच्छन्द विहारके साधनोंकी अभिवृद्धिका सर्वथा स्वागत ही करना चाहिये।

एक नवीन रोग—

“नारदजीको अपने परञ्चिमणमें एक नवीन रोगके विषयमें विशेष जानकारी प्राप्त हुई है। वैसे नारदजीके लिए विश्वके सभी देश एक जैसे ही हैं उन्हें किसीका कोई पक्षपात नहीं है। फिर भी भारतसे उनका प्राचीन कालसे ही कुछ लगाव है अतः समयानुसार सूचना देना उचित समझते हैं। यह रोग सरकारी व्यक्तियोंमें ही विशेष रूपसे पाया जाता है। यह भी देखनेमें आया है कि इसका विरस (Virus) अपेक्षा कृत अधिक सुविधा प्राप्त वर्गपर ही विशेष प्रभाव डालता है। इस रोगके आक्रमणसे व्यक्ति अपने समाज, देश, राष्ट्र, और काल सभीको विलकुल भूल जाता है। वह केवल अपने, अपनी सुविधाओं और अपनी आयके विषयमें ही सोचने लगता है। इस रोगका प्रभाव शारीरिककी अपेक्षा मानसिक ही अधिक है। आक्रान्त व्यक्ति समान रूपसे प्रभावित व्यक्तियोंका संगठन कर संवर्षकी नई योजनाएं बनाते हैं। जो कार्य उनको सौंपे जाते हैं तथा उनके जो सामाजिक और राष्ट्रीय कर्तव्य होते हैं, उन्हें ही वन्दकरके, त्याग पत्र देकर वे अधिक से अधिककी मांग करते हैं। इन दिनोंमें यह रोग—डाक्टरोंमें विशेषरूपसे फैला है। बिहारके लगभग सहस्र डाक्टर इसके शिकार हुए हैं। भारतकी राजधानीमें भी इसी वर्षमें यह रोग फैला। परिणामतः उन्होंने लम्बी हड़ताल कर डाली। रोगियों और उनके आश्रित पीड़ित जनोंकी आहों और कराहोंका भी उनके ऊपर कोई प्रभाव नहीं हुआ। बादमें त्याग पत्रकी भी तैयारी हुई। राजस्थान और उत्तर प्रदेशमें इन्जीनियरोंमें भी इस रोगका प्रसार हुआ है। उनमें भी त्याग पत्रोंकी धुन आई है। बहुत शीघ्र ही सामूहिक त्याग पत्र आने वाले हैं।

ज्ञात हुआ है कि इस रोगके संक्रमणके लिए वैद्योंके वर्गका क्षेत्र भी बहुत अच्छा है। परन्तु ऐसा अनुमान किया जाता है कि इस वर्गमें विशेष सुविधाओं

और अपेक्षाकृत अच्छे वेतनके न होनेसे यह 'विरस' अपना प्रभाव नहीं कर पाता है।"

नारदजीका ऐसा विचार है कि रोग भयानक है। इसकी भयानकता इसलिये भी अधिक हो जाती है कि यह अपेक्षाकृत विशेष सुविधा प्राप्त और शिक्षित समुदायोंमें फैलता जा रहा है। निश्चय ही सरकारको चाहिये कि इस रोगके विनाशके लिए भट योजना बनाकर, पट विलायतसे कोई औषध मंगाकर, चटसे एक प्रबल अभियान प्रारम्भ कर दे। अन्यथा दूसरे सुविधा प्राप्त सरकारी वर्गोंमें भी इसके संक्रमणकी पूरी सम्भावना है।

केन्द्रीय स्वास्थ्य सेवाके डाक्टरोंके वेतन—

"माननीय केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्री श्री सुशीला नायर ने दि० १८-८-६५ को राज्य सभामें घोषणा की है कि केन्द्रीय स्वास्थ्य सेवामें नियुक्त ५२७ डाक्टरोंने नये संशोधित वेतन स्तरको स्वीकार किया है।कुछ सदस्योंने मांग की कि स्वास्थ्य मन्त्रीको असन्तोषके कारणोंको देख कर इसका कोई हल निकालना चाहिये।

डा० नायर ने कहा कि वे उन लोगों (असन्तुष्ट लोगों) से बात नहीं करेंगी। उन्होंने उन लोगों से प्रारम्भमें बात की थी परन्तु उन लोगोंने उसे तोड़ मरोड़ कर इधर उधर फैलाया। यदि उनमें कुछ भी अंश शिष्टताका होता तो उन्हें चाहिये था कि जो कुछ उन्हें दिया गया है उसके लिये वे कृतज्ञताका प्रस्ताव स्वीकार करते।

डाक्टरोंकी शिकायतोंको जांचनेके लिए सदस्योंके आग्रह करनेपर स्वास्थ्य मन्त्रीने कहा कि समाजके ऐसे

सदस्य भी हैं जो कि बुद्धि भेद उत्पन्न करने और पूरे समयकी सेवाको नष्ट करना चाहते हैं। यदि लोक सभाके कुछ सदस्य भी उसी खेलको खेलना चाहते हैं तो वे केवल यही कह सकती हैं कि वे इसके लिये दुखी हैं।

यह नए वेतन स्तर जूनमें घोषित किये गये थे और इनकी स्वीकृतिके विषयमें अपनी इच्छाकी सूचना देनेकी अन्तिम अवधि १३ अगस्त थी। दूरके स्थानोंमें नियुक्त व्यक्तियोंके लिए अथवा जिन्होंने अधिक समयकी मांग की थी उनके लिए यह अवधि और भी बढ़ा दी गई है।

स्वास्थ्य मन्त्री ने दावा किया कि डाक्टरोंको आई. ए. एस्. के अधिकारियोंसे भी अच्छा वेतन स्तर दिया गया है।

प्राइवेट प्रैक्टिस न करनेके अलाउन्सके विषयमें उन्होंने बताया कि विशेषज्ञोंको उनके वेतनका ५० प्रतिशत अलाउन्स दिया जावेगा जो कि अधिक से अधिक रु. ६०० होगा। विशेषज्ञों अतिरिक्त डाक्टरोंको उनके वेतनका तृतीयांश इस अलाउन्सके रूपमें दिया जावेगा।"

नारदजीकी डाक्टरोंको सलाह है कि स्वास्थ्य मन्त्रीके वक्तव्यमें सभी दृष्टि कोणोंका आभास मिल जाता है। वास्तविक स्थितिके सामने आ जानेपर अधिक आग्रह करना इस समय शोभा नहीं देता।

"तृष्णा नैवोपशम्यति।"

कुछ समयके अनन्तर फिर मांग कर दीजियेगा। इच्छित कार्यकी सिद्धि हो सकेगी।

स्वास्थ्यमें विज्ञापन देकर लाभ उठावें

चिकित्सा परामर्श

जो बन्धु अपने प्रश्नोंका ठीक समाधान चाहते हैं उन्हें रोगका पूरा विवरण लिखना चाहिये। सामने होने पर तो अनेक प्रश्नोंद्वारा रोगीका पूर्ण वृत्तान्त जाना जा सकता है। परन्तु दूरस्थ रोगीसे बिना पत्रव्यवहार यह सम्भव नहीं है। इसलिए पत्रमें सभी आवश्यक बातें आजानेसे परामर्श अधिक अच्छे प्रकार दिया जा सकेगा। किसी बातको छिपानेकी भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि प्रश्नकर्त्ताका नाम प्रकाशित नहीं किया जाता है।

१. नसीरावादसे एक पीड़ित बन्धु लिखते हैं—

क्या आपकी पत्नी आजीवन यह कष्ट भोगेंगी। नहीं। प्रयत्न कीजिये। भगवान् दया कर सकते हैं। ऐसी स्थितिमें भी लाभ होता है।

‘श्रीमान्जी, मैंने दो वर्ष हुए अपनी पत्नीका आपरेशन बच्चा बन्द करानेके लिए कराया था। यह आपरेशन ५ वां बच्चा होनेके बाद कराया गया था। उस समय आपरेशनसे कुछ गड़बड़ी नहीं मालूम पड़ी परन्तु अब उन्हें तकलीफ हो गई है। अब उन्हें चाहे जब मासिकधर्म हो जाता है। खून भी खूब जाता है। कई दिनों तक परेशानी रहती है। दस दिनमें भी ऐसा हो जाता है। १५ दिनमें भी। वह बड़ी कमजोर हो गई है। कृपाकर कुछ अच्छी सलाह दीजिये’।

१. कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म

२ रत्ती

मुक्ताशुक्ति भस्म

२ रत्ती

दोनोंकी एक मात्रा बनाइये। प्रातःकाल ८.३० बजे शीतल जलसे दें और सायं काल ५ या ६ बजे दें।

२. ब्राह्मरसायन

मात्रा १ तोला

दोनों समय प्रातः ६ या ६½ बजे और रात्रिको सोनेसे पूर्व दूधसे लें।

३. अशोकागृष्ठ

मात्रा १½ तोला

शीतल जल मिलाकर दोनों समय भोजनके बाद लें।

धैर्य पूर्वक सेवन करावें। तले हुए और उष्णवीर्य भोज्य पदार्थ न दें।

परामर्श—Salpingectomy, सैल्पिन्जेक्टोमीका मतलब ही यह है कि डिम्ब प्रणालियोंको काटकर उनका गर्भाशयसे सम्बन्ध विच्छेद कर देना। आपकी पत्नीका यही आपरेशन हुआ है। प्राकृतिक रूपसे शरीरमें डिम्ब ग्रन्थि और गर्भाशय परस्पर सम्बद्ध रहकर कार्य करते हैं। उनका सम्बन्ध टूटनेसे जो अप्राकृतिक स्थिति उत्पन्न हुई है उसका ही यह परिणाम है। यह एक ऐसी स्थिति है कि अब वह अलग हुए अङ्ग जोड़े नहीं जा सकते। अर्थात् पहिले जैसी प्राकृतिक स्थिति अब नहीं आ सकती।

२. कोटासे एक अन्य बन्धुने लिखा है—

“महाराजजी, नमस्कार। मेरे छोटे बच्चेकी उमर ७½ बरसकी है। पर उसको नकसीर फूटनेका ऐसा रोग लग गया है कि वह दुबला ही रहता है। चाहे जब नकसीर फूट जाती है। कुछ धक्का लग जाय तो भी और कभी कभी तो चलते फिरते भी चलने लगती है। दवाइयां कराई हैं पर फायदा नहीं हुआ।”

परामर्श—आप निम्न प्रकार औषधकी व्यवस्था करलें तो ठीक रहेगा—

१. ब्राह्मरसायन मात्रा—६ माशा
अनुपान—दूध
दोनों समय-प्रातः ७ बजे और रात्रिको सोनेसे पूर्व दें।

२. आप घरपर ही मुलहठी और सूखे आमले कूट कर छनवा लें। उसमें उन दोनोंके बराबर मिश्री या चीनी मिला दें। अब इसी चूर्णके साथ मुक्ता शुक्ति भस्म दें मात्रा निम्न प्रकार है।

मुक्ता शुक्ति १ रत्ती से २ रत्ती तक
चूर्ण ४ या ६ माशा
शीतल जलसे ८.३० बजे और सायं ६ बजे

३. यदि इसकी चिकित्सा वास्तवमें बहुत हो चुकी है तो आप उपर्युक्त चूर्णके साथ ही—

सूतशेखर रस २ रत्तीमेंसे तीन मात्रा
बनाकर एक एक मात्रा दोनों समय दे दिया करें।

३. भागलपुर, जि० देवरिया उत्तर प्रदेशसे एक सन्तान प्रेमी सज्जनने पूछा है—

“श्रीमान् महोदयजी, नमस्ते। आपके चिकित्सा सम्बन्धी परामर्शको पढ़कर मुझे कुछ ऐसा भान हुआ है कि मेरे एक मात्र पुत्रका कष्ट आपके सत् परामर्शसे दूर हो सकता है। कृपाकर मुझे ऐसी सलाह दें कि मेरा यह विश्वास अटल हो जावे। मेरा पुत्र २½ वर्षका

है। परन्तु सूखा सूखा सा। मांस जैसे है ही नहीं। कई बार दस्त होते हैं। दिन भर रोता रहता है। कनपटी गरम रहती है। दूध पीता है पर डाल देता है। दांत निकले तो हैं पर खूँटे अभी नहीं आए हैं।

बहुत प्रतीक्षाके बाद तो पुत्रका मुँह देखा। उसका भी यह हाल है। मुझे तो कुछ विशेष नहीं, मेरे माता पिताको इससे बड़ा दुःख है।

परामर्श—आपके बालकको पाचन विकार ही मुख्य है। इसी कारणसे धातुओंका पोषण क्रम अव्यवस्थित होगया है। आप उसको निम्न प्रकार औषध दे सकते हैं।

१. चातुर्भद्रावलेहिका मात्रा २ या ३ रत्ती
दिनमें तीन बार मधु और दूधसे (दूध एक चम्मच-मधु ४, ६ बूंद) ८ बजे, दिनमें २ बजे सायं ८ बजे।

२. प्रवाल पञ्चामृत रस मात्रा १ रत्ती
एक चम्मच दूधसे तथा ४, ६ बूंद मधुसे दिनमें दो बार। १० बजे, ४ बजे।

३. अरविन्दासव मात्रा ३० बिन्दु से ६० बिन्दु तक
बराबर जलसे दिनमें २ बार बारह बजे, ६ बजे।

४. महालाक्षादि तैल शरीरपर दिनमें एक बार मर्दन करना।

पथ्य—उसे दूध यदि बकरीका मिल सके तो अति उत्तम होगा।

४.-एक सेठजीने बाड़मेरसे लिखा है।

“श्री सम्पादकजी, सा. जयरामजी। हमारे यहाँ घरमें बहुत बरसोंसे बहुत तकलीफ है। जब भी कभी उनके सिरमें बहुत दर्द होजाता है। पहिले हम उनको अंग्रेजी दवाइयां दर्द बन्द करनेके लिए दे दिया करते थे। थोड़ी देरके लिए दर्द बन्द

हो जाता था। पर कुछ टाइमके बाद उन दवाइयोंका कोई असर नहीं होता। फिर डाक्टरोंने उनको कुछ और अच्छी और कीमती दवाइयां बताई। गोलियोंसे दर्द कुछ बन्द होजाता है। मगर २३ घण्टे बाद फिर शुरू होजाता है। दूसरी किसी दवासे कोई फायदा नहीं होता। दर्द शुरू होनेपर तो वे खाना बिलकुल बन्द कर देती हैं। दर्द सिरमें ऊपर ज्यादा होता है। दर्दकी तेजीसे उन्हें ठहर ठहर कर आंसू पड़ने लगते हैं”

परामर्श—सेठजी साहब, आप सेठानीजी साहब के लिए नीचे लिखे दृङ्गसे चिकित्साकी व्यवस्था करलें। यह कष्ट बहुतसी देवियोंको रहता है। परन्तु नीचे लिखी औषधोंसे उन्हें लाभ होनेकी आशा है—

१. ब्राह्म रसायन

मात्रा १ तोला,

प्रातः तथा रात्रिको सोनेसे पूर्व, अवलेहको चटाकर ऊपर से दूध पिलावें। दूध बकरी या गायका चाहिये।

२. सूतशेखर रस

मात्रा १ रत्ती

(स्वर्ण मिश्रित) एक चम्मच दूधमें थोड़ा सा मधु मिलावें और उसीके साथ रसकी टिकिया पीसकर चटा दें।

सिरपर हाथोंसे बालोंको हटाकर नारायण तैल अच्छी प्रकार लगवावें। कानोंमें दशमूल तैल डालें। सोनेके समय पैरोंके तलुओंमें भी तैल अच्छी तरह लगवाएं। दूधका सेवन बराबर करें। पित्त बढ़ाने वाली उष्ण वस्तुएं और तले हुए पदार्थ न खावें।

५. अपनी पुत्रीके भविष्यसे चिन्तित एक बन्धु फर्खावादसे लिखते हैं -

“श्रीमान् सम्पादकजी, नमस्कार। मेरी तेरह वर्षकी लड़कीको कुछ ऐसा रोग है कि उसे कष्ट तो नामको भी नहीं है। पर हमें उससे चिन्ता बड़ी भारी है। बात यह है कि उसके गालोंपर ठोड़ीपर और माथेपर भी सफेद सफेदसे दाग हो गए हैं। यह दाग गर्दनके नीचे हंसलीपर और पीठपर भी हैं। बहुतसे लोगोंको दिखाया है। कहते हैं कि यह कोढ़के सफेद दाग तो नहीं हैं। पर श्रीमान् हमें बहुत चिन्ता है। लड़की है। भविष्य बिगड़ जावेगा।”

परामर्श—बन्धुवर, घबड़ानेकी बात तो नहीं है। परन्तु रोग अच्छा होनेमें समय अवश्य लगेगा। निम्न लिखित दंगसे औषध दिलाइये—

१. खदिरारिष्ट

मात्रा १ तोला

अनुपान-जल। दोनों समय भोजनके अनन्तर दें। यह दिनमें तीन बार भी दिया जा सकता है। तीसरी बार सायंकाल ५ बजेके लगभग दें। यदि सायंकाल भोजन शीघ्र ही कर लेती हो तो रात्रिको सोते समय दे सकते हैं।

२. बावची ४ भाग

दोनोंको मिलाकर चूर्ण

काला तमक १ भाग

कर छनवावें। फिर इसको २ या ३ माशा तक दोनों समय जलके साथ दें।

३. मरिचादि तैल

जो दाग पड़े हुए हैं उनपर यह तैल लगवावें।

कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवनमें शास्त्रीय औषधियां
सर्वदा प्रस्तुत रहती हैं।



भवनमें स्वतन्त्रता दिवस ---

ता० १५-८-६५ को प्रातः ९ बजे भवनके कर्म-
चारियोंने बड़े उत्साहके साथ स्वतन्त्रता दिवस मनाया।
औषधालयके प्रांगणमें भवनके व्यवस्थापकद्वारा
राष्ट्रीय ध्वजा फहराई गई। ध्वजारोहणके पश्चात्
व्यवस्थापक श्री नवरतनमल जोशीने बड़े सुन्दर व
आकर्षक ढङ्गसे स्वतन्त्रता दिवसका महत्त्व, स्वतन्त्र
भारतके नागरिकोंके कर्तव्य तथा राष्ट्रीय ध्वजपर
अंकित चिह्न और उसके प्रति हमारे कर्तव्यके विषयपर
प्रकाश डाला।

स्वतन्त्रता दिवसके उपलक्ष्यमें भवनमें छुट्टी रही।

श्रीमान् डा० अम्बालाल शर्मा, आयुर्वेद
शास्त्रीका जन्म दिवस--

दि० १९-८-६५ को अजमेरके सुप्रसिद्ध सिद्ध हस्त
वयोवृद्ध चिकित्सक श्री डा. अम्बालाल जी शर्मा
आयुर्वेद शास्त्रीका जन्म दिवस गान्धी अध्ययन
केन्द्र, हाथी भाटा, अजमेरमें मनाया गया। डा० साहब
अपने जन्म दिवसके विषयमें सदा ही उदासीन देखे
गये। वे ऐसे समारोहोंसे प्रयत्न पूर्वक दूर ही भागते
रहे थे। परन्तु यह एक आश्चर्य ही था कि वे इस
वार 'पकड़' लिए गये। उत्सवके आयोजक श्री यश-
वन्त रुचिर इसके लिए वास्तवमें बधाईके पात्र हैं।

अध्ययन केन्द्रके व्यवस्थापक श्रीयुत रामस्वरूप
गर्गने डा० साहबकी निःस्वार्थ सेवाओंपर प्रकाश

डॉ. लाला लक्ष्मी कृष्ण गोपाल साहब की समाचार सम्पादक श्री
 मोहनराज भण्डारी ने बताया कि डाक्टर साहब की
 सेवाएं सामाजिक राजनैतिक एवं धार्मिक आदि सभी
 क्षेत्रों में अनुसरणीय हैं। सिटी इम्प्रूवमेन्ट ट्रस्ट के अध्यक्ष
 श्री कृष्ण गोपाल गर्ग ने उनकी सेवाओं की प्रशंसा करते
 हुए बताया कि वे उनके सदा ही स्नेह पात्र रहे हैं।
 प्रसिद्ध कांग्रेसी कार्यकर्ता श्री दुर्गा प्रसाद चौधरी ने
 देश के स्वतन्त्रता संग्राम के समय विविध प्रकार से डा.
 साहब द्वारा की गई सेवाओं का मनोरञ्जन एवं प्रेरणा-
 प्रद विवरण दिया। वैद्यराज श्री ब्रह्मानन्द त्रिपाठी ने
 डाक्टर साहब की सरलता, प्रियवादिता एवं परोपकार
 वृत्तिकी चर्चा करते हुए निम्न श्लोक से अपने भाषण का
 उपसंहार किया।

पीयूष पाणिनां श्रेष्ठो धन्यः पीयूषवागयम्।

पीयूषं वितरन्नित्यं शतं जीयात् सतां मुदे ॥

श्री जीतमलजी लूणियाने उनके चिकित्सा सम्बन्धी सेवा कार्योंकी चर्चा करते हुए अनेक घटनाओंका स्मरण दिलाया। अन्तमें सभापतिपदसे बोले हुए आयुर्वेद विभागके संचालक श्री वै. रा. प्रेमशङ्कर शर्माने डाक्टर साहबकी विद्वत्ता, चिकित्सा सम्बन्धी सिद्धहस्तताकी प्रशंसा करते हुए उनके प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की।

अजयमेरु आयुर्वेद सहाविद्यालयका प्रमाणपत्र
वितरणोत्सव—

दिनांक २२-८-६५ रविवारको सायंकाल ५ बजे
निखिल भारतीय ख्यातिप्राप्त, प्राच्य, पश्चात्य
चिकित्सा विशेषज्ञ श्री डा० अम्बालाल शर्मा आयुर्वेद
शास्त्रीकी अध्यक्षतामें अजयमेरु आयुर्वेद महाविद्या-
लयका प्रमाणपत्र वितरणोत्सव अमरशहीद सन्त
कंवर धर्मशाला, अजमेरमें सानन्द सम्पन्न हुआ।

प्रार्थना गायनके अनन्तर विद्यालयके आचार्य श्री वैद्य ब्रह्मानन्द त्रिपाठीने बताया कि विद्यालयमें अध्यापन कार्यके लिए अनेक विद्वान् वैद्योंने अपनी सेवाएँ निःशुल्क देनेका वचन दिया है। आजकल आयुर्वेद विद्यालयका संचालन करना अनेक दृष्टियोंसे बड़ा कठिन कार्य है। इस नगरमें नि. भा. आयुर्वेद विद्यापीठका केन्द्र लगभग ५५ वर्षसे बड़ी उत्तमतासे चल रहा है। उन्होंने कहा कि अनेक नागरिकों और वैद्योंसे

अपील की कि इस विद्यालयको सर्व साधन सम्पन्न विद्यालय बनानेमें आगे आवें।

राजस्थान आयुर्वेदिक फार्मसीके भूतपूर्व मैनेजर वैद्यराज श्री हरिगोपालजी दवेने चिकित्सा कार्यकी महत्ता और सार्वजनीन उपयोगिता बताते हुए इस कार्यको आगे बढ़ानेकी प्रेरणा दी।

महाविद्यालयके मन्त्री कविराज श्री बालमुकुन्द शर्माने विद्यालयकी प्रगतिका विवरण देनेके अनन्तर परीक्षाओंमें सफल छात्रोंके नामोंकी घोषणा की। श्री डाक्टर साहबने प्रमाण पत्र वितरण किये। अपने प्रवचनमें उन्होंने आयुर्वेदकी सेवा सम्बन्धी सम्भावनाओंपर प्रकाश डालते हुए, ज्ञानका महत्त्व बताते हुए कहा कि मनुष्य सदा ही विद्यार्थी रहता है। उन्होंने विद्यालयके कार्यकर्त्ताओं और छात्रोंको प्रोत्साहित किया। गायनके अनन्तर सभा विसर्जित हुई।

गुड़ गांवा समाचार—

श्री रामकृष्ण मिशन सेवा आश्रमकी ओरसे डेढ़ वर्षसे एक ऐलोपैथिक चिकित्सालय संचालित हो रहा था। प्रसन्नताका विषय है कि आयुर्वेदिक पद्धतिसे सेवा सम्बन्धी सम्भावनाओंका उत्तम क्षेत्र देखकर प्रशंसित सेवा आश्रमने उस चिकित्सालयको ९ अगस्त ६५ से आयुर्वेदिक चिकित्सालयके रूपमें परिवर्तित कर दिया है।

उक्त औषधालयमें श्री वैद्यराज बालकिशन शर्मा तथा प्रधान चिकित्सक कविराज भगवान् दास सुगन्ध, जो कि श्वास रोगके विशेषज्ञ हैं, तत्परता तथा प्रेम सहित सेवा कार्य कर रहे हैं। आशा है कि सेवा आश्रमके कार्य कर्त्ताओंकी इच्छानुकूल जनता इस निःस्वार्थ सेवासे अधिकसे अधिक लाभ प्राप्त कर सकेगी।

रामकृष्ण मिशन सेवा आश्रम गुड़ गांवाके संचालक इस शुभ कार्यके लिए बधाईके पात्र हैं।

डा. सुशीला नायरद्वारा आयुर्वेद गवेषणाकेन्द्रका उद्घाटन

केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्री डा० सुशीला नायरने मद्रासके डा० ए० लक्ष्मीपति आयुर्वेद अनुसन्धान

संस्थानमें आयुर्वेद गवेषणा विभागका उद्घाटन करते हुए बताया है कि —

डा० लक्ष्मीपति गांधीजीके सहयोगी थे और कुछ समय सेवाग्राम आश्रममें रहे। वह ऐलोपैथीके कुछ डाक्टरोंकी तरह पहले आयुर्वेदके विरोधी थे। बादमें गहन अध्ययनके कारण वह इसके प्रबल समर्थक हो गए। दरअसल आयुर्वेदकी वैज्ञानिक उपयोगिताकी ओर जिन्होंने विश्वका ध्यान खींचा, वे आधुनिक चिकित्सा पद्धतिके ही प्रतिभाशाली छात्र थे। वर्तमान समयमें आयुर्वेदका पक्ष लेने वाले कई डाक्टरोंमेंसे कुछके नाम ये हैं—श्री यामिनी भूषण राय, गणनाथ सेन, डी. एन. बनर्जी, कप्तान श्रीनिवास मूर्ति, कर्नल रामनाथ चोपड़ा और बी. मुखर्जी। आधुनिक डाक्टर जब आयुर्वेदका अध्ययन व अनुभव करते हैं तब वे प्रायः इसके प्रबल समर्थक हो जाते हैं। मुझे इस बातकी प्रसन्नता है कि स्वर्गीय डा० लक्ष्मीपतिने आयुर्वेदपर गवेषणाके लिए एक निधि बनाई थी और उसमेंसे २३०,००० रुपयेकी लागतसे डा० लक्ष्मीपतिके नामपर यह गवेषणा विभाग खोला जाएगा।

स्वास्थ्य मन्त्रीने कहा कि ऐलोपैथीमें भोजन, पथ्य आदिके बारेमें निर्धारित नियम नहीं है, जबकि आयुर्वेदमें इस ओर काफी ध्यान दिया गया है। हारीत संहितामें लिखा है कि पथ्यके बिना रोग-निवारण सम्भव नहीं। कुशल चिकित्सक पथ्यसे ही रोग ठीक कर सकता है, जबकि बिना पथ्यके सैकड़ों दवाइयोंसे भी वह ठीक नहीं हो सकता। चरक संहितामें बताया गया है कि किस-किस मौसममें कौन-कौन सा भोजन करना चाहिए।

पौष्टिक आहारके विषयमें बताते हुए डा० नायरने कहा कि हमारे देशमें लोगोंके भोजनमें प्रोटीन और विटामिनोंकी कमी है। इससे बच्चों और गर्भवती औरतोंमें रक्ताल्पता (अनीमिया) की बीमारी बहुत अधिक होती है। अतः बच्चों और माताओंको पौष्टिक आहार देनेके कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं ताकि यह कमी पूरी की जा सके।

उन्होंने कहा कि शरीरकी प्रकृतिका आधुनिक डा. शैलडन्ते जो वर्गीकरण किया है, वह आयुर्वेदके

वर्गीकरण-वात पित्त और कफ प्रकृतिकी तरहका है। आयुर्वेद शास्त्रमें अब भी ऐसे अमूल्य तथ्य हैं, जिनका अब तक वैज्ञानिक अध्ययन नहीं हुआ। मुझे प्रसन्नता है कि इस संस्थामें आयुर्वेद और आधुनिक चिकित्सा पद्धतिके प्रतिभाशाली व्यक्ति अनुसंधान कर रहे हैं और उन्हें हर प्रकारकी वैज्ञानिक सुविधा दी जा रही है।

महामना मदनमोहन मालवीय राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय उदयपुर—

उदयपुर (डाकसे) महा० मदनमोहन मालवीय राज० आयुर्वेद महाविद्यालय, उदयपुरके छात्रसंघ कार्य-कारिणीका निर्वाचन दिनांक ९ अगस्त १९६५ को परम सौहार्द एवं शान्तिमय वातावरणमें सम्पन्न हुआ। कार्यकारिणीका निर्वाचन निम्नानुरूप रहा :—

अध्यक्ष—श्री नरोत्तम दास, भिषगाचार्य अन्तिम वर्ष
प्रधान मंत्री—श्री राजकुमार शर्मा, भिषग्वर तृतीयवर्ष
समाज मंत्री—श्री दिनेशचन्द्र व्यास, भिषग्वर तृतीयवर्ष
अर्थमंत्री—श्री नारायणलाल धाबाई, भिषग्वर द्वितीयवर्ष
क्रीड़ामंत्री—श्री सम्पत राज गर्ग, भिषग्वर तृतीयवर्ष
(निर्विरोध)

योग्यताधारपर निम्न पदाधिकारी मनोनीत किये गये—

उपाध्यक्ष—श्री तोलाराम स्वर्णकार, भिषग्वर प्रथमवर्ष
सम्पादक—श्री शम्भुशङ्कर पण्ड्या, भिषग्वर द्वितीयवर्ष
कक्षा प्रतिनिधि—श्री प्रभुलाल धाकड़, भिषगाचार्य अन्तिम वर्ष।

” ” —श्री गोविन्दलाल तिवाड़ी भिषगाचार्य प्रथम वर्ष।

” ” —श्री रामेश्वरप्रसाद शर्मा, भिषग्वर तृतीय वर्ष।

संरक्षक—श्री श्यामसुन्दर जी, आचार्य

वरिष्ठ सदस्य—श्री जगन्नाथ व्यास, प्रवक्ता

” ” —श्री शिवराम तिवारी, प्रवक्ता

परामर्श दाता—श्री यमुनालाल वैद्य

राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय उदयपुरके छात्रोंद्वारा सरकारको सेवायें समर्पित

उदयपुर (डाकसे) २० अगस्त, स्थानीय राजकीय

आयुर्वेद महाविद्यालयमें छात्र संघकी ओरसे श्रीकृष्ण जन्माष्टमी समारोह मनाया गया। जिसमें महाविद्यालय तथा धात्री कल्पद छात्रसंघने एक प्रस्तावद्वारा काश्मीरकी वर्तमान स्थितिपर चिन्ता व्यक्त करते हुये देशकी अन्तरंग रक्षाके प्रबन्धमें छात्रों, अध्यापकों एवं कार्यालय कर्मचारियोंने सरकारको अपनी सेवायें अर्पित की एवम् सरकारको यह विश्वास दिलाया कि उनकेद्वारा कोई भी ऐसा कार्य नहीं किया जायेगा तथा ऐसे कार्यमें सहयोग भी नहीं दिया जायेगा जिससे सरकारको अपनी शक्ति देशकी अन्तरंग स्थिति संभालनेमें लगानी पड़े। प्रस्तावके अन्तमें देशवासियोंसे विनम्र शब्दोंमें यह अपील की गई कि देशकी संकटापन्न स्थितिको ध्यानमें रखते हुये किसीको भी कोई भी ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये जिससे सरकारको सीमावर्ती स्थिति सुधारनेमें शक्ति लगानेकी अपेक्षा देशकी अन्तरंग स्थिति संभालनेमें शक्ति लगानी पड़े।

राजकुमार शर्मा

प्रधान मंत्री

विद्वान् तथा प्रतिष्ठित वैद्योंका सम्मान—

१५ अगस्त १९६५ के पुण्य पर्वपर 'आयुर्वेद अकादमी' हैदराबाद (आ. प्र.) द्वारा विद्वान् तथा प्रतिष्ठित वैद्योंके सम्मानके लिए सायंकाल ४ बजे महन्त बाबा सेवादासजीके उदासीन मठमें—

माननीय श्रीवासुदेवजी नायक

(डिपुटी स्पीकर आन्ध्र प्रदेश विधान सभा)
की अध्यक्षतामें एक विशेष समारोहकी आयोजना की गई। 'आयुर्वेद अकादमी' के प्रधान मंत्री आचार्य श्री गयाप्रसाद शास्त्री तथा कविराज श्री पुरुषोत्तमदेव जी आयुर्वेदालंकारने समागत वैद्योंकी आयुर्वेद सेवा पर प्रकाश डाला। अनन्तर श्री अध्यक्ष महोदयने अपने करकमलोंद्वारा निम्नांकित वैद्य महानुभावोंके सुन्दर कौषेय वस्त्रके साथ सम्मानपत्र प्रदान किए।

आयुर्वेदमहोपाध्याय

- (१) प्राणाचार्य डा० डी० रंगाचार्युलु, गुण्डूर
- (२) डा० वी० शंकरशास्त्री आयुर्वेदाचार्य, मरया
- (३) राजवैद्य श्री पं० राधाकृष्ण जी द्विवेदी

भिषगाचार्य, हैदराबाद

उपर्युक्त महानुभावोंको "आयुर्वेदमहोपाध्याय" की उपाधिसे अलंकृत किया गया।

वैद्यवाचस्पति

(१) राजवैद्य श्री नारायणदासजी, हैदराबाद

(२) राजवैद्य श्री रामेश्वररावजी, हैदराबाद।

इन दोनों वैद्यमहानुभावोंको 'वैद्यवाचस्पति' के सम्मानसे विभूषित किया गया।

डा० डी० रंगाचार्य लुजी तथा डा० वी० शङ्कर शास्त्रीजी ने आयुर्वेदविज्ञानके महत्त्वपर विस्तृत प्रकाश डालते हुए इस सम्मानके प्रति अपना आभार प्रदर्शित किया। संस्थाके अध्यक्ष स्वामी श्री हंसानन्दजी सरस्वती ने 'आयुर्वेद अकादमी' द्वारा भविष्यमें की जाने वाली सेवाओंपर गम्भीर प्रकाश डाला। माननीय श्री अध्यक्ष महोदयने अपने सुन्दर भाषणमें वैद्योंको सुसंगठित होकर समयानुसार रचनात्मक कार्य करने की प्रेरणा प्रदान की तथा आयुर्वेदके भविष्यको अत्युज्ज्वल बताया। प्रधान मंत्रीने समागत सज्जनोंको समारोहको सफल बनानेके लिए हार्दिक धन्यवाद दिया। अनन्तर श्री पं० शा० विश्वनाथजी शर्मा आयुर्वेदाचार्यने संस्कृतमें संक्षिप्त भाषण करते हुए शान्ति पाठ किया। शान्तिपाठके अनन्तर समारोहका कार्यक्रम परिपूर्ण हुआ।

भवदीय

डा० गयाप्रसाद शास्त्री

प्रधान मंत्री

आयुर्वेद अकादमी, मुरलीधरबाग, हैदराबाद (आ.प्र.)

आयुर्वेदिक एवं तिब्बती अकादमी, उत्तर प्रदेश

पुरस्कार वितरण समारोह—

उत्तर प्रदेश शासनके द्वारा सन् १९५२ में आयुर्वेदिक एवं तिब्बती अकादमीकी स्थापना की गई थी। इस संस्थाद्वारा आयुर्वेद एवं तिब्बतके विद्वान् लेखकोंको उनकी उच्चस्तरीय पुस्तकोंपर मान स्वरूप पुरस्कार प्रदान किये जाते रहे हैं। इस वर्ष इस संस्था द्वारा राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय तुलसीदास मार्ग लखनऊके प्राङ्गणमें भव्य समारोहका आयोजन किया गया। जिसमें बड़ी संख्यामें नगरके प्रतिष्ठित व्यक्ति, वैद्य,

हकीम, अकादमीके सदस्य तथा उसके द्वारा पुरस्कृत विद्वान् लेखक उपस्थित थे। महामहिम श्री विश्वनाथ दास, राज्यपाल; उत्तर प्रदेशने पुरस्कार तथा प्रमाण पत्रोंका वितरण किया।

उत्तर प्रदेशके आयुर्वेद एवं यूनानी सेवा निर्देशक श्री मुकुन्दीलाल द्विवेदीने जो इस संस्थाके पदेन अध्यक्ष भी हैं। महामहिम राज्यपाल विद्वान् लेखकों तथा समागत अतिथियोंका स्वागत किया।

अपने भाषणमें उन्होंने सूचना दी कि उत्तरप्रदेश शासनद्वारा वैद्यों तथा हकीमोंके वेतनस्तर बढ़ाये गये हैं। वाराणसेय संस्कृत विश्व विद्यालयमें आयुर्वेद महाविद्यालय इसी वर्ष प्रारम्भ किया जा रहा है। इस अतिरिक्त अन्य आयुर्वेद महाविद्यालयोंके स्तर भी ऊँचे किये जा रहे हैं। चतुर्थ पंचवर्षीय योजनामें राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय लखनऊमें अनुसन्धान तथा स्नातकोत्तर शिक्षणकी व्यवस्था भी की जा रही है साथ ही आयुर्वेदिक एवं तिब्बती अकादमी विस्तारकी भी योजना है।

उन्होंने कहा कि अकादमीकी ओरसे जो विद्वान् लेखकोंको पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं उनको मान प्रतीक ही समझना चाहिये। क्योंकि उत्तम लेखकोंका मूल्य निर्धारित नहीं किया जा सकता, वे अमूल्य हैं।

अकादमीके मंत्री श्री हरिस्वरूप कुल, श्रेष्ठ सीरियर मेडिकल ऑफीसर, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, लखनऊने अकादमीकी स्थापना और उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए बताया कि पुरस्कार आदि निमित्त शासनसे अकादमीको ११,९०० रुपयेका वार्षिक अनुदान प्राप्त होता है। अकादमीमें पदेन अध्यक्ष निर्देशक आयुर्वेद, उत्तर प्रदेशको भिलाकर कुल सदस्य हैं जिनको सरकार द्वारा मनोनीत किया जा रहा है। संस्था एक पुस्तकालयका भी संचालन करती है जिसमें अब तक ३२७९ पुस्तकोंका संग्रह किया जा चुका है। अब तक सरकारकी स्वीकृतिसे आयुर्वेद एवं तिब्बतके ७३ लेखकोंको पुरस्कार भेंट किये जा चुके हैं।

श्री मुकुन्दीलाल द्विवेदी अध्यक्ष, अकादमीने वर्षके पुरस्कार विजेताओंका संक्षिप्त परिचय देते हुए

उन्हें महामहिम राज्यपाल महोदयके समक्ष उपस्थापित किया। राज्यपाल महोदयने निम्न लिखित लेखकोंको उनकी अधोलिखित पुस्तकोंपर पुरस्कार तथा प्रमाण पत्र प्रदान कर उन्हें सम्मानित किया।

१. श्री रमानाथ द्विवेदी भिषक् कर्मसिद्धि ६००-००
वाराणसी
२. श्री गंगासहाय पाण्डेय कायचिकित्सा ६००-००
वाराणसी
३. श्री अनन्तराम शर्मा शल्य समन्वय ४५०-००
हरद्वार
४. श्री परमानन्द पाण्डेय पथ्यापथ्य विमर्श ३५० ००
दिल्ली
५. श्री अमरनाथ गुलहाटी नैदानिक विकृति ३००-००
विज्ञान

उपर्युक्त लेखकोंके अतिरिक्त विगत वर्षोंके पुरस्कार विजेता लेखकोंको भी राज्यपाल महोदयद्वारा पारितोषिक प्रमाणपत्र वितरण किये गये जिनमेंसे निम्न लिखितके नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

- १—वैद्यराज पं० श्री जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल
- २—वैद्यराज पं० श्री अत्रिदेव गुप्त
- ३—श्री हकीम दलजीत सिंह
- ४—श्री रामसुशील सिंह
- ५—वैद्यराज श्री लक्ष्मीशंकर गुप्त
- ६—वैद्यराज श्री प्रभाकर जनार्दन देश पाण्डे
- ७—वैद्यराज श्री प्रकाश चन्द्र गौड़
- ८—हकीम श्री एम० एम० सैयद
- ९—हकीम श्री याविर रजा

श्री राज्यपाल महोदयने विद्वान् वैद्योंसे दत्तचित्त होकर आयुर्वेदीय औषधोंके अनुसन्धानमें लगे रहने और आयुर्वेदकी उन्नतिमें सभी प्रकारका प्रयत्न करनेकी अपील की तथा पुरस्कार विजेताओंको धन्यवाद दिया। राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालयके प्रधान आचार्य श्री वैद्यराज शिवदत्त शुक्लके द्वारा

समागत महानुभावों और महामहिम राज्यपाल महोदयको धन्यवाद अर्पण करनेके बाद समारोह समाप्त हुआ।

श्रीयुत वैद्य खूबचन्द शर्मा

आयुर्वेद सुधाकरका देहावसानः—

आयुर्वेद जगत्में यह समाचार अत्यन्त शोक एवं दुःखके साथ सुना जावेगा कि जोधपुरके प्रतिष्ठित वैद्यराज श्री पं० खूबचन्द शर्मा आयुर्वेदसुधाकरका दिनाङ्क १६-८-६५ को असमयमें देहावसान होगया है।

दिवंगत शर्माजी प्रारम्भमें साधारण हिन्दी अप्रेजी पढ़े हुए थे। रेलवेकी सेवामें रहते हुए उन्होंने अध्ययनसे पूर्वक आयुर्वेदका अध्ययन गुरुपरम्परासे किया। उसमें प्रौढ़ता और आयुर्वेदिक चिकित्सामें प्रवीणता एवं यश प्राप्त किया। वे एक उत्साही कार्यकर्त्ता थे। मारवाड़ आयुर्वेद प्रचारिणी सभाका कार्य उन्होंने सुदीर्घकाल तक बड़े उत्साह और योग्यताके साथ किया। अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलनके सन् १९३९में जोधपुरमें सम्पन्न हुए प्रसिद्ध उनतीसवें अधिवेशनके कार्योंमें बड़ी लगन और प्रेमसे उन्होंने प्रमुख भाग लिया था। उससे वैद्य समाजमें उन्हें बड़े प्रेम तथा आदरसे देखा जाताथा। उनकी सेवाओंसे प्रसन्न होकर उन्हें उसी सम्मेलनके अवसरपर सम्मानार्थ आयुर्वेद सुधाकरकी उपाधि दी गई थी।

निस्सन्देह वैद्य समाजने एक अत्यन्त योग्य आयुर्वेद-भक्तको खो दिया है। हव'स्वास्थ्य' परिवारकी ओरसे दुःखी: एवं शोक सन्तप्त परिवारके प्रति हार्दिक सहानुभूति प्रकाशित करते हैं और भगवान्से प्रार्थना करते हैं कि वियुक्त परिवारको इस दुःखके सहन करनेकी शक्ति दें।

“स्वास्थ्य” में समालोचना के लिए पुस्तकों की २-२ प्रतियां भेजना आवश्यक है।

नीर-क्षीर

(साहित्य समालोचन)

श्री वैद्य ब्रह्मानन्द
त्रिपाठी

देवो, ऋषियो अने प्रतापी पुरुषो—

(गुजराती भाषा)

लेखक—‘रसकवि’ श्री रघुनाथ ब्रह्मभट्ट,

प्रकाशक—सस्तु साहित्यवर्धक कार्यालय,

अहमदाबाद तथा प्रिन्सेस स्ट्रीट, मुंबई-२

आकार-२०" X ३०" सोलह पृष्ठीय। पृष्ठ सं०, २२४
मुद्रण आदि सुन्दर, आकर्षक। सजिल्द, मूल्य रु. २
मात्र।

पुस्तकका विषय यों तो उसके नामसे ही विदित हो जाता है, परन्तु उसमें देव, ऋषि और प्रतापी पुरुषोंमेंसे किनका चयन किया गया है और वह कितना सुविचारित, सुन्दर एवं प्रशंसनीय है यह तो पुस्तकको देखनेसे ही विदित होता है। इसमें देवोंके आचार्य बृहस्पतिसे प्रारम्भ करके सिंहल (लंका) की अनुपम श्री ‘सिरिमा’ तक लगभग २५ आदर्श व्यक्तियोंके प्रोज्ज्वल चरित्रोंको अत्यन्त आकर्षक एवं प्रभावशाली रीतिसे चित्रण किया गया है।

यथार्थ ‘रसकवि’ श्री रघुनाथ ब्रह्मभट्टने अलौकिक रसकी धारासे आप्लावितकर, अप्रतिम शिल्पीके रूपमें आदर्शों और चारित्रिक विशेषताओंको कलापूर्ण वैशिष्ट्यसे अङ्कितकर इस पुस्तकके रूपमें एक अनुपम उपहार पाठकोंको अर्पित किया है।

यों तो सभी चरित्र बड़े ही सुन्दर बने हैं फिर भी कुछ प्राचीन तथा सामान्यरूपसे अज्ञात चरित्रोंका चित्रण अति प्रभावशाली बन पड़ा है। ‘सर्वस्वत्याग’ में सौराष्ट्रकी राजकन्या चूडाला और अवन्तिका नरेश निखिष्वजका, कनिष्कका पाटलिपुत्र विजयमें कनिष्कका तथा ‘सिरिमा’ में सिरिमाके चरित्र हृदयप्राही, कवित्वमय, एवं उत्तमरूपमें प्रकट हुए हैं। प्राचीन ऋषियोंके चरित्र लेखनमें आदर्श और समालोचनाका अच्छा सामंजस्य दृष्टिगोचर होता है।

होता है। ‘केटलाक ऋषियो’ और ‘ऋषि आश्रमो’ में अनेक ऋषियों और ऋषियोंके प्रसिद्ध आश्रमोंका वर्णन आगया है। इस प्रकार विस्तृत आर्य साहित्य एवं इतिहासमेंसे अधिकसे अधिक सम्भव जीवनोंका सामान्य परिचय मिल जाता है।

सबसे बड़ा उद्देश्य जिसकी इस पुस्तकसे सिद्धि होती है वह है आजके बालकों, नवयुवकों और जिज्ञासुओंको इन देदीप्यमान चरित्रोंके माध्यमसे आर्य संस्कृतिसे परिचय प्राप्त होना, उसके प्रति श्रद्धा होना। आजके वातावरणमें जबकि देशकी सन्तान नवीन पश्चिमी तथाकथित प्रचारके द्वारा आत्म-विस्मृत होकर मार्गभ्रष्ट हो रही है तब ऐसी सुन्दर पुस्तकों द्वारा उन्हें सत्य प्रकाश और मार्ग प्राप्त होनेमें सहायता मिलती है।

निश्चय ही पुस्तकके लेखक सिद्धहस्त रसकवि श्री रघुनाथ ब्रह्मभट्ट और प्रशंसित प्रकाशक सस्तु साहित्य वर्धक कार्यालय बधाईके पात्र हैं।

श्री मार्कण्डेय पुराण—

(गुजराती अनुवाद द्वितीय संस्करण सं. २०२१)

अनुवादकर्ता—श्री शास्त्री तुलजाशङ्कर

धीरजराम पण्ड्या।

प्रकाशक—सस्तु साहित्यवर्धक कार्यालय।

अहमदाबाद तथा प्रिन्सेस स्ट्रीट, मुम्बई २।

आकार २० $\frac{1}{2}$ X २६ $\frac{1}{2}$ बड़ा आकार। अष्ट पृष्ठीय।
पृष्ठ सं० ३६८। सुन्दर जिल्द। मू० रु० ६-५०।

प्रकाशनार्थ मार्कण्डेय पुराणके अनुवादका चयन प्रकाशकोंके उद्देश्यके विचारकी दृष्टिके सर्वथा अनुरूप है। इस पुराणमें सुप्रसिद्ध एवं आदर्शकी दृष्टिसे अद्वितीय हरिश्चन्द्रोपाख्यान, मदालसोपाख्यान तथा उसकेद्वारा किये हुए अप्रतिम उपदेश, महात्मा दत्तात्रेयद्वारा अलर्कको किए हुए आत्मज्ञान, योगसिद्धि उपदेश, देवी और महिषा-

सुरका युद्ध तथा असुरवध, मरुत्त चरित आदि उपलब्ध है। ऐसी मान्यता है कि वेदादि शास्त्रों में जो धर्म और कर्त्तव्यका उपदेश है, वह सर्वोत्तम है। परन्तु सर्व साधारणको भी उसका पूर्ण लाभ प्राप्त हो सके एतदर्थ पुराणों में उन उपदेशोंको सरल सुबोध एवं आख्यानादि द्वारा रुचिकर तथा प्रत्यक्ष जैसा रूप दिया गया है जिससे साधारण जन भी उच्च आदर्शोंको लक्ष्यमें रख कर अपने जीवनको वैदिक संस्कृतिके अनुसार ढाल सकें। निस्सन्देह इस दृष्टिसे मार्कण्डेय पुराणका अपना एक विशेष स्थान है। इसीलिए इस अनुवादको प्रकाशित कर प्रकाशकोंने लोक कल्याणके कार्योंमें एक नई कड़ी और जोड़ी है।

मूल संस्कृतका अनुवाद सुन्दर, उत्तम और परम आकर्षक बन पड़ा है। लेखकने इसे साधिकार प्राप्त में भाषामें लिखा है। अनुवादके कारण प्रतीत होने वाली कमीका कोई आभास ही नहीं होता।

इतनी बड़ी पुस्तक, इतने अच्छे कागजपर, इतनी सुन्दर छपाईमें इतने सुन्दर अनुवाद सहित कमसे कम मूल्यमें प्रकाशित करना प्रशंसित संस्थाके नामके सर्वथा अनुरूप है। आशा है कि आदर्श प्रेमी भक्तजन तथा सर्वसामान्य लोक इससे पूरा लाभ उठाएँगे।

रसायन—

आयुर्वेदिक मासिक पत्र—जुलाई, अगस्त १९६५ का

श्वासरोग चिकित्सा प्रदीप—विशेषाङ्क

इस अङ्कके सम्पादक—श्री मोहर सिंह वैद्यार्थ, प्रकाशक, रसायन कार्यालय, ३ दरिया गंज, देहली। आकार २०" × ३०" = १६ पृष्ठीय। पृष्ठ ११२। इस अंकका मूल्य रु० १-५०। वार्षिक रु० ५-००

इस विशेषांकमें सम्पादकके कथनानुसार "स्थानुभूत एवं ऋषियों तथा वैद्योंके बार-बार अनुभव किये हुए योग और चिकित्सामें आई हुई विशेष अनुभूतिको जन साधारण एवं वैद्य समाजके समक्ष" प्रस्तुत किया गया है। अङ्कके समस्त लेख श्वास रोगसे ही सम्बन्ध रखते हैं। पृष्ठ ९ से लेकर पृष्ठ ७४ तक 'श्वास रोग चिकित्सा प्रदीप' नामक एक विस्तृत लेख दिया

गया है। यद्यपि लेखकका इसमें नाम नहीं दिया गया है फिर भी अनुमानतः यह लेख अङ्कके सम्पादक श्री मोहर सिंह वैद्यार्थका है। लेख अत्यन्त उपयोगी एवं सुन्दर है तथा विशेष योग्यता एवं अनुभवके परिणाम स्वरूप लिखा गया है। इसमें सार एवं विस्ताररूपसे रोगके नाम, संस्थान, उत्पत्ति, भेद, निदान, पृथक्-श्वासोंके विशेष लक्षण, साध्यासाध्यता, पाश्चात्य-मतानुसार वर्णन, चिकित्सोपयोगी सूचना, तीव्र वेग शामक उपचार, अनुभूत योग, शास्त्रीय योग, लक्षणानुसारिणी चिकित्सा, श्वास नाशक द्रव्योंका संग्रह, एलोपैथिक चिकित्सा तथा पथ्यापथ्यका समावेश सुन्दर रीतिसे किया गया है। वास्तवमें यह सम्पादकके विस्तृत स्वाध्याय एवं अनुभवका फल है।

इसके अतिरिक्त इस अङ्कमें ६ लेख और भी हैं। वे सभी लेख ठीक ढंगसे लिखे गये हैं। अपने अपने विषयका उनमें उचित समावेश एवं वर्णन किया गया है। अन्तिम लेख तमकश्वास और उसकी चिकित्सा, में लेखक-आचार्य श्री सच्चिदानन्द दाधीचने अपने पिता जी श्री मातादीन वैद्यके अनुभवके आधार पर जो चिकित्सा विधि दी है वह प्रयोगके योग्य है। उन्होंने इसे निश्छल भावसे लिखा इसके लिये वे विशेष धन्यवादके पात्र हैं।

पोद्दार-हॉस्पिटल, बम्बईके प्रधान चिकित्सक, आयुर्वेदाचार्य श्री वैद्य राम शिरोमणि द्विवेदीने 'तमक श्वास' शीर्षकसे एक लेख दिया है। इसमें संक्षेपसे तमक श्वास (वातप्रधान) पर शास्त्रीय आधारपर जो अनुभूत चिकित्सा विधि प्रदर्शक कोष्ठक चित्र दिया गया है वह विशेष उपयोगी एवं साररूप है। विशेषतः इस लिये कि वह आयुर्वेदीय पद्धतिपर आधारित व्यावहारिक प्रयोगके परिणाम स्वरूप लिखा गया है। यदि द्विवेदी जी इस विषयपर कभी विस्तारसे लिखें तो अधिक उपयोगी लेख बन पड़ेगा।

सारांश यह कि रसायनका यह विशेषांक वास्तव में उपयोगी एवं संग्रहणीय है। हम सभी लेखकों सम्पादक तथा प्रकाशकको इस प्रकाशनके लिए बधाई देना उचित समझते हैं। आशा है भविष्यमें वे इससे भी अधिक उपयोगी सामग्री प्रकाशित करनेका प्रयत्न करते रहेंगे।

आवश्यक सूचना

समस्त प्रेमी ग्राहकों व एजेण्टोंको सूचित किया जाता है कि भवन सदैव अपने ग्राहकोंको सूचीपत्रमें वर्णित समस्त औषधियोंका निर्माण करके उनकी मांगको पूरी करनेको प्रयत्नशील रहता है किन्तु कुछ राजकीय नियमोंके कारण व शुद्ध वस्तुओंके उपलब्ध न होनेसे निम्न औषधियाँ अभी स्टोकमें नहीं हैं ।

अतः प्रेमी ग्राहक व एजेण्ट आर्डर देते समय निम्न औषधियोंकी अनुपलब्धिका ध्यान रखनेकी कृपा करें । आशा है हमारे ग्राहक हमारी असमर्थताको देखते हुये क्षमा करेंगे ।

| सूचीपत्र क्रमांक | औषधीका नाम | सूचीपत्र क्रमांक | औषधीका नाम | सूचीपत्र क्रमांक | औषधीका नाम |
|------------------------------|------------|---------------------------------|------------|---------------------------------|------------|
| ४. अभ्रक भस्म (५० पुटी) | | १६६. लक्ष्मी विलास | | ४१५. महा योगराज गूगल (वि०) | |
| ७. अभ्रक भस्म (१००० पुटी) | | (सुवर्ण नारदीय) | | ४२४. अतिसारहर वटी | |
| ५४. रौप्य भस्म | | १६८. लक्ष्मी विलास (सुवर्ण) | | ४२७. अशोहर वटी (नं० १) | |
| ५५. रौप्य भस्म (१०० पुटी) | | १६९. लक्ष्मी विलास (सुवर्ण वि०) | | ४८५. सर्पगन्धादि वटी | |
| ८८. माणिक्य रस | | १७०. वसन्त कुसुमाकर रस | | ४८६. हिस्टीरिया नाशक वटी | |
| ८९. रस सिन्दूर (समगुण) | | १७१. वसन्त कुसुमाकर रस (वि०) | | ४९१. हिङ्गुर्पूर वटी (नं० २) | |
| ९९. सुवर्णभूपति रस | | १७३. वीर्य स्तम्भन वटी | | ५०३. तालीसादि चूर्ण (विजया) | |
| १००. सुवर्ण वंग | | (चन्द्रोदय कस्तूरी युक्त) | | ५०८. नारायण चूर्ण | |
| ११२. रत्न विजय पर्पटी | | १७४. वीर्य स्तम्भन वटी | | ५२५. लघुलाही चूर्ण | |
| ११९. सुवर्ण पर्पटी | | (सुवर्ण कस्तूरी युक्त) | | ५३०. लाही चूर्ण | |
| १२५. कुमार कल्याण रस | | १८३. स्वर्ण मालिनी वसन्त | | ५६०. खर्जूररसव | |
| १२६. कुमार कल्याण रस (विशेष) | | (विशेष चन्द्रोदय) | | ५७६. रोहितारिष्ट | |
| १२७. केन्सर नाशक वटी | | १८६. सूत शेखर रस | | ५८४. अस्थिसंधानक अर्क | |
| १२९. चन्द्रोदय वटी | | १८७. सूचिका भरण रस | | ५८८. जम्भीरी द्राव | |
| १३०. चन्द्रोदय वटी | | १९७. ताप्यादि लोह (विशेष) | | ५८९. पाचनसुधा | |
| (सिद्ध मकरध्वज वटी) | | २३५. कनकसुन्दर रस | | ५९५. रसोन रसायन | |
| १३६. जय मंगल रस | | २४१. वृ० कस्तूरी भैरव रस | | ६०२. खमीरे गावजवां (जवाहर) | |
| १४०. त्रलोक्यसंमोहन रस | | २४८. कृमिकुठार रस | | ६०६. ब्राह्म रसायन सुवर्ण (वि०) | |
| १४४. वृ० ब्राह्मी वटी | | ३०३. पुष्पधन्वा रस | | ६०९. माजूत कुचिला | |
| १४९. वृ० वातचिन्तामणि रस | | ३१६. भागोत्तर वटी | | ६४१. श्रीगोपाल तैल | |
| (विशेष) | | ३५६. लक्ष्मीविलास (अभ्रक वि०) | | ६८७. बाल रक्तक बिन्दु | |
| १५६. महाशक्ति रसायन | | ३७५. शिलासिन्दूर वटी | | ६८८. रसोनादि अर्क | |
| १५९. मृगनाभ्यादि वटी | | ४०४. ज्ञानोदय रस (नं० २) | | ६९२. स्त्रीगदांतक अर्क | |
| १६४. योगेन्द्र रस | | ४०५. ज्ञानोदय रस (विशेष) | | ६९३. कल्याण बालामृत | |
| १६५. योगेन्द्र रस (विशेष) | | ४१४. महा योगराज गूगल | | ६९६. सौंपका तैल | |

दिनांक २६-८-६५

४० गो० मुद्रणालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

व्यवस्थापक

कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन

कृष्ण-गोपालकी वर्षाकालमें सेवनीय, वातशामक, अग्निदीपक औषधियोंका सेवनकर ऋतुदोषजन्य रोगोंसे सुरक्षित रहें।

१. वात गजांकुश रस—वायु (बादी) से उत्पन्न अनेक रोगों यथा—संधिवात, आमवात, गृध्रसी, ऊरुस्तम्भ, पक्षाघात तथा कटिग्रह आदिपर उत्तम लाभप्रद है।
२. योगेन्द्र रस—वातनाड़ी दौर्बल्य, हृदय तथा मस्तिष्ककी दुर्बलता, धातुक्षय, हाथ पैरोंकी भड़कन, तथा सभी वातप्रकोपका नाशक है।
३. लक्ष्मोविलास रस—यह रस वातका शमनकर हृदय-फेफड़ोंको शीघ्र बल देता है। किसी व्याधि या मानसिक चिन्ताओंसे आई दुर्बलताको नष्ट करता है।
४. माजून कुचिला—इसके सेवनसे, आमदोष, आमवात, संधिवात, कटिवात, उदरवात नष्ट होते हैं। आमाशयकी दुर्बलता जन्य उद्गार बाहुल्य मलावरोध, अग्निमांद्य एवं उदरकृमि रोगोंपर उत्तम कार्यकारी है।
५. गंधक वटी—अग्निमांद्य, उदरविकार, अपचन, वातवृद्धि एवं सूक्ष्म कृमिरोग तथा आमवृद्धिका शमन करती है।
६. गैसहर वटी—पेटमें गैस भर जाना, उससे हृदयपर दबाव होकर घबराहट, आफरा, शिरदर्द, तथा वायुका अवरोध दूर होता है।
७. शंख वटी—अनेक प्रकारके अजीर्ण, उदरशूल, आध्मान, आमदोष, अपचन, आदिमें लाभप्रद है।
८. वृ० वातचिन्तामणि—जीर्ण वातप्रकोप, छाती व कमरमें दर्द, कम्पवात, नाड़ीकी क्षीणता, शीतल स्वेद तथा अनेक वात रोगोंपर लाभप्रद है।
९. अश्वगंधारिष्ट—शक्तिवर्धक, वातनाशक, दीपन, पाचन तथा शोधक है। हृदय तथा मस्तिष्ककी दुर्बलता नाशक है।
१०. फलासव—मधुर, स्वादिष्ट, शीतल तथा पौष्टिक है। इसके सेवनसे मस्तिष्ककी उष्णता, आंतोंकी गर्मी, उदरविकार, स्नायु दौर्बल्य तथा रक्ताल्पता मिटती है।

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

रोगरहित सुन्दर स्वास्थ्य प्राप्तिके निरिषेवनीय

वसन्त कुसुमाकर—यह रस पौष्टिक, बलवर्धक एवं उत्तेजक है। जनेन्द्रिय सम्बन्धित अनेक दुर्बलताओं एवं व्याधियोंको विशेषकर पुरुषोंको होने वाले रोगोंमें उत्तम लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

इसके सेवनसे बहुपूत्र, मूत्राघात, स्त्रियोंके सोम आदि रोग दृढताके साथ सदाके लिये नष्ट हो जाते हैं।

शरीरको सुदृढ, पुष्ट एवं बलशाली बनाकर नवयौवनको स्थिर रखनेमें विशेष सहायक होता है।

निस्तेज निर्वल तथा क्षीण धातु मनुष्योंके लिये यह रस आशीर्वाद स्वरूप है।

एक बार अवश्य सेवनकर अपने शरीरको स्वस्थ एवं सबल बनायें।

नवजीवन रस—आमविकार, विषम ज्वर, आध्मान, वातनाड़ी दौर्बल्य, शूल, हृदयदौर्बल्य, अपचन आदि व्याधियोंको दूर करने वाला है।

वातकफ प्रकृति वालों को हृद्य, परम बल्य एवं पुष्टिकर है।

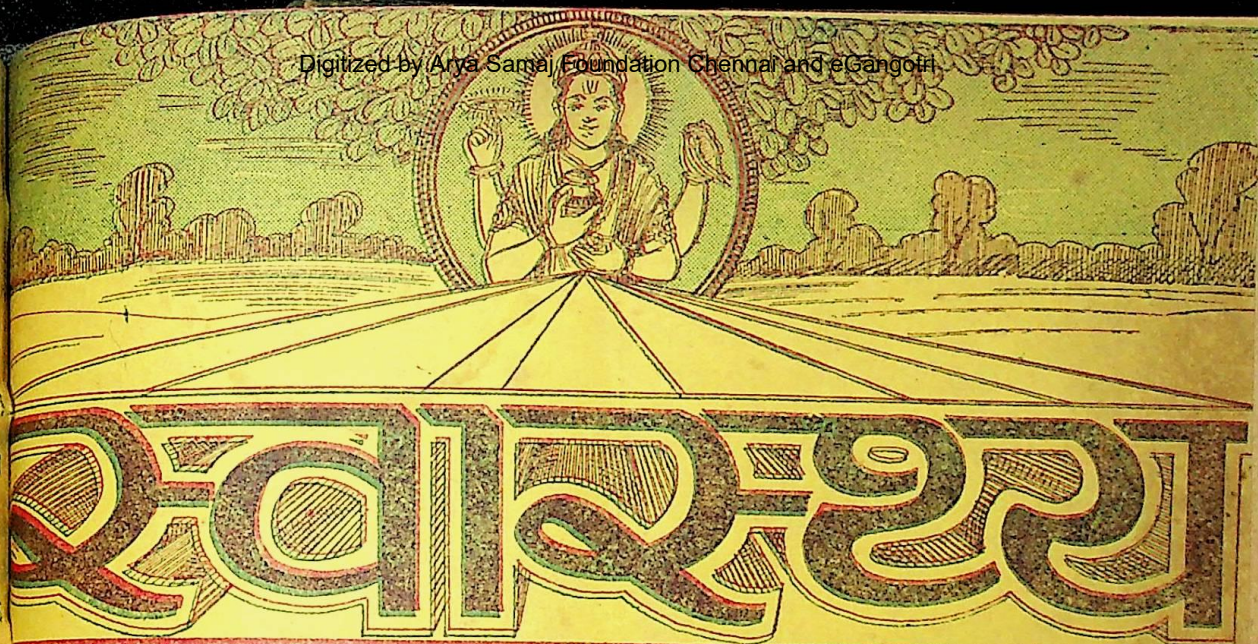
यह दीपन, पाचन, आमनाशक, कीटाणुनाशक, वाजीकरण, शूलहर एवं बलप्रद रसायनका कार्य करता है।

रक्तान्पता, मांसशैथिल्य, कृशताको दूरकर हृदय एवं शरीरको पुष्ट बनाता है।

निर्मिता—

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन,

कालेडा-कृष्णगोपाल (आरोग्य)



अङ्क १२]

श्रावण शुक्ल, ४ विक्रम सं० २०२२

[अगस्त १६]

विज्ञानं यज्ञं तनुते,
कर्माणि तनुतेऽपि च ।
विज्ञानं विश्वेदेवा
ब्रह्मज्येष्ठं मुपासते ॥



विज्ञान संगतिकरण, विश्वबन्धुत्व और दूसरोंके लिए त्याग तथा दानकी भावनाको विस्तृत करता है। उससे सर्वजन हितकारी कार्योंका विकास और प्रसार होता है। सभी विद्वान् जन उस असीम विस्तारमय, बृहत्तम तथा ज्येष्ठ विज्ञानकी ही उपासना करते हैं। उसके अनन्त सागरमें मज्जन कर प्रतिदिन अभिनव तथ्योंका आविष्कार एवं उद्घावन करते हैं।

विद्वान् लेखकोंसे

१. मासिक 'स्वास्थ्य' में आयुर्विज्ञानसे सम्बद्ध अनुसन्धान, अन्वेषण, विशेष विचार, शास्त्रीय पर्यालोचन विषयक तथा सर्वहितकारी स्वास्थ्य सम्बन्धी लेख एवं सामग्री प्रकाशित की जाती है।
२. उत्तम उपादेय लेखोंपर शक्यनुसार पुरस्कारकी व्यवस्था भी की गई है।
३. जो लेख 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ भेजे जावें वे कागजके एक ओर स्पष्ट लिखे हुए होने चाहिये जिससे कि लेख शुद्ध रूपमें प्रकाशित हो सके।
४. लेखोंमें जो उद्धरण आदि दूसरे ग्रन्थों, अन्य लेखकोंके लेखों अथवा पुस्तक आदिसे लिये जावें उनका निर्देश, लेखकोंके सदाचारके अनुसार, अवश्य करना चाहिये।
५. जो लेख 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ स्वीकृत और पुरस्कृत किए जाते हैं उनका प्रकाशन 'स्वास्थ्य' में प्रकाशित होनेसे पूर्व अन्यत्र न होना चाहिये। उनके अन्यत्र प्रकाशित करानेके लिए भी स्वास्थ्य सम्पादककी स्वीकृति लेना उचित है।
६. जिन लेखोंके प्रकाशनमें हम असमर्थ हैं उन्हें शीघ्र ही लौटा देना हम अपना कर्त्तव्य समझते हैं। ऐसी स्थितिमें पोस्टेजके टिकट प्राप्त होनेपर दोनों ओर ही सुविधा रहती है।

विशेष सूचना

भविष्यमें 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ लेख एवं सभी प्रकारकी समाचार आदि सामग्री सुविधार्थ निम्न लिखित पतेपर भेजनी चाहिये।

श्री वैद्य ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
प्रधान सम्पादक—'स्वास्थ्य'
आनन्द विकित्सा सदन, केसरगंज,
अजमेर

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

नार्थार्थ

नापि कामार्थ

अथ भूतदयां प्रति

भवनके सभी प्रेमी, ग्राहकों और अनुग्राहक जनोंको यह तो भलीभांति विदित है कि भवनकी प्रवृत्तियोंका उद्देश्य—

न तो धन कमाना है ।

न किसी लौकिक कामनाकी पूर्ति करना है ।

अपितु-प्राणियोंके प्रति दया और प्रेमके भावसे प्रेरित होकर इन सब प्रवृत्तियोंका संचालन मात्र परोपकारके लिये किया जाता है । इसकेद्वारा होने वाले लाभका उपयोग परोपकारी कार्योंमें किया जाता है ।

यह संस्थान किसी एक व्यक्तिकी सम्पत्ति भी नहीं है । इसके परोपकारात्मकी संस्थापकोंने इसका समस्त कार्यभार एक ट्रस्टको सौंप दिया है । सेवाभावी ट्रस्टी उसी पवित्र दृष्टिकोणसे सब कार्योंका यथायोग्य सञ्चालन करते हैं । फल स्वरूप औषध निर्माणमें निम्न बातोंका विशेष सतर्कतासे ध्यान रखा जाता है ।

१. औषधोंमें उपयुक्त होने वाले द्रव्य, चाहे वे कितने ही मूल्यवान् हों, पूरी मात्रामें विधानके अनुसार ही सम्मिलित किये जाते हैं ।
२. इसलिए औषध यदि बनाई जाती है तो उसमें सभी द्रव्य उचित मात्रामें होते ही हैं । यदि कोई द्रव्य कारणवश नहीं मिलता तो वह औषध नहीं बनाई जाती ।
३. सभी औषधियोंका निर्माण शास्त्रीय, अनुभूत विधिसे होता है ।
४. कोई सुवर्ण आदि द्रव्य यदि प्राप्त नहीं होते तो उनकी प्राप्तिके लिए चाहे जितनी हानि हो कभी अनुचित प्रयत्न करनेका विचार भी नहीं किया जाता ।

इस प्रकार शुद्ध साधनोंसे, शुद्ध द्रव्योंसे, शुद्ध शास्त्रीय विधिसे उत्तमसे उत्तम औषधियों का निर्माण किया जाता है ।

निश्चय ही जो महानुभाव भवनकी औषधियोंका प्रयोग करते हैं वे स्वास्थ्य प्राप्तिके अतिरिक्त भवनके लोकोपकारक कार्योंमें भी भागीदार होते हैं ।

व्यवस्थापक—

स्वास्थ्य

इस अंक में

✱

—संचालक—

अध्यक्ष, ट्रस्टबोर्ड,

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेड़ा-कृष्णगोपाल

✱

प्रधान सम्पादक,

वैद्य पं० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी बी. ए.

आयुर्वेद शिरोमणि, आयुर्वेदाचार्य

✱

स० सम्पादक

वैद्य पं० बद्रीनारायण शर्मा

आयुर्वेदाचार्य

✱

प्रकाशक एवं मुद्रक

पं० नवरत्नमल जोशी

व्यवस्थापक-कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन

✱

मुद्रणालय

कृष्णगोपाल मुद्रणालय

कालेड़ा-कृष्णगोपाल

१. देवहित आयु

६१३

२. सम्पादकीय—आयुर्वेदीय संगठनोंका वैज्ञानिक पक्ष,
बधाई

६१४

३. यकृतकी विकृति और उसकी चिकित्सा—

डा. इन्दिरादेवी शास्त्रिणी, आयुर्वेदमणि

६१६

४. फिरङ्ग—श्री कृष्णगोपाल गुप्त

६२२

५. छुहारा और उसकी उपयोगिता—श्री गोपालदास

अग्रवाल एम्. ए., एल. टी.

६२७

६. चरकीय भाव तत्त्वका दिग्दर्शन—वैद्य

श्री सीताराम शर्मा जोशी भिषगाचार्य

६३०

७. कोष्ठबद्धता—श्री डा० निशिकान्त

बी. ए., ए. एल. आई. एम्.

६३६

८. रजसाधिक्य—श्री डा० द्वारकाप्रसाद नामदेव

६४०

९. वृद्ध वैद्य (कहानी)—श्री वैद्य मन्मथनलाल शर्मा कौशिक

६४२

१०. समाचार समीक्षण—श्री नारद

६४६

परिवार नियोजन अभियान,

गर्भपातको वैधानिक रूप देना, दुधारी

तलवार, गर्भ निरोधकी खानेकी औषध,

श्री मोरारजी भाईकी सलाह, विशेषज्ञोंकी

भी सुनिये, पलाशका उपयोग, लिङ्ग परि-

वर्त्तन और सन्तानोत्पत्ति, छः नगरोंके लिए

सरकारी रोटी, सम्मोहनका नया प्रयोग,

गर्भसे पूर्व लिङ्ग निर्णयपर अनुसन्धान, दूटे

अंगूठे वाली ममी ।

६४४

११. चिकित्सा परामर्श

६४६

१२. आयुर्वेद जगत्

श्रीधन्वन्तरये नमः

स्वास्थ्य

(स्वास्थ्य, सुमति, सुख और शान्तिके मार्गका दर्शक मासिक पत्र)

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः ।

यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

वर्ष १२. अङ्क १२]

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

[अगस्त १९६५]

देवहित आयु

ओम् । भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः । भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।

स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाग्ँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥

यजुर्वेद, अध्याय २५ । मन्त्र २० ॥

| | |
|----------------|---|
| देवाः | हम लोग आयुर्विज्ञान आदिको अच्छे प्रकार जानकर, उसके अनुसार आचरण करते हुए |
| कर्णेभिः | कानोंसे |
| भद्रं शृणुयाम | सदा कल्याणकारक वचनोंको सुनें । |
| यजत्राः | हम लोग यजन शील, सुकर्मरत होकर |
| अक्षभिः | नेत्रोंसे |
| भद्रं पश्येम | कल्याणमय अर्थोंको देखें । |
| तुष्टुवाग्ँसः | जगत् पिता परमात्माकी स्तुति, प्रार्थना और उपासना करते हुए |
| स्थिरैः अङ्गैः | स्थिर, बलवान् और सुन्दर अङ्गोंसे युक्त होकर |
| देवहितं | विद्वानोंके योग्य, सुखद |
| यद् आयुः | आयुको |
| व्यशेमहि | विशेष रूपसे प्राप्त करें । |

‘स्वास्थ्य’ के नये प्रधान सम्पादक

कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवनके प्रबन्धक वर्गकी सदा ही यह अभिलाषा एवं प्रयत्न रहा है कि ‘स्वास्थ्य’ मासिक पत्रको अधिकसे अधिक सुन्दर, आकर्षक और उपादेय बनाया जावे। वर्त्तमानमें इसी भावनासे प्रेरित होकर पत्रके सम्पादनका भार आयुर्वेदाचार्य श्री पं. ब्रह्मानन्द जी त्रिपाठी बी. ए., आयुर्वेद शिरोमणि, प्रतिष्ठित स्नातक को सौंपा गया है। त्रिपाठीजी आयुर्वेद एवं अनेक शास्त्रोंके मर्मज्ञ और अनुभवी विद्वान् हैं।

आशा है कि विद्वान् लेखक, ग्राहक, पाठक तथा प्रेमीजन अपना अधिकाधिक सहयोग उन्हें तथा पत्रको प्रदान करते रहेंगे, जिससे कि पत्र अधिक सुन्दर तथा व्यापक रूपमें सबकी सेवा करनेमें समर्थ होसके।

लक्ष्मीलाल जोशी

२३-७-६५

अध्यक्ष—प्रबन्ध उपसमिति,

ट्रस्ट बोर्ड, कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन



आयुर्वेदीय संगठनों का वैज्ञानिक पक्ष



लगभग आधी शताब्दी पूर्व भारतके वैद्यों और आयुर्वेद प्रेमियोंने आयुर्वेद और वैद्योंके सामूहिक हितको लक्ष्यमें रखकर निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलनके रूपमें अपना संगठन बनाया। समस्त

देशके वैद्य और आयुर्वेद प्रेमी एकसूत्रतामें आवद्ध होकर अपने आपको प्राणवान् और शक्तिमान् अनुभव करने लगे। स्थान स्थानपर वैद्य सभाओंका संगठन हुआ। नवीन उत्साह, नवीन आशाओं और अभिनव सम्भावनाओंका जन्म हुआ।

उस समय देशवासियोंको यह बात अत्यन्त स्पष्ट रूपमें खटकने लगी थी कि तत्कालीन शासन आयुर्वेदको कोई प्रोत्साहन नहीं देता है अपितु उसके विपरीत उसे क्षेत्रमेंसे हटाकर सर्वतोभावेन अपने देशकी चिकित्सा प्रणालीको स्थापित और बद्धमूल करनेके प्रयासमें हैं। इससे जहां विदेशी शासकोंकी व्यावसायिक महत्वाकाङ्क्षाकी सिद्धिमें सहयोग मिलता था वहां साथ ही भारतपर सांस्कृतिक विजयकी प्राप्तिमें भी उन्हें अकल्पनीय सहयोग मिलता था। क्योंकि आयुर्वेद जहां जीवन विज्ञान और चिकित्सा शास्त्र है वहां साथ ही वह भारतीय संस्कृतिका अक्षय कोश भी है। पवित्र जाह्नवीकी धारा है, जो कि समस्त भारतीयोंको जीवनकी सर्वोत्कृष्ट उपलब्धियोंसे निरन्तर आप्लावित करती रहती है।

इस प्रकार भारतमें आयुर्वेद सम्बन्धी संगठनोंका जो विस्तार उस समय और उसके बाद हुआ उसमें स्पष्टतः यह भावना सर्वत्र व्याप्त थी कि आयुर्वेदपर जो विपत्तियां मण्डरा रही हैं, उसके उन्मूलनके लिए जो प्रयत्न शासनके सबल हाथोंद्वारा किए जा रहे हैं उनका प्रतिकार सामूहिक रूपमें संगठित होकर शक्तिपूर्वक और दृढ़ निश्चयके साथ किया जा सके। स्वाभाविक ही इस परिस्थितिसे आयुर्विज्ञानके समर्थक और समभ्यासियोंकी इस संस्थाको एक राजनैतिक रूप प्राप्त हुआ। शासकोंके सम्मुख अपना दृष्टिकोण रखना, अपने सदस्यों और जनतामें आयुर्वेदीय दृष्टिकोणसे जागरूकता उत्पन्न करना और आवश्यकतानुसार जनमानसको अनुकूल बनाकर शासनके अनुचित कार्योंका विरोध करना उस समय प्रधान लक्ष्य और कार्य था।

दूसरी ओर वैद्यजन अपने वास्तविक वैज्ञानिक रूपके प्रति भी उदासीन नहीं थे। उन्हें इस बातकी भारी चिन्ता थी कि वैज्ञानिक दृष्टिसे भी वे पीछे न रहें इसलिए स्थान स्थानपर आयुर्वेदिक औषधालयों और विद्यालयोंकी स्थापना हुई। यह ध्यानमें रखनेकी बात है कि यह सभी संस्थाएं सर्वतोभावेन जनता, आयुर्वेद प्रेमियों और वैद्योंके धन एवं परिश्रमसे संचालित होती थीं।

परन्तु वैज्ञानिक रूपकी रक्षाके लिए आयुर्वेदीय शिक्षा और चिकित्साके प्रसारमें अपनी शक्तिका अधिकसे अधिक और उत्तमसे उत्तम उपयोग करते हुए भी इन संगठनोंको अपने राजनैतिक पक्षको सबल बनानेके लिए और भी अधिक ध्यान देना होता था। क्योंकि जो आपत्ति सिरपर आई हुई थी उसका प्रतिकार सर्वाधिक महत्वका था और सर्वाधिक प्राथमिकताकी अपेक्षा रखता था। उक्त राजनैतिक प्रयासमें भी कुछ विशेष बाधाएँ थीं। प्रथम बाधा तो स्वयं सरकारका रुख और द्वितीय थी उसके द्वारा प्रस्तुत किया भारतीय डाक्टरोंका समुदाय, जो कि कहनेके लिए भारतीय था परन्तु वास्तवमें सर्वात्मना विदेशी। शासकोंका इज्जत पर्याप्त था। यह वर्ग उस इज्जतको समझकर अधिकसे अधिक अपने बल

आयुर्वेदकी प्रगतिके मार्गमें बाधक होता था। विशेषज्ञके रूपमें आयुर्वेदके सम्बन्धमें सम्मति भी उनकी, निर्णय भी उनका और उसको कार्य रूप भी देना उनका ही कार्य था। परिणामतः वैद्य वर्गको अपनी सबसे बड़ी शक्तिपर ही निर्भर रहकर इन सबका सामना करना पड़ता था। यह शक्ति थी जनताका सहयोग और समर्थन।

वैद्य सदासे ही भारतीय जनताका एक अभिन्न अङ्ग रहा है। चिकित्सा सेवा, उनका मार्ग दर्शन करना, कष्ट और बाधाओंके समय उनके साथ समवेदना पूर्वक सहयोग और शान्ति प्रदान करना तथा पारिवारिक बन्धुके समान उनमें एकात्म होकर रहना उसके लिए स्वभावसिद्ध बात थी। ग्राम, कसबा, नगर जहाँ कहीं भी वह रहता था वहाँ वह स्वाभाविक रूपसे सबका अपना था। उनकी आशाओंका केन्द्र था। नेता और मित्र था। इसलिए जनताका सहयोग उसे सदा ही प्राप्त था। इसी जनताकी शक्तिपर वह सरकार और सरकारके विश्वासपात्र वर्गका साम्मुख्य करता था। अपनी बातको मनवानेका प्रयत्न करता था।

ऐसी स्थितिमें वैद्य संगठनोंके लिए राजनीति एक अनिवार्य पक्ष था। साथ ही वैज्ञानिक पक्षकी अपेक्षा उसपर अधिक ध्यान देना भी स्वाभाविक ही था। अप्रेजोंके चले जानेपर भी हमें अपने ही बन्धुओंसे, जो सभी प्रकारसे हमारे समर्थक प्रतीत होते थे, कार्य लेना था। परन्तु कठिनाई यह थी कि उनका दृष्टिकोण भी बदल चुका था। जो कुछ उन्होंने देखा, पढ़ा और सुना था उसके प्रभावसे वे भी यही मान बैठे थे कि जो कुछ पाश्चात्य चिकित्सामें है वह सब वैज्ञानिक है और देशीय चिकित्सा स्वाभाविक घटना कमसे यदृच्छया प्राप्त होनेवाले अनुभवसे उत्पन्न (Empiric) ज्ञानका संप्रह मात्र है। इसलिए उनका भी दृष्टिकोण यही रहा कि पाश्चात्य विज्ञानके प्रतिनिधि डाक्टर जो कह दें वही मान्य और उचित है।

भला डाक्टर, जिनको प्रारम्भसे यही सिखाया जाता है कि जिसे वे पढ़ रहे हैं वही पद्धति वैज्ञानिक है

शेष सब पद्धतियां अवैज्ञानिक, वे कब आयुर्वेदके हितकी बात कहना उचित समझते। इसलिए वैद्य संगठनोंका जो राजनैतिक रूप पहिले था उसको उसी रूपमें बनाए रखना और भी आवश्यक हो गया। यही नहीं, क्योंकि अब जनताकी सरकार है इसलिए उन्हें जनतासे सम्पर्क बढ़ाने और अपना समर्थन प्राप्त करनेकी और भी आवश्यकता हो गई है। परिणाम यह हुआ है कि वैज्ञानिक रूपकी रक्षाके लिए जो प्रयास पहिले इन संगठनोंद्वारा किया जाता था वह अब उससे भी अधिक पश्चात्पद हो गया है। एक प्रकारसे अब आयुर्वेदिक संगठन राजनैतिक संगठन मात्र ही रह गए हैं।

जहां कहीं भी सम्मेलन होते हैं, चाहे वे नगर या जिलेके हों, चाहे वे प्रदेशीय अथवा अखिल भारतीय हों, उनमें ज्ञान, विज्ञानकी चर्चाका कोई स्थान ही नहीं रहता। केवल आन्तरिक, राजनीति और बाह्य राजनीतिकी चर्चा ही सर्वोपरि और एक मात्र कार्य रहता है। यह दशा वास्तवमें शोचनीय है। क्योंकि आज हमारा उत्तरदायित्व द्विगुणित हो गया है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि परिस्थितियोंको देखते हुए वैद्य संगठनोंके लिए राजनीति एक आवश्यक और अनिवार्य अङ्ग है। अभी भी, आयुर्वेदके प्रति सौतेला व्यवहार होता है। अब भी आयुर्वेदिक विज्ञान सम्बन्धी कार्य और प्रगति करनेके लिए सरकारसे वैद्यजनोंको उचित एवं आवश्यक सुविधाएँ प्राप्त नहीं हैं। अब भी वैद्य एक उपेक्षित और अवाञ्छनीय तत्व समझा जाता है। ऐसी स्थितिमें अपने राजनैतिक रूपकी अभिसमाप्तिकर देना आत्मघात ही कहा जावेगा।

फिर भी यह बात दृष्टिसे ओझल नहीं की जा सकती कि आयुर्वेद आजकी परिभाषामें एक चिकित्सा विज्ञान मात्र ही नहीं है अपितु जीवनका सर्वाङ्गपूर्ण विज्ञान है। वैद्योंके संगठन इस परम विज्ञानके उपासक जनोंके संगठन है। किसी विज्ञानकी आवश्यकता, उसका सत्य एवं विकसित स्वरूप उसकी एक निष्ठ उपासनाके बिना विज्ञान वर्गके सम्मुख प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। इस विज्ञानकी उपासनाके लिए आवश्यक है कि वैद्योंके संगठन में राजनीतिमें इतना

‘रात्रि दिव’ डिण्डिम घोष किया जावे वह यदि आवश्यकताके समय उस योग्य सिद्ध न हो तो कहे उपहासका विषय होगा। आज विज्ञानकी सभी शाखाओंमें नित्य निरन्तर नवीन शोध और नवीन अनुभवकी प्राप्तिके लिए प्रयत्न और संघर्ष चल रहे हैं। और इस आयुर्विज्ञानके उपासक उस ओरसे पराङ्मुख रहें, यह कभी भी शोभनीय, उचित और कल्याणप्रद नहीं कहा जा सकता।

ऐसी स्थितिमें हमारा यह सुझाव है कि वैद्योंके संगठनोंको जहां अपने उद्देश्यकी प्राप्तिके निमित्त अपनी राजनैतिक शक्तिको प्राप्त करनेकी, उसको अधिक प्रभावशाली बनानेकी अनिवार्य आवश्यकता है वहां उन्हें अपने वैज्ञानिक पक्षको भी अत्यधिक सचिन्त, सक्रिय और सुपुष्ट बनानेकी आवश्यकता है। परन्तु इस राजनैतिक बवण्डरमें यह वैज्ञानिक कार्य कैसे सम्भव हो? यह एक जटिल समस्या है।

हम समझते हैं कि ऐसे दिनकी प्रतीक्षा करना जब कि हम अपने इस विज्ञान सम्बन्धी कार्यको एकात्मना कर सकें एक सुदूर भविष्यके गर्भकी बात है। इस प्रकारके सुदिन आनेपर ही इस कार्यको करनेकी योजना मनमें रखनेसे जो क्षति होगी उसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

इसलिये यदि नगर, जिला, प्रदेश और केन्द्रीय संगठन अपने विज्ञान सम्बन्धी कार्योंकी प्रतिवर्ष या दो, तीन वर्षकी कोई सुनिश्चित योजना बनाकर चले, तो कुछ कार्यकी आशा की जा सकती है। ऐसी योजनाओंकी सिद्धि और पूर्तिके लिए उस कार्यके योग्य, सक्षम, विद्वान् और अनुभवी व्यक्तियोंको समादर और प्रतिष्ठापूर्वक नियुक्त करना चाहिये।

आज भी वैद्य समाजमें ऐसे विद्वानों, मनीषियों, सुबहुश्रुत और सुबहुदृष्ट तपस्वियोंका अभाव नहीं है जो कि आयुर्वेदके इस वैज्ञानिक पक्षको पुष्ट बनानेमें अपना सहयोग सर्वात्मना देनेके लिए इच्छुक हैं। जो यही कामना करते रहते हैं कि किस प्रकार उन्हें इस शुभ एवं महान् कार्यको करनेका सुअवसर प्राप्त हो।

हो गया है कि वैद्योंका यह सर्वोत्तम वर्ग एक ओर उपेक्षित, विस्मृत सा पड़ा हुआ है। न उनकी ओर कोई देखता है न उनका यथा योग्य सम्मान होता है और न उनके उस विज्ञान, गम्भीर अध्ययन और अनुभवका कोई लाभ लिया जाता है। एक प्रकारसे ऐसे विद्वान् आजकी इस परिस्थितिको हतप्रभसे होकर केवल देखते मात्र हैं। आज उनकी प्रतिभाको प्रोत्साहन नहीं मिल रहा है। वे अर्थके इच्छुक नहीं हैं, और ऐश्वर्य और विलासमें उनकी प्रीति नहीं है। आजकी "अहमहमिका" में व्यर्थका संघर्षकर आगे आकर 'लड्डू लेने' में भी उनकी कोई अभिरुचि नहीं है, लालसा नहीं है। फिर क्या बात है कि वे आगे नहीं आते।

कारण यही है कि वे देखते हैं कि आज इस नवीन योजनमें उनका कहीं स्थान नहीं है। वे यह भी शायद नहीं विवेचनकर पारहे हैं कि वे इस विन्यासमें कहां सर्वाधिक उपयुक्त हो सकेंगे। उनमें सब कुछ करनेकी शक्ति है। परन्तु शायद अपनी विद्या और बुद्धिका अवमान और उपेक्षा सहन करनेकी शक्ति नहीं है। हो भी कैसे? प्रज्वलित अग्निका मुख नीचेकी ओर कर देनेपर भी उसकी शिखा (लौ) तो ऊपरकी ओर ही जाती है।

"अथो मुखस्यापि कदापि वह्ने-

नाथः शिखा याति कदाचिदेव ॥"

ऐसी स्थितिमें आज वैद्यसमाजका कर्त्तव्य है कि ऐसा वातावरण उत्पन्न करे कि ऐसे महानुभावोंको अनुभव हो सके कि समाजको उनकी चाह है, आवश्यकता है।

ऐसे पवित्र कार्यमें राजनीतिके प्रभावसे आनेवाली झूलझुली और पक्षपातकी भावनाको तिलाञ्जलि देकर ऊँचे उठनेकी आवश्यकता है। आज वैद्योंके संगठनोंकी ऐसी स्थिति नहीं है कि वे ऐसे कार्य करनेवाले व्यक्तियोंको उचित दक्षिणा दे सकें और उनके कार्यके लिए आवश्यक सम्भार भी जुटा सकें। परन्तु किसी को उसके योग्य आदर और प्रतिष्ठा देनेमें और उसके सारा मूलाङ्कन करने में उदासी प्रोत्साहित

करनेमें किसी प्रकारके धन और सुवर्णकी आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है तो केवल हृदयकी विशालता, सदाशयता, उदारता और आयुर्वेदके प्रति सच्ची सेवा भावना की।

ऐसे कार्यमें लगे विद्वान् जब भी आवश्यक समझें तब मिलकर बैठने, उनके परिश्रमके फलको सुनने, जानने और मूल्याङ्कन करनेके लिए उचित गोष्ठियोंकी योजना होनी चाहिये। उनके प्रकाशन योग्य स्थितिमें आनेपर साधारण उन सत्यों और परिणामोंका प्रकाशन करना चाहिये। यह बात ध्यानमें रखनेकी है कि संगठनोंके उत्सव ऐसे कार्योंके लिए अब उपयुक्त स्थल नहीं हैं। ऐसे कार्योंकी योजना पृथक् ही होना उचित है। हम समझते हैं कि इस कार्यसे निश्चय ही वैद्यों और दुःखी जनताका कल्याण होगा।

विज्ञानं यज्ञं तनुते कर्माणि तनुतेऽपि च।

विज्ञानं विश्वे देवा ब्रह्मज्येष्ठमुपासते ॥

वधाईः—

अभी ही अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलनका सुचिर प्रतीक्षित चर्चालोत्सवां अधिवेशन कानपुरमें सानन्द सम्पन्न हुआ है। भारतकी अन्य सामाजिक, राजनैतिक संस्थाओंके समान आयुर्वेद विज्ञानके समर्थक वैद्य महानुभावोंके इस संगठनमें भी दीर्घकालसे पारस्परिक विवाद और वैमनस्यने अपना स्थान बना रक्खा है। ऐसा समझा जाता था कि कई वर्षोंके अनन्तर सम्पन्न होने वाले इस अधिवेशनमें विघटनकारी तरंगोंको खुठकर खेलनेका अच्छा अवसर प्राप्त होगा। सम्मेलनके प्रारम्भमें यह आशङ्का कुछ सत्य होती प्रतीत हुई। परन्तु सम्मेलनके अधिकारियोंकी नीतिमत्ता, सदाशयता और प्रेमपूर्ण व्यवहारसे शीतल जलकी वर्षासे यातायातके द्वारा उठने वाली धूलके समान यह उठती हुई विभीषिका शान्त होगई। उसके अनन्तर अन्ततक जिस चतुरता और विनम्रतासे इस सम्मेलनके कार्यका सञ्चालन किया गया वह निस्सन्देह भारतके वैद्योंद्वारा धन्यवादके योग्य है।

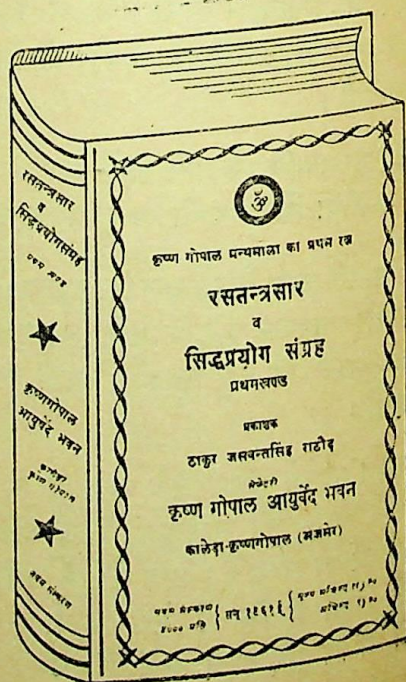
इतना ही नहीं सम्मेलनके अवसरपर विविध

समयोंपर विभिन्न परिषदों और अधिवेशनोंमें सभी प्रकारके विचार वाले बन्धुओंको अपने विचार प्रस्तुत करनेका अवसर प्राप्त हुआ। एक दूसरेसे बिलकुल विरोधी विचारोंको अनेक अवसरोंपर प्रस्तुत किया गया। स्वाभाविक ही अपने विचारोंके समर्थन और दूसरेके विचारोंके समालोचनके समय आप्रह और उग्रताके भी दर्शन हुए। यदि कोई अन्य स्थल और संस्था होती तो शायद स्थिति गम्भीर होजाती। परन्तु हम भारतके विभिन्न प्रान्तोंसे आये हुए विविध विचार वाले विविध आप्रह और पक्षवाले वैद्योंके आत्म संयमकी भूरि भूरि प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते, जिन्होंने कि ऐसे अवसरोंपर सदा ही आत्म अनुशासनके-द्वारा अप्रिय प्रसङ्गोंको कभी आगे नहीं बढ़ने दिया। समयपर अपनी उच्च और प्रतिष्ठित मर्यादाओंका ध्यानकर वातावरणको शान्त और सुन्दर बनाए रक्खा। परिणामतः सभी कार्य यथायोग्य उचित रूपमें सम्पन्न हुए।

सम्मेलनके अन्तिम दिन इस सद्भावनाके दर्शन बहुत ही सुन्दर रूपमें हुए। सायंकालका समय था। वातावरण उष्णतासे परिपूर्ण था। उत्तर प्रदेशमें, कानपुर जैसे सघनआवादी वाले नगरमें ग्रीष्म ऋतुका दिन था। सूर्यके पश्चिम दिशाकी ओर शीघ्रतासे जाते हुए भी उष्णतामें कमी प्रतीत नहीं हो रही थी। अधिवेशनमें अधिकारियोंके निर्वाचनका विषय था। उस निर्वाचनका, जिसके आधारपर विघटन, विवाद और वैमनस्य अपना ताण्डव करनेका सुयोग प्राप्त करते हैं। ऐसा समझा जाता था कि उस ताण्डवके यहां भी दर्शन होंगे। सर्वत्र व्याप्त उष्णताका थोड़ा-सा प्रदर्शन तो अवश्य हुआ। क्योंकि, शायद, सुन्दरसे सुन्दर भोजन कटुरसके तीक्ष्णता पूर्ण वैशिष्ट्यके बिना अपूर्ण ही रह जाता है। कुछ कमी सी, अतृप्ति सी रहती है। फिर भी ईश्वरकी दयासे, अधिकारियों और सदस्योंकी सम्मिलित सदाशयतासे इस रसकी 'अति' नहीं हुई। आशङ्का, सभीको थी। परन्तु शायद इच्छा किसीकी नहीं थी कि इस महान् अवसरपर कोई अप्रिय प्रसङ्ग उपस्थित हो।

परिणामतः वैद्योंकी अन्तरभिलाषाने सम्मिलित रूपसे एक सुन्दर, वैद्योंकी प्रतिष्ठाके अनुरूप मार्ग खोज ही लिया। उपस्थित वैद्योंने महासम्मेलनके नव निर्वाचित अध्यक्ष, वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा में एक बार पुनः अपना पूर्ण विश्वास प्रदर्शित करते हुए अधिकारियों और कार्यकारिणीके सदस्योंको मनोनीत करनेका पूर्ण अधिकार उनको समर्पित कर दिया। अपने छोटे छोटे मतभेदोंका जिस सुन्दरता और संयमसे वैद्यसमाजने दमन किया और अपनी संगठन शक्तिका जिस परिष्कृत रूपमें प्रदर्शन किया निश्चय ही भारतका वैद्य समाज उसके लिए बधाईका पात्र है।

आशा है कि महासम्मेलन और निखिल भारत-वर्षीय विद्यापीठके अध्यक्ष एवं अधिकारी इस परिस्थितिका अधिकसे अधिक सुन्दर उपयोग करके देशके वैद्योंके संगठनको अधिक कार्यक्षम और शक्तिमान् बनानेमें तथा आयुर्वेदका उन्नतिके प्रयासमें कोई कमी नहीं रहने देंगे।



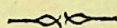
यकृत की विकृति और उसकी चिकित्सा

लेखिका डा० इन्दिरादेवी शास्त्रिणी, आयुर्वेदमणि

संचालिका,

नारी आरोग्य मन्दिर,

मुरलीधरबाग, हैदराबाद (आ० प्र०)



मानव प्राणीका यह पांचभौतिक शरीर एक मात्र उदरयन्त्रोंकी निर्दोषतापर निर्भर है। उदरयन्त्रोंकी विकृतिके साथ शरीरका विकास रुक जाता है और जीवनशक्तिका ह्रास आरम्भ हो जाता है। यों तो सभी उदररोग कष्टप्रद हैं, किन्तु यकृतकी वृद्धि सर्वाधिक हानिवारक है। दुग्धपायी शिशुसे लेकर प्रौढ़ तथा वृद्ध व्यक्ति तकमें यकृतकी वृद्धिका रोग पाया जाता है। यकृत और प्लीहा ये दोनों शरीरके प्रमुख अङ्ग हैं। पसलियोंके नीचे अति सन्निकट दक्षिण भागमें यकृतका स्थान और वाम भागमें प्लीहाका स्थान है। आयुर्वेदज्ञोंके मतसे यकृत और प्लीहा इन दोनोंकी विकृतिके कारण समान हैं तथा विकृतिकी निवृत्तिके साधन भी समान हैं। विकृतिकी निवृत्तिके लिए चिकित्सा भी प्रायः समान है।

निदान और लक्षण

आयुर्वेदशास्त्रमें प्रायः समस्त रोगोंका मूल कारण मिथ्या आहार विहारको माना गया है। रोगोत्पत्तिके सम्बन्धमें यदि किसी दुग्धपायी शिशुके यकृतमें विकृति या वृद्धिके लक्षण दिखलाई पड़ते हैं तो माताके मिथ्या आहार-विहारको प्रमुख कारण माना जायगा। यद्यपि आयुर्वेदशास्त्रके इस मौलिक सिद्धान्तकी उपेक्षाका कोई प्रश्न ही नहीं उठता है, फिर भी शरीरशास्त्र-वेत्ताओंने यकृतकी वृद्धिके कुछ अन्य कारण भी माने हैं। उनका कहना है कि मद्यपान, उपदंश विकार, विषम-ज्वर तथा काला आजार (Kala azar) आदिके कारण भी यकृतकी विकृति

होती है। बालकोंकी यकृत विकृतिके सम्बन्धमें ये वंश-परम्परागत उपदंशज विषको कारण मानते हैं। अधिक मात्रामें मिर्च मसाला आदि दाहक पदार्थोंके सेवनसे भी यकृतकी रोग निरोधक शक्ति क्षीण हो जाती है। शनैः शनैः यकृतकी वृद्धि आरम्भ हो जाती है। यकृत जब अधिक बढ़ जाता है तो उसमें दाह उत्पन्न होजाता है। साधारणतया जितने भी उदररोग हैं, उनके मूलकारण हैं, अग्निमान्द्य, अजीर्ण, दूषित अन्न-जलका सेवन और मलसंचय। त्रिदोष सिद्धांतके अनुसार 'यकृत' भी वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज इन भेदोंसे चार प्रकारका होता है। वातजमें उदावर्त शूल और अफारा, पित्तजमें भ्रम, मोह, प्यास, तथा ज्वर एवं कफजमें भारीपन, अरुचि तथा कठिनता और सन्निपातजमें विभिन्न दोषोंके सभी लक्षण एक साथ प्रतीत होते हैं। यों तो सभी उदररोग प्रायः कष्टसाध्य होते हैं। किन्तु जिस उदर रोगीमें निम्नांकित लक्षण परिलक्षित हों उसे असाध्य समझना चाहिये।

असाध्य लक्षण

रक्त, मांस और बलका क्षय, अग्निमान्द्य, पसलियोंमें पीड़ा, अन्नमें अरुचि, अतिसार, दाह, ज्वर, सर्वांग शोथ, विशेषतः मुखमण्डल और नेत्रोंपर सूजन ये सब लक्षण जिस उदर रोगीमें दिखलाई पड़ने लगे, उसे असाध्य समझना चाहिये। यद्यपि प्राचीन आचार्योंने असाध्य लक्षणोंसे युक्त रोगीको अप्रतिपक्ष माना है, किन्तु जहाँतक

मानवता तथा सेवा धर्मका प्रश्न है, किसी भी चिकित्सकको अपनी सेवाओंसे रोगीको वंचित नहीं करना चाहिये। फलाफल तो दैवाधीन है।

कहा भी है—

यावत् कण्ठ-गताः प्राणास्तावत् कार्या प्रतिक्रिया।

कदाचिद् दृष्टरिष्टोऽपि दैवयोगेन सिध्यति॥

चिकित्सा

उदररोगकी निवृत्तिके लिए अन्नका परित्याग सर्वोत्तम उपाय है। ऐसा करनेसे उदरग्रन्थोंपर अन्नादिके पाचनका भारी भार नहीं पड़ता है, जठराग्नि प्रदीप्त होती है और शनैः शनैः सभी उदर रोग दूर हो जाते हैं। यदि रोगी मानसिक दुर्बलताके कारण सद्यः अन्नके परित्याग करनेमें असमर्थ हो तो उसके मनकी शांतिके लिये पुराना साठी या कोई भी पुराना चावल, मूंगका यूप, यवका सतुआ या रोटी, लाई या धानकी खीलें किसी न किसी रूपमें थोड़ी मात्रामें दे सकते हैं। एक सप्ताहमें रोगीका अन्न छुड़ाकर केवल दुग्ध तथा फलोंके रसपर रखना चाहिये। ऐसा करनेसे शीघ्र आरोग्य लाभ होता है।

दुग्ध शोधन

यकृद्वालयुदर तथा प्लीहोदरके रोगीको निम्नांकित विधिसे शुद्ध किया हुआ दुग्ध लेना चाहिये।

| | | | |
|-------------------|---------|-----------|---------|
| फेसर | ४ रत्ती | सोंठ | ६ रत्ती |
| दालचीनी | ४ रत्ती | छोटी पीपल | ८ रत्ती |
| लवंग | ४ रत्ती | गोदुग्ध | ४० तोला |
| छोटी इलायचीके बीज | ४ रत्ती | शुद्ध जल | २० तोला |

४ अंगुल लम्बे-चौड़े नये स्वच्छ कपड़ेमें पूर्वोक्त औषध द्रव्योंको रखकर और परिपुष्ट डोरेसे बांधकर पोटली बनावें। इस पोटलीको जल मिश्रित गौ दुग्धमें डाल दें। पात्रको अग्निपर चढ़ाना। जब पानी जल जाय और केवल दूध शेष रह जाय तब पात्रको अग्निपर से उतार लें। दुग्धके कुछ शीतल हो जाने पर पोटलीको मलकर दूधमें निचोड़ दें। इस शुद्ध दुग्धको आवश्यकताके अनुसार उदर रोगीको पिलाना। इस शुद्ध दुग्धके पिलानेसे जठराग्नि प्रदीप्त होती है और रोग निर्मूलनमें सहायक सिद्ध होता है।

उदर रोग और छोटी पीपल

प्रायः सभी उदर रोगोंमें छोटी पीपलके विभिन्न प्रयोग लाभकारी सिद्ध हुए हैं। यहां छोटी पीपलके कुछ सरल तथा उपयोगी प्रयोगोंका उल्लेख किया जाता है। ४० तोला छोटी पीपलको लेकर वृन्त तोड़ना, साफ करना और साफ पानीसे २-३ बार धो डालना। इन स्वच्छ पीपलोंको एक साफ कपड़ेमें बाँधकर दोला-यन्त्र विधिसे गोदुग्धमें पकाना और फिर जलसे भली भाँति धोकर धूपमें सुखा लेना। इन शुद्ध पीपलोंको औषध कार्यमें प्रयुक्त करना।

गुड़ पिप्पली

छोटी पीपलका चूर्ण ५ तोला, साफ गुड़ १५ तोला, जल ३० तोला। किसी स्वच्छ पात्रमें गुड़ और जल डालकर तीन तारकी चासनी बनाना। पात्रको नीचे उतारकर चासनीमें पिप्पलीचूर्ण डालकर कलछीसे भली-भाँति मिलाना। शीतल हो जानेपर घृतके योगसे चार रत्तीसे ८ रत्ती तककी गोलियाँ बनाकर छायामें सुखा लेना। दिनमें तीन बार १ से दो गोली तक जलके साथ सेवन करनेसे यकृतविकारमें उत्तम लाभ होता है।

अपूर्व पिप्पलीचूर्ण

शुद्ध पिप्पलीका चूर्ण २० तोला, सेहुंडका दूध २० तोला। दोनों द्रव्योंको खरलमें डालकर घोटना, धूपमें सुखाना और फिर साफ शीशीमें भरकर रख लेना। प्रातः सायं दिनमें दो बार २ रत्ती पिप्पली चूर्णको २ माशा शहदके साथ चाटकर ऊपरसे यथेच्छ दूध पीना चाहिये। प्रतिदिन एक रत्ती चूर्ण बढ़ाते हुये २० दिनमें २१ रत्ती चूर्ण तक मात्रा ले जानी चाहिये। अनन्तर २१ वें दिनसे १-१ रत्ती चूर्णकी मात्रा घटाते हुए ४० वें दिन २ रत्ती चूर्णकी मात्रा कर देनी चाहिये। निवृत्ति पूर्वक ४० दिन तक इस औषधिका प्रयोग करनेसे सभी प्रकारके उदर विकार नष्ट होते हैं।

विशेषः—इस औषधकी मात्रा बढ़नेसे यदि पतले दस्त अधिक मात्रामें आने लग जाय तो उसी दिन से औषधकी मात्रा घटाना आरम्भ कर दिया जाय।

वर्धमान पिप्पली

उदर रोगोंमें वर्धमान पिप्पलीका कल्प अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुआ है। यह एक चरकोक्त प्रयोग है। देश, काल तथा मानव प्राणीके बलाबलके अनुसार पिप्पलीकी मात्राके सम्बन्धमें साधारण संशोधन किया गया है। पंचकर्म द्वारा शरीरकी शुद्धिके अनन्तर पूर्वोक्त विधिसे शुद्ध की हुई १ पिप्पलीका चूर्ण शहदके साथ चटाकर ऊपरसे शुद्ध किया हुआ गौ दुग्ध १ पाव पिलाना चाहिए। यह क्रिया केवल १ बार प्रातः काल ही करनी चाहिये। क्रमवृद्धि २० दिन तक इसी रूपमें चलेगी। २० दिनके बाद क्रमशः १-१ पीपलका द्वास करना चाहिये। यह प्रयोग एक मण्डल ४० दिन का है। कई कोमल प्रकृतिके लोगोंमें १० दिनके बाद कुछ उष्णता बढ़ जाती है। उस दशामें अनुपातमें साधारण परिवर्तन अपेक्षित है। विषम मात्रामें शुद्ध शहदके साथ शुद्ध गोघृत या नवनीत (मक्खन) का अनुपातके रूपमें प्रयोग करना चाहिये। दाहका शमन होगा। इस कल्पके समयमें शुद्ध दुग्धके साथ ही पर्याप्त मात्रामें अनार, अंगूर, सेब, मोसम्मी, सन्तरा तथा आम्रफलके रसका प्रयोग करना चाहिये। पिप्पली कल्पके प्रयोगसे उदर रोगोंके अतिरिक्त ज्वर, कास, श्वास, शोथ, शोष, अर्श तथा पाण्डु रोगमें उत्तम लाभ होता है।

यकृदरिलोह

| | |
|----------------|--------|
| ताम्र भस्म | १ तोला |
| लोह भस्म | २ तोला |
| अभ्रक भस्म | २ तोला |
| बिजौरा नीबूकी | |
| जड़का चूर्ण | ४ तोला |
| मृगचर्मकी भस्म | ४ तोला |

विधि:—समस्त औषध द्रव्योंको खरलमें डाल कर बिजौरा नीबूके रसमें खरल करना और २-२ रत्ती की गोलियां बनाकर सुखाना एवं स्वच्छ शीशीमें

भरकर १ गोलीसे ३ गोली तक आवश्यकतानुसार प्रातः सायं जलके साथ सेवन करनेसे यकृद्विकारमें उत्तम लाभ होता है। यकृदरिलोहको चूर्ण रूपमें भी रक्खा जा सकता है। उसकी सेवन विधि निम्न प्रकार है—

| | |
|-------------------------------|----------|
| सितोपलादि चूर्ण | ३ माशा |
| शंख भस्म | ६ रत्ती |
| यकृदरिलोह | ३ रत्ती |
| लक्ष्मीविलास रस (अभ्रक युक्त) | १॥ रत्ती |
| | १ मात्रा |

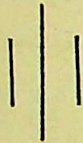
उपर्युक्त मिश्रणको प्रातःकाल तथा सायंकाल ४ माशासे ६ माशा तक शहदके साथ देनेसे ज्वर तथा शोथसे युक्त "यकृद्वालयुदर" रोगमें उत्तम लाभ होता है।

कुमार कल्याण रस

बालकों को स्वस्थ और सबल बनाता है।

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद श्रवण
कालेडा, कृष्ण गोपाल (अजमेर)

फिरंग (SYPHILIS)



लेखक:—श्री कृष्णगोपाल गुप्त

श्रीरामकृष्ण राजपूताना औषधालय
जुरहरा, भरतपुर (राजस्थान)

फिरंग रोग आज संसार भरमें फैला हुआ है। कोई भी ऐसा देश नहीं है जहाँ यह रोग न हो। गरीब, अमीर, शिक्षित, अशिक्षित, स्त्री, पुरुष, तथा सब जातियोंमें यह रोग पाया जाता है।

यह रोग कितना पुराना है? इस सबन्धमें कुछ कहना कठिन है। परन्तु अनुमान लगाया जाता है कि चीनमें यह रोग काफी पुराने समयसे था। किन्तु सभी विद्वान् इस बातको मानते हैं कि यह रोग अमरीकासे कोलम्बसके सैनिकों द्वारा यूरोपमें लाया गया। और वहाँसे समस्त यूरोप और एशियामें फैला। सन् १४४३ में यह रोग चार्ल्स अष्टमकी सेनाके साथ इटली पहुँचा। और सैनिकोंने नेपल्सको इस रोगसे भरदिया।

सोलहवीं शताब्दीमें इस रोगने बहुत उपद्रव मचाया। यह रोग सेनामें बहुत खतरनाक सिद्ध हुआ।

सन् १६०५ में पहिली बार शौडिन (Schaudin) ने इस रोगके जीवाणुओंको इस रोगके व्रणमें पाया तथा विद्वानोंको दिखाया।

आयुर्वेदमें इस रोगको फिरंग नामसे जाना जाता है। क्योंकि इस देशमें यह रोग फिरंगियों, पुर्तगाली लोगोंके साथ अङ्ग संसर्ग करनेसे हुआ था।

इस रोगका इलाज प्रारम्भमें असाध्य नहीं है।

परन्तु सबसे बड़ी बात यह है कि प्रारम्भिक अवस्थामें इस रोगको कई युवक, युवतियाँ अपने डाक्टर या वैद्यको दिखाते नहीं हैं। क्योंकि इस रोगका सम्बन्ध मैथुनसे है। मैथुनके द्वारा ही यह रोग इस रोगसे प्रसूत पुरुषसे स्त्रीको, या स्त्री से पुरुषको हो जाता है। यह उचित ही है कि उपदंश, सूजाक या फिरंग आदि रोगोंकी उत्पत्तिका सम्बन्ध मैथुनसे समझा जाता है। पर वास्तविकता यह है कि यह रोग न केवल मैथुनसे ही होता है बल्कि अगर माँ को यह रोग है तो बच्चे को भी यह रोग हो सकता है।

समागमके अतिरिक्त यह रोग रोगी या रोगिणीके चुम्बनसे अथवा उसके प्रयोग किये हुए ग्लास, पाइप आदिसे भी हो जाता है। डॉ० हैविलने तो यहाँ तक लिखा है कि रोगी या रोगिणीके इस्तेमाल किये हुए शौचालयसे भी यह रोग हो सकता है।

इस कारण हमारे देशमें ही नहीं बल्कि सभी जगह इस रोगका सही कारण बताया नहीं जाता है। कोई कहता है कि मैंने पत्थरपर पेशाब कर दिया कोई कुछ और अन्य कुछ कह देता है। पर डाक्टरको इन बातोंपर विश्वास नहीं करना चाहिये। और रोगीको अच्छी प्रकार देखकर रोगका सही निदान करना चाहिये।

आयुर्वेदके मतानुसार इस रोगकी तीन अवस्थाएँ होती हैं—

- (१) बाह्य
- (२) आभ्यन्तर
- (३) बहिरन्तर्भव

अर्थात् बाह्यफिरंग—विस्फोटके समान होता है। इसमें पीड़ा कम होती है तथा व्रणके समान फूटता है। यह सुख साध्य होता है।

आभ्यन्तर—यह सन्धियोंमें होता है। इसमें आम वातके समान व्यथा होती है। यह शोथको भी उत्पन्न करता है और कष्ट साध्य है।

बहिरन्तर्भव—यह बाहर भीतर दोनों तरफ होता

है और असाध्य बताया गया है।

आधुनिक मतसे रोगका कारण

यह रोग एक लहरदार शरीर वाले स्पीरिला जातिके जीवाणुसे होता है, जिसको स्पाइरोकीटा पैलिडा या ट्रिपोनिमा पैलिडा कहते हैं। मैथुन या शारीरिक सम्पर्क द्वारा यह इस रोगसे प्रस्त पुरुषसे स्त्रीको और स्त्रीसे पुरुषको होजाता है।

रोगके लक्षण

प्रथमावस्था—प्रथम अवस्थामें शिश्नपर या भगौष्ठपर कठिन व्रण बनता है। जो शरीरके आक्रान्त स्थानके ऊतकोंका आक्रमण करने वाले जीवाणुओंवा प्रतिरोध करनेका एक लक्ष्य मात्र है। साथमें उस स्थानसे सम्बन्धित लसीका ग्रन्थियोंकी भी वृद्धि हो जाती है। प्रायः छः सप्ताहमें वह व्रण भर जाता है। और रोगी साधारण तथा स्वस्थ दिखाई देने लगता है। इस रोगके जीवाणु प्रवेशके कुछ घण्टों बाद ही रक्तमें पहुँच जाते हैं।

दूसरी अवस्था—प्रायः छः सप्ताहसे लेकर ६ मास तककी अवधिके पश्चात् इस रोगकी दूसरी अवस्था आ जाती है। जिसके लक्षण इस प्रकार प्रकट होने लगते हैं। चर्म और श्लैष्मिक कलापर चक्ते बन जाते हैं। त्वचापर लालिमायुक्त भूरे रंगके छोटे-छोटे क्षेत्र बन जाते हैं। कभी कभी इनमें लालिमा अधिक तथा कभी-कभी ये श्वेत बन जाते हैं। कई बार कई रंगके चक्ते भी देखे गये हैं। मुँहमें व्रण बन जाते हैं व श्वेत रंगका पदार्थ जमा होजाता है। जो श्लेष्मल-कलाके स्तरका बना होता है। गलेके भीतरकी श्लेष्मल कला तथा टोंसिल लाल दीखते हैं। जिनपर भूरे रंगके व्रण बन जाते हैं। जिह्वापर शोथ होकर जहां तहां अंकुर नष्ट हो जाते हैं। जिससे हरे रंगके उठे हुए किनारे वाले क्षेत्र दिखाई देते हैं। रोगीमें रक्तक्षीणता हो जाती है। उसका वर्ण पीला दीखता है। दुर्बलता प्रतीत होती है। तथा हल्का सा ज्वर रहता है। इस अवस्थामें रोगका विष समस्त शरीरमें पहुँचकर विविध अंगोंमें विकार उत्पन्न करता है। व्रण होनेके तीसरे या चौथे सप्ताहके पीछे जो दाने निकलते हैं उनकी विशेषता यह है—

१-वर्ण, आकार और परिमाणमें ये सब एक जैसे नहीं होते।

२-शरीरके दोनों ओर समान स्थानोंपर निकलते हैं।

३-नष्ट होनेपर इनके स्थानमें कुछ समय तक ताम्र वर्ण या मांस वर्णके लाल धब्बे होते हैं।

४-इनमें खाज बहुधा नहीं होती।

बाह्य त्वचाकी भांति ओष्ठ, जीभ, तालु तथा गाल इनकी श्लेष्मलकलापर छाले पड़ते हैं। ये छाले हमेशा गोल, सर्पाकार, राखके से रंग वाले, बिल्कुल साफ कटे हुए किनारे वाले और उत्तान होते हैं। जहाँपर त्वचा हमेशा गीली सी रहती है।

इन खास लक्षणोंके अतिरिक्त सिरमें दर्द होना, बालोंका गिरना, जोड़ोंमें हड्डियोंमें प्रायः रातको दर्द होना आदि लक्षण भी होते हैं।

रोगकी तीसरी अवस्था—यह अवस्था प्रायः व्रणके दो तीन साल बाद आती है। इस अवस्थामें त्वचा, उपत्वचा, लसीका ग्रन्थियाँ, पेशियाँ, अस्थि-वरण, मस्तिष्कावरण, यकृत, प्लीहा तथा वृषण ग्रन्थि इत्यादि शरीरके विभिन्न भागोंमें ग्रन्थियाँ बनने लगती हैं। जो गमा (Gumma) कहलाती हैं। ये ग्रन्थियाँ गांठदार और चपटी होती हैं। धीरे-धीरे गमा सड़कर फोड़ेकी तरह फूट जाती हैं। और उनसे गोंदके समान स्राव निकलता है।

त्वचामें होनेसे गहरे व्रण बन जाते हैं। नाकमें होनेसे नाक बैठ जाती है। तालुमें होनेसे वहां छिद्र हो जाता है और फिर खाना पीना मुश्किल हो जाता है। मस्तिष्क और सुषुम्नामें होनेसे पक्षाघात, पंगुत्व इत्यादि विकार होते हैं। रक्तवाहिनियाँ रक्तका भार तथा वेग सहन करनेमें असमर्थ हो जाती हैं। कान तथा आंखमें होनेसे सुनने तथा देखनेकी शक्ति जाती रहती है। जिह्वामें होनेसे जिह्वा फट जाती है।

रोगकी चौथी अवस्था—इस अवस्थामें आनेसे यह रोग बड़ा भयानक रूप ले लेता है। इस अवस्थामें मस्तिष्क संस्थानपर बहुत अधिक भार पड़ता है।

इस अवस्थामें दो विशेष रोग होते हैं।

(जनरल पेरेलाईसिस आफ दी इन्सेन)

२. Locomotor Ataxia or Tabes Dorsalis (लोकोमोटर ऐटेक्सिया या टेबस डारसेलिस)

प्रथम रोगसे रोगीको एक प्रकारका पागलपन हो जाता है। दूसरेसे रोगी चलने फिरनेमें लाचार हो जाता है और चलते समय लड़खड़ाकर चलता है।

फिरंग रोगके विषका प्रभाव मस्तिष्कपर आक्रमणके तीन माहके अन्दर भी हो सकता है और पच्चीस, तीस वर्षोंके बाद भी।

उपदंशज व्रण

- (१) मैथुनके बाद प्रायः तीसरे या चौथे दिन दाना उगता है।
- (२) साधारणतया अनेक दाने होते हैं।
- (३) इसमें दाह होता है तथा प्रचुर पूय और लसीका बहती है।
- (४) टटोलनेसे मृदु प्रतीत होता है।
- (५) अत्यन्त पीड़ा युक्त।
- (६) व्रणके किनारे साफ कटे हुए तथा व्रणके तल से कुछ ऊँचे हो जाते हैं।
- (७) सूक्ष्म दर्शक यन्त्रसे व्रणसे निकले स्रावकी परीक्षा करनेपर ड्यूकेका जीवाणु मिलता है।
- (८) व्रणस्राव अन्य स्थानपर रक्चामें प्रविष्ट करा देनेसे समान व्रण पैदा हो जाता है।
- (९) व्रणके ओरकी जंघाकी ग्रन्थियां फूलती हैं वे मृदु, पकनेवाली तथा अत्यन्त वेदना युक्त होती हैं।
- (१०) चिकित्सा न होनेसे व्रण अधिक बढ़कर स्थानिक धातुओंका नाश होता है।

इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि कभी कभी फिरंगके साथ साथ उपदंश तथा उपदंशके साथ साथ फिरंगका उपसर्ग हो सकता है। ऐसी अवस्थामें व्रणमें मिश्र स्वरूपके लक्षण मिलेंगे। इस प्रकार उपदंश और फिरंगको निश्चय करके ही चिकित्सा करनी चाहिये।

फिरंग ऐसी भयानक व्याधि है जो एक साथ ही शरीरके इतने सारे अवयवोंको आक्रान्त कर सकती है। तथा न केवल पीड़ित व्यक्तिको ही हानि पहुँचाती है, बल्कि उसकी भावी सन्तानको भी सताती है।

सावधानी—फिरंग और उपदंश दोनों प्रकारके रोग दूषित मैथुनके पश्चात् जननेन्द्रियपर व्रण या स्फोटके रूपमें प्रकट होते हैं। परन्तु दोनोंकी चिकित्सा अलग अलग होती है। अतः इन दोनोंके आपसके लक्षण जानना अनिवार्य है। ताकि चिकित्सामें सहायता मिल सके।

फिरंगज व्रण

- मैथुनके प्रायः तीसरे सप्ताहमें दाना उगता है।
- साधारणतया एक ही दाना होता है।
- दाह नहीं होता तथा लसीकाके अतिरिक्त कुछ नहीं बहता।
- तरुणास्थिके पीछे कठिन प्रतीत होता है।
- पीड़ा रहित।
- किनारे न साफ होते हैं न पीले न ऊँचे उठे हुए ही।
- ट्रिपोनिमापैलिडा नामक जीवाणु दिखाई देता है।
- स्राव प्रविष्ट करनेसे समान व्रण पैदा नहीं होता।
- दोनों औरकी ग्रन्थियां फूलती हैं वे कठिन न पकनेवाली और वेदना रहित होती हैं।
- चिकित्सा न होनेसे स्थानिक विकृति नहीं होती बल्कि सार्वदेहिक लक्षण प्रकट होते हैं।

चिकित्सा

- (१) प्राचीन मतानुसार फिरंग रोग रसकपूर्वसे पूर्णतया नष्ट हो जाता है। परन्तु रसकपूर्व कभी मुखमें शोथ उत्पन्न कर देता है।

निरासकपूर्वसे शोथ उत्पन्न नहीं करता

विधि:—गेहूँके आटेको सानकर छोटी छोटी कुपी बनालें फिर उनमें चार चार रत्ती रस कपूर रखकर गोली बना लें। बनाते समय यह ध्यान रहे कि रसकपूर बाहर न निकले, फिर इन गोलीयोंको लोंग चूर्णमें लपेट लें। फिर पानीके साथ इस प्रकार निगले कि दांत न लगे। गोली खानेके बाद पान खाना चाहिये।

अथवा

खांछी केप्सूल लेकर उनमें ४ रत्ती रसकपूर भर लें। फिर सूखे कपड़ेसे पोंछकर अच्छी तरह साफ कर लें।

निषेध—शाक, अम्ल तथा नमकीन पदार्थ, श्रम, धूप, स्त्री प्रसंगसे बचें।

(२) २४ रत्ती चोवचीनीको मधुसे मिलाकर चाटनेसे तथा नमकका परित्याग करनेसे यह रोग पूर्णतया नष्ट हो जाता है।

आधुनिक मतानुसार

फिरिंगकी चिकित्सामें दो ही पदार्थोंका विशेष प्रयोग किया जाता है।

१—आर्सेनिक (Arsenic) संख्या।

२—बिस्मथ (Bismuth)।

परन्तु इस समय पेनिसिलिनका बहुतायतसे प्रयोग किया जा रहा है।

आर्सेनिकका प्रयोग दो रूपोंमें किया जाता है। कार्बोनिक व अकार्बनिक रूपमें। सिफलिसकी चिकित्सामें केवल कार्बनिक रूप ही प्रयोग किया जाता है। क्योंकि अकार्बनिक योग बहुत विषाक्त होते हैं। आर्सेनिकका कार्बनिक योग ऐटोक्सिल (Atoxyl) कहलाता है। वैज्ञानिकोंने इन दोनोंके १००० योग तैयार किये। परन्तु ६०६ वां सालवर्सन कहलाता है। दूसरा ९१४ वां योग जो नियोसालवर्सन कहलाता है। अधिक श्रेष्ठ है। नियोसालवर्सन सालवर्सनकी अपेक्षा कम विषाक्त है।

सिफलिसकी चिकित्सा में आर्सेफिनेमीनका ही अधिक प्रयोग होता है। इसके अन्यरूप नियोसाल-

वर्सन, मैफासाइड आदि विशेष प्रचलित है। इनकी मात्रा कांचके एम्फुलमें बन्द आती है। उसमें दश सी. सी. परिश्रुत जल मिलाकर शिरामें दिया जाता है। यह बड़ी चोभक वस्तु होती है। सप्ताहमें एक मात्रा दी जाती है। ६ सप्ताहमें ६ इन्जेक्शन देनेके बाद रक्त परीक्षा करनी चाहिये। यही, केवल, रोग मुक्तिकी निश्चित परीक्षा है।

बिस्मथके योगोंमें बिस्मथ सब्सेलीसिलेट का १०% तेलमें आलम्बन बनाकर उसकी एक सी. सी. को नितम्बके ऊपरी ओर बाहरके भागमें सूचिकासे नितम्ब पेशियोंमें गहरी प्रविष्ट करा देना चाहिये।

२. बिस्मथ सोडियम थायोग्लाइकोलेट-जलमें घुल जाता है। इसका शीघ्र शोषण होता है। इसकी मात्रा ०.२ ग्राम है, जिसका घोल सप्ताहमें तीन बार दिया जाता है।

जब से पेनिसिलीनका आविष्कार हुआ है सिफलिसके चिकित्सा संसारमें एक क्रान्ति आ गई है। पेनिसिलीन एक उत्तम स्पाइरोकीटा नाशक पदार्थ है। इसकी २४ लाखकी मात्राके प्रयोगसे रोग मुक्ति हो जाती है। अधिक से अधिक ४८ लाखकी मात्रा प्रयुक्त हो सकती है।

अमरीकाकी नेशनल रिसर्च काउन्सिलने सिफलिसकी चिकित्साका निम्न क्रम निर्धारित किया है:—

(१) रोगकी पहिली और दूसरी अवस्था में

जलमें घुली पेनिसिलिनके ५०,००० मात्रक १.४ प्रति तीन तीन घण्टेपर इन्जेक्शन द्वारा दिन रातमें ८ बार, ८ दिन तक ३,२०,०००। या

प्रोकेन पेनिसिलीन (तेलमें घुली हुई २% एल्यू-मिनीयम मोनो स्प्रिट सहित) के ६,००,००० मात्रक प्रति दूसरे दिन। ऐसे ६ इन्जेक्शन कुल ३६,००,००० यूनिट। अथवा

पेनिसिलीन (जलमें घुली हुई) ६,००,००० मात्रक प्रत्येक दिन (२४ घण्टेमें एक बार) आठ दिन तक, कुल ४८,००,००० यूनिट।

तृतीय अवस्थामें—पेनिसिलीन जलमें घुली हुई
१,००,००० मात्रक तीन तीन घण्टेपर बारह दिन तक
कुल ३६,००,००० यूनिट ।

या

प्रोकेन पेनिसिलिन (जलमें घुली हुई) के ९,००,०००
मात्रक प्रति २४ घंटेपर बारहदिन तक कुल
१,०८,००,००० मात्रक ।

या

प्रोकेन पेनिसिलीन तेलमें घुली हुई २% एल्यूमु-
नियम स्टिपरेट सहितके ९,००,००० मात्रक प्रति
दूसरे या तीसरे दिन । ऐसे बारह इन्जेक्सन कुल
१,०८,००,००० मात्रक ।

इस प्रकार सिफलिसकी चिकित्सा करनी चाहिये।
इसके साथ ही निम्नमेंसे कोई एक योग देते रहिये ।

| | |
|-------------------------------|------------|
| लिकर हाइड्रार्जिरी परक्लोराइड | ३० मि० |
| पोटास आयोडाइड | ५-१० ग्रेन |
| एक्स० सारसा लि० | १ ग्राम |
| स्प्रिट क्लोरो फार्म | १० मि० |
| एक्वा | कुल १ औंस |

(विधि दिनमें तीन बार ऐसी मात्रा दें)

| | |
|--------------------------|-----------|
| हाइड्रार्जिरी परक्लोराइड | २ ग्रेन |
| पोटास आयोडाइड | ४ ग्राम |
| सीरप सारस प्रेला कं० | २ औंस |
| सीरप ट्राई फौलम कं० | २ औंस |
| एक्वा | कुल ५ औंस |

(विधि एक ग्राम एक औंस जलमें दिनमें तीन
बार दें)

| | |
|------------------------------|---------|
| पोटास आयोडाइड | २ ग्रेन |
| सीरप फैरी आयोडाइड | ५ मि० |
| लि० हाइड्रार्जिरी परक्लोराइड | १० मि० |
| डोनोवन्स सोल्यूशन | २ मि० |
| टि० नक्सवामिका | ४ मि० |

एक्वा

कुल ४ ग्राम

(विधि—चार ग्रामसे बारह ग्राम तक दिनमें
तीन बार दें)

| | |
|--------------------------------------|---------|
| हाइड्रार्जिरी कम क्रीटा | २ ग्रेन |
| पल्व ओपियाई | ३ ग्रेन |
| पिपरिस निग्रम (काली मिरच) | १ ग्रेन |
| ऐसी एक गोली ३ बार ठण्डे पानीसे दें । | |

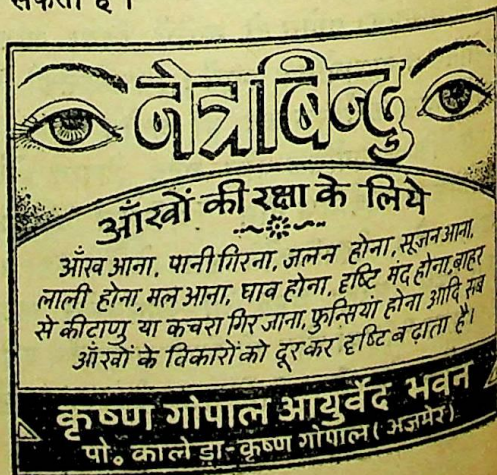
इसके अनिश्चित निम्न मरहम बनाकर व्रणपर
लगानी चाहिये ।

| | |
|---------|---------|
| केलोमल | १ ग्राम |
| लेनोलीन | १ ग्राम |
| बेस्लीन | २ ग्राम |

इस प्रकार इस रोगकी उपरोक्त किसी एक क्रमसे
चिकित्सा करनी चाहिये । पर यह न समझा जाय
कि इसका इलाज बहुत आसान है । अगर वैद्य जैसा
कहे रोगी वैसा न करे तो यह रोग बहुत कठिन भी
हो सकता है ।

इस रोगसे मुक्तिकी पहिचानका एक साधन
साधन रक्त परीक्षा ही है । जब तक परीक्षा धनात्मक
(Positive) आती है, चिकित्सा करते रहना चाहिये ।

दीर्घ इलाज और संयमसे ही यह रोग निर्मूल
हो सकता है ।



नेत्राबिन्दु

आँखों की रक्षा के लिये

आँख आना, पानी गिरना, जलन होना, सूजन आना, लाली होना, मल आना, घाव होना, दृष्टि मंद होना, बाहर से कीटाणु या कचरा गिर जाना, फुन्सिया होना आदि सब आँखों के विकारों को दूर कर दृष्टि बढ़ाता है।

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन

पो. कालेड़ा-कृष्ण गोपाल (अजमेर)

छुहारा और उसकी उपयोगिता

लेखक—श्री गोपालदास अग्रवाल

एम. ए. एल. टी., प्राचार्य

पो० कपसा, जिला-रीवा (म. प्र.)



सूखे मेवोंमें चावसे जितना अधिक छुहारेका प्रयोग किया जाता है उतना अन्य मेवोंका नहीं। सूखे मेवोंका सेवन करनेसे बल एवं वीर्यकी वृद्धि होती है। छुहारा भी एक ऐसा ही उपयोगी फल और मेवा दोनों हैं जो देशके प्रायः सभी लोग चावसे खाते हैं। छुहारा और खजूर दोनों एक ही हैं, परन्तु कुछ लोग खजूरको छुहारासे भिन्न समझते हैं। दोनोंमें समानता होते हुए भी भिन्न भिन्न हैं। बात यह है कि खजूरके जो फल पकनेके पहले तोड़ लिए जाते हैं वे ही छुहारा कहलाते हैं किन्तु जो फल पेड़में ही पकते हैं खजूर कहलाते हैं।

विदेशोंमें जहां छुहारा बहुतायतसे पाया जाता है वहां लोग छुहारा खाकर ही बहुत दिनों तक जीवन निर्वाह करते हैं। छुहारा खानेसे स्वास्थ्य बनता है। भोजनको अधिक रुचिकर बनानेके लिए छुहारेको किसी न किसी रूपमें अवश्य ही प्रयोग किया जाता है। छुहारेका गूदा और गुठली दोनों उपयोगी हैं। छुहारेकी गुठलीके प्रयोग एवं गुणकी दृष्टिसे विचार करनेपर आमके आम गुठलीके दाम वाली कहावत चरितार्थ होती है। छुहारेकी गुठलीसे अनेक रोगोंका इलाज सफलता पूर्वक किया जाता है। गुठली घिसकर खानेसे प्यासकी अधिकता कम हो जाती है। छोटे बच्चोंको दूधके साथ छुहारेको उवालकर खिलानेसे स्वास्थ्य बनता है।

छुहारा खानेमें तो मीठा होता ही है साथ ही इसके सेवनसे हृदय बलवान् होता है। छुहारेका सेवन करनेसे शरीर पुष्ट होता है और

दूर हो जाता है। इसके सेवन करते रहनेसे त्रिदोषको शान्ति मिलती है।

खजूर और छुहारेका उपयोग अनेक दवाओंके रूपमें भी किया जाता है। थोड़ेसे खजूरके फलोंको पानीमें भिगोकर फलकूट पीसकर पानी तैयार करके पिलानेसे जलन दूर होती है। सिरमें चाहे जैसा भी दर्द हो छुहारेकी गुठलीको पानीमें घिसकर मस्तक पर लेप कर देनेसे सिरका दर्द शीघ्र ही दूर हो जाता है। बहिनोंके लिए तो छुहारा रामबाण औषधिका काम करता है। स्त्रियोंके कष्टसाध्य रोग प्रदरमें तो इसका उपयोग निश्चय ही लाभप्रद होता है। प्रदर रोग हो जानेपर छुहारेकी गुठलियोंको कूटकर घीमें तलकर गोपी चन्दनके साथ सेवन करानेसे प्रदर रोग दूर होने लगता है। यहां तक देखा गया है कि यदि उपरोक्त विधिसे छुहारेकी गुठलियोंका सेवन किया जाए तो सदाके लिए प्रदर रोग दूर हो जाता है।

यदि भूख न लगती हो तो भूख बढ़ानेके लिए छुहारेके अतिरिक्त कोई दूसरी ऐसी चीज है ही नहीं जो सुगमतासे प्राप्त हो सके और शीघ्र प्रभाव दिखला सके। भूख न लगनेपर थोड़ेसे छुहारोंको दूधके साथ पकाना चाहिए। जब छुहारे पककर दूधके साथ खिल जायं और रस निकल आवे तब दूधको आगसे उतार कर दूधको गाढ़ा करके छुहारेके गूदेको निकालकर अलग कर दें और दूधका सेवन करें। इस प्रकार थोड़े ही दिनोंमें छुहारेके साथ पकाए गए दूधका सेवन करनेसे भूख न लगनेकी शिकायत दूर हो जाती है और भोजन भी

शीघ्र ही पच जाता है।

स्वाद, गुण, और लाभकी दृष्टिसे किसी न किसी रूपमें छुहारेका प्रयोग अवश्य ही करना चाहिए। जो गुण छुहारेमें हैं वही गुण छुहारेमें बनाए गए पकवानोंमें भी होता है। छुहारेसे रुचिकर तथा स्वादिष्ट व्यंजन बनाए जाते हैं। आप भी अपनी इच्छानुसार अपने मन पसन्द व्यंजन बनाकर छुहारेसे लाभ उठा सकती हैं। छुहारेसे बनने वाले व्यंजन, स्वादिष्ट एवं जायकेदार तो होते ही हैं साथ ही ऐसे व्यंजनोंका सेवन करनेसे शरीर पुष्ट होता है और बलवीर्यकी वृद्धि होती है।

खजूर अथवा छुहारेका रासायनिक विश्लेषण करनेसे पता चला है कि इसमें शर्करा ६० से ७० प्रतिशत तथा शेष भागमें खनिज लवण, लौह, टेनिन, प्रोटीन, फास्फोरस तथा जीवन तत्त्व ए० बी० सी० प्रचुर मात्रामें पाए जाते हैं। छुहारा खानेमें स्निग्ध, मधुर गुरु, विपाकमें मधुर एवं शीत वीर्य वाला होता है। छुहारा अनेक गुणोंसे ओतप्रोत है। अकेला छुहारा ही अनेक रोगोंको सदाके लिए दूर करनेमें समर्थ है। छुहारा, वात-पित्त शामक, स्तम्भक, नाड़ी बलदायक, कफनिःसारक, ज्वर, दाह, श्रम, मस्तिष्क दौर्बल्य, वृष्णा, वमन, अतिसार, मूत्रकृच्छ्र एवं कटिशूल आदि वात-धिकारोंको दूर करनेमें समर्थ है।

छुहाराका उपयोग अनेक रोगोंपर सफलतापूर्वक किया जा सकता है। नीचे कुछ ऐसे ही प्रयोग दिए जाते हैं जिनमें छुहारा अथवा छुहारेके विविध अंगोंकी सहायतासे भयंकरसे भयंकर रोगसे छुटकारा पाया जा सकता है।

जिस समय छुहारा अविकसित हो अथवा कलीके रूपमें हो उस समय छुहारा सूक्ष्म होता है। इसे कुचल कर बराबर मात्रामें जैतूनका तेल मिला कर एक साफ शीशीमें भर कर रख लें। और ३-४ दिन तक हिलाते रहें। इस तेलको छान कर अच्छी तरहसे कार्क बन्द करके शीशीमें रख लें। यह तेल पित्तज शिरःशूलके लिए लाभदायक है। यदि अधिक पसीना निकलता हो तो इस तेलको लगानेसे शीघ्र ही पसीनेका अधिक निकलना बन्द हो जाता है। बालोंपर इस तेलका

मालिश करनेसे बाल मजबूत होते हैं और बालोंका गिरना रुक जाता है। छुहारेकी कलीका क्वाथ बना कर बालोंको धोनेसे बाल मजबूत, काले, घुंघुराले और लम्बे होते हैं।

जब कली प्रफुटित होती है उस समय छुहारा जौके दानेसे भी छोटा होता है, इसे छुहारेका कूड़ा कहा जाता है। यह भी शीतल व रुक्ष होता है, इसे सुखाकर चूर्ण बनाकर सवा तोलाकी मात्रामें सेवन करनेसे प्यास शान्त होती है। यह चूर्ण अतिसार, श्वेत-प्रदर, पैत्तिक ज्वरमें गुणकारी प्रभाव दिखाता है इसके सेवनसे रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

अतिसार एवं संग्रहणी जैसे भयानक रोगोंमें भी छुहारेके फलोंका सेवन करना हर दृष्टिमें उपयोगी माना गया है। छुहारेका शर्बत बनाकर सेवन करनेसे अतिसार, बहुमूत्र, एवं मधुमेह ऐसे कष्ट साध्य रोगों पर तत्काल ही लाभ होता हुआ दिखलाई पड़ता है। जुकाम हो जानेपर छुहारोंको दूधमें औंटाकर पिलानेसे जुकाम दूर हो जाता है। खांसी या कास रोगपर इसके फलोंके साथ पीपल, मुनक्का और गोखरू-को पीसकर घी और शहदके साथ देनेसे लाभ होता है। पैत्तिक खांसीपर छुहारेके फलोंके साथ पीपल, मुनक्का, मिश्री और धानकी खील सभी वस्तुएं समान मात्रामें लेकर पीस छानकर शहद व घीमें मिलाकर सेवन करानेसे तत्काल ही लाभ होता है। छुहारेके साथ सोंठका चूर्ण कूट पीसकर पानमें रखकर सेवन करानेसे श्वास रोग दूर हो जाता है।

निर्वलता एवं कमजोरी दूरकर खोप हुए स्थाय्य को वापस पानेके लिए छुहारेका प्रयोग विशेष रूपसे गुणकारी माना गया है। चाहे कैसी ही कमजोरी हो, इसके सेवन करनेसे अपरिमित बल प्राप्त होता है। और वीर्यकी वृद्धि होती है। निर्वलतासे छुटकारा पानेके लिये छुहारेके बीज निकालकर फलोंको कूटकर पानेके लिये छुहारेके बीज निकालकर फलोंको कूटकर उसके साथ, बादाम, पिस्ता, चिरोजी तथा मिश्री मिला कर मिश्रण बनावें। इस मिश्रणमें अच्छा शुद्ध घी मिलाकर रख दें। सात आठ दिन तक रखा रहनेके बाद प्रतिदिन सुबह शाम दो तोलेसे पांच तोले तक की मात्रामें सेवन करनेसे थोड़े ही दिनोंमें निर्वलता दूर

हो जाती है। इसी प्रकार छुहारा दो नग, बादामकी गिरी चार नग तथा मुनक्का आठ नग इन तीनों में से किसी एक रात में पानी में भिगोकर प्रातः काल छुहारेकी गुठली, बादामका छिलका और मुनक्काके बीज निकाल कर अलग कर दें। इन सभी सबोंको भली भाँति महीन महीन पीसकर एक पाव दूध में शक्कर मिलाकर पीनेसे खोया हुआ स्वास्थ्य वापस प्राप्त हो जाता है और धीरे धीरे शरीर शक्तिशाली हो जाता है। सुबह शाम नियमित रूपसे उपरोक्त विधिसे छुहारेका प्रयोग करनेसे निर्बलता दूर हो जाती है।

छुहारेकी गुठली निकालकर किसी कलईदार बर्तन में पानी भरकर रात में भीगनेके लिए डाल दें। प्रातः काल भीगे हुए छुहारोंको निकाल लें। छुहारेके गूरेको आधा सेर दूध में पकाकर, छानकर गुनगुना पीनेसे लाभ होता है। दो तोला छुहारा कूटकर थोड़ी सी दालचीनीके साथ ताजे दुहे गए आधा पाव दूधके साथ भिगोकर आधा घण्टाके बाद खाकर ऊपरसे गायका धारोष्ण दूध पीनेसे काम शक्ति उद्दीप्त होती है। इस प्रकार छुहारा कमजोरी को दूर करके नवयौवन प्रदान करनेमें हर तरह से समर्थ है।

छुहारेके बीज निकाले हुए फलोंके साथ मुनक्का, मुलेठी और खांड सभी वस्तुएँ चार चार तोले तथा पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात दो दो तोलेकी मात्रा में लेकर कूट पीसकर छानकर चूर्ण करके शहदके साथ सानकर गोलियाँ बनाकर रख लें। इन गोलियोंका सेवन करनेसे वृद्धता, कास और रक्तपित्त में लाभ होता है। पित्त में छुहारेके चूर्णको शहदके साथ चढानेसे लाभ होता है।

अरुचि दूर करनेके लिए बीजरहित छुहारोंको नीबूके रस में भिगोकर नमक तथा गरम मसाला मिलाकर अचार बनाकर थोड़ी मात्रा में सेवन करनेसे लाभ होता है। इस अचार में शक्कर अथवा शक्करकी चारनी मिला देनेसे अचार और भी स्वादिष्ट हो जाता है। यह

दीपन पाचन भी होता है। अकेले छुहारा खाकर ऊपरसे मट्ठा पी लेनेसे भी दीपन पाचन होता है। छुहारेका चूर्ण बनाकर एक तोलाकी मात्रा में एक पाव उबलते हुए दूध में डालकर उसमें दो चम्मच घी डालकर रख दें। तीन घण्टे बाद अच्छी तरह मिलाकर पीनेसे शारीरिक वातपीड़ा शान्त हो जाती है। लगातार पन्द्रह दिनों तक सुबह शाम भोजनके बाद इसके सेवनसे शरीरकी कान्ति बढ़ती है और शरीर में नई शक्तिका संचार होता है।

छुहारेके साथ मुलेठी, काकजंघा, मुनक्का, खांड सभीको समान मात्रा में लेकर कूटकर मक्खन में मिला कर पकाकर ठंडा कर लें। इस मिश्रणको शहद मिला कर पीनेसे सिरके पास कनपट्टियोंका दर्द दूर हो जाता है।

छुहारेसे विविध प्रकारके स्वादिष्ट एवं जायकेदार पकवान एवं विविध प्रकारकी गुणकारी तथा तरकाल प्रभाव दिखलाने वाली दवाइयाँ बनाई जाती हैं। छुहारा गुणोंकी खान है। किसी न किसी रूपमें प्रत्येक दिन छुहारेका बल-वीर्यकी वृद्धि एवं दुर्बलताको दूर करनेके लिए अवश्य ही सेवन करना चाहिए।

छुहारेसे बनने वाले स्वादिष्ट एवं जायकेदार व्यञ्जनों में छुहारेका मुरब्बा, छुहारेका अचार, छुहारेकी बरफी, छुहारेकी चटनी, छुहारेका हलवा आदि व्यञ्जन बनाए जाते हैं। इसी प्रकार छुहारेसे तैयार होने वाली गुणकारी एवं प्रभावोत्पादक औषधियों में खजूरपाक, खजूरदिघृत, छुहारेका घनसत्व आदि दवाइयाँ प्रमुख हैं। अकेला छुहारा स्वयं अनेक रोगोंकी दवा, रोगीके लिए डाक्टर और घर में अस्पतालकी तरह है। इस उपयोगी सुमधुर एवं स्वादिष्ट मेवेसे प्रत्येक व्यक्तिको अवश्य ही लाभ उठाना चाहिए। छुहारेका सेवन किसी भी रूपमें किया जा सकता है। छुहारा गुणोंकी खान है, प्रत्येक घर में छुहारेका होना आवश्यक है।

चरकीय भावतत्त्वका दिग्दर्शन

लेखक--श्री वै० रा० सीताराम शर्मा जोशी

भिषगाचार्य

नवलगढ़ (राजस्थान)



चिकित्सातत्त्वको जाननेके लिए भावतत्त्वको जान लेना आवश्यक है।

चिकित्साका रहस्य न सुश्रुतने लिखा है न वाग्भट्ट ने इस भावरूप चिकित्साको लिखा है। केवल चरकने ही सूक्ष्मसे सूक्ष्म चिकित्सातत्त्वको समझाया है।

भाव तत्त्व जान लिया, तो चिकित्सा जान ली।

भाव पदार्थका नाम है। पदार्थ सत्त्वरूप भी है असद्वरूप भी है। अब पदार्थके स्वरूपको जानना पहली बात है।

पदार्थ भावरूप है उसका असली स्वरूप अर्थात् उस भावका स्वभाव (आत्मा) (असाधारण धर्म) को जानना भावतत्त्वको जानना है। अर्थात् उस पदार्थकी असली तासीर उसके गुण कर्म क्या हैं यह जानना चाहिये तभी चिकित्सा हो सकती है।

भाव क्षणिक भी होते हैं और स्थिर भी होते हैं। नित्य भी, अनित्य भी, और नित्यानित्यरूप उभयात्मक भी होते हैं।

व्यक्त-अव्यक्त, प्राकृत-वैकृत, लौकिक-अलौकिक इत्यादि रूपसे भावोंकी अनेक अवस्थाएँ होती हैं।

यहाँ चिकित्साके प्रकरणमें क्षणिकवादियोंके मतमें चिकित्सा सम्भव नहीं हो सकती। ऐसा प्रसंग उठाकर चरकने उत्तर दिया है—जैसे संसारके सभी पदार्थ भाव हैं और वे क्षणिक हैं उत्पत्ति और ध्वंसशील हैं। जब भाव पैदा होता है दूसरे क्षणमें टिककर तीसरे क्षणमें नष्ट हो जाता है।

भावपदार्थ हम सब आप सभी हैं। प्रतिक्षण जन्मते हैं और मरते रहते हैं। ऐसे ही शरीर आपका प्रतिक्षण अस्थिर है। धातु साम्य और धातु वैषम्य भी इसी प्रकार अस्थिर समझना चाहिये।

जब सभी कुछ अस्थिर है तो रोग और आरोग्य भाव भी टिके नहीं रहते। इस परिवर्तनको कोई रोक नहीं सकता। यह भाव स्वभाव ही है।

‘स्वभावो दुरतिक्रमः।’

स्वभाव बदला भी नहीं जा सकता। साम्यभाव भी बदला नहीं जा सकता और वैषम्य भी परिवर्तित नहीं किया जा सकता। जैसेका तैसा ही स्वयं नष्ट हो जाता है। फिर न चिकित्साका विषय ही रहता है न चिकित्सकका कर्तव्य ही कुछ हो सकता है।

पुरुष भी स्वभावसे ही उत्पन्न होता है और रोग भी स्वतः उत्पन्न होते हैं और नष्ट हो जाते हैं।

भावहेतुस्वभावस्तु व्याधीनां पुरुषस्य च।

खरद्रव-चलोष्णत्वं तेजोऽन्तानां यथैव हि।

यज्जः पुरुषीअध्याय ॥

च० सू० १५

और भी लिखा है कि पुरुष भाव जो उत्पन्न होता है मरता है, यह भी स्वभावसे ही होता रहता है। पञ्चमहाभूत कभी स्वयं जुड़ जाते हैं कभी स्वयं ही बिखर जाते हैं। यह भूतोंका स्वभाव है। चेतना भी हरिद्रा और चूर्ण संयोगसे लालिमाकी तरह भूतोंमें ही उत्पन्न होती रही है जैसे लिखा है—

विद्यात् स्वाभाविकं षष्णां धातूनां यत्स्वलक्षणम्।
 संयोगे च वियोगे च तेषां कर्मेव कारणम्।

च० सू०, अ० ११

अर्थात् जड़ भूतोंका संयोग-वियोग पुरुषकी उत्पत्ति-विनाशरूप भाव स्वतः स्वभावसे ही होते रहते हैं।

जिसमें किसीके प्रयत्नकी अपेक्षा ही नहीं। सभी भाव स्वभावसे हो रहा है और होता रहेगा।

ऐसे प्रश्नका जवाब यज्जः पुरुषीअध्यायमें कांठा

.....नह्यारम्भफलं भवेत् ।

भवेत् स्वभावाद् भाषानामसिद्धिः सिद्धिरेव वा" ।

अर्थात् स्वयं ही रोग शान्त होजावे और स्वयं ही उत्पन्न हो जावे तो आरम्भ, प्रबल प्रयत्न, कौन करे?

इसलिये कोई कार्य कोई भाव स्वतः उत्पन्न नहीं होता बिना कर्ताके कार्य होते नहीं देखे गये ।

जड़भाव (पञ्चभूतों) में स्वयं ज्ञान ही नहीं, वे कैसे जुड़ें और कैसे बिखरें ।

जितने भी भाव होते हैं वे कर्ता बिना नहीं होते । बिना कर्ता कार्योत्पत्ति कहना बालकका कार्य है ।

भाव कारणरूप भी होते हैं कार्यरूप भी होते हैं और कार्य कारणातीत भी होते हैं ।

जड़ वही है जिसमें ज्ञान न हो । ज्ञानवान ही चेतन और कर्ता कहलाता है ।

सभी ज्ञान आत्माके ही होते हैं । आत्मा ही सब भावोंको जानता है ।

सर्वे भावा हि सर्वेषां भूतानामात्म साक्षिकाः ।

च० शा० १ अ० श्लो०

भाव स्वयं पैदा नहीं होते । कार्यरूप भावोंकी उत्पत्तिमें भावाभ्यास कारण होता है ।

जैसे—गुरुभिरभ्यस्यमानैर्गुणामुपचयो भवति, अपचयो लघूनाम् ।

यह भाव स्वभाव पुरुष प्रयत्न साध्य है । और रोग या आरोग्य स्वतः नहीं वैद्य व रोगीके साम्य वैषम्यरूप हेतूपचारसे होता है ।

कारणरूप भाव स्वभाव और कार्यरूप भाव स्वभाव जड़के भी होते हैं ।

परं चेतनभाव आत्मा है, वह न उत्पन्न होता है, न मरता है ।

आदिर्नाशस्यात्मनः क्षेत्रपारम्पर्यमनादिकम् ।

आत्मा कारणरूप भाव है । कार्य नहीं । आत्मा किसीका कार्य नहीं स्वयंभू है । और जड़ भावकी तरह अस्थिर परिणामी भी नहीं है ।

यदि ऐसा होवे तो बाल्यकालका ज्ञान युवाको न होने पावे ।

भावके उपादान का रूप पञ्चभूत ही हुआ करते

हैं । आत्मा चेतन कभी किसीका उपादान नहीं होता । आत्मा तो निमित्त कारण होता है ।

वास्तवमें तो आत्मा न कारण रूप भाव है न कार्यरूप । वह तो कार्य कारणातीत भाव है ।

उपनिषद्में लिखा है—

न तस्य कार्यं करणं च विद्यते

न तत्समश्चाप्यधिकश्च दृश्यते ।

परास्यशक्तिर्विविधैव श्रूयते

स्वाभाविकी ज्ञान-बल-क्रिया च ॥

उत्पत्तिहेतुर्भावानां न निरोधेऽस्ति कारणम् ।

च. सू. अ. १५

यहां भाव उपादान कारण है । पुरुष निमित्त कारण है । प्रकृति पुरुष दोनोंके बिना क्षेत्र-क्षेत्रज्ञके बिना अथवा जड़-चेतनके बिना कोई भाव उत्पन्न ही नहीं होता ।

गीतामें लिखा है—यावत्संजायते किञ्चित् सत्त्वं स्थावर जङ्गमं । क्षेत्र क्षेत्रज्ञ संयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ ।

नह्येको वर्तते भावो वर्तते नाप्यहेतुकः ।

परन्तु लौकिक भावके अलावा शुद्ध एक तत्त्वात्मक भी भाव होता है । वही भाव कार्यकारणातीत है ।

चेतना धातुरप्येकः स्मृतः पुरुष संज्ञकः । च. शा. अ. १

कहनेका अभिप्राय यह है कि भाव बहुत तरहके होते हैं संयोगी, असंयोगी । सद् रूप भाव, असद् रूप भाव ।

चरकमें लिखा है—द्विविधं खलु सर्वं सच्चासच्च तस्य चतुर्विधा परीक्षा प्रत्यक्षानुमानाप्तोपदेशाः युक्तिश्च ।

च. सू. ११ अ.

निरय भाव जैसे—

‘सदकारणवन्निरयम्’ लक्षण कहा है ।

अनित्यभाव-‘दृष्टं हेतुजमन्यथा’ । च. अ. शा. १ ।

व्यक्ताव्यक्त भाव—जैसे—

अव्यक्ताद्व्यक्तां याति व्यक्ताद्व्यक्तां पुनः ।

रजस्तमोभ्यामावृत्तश्चक्रवत् परिवर्तते । च. शा. १ अ.

उभावप्यनादी, उभावप्यलिङ्गी, उभावप्यनिर्यो,

उभावप्यपरी, उभावपि सर्वगतौ ॥ सांख्यानुवादी-

भावमिश्रः ।

आरम तत्त्व भाव रूप है अभाव रूप भी है, व्यक्त-

अव्यक्त, निरय-अनित्य । अनेक रूप है । ईश्वर रूप भी

भाव है। जड़ जीव जगत् रूप भी भाव है।

गीतामें—भावके सभी रूप आत्मा ईश्वरके ही हैं।

अर्थात्—“सदसच्चाहमर्जुन” यह कहकर भगवान् ने जड़ चेतन भाव-अभाव, लिङ्गी-अलिङ्गी, व्यक्त-अव्यक्त, कार्य, कारण, सब कुछ मैं ही हूँ ऐसा कह दिया है।

द्वैतवादी दो भाव, त्रैतवादी तीन भाव, अद्वैतवादी एक ही भाव सर्वत्र मानते हैं।

ऐसा विलक्षण भाव तो सदा अव्यक्त ही रहता है। न कभी वह व्यक्त होता है, न कभी उसे कोई जान ही सकता है। स्वयं ही अपने आपको जानता है—

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थत्वं पुरुषोत्तम। गीता।

स्वयं भी कहते हैं कि—

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन।

भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन।

वह अव्यक्त अचिन्त्य भाव है वह तो सबको जानता है।

अर्थात् आत्मा ईश्वर सब भावोंको जानते हैं। सर्वावस्थामें स्थित सभी जड़ चेतन जितने भी भाव हैं उनकी अवस्थान्तर गतियों भोग नाना योनियोंमें जन्म, सब वे जानते हैं। उनको कोई नहीं जान सकता। वह भाव सदा ही अव्यक्त रहता है।

यदि कोई राम कृष्णादि अवतार उसका व्यक्त भाव मानते हैं वह भक्तिके लिए कल्पित रूप है।

भगवान्—स्वयं कहते हैं कि

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।

परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्॥

उस पर भावको जाने भी कैसे, वह सदा अलिङ्ग है। उसका प्रत्यक्ष दर्शन नहीं, लिङ्ग न होनेसे लिङ्ग-लिङ्गी पूर्वक अनुमान ज्ञान भी नहीं।

सिर्फ श्रुतिसे, आत्मोपदेशसे, उसकी सत्ता मात्रका ज्ञान होता है।

उस अलौकिक भावके लिए चरकने लिखा है—

अग्निवेशका प्रश्न है

सर्ववित् सर्व संन्यासी सर्व संयोग निःसृतः।

एकः प्रशान्तो भूतात्मा कैलिङ्गैरुपलभ्यते।

पुनर्वसु उत्तर देते हैं—

नैकः कदाचित् भूतात्मा लक्षणैरुपलभ्यते।

विशेषोऽनुपलभ्यस्य तस्य नैकस्य विद्यते।

च. शा. १।८३

अतः परं ब्रह्मभूतो भूतात्मा नोपलभ्यते।

निःसृतः सर्व भावेभ्यो चिह्नं यस्य न विद्यते।

च. शा. १।१५४

चरकमें भाव शब्द सूत्र स्थानसे लेकर सिद्धि स्थान पर्यन्त सभी स्थानोंमें आया है।

अर्थात् प्रसंग प्रसंगपर तत्तदाशयको लेकर निदानमें निदान विषयक भाव शब्द प्रयुक्त हुआ है। चिकित्सामें चिकित्साको लेकर, इन्द्रिय स्थानमें अरिष्ट भावको लेकर किया है। स्थूल जगत्में भी भाव शब्द है, सूक्ष्म जगत्में भी है। जड़ भी भाव है और चेतन भी भाव है।

बुद्धिमानको इन शब्दोंकी यथा योग्य योजना करनी चाहिये।

लोक पुरुषमें और राशि पुरुषमें, देहमें, आत्मामें सर्वत्र ही भाव प्रयुक्त हुआ है।

किसी जगह द्रव्य भावको लेकर भाव शब्द है, किसी जगह गुण भावपरक है, तो किसी जगह सामान्यपर भाव शब्द है। कर्म समवाय, विशेष और अभावार्थमें भी भाव प्रयोग आचार्यने किया है।

पदार्थ, विषय, विषयी, संयोगी भाव, एकात्म-भाव, इस प्रकार विविध जगह भाव शब्द लिखा है।

कुछ उदाहरणार्थ वाक्योंका निदर्शन किया जाता है जहां जहां भाव शब्द आया है।

जैसे—

सर्वदा सर्वभावानां सामान्यं वृद्धिकारणम्। यहाँ द्रव्य गुण कर्म परक भाव सामान्य है। ‘हास हेतु विशेषश्च’ यहाँ विशेष भाव परक भाव शब्द है। च. सू. १ अ.

पदार्थ परक भाव शब्द—सर्वेषामेव भावानां भावाभावौ नान्तरेण योगायोगातियोग मिथ्यायोगान्तरमुपलभ्येते यथास्वयुक्तस्य पेक्षिणौ हि भावाभावौ।

संयोगज भाव (गुण अर्थमें) भाव शब्द प्रयोग—

बुद्धिः पश्यति या भावान् बहुकारणयोगजान् ।
युक्ति स्त्रिकाला सा ज्ञेया त्रिवर्गः साध्यते यया ।
च. सू. ११ अ.

आगे चलकर

स चैकं स्पर्शनेन्द्रियमिन्द्रियाणां इत्यारभ्य
तस्मात् सर्वेन्द्रियाणां व्यापकस्पर्शकृतो यो
भावविशेषः सोऽयमनुपशयात् पञ्चविधः ।
इत्यादि । च. सू. ११ । ४१

यहाँ गुणको भाव कहा है ।

त्रित्वेनाष्टौ समुद्दिष्टाः कृष्णात्रेयेण धीमता ।
भावा भावेष्वासक्तेन येषु सर्वे प्रतिष्ठितम् ॥
च. सू. ११ । ७५ ॥

विषय-या पदार्थपरक भावशब्द प्रयुक्त हुआ है ।

भावानां चाभावकरणम् । च. सू. १२ । १.
द्रव्यको लेकर-स हि भगवान् प्रभवश्चाव्ययश्च ।

भूतानां भावाभावकरणश्च । च. सू. । अ. १२
विधाता भावानां (वायुः) च. सू. गद्य १ अ. १२
द्रव्य व आहार विहारार्थ में—

वेगधारणोदीरणोमिति भावानेतान् मनसाप्यसेव-
मानः सर्वमाहारमद्याः । च. सू. १५ । गद्य नं. १७

उपादान कारणमें भावशब्द—

प्रवृत्तिहेतुर्भावानां न निरोधोऽस्ति कारणम् ।
च० सू० १६-२७

अभाव पदार्थकी स्वाभाविक सत्तामें—

न नाशकारणाद्भावाद्भावानां नाशकारणम् ।
ज्ञायते नित्यगस्यैव कालस्यात्ययकारणम् ।
शीघ्रगत्वाद्यथाभूतस्तथा भावो विपद्यते ।
निरोधे कारणं तस्य नास्ति नैवान्यथा क्रिया ।
च. सू. १६ । ३२ पद्य ।

जड़ भावोंमें अचेतन द्रव्य गुणकर्म व्यापारमें—

भावहेतु स्वभावस्तु व्याधीनां पुरुषस्य च ।
खर-द्रव-च तोषणत्वं तेजोऽन्तानां यथैव हि ।

चेतन भावकी सिद्धिके लिए भाव—

नह्यारभ्यफलं भवेत् । भवेत्स्वभावाद्भावानाम-
सिद्धिः सिद्धिरेववा । च. सू. २५ । अ. । पद्य २२ ।
शरीरोपादानार्थमें—

येषामेव हि भावानां सम्पत् संजनयेन्नरम् ।
तेषामेव विपद् व्याधीन् विविधान् समुदीरयेत् ।
च. सू. २५ । अ. । २८ प.

मात्रादयो भावाः । सू. २५ । गद्य ३४
तथैतदुपदेश्यामः मात्रादीन् भावानुदाहरन्तः ।
मात्रा काल क्रिया भूमि देह दोष गुणान्तरम् ।
प्राप्य तत्तद्धि दृश्यन्ते ते ते भावास्तथा तथा ॥
विविध संयोगज भाव है ।

अनेक संयोगजद्रव्योत्पत्ति रूप भाव—

संयोग संस्कार देश काल स्थान मात्रादयश्च भावा-
स्तेषां तेषामासवानां ते ते समुपदिश्यन्ते तत्तत्कार्यम-
भिसमीक्ष्य । च. सू. २५ अ.

रसनेन्द्रिय विषयार्थमें भावशब्द—जिह्वावैषयिकं
भावमाचक्षते कुशलाः, स पुनरुदकादनन्यः । सू. २६ अ.

रस प्रकरणमें—अपरिसंख्येयत्वं पुनस्तेषामाश्र-
यादीनां भावानां विशेषापरिसंख्येयत्वान्नयुक्तम् ।

एकैकोऽपि हि पुनरेषामाश्रयादीनां भावानां
विशेषानाश्रयते । च. सू. २६ अ. २४ गद्य

कितना गम्भीर विषयावगाही भाव शब्द है—
तदात्वसुखसंज्ञेषु भावेष्वाज्ञोऽनुरज्यते ।
रज्यते न तु विज्ञाता विज्ञाने ह्यमलीकृते ।

आपातभद्र विषयपर भावशब्द है ।

मुख्यार्थमें भाव शब्द—

प्रतिष्ठार्थं हि भावानां येषां हृदयमिष्यते ।
गोपानसीनासागार-कर्णिकेवार्थं चिन्तकैः ।

च. सू. अ. ३० । ४ पद्य ।

सोऽयमायुर्वेदः शाश्वतो निर्दिश्यते अनादित्वात्
स्वभाव संसिद्धलक्षणत्वात् भावस्वभावनित्यत्वाच्च

यही मुख्य भाव शब्द है जो सर्वत्र, आयुष्य, अनायुष्य, द्रव्य, गुण, कर्मोंके असाधारण धर्मको बताता है। यही भाव स्वभाव है यही असली भाव है।

अर्थात् गुरुभिरभ्यस्यमानैर्गुरुणामुपचयो भवति अपचयो लघूनां लघुभिरभ्यस्यमानैर्लघूनामुपचयो भवति अपचयो गुरुणाम्।

यही भाव स्वभाव द्रव्य गुण कर्मोंका निरूप है। संसारमें जैसे अग्नि गरम, जल ठंडा, ये द्रव्योंका भाव स्वभाव त्रिकालमें भी नहीं बदल सकता, तथा जड़ चेतन नहीं हो सकता, चेतन जड़ नहीं, यह जो त्रिकालाबाधित सिद्धान्त है इसीको चरकने भाव माना है।

इसके अनेक संयोग संस्कारोंसे नानाभेद होकर नाना भाव बन जाते हैं। जैसे रसोंके ६२ भेद और दोषोंके संयोगसे परस्पर ६३ भेद स्थूल स्थूल हैं। सूक्ष्म तो अनन्त हो सकते हैं।

जितने द्रव्य अनन्त हैं तो भाव भी अनन्त हो सकते हैं। और भी भावोंके रूपान्तर अवस्थान्तर देकर स्पष्ट करनेकी चेष्टा की जाती है।

निदान स्थानमें भाव शब्द तत्स्थानीय भाव द्रव्योंको लेकर प्रयुक्त हुआ है जैसे—

तस्मात् व्याधीन् भिषगनुपहत सखबुद्धिः हेस्वादिभिर्भावैर्व्यावदनुबुद्धयेत्। च. चि. १ अ. गद्यनं ६।

भाव अभावार्थमें दोनोंमें भाव शब्द है अभाव भी तो भाव है।

इह खलु निदान दोषदूष्य विशेषेभ्यो विकार विघातभावाभाव प्रतिविशेषाः भवन्ति। च. नि. ४ अ. गद्य. ३-४।

पदार्थ मात्रको भाव कहा है —

सर्वमन्यत् परित्यज्य शरीरमनुपालयेत्।

तदभावे हि भावानां सर्वाभावः शरीरिणाम्॥

च. नि. ६। ११५ ग.।

नासाध्यः साध्यतां याति, साध्यो यातिस्व-साध्यताम्। च. सू.

पादापचाराद्वाढा यान्ति भावान्तरं गदाः। यहाँ क्षणिक परिवर्तन शील दोषावस्थान्तरोंको भाव बतलाया गया है। च. नि. ६। ११५ ग.।

सामान्यार्थमें भाव शब्दका प्रयोग—

ते खल्विमे भावाः सामान्या जनपदेषु भवन्ति। तद्यथा वायुरुदकं देशः काल इति। च. विमा. ३ अ. गद्य नं. ५।

इमान् चतुरोभावान् जनपदोर्ध्वसकरान् वदन्ति कुशलाः। च. वि. ३ अ.।

भाव शब्द द्वैयार्थमें—

इमे खल्वन्येष्ट्येवमेव भूयोऽनुमानज्ञेया भावा तद्यथा अग्निं जरण शक्यता। च. विमा. ४ अ. ५ गद्य

ये यथा चानुमानेन ज्ञेयास्ताश्चाप्युद्गारधीः।

भावांस्त्रिदोषविज्ञाने विमानेमुनिरुक्तवान्॥

च. विमा. ४। २१।

स्रोतसके अर्थमें भाव शब्दका प्रयोग—जैसे-यावन्तः पुरुषे मूर्तिमन्तो भावविशेषा स्तावन्त एवास्मिन् स्रोतसां प्रकारविशेषाः, सर्वे भावा हितान्तरेण स्रोतास्यभिर्निर्वर्तन्ते। च. विमा. ५ अध्याय

प्रकारार्थमें—केवलं विदितं यस्य शरीरं सर्वभावतः। शरीराः सर्वरोगाश्च न स कर्मसु मुह्यति। च. वि. ५। ३६

अपध्यार्थमें भाव शब्द—

अनन्तरं निदानोक्तानां भावानामनुपसेवनम्। चर. वि. अगद्य. १३

‘तस्मादातुरं परीक्षेत’ इसके बाद—

तत्रामी प्रकृत्यादयो भावा तद्यथा शुक्रशोणित प्रकृतिः०। चरक वि. ८। १०६ गद्य। और आगे एवं प्रकृत्यादीनां विकृतिवर्ज्यानां भावानां प्रवरावरमप्य विभागेन बलविशेषं विभजेत्। च. वि. ८। १३२ ग.।

दोषादीनां तु भावानां सर्वेषामेव हेतुम्। मानात्सम्यक्विमानानि निरुक्तानि विभागशः। च. वि. २। १६५ पद्य

कहनेका तात्पर्य यह है कि पाठक और विद्वान् वैद्य तथा अध्यापक, छात्र सभी ध्यान दें कि विविधार्थमें गहराईमें खूब भाव शब्दका प्रयोग चरकने किया है।

इतने उदाहरण देनेका मतलब यही है कि ग्रन्थकर्ताके अभिप्रायको खूब अच्छी तरह समझ

तंत्र युक्तियाँ इसीलिए हैं। शब्द ब्रह्म व वाक्यार्थ ज्ञानमें आकांक्षा, योग्यता, सान्निध्यादि कई कारण होते हैं। एक वस्तु प्रत्यक्षादि प्रमाणोंसे भी नहीं जानी जाती।

बुद्धि वैशद्यके लिए, विवक्षितार्थ सिद्धिके लिए न्याय शास्त्र भी है। व्याकरण कोश व्यवहार आदि किस किसको गिनावें अनन्तपारशास्त्र है उनके अलग अलग सिद्धान्तको लेकर भाव शब्द प्रयुक्त हुआ है।

मेरा तो इतना ही कहना है कि अपसिद्धान्तको छोड़कर स्याद्वादकी शरण लेकर सब शब्दोंके साथ जो भाव शब्द है वह सही है।

किसी जगह भाव आत्माका नाम है। किसी जगह उत्पादक द्रव्यको भाव कहते हैं, किसी जगह उत्पन्न द्रव्यको भाव। किसी जगह द्रव्यकी अवस्थान्तरोंको भाव, किसी जगह मनके स्वभावको भाव, किसी जगह

विषयोंको भाव, किसी जगह गुणोंको भाव कहा है।

अव्यक्त भाव, व्यक्तभाव, नित्यभाव, अनित्यभाव, संयोगज भाव, अनेक संयोगजभाव, अवयवीभाव, अवयवको भाव, क्षेत्रको, क्षेत्रज्ञको, भूतगुणोंको भाव, द्रव्य स्वभावको भाव, कार्य भी भाव, कार्यफल भी भाव, कर्ताभी, भोक्ताभी, भाव पदार्थ भी भाव, अभाव-तत्त्व भी भाव, एकतत्त्वात्मक अनेकतत्त्वात्मक भाव स्वज्ञेय भाव, परज्ञेय भाव, जड़चेतनभाव, भाव अनन्त तरहके हैं। विस्तारका कोई पार नहीं।

संक्षिप्तसे उपयोगी भाव ये हैं। आत्मा चेतन, देह अचेतन दो ही भाव समझने चाहिए।

अलौकिक, लोकातीत भावका चिकिरसामें (भौतिक बादमें) अनुपयोग ही है।

गच्छतः खलनं कापि भवत्येव प्रमादतः।

हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः ॥

आजके डालडायुगमें जो अनेकानेक बीमारियाँ अकस्मात् पैदा हो जाती हैं, उन सभी को

कृष्ण-गोपाल की गम्भीर चुनौती

पाचन सुधा

उदर की ऊष्मा, तज्जनित उदरस्थ अवयवों की अव्यवस्थिततासे होने वाली समस्त

बीमारियाँ इसके सेवनसे भाग खड़ी होती हैं। जैसे—

मलावरोध ही से—

★ ववासीर

★ यकृत-प्लीहावृद्धि

★ गुल्म

★ आमग्रहणी

★ अजीर्ण

★ आम्रातिसार

— एवं —

पेटमें गैस की उत्पत्ति होती है। उन सबों को 'सुधा' की तरह 'पाचन सुधा' दूर कर देती है।

परीक्षा प्रार्थनीय है।

कोष्ठ बद्धता

ले०-वैद्यवाचस्पति श्री डा० निशिकान्त बी० ए०,

ए० एल्० आई० एम० (मद्रास)

प्रोफेसर--श्री मस्तनाथ आयुर्वेदिक कालेज,

पो० आ० अस्थल बोहर, रोहतक (पंजाब)



कोष्ठबद्धतासे हमें मलके शरीरमें स्वभावसे अधिक काल तक ठहरने, मात्रासे कम निकलने और कष्टसे निकलनेका भान होता है। सामान्यतया यदि किसीको ४८ घण्टे तक मल न उतरे तो उसे कोष्ठबद्धता समझना चाहिये।

कोष्ठबद्धताका सर्वप्रथम और प्रमुख कारण हीन और मिथ्या आहार है। उपवास, व्रत आदिमें अथवा कई प्रकारके रोगोंमें जहां रोगी आहार कम खाता हो, कोष्ठबद्धताका होना स्वाभाविक होता है। अन्त्रमें मलके कम मात्रामें होनेसे अन्त्रकी स्वाभाविक आकुञ्चन गति मन्द पड़ जाती है, जिससे मलके आगे जानेमें देर-लगती है और मल अन्त्रमें चिरकाल तक पड़ा रहता है।

आहारका बहुत रुक्ष होना अथवा आहारमें अशोषणीय द्रव्योंकी कम मात्रा होना भी कोष्ठबद्धताका एक कारण है। रुक्ष आहारसे भोजनमें द्रवता नहीं आ पाती और इस प्रकारका अन्न अन्त्रमें सुगमतासे गति नहीं कर पाता।

यही प्रक्रिया वृकों, त्वचा तथा फुफ्फुसों द्वारा किसी भी कारणसे तरलके अधिक निकलनेसे उत्पन्न हो जाती है। इस अवस्थामें अन्न ग्रन्थियोंसे इतना स्राव ही नहीं हो पाता जिससे कि अन्त्रमें स्वाभाविक आर्द्रता आसके। इससे भी मलकी स्वाभाविक गतिमें रोधके कारण कोष्ठबद्धता हो जाती है।

ऐसे ज्वरोंमें जहां पसीना अधिक आये, कोष्ठबद्धता अवश्य दृष्टिगोचर होती है। बहुत अधिक शारीरिक परिश्रम करने वाले लोगोंको जो सारे दिन पसीनेसे भीगे रहते हैं, यदि किसी कारण कम जल पी सकें तो उन्हें भी निश्चित रूपसे कोष्ठबद्धता हो जाती है।

कोष्ठबद्धताका दूसरा प्रमुख कारण पाचक रसोंका पूरी मात्रामें न बनना अथवा किसी कारणसे अन्त्रमें न पहुँच सकना है। कई लोगोंमें विभिन्न कारणोंसे पित्त तथा अन्य पाचक रसोंका निर्माण ही कम मात्रामें होता है, इससे भी अन्त्रोंमें आहारका पाचन तथा मलकी गतिमें बाधा पड़ती है और कोष्ठबद्धता हो जाती है।

सारा दिन बैठकर काम करने वाले व्यापारी लोगोंमें लेखकों और ऐसे ही अन्य पुरुषोंमें जो कि खुली हवामें व्यायाम आदि नहीं करते, उदर तथा अन्त्रकी मांसपेशियां प्रायः शिथिल हो जाती हैं। प्रसवानन्तर स्त्रियोंमें भी यही अवस्था देखी जाती है। उनके उदरकी मांसपेशियां सहसा ही ढीली पड़ जाती हैं और उन्हें भी कोष्ठबद्धता हो जाती है। जीर्ण ज्वरों, हृदय तथा वृक्कजन्य शोथमें भी अन्त्रकी मांस पेशियोंके ठीक प्रकारसे पोषण न होनेसे उनमें शिथिलता आजाती है। हिस्टीरिया मनोविभ्रम आदि मानसिक रोगोंमें तथा वात संस्थानकी दुर्बलताके कारण भी कई बार अन्त्रमें ढीलापन आजाता है।

कभी कभी बहुत तीक्ष्ण आहार यथा बहुत मिरचें, तैल, खटाई, शराब आदिके निरन्तर प्रयोगसे भी अन्त्रमें निरन्तर क्षोभकी अवस्था बनी रहती है। जो अन्तमें अन्त्रमें शिथिलताका कारण बनती है।

कोष्ठबद्धताका एक अन्य कारण आए हुए मलके वेगको रोकना अथवा समयपर मलका त्याग न करना है। कई बार गुद विदार, अर्श, भगंदर तथा अन्य वस्तिके रोगोंमें रोगी मल त्यागके समय होने वाली पीड़ाके कारण भी मलके आये हुए वेगको रोकता है। इससे मल अधिक समय तक मलाशयमें रहकर सूख जाता है और कोष्ठबद्धताका कारण बनता है।

किसी किसीमें अन्त्रसे सम्बन्धित, परन्तु अन्त्रसे बाहर किसी अङ्गके शोथमें भी अन्त्रमें संकोच हो

जाता है। यथा पित्ताशय अशमरीमें, उपान्त्र शोथ आदिमें। इस अवस्थामें कोष्ठबद्धता दृष्टिगोचर होती है।

लक्षण

एक प्रकारके लक्षण तो कठोर मलके मलाशयमें संचित होने और उस संचित मलके समीपवर्ती अंगोंपर दबाव डालनेके कारण उत्पन्न होते हैं। यदि इस कठोर मलका दबाव पौरुष ग्रन्थिपर पड़े तो इससे स्वप्नदोष होने लगता है तथा मूत्रके साथ श्वेत वर्णका गाढ़ासा पौरुष ग्रन्थिका स्राव निकलने लगता है।

नीचे पाँचकी ओर आने वाली रक्तवाहिनियोंपर दबाव पड़नेसे पाद शोथ हो जाती है और पाँच ठण्डेसे रहने लगते हैं।

गुदाके ऊपर भार पड़नेसे वहाँकी शिराओंके दब जानेके कारण कभी कभी अर्श रोग हो जाता है। त्रिक प्रदेश (जहाँसे कि निम्न शाखाओंके लिये वातिक तन्तु निकलते हैं और जो वात संस्थानका एक मुख्य केन्द्र है) पर दबाव पड़नेसे पाँच आदिका सुन्न रहना, जंघा आदिमें विविध वात वेदनाएं अथवा गृध्रसी आदि वायु रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

दूसरे प्रकारके लक्षण मलके अन्त्रमें देर तक पड़े रहनेसे उत्पन्न होते हैं। मलके अन्त्रमें देर तक पड़े रहनेसे कई प्रकारके विष उत्पन्न हो जाते हैं, जो रक्तमें मिलकर शरीरपर हानिकर प्रभाव डालते हैं। इनसे प्रायः रोगीको भूख ठीक प्रकारसे नहीं लगती, भोजनमें रुचि नहीं होती, मुँहका स्वाद बुरा सा रहता है और जिह्वा मलयुक्त रहती है।

कभी कभी उदर शूल, आध्मान, हृदयकी धड़कन, श्वास लेनेमें कष्टका अनुभव होना, आँखोंके आगे काले काले तारेसे दीख पड़ना, मन्द ज्वर, पाण्डु और धातु क्षीणताके लक्षण भी दिखाई देते हैं। उपरोक्त लक्षणोंके अतिरिक्त रोगीको किसी काममें बरसाह नहीं होता, उसका स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है और कभी कभी शरीरपर पिड़काएँ ब्रणादि भी उत्पन्न हो जाते हैं।

चिकित्सा

छोटे छोटे दूध पीने वाले बच्चोंमें जहाँसे कि एक बच्चा साधारणतः चार बार दिनमें दूध पीता है, वही रोगीको भोजनमें जल

दो दिनसे शौच न हुआ हो, आरम्भमें औषध प्रयोग न करते हुए गुदामें एक छोटीसी स्नेहाक्त साबुनकी बत्ती, ग्लिसरीनकी छोटी बत्ती अथवा एक तैल भरा पिचु ही, छोटी अंगुलीसे गुदामें दे देनेसे तत्काल ही शौच हो जाता है। फिर अन्त्रसे मलको निकालने के लिये यदि आवश्यक हो तो ४-६ माशे शतपुष्पिकादि क्वाथका काढा बनाकर, थोड़ी खाँड मिलाकर बच्चेको दिनमें एक दो बार देनेसे कोष्ठ शुद्धि हो जाती है।

डाक्टर लोग ऐसी अवस्थामें १ ग्रेन कैलोमल और ५ ग्रेन सोडा बाइ कार्ब मिलाकर इसकी चार मात्रा बनाकर तीन तीन घण्टे बाद बच्चेको देते हैं। इससे भी विरेचन होकर बच्चेकी कोष्ठ शुद्धि हो जाती है।

अन्न खाने वाले बच्चोंकी भी उपरोक्त क्रमानुसार चिकित्सा हो सकती है। अथवा इन्हें पञ्चसकार, पंचसम और मधुर विरेचन चूर्ण आदि एक दो माशा की मात्रामें दिनमें दो तीन बार दे सकते हैं। वह चूर्ण इतने अरुचिकर न होनेसे बच्चे इन्हें सुगमतासे खा जाते हैं। एरण्ड स्नेहका प्रयोग अरुचिकर अवश्य है, परन्तु बच्चोंके लिये दो चार ड्रामकी मात्रामें दूधके साथ दिये जानेपर बहुत लाभकारी सिद्ध होता है।

युवकोंके लिये नवीन कोष्ठबद्धतामें पहले बस्ति देनी चाहिये। यह साधारण एनीमा अथवा किसी त्रिफलादि क्वाथसे सिद्ध की जा सकती है। इससे मलाशयसे संचित मलके निकल जानेपर आवश्यकता अनुसार उसे कोई पञ्चसकार, पंचसमादि चूर्ण चार छै माशाकी मात्रामें या सुख विरेचन वटी (जयपालशुद्ध १ भाग, हरीतकी चूर्ण ६ भाग, चांगेरी रसमें खरलकर दो दो रतीकी गोलियाँ बना लें) एक दो गोलियाँ रातको दूधके साथ देनेसे प्रातःकाल भलीभान्ति कोष्ठ शुद्धि हो जाती है। अश्वकज्जुकी रस ३ रत्ती की मात्रामें रातको दूधसे लेनेपर भी प्रातः भलीभान्ति शौच हो जाता है।

जीर्ण कोष्ठबद्धतामें चिकित्सकको निम्न बातोंकी ओर ध्यान देना आवश्यक है:—

सबसे पहले तो रोगीके आहारकी ठीक प्रकारसे

की कमी हो तो रोगीको प्रातःकाल उठते ही, बासी जल और रातमें सोनेसे पूर्व गर्म जल पीनेका अभ्यास डाल देना चाहिये। भोजन खानेसे आध घण्टा पहले भी जलकी कुछ मात्रा पी लेनेसे जलकी कमी से होने वाली कोष्ठबद्धता जाती रहती है।

रुग्णावस्थामें भी रोगीको उचित मात्रामें जल देते रहना चाहिये। चरकके वचनानुसार रोगीको किसी भी अवस्थामें, जलका पूर्ण रूपसे निषेध नहीं करना चाहिये। इससे रोगीमें जलकी कमी बननेका भय न रहेगा।

यथा सम्भव जीर्ण कोष्ठबद्धतामें रोगीको विरेचक औषधियोंका प्रयोग नहीं करना चाहिये। जहां तक हो सके उसे अपने आहार-विहार आदिको सुधारनेका प्रयत्न करना चाहिये। रेचक औषधियोंके प्रयोगसे रोगीमें रोग और भी बढ़ जाता है।

प्रातः उठकर निश्चय नियत समयपर मल त्यागके लिए अवश्य जाना चाहिए, भले ही रोगीको कुछ मलत्यागका वेग प्रतीत न हो।

स्वस्थ मनुष्य यदि प्रातःकाल मधु, घृतका विषम मात्रामें निरन्तर सेवन करे तो उसे कोष्ठबद्धताका भय नहीं रहता। जीर्ण कोष्ठबद्धतामें भी रोगीके बलाबलको देखकर मधु घृतका प्रयोग करवानेसे कोष्ठबद्धता कुछ ही दिनोंमें जाती रहती है।

आहारमें अशोषणीय पदार्थोंकी कमीसे होने वाली कोष्ठबद्धतासे, रोटी बिना चौकर निकाले आटेकी खानी चाहिये और भोजनमें सलाद, गाजर, मूली, ककड़ी, टमाटर आदिकी उचित मात्रा मिला देनी चाहिये। फलोंको आहारमें उचित स्थान देना भी इसी लिए आवश्यक है। ऐसी अवस्थामें इसबगोल, तुलसीके बीज (तुलसीबीज) आदि पदार्थ जो बिना पचे ही शरीरसे मलके साथ बाहर निकल जाते हैं, का प्रयोग करनेसे भी कोष्ठबद्धतामें लाभ होता है।

आहारकी उचित व्यवस्था करनेके साथ साथ रोगीको स्वास्थ्यप्रद नियमोंपर चलनेके लिए प्रेरित करना चाहिए। रोगीको प्रातः सायं भ्रमण, मात्रोचित व्यायाम आदि करनेके लिए परामर्श देना चाहिए।

प्राणायाम और कई प्रकारके यौगिक आसन भी इस अवस्थामें रोगीको लाभप्रद सिद्ध होंगे। व्यायाम आदिसे उदरकी मांस पेशियोंमें बल आता है, अन्त्रकी शिथिलता दूर होती है, जिससे कोष्ठबद्धतामें लाभ होता है।

पाचक रसोंकी न्यूनतासे होने वाली कोष्ठबद्धतामें, यदि वह किसी अन्य रोगके कारण है, तो उसकी चिकित्सा करनी आवश्यक होती है। परन्तु यदि कोष्ठबद्धता ही पाचक रसोंके कम बननेमें कारण हो और रोगीको पाण्डु, यकृत, प्लीहा विकार आदि भी साथ हो तो रोगीको नित्य कुछ दिन तक विश्रुता-हरण रस प्रातः काल तीन रत्तीकी मात्रामें बलाबल देखकर देनेसे दो तीन दिनोंमें उसके कोष्ठका शोधन हो जाता है। फिर उसे चार छै दिन तक सिद्धमेघ मणिमालाका सरल विरेचन चूर्ण चार चार माशोंकी मात्रामें प्रातः सायं गर्म जलादि उचित अनुपातसे देते रहना चाहिये। इससे पाचक रसोंकी मात्रा बढ़ती है और मलका भी अनुलोमन होता रहता है। धीरे-धीरे विरेचन चूर्णकी मात्रा घटाकर बन्दकर देनी चाहिये।

अन्त्र शिथिलतासे होने वाली कोष्ठबद्धतामें यदि भ्रमण, व्यायामादिसे भी पर्याप्त लाभ न हो तो रोगीको तीव्र रेचक औषधियोंका प्रयोग न करते हुए अनुवा-सन और निरुहण वस्तियोंका प्रयोग कुछ दिन करवाना तथा साथमें थोड़े दिन पञ्चसकार ३ माशोंका हिंघ्रक डेढ़ माशा और अघ्नितुण्डी दो रत्तीकी दो तीन मात्राएँ पांच सात दिन तक देते रहना चाहिये। फिर हिंघ्रक और आरोग्यवर्धनीका प्रयोग कुछ दिन करते रहनेसे कोष्ठबद्धता जाती रहती है।

गर्भिणीकी कोष्ठबद्धतामें भी तीव्र औषध प्रयोग न करते हुए उपरोक्त क्रम लाभकारी सिद्ध होता है। यदि गर्भाशयके भारसे पाँचमें शोधादि भी साथ हों तो गर्भाशयको थोड़ा वस्तिसे ऊपरको उठाकर वस्ति प्रदेशपर एक पट्टी बांध देनेसे फिर गर्भाशय नीचे मलाशय अथवा निम्न रक्त वाहिनियोंपर दबाव नहीं डालता और गर्भिणीको लाभ होता है।

यदि कोष्ठबद्धताके जीर्ण होनेपर रक्त भी दुष्ट हो गया हो और रोगीके शरीरपर पिडिकाएँ आदि हों

तो रोगीको स्नेहन करवाकर फिर इच्छाभेदी रस, अभयादि मोदक आदिके योगसे कोष्ठ शोधन करानेके अनन्तर आरोग्य वर्धिनी, कैशोर गुग्गुलु आदिका अमृतवल्लरी कषायके साथ १०-१५ दिन तक निरन्तर प्रयोग करवाना उचित है। इस क्वाथसे निरस्य रेचन होता है और कुछ ही दिनोंमें रक्त तथा शरीरकी शुद्धि हो कर व्रणादि नष्ट हो जाते हैं।

यदि कोष्ठबद्धताके साथ जंघाओंमें पीड़ा गृध्रसी आदि उपद्रव हो तो रोगीको स्नेहन करनेके पश्चात् कुछ दिन निरस्य एरण्ड स्नेहकी उचित मात्रा रास्ना सप्तक आदि क्वाथके साथ प्रातःसायं देते रहना चाहिये। लेखमें वर्णित चूर्णादिके योग नीचे दिये जा रहे हैं। जिससे पाठकोंको लाभ हो सके।

१. पंचसकार—

सैन्धानमक, सनाय, बड़ी हरड़का छिलका, सोंठ और सौंफ समान भाग लेकर कूटकर चूर्ण बना लें।

मात्रा—रोगीके बलाबल अनुसार दो माशेसे छः माशे तक।

२. मधुर विरेचन चूर्ण—

शुद्ध गन्धक, मुलहठी, सौंफ, सनाय और खाण्ड

क्रमशः १-२-३-४-५ भाग लेकर चूर्ण बना लें।

मात्रा—बलाबल अनुसार दो से छै माशे तक।

३. विश्वतापहरण रस—

शुद्धपारद, पिप्पली, कुचला, शुद्ध गन्धक, हरीतकी, कटुकी, त्रिवृत्, ताम्रभस्म और शुद्ध जयपाल सब समभाग लेकर धत्तूर पत्र स्वरससे मर्दन कर एक-एक रत्तीकी गोलियां बना लें।

मात्रा—एकसे तीन गोली तक।

४. सरल विरेचन चूर्ण—

सौंफ, सैन्धानमक, सौंचलनमक, दोनों जीरे, जौ खार, त्रिफला, त्रिकटु, टङ्कन और इलायची सब्ज, समभाग और सनायका चूर्ण सबके बराबर कूटकर चूर्ण बना लें।

मात्रा—एकसे चार माशे तक गर्म दूध अथवा जलसे सोते समय।

५. अमृतवल्लरी कषाय—

कटुकी, निम्बछाल, इन्द्रायण, कण्टकारी, सारिवा रत्न ज्योत और हरीतकी समभाग लें, और काथ बना लें

मात्रा—१ से २ तोले।

इस गर्मी की मौसम में शीतलता प्रदान कर पेटको साफ

— एवं —

रक्तरथ रक्खने वाली

आमलकी रसायन

— सेवनकर —

अम्लपित्त, विदग्धाजीर्ण एवं पित्तोत्पत्ति को नष्ट कीजिये।

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

रजसाधिक्य, MENORRHAGIA.

लेखक—डा० श्री द्वारका प्रसाद नामदेव.

D. H. B., L. M. S., M. I. M. S.,

चिमन क्लिनिक, न्यू देवास रोड ४९, इन्दौर ३.



यह एक स्त्री व्याधि है जो योनिरोग श्रेणीमें स्थान रखती है। याने इसका स्थान नारी रोगों (Gynecology) में है। यह बहुत कठिन व्याधि है, जिसमें स्त्रियाँ अति दुर्बल हो जाती हैं तथा उनके नीरोग होनेमें काफी समय लगता है।

परिचय—ऋतुकाल में योनिसे अत्यधिक रक्त जाना मतलब चार-पाँच दिनोंकी अपेक्षा सात आठ दिन लगातार रक्त बहना या महिनेमें दो-चार बार ऋतु स्राव होना ही रजसाधिक्य, अतिरजः, आर्तवाधिक्य या मेनोरेहेजिया (Menorrhagia) कहलाता है।

लक्षण—इस रोगमें बदनमें दर्द, आलस्य, सिरदर्द, कमरदर्द, तलपेटमें दर्द (Pain in Pelvic Region) साथ ही बन्ध्यत्व दोनों स्तनोंका बढ़ आना, कब्ज, ज्वर बोध आदि लक्षण दिखाई देते हैं।

इस रोगके अधिक बढ़ जानेपर दुर्बलता, भ्रम, मूर्च्छा, तन्द्रा, प्रलाप, वृष्णा, दाह और शरीरमें पीलापन आदि लक्षण अधिक देखे जाते हैं।

आचार्य माधवने भी इसके बारेमें लिखा है—

तस्यातिवृत्तौर्दौर्बल्यं भ्रमो मूर्च्छा मदस्तृषा ।

दाहः प्रलापः पाण्डुत्वं तन्द्रा रोगाश्च वातजाः ॥

माधवनिदानम् ॥

कारण (Etiology)—अति सहवासके कारण,

अप्राकृतिक मैथुनसे, अधिक सन्तान पैदा करनेसे, उत्तेजक आहार पानसे, अधिक गर्म दवाओंके सेवनसे, बहुत पुष्टिकर भोजनसे, ऋतुकालमें मैथुन, जरायुकी बीमारी स्नायविक उत्तेजना, डिम्बप्रणालीमें कैसर वृक्करोग (Bright's disease) आदि कारणोंसे इस रोगकी उत्पत्ति होती है।

पण्डित ज्वाला प्रसाद जी मिश्रने अपने 'वैद्यरत्न' नामक ग्रन्थमें इस रोगका इस प्रकारसे विवेचन किया है।

अतिमार्गातिगमन प्रभूतसुरतादिभिः ।

प्रदरो जायते स्त्रीणां योनिरक्तस्रुतिः पृथुः ॥ वै. र. ॥

अर्थ—अतिमार्ग चलनेसे, बहुत मैथुन करनेसे स्त्रियोंको यह रोग होता है, इसमें योनिमार्गसे अधिक रक्त बहता है।

माधवआचार्यने अपने माधव निदान ग्रन्थमें इस प्रकार दर्शाया है—

विरुद्धमद्याध्यशनादजीर्णा-

द्रुर्भ्रमपातादति मैथुनाच्च ।

यानाध्वशोकादतिकर्पणाच्च,

भाराधिकत्वाच्छयनादिवा च ।

तं श्लेष्मपित्तानिलसन्निपातै-

श्चतुष्प्रकारं प्रदरं वदन्ति ॥

॥ मा. ति. ॥

प्राकृतिक चिकित्सा—अधिक रक्तस्राव होनेके समय तलपेटपर पानीकी पट्टी चढ़ानेसे काफी लाभ देखा जाता है।

चिकित्सा—

१. सुवर्ण मालिनी वसन्त (बृहत् वैद्यक)

योग—सुवर्णभस्म, प्रवाल, हिंगुल, कालीमिर्च, कस्तूरी, गौरोचन, नागभस्म, वंगभस्म, केसर, मौक्तिकभस्म, पिप्पली, कलखर्पर मक्खन आदि।

गुण—इसके सेवनसे इस रोगमें बहुत अधिक लाभ देखा गया है।

दूध मिश्री या मक्खनसे।

२. प्रदरारि लोह (रस योग सागर)

योग—कुटज, मंजिष्ठा, पाठा, बेलफल, मुस्ता, धातकी पुष्प, अतीस, अन्नक भस्म, लोह भस्म आदि।

गुण—इस रोगकी सफल औषधि है।

दशमूल काथके साथ।

३. पुण्यानुग चूर्ण (भैषज्य रत्नावली),

योग—पाठा, रसांजन, मुस्ता, जम्बूल बीज, मंजिष्ठा, कमल केसर, बिल्व, लोध्र, नागकेसर, सोंठ, काली मिर्च, कुटकी, अनंतमूल, यष्टीमधु, अर्जुन छाल, कुड़ा, अतीस, मोचरस आदि।

गुण—इसरोगकी सफल औषधि है।

शहदसे, बादमें चावलका धोवन पीना उत्तम है।

४. रौप्य भस्म (औषध गुण शास्त्र)

योग—रौप्य।

गुण—इस रोगकी मुख्य औषध।

दूधके साथ।

५. तंडुलीयक मूलं हि तंडुलांबु-प्रपेषितम्।

सताक्षर्यशैलं सचौद्रं प्रपीतं प्रदरं जयेत् ॥

(वैद्यरत्न)

अर्थ—चौलाईकी जड़को चावलके पानीके साथ पीस कर उसमें रसोंत और शहद डालकर पीनेसे यह रोग दूर होता है।

६. एण्टी ब्लड टेबलेट

(Anti-Blood-Tablets)

निर्माता—इन्दौर फार्मासिउटिकल्स् न्यूदेवास रोड
इन्दौर-३

योग—पाठा, मंजिष्ठा आदि द्रव्य।

गुण—इस रोगके लिए रामबाण गोलियाँ हैं।

मात्रा—२ गोली पानीके साथ

कृष्ण गोपाल का

श्री गदानक अर्क

स्त्रियों के प्रदर, गर्भाशय विकार और मासिक धर्म के विकार उपयोग्य

क हा नी

वृद्ध वैद्य

लेखक-श्री वैद्य मखनलाल शर्मा "कौशिक"
 ग्रा० ग्राचार्य



भगीरथ घरसे भोजन लेकर आया, मार्गमें विचारता आरहा था, कि आज चाचा अच्छी हालतमें अवश्य ही होंगे ।

कल वैद्यराजजीने कहा था कि शहरसे-विशेष औषधियाँ मंगा ली है तथा प्रयोग आरम्भ कर दिया है । तुम्हारे चाचा अब जल्दी ही ठीक हो जायेंगे ।

भगीरथको २ मील ही चलना था । तुरन्त औषधालयमें आ पहुँचा । चेहरेपर मन्द मुस्कान थी । आनन्दकी सुकोमल रेखाएँ भालपर क्रीड़ा कर रही थीं । विश्वास था कि आज मेरे चाचा मुझसे मधुर स्वरसे तथा मीठी बोलीमें अवश्य ही बोलेंगे ।

औषधालयके बरामदेमें चाची चिन्ताके महाघोर सागरमें डूबी हुई खड़ी खड़ी प्रभुको मना रही थी ।

वह चाचीको देखकर बोला-‘लो चाची खाना ले आया हूँ पहले खाना खा लो । मेरे प्यारे चाचाजीका स्वास्थ्य ठीक तो है ना ।’

चाचीने कोई उत्तर नहीं दिया । भगीरथको सामने देखकर अश्रुधारासे अंचलको भिगोने लगी ।

भगीरथ-‘चाची क्या हुआ । बोलती क्यों नहीं सही-सही बता दो ना ।’ चाचीकी चिन्ता मुझसे देखकर

जो मार्गमें आते हुए प्रसन्नता थी, वह औषधालयमें पहुँचते ही विषादके रूपमें बदल गयी ।

इतनेमें अन्दरसे परिचारक आता है ।

परिचारक-“भैया भगीरथ, तुरन्त वैद्यजीके घर जाकर वैद्यजीको बुलाकर लाओ । मैं चर्यामें लगा हुआ हूँ । तबियत ज्यादा खराब है ।”

सुनते ही भगीरथके शरीरमें सन्नाटा छा गया । मूर्च्छा-सी आगयी, कण्ठ सूख गया । चाचाको बिना देखे ही, दबे पांव वेचारा जैसे तैसे वैद्यजीके घर पहुँचा ।

स्पष्ट बोल भी न सका, कण्ठावरोध-सा हो गया ।

बोल सका केवल “मेरा चाचा-मेरा चाचा”

वैद्यजी-क्या हुआ ! जरा शान्तिसे कहो । धीरज धरो । क्या तुम्हारा चाचा ठीक नहीं है भगीरथ !

भगीरथ-आपको बुलाया है ।

नवयुवक वैद्यजी सज्जधज तैयार होकर औषधालय पहुँचे । तुरन्त ज्ञानचन्दको सम्हाला, परन्तु ज्ञानचन्द (भगीरथका चाचा) मरणासन्न अवस्थामें मूर्छित-सा सांस खींच रहा था । अवस्था गम्भीर थी । वैद्यजी धैर्य खो चुके, हताश हो गये यह विकट अवस्था देखकर । थे भी वेचारे अनुभव हीन । करते भी क्या ? इन्जेक्शन ही उनके सबल सफल अमोघ हथियार थे । उन्हें लगा लगाकर वे दैरान हो चुके थे । लगा भी चुके थे कई दर्जन, तनिक सा भी फायदा नहीं था ।

वैद्यजी-अन्ततः परिचारकसे बोले, तुरन्त लाओ सूची वेध बॉक्स ।

परिचारकने उन्हें बॉक्स लाकर दिया, बोला-“लीजिये साहब” ।

वैद्यजी पिचकारी उठाते हैं, २-३ एम्पुल तोड़कर मिश्रणकर सिरिंजमें दवा खींचते हैं और ज्ञानचन्दकी सिरामें चढ़ा देते हैं । अपनेको कृतकृत्य सा मान बैठते हैं । भगीरथसे कहते हैं ‘चिन्ता करनेकी बात नहीं है मैं चिकित्सा कर रहा हूँ-फल ईश्वराधीन है’ घरको जाते हुए आदेश दे गये कि दो घण्टे पश्चात्

(२)

संध्याका समय था। भगवान् भास्कर अस्ताचलको जा चुके थे। कुछ अन्धेरा-सा छा गया था। चारों ओर वातावरण शान्त सा था। केवल पासके वृक्षपर रात्रिके विश्रामके लिए आए पक्षी धुन बाँधकर बहचहा रहे थे।

भगीरथ बरामदेके एक कोनेमें बैठकर लम्बी-लम्बी सिसकियाँ भर रहा था।

भगीरथकी चाची सावित्री उसे रोता देखकर खंयं सम्हलकर उसके पास आयी। सिरपर हाथ रखकर उसे धैर्य बाँधाने लगी। भगीरथके माता-पिता मर चुके थे। चाचा चाचीका ही एक मात्र सहारा था।

चाचीने कहा 'बेटा भगीरथ ! भगवानका ही अब सहारा है। वे दीनदयाल हैं। हम गरीबोंकी अवश्य ही रक्षा करेंगे। तुम चिन्ता मत करो, धैर्य धारण करो। जैसा हमारे भाग्यमें लिखा है वह भोगना ही पड़ेगा।' इतना कहकर भगीरथको, छातीसे चिपका लिया। पुचकारा। आश्वासन दिया। अशरण-शरण भगवान्का अन्तरात्मासे स्मरण करने लगी। 'प्रभो ! तुम्हीं दीनोंके आश्रय हो। इस असहाय अबलाकी लाज रखो, मेरे भगवन् !'

सच्ची पुकार क्या नहीं कर सकती ! भगवान् पीयूष पाणिके कानोंमें यह दुःखभरी पुकार अवश्य पहुँची होगी। इधर वैद्यजी मनमें सोच रहे थे—

'मैंने तो इसको पैसे प्राप्त करनेके लिये यहाँ रख छोड़ा था, परन्तु यह तो मेरा यश लेकर जायगा, यह कदापि ठीक न होगा। अभी तक कुछ भी सुधार नहीं हुआ है आज रात्रि भी मुश्किल जान पड़ती है। पैसे तो कुछ आये नहीं, उल्टा यश और गँवाया।' उनकी आत्मा उन्हें भीतर ही भीतर जैसे नोच रही थी। घर पहुँचकर खाना खाने बैठे। परन्तु जैसे अरुचि हो गयी। थोड़ा खाकर उठ गये। चेहरा उदास था।

यह देख उनकी पत्नी सुधा कुछ मुस्कराकर बोली 'अजी आज कुछ खाना भी नहीं खाया है। चिन्तातुर से जान पड़ते हो, क्या बात हुई, जहाँ कहीं तो सही दूध ले आयी हूँ यही पीलो' दूध अपने हाथोंसे

वैद्यजीको देने लगती है कि बाहरसे आवाज आती है। 'वैद्यजी ! वैद्यजी !!'

सुधा कपाट खोल देती है परिचारकको देखकर बोली 'कहो कैसे आये इस समयमें ?'

परिचारक—वैद्यजीको बुलानेके लिये आया हूँ।

सुधा—अन्दर आजाओ। दोनों अन्दर जाते हैं।

परिचारकने ज्ञानचन्दकी स्थितिको बताते हुए कहा कि 'श्रीमानजी ! उनकी तबियत पहिलेसे भी खराब ही दिखाई देती है।'

वैद्य जी बोले—'अब क्या किया जाय ? यह तो अनावश्यक व्यथा मोल ले ली। यह बचेगा भी नहीं। यशके साथ अर्थ हानि और उठानी पड़ेगी। लो चलता हूँ और दो एक इञ्जेक्शन लगा देता हूँ।'

वैद्यजीने औषधालयमें आकर ज्ञानचन्दको एक इञ्जेक्शन और दिया। परिचारकसे बोले 'बस अब मुझे मत बुलाना। रात्रिका समय है। यदि बच जायगा तो कल सबेरे इसको अपने घर भेज दूंगा। क्यों कैलाश (परिचारक) ! ठीक है ना ?'

परिचारक—जैसे आप अच्छा समझते हैं। ठीक ही है।

उधर सावित्री अन्तरात्मासे प्रभुको पुकार रही थी। उसकी यह पुकार सच्ची थी। सावित्री उस पुकारमें इतनी तन्मय हो गयी कि बाहरकी उसे कोई सुध नहीं थी।

चाचीको बेसुध देखकर भगीरथ वहींपर फूट फूटकर रोने लगा। भगीरथकी रुदन ध्वनिसे सावित्रीको तनिक सा भान हुआ। सावित्री सम्हलकर चौकत्री हो गई बोली 'बेटा क्या करते हो ? जब हमारे पीयूषपाणि भगवान् रक्षक हैं तब भय किसका है।'

भगीरथ—पूज्य चाचाजीको देखूंगा।

सावित्री—भगीरथ, अभी नहीं, वैद्यजीने मना कर दिया है।

भगीरथ—क्यों चाची, क्यों मना कर दिया है ?

सावित्री—पता नहीं क्यों मना कर दिया।

भगीरथ—क्या मैं अपने चाचाको नहीं देख सकता ? मैं तो अभी देखूंगा।

सावित्री—अभी नहीं वेटा। बाल हठ मत करो।

भगीरथ—मैं तो देखकर ही रहूँगा।

सावित्री—अच्छा चल वेटा। (दोनों जाते हैं)

भगीरथ—(परिचारकसे) दिखाओजी मेरे चाचाजी कैसे हैं।

परिचारक—‘क्या देखना है, कल प्रातः देख लेना पेट भरके, अभी इन्जेक्शन लगाया है, निद्रा आयी हुयी है।’

भगीरथ—एक बार देख लेने दो, मेरेसे बिना देखे रहा नहीं जाता।

परिचारक—‘फिर देख लेना, भैया भगीरथ। (सावित्रीको संकेत करके) ‘देवी! खाना नहीं, खाना है तो जाओ खाना खालो।’ सावित्री आज सात ७ दिनसे निराहार थी, यह किसीको पता नहीं था। वह अन्तरात्मासे, अनन्य भावसे पीयूष पाणि भगवान्‌को पुकार रही थी।

परिचारक ज्ञानचन्दकी नाड़ी देखता है, नाड़ी का कुछ पता ही नहीं लगता। शरीर छूता है। शरीरमें शीतांग था। मनमें परिचारकने निश्चित किया कि-यह मर चुका है या अब कुछ क्षणका ही है। परन्तु वैद्यजीसे कैसे कहूँ! घर जाते समय वेमना जो कर गये थे, अब क्या करूँ?

उधर वैद्य परनी सुधा—वैद्यजीके पैरोंकी चम्पी कर रही थी। घड़ी १०½ बजा चुकी थी। सुधा, हास, परिहाससे वैद्यजीको प्रसन्न करना चाहती थी परन्तु वैद्यजीको यह सब बुरा लग रहा था। मनका रंग फीका था। बोले-

“मुझसे बेकार हास, परिहास मत कीजिये, मैं औषधालय जाकर आता हूँ। मुझे किसीने बुलाया है” औषधालय आकर, परिचारकसे कुछ-पूछना ही चाहते थे, इतनेमें ही परिचारक बोला हालत ठीक नहीं है।

वैद्यजी—‘चलो देख तो लूँ।’ देखकर गहरी सांस खींचते हैं। ज्ञान चन्दकी स्थिति गम्भीर थी। नवयुवक वैद्यजीको अनुभव था नहीं। वे किं कर्तव्य विमूढ़ थे। घड़ीने १२ बजेके घण्टे बजा दिये थे। बाहरसे आवाज आई—

“भाई अन्दर कोई हो तो आना।” किसी बुढ़का

स्वर था। औषधालय गाँवसे कुछ बाहर था, जिसके सामनेसे रास्ता चलता था।

परिचारक—(बाहर आकर) ‘कौन हैं?’

बुढ़ा वैद्य—‘एक अतिथि हूँ।’

परिचारक—‘इस समय कहाँसे पधारे हो महाराज! क्याकिया करते हो।’

बुढ़ा वैद्य—‘मैं तो साधु हूँ। घूमता ही रहता हूँ। कल्याणपुरसे आया हूँ। आयुर्वेदका प्रचार, प्रसार किया करता हूँ। वैद्य हूँ। थक गया हूँ। समय ज्यादा होगया है। विश्राम चाहता हूँ। यह सामनेका भवन किसका है?’

परिचारक—‘यह तो आयुर्वेदिक चिकित्सालय है। इतनेमें वैद्यजी बाहर लालटेन लेकर आजाते हैं।’

वैद्यजी—‘कौन है रे- कैलाश!’

कैलाश—‘एक पुराने वैद्यजी महाराज पधारे हैं।’

वैद्यजी आगे आकर नमस्कार करके बुढ़ा वैद्यजीको सादर अन्दर लाते हैं। प्रेमसे बैठते हैं।

बुढ़ा वैद्य—‘अभी तक आप लोग जागते क्यों रहे हैं? शयन नहीं किया। बारह बज गये हैं।’

नवयुवक वैद्यजी—‘क्या सोयें महाराज! इस गाँवमें कोई साधन नहीं। छोटा सा गाँव है। शहर यहाँसे बहुत दूर पड़ता है। न समयपर आवश्यक औषधियाँ मिल पाती हैं। एक सन्निपातका रोगी था। वह कालका ग्रास बन रहा है। इसीसे बैठे हैं। कोई आशा नहीं मालूम पड़ती।’

बुढ़ा वैद्य—‘क्या मुझे दिखा सकते हो, वह रोगी!’

वैद्यजी—‘महाराज! आपने भोजन भी नहीं किया होगा। घरपर पधारिये, पहिले भोजन स्वीकार कीजिये।’

बुढ़ा वैद्य—‘नहीं नहीं मैं अकालमें भोजन नहीं करता। फिर जब एक व्यक्ति मृत्युके पाशमें पड़ा हो तब भोजन कैसा!’

वैद्य—‘जैसे महाराजकी इच्छा।’

बुढ़ा वैद्य रोगी अच्छी तरहसे देखते हैं सन्निपातके पूरे लक्षण मिल रहे हैं। मूर्छित अवस्थामें है। बोले- वैद्यजी! आपका रोगी स्वस्थ हो सकता है जरूरी

हवा कीजिये। है कुछ औषधियाँ?

वैद्य—(आश्चर्यसे) महाराज ! परीक्षा अच्छी तरहसे कर लीजिये, आपके पास नूतन साधन भी नहीं हैं। इसकी सूक्ष्म परीक्षा, नये ढंगसे सावधानी पूर्वक कीजियेगा।

वृद्ध वैद्य—भाई मैंने तो अच्छी तरहसे देख लिया है।

वैद्य—मैं तो सब तरहसे औषध व्यवस्था कर चुका हूँ, अब और क्या करूँ ? अब तो आप ही अपनी करामात बताइये महाराजजी !

वृद्ध वैद्य—अच्छा ठीक है। सोंठ, मिर्च, पीपल, तुलसी पत्तियाँ, तुरन्त मँगाकर क्वाथ तैयार करवाइये।

परिचारक क्वाथ तैयार करके लाता है।

वृद्ध वैद्य शान्ति पूर्वक अपने भोलेसे नस्य निकालकर नस्य देते हैं तथा अञ्जनका प्रयोग करते हैं।

नस्य और अञ्जन प्रयोगसे ज्ञानचन्द्रकी बेहोशी दूर होती है। वैद्यजी अपने ही हाथसे कपूर और कटु तैलकी हृदय प्रदेशपर मालिश करने लगे, छातीपर गर्म गर्म सेक किया एवं पादतलोंमें सोंठके चूर्णका घर्षण करवाया।

कपूर तैलकी मालिशसे जकड़ा हुआ हृदय कुछ स्वस्थ गतिमें आया। नाड़ी देखी, सुधार था। कुछ संतोष हुआ।

अब उक्त तुलसी वाली क्वाथकी एक चम्मच पिलाई गयी, दवा अन्दर गयी, प्रभाव-सा दृष्टिगोचर हुआ। नेत्रोंमें परिवर्तन हुआ। थोड़े समयमें शारीरिक चेष्टाएँ भी होने लगी। यह सब नवयुवक वैद्यजी देख रहे थे। उनका गर्व गल चुका था। आजकी वैज्ञानिक औषधियोंके प्रति घृणा-सी हो रही थी।

वृद्ध वैद्यजीने कहा—वैद्यजी ! अब तो ठीक है ना आपका रोगी !

वैद्य—हाँ महाराज क्या कहूँ आपसे, अब तो स्वस्थ नजर आता है। क्षमा कीजिये बालापराध।

वृद्ध वैद्य—इसमें क्षमाकी क्या बात है बिना अनुभवके तो ऐसा ही होता है। खैर ! अब इसकी-रस चिकित्सा कीजिये। मकरध्वज १ रत्ती, मल्ल-सिन्दूर १ रत्ती, अम्रक भस्म १ रत्ती, सुहागा-फुला २ रत्तीकी एक मात्रा बनाकर तुलसी स्वरसमें मधु मिलाकर चटा दीजिये।

एक चम्मच पिला दीजिये। बस अब कष्टकी घड़ी टल गयी, चिन्ताकी कोई बात शेष नहीं रही।

वैद्य—महाराज ! आप दैव योगसे पधार गये। यह अच्छा हुआ, अन्यथा अर्थका अनर्थ होगया था। महाराज मैं आपका बड़ा कृतज्ञ हूँ, अल्प बुद्धिके लिये क्षमा चाहता हूँ।

वृद्ध वैद्य—सब प्रभुकी इच्छा है। क्या समय हुआ होगा।

वैद्य—घड़ी देखकर पांच बज गये, महाराज।

वृद्ध वैद्य—अच्छा मैं तो शौचादि क्रियासे निवृत्त होऊँगा।

वैद्यजीने परिचारकसे कहा—महाराजजीकी आवश्यक व्यवस्था करदो।

परिचारक—‘सब व्यवस्था अभी कर देता हूँ।’ महाराजजी इधर, स्नानादि सब दैनिक क्रियाओंसे निवृत्त हो जाते हैं। इधर सावित्री भी निवृत्तहोकर प्रभु आराधनामें बैठ जाती है।

प्रभु उपासना करके प्रसन्न मुद्रामें सावित्री वैद्यजी के पास भगीरथ सहित आई और विनयसे बोली। ‘श्रीमान् वैद्यराजजी, भगीरथके चाचाके पास क्या अब जानेकी आज्ञा है ?’ सावित्रीको रात्रिकी घटनाका कुछ पता न था। परन्तु प्रभु कृपासे प्रसन्न चित्त थी।

वैद्यजी बोले—रात भर मेरा यमदूतसे महाघोर युद्ध हुआ। आखिर मैंने ही सफलता प्राप्त की। खूब प्रेमके साथ मिलिये।

सावित्री भगीरथको साथ लेकर पहुँची। ज्ञानचन्द्र प्रसन्न मुद्रामें था। कष्ट मिट चुका था। सावित्री अपने प्रियतमको निहार कर बड़ी प्रसन्न हुई और वैद्यजीके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने लगी। इतनेमें वृद्ध वैद्यजी भी आ गये। ज्ञानचन्द्रको एक शौच हुआ। पेटका सब रोग बाहर आ निकला। ज्ञानचन्द्र अब बातचीत करने लग गया था। अपनेको पूर्णस्वस्थ सा अनुभव कर रहा था। प्रातः कालके १०½ बज चुके थे सब भोजनसे निवृत्त हो चुके थे।

वृद्ध वैद्य—अच्छा वैद्यजी अब मैं जाता हूँ कष्टके लिये भूलता हूँ।

स मा चार स मी च रा

श्री नारद

अपने सुपरिचित आकाश मार्गसे परिभ्रमण करते हुए जब इन्हीं दिनों नारदजी भारतके ऊपरसे जाने लगे तो उन्हें भारी कोलाहल सुनाई पड़ा। इसको सुनकर वे स्वाभाविक ही उसकी ओर आकृष्ट हो कुछ नीचे उतरे तो उन्होंने देखा कि अन्तरिक्षमें असंख्य जीव एकत्र हैं और नीचे जानेके लिए लालायित हैं। पृथ्वीपर ज्ञात हुआ कि आज इस घोर कलियुगमें देवलोग तो चाहे पवित्र भारत-भूमिमें जन्म लेनेके लिए उरसुक हो या न हों परन्तु वे लोग (जीव) तो इस पुण्य भूमिमें जन्म लेकर यहांकी धूलिमें क्रीडा करनेके लिए पहिलेके समान ही उरसुक एवं लालायित हैं। आपत्ति यह है कि नीचे जानेके लिए, भारतमें जन्म लेनेके लिए, उन्हें कोई मार्ग ही दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है। इस पुण्य भूमिके वैज्ञानिक महापुरुष विविध अस्त्र शस्त्रों और उपायोंसे उनके इस आगमनको बड़ी तत्परता और भयङ्करतासे अवरुद्ध कर रहे हैं। जीवोंमें व्याकुलता बढ़ रही है और वे सब मिलकर इसका प्रतिकार करनेकी सोच रहे हैं। यह कोलाहल उनकी इस निमित्त आयोजित सभासे ही उठ रहा था।

नारदजी ने उन्हें विविध प्रकारसे सान्त्वना देते हुए शान्ति बनाए रखनेकी सलाह दी और भारत भूमिमें जाकर समस्त हलचलसे उन्हें अवगत करानेका आश्वासन दिया।

उन्होंने यहां आकर जन्म निरोधका जो प्रबल एवं प्रचण्ड अभियान देखा उसके समाचारोंका सार ही उन्होंने सबसे प्रथम प्रेसको देना उचित समझा है। जिससे कि अन्तरिक्षस्थित व्याकुल जीवगण अपना भावी मार्ग निश्चित कर सकें। उसके अनन्तर अन्य समाचार दिये जा रहे हैं।

परिवार नियोजन अभियान--

“ज्ञात हुआ है कि सरकारने केरल प्रदेशमें परिवार नियोजनके निमित्त एक तूफानी कार्यक्रम चालू किया है। इस कार्यक्रममें ५० सहस्र लिप्स लूप (Lippes loop, Intra-Uterine Contraceptive Device) का उपयोग किया जावेगा। तीस सहस्र आपरेशन वन्ध्यत्व सम्पादनके लिए मार्च १९६६ तक किये जावेंगे। इस वर्ष अप्रैल माससे लगभग २५०० आपरेशन प्रतिमास किये जा रहे हैं।

केन्द्रीय सरकारके परिवार नियोजन निर्देशक श्री कर्नल आर० एल० रैना और फोर्ड फाउण्डेशनके श्री डा० एम० डब्ल्यू० फ्रीमैनने केरलके सरकारी अधिकारियोंसे लिप्स लूप (Intra Uterine Contraceptive Device) लगानेके तूफानी अभियान की व्यवस्था करनेके सम्बन्धमें विचार किया है। कर्नल रैनाने बताया कि केरलमें कुछ सौ ‘लूप’ लगाए जा चुके हैं और उसका परिणाम विशेष उरसाह वर्धक है। उन्होंने बताया कि इस आई० यू० सी० डी० (Intra Uterine Contraceptive

Device) लगानेका कार्यक्रमसे लाभ प्राप्त करानेकी सुविधा वहीं हो सकती है जहाँ कि शिक्षित महिला डाक्टर उपलब्ध हैं। इस कार्यक्रमको चलानेके लिए राज्यमें विभिन्न स्थानोंमें आवश्यक कार्यकर्ता प्राप्त हैं।

इस कार्यक्रमके परिणामोंका मूल्याङ्कन करनेका कार्य केरल विश्वविद्यालयके स्टेटिस्टिकल् डिपार्ट-मेन्टके विभिन्न समुदायोंके सामाजिक सम्बन्धके अनुसन्धान करनेवाले विभागने अपने हाथमें लिया है।

पश्चिमी बंगालमें 'लिप्सू लूप' के प्रयोगके द्वारा अच्छी सफलता प्राप्त की गई है। उक्त प्रदेशके स्वास्थ्य विभागके एक अधिकारीने सम्वाददाताओंको बताया है कि ७५०० व्यक्तियोंपर किए गए प्रयोगोंमें ९९ प्रतिशतमें सफलता प्राप्त हुई है। इन 'लूप्स' के बिना मूल्य वितरणकी व्यवस्था की जा रही है।"

ठीक ही है। जब देशको जनसंख्या बढ़नेसे भय है और उस वृद्धिसे खाद्यकी भयंकर कमीकी आशंका है तब संख्याको कम रखनेका उपाय करना ही है। इसका स्वाभाविक उपाय छोटे बालकोंसे लेकर वृद्धों तकको संयमकी शिक्षा देना, उसका प्रसार करना और उसके द्वारा राष्ट्रके दृष्टिकोणको बदलना है।

यह एक समझमें न आने वाली बात है कि एक ओर तो सरकार ऐसे कार्योंको बढ़ावा देती है जो कि राष्ट्रके छोटे से छोटे बालकोंमें काम और यौन सम्भोग की प्रवृत्ति उत्तेजित करते हैं। जिसके कारण प्रत्येक बालक "तेरे मनकी जमुना और मेरे मनकी गङ्गा" का सङ्गम होनेकी प्रतीक्षा जीवन प्रभातकी प्रथम किरणोंके साथ ही करने लगता है। उधर दूसरी ओर इतने कृत्रिम उपायोंका अवलम्बन किया जाता है। इसका परिणाम कभी सन्तोष जनक नहीं हो सकता।

यदि परिवार नियोजन अनिवार्य ही समझा जा रहा है तो हम वासेक्टोमी (Vasectomy) नपुंसकीकरण और वन्ध्यत्व सम्पादक (Sterilization) आपरेशनोंके द्वारा पुरुषों और स्त्रियोंको सदाके लिए नपुंसक और वन्ध्या बनानेकी अपेक्षा गर्भ निरोधक उपकरणोंके उपयोगको अधिक अच्छा समझेंगे। प्रकृति क्या, कब और कैसे कर सकती है इसकी

सम्भावनाओंको मानव, सम्भवतः, अभी तक पूर्णतः नहीं जान पाया है।

गर्भपातको वैधानिक रूप देना—

और भी सुनिये—

"इस समय देशके सन्तति नियमन विशेषज्ञ, राजनीतिज्ञ और डाक्टर गर्भपातको वैधानिक रूपसे उचित बनानेके विषयमें विशेष गम्भीरता और शीघ्रतासे विचार कर रहे हैं। अनेक प्रमुख लोगोंने गर्भपातको विधानानुमोदित करनेके पक्षमें अपनी सम्मति खुले रूपमें दी है। विभिन्न देशोंसे भारतकी राजधानीमें आनेवाले सन्तति नियमन विशेषज्ञोंसे भी इस विषयमें विचारोंका आदान प्रदान हुआ है।

लखनऊमें एक सरकारी प्रवक्ताने बताया है कि यहाँ अधिकारियोंकी विचारधारा गर्भपातको वैधानिक रूप देनेके विरोधमें है। केन्द्रीय परिवार नियोजन बोर्ड (Central Family Planning Board) में इस विषयमें बड़ी शीघ्रता पूर्वक विचार किया जा रहा है।

उन्होंने यह भी बताया कि वे देश भी, जिनमें गर्भपात वैधानिक मान लिया गया है, अब इसको छोड़ देनेका विचार कर रहे हैं।

गर्भपातको कानूनी रूप देनेके विषयमें सरकारी अधिकारियोंके विचारोंका कारण बताते हुए प्रवक्ताने बताया कि इससे परिवार नियोजनके कार्य-क्रममें बाधा आएगी; अनैतिक प्रवृत्तिको प्रोत्साहन मिलेगा और माताओंका स्वास्थ्य आपत्तिमें पड़ जायगा। इसके अतिरिक्त देशकी जनताका विचार भी इसके पक्षमें नहीं है।"

परन्तु श्रीमान् जी, क्रान्तिकारी कदम तो वही है जिसमें जनताके दृष्टिकोणका कुछ भी विचार न किया जावे और झटपट काम कर डाला जावे।

रही अनैतिक प्रवृत्तियोंके प्रोत्साहनकी बात। उसका भी अच्छा विचार किया आपने। क्या आप यह समझते हैं कि 'खुले आम' डंकेकी चोट घर-घरमें परिवार नियोजनका प्रचार करने, उसके विषयमें

शिक्षा देनेके लिए चित्रोंका प्रदर्शन करने और प्रतिदिन विविध प्रकारकी विज्ञप्तियां प्रचारित करनेसे नैतिक प्रवृत्ति बढ़ रही है। क्या आप यह बता सकते हैं कि सन्तति नियमनके साधनोंका उपयोग विवाहित व्यक्ति अधिक करते हैं-या अविवाहित व्यक्ति? क्या इसके भी आंकड़े निकाले जा सकते हैं कि इन उपकरणों (Contraceptives) का उपयोग घरमें कितना होता है और घरसे बाहर कितना?

दुधारी तलवार--

“श्रीमती वायलेट एल्वाने दिल्लीकी एक सभामें परिवार नियोजन कार्य-कर्त्ताओंको सचेत करते हुए कहा कि ‘आपका अभियान दुधारी तलवारके समान है।’ परिवार नियोजनके प्रचारको परिवार संस्थामें विघ्न नहीं बनना चाहिये। उन्होंने कहा ‘हमें इसपर ध्यान देना चाहिये कि हम अपने परम्परागत सदाचारके मूल्यको न खो बैठें।’

उन्होंने बताया कि परिवार नियोजनके उपकरणोंको गली-गलीमें न बेचा जावे। ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये कि यह उपकरण अधिकृत केमिस्टोंके द्वारा विवाहित व्यक्तियोंको ही प्राप्त हो सकें और गलियोंमें बेचने वालोंके द्वारा कालेजोंके लड़कों और लड़कियों को न मिल सकें।”

बात तो बिलकुल ठीक ही कही है। परन्तु भगवान्की माया। यहां तो पहिले प्रासमें ही मक्खी गिर पड़ी “प्रथमे प्रासे मक्षिका पातः।” गली-गली तो छोड़िये यह उपकरण तो घर घर जाकर बांटे जा रहे हैं। लागत मूल्यमें और बिलकुल मुफ्त भी। घरमें ही गङ्गा आ रही है।

और कुछ सिद्धि हो या न हो। अविवाहित लोगोंके लिए रोक लगा देनेसे परिवार नियोजनके अभियानके अधिकसे अधिक जनता तक पहुंचनेके उद्देश्यकी पूर्तिमें निश्चय ही भारी सहायता मिलेगी। देखिये न, जब सिनेमा वाले किसी चित्रके विज्ञापनके साथ “केवल बालिगोंके लिये” अथवा “नाबालिगोंके लिए नहीं” ऐसी शर्त लगा देते हैं तो चित्रमें इतनी

भीड़ होती है कि टिकट ब्लैकसे बिकते हैं। नगर और ग्राम उसे देखनेके लिए उलट पड़ते हैं।

चलिये, अभियानके सफल भविष्यके विषयमें सन्देहका अवकाश ही नहीं रहा।

गर्भ निरोधकी खानेकी औषध अधिक अच्छी—

“वम्बईका समाचार है कि बाहरसे आए हुए विशेषज्ञ चिकित्सकोंने स्वीकार किया है कि मृत्यु संख्या कम करनेके प्रयत्नोंमें तो संसारके अधिकांश भागोंमें सफलता मिली है परन्तु उसके अनुपातमें जन्म संख्याको कम नहीं किया जा सका है।

आधुनिक गर्भ निरोधक साधनोंके सम्बन्धमें हुए अन्तर्राष्ट्रीय चिकित्सा सेमीनार (International Medical Seminar) में बोलते हुए ज़िटेनके डा० जी. आई. एम्. स्वायरने भारतकी अपने यहां जन्म संख्या कम करनेके प्रयत्नकी सराहना की है।

उन्होंने बताया कि खानेकी गर्भ निरोधक गोलियां इस कार्यके लिए शत प्रतिशत सफल हुई हैं। दस वर्षसे इसका प्रयोग किया जा रहा है। इस कालमें इसका कोई हानिकारक परिणाम दृष्टि गोचर नहीं हुआ है। परन्तु आई. यू. सी. डी. को आजकल अधिक लाभकारी बताया जा रहा है, यद्यपि उसके अच्छे और बुरे परिणामोंका कुछ पता नहीं है।”

कुछ पता हो या न हो। यहां तो अभियान प्रारम्भ करनेसे मतलब है। हम तो सभी क्षेत्रोंमें अग्रणी हैं। जन संख्या कम करनेमें पीछे कैसे रह सकते हैं। हमें तो शत्रुसे मोर्चा लेना है। उसे ध्वस्त करना है। युद्धके समय यह नहीं देखा जाता कि हाथमें कौनसा हथियार है। जो कुछ भी हो उसे शत्रुके सिरपर दे मारना ही लक्ष्य होता है।

लिप्स् लूप् (आई. यू. सी. डी.) हो तो क्या, वैसेक्टोमी (Vasectomy) हो तो क्या, वन्ध्याकरण आपरेशन (Sterilization Operation) हो तो क्या। हमें तो जन संख्या वृद्धिके विरोधमें अभियान चला देते हैं।

श्रीमोरारजी भाईको सलाह—

भारतकी केन्द्रीय सरकारके भूतपूर्व वित्तमन्त्री श्री मोरारजी भाई देसाई ने अभी हाल ही बम्बईमें भारतकी जन संख्याको मर्यादित करनेके लिए गर्भपातको वैधानिक रूप देनेके विरोधमें अपना दृढ़ मत व्यक्त किया है।

उन्होंने कहा है कि “यह मानव समाजके विनाशके लिए सबसे बड़ा काम होगा।” उन्होंने बताया कि केन्द्रीय सरकारके उन मन्त्री महोदयके प्रति, जिन्होंने कि गर्भपातको वैधानिक बनानेके पक्षमें अपना मत व्यक्त किया है, पूर्ण सम्मान रखते हुए भी वे यह कहना चाहते हैं कि निश्चय ही इस प्रकारके कदमपर विचार करनेसे पूर्व मानव दृष्टिकोणपर भी ध्यान देना ही होगा।

श्री देसाईका प्रश्न है कि यदि गर्भपातको वैधानिक रूप दिया जा सकता है तो अपराधोंको भी विधान द्वारा अनुमोदित क्यों न किया जावे।

उनका स्पष्ट अभिमत है कि इस समय देश जन संख्याके भारको खाद्य उत्पत्तिके साधनोंके प्राप्त न होनेके कारण ही अनुभव कर रहा है। यदि इस खाद्य उत्पत्तिके साधन जुटाये जा सकें तो यही जनसंख्या देशके लिए एक सम्पत्ति सिद्ध होगी।

नारदकी तुच्छ सम्पत्तिमें देसाई भाई कुछ दकियानूस हो गए हैं। उनके विचार पुराने पड़ गये हैं। क्योंकि वे यही नहीं समझ पा रहे हैं कि वीर जातियोंका काम ही यह होगया है कि जो कार्य कठिन प्रतीत हो, जिसके करनेमें पसीना आवे, उस कार्यको बहादुरीके साथ छोड़कर कोई भी सरल सा काम भीषण उत्साहके साथ प्रारम्भ कर देना चाहिये। जिससे कि अन्तर्राष्ट्रीय जगत् समझे कि यह लोग बड़े कार्य शील हैं। रही मानवताकी बात। उसका तो अब प्रश्न ही नहीं रह गया है क्योंकि अब मानव नीचेकी श्रेणीसे उठकर अतिमानव (Super-human) बन रहा है।

विशेषज्ञोंकी भी सुनिये—

भारतके फेडरेशन आफ् ऑन्सेटेट्रिक्स एण्ड गायनाकोलॉजिकल् सोसायटीज् द्वारा आधुनिक गर्भ निरोधके साधनोंपर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय चिकित्सकोंके सेमिनारमें जो चर्चाएँ हुई हैं उनसे कुछ और भी बातें सामने आई हैं।

“फेडरेशनके अध्यक्ष श्री डा० मिक्कि मेनतने कहा कि जन्म निरोधके लिए गर्भपातका प्रयोग दक्ष चिकित्सकोंके द्वारा होनेपर भी घातक होता है, इस प्रकारके गर्भपातसे माताओंकी मृत्यु संख्या और भी बढ़ जावेगी। इसलिए फेडरेशन इस उपायको कभी स्वीकार नहीं करेगा।

ऑस्ट्रेलियाके डाक्टर विलियम् मैकब्राइड ने बताया कि लूपके विषयमें दक्षिण कोरियाके अनुभवोंसे ज्ञात हुआ है कि प्लास्टिक इन्सर्टरके दुबारा प्रयोग करनेसे अनेक दुष्परिणाम हो सकते हैं। क्योंकि उनको क्रिमि विहीन करना असम्भव है। उनके अनुसार प्लास्टिक इन्सर्टरका दुबारा प्रयोग करनेसे संक्रामक यकृत शोथके फैलनेका भय है।

वर्तमानमें इन्सर्टरका प्रयोग क्रिमिनाशक घोलोंसे धोकर ही किया जाता है। परन्तु यकृत शोथके वायरसको नष्ट करनेके लिए उष्णताके अतिरिक्त किसी उपायकी अभी तक जानकारी नहीं है। प्लास्टिकके इन्सर्टरको उष्णताद्वारा शुद्ध करना सम्भव नहीं है। इसलिए प्रत्येक वार नया ही इन्सर्टर प्रयोग करना चाहिये। भारतमें तो पहिले ही यकृत शोथ अधिक प्रसरित है। नये इन्सर्टरका प्रयोग भी यहां सम्भव नहीं है। क्योंकि सस्तेसे सस्ता इन्सर्टर भी कम से कम एक डालरका होता है।

डा. जी. आई. एम. स्वायर ने बताया कि गर्भ निरोधके लिए मुखसे खायी जाने वाली औषधका उपयोग अधिक अच्छा है। भारत सरकारको अपना मस्तिष्क इस प्रकारके उपायोंके विषयमें बहुत संकुचित नहीं रखना चाहिये। ऐसा सोचना गलत होगा कि केवल आई. यू. डी. ही भारतकी जन संख्याको सीमित

करनेका सर्वोत्तम उपाय है।

औक्सफोर्डके प्रो. स्टालवर्दीने कहा कि अभी तक चालू उपायोंके प्रयोगके समय प्रति १०० स्त्रियोंमें १७ स्त्रियां गर्भ ग्रहण कर लेती हैं। आई. यू. डी. के उपयोगसे यह संख्या घटकर केवल ५ रह जाती है। जब कि मुखसे खानेकी औषधिसे इन पांचको भी गर्भ होनेकी सम्भावना नहीं रहती।

सीलोनके डा. शिव चिन्नाताम्बीने बताया कि उनके देशमें बहुत कम आय वाली अशिक्षित स्त्रियोंमें १९६० में इन गोलीयोंका उपयोग किया गया था। यह गोली वहां इतनी प्रिय हुई कि वे स्त्रियां चार्ट्स को अच्छी तरहसे रख सकती हैं और उन्हें लेनेका ध्यान सुनिश्चित स्त्रियोंकी अपेक्षा भी अधिक रखती हैं।"

नारदजी तो इस सबसे इस परिणामपर पहुंच रहे हैं कि भारत जैसे बड़े प्राहकको पटानेके यह हथकण्डे हैं। कोई अपने लूप् वेचना चाहता है और कोई अपनी गोलियाँ। इधर हम हैं, परम बुद्धिमान कि जो भी बात सामने आयी उसको ही लेकर एक नया अभियान प्रारम्भ कर डाला। अपनी गांठकी न रखनेवाले आतुर प्राहकोंकी यही दशा इस संसारके चलते बाजारमें होती है।

परिवार नियोजनमें पलाशका उपयोग—

ज्ञात हुआ है कि—

"प्राचीन कालसे ही भारतमें उपलब्ध होनेवाला 'पलाश' परिवार नियोजनके लिये विशेष उपयोगी सिद्ध हो रहा है।

भारत सरकारके स्वास्थ्य सेवा विभागमें किये गए परीक्षणोंसे ज्ञात हुआ है कि गर्भ निरोधके लिए पलाश प्रभावशाली सिद्ध हुआ है।

इसपर अनुसन्धान करनेवाले श्री डा. पन्नालाल गर्गने बताया है कि पलाशके बीजों और जड़का उपयोग वन्ध्या करनेके आपरेशनकी आवश्यकता ही नहीं रहने देता।

उन्होंने बताया कि अभी तकके परीक्षणोंसे निम्न

निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

१. पलाशके बीजोंका चूर्ण खीरेके बीजोंके साथ खानेसे प्रयोग करने वाली महिलाकी गर्भधारण शक्ति अस्थायी रूपसे समाप्त होजाती है।

२. गर्भधारणके दूसरे मासके बाद पलाशके पत्तोंको दूधके साथ प्रयोग करनेसे यह ज्ञात होजाता है कि महिला लड़कीको जन्म देगी या लड़के को।

३. मासिक धर्मके बाद पलाशकी जड़का चूर्ण मधुके साथ लेनेसे वन्ध्या स्त्री भी सन्तानोत्पत्तिके योग्य हो जाती है।

इस विषयमें अभी और भी परीक्षण किये जा रहे हैं। यदि इन परीक्षणोंकी पुष्टि हुई तो परिवार नियोजनके लिए एक उत्तम औषधि प्राप्त होसकेगी।"

करे जाइये परीक्षण। हमें तो कोई लाभ इससे दिखाई नहीं देता। यह ध्यान रखने की बात है कि यह भारत देश है। "वसुधैव कुटुम्बकम्" मन्त्रका जन्मदाता और सच्चा अनुगामी। विदेशोंसे जो हवा आती है हम उसका अपने देशकी हवाके अपेक्षा अधिक आदर करते हैं। यही हमारी विशाल-हृदयताकी पहिचान है। जो आविष्कार और विचार विलायतमें होता है हम उसे लेकर नये नये 'अभियान' प्रारम्भ करते हैं। देखिये न—

१. परिवार नियोजन अभियान

२. बी. सी. जी. अभियान

३. मलेरिया उन्मूलन अभियान

४. मक्खी मारो अभियान

५. मच्छर मारो अभियान

५. शीतला उन्मूलन अभियान आदि आदि

और भी हमारे हृदयकी विशालता देखिये कि हम बाहरसे आनेवाली मशीनमें अपने आपको 'फिट' करनेका प्रयत्न करते हैं न कि उस योजना अथवा मशीनको अपनी स्थिति और वातावरण आदिके अनुसार अपने यहां 'फिट' करनेका। देखिये न, टाइप् राइटरकी मशीनपर हमारी वर्ण माला फिट हो सके

इसलिए हम अपनी वैज्ञानिक नागरीवर्णमालाकी भी परवाह नहीं करते। नहीं तो क्या हम ऐसा टाइप राइटर नहीं बना सकते जो नागरी लिपिके लिए ठीक रूपसे उपयोगी हो सके।

‘जयभारत’ छोड़िये—‘जयजगत्’ कहिये।

लिङ्ग परिवर्तन और सन्तानोत्पत्ति—

“जोहानीजबर्ग दक्षिण अफ्रिकाका ४ जुलाईका एक समाचार है कि चार दिन पूर्व ही एक बीस वर्षीय ब्रिटिश लेखक श्री रोबिन एशबी ने म्यूरियल् पीटर्सन् नामक २६ वर्षकी लड़कीसे विवाह किया है। म्यूरियल् पीटर्सन् लिङ्ग परिवर्तनके निमित्त शल्यक्रिया करानेसे पूर्व सन् १९६३ तक पुरुष थीं।

यही नहीं, पीटर्सन्की बड़ी बहिन श्रीमती शैरोन् जोन्कर भी लिङ्ग परिवर्तन होनेसे पूर्व पुरुष ही थीं।

एशबी दम्पती जोहानीजबर्गके एक पेन्टहाउसमें मधुयामिनी भी मना रहे हैं। साथ ही लेखक श्री एशबी अपनी पत्नीके इस असाधारण जीवनके विषयमें एक पुस्तक भी लिख रहे हैं।

इस प्रकारके प्रेमियोंको नियमित विवाह सूत्रमें धार्मिक रूपसे आबद्ध होनेके लिए चर्चकी शरण लेनी पड़ती है। चर्च इसमें कठिनाई अनुभव करता है। एशबी दम्पतीने भी एक रोमन कैथोलिक चर्चमें विवाह करानेकी प्रार्थना की। चर्चके व्यवस्थापकने उनसे कहा कि उनका विवाह करा तो दिया जावेगा परन्तु उसका किसीको पता नहीं लगने दिया जावेगा। दोनों प्रेमी आतुर थे। उन्होंने व्यवस्थापक महोदयकी बात स्वीकार करली और गुप्त रीतिसे विवाह सूत्रमें आबद्ध होगए।”

यह तो हुई सामाजिक, व्यावहारिक कठिनाई। परन्तु इसके अतिरिक्त इस प्रकारके लिङ्ग परिवर्तनके अनन्तर सन्तानोत्पत्ति एक बड़ी समस्या है। शल्य-तन्त्र विशेषज्ञ डाक्टर इसकी ओर दीर्घ कालसे ध्यान दे रहे हैं।

श्रीमती एशबीने अपनी ओर से प्रत्येक वर्ष २७ लाख रुपये दान दिये हैं।

लिङ्ग परिवर्तनकी कहानी कहते हुए बड़ी आशाके साथ बताया—

“डाक्टरोंने हमें विश्वास दिलाया है कि अब हम सभी सामान्य स्त्रियोंके समान ही हैं, सिवाय इसके कि अपनी सन्तान प्राप्तिके योग्य होनेसे पूर्व मुझे कुछ आपरेशन और कराने पड़ेंगे।” उन्होंने कहा “मैं सब प्रकारसे योग्य पत्नी बनना चाहती हूँ। हम लोग बहुत शीघ्र दो बालकोंको गोद लेना चाहते हैं। दर्जनों बालकोंको अपने पास देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।”

सचमुच उक्त देवीने बड़ी उत्सुकता पूर्वक पुरुषत्व खोकर नारीत्वकी उपलब्धि की है। यदि अब यह नारीत्व भी बन्धुत्व विशिष्ट रह गया तो श्रीमती एशबीको भयङ्कर निराशा होगी। हम तो भगवान्से यही प्रार्थना करते हैं कि चिकित्सकोंके हाथोंमें वे ऐसी शक्ति दें कि यह नारीत्व असफलताके अन्धकारसे आवृत न रहे और भविष्यमें इस प्रकारके लिङ्ग परिवर्तनके बाद सन्तानोत्पत्ति का सुख प्राप्त कर ऐसी देवियां कृतकृत्यता अनुभव कर सकें।

छः नगरोंके लिये सरकारी रोटी—

“ज्ञात हुआ है कि सरकारी पाकशालाओंमें बनी हुई रोटियाँ शीघ्र ही भारतके छः नगरोंमें उपलब्ध हो सकेंगी। केन्द्रीय सरकारने इन नगरोंमें छः आधुनिक स्थापित पाकशालाएँ आस्ट्रेलियायी सहायतासे स्थापित करनेका निश्चय किया है। सरकारने ऐसा निश्चय चावल खाने वाले प्रदेशोंमें रोटीका प्रचार बढ़ानेके लिए, वर्तमान पाकशालाओंके आधुनिकीकरणको प्रोत्साहित करने और रोटीकी किस्मको सुधारनेके लिए किया है।

दिल्ली, बम्बई, मद्रास तथा पश्चिमी बंगाल, गुजरात और केरलके चुने हुए स्थानोंपर स्थापित की जाने वाली इन पाकशालाओं (Bakery Units) की स्थापनामें रु० १.२३ करोड़का व्यय होगा। कोलम्बो योजनाके आधीन आस्ट्रेलिया द्वारा दिये जाने वाले ऋणोंके अन्तर्गत २७ लाख रुपये होगा।

इन पाकशालाओंमें लगभग २५००० टन आटा वार्षिक लगा करेगा। ४०० ग्रामकी डबल रोटीका मूल्य ४५ से ५० पैसे तक होगा। इससे मितव्ययताके साथ रोटीके निर्माणमें और उद्योगको ठीक मार्गपर चलानेमें सहायता मिलेगी।

इससे यह आशा की जाती है कि इन पाकशालाओंमें उत्तम प्रकारकी रोटी बनेंगी। उनमें विटामिनका समावेश किया जावेगा और प्रोटीनसे भरपूर मूंगफलीके आटे और ऐसे ही अन्य पोषक द्रव्योंका उपयोग किया जावेगा।

जब इन स्थानोंपर कार्य सफलता पूर्वक होने लगेगा तब अन्य प्रदेशोंमें भी इस उद्योगका विस्तार किया जावेगा।

समाचार तो बहुत ही उत्तम है। समस्त संसारमें विटामिनसे भरपूर वनस्पति (घी) का सबसे अधिक उत्पादन करने वाले और सबसे अधिक उसका उपयोग करने वाले भारतके नवयुवक इस घीसे ही बहुत हृष्ट पुष्ट हैं। अब "प्रोटीनसे भरपूर" मूंगफलीके आटेका उपयोग करके संसारके युवकोंमें निस्सन्देह अग्रणी सुपुष्ट और बलशाली बन जावेंगे। विटामिनोंसे भरपूर डबलरोटीके उपयोगसे ही डबल होजानेपर घी, दूध, दही आदि जैसी सारहीन वस्तुओंकी आवश्यकता ही नहीं रहेगी।

दूसरी बात और भी बड़ी सुन्दर रहेगी। गान्धीजी और विनोबाजीकी प्रामों और नगरोंको आत्मनिर्भर बनानेकी योजनामें तो इससे चार चाँद ही लग जायेंगे।

अपने आप अपना भोजन बना सकना यदि आत्म निर्भरताका एक रूप है तो हमारे मत 'चोट' से बनने वाली सरकारके द्वारा संचालित कारखानोंसे अपनी रोटीकी व्यवस्था करना आत्मनिर्भरताका दूसरा रूप है।

तीसरी बात और भी आनन्ददायक है। भारत सरकार क्योंकि अन्नकी समस्यामें तो शायद देशको आत्म-निर्भर बना ही चुकी है। इसलिए अब इस दिशामें तो करनेका कोई कार्य ही नहीं रह गया है।

अच्छा ही हुआ कि वह अब बनी बनाई रोटी देनेके कार्यको अपने हाथमें लेकर देशवासियोंके सुख-साधनोंको और भी पूर्ण एवं विकसित करने जा रही है। एक ओरसे बेकार सरकारको एक काम भी मिल ही जायगा। बेकारी मिट जायगी।

लोगोंने कहा है "एका क्रिया द्वयर्थकरी प्रसिद्धा" परन्तु यहाँ तो एक ही क्रियासे बहुतसे अनर्थकी सिद्धि होनेके शुभ लक्षण हैं।

सम्मोहनका नया प्रयोग—

"संयुक्त राष्ट्र अमेरिकाके सिविल एरोनॉटिक्स बोर्डने घोषित किया है कि एक हेलीकोप्टरकी दुर्घटनामें एक चालक अचेत हो गया था। परन्तु बादमें सम्मोहन करके उससे जो प्रश्न किये गए उसमें सफलता प्राप्त हुई है।

बोर्डने बताया है कि उक्त चालकने इस चिकित्सकी विधिके लिए अपने आपको प्रस्तुत किया था। चिकित्सकों और बोर्डके जांच करनेवालोंको उक्त चालकने सम्मोहनकी अवस्थामें प्रश्नोंके ठीक उत्तर देते हुए अपनी दुर्घटनावाली उड़ानका ठीक ठीक क्रम-बद्ध विवरण दिया।

चालकके बयानमें ऐसी ऐसी छोटी बातें भी सम्मिलित थीं जैसे कि उसके यात्रियोंद्वारा चलाई जानेवाली कारोंके नम्बर आदि। यह बातें उसके अवचेतनमन (Subconscious mind) का भाग थीं। यदि स्मृतिका नाश न होता तो भी यह सम्भव नहीं था कि वह इन बातोंको स्मरण कर सकता।"

निश्चय ही मनकी जो महान् शक्तियाँ हैं उनके अन्वेषणमें यह एक अच्छा कदम है। वैदिक साहित्य और भारतीय साहित्यके अन्य अनेक ग्रन्थोंमें इस विषयपर विस्तृत विवरण उपलब्ध है। वेदका शिव संकल्प सूक्त, योग दर्शनका सिद्धि प्रकरण, चरक संहिता, इन्द्रियस्थानका पञ्चमाध्याय और उपनिषदोंके असंख्य स्थल आदि इसके बहुत सुन्दर एवं अमूल्य सन्दर्भ हैं। आवश्यकता है इस विषयमें गम्भीर होकर अध्ययन। आवश्यकता है इस विषयमें गम्भीर होकर अध्ययन। आवश्यकता है इस विषयमें गम्भीर होकर अध्ययन।

वकित होते हैं। घरमें ररन कूड़ेमें पड़े हैं।

गर्भसे पूर्व लिङ्गनिर्णयपर अनुसन्धान - -

“ज्ञात हुआ है कि एक भारतीय वैज्ञानिक श्री डा० भैरव भट्टाचार्यको शुक्राणुके लिंग निर्णय सम्बन्धी अनुसन्धानके कारण ख्याति प्राप्त हो रही है। परन्तु भारतमें कलकत्ताके एक कृत्रिम गर्भाधानकेन्द्रसे उन्हें केवल इस लिए बाहर कर दिया गया था कि उन्होंने अपने अनुसन्धानकी सफलताकी सूचना दी थी।

अभी ही ईवनिङ्ग स्टैण्डर्ड, लन्दनसे प्रकाशित वृत्तान्त के अनुसार श्री भट्टाचार्यने १९५५ में कलकत्तामें अनुसन्धान प्रारम्भ किया था। जब कि एक किसान उनके पास यह वृत्त लेकर उपस्थित हुआ कि उसकी गायोंसे अनुपातसे विरुद्ध बछड़े ही उत्पन्न होते हैं। कई मासके अनुसन्धानके बाद वे पुं शुक्रकीटाणुओं और स्त्री-शुक्रकीटाणुओंको पृथक् करनेमें सफल हुए। जब यह सूचना उन्होंने अपने केन्द्रको दी तो उन्हें दोषी सिद्ध किया गया। परिणामतः वे उस स्थानको छोड़कर पश्चिमी जर्मनीके मेरीन् सी नगरमें मैक्स लैङ्क इन्स्टीट्यूटमें चले गए।

वहाँपर खरगोशोंपर किए गए उनके परीक्षणोंसे निश्चय हुआ कि उनका अन्वेषण स्वीकार्य है। उसके अनन्तर वे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयके कृषि अनुसन्धान विभागमें आ गए।

जर्मनीमें अनुसन्धान-कर्त्ताओंके एक दलने डा० एरिक शिलिंग्के आधीन कुछ संशोधनोंके साथ डा० भट्टाचार्यकी विधिका उपयोग करके सौ गायोंपर जो परीक्षण किए उनके परिणाम चमत्कारी हुए। जिन गायोंको स्त्री जनक शुक्राणु दिये गए उन ७५ गायोंके बछियां उत्पन्न हुईं और शेष जिन २५ को पुरुषोत्पादक शुक्राणु दिये गए उनके बछड़े ही उत्पन्न हुए।

कैम्ब्रिजमें भी २०० गायोंपर परीक्षण किए जा रहे हैं। परीक्षणोंके सफल होनेपर कृषि कार्योंमें भी अनुसन्धान किया जावेगा।

ऐसा भी कोई कारण नहीं मालूम पड़ता कि मनुष्यके विषयमें भी इस विधिका उपयोग न किया जा सके।”

डा० भट्टाचार्यके इस अनुसन्धानकी भावी सम्भावनाएं तो सुदूर भविष्यकी बात है। हां, नारद जीकी सम्मतिमें डा० भट्टाचार्यको अपने देशमें मिले व्यवहारसे खिन्न न होना चाहिये। यह तो एक पुराना तथ्य है। वेचारे तुलसीदासजीने भी इससे कुछ खिन्नताका अनुभव करते हुए दुःखसे कहा था।

तुलसी तहां न जाइये, जहां बापको गांव।
वास गयो, तुलसी गयो, रह्यो तुलसिया नांव ॥

दूटे अंगूठे वाली ममी—

“मिस्र देशकी एक तीन सहस्र वर्ष प्राचीन पुरुष ममीको अभी हालमें उसके अनेक X ray चित्र लेनेके लिए अस्पताल ले जाया गया है। उसकी यह जांच की जानी है कि क्या उस ममीका एक हाथ कृत्रिम रूपसे बना हुआ है। यह ममी ब्रिटेनके डरहाम विश्वविद्यालयके गुलबेन्कियान् ओरिएण्टल म्यूजियम् (Gulbenkian oriental museum) को उक्त जांचके लिए सौंपी गई है।

प्रारम्भिक जांचसे ज्ञात हुआ है कि जिस पुरुषकी यह ममी है वह अनेक व्याधियोंसे पीड़ित था। उसकी छः चक्रिकाएं अपने स्थानसे खिसकी हुई थीं। एक अंगूठा दूटा हुआ था और पित्ताशयमें पथरी भी थी।”

निश्चय ही इस जांचसे नये ऐतिहासिक तत्वोंके सामने आनेकी सम्भावना है। यदि इस ममीका एक हाथ सचमुच ही कृत्रिम सिद्ध हुआ तो आजसे तीन सहस्र वर्ष पूर्वके कृत्रिम अङ्गनिर्माणके सम्बन्धमें एक नवीन अध्यायके लेखनका प्रारम्भ होगा।

भारतीय इतिहासकी विष्णुलाकी ‘आयसी जङ्घा’ के विषयमें भी नवीन रूपसे विचार किया जा सकेगा। प्राचीन इतिहासके पत्र पलटकर नारदजी भी उसमें अपना अमूल्य सहयोग दे सकेंगे।

चिकित्सा परामर्श

अनेक पाठक बन्धुओंके निरन्तर आग्रहसे यह स्तम्भ उनके लाभार्थ प्रारम्भ किया जा रहा है। जो बन्धु रोग सम्बन्धी समस्याओंमें उलझे हुए हैं वे निःसङ्कोच हमें अपनी कठिनाई लिख सकते हैं। उनको बिना किसी शुल्कके अच्छे से अच्छा उपलब्ध परामर्श दिया जावेगा। रोग कैसा ही हो आप लिख सकते हैं कोई आशङ्का नहीं करनी चाहिये। स्थानके संकेतके अतिरिक्त प्रश्नकर्त्ताके नाम आदिको प्रकाशित नहीं किया जावेगा।

१. एक सज्जनने पटनासे लिखा है—

.....मेरी पत्नीकी उमर इस समय ३१ वर्षकी है। ३ बच्चे हैं। २ लड़के और एक लड़की। ईश्वर कृपासे वह सुन्दर गोरे रंगकी है। पर, इधर कुछ दिनोंसे जैसे उसकी सुन्दरता नष्ट होती जा रही है। चेहरेपर पहले जैसी रौनक नहीं है। दोनों तरफ गालोंके उभरे हुए हिस्सोंपर काले रङ्गकी भाई पड़ गई है। कुछ माथेपर भी है और कुछ ठोड़ीपर भी। करीब आधा चेहरा एक दम दूसरे रंगका होगया है। पहिले तो हमारा कोई खास ध्यान इस ओर नहीं गया। पर जबसे वाइफने इसको महसूस किया है तबसे वह बड़ी परेशान है। दवाइयाँ भी बहुत सी दिलाईं। वैद्योंके बताए उबटन भी लगाए पर फायदा नहीं है। इससे अब मैं भी परेशान हूँ। क्या आप कुछ उपाय बता सकते हैं?

परामर्श—ऐसा अनुमान होता है कि आपकी पत्नीको पर्याप्त समयसे प्रदरका रोग है। साथ ही कुछ मन्दाग्नि तथा उदरयन्त्रोंकी भी विकृति है। यदि ऐसा ही है तो आप निम्न औषधियोंका सेवन करावें।

१. त्रिवङ्ग भस्म

मात्रा—१ रत्ती

अनुपान—मधु

प्रातः तथा सायंकाल

२. अशोकारिष्ट

मात्रा—१ तोला

अनुपान—जल

दोनों समय भोजनोत्तर।

त्रिवङ्ग भस्म ७ पुटीके स्थानपर यदि २८ पुटी लें। तो अधिक अच्छा होगा।

कुछ शारीरिक श्रम करना और सायंकाल खुली वायुमें भ्रमण अधिक अच्छा है।

२. महारानी रोड, इन्दौरसे एक दुःखी बन्धु लिखते हैं—

श्रीमान्जी मेरी अवस्था ३४ वर्षकी है। शरीर मेरा दुर्बल ही है। कब्ज बहुत रहता है। टट्टी सूखी हुई आती है। टट्टीमें बहुत देर करीब आधा घण्टा बैठना पड़ता है। देह सुस्त रहती है। काम करनेको बिल्कुल भी मन नहीं होता है। टट्टी २४ घण्टेमें एक ही बार आती है। शरीर थका हुआ रहता है। पेटमें कभी कभी दर्द भी रहता है। आजकल तो कसजोरी बहुत बढ़ गई है। सवेरे टट्टीसे आनेके बाद तो मुँह एक दम सूखता है। बस आँख बन्द करके लेट जानेको मन चाहता है। दिल जैसे जोर जोरसे धड़कता है। बहुत दवाइयाँ खाई हैं। जुलाब भी बहुत बार लेता हूँ कभी कभी तो उससे भी दस्त

नहीं आता। कृपया कुछ सलाह दीजिये। जिन्दगी भार हो गई है।...

परामर्श—आपको जीर्ण मन्दाग्नि है। आन्त्र और यकृत दुर्बल हैं। पूरा कार्य नहीं करते। आप विरेचन की औषध लेना बिल्कुल बन्द कर दें। भोजन नियमित समयपर करें। तली हुई चीजें, तेज, चटपटे मसाले न खावें। साथ ही निम्न प्रकार अपनी औषध व्यवस्था कर लें।

१. कुमार्यासव (शार्ङ्गधर) मात्रा—१ तोला

अनुपान—जल
दोनों समय भोजनके
अनन्तर लें।

२. आरोग्यवर्धिनी वटी, मात्रा—२ से ४ रत्ती तक

अनुपान—शीतल जल
प्रातः, मध्याह्न और सायं
दिनमें ३ बार लें।

चिन्ता न करें। ४ या ६ दिनके अनन्तर आपको प्रातःकाल शौच ठीक होने लगेगा। यदि आपको घड़कन विशेष बढ़ जाती हो, तो आप अभी बिलकुल प्रातःकाल ७ बजे और रात्रिको सोते समय नागार्जुनाभ्र रस १ रत्ती, मधुके साथ ले लिया करें।

शीघ्रता न करें। आपको औषध कमसे कम २ या ३ मास लेनी चाहिये। जब आपका स्वास्थ्य ठीक होजावे तब भी आप औषध एक दम न छोड़िये। मात्रा कम करके शनैः शनैः छोड़िए। ईश्वर कृपालु है।

३. दूसरे सन्तान प्रेमी बन्धु अलीगढ़से पूछते हैं—

श्रीमान वैद्यराजजी महाराज—

“..... हमारी छोटी लड़की बहुत दिनोंसे बीमार है। तीन वर्षकी होगई है पर अभी तक चलती नहीं है। पेट खूब बढ़ा हुआ है। खानेको तो जो चीज सामने आती है उसे खानेको भपटती है। अगर न रोको तो सब कुछ खाती है और खूब खाती है। टट्टी भी बहुत कम जाती है। दिनमें १ बार और कभी कभी तो दो तीन दिन भी नहीं जाती है।

लड़कीकी जात है। चलेगी नहीं तो कैसे होगा। और पेटका यही हाल रहा तो क्या होगा। कृपा करके कुछ बताईये जिससे हमारा संकट टल जावे।

परामर्श—आपकी लड़कीके यकृत और आन्त्र दोनों ही ठीक नहीं है। यदि इसका शीघ्र उपचार नहीं किया जावेगा तो अन्य रोग भी उत्पन्न हो जावेंगे वैसे तो रोग अब भी कठिन है। पेटके इस विकारके कारण ही उसकी अन्य धातुएं बढ़ती नहीं है और न पुष्ट होती हैं। आप निम्न प्रकार उसे औषध दें।

१. कुमार्यासव

(शार्ङ्गधर)

मात्रा—१ ड्राम

(६० बूंद)

अनुपान जल।

दिनमें दो या तीन बार दें।

२. आरोग्यवर्धिनी वटी

मात्रा—आधी रत्ती

से एक रत्ती तक

अनुपान—जल

गोलीको पीसकर मात्रा बना लीजिये। यदि बच्चीको पतले दस्त न हों तो मात्रा बढ़ाकर ३ या १ रत्ती तक कर दीजिये। यह मात्रा भी दिनमें तीन बार दीजिये। प्रातःकाल, पहिले आरोग्यवर्धिनी, २ या २½ घण्टे बाद कुमार्यासव, उससे फिर २½ घण्टे बाद आरोग्यवर्धिनी। बारी बारीसे दीजिये।

उसको खानेको अन्न बिलकुल न दीजिये। बकरीके दूधपर ही रखिये। दूधमें शक्कर भी न डालिए।

४. तथाकथित हृदय रोगसे भयभीत एक बन्धुने कारेलीबाग, बड़ौदासे पूछा है।

“..... मैं बहुत दिनोंसे दुःखी हूँ। मेरा हृदय बहुत कमजोर है। घड़कन बढ़ जाती है। बड़ी घबराहट होती है। बहुत दिनोंसे मैं इससे दुःखी हूँ। अब ऐसी हालत होगई है कि अकेले चलनेमें भी डर लगता है कि कहीं गिर न पड़ूं, हार्टफेल न हो जावे। लगभग डेढ़ वर्षसे दवा करा रहा हूँ। लोगोंने मुझे दिलकी ताकतकी दवाएं दी हैं। नाद भी मुझे कम

(शेष पृष्ठ ६५८ पर देखें)



कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवनमें गुरुपूर्णिमा-उत्सव

आषाढ शुक्ल, गुरु पूर्णिमा तदनुसार दिनांक १३-७-६५ मंगलवारको सदैवकी भौति भवनके समस्त कर्मचारियोंने बड़े उत्साह व प्रेमके साथ गुरुपूर्णिमाका उत्सव मनाया। श्री स्वामीजी महाराजके पूजनादिके पश्चात् भवनके व्यवस्थापक श्री नौरतनमलजी जोशीने अपने भाषणमें भवनके कर्मचारियोंको भवनकी प्रगति और अपने कर्तव्यपालनके विषयमें प्रभावशाली ढंगसे समझाया। तत्पश्चात् प्रसाद वितरणके साथ उत्सव समाप्त हुआ व इस उपलक्षमें भवनकी छुट्टी रखी गई।

विद्यापीठके परीक्षार्थियोंको सुविधा

दि० १६ जुलाई १९६५ को निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठकी केन्द्रीय प्रबन्धक समितिका अधिवेशन हापुड़ (उ० प्र०) में सम्पन्न हुआ। अधिवेशनमें, विभिन्न सम्बद्ध विद्यालयोंकी ओरसे प्राप्त पत्रोंके आधारपर निश्चय किया गया कि—

क—आयुर्वेद विशारद परीक्षाके नवीन चतुर्वर्षीय पाठ्यक्रमका संचालन अभी स्थगित रखा जावे और

ख—इस वर्ष नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठकी भिषक्, विशारद तथा आचार्यकी कक्षाओंमें पूर्व पाठ्यक्रमानुसार विद्यार्थियोंको पूर्ववत् प्रवेश दिया जावे।

केन्द्रीय प्रबन्धक समितिने इस विषयपर भी विचार

करनेका निश्चय किया है कि आयुर्वेदविशारद परीक्षाका जो नवीन पाठ्यक्रम बनाया गया है, उसके प्रथम दो खण्ड उत्तीर्ण करनेपर विद्यार्थीको पूर्ववत् आयुर्वेद भिषक्की उपाधि दी जावे। विचाराधीन पाठ्यक्रममें इस दृष्टिकोणसे अपेक्षित संशोधन करनेके लिए एक उपसमितिका भी निर्माण किया गया है।

इस प्रकार नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठकी सभी परीक्षाओंमें विद्यार्थियोंको पूर्व प्रचलित पाठ्यक्रम एवं नियमोंके आधारपर प्रवेशकी सुविधा प्रदान की जावेगी। नवीन पाठ्यक्रम १९६६के शिक्षण सत्रसे प्रारम्भ होगा और उसमें वर्तमान पाठ्यक्रमके अनुसार पढ़ने वाले विद्यार्थियोंको सुविधापूर्वक समाविष्ट करनेकी पूर्ण व्यवस्था रहेगी।

अजयमेरु आयुर्वेद महाविद्यालय, अजमेर

इस बार निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ की परीक्षाओंमें उत्तीर्ण अजयमेरु आयुर्वेद महाविद्यालयके छात्रोंके प्रमाणपत्रोंके वितरणार्थ दि० २२-८-६५ रविवारको अजमेरमें विशेष उत्सवकी व्यवस्था की गई है।

इस उत्सवमें सम्मिलित होने वाले छात्रोंको आचार्य, अजयमेरु आयुर्वेद महाविद्यालयसे सम्पर्क स्थापित करना चाहिये।

नये सत्रका प्रारम्भ हो गया है। परन्तु नि० भा० आ० विद्यापीठके निर्देशानुसार विद्यार्थियोंकी सुविधाके लिए ३१ अगस्त ६५ तक विद्यालयमें विद्यार्थियोंको प्रवेश मिल सकेगा।

‘आयुर्वेदकी महत्ता अनुष्ण है’ -

श्री भीखाभाई

पिलाती। दिनांक १६-७-६५ बिरला आयुर्वेद कालेजके नवीन सत्रका उद्घाटन करते हुए राजस्थान के आयुर्वेद मंत्री श्री भीखाभाईने कहा कि राष्ट्रके स्वास्थ्यको समुन्नत बनानेमें आयुर्वेदका महत्वपूर्ण स्थान स्वयं सिद्ध है। आयुर्वेदके मूल सिद्धान्त एक सुदृढ़ आधारपर अवस्थित है। आप लोगोंको उत्कृष्ट भावनाके साथ आयुर्वेदका अध्ययन मनोयोगसे करना चाहिए। यह निश्चित है कि भगवान् धन्वन्तरिके

पद चिन्होंपर चल कर आप उत्कृष्ट वैद्य बन सकते हैं। इसके पूर्व आचार्य श्री नित्यानन्दने श्री भीखाभाई की आयुर्वेदीय सेवाओं पर प्रकाश डाला।

इसी अवसरपर श्री भीखाभाईने पिलानीकी शिक्षण संस्थाओंकी प्रशंसा करते हुए बताया कि बिरला परिवारने देश-विदेशमें अनेक प्रशंसनीय सेवा कार्य किये हैं। अन्तमें आचार्य अनन्तदेव त्रिपाठीने धन्यवाद दिया।

अखिल भारतीय आयुर्वेद पत्रकार संघ, देहली

(१) अखिल भारतीय आयुर्वेद पत्रकार संघका वार्षिक अधिवेशन दिनांक ५-६-७ जून सन् १९६५ ई० को ४४ वें अखिल भारतीय आयुर्वेद महा सम्मेलनके पंडालमें, कानपुरमें, आयुर्वेद पंचानन पण्डित जगन्नाथ प्रसाद शुक्लकी अध्यक्षतामें सम्पन्न हुआ जिसमें। राज्य वैद्य पण्डित सुरेन्द्र नाथ दीक्षित, संचालक आयुर्वेद सन्देश, लखनऊ वैद्यराज पण्डित विश्वेश्वर दयाल शर्मा सम्पादक, अनुभूत योगमाला, इटावा कविराज माधव प्रसाद आचार्य सम्पादक लोक मानस, उदयपुर कविराज नित्यानन्द वर्मा देहली, कविराज योगेश्वर कृष्ण शास्त्री, देहली, कविराज वेद प्रकाश गुप्ता, देहली, वैद्य शिव करण शर्मा छांगानी, नागपुर आदिके ओजस्वी भाषणोंके पश्चात् संघकी संचालक समितिका चुनाव सर्व सम्मतिसे निम्न प्रकार सम्पन्न हुआ अन्तमें अखिल भारतीय आयुर्वेद महा-सम्मेलनके सभापति श्री अनन्त शर्मा त्रिपाठी व आयुर्वेद पंचानन श्री पण्डित जगन्नाथ प्रसाद शुक्लके आशीर्वादात्मक व कर्तव्य बोधात्मक भाषण हुये। इस अधिवेशनमें संघका एक विधान भी स्वीकार किया गया, जिसे पुनः देख कर उचित संशोधन करनेका व अन्तिम रूपमें शीघ्र प्रकाशित करनेका अधिकार (१) श्री सुरेन्द्र नाथ जी दीक्षित (२) कविराज वेद प्रकाश जी (३) वैद्य बदल्लराम रसिककी एक उपसमितिको दिया गया। संघमें सर्व सम्मतिसे एक प्रस्ताव स्वीकृत हुआ जिसमें भारतके समस्त दैनिक, साप्ताहिक व मासिक पत्रोंके सम्पादकोंके अनुश्रवण किया गया कि वह

भारतीय राष्ट्रीय चिकित्सा विज्ञान आयुर्वेदकी उन्नति और प्रतिष्ठा वृद्धिके लिये समय समयपर अपने पत्रोंमें लेख और सम्पादकीय सम्मति देनेकी कृपा करें जिससे कि जनता इसके उपकार और गुणोंको समझती रहे और सरकारको इसके अभ्युदयकी प्रेरणा होती रहे।

अखिल भारतीय आयुर्वेद पत्रकार संघकी संचालक समितिमें भारतके प्रायः सभी आयुर्वेद पत्रकार सम्मिलित हैं।

समितिके प्रमुख अधिकारी निम्न प्रकार हैं।

संरक्षक—आयुर्वेद पंचानन पण्डित जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल सम्पादक, सुधानिधि, इलाहाबाद।

(१) सभापति—आयुर्वेद बृहस्पति राजवैद्य पं० सुरेन्द्रनाथ दीक्षित संचालक, आयुर्वेद सन्देश, लखनऊ।

(२) कार्यवाहक सभापति—वैद्यराज पण्डित विश्वेश्वर दयालु शर्मा सम्पादक, अनुभूत योगमाला बरालोकपुर, जिला इटावा।

(३) उपसभापति—कविराज माधव प्रसाद आचार्य सम्पादक, लोकमानस, उदयपुर।

(४) उपसभापति—कविराज नित्यानन्द वर्मा सहायक सम्पादक, आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका, देहली।

(५) प्रधानमंत्री—कविराज वेदप्रकाश बी० आई० एम० एस० भूतपूर्व सम्पादक, आरोग्य मन्दिर ४१० सदर बाजार, देहली।

(६) मंत्री—वैद्य प्रफुल्लजी प्रतापकुमार शर्मा, सम्पादक, आयुर्वेद जगत्, बम्बई।

(७) प्रचारमंत्री—कविराज श्री प्रेमशंकरजी पाठक सम्पादक, दीपक, जोरावर नगर, गुजरात।

(८) कोषाध्यक्ष—कविराज योगेश्वर कृष्ण शास्त्री संस्कृत विभाग सम्पादक, आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका, देहली।

(९) आय व्यव निरीक्षक—कविराज बापालाल सहायक सम्पादक, भिषग् भारती, सूरत, गुजरात।

वैद्यों और वैद्य सभाओंको सूचना--

अखिल भारतीय आयुर्वेद पत्रकार संघकी ओरसे देहलीमें एक बड़े पैमानेपर आयुर्वेदिक न्यूज सर्विसकी स्थापनाका उद्योगका किया जा रहा है उसके द्वारा प्रत्येक वैद्य सभाकी कार्यवाही-वैद्योंके भाषण उपयोगी वक्तव्य, सरकारकी गतिविधि और आयुर्वेदके प्रति सरकारी रीति नीति तथा उसकी स्वास्थ्य सम्बन्धी योजनाओंसे आयुर्वेद जगत्को भलीभांति परिचित कराया जायगा।

कविराज वेद प्रकाश गुप्ता

बी० आई० एम० एस०

प्रधानमंत्री,

अखिल भारतीय आयुर्वेद पत्रकार संघ,
४१०, सदरबाजार, देहली

आयुर्वेदाचार्य और वैद्याचार्यकी समानता-

श्री वैद्य उदयलाल महात्मा, देवगढ़ ने सूचित किया है कि आयुर्वेद महासम्मेलनके कानपुर उत्सवमें कार्याधिक्य होनेके कारण आयुर्वेदाचार्य और वैद्याचार्यकी समानताका प्रश्न निर्णयार्थ प्रस्तुत नहीं हो सका। अतः उसका निर्णय स्थायी समिति करने जरूरी है।

सम्मेलनके पूर्व भी विद्यापीठ द्वारा श्री सहायक सचिव, मेडिकल एण्ड पब्लिक हेल्थ डिपार्टमेन्ट, राजस्थान सरकारको एक स्पष्टीकरण भेजा जा चुका है। जिसमें बताया गया है कि—

“निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठकी वैद्याचार्य एवं आयुर्वेदाचार्य परीक्षाएं इसलिए समान हैं कि दोनोंका सर्वथा एक ही पाठ्यक्रम है तथा दोनोंके परीक्षा प्रश्न पत्र भी एक ही होते हैं, जो कि संस्कृत भाषामें मुद्रित होते हैं। किन्तु प्रश्न पत्रोंके उत्तरकी भाषासे इनमें नाम मात्रका अन्तर माना गया है। इस प्रकार प्रश्नोत्तरकी भाषामें अन्तर होनेसे इस एक ही पाठ्यक्रम वाली परीक्षाको दो नाम

दिये गये हैं।”

अब राजस्थान सरकार और आयुर्वेद विभागके संचालकजीको चाहिये कि इस बारेमें शीघ्र उदारता पूर्वक निर्णय करके जिन वैद्याचार्य उपाधि धारियों को आयुर्वेदाचार्यके समान सुविधाएँ देनेसे वंचित रखा गया है उनको जबसे वे सुविधा पानेके अधिकारी हैं, सुविधा प्रदानकर यशके भागी बनें।

चिकित्सा परामर्श--

(पृष्ठ ६५५ का शेष)

आती है। कुछ लोग ब्लडप्रेसर बताते हैं। अभी कुछ समयसे मैं महसूस करता हूँ कि मेरा पेट भी कुछ ठीक नहीं है। हवा सी भर जाती है। तब और भी घबराहट होती है। कृपा करके कोई अच्छी औषधि बताइये। आमदनी कम है और यह बीमारी खर्च ज्यादा मांगती है।

परामर्श—प्रिय महोदय, आपको जो रोग है उसका शायद अभी तक ठीक निदान नहीं हुआ है। हमारा अनुमान है कि आपको हृदय रोग नहीं है। न ही आपको ब्लडप्रेसर है। मूल रोग तो आपके पेटमें ही है। उसकी चिकित्सा ही करनी उचित है। इस लिए आप निम्न औषधिका उपयोग करें।

१. महाशङ्ख वटी (भै. रत्नावली)

स्वर्जिकाक्षार अथवा खानेका सोडा

२ रत्नी

३ रत्नी

१ मात्रा

अनुपान—जल

दिनमें ३ या चार बार लें, चार घण्टेके अन्तरसे

मात्रा १ तोला

अनुपान—जल।

दोनों समय भोजनोत्तर लें।

तले हुए पदार्थ न खावें। भोजन हल्का करें। भयभीत न हों। अवश्य लाभ होगा।

शुभ सूचना

अपने एजेण्टों व ग्राहकोंको सूचित करते हुए हर्ष होता है कि निम्न लिखित आसव-अरिष्ट विक्रीके लिये तैयार हैं। वे जितना चाहें उतना माल मंगा सकते हैं।

- | | | |
|-------------------------|------------------------|-------------------------|
| १. अरविन्दासव | १३. खादगारिष्ट | २५. पुनर्नवासव |
| २. अभयारिष्ट | १४. खजूंगसव | २६. फलासव |
| ३. अमृतारिष्ट | १५. चन्दनासव | २७. बबूलारिष्ट |
| ४. अजुनारिष्ट | १६. जोरकाद्यारिष्ट | २८. भृङ्गराजासव |
| ५. अश्वगंधारिष्ट | १७. त्रिफलारिष्ट | २९. रक्तशोधकारिष्ट |
| ६. अशोकारिष्ट | १८. दशमूलारिष्ट | ३०. लोधासव |
| ७. उशीरासव | १९. देवदार्वारिष्ट | ३१. लोहासव |
| ८. कनकासव | २०. द्राक्षारिष्ट | ३२. वासारिष्ट |
| ९. कार्पासारिष्ट | २१. द्राक्षासव (नं० १) | ३३. सारिखासव |
| १०. कुटजारिष्ट | २२. द्राक्षासव (विशेष) | ३४. सारस्वतारिष्ट नं० २ |
| ११. कुमार्यासव (हरीतकी) | २३. पत्राङ्गासव | |
| १२. कुमार्यासव (भस्मसह) | २४. पिप्पल्यासव | |

योगेन्द्रस, सुवर्णमालिनीवसंत नं० १, सुवर्णमालिनीवसंत (विशेष) तैयार हैं।

व्यवस्थापक—

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

* अनुग्राहक ग्राहकोंको आवश्यक सूचना *

नियमानुसार स्वास्थ्य' का वर्ष अगस्तमें समाप्त होता है। सितम्बर मासके अङ्कसे नवीन वर्ष प्रारम्भ होगा। जिन महानुभावोंने नवीन वर्षका चन्दा अभी तक नहीं भेजा है वे कृपाकर अपना चन्दा मनीआर्डर द्वारा शीघ्र ही भेजनेका कष्ट करें। बी. पी. से भेजनेका नियम नहीं है क्योंकि उससे संस्था और ग्राहक दोनोंको ही हानि होती है।

—सम्पादक

हृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन कातेड़ा (अजमेर) की

पित्त एवं उष्णता शामक उत्तम औषधियां

(१) मुक्तापिष्टी—उत्तम वसराई मोतीकी यह पिष्टी मधुर एवं शीतल होनेसे वात एवं पित्तका शमनकर हृदय, मस्तिष्क, तथा फुफ्फुसको बलवान बनाती है तथा रस, रक्त, शुक्र और ओजोवर्द्धक है। ज्वर ज्वरोंमें उत्तम-खटिकाभरण (Calcification) करती है। अम्लपित्त, समस्त शरीरका सन्ताप, मूत्रदाहको नष्ट कर रक्तसावको बन्द करती है। भ्रम, मूर्च्छा, घबराहट, निद्रानाश, उन्माद और हृदयके रोगोंमें अद्भुत लाभ करती है।

(२) ब्राह्म रसायन (सुवर्णयुक्त विशेष)—बुद्धि-स्मृति-मेधावर्द्धक, उत्तम रसायन, शक्तिप्रद, उदरशोधक। बालक, वृद्ध, युवा, स्त्री पुरुष सबके लिए हितावह है।

(३) कामदुधा रस—यह उत्तम वसराके मोती, प्रवालपिष्टी, गिलोयसत्व आदि प्रधान रस होनेसे शीतवीर्य, मधुर एवं वातपित्तका संशामक तथा शक्तिदायक है। हृदय और मस्तिष्कको बलवान् बनाता है। जीर्णज्वर, सर्वांग सन्ताप, अम्लपित्त, मूर्च्छा, श्वेत रक्त प्रदग्, सोमरोग तथा सर्गा स्त्रियोंका वमन नष्ट करनेमें लाभप्रद है।

(४) बृहत् सुवर्णमालिनी वसन्त—सुवर्ण, मुक्ता, केशर, कम्तूरी, गोरोचन, शतपुटी नागभस्म तथा सहस्रपुटी अभ्रकभस्म यह विशेष योग सुवर्णमालिनी वसन्त की अपेक्षा गुणोंमें अत्यधिक उत्कृष्ट प्रमाणित हुआ है। जीर्णज्वर, राजयक्ष्मा, शुक्रज्वर, अग्निमांश, यकृतदौर्बल्य, पाण्डु तथा रक्ताल्पतामें शीघ्र चमत्कारी प्रभाव दिखाता है।

(५) सूतशेखर रस (सुवर्णयुक्त)—वातप्रकोप तथा पित्तकी अम्लता और तीक्ष्णताका शामक है। भ्रम, निद्रानाश, अम्लपित्त, खट्टे और गरम वमन, अम्लोद्वार, मूत्रदाह और शीतपित्तमें विशेष लाभकारी है।

(६) नवरत्नकल्पामृत रस—नवरत्नोंकी पिष्टीसे निर्मित यह रस एक वर्ष तक कल्परूपमें लेनेसे शरीरको जरा, वाद्वेक्य और क्षीणतासे मुक्त कर अद्भुत बलशाली बना देता है। जीर्णज्वर, ज्वर, मधुमेह, स्वाभ, काम, प्रमेह, पाण्डुता और रक्ताल्पतामें पूर्ण लाभकारी है।



श्रीवृद्ध

अङ्क २]

आश्विन शुक्ल, ७ विक्रम सं० २०२२

[अक्टूबर १९]

अङ्गणवेदी वसुधा कुन्या जलधिः

स्थली च पातालम् ।

वल्मीकश्च

सुमेरुः

कृत-

प्रतिज्ञस्य वीरस्य ॥

बाणभट्ट ॥

“जिस वीरने व्रत ग्रहण कर लिया है और प्रतिज्ञा लेली है उसके लिए सभी कार्य सरल हो जाते हैं। विस्तृत पृथ्वी उसके लिए छोटे आंगनके समान हो जाती है, अगाध और अपार समुद्र छोटी नालीके समान क्षुद्र हो जाता है। अगम्य पाताल समस्थलके समान सुगम दृष्टिगोचर होता है तथा सुमेरु जैसे पर्वत वल्मीक (बामी) जैसे छोटे, मिट्टीके ढेरके समान नगण्य बन जाते हैं।”

आज पैंतालीस करोड़ वीरोंके इस भारत राष्ट्रने प्रतिज्ञा ली है कि अब राष्ट्रके अपमानकी और अहितकी किसी प्रकार उपेक्षा नहीं की जा सकेगी। कैसा भी शत्रु हो राष्ट्ररक्षाके लिए उसका प्रबल साम्मुख्य कर उसे परास्त किया जावेगा।

विद्वान् लेखकोंसे

१. मासिक 'स्वास्थ्य' में आयुर्विज्ञानसे सम्बद्ध अनुसन्धान, अन्वेषण, विशेष विचार, शास्त्रीय पर्यालोचन विषयक तथा सर्वहितकारी स्वास्थ्य सम्बन्धी लेख एवं सामग्री प्रकाशित की जाती है।
२. उत्तम उपादेय लेखोंपर शक्यनुसार पुरस्कारकी व्यवस्था भी की गई है।
३. जो लेख 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ भेजे जावें वे कागजके एक ओर स्पष्ट लिखे हुए होने चाहिये जिसमें कि लेख शुद्ध रूपमें प्रकाशित हो सके।
४. लेखोंमें जो उद्धरण आदि दूसरे ग्रन्थों, अन्य लेखकोंके लेखों अथवा पुस्तक आदिसे लिये जावें उनका निर्देश, लेखकोंके सदाचारके अनुसार, अवश्य करना चाहिये।
५. जो लेख 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ स्वीकृत और पुरस्कृत किए जाते हैं उनका प्रकाशन 'स्वास्थ्य' में प्रकाशित होनेसे पूर्व अन्यत्र न होना चाहिये। उनके अन्यत्र प्रकाशित करानेके लिए भी 'स्वास्थ्य' सम्पादककी स्वीकृति लेना उचित है।
६. जिन लेखोंके प्रकाशनमें हम असमर्थ हैं उन्हें शीघ्र ही लौटा देना हम अपना कर्तव्य समझते हैं। ऐसी स्थितिमें पोस्टेजके टिकट प्राप्त होनेपर दोनों ओर ही सुविधा रहती है।

विशेष सूचना

भविष्यमें 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ लेख एवं सभी प्रकारकी समाचार आदि सामग्री सुविधार्थ निम्न लिखित पतेपर भेजनी चाहिये।

श्री वैद्य ब्रह्मानन्द त्रिपाठी,
प्रधान सम्पादक—'स्वास्थ्य'
आनन्द चिकित्सा सदन, केसरगंज,
अजमेर

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन, कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर) राज०

दीपावली उपहार योजना

महोदय !

हमें यह सूचित करते हुये प्रसन्नता होती है कि हमने सदैवकी भांति इस वर्ष भी दीपावलीके पुनीत अवसरपर सभी श्रेणीके एजेण्टोंको हमारी औषधियों एवं पुस्तकोंकी विक्रीपर विशेष रियायत देनेका निर्णय किया है। अतः आपसे निवेदन है कि अधिकसे अधिक आर्डर देकर इस शुभ अवसरका लाभ उठावें—

इस योजनाके नियम निम्नानुसार हैं—

- १—यह योजना दिनांक १०-१०-६५ से १-११-६५ तक चालू रहेगी। अतः इस अवधिके अन्दर आर्डर हमारे कार्यालयमें पहुँच जाने चाहिए। दिनांक १-११-६५ के पश्चात् प्राप्त हुये आर्डर किसी भी प्रकार इस योजनामें सम्मिलित नहीं किये जायेंगे।
- २—केवल वे ही आर्डर इस योजनामें सम्मिलित किये जायेंगे जिन पर “दीपावली उपहार योजना” लिखा हुआ होगा।
- ३—इस योजनाके अन्तर्गत एकसे अधिक आर्डर आनेपर उनका पृथक् पृथक् बिल बनेगा और पृथक्-पृथक् बिलपर ही कमीशन दिया जायेगा।
- ४—इस योजनाके अन्तर्गत जो भी माल भेजा जायेगा उसका भुगतान नकद, बी० पी० या बैंकके मार्फत होगा। अतः बैंक या पोस्ट आफिसका नाम साफ साफ लिखें।
- ५—इस योजनाके अन्तर्गत भेजे गये बिलकी रकम भी एजेण्टकी वार्षिक विक्रीमें जोड़ी जायेगी।
- ६—अन्य सभी नियम एजेंसी नियमावलीके अनुसार ही लागू होंगे।
- ७—सूचीपत्रमें वर्णित सभी प्रकारकी स्वर्णमुक्ता प्रधान, भंग, अफीम युक्त औषधियां, मुक्तापिष्टी, प्रवालपिष्टी, मुक्ता भस्म, हीरा भस्म, ब्राह्मी आंवला तेल, श्याम केश तेल, कृष्ण दन्त मंजन आदि इस योजनामें सम्मिलित नहीं किये गये हैं। अतः इनका आर्डर दीपावली उपहार योजनामें सम्मिलित नहीं किया जावेगा और इसपर कोई रियायत नहीं दी जावेगी।
- ८—उपरोक्त कालम नं० ७ की औषधियोंके अतिरिक्त सूचीपत्रमें वर्णित सभी प्रकारकी औषधियों एवं पुस्तकोंपर निम्न विशेष कमीशन दिया जावेगा।

बिलकी रकम

| |
|-----------------|
| १०१ से ३०० |
| ३०१ से १००० तक |
| १००१ से २००० तक |
| २००१ से अधिकपर |

विशेष कमीशन

| |
|-----|
| ३% |
| ५% |
| ७% |
| १०% |

केवल बिलकी रकमपर ही विशेष कमीशन दिया जायेगा।

- ९—जो औषधियां स्वाकमें न होनेसे आर्डरमेंसे कट जायेंगी उनकी सूचना यथा सम्भव सम्बन्धित एजेण्टको दे दी जायेगी। ऐसी कटी हुई औषधियोंके एवजमें दूसरी औषधियां एजेण्ट सूचनाकी तारीखके पन्द्रह दिनके भीतर पुनः मंगवा सकता है। और यह माल भी एजेण्टके पहिले आर्डरमें ही गिना जावेगा।

व्यवस्थापक—

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन, कालिङा-कृष्णगोपाल

आवश्यक सूचना

समस्त प्रेमी ग्राहकों व एजेण्टोंको सूचित किया जाता है कि भवन सदैव अपने ग्राहकोंको सूचीपत्रमें वर्णित समस्त औषधियोंका निर्माण करके उनकी मांगको पूरी करनेको प्रयत्नशील रहता है किन्तु कुछ राजकीय नियमोंके कारण व शुद्ध वस्तुओंके उपलब्ध न होनेसे निम्न औषधियाँ अभी स्टॉकमें नहीं हैं। तैयार होते ही पत्रिकाद्वारा सेवामें सूचना भेज दी जायगी। निम्न पुस्तकें भी अभी स्टॉकमें नहीं हैं।

अतः प्रेमी ग्राहक व एजेण्ट आर्डर देने समय इस बातका ध्यान रखनेकी कृपा करें। आशा है कि इनका निर्माण शीघ्र ही हो सकेगा।

| क्रमाङ्क सूचीपत्र औषधिका नाम | सूचीपत्र क्रमाङ्क औषधिका नाम | सूचीपत्र क्रमाङ्क औषधिका नाम |
|------------------------------|---------------------------------|---------------------------------|
| ४. अभ्रक भस्म (५० पुटी) × | १६८. लक्ष्मी विलास (सुवर्ण) | ४२४. अतिसारहर वटी |
| ७. अभ्रक भस्म (१००० पुटी) × | १६९. लक्ष्मी विलास (सुवर्ण वि०) | ४२७. अशोहर वटी (नं० १) |
| ५४. रौप्य भस्म × | १७०. वसन्त कुसुमाकर रस × | ४४०. कांकायन वटी (अर्श) × |
| ५५. रौप्य भस्म (१०० पुटी) | १७१. वसन्त कुसुमाकर रस (वि०) | ४७८. शक्तिवर्धक गुटिका |
| ८८. माणिक्य रस × | १७३. वीर्य स्तम्भन वटी | ४८५. सर्पगन्धादि वटी |
| ९९. सुवर्णभूषण रस × | (चन्द्रोदय कस्तूरी युक्त) | ४८६. हिस्टोरिया नाशक वटी |
| ११२. रत्न विजय पर्पटी × | १७४. वीर्य स्तम्भन वटी | ४९१. हिङ्गुकर्पूर वटी (नं० २) |
| ११९. सुवर्ण पर्पटी × | (सुवर्ण कस्तूरी युक्त) | ५०३. ताक्षीमादि चूर्ण (विजया) |
| १२३. कामचूड़ामणि रस | १८३. स्वर्ण मालिनी वसन्त | ५२५. लघुलाही चूर्ण |
| १२४. कामचूड़ामणि रस (विशेष) | (विशेष चन्द्रोदय) | ५३०. लाही चूर्ण |
| १२५. कुमार कल्याण रस | १८६. सूत शेखर रस | ५६०. खजूररसव |
| १२६. कुमार कल्याण रस (विशेष) | १८७. सूचिका भरण रस | ५८४. अस्थिसंधानक अर्क |
| १२९. चन्द्रोदय वटी × | १९७. ताप्यादि लोह (विशेष) × | ५८८. जम्भीरी द्राव × |
| १३०. चन्द्रोदय वटी | २३५. कनकसुन्दर रस | ५९५. रसोन रसायन |
| (सिद्ध मकरध्वज वटी) | २४१. बृ० कस्तूरी भैरव रस | ५९९. कुटजावलेह |
| १३६. जय मंगल रस | २४८. कृमिकुठार रस | ६०२. खमीरे गावजरां (जवाहर) |
| १४४. बृ० ब्राह्मी वटी | २८२. त्रैलोक्यसंमोहन रस | ६०६. ब्राह्म रसायन सुवर्ण (वि०) |
| १४९. बृ० वातचिन्तामणि रस | ३०३. पुष्पधन्वा रस | ६०९. माजून कुविला |
| (विशेष) | ३१६. भागोत्तर वटी × | ६४१. श्रीगोपाल तैल |
| १५६. महाशक्ति रसायन | ३५६. लक्ष्मीविलास (अभ्रक वि०) | ६८७. बाल रक्तक बिन्दु |
| १५९. मृगनाभ्यादि वटी | ३६०. लोकनाथ रस (विशेष) | ६८८. रसोनादि अर्क |
| १६४. योगेन्द्र रस | ३७५. शिलासिन्दूर वटी × | ६९२. स्त्रीगदांतक अर्क |
| १६५. योगेन्द्र रस (विशेष) | ४०४. ज्ञानोदय रस (नं० २) | ६९३. कल्याण बालामृत |
| १६६. लक्ष्मी विलास | ४०५. ज्ञानोदय रस (विशेष) | ६९६. सौंफका तैल |
| (सुवर्ण नारदीय) | ४१५. महा योगराज गूगल (वि०) × | |

पुस्तकें—(१) रसतन्त्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड (गुजराती भाषा)

(२) नेत्ररोग विज्ञान (३) संचिम औषध परिचय

नोट—जिन औषधियोंके आगमने के कारण कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन सुवर्णप्रधान औषधियाँ
 सुवर्ण भस्म वन जानेपर क्रमशः सुविधाजनक मात्रामें बनवायी जायेंगी। व्यवस्थापक

हमें अपने सभी प्रेमीजनों को यह सूचना देते हुए हर्ष है कि

जनवरी १९६६ का "स्वास्थ्यका" अङ्क

अनुभवाङ्क

के रूपमें प्रकाशित करनेका आयोजन किया गया है

इसमें विशेषरूपसे निम्न सामग्रीके प्रकाशनकी व्यवस्था की जा रही है ।

- १—विविध रोगोंके निदानके विषयमें सिद्ध हस्त वैद्योंके अनुभव ।
- २—चिकित्सा विषयमें अनुभव ।
- ३—किसी भी औषधके निर्माण और प्रयोगके विषयमें अनुभव ।
- ४—इन्द्रिय स्थान आदिमें वर्णित भिन्न रोगोंके अरिष्ट तथा स्वस्थ पुरुषोंमें अरिष्ट लक्षणोंपर अनुभव ।
- ५—किसी वनौषधि अथवा खनिज भस्म आदिके विषयमें विशेष अनुभव ।
- ६—तथा अन्य किसी भी आयुर्वेदीय विषयपर अनुभव ।

सारांश यह कि यह अङ्क उपर्युक्त विविध विषयोंमें अग्रणी, अनुभवी एवं विद्वान् वैद्यों और ऐसे विषयोंसे प्रेम एवं अभिरुचि रखने वाले महानुभावोंके लेखोंसे सुसज्जित होगा । विद्वान् लेखक बन्धुओंसे प्रार्थना है कि वे किसी भी रोग आदिके विषयपर पूरी ऊहापोह और स्पष्ट विवरणके साथ अपने दीर्घकालके उत्तम अनुभवको लिखकर आयुर्वेद जगत्को इस अङ्कके माध्यमसे अपनी अमूल्य देन देकर यशके भागी बनें ।

प्रधान सम्पादक

'स्वास्थ्य'

स्वास्थ्य

इस अंक में

*

—संचालक—

अध्यक्ष, ट्रस्टबोर्ड,

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेड़ा-कृष्णगोपाल

*

प्रधान सम्पादक,

वैद्य पं० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी बी. ए.

आयुर्वेद शिरोमणि, आयुर्वेदाचार्य

*

स० सम्पादक

वैद्य पं० बद्रीनारायण शर्मा
आयुर्वेदाचार्य

*

प्रकाशक एवं मुद्रक

पं० नवरत्नमल जोशी

व्यवस्थापक-कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन

*

मुद्रणालय

कृष्णगोपाल मुद्रणालय

कालेड़ा-कृष्णगोपाल

१. शत्रुके पराजयके लिये

५१

२. नूतन वर्षाभिनन्दन

५२

३. धन्वन्तरि वन्दन—

श्री गौरकृष्ण गोस्वामी

५२

४. सम्पादकीय—जयघोष, श्री धन्वन्तरि जयन्ती

५३

५. आयुर्वेदकी कुछ विशेषताएँ—

कुमारी मनोरमा

५७

६. आमवात—वैद्य श्री प्रह्लादराय देराश्री

६२

७. वृद्धि रोग—श्री कृष्णगोपाल गुप्त

६५

८. आयुर्वेदिक चिकित्सामें, शिलाजीतका उपयोग—

डा० सत्यनारायण खरे

६९

९. वातरक्तकी सफल चिकित्सा—

वैद्य सुरेशचन्द्र शर्मा गौड़

७४

१०. दही और उसका उपयोग—श्रीमती सुमित्रा देवी

७७

११. समाचार समीक्षण—श्री नारद

७९

भारत पाकिस्तान युद्ध, युद्धकी कुछ विशेषताएँ, अमेरिकाका दान खाता और ब्रिटेनका व्यापार, ब्रिटेनसे निम्न लिखित सामग्री आई, रूससे, फ्रान्ससे, महत्वकी घटना, सैबर जेट और नेट ब्रिटेनकी बन्दर चाल, प्रेसिडेंट नासिरने ब्रिटेनको दोषी ठहराया, सेनाध्यक्षोंकी दृष्टिसे, युद्ध विरामके समय, सुरक्षा परिषद्का प्रस्ताव, लोक सभाका स्वर

८८

१२. चिकित्सा परामर्श—

९२

१३. आयुर्वेद जगत्—

९६

१४. नीरक्षीर (साहित्य समालोचन)



श्रीधन्वन्तरये नमः

स्वास्थ्य

(स्वास्थ्य, सुमति, सुख और शान्तिके मार्गका प्रदर्शक मासिक पत्र)

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वयः सर्वं सर्वतश्च यः ।

यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

वर्ष १३. अङ्क २]

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

[अक्टूबर १९६५]

शत्रुके पराजयके लिए

ओम् । स्थिरा वः सन्त्वायुधाः

पराणुदे वीलू उत प्रतिष्कभे ।

युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी

मा मर्त्यस्य मायिनः ॥

ऋग्वेद । अ० १ । अष्टक ३ । वर्ग १८ । मन्त्र २ ॥

वः

हे धर्माचरण करने वाले पुरुषो,

तुम्हारे

आयुधाः

विविध अस्त्र-शस्त्र आदि

स्थिराः

स्थिर, दृढ़

वीलू सन्तु

तथा प्रशंसनीय हों ।

उत पराणुदे

और शत्रुको रोकने तथा उसको पराङ्मुख करके उसका पराजय करनेके लिए हों ।

युष्माकं तविषी

तुम्हारी मर्त्य तथा धर्मके लिए लड़ने वाली सेना

पनीयसी अस्तु

दुराचारी शत्रुका पराजय करके प्रशंसनीय हो ।

मायिनः मर्त्यस्य

अधर्माचारी होनेके कारण विनाशकी ओर जाने वाले दुष्टोंकी सेना

मा (अस्तु)

नूतन वर्षाभिनन्दन

इस वर्ष दीपावली महोत्सव दि० २४ अक्टूबरको मनाया जा रहा है

इस राष्ट्रीय महापर्वके अवसरपर

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन और स्वास्थ्य परिवार

वर्तमान युद्धमें भारतकी रक्षार्थ वीरगति प्राप्त, हुतात्मा, महावीर योद्धाओंके प्रति अपनी विनम्र एवं कृतज्ञता पूर्ण श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

तथा

शूरवीर एवं पराक्रमी आहत वीरों और सर्वदा विजयशील भारतीय सुरक्षा सेनाके प्रति हार्दिक सम्मान प्रदर्शित करते हुए उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि राष्ट्र उनसे गौरव अनुभव करता है और वह अपने पूरे सामर्थ्यसे उनके साथ है।

इस महा सङ्कटके समय अपनी समस्त सामर्थ्यको राष्ट्र रक्षाके निमित्त अर्पण कर देना ही वास्तविक दीपावली महोत्सव होगा।

धन्वन्तरि-कन्दन

रचयिता—आचार्य गौरकृष्ण गोस्वामी शास्त्री, काव्य-पुराण-दर्शन तीर्थ

आरोग्य अवधि के अग्रदूत

उन्मथित उदधि मधि सम्प्रसूत

हे तपः पूत !

हे सिद्ध सूत !

शतशः प्रणाम , शतशः प्रणाम ॥१॥

सुरमणिरमणीमणिवन्द्यमान !

जन जन के जाग्रत स्वाभिमान !

गौरव विहान !

गुण गीति गान !

शतशः प्रणाम , शतशः प्रणाम ॥३॥

हे निखिल लोक लीला ललाम !

अव्यक्त ! अनामय ! अज ! अकाम !

नयनाभिराम !

दुःखके विराम !

शतशः प्रणाम , शतशः प्रणाम ॥२॥

सुखरित तन्त्रीके सप्ततार !

सेवा स्वरकी अग्रिम कतार !

अब तार तार

करुणावतार !

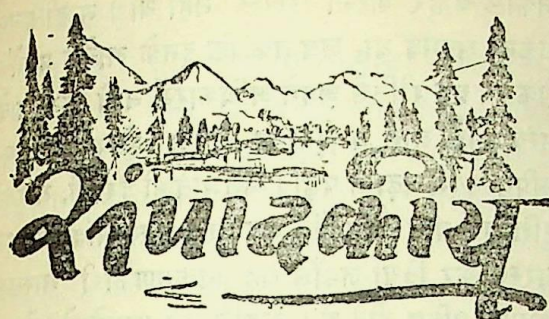
शतशः प्रणाम , शतशः प्रणाम ॥४॥

गददलित जगज्जन एक प्राण !

होकर भी रतिके पथ्व वाण !

हे आर्त्तत्राण !

हे भ्राम्यमाण !



जय घोष

इधर कुछ दिनोंसे भारतके भाग्याकाशमें संकटके बादल छाए हुए से प्रतीत होते हैं। 'भाग्याकाश' इस लिए कि भारत करता तो अच्छा ही है परन्तु परिणाम उसके लिए विपरीत होता है। अपनी स्वतन्त्रताके पश्चात्-कालमें हमारी परम्पराओं, महान् नेताओंकी सदिच्छाओं तथा उच्च आदर्शके कारण हमने कभी किसी राष्ट्रका अनिष्ट चिन्तन नहीं किया। सबके संकटमें यथा सम्भव सहायता, सहृदयता और सहानुभूति सभी देशोंको हमसे अयाचित रूपमें मिलती रही है। पाकिस्तानको तो हम अपना भाई ही मानते आए हैं। स्वयं कष्ट उठाकर और अपने स्वार्थोंको गौण स्थान देकर भी हमने सदा उसका शुभचिन्तन और हित साधन किया है।

परन्तु पाकिस्तान है कि उसने भारतको, उसकी समृद्धिको फूटी आंख भी देखना सहन नहीं किया। उसने स्वतन्त्रताके इन विगत अट्ठारह वर्षोंसे अपनी राष्ट्रीय अभिवृद्धि, उन्नति एवं आत्मनिर्भरताकी ओर दृष्टि होकर कभी ध्यान ही नहीं दिया। उसने कभी यह सोचा ही नहीं कि यदि भारत अपनी उन्नतिका प्रयास करता है तो वह उससे अधिक प्रयत्न करके इस दौड़में भारतसे आगे निकल जावे। यह बात उसकी समझमें ही नहीं आई कि खिंची हुई दो समान रेखाओंमें से एक रेखाको बढ़ाकर दूसरी रेखाको

इन बीते दिनोंमें यदि हम जीते थे तो वे रोते थे। हम चलते थे तो वे जलते थे। हम बढ़ते थे तो वे कुढ़ते थे। उन्होंने अपनी अभिवृद्धि और उन्नति इसीमें समझी कि हमें किसी प्रकार समाप्त कर दिया जावे। हमारे देशको नौच खसोटकर 'तवाह' किया जावे। दूसरोंसे हथियार मांगकर हमारा शिरशेखर कर दिया जावे। इसीलिए पाकिस्तानके नेताओंने पहिले दिनसे ही इस नीतिका अनुसरण करके कश्मीरके भारतमें सम्मिलित होनेके निश्चय करते ही कश्मीरपर, भारत पर, आक्रमण कर दिया। दन्तोद्गम होनेसे पहिले ही काटना प्रारम्भ कर दिया।

उस समय कश्मीरके इस प्रथम संघर्षमें भारतीय सेनाकी शक्ति और सामर्थ्य होते हुए भी, आगे बढ़ कर अपना समस्त प्रदेश पुनः हस्तगत करनेकी प्रबल इच्छा होते हुए भी, हमारे उदार चेता महान् नेताओंने युद्ध विराम स्वीकारकर अपनी सदिच्छाका परिचय दिया। हमारी रक्त सेनाएं मन मार कर रह गईं। हमारे देशकी ही पवित्र भूमिपर आक्रान्ताके जमे रहते हुए भी कश्मीरमें ही एक युद्ध विराम रेखाकी सृष्टि हुई। कूटनीतिज्ञोंके लिए भारतको अपने वशमें रखनेकी स्वर्ण रेखाका आविर्भाव हुआ। उन्हें भारतको वशमें रखनेके लिए एक चमत्कारिक जादूकी छड़ी मिल गई। हमने इस विषयको विश्वराष्ट्र संघको सौंप दिया। उनकी बांछें खिल गईं। हमारी चाभी उनके हाथोंमें आ गई।

उसके बादसे आज तकका इतिहास एक विचित्र युद्धका इतिहास है। पाकिस्तान जब चाहता हमें चुटकी भर लेता। शिकायत विश्वराष्ट्र संघमें पहुँचती और यह कूट नीतिज्ञ देश हमारे सुमैत्री होनेका प्रदर्शन करते हुए संघके क्षेत्रमें अपनी सांठ गांठसे हमारी ही पूंछ ऐंठते। पाकिस्तान अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें सर्वत्र हमारा अहित करनेका प्रयत्न करता। भिन्न-राष्ट्रोंका वह लाइला मुज्जा बन गया। सीएटो और सेन्टोकी सन्धियोंमें भागीदार बना। विदेशोंसे सैनिक सामरिक सामग्रीके उसको उपहार प्राप्त हुए। अमेरिकाने तो उसे मुक्त हस्त होकर अरबों रुपयेके शस्त्रास्त्र, विमान, पोत आदि साधन कल्पवृक्षके शिशुपथोंके अनुमानके अनुसार

पाकिस्तानको लगभग दो अरब डालरकी यह सहायता प्राप्त हो चुकी है।

कभी भी सीमापर गोली चलाने लगना, तो एक नित्यकी सामान्य सी, स्वाभाविकसी, घटना होगई थी। भारतका काम था विरोध पत्र और फिर कड़े विरोध पत्र भेजना। यह क्रम इतने दीर्घ कालसे इस प्रकार चल रहा था कि भारतीय सामान्य जन यह सोचने लगा था कि भारत सरकारका यही रुख बना रहेगा और वह पिटते रहेंगे। लोग इसे दबू और नपुंसक नीति कहनेमें नहीं हिचकते थे। इस प्रक्रियामें अगणित निर्दोष भारतीय सिपाही और प्रजाजन शनैः शनैः आततायियोंकी गोलीके घास बन गए।

हम शान्ति और सद्भावनाके गीत गाते थे, वे गोलीसे बात करते और कश्मीरको फतह करनेके नारे लगाते थे। वे कश्मीरके लिए इतने उतावले और पागल हो रहे थे कि जब अमेरिकाद्वारा उनकी इच्छा उनकी अधीरताके अनुकूल शीघ्र पूर्ण नहीं होसकी तो उन्होंने चीनका पल्ला पकड़नेमें भी संकोच नहीं किया। अमेरिकासे प्राप्त अरबोंकी सहायताका भी विचार न कर वह चीनके साथ घुल मिल गए और भारतको दो ओरसे दबाने तथा खसोटनेके 'प्लान' बनने लगे।

चीनसे सांठ गांठके बलपर पाकिस्तानने ५ अगस्तको कई सहस्र-कमसे कम ५ सहस्र-नियमित सैनिकोंको छद्मवेषमें कश्मीरमें तोड़ फोड़ करने और आन्तरिक विद्रोह भड़कानेके लिए भेजा। परन्तु भारतके दिन ही कुछ सीधे थे कि उनका यह कार्य गुप्त न रह सका और सम्बद्ध अधिकारियोंको यह सूचना मिल गई और पाकिस्तानियोंका षड्यन्त्र खुल गया। पाकिस्तानियोंने जैसा भरोसा किया था कि कश्मीरी मुसलमान सम्प्रदायवादके आधारपर उनका साथ देंगे और कश्मीरसे भारत सरकारके पैर उखाड़ देंगे वह कुछ बात नहीं हुई। इसके विपरीत वहाँके लोगोंने उनका पता देने, उनको पकड़वाने और षड्यन्त्रको विफल करनेमें अपनी सरकारका पूरा पूरा ही नहीं, अपितु उरसाह पूर्वक साथ दिया।

भारतके लिए यह एक कठिन समस्या थी। गुप्त रूपसे और अच्छे प्रकार सुसज्जित होकर सुविचा-

रित षड्यन्त्र लेकर आया था। इन विनाशक तत्वोंको निकाल बाहर करना सरल नहीं था। न ही इनको रोकना सम्भव था, जब तक कि इनके आनेके मार्गोंको रोककर हड़ रीतिसे अपने अधिकारमें न ले लिया जावे। अन्य कोई मार्ग न देखकर विवश हो भारतको एक अप्रिय कदम बढ़ाना पड़ा। अनुमतिकी देर थी, भारतके सुशिक्षित वीर सैनिकोंने बढ़कर उन स्थानोंको सफटना प्रारम्भ कर दिया जहाँसे यह आक्रमणकारी भारतकी सीमामें प्रविष्ट होते थे। उन्होंने उन स्थानोंको भी नहीं छोड़ा जहाँपर इन्हें शिक्षा देकर अस्त्रशस्त्रसे सुसज्जित कर इधर भेजा जाता था।

इस पर्वतीय युद्धमें, जो कि सहस्रों फीट ऊंचे शिखरों पर होता था, भारतीयोंने अश्रुतपूर्व वीरता, साहस और चातुर्यका प्रदर्शन किया। शत्रुको जनहानिके साथ ही सामरिक सामग्रीकी भी भारी हानि उठानी पड़ी। भारी मात्रामें शस्त्रास्त्र और गोलाबारूद हमारे हाथ लगा। शत्रुने देखा कि जो विद्रोहकी आशा उसने की थी, जिसके आधारपर वह अपने 'गन्धर्व नगर'का निर्माण कर रहा था, वह एक दुराशा और अमत् कल्पना मात्र सिद्ध हुई। जो विध्वंसक सैनिक उसने गुप्तरूपसे कश्मीरमें भेजे थे उनका विनाश उसे स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगा। अच्युत साहबने स्वयं जिन्हें विनाशका आदेश देकर भेजा था उनके लिये मृत्युका सन्देश आ चुका था। साथ ही अपने प्रदेशमें बड़ी साज सम्भालसे बनाएहुए अड्डे भी हाथसे धोने पड़े। मार्शल साहबके लिए इसको सहन करना कैसे सम्भव था। उन्होंने आधुनिक शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित भारी सेनाको दुर्भेद्य टैंक आदि साधन देकर कुटिल अभिसन्धि पूर्वक अन्तर्राष्ट्रीय सीमाका उल्लङ्घन करके छम्ब जौरियाँ क्षेत्रपर आक्रमण करनेके लिए भेज दिया। साथ ही अन्य क्षेत्रोंमें आक्रमणकी योजना बनाई।

भारतीय सेनाध्यक्षोंने देखा कि यह आक्रमण बहुत भयंकर है और पूर्ण युद्ध है। सामान्य स्थितिको बनाए रखनेपर इसको रोकना सम्भव नहीं है। वह पूरी आशङ्का है शत्रु अपनी कुटिल आकाङ्क्षाकी पूर्तिमें सफल होजावे और कश्मीरको देशके शेष भाग से अलग कर दे। ऐसी स्थितिमें विवश होकर उन्हें

लाहौर, कुसूर और स्यालकोटके क्षेत्रोंमें नए मोर्चे खोलने पड़े।

इन क्षेत्रोंमें जो आशातीत चमत्कार भारतीय सेना ने दिखाये और जिस तेजस्विताके साथ उन्होंने शत्रुको खदेड़ा उसे देखकर प्रत्यक्षमें दोनों देशोंके शुभाकाङ्क्षी मित्र परन्तु परोक्षमें पाकिस्तानके परम सहायक और हमारे घातक कूटनीतिज्ञोंने प्रचारित करना प्रारम्भ कर दिया कि भारतने पाकिस्तानपर आक्रमण किया है। उधर चीनने भी उत्तरीय सीमापर अपनी सेना एकत्र कर युद्धकी धमकियां देना प्रारम्भ कर दिया। परन्तु भारतने यह स्पष्ट कर दिया कि वह मिट्टीका खिलौना नहीं है। किसी भी क्षेत्रसे कोई आक्रमण होगा तो हम उसका डटकर मुकाबला करेंगे।

जैसा कि ऊपर कहा गया है इस समय युद्ध विराम चल रहा है। गोला बारी भी हो रही है। साथ ही कूटनीतिक संघर्ष भी सुरक्षा परिषद् और राष्ट्र संघमें भी चल रहा है। निश्चय ही यह अभूतपूर्व संकटका समय है। सब ओरसे हमपर दबाव है। सीमाओंपर शत्रु अड़े हैं। पंचायत और बीच बिचाव करनेवालोंमेंसे बहुतसे पक्षपात और दुरभिसन्धिसे पूर्ण प्रतीत होते हैं।

यह सोचना कि हमारी सेनाओंने पाकिस्तानकी प्रहार शक्तिको भारी ठोस पहुँचायी है और उनके साधन बड़ी मात्रामें कम हो गए हैं अतः उससे अब उतना भय नहीं है, बड़ी भारी भूल और आत्म-प्रवृत्ति होगी। यह बात सदा ध्यानमें रखने योग्य है कि पाकिस्तानको यह सभी सैन्य सामग्री उन्हीं स्रोतों और मार्गोंसे फिर भी प्राप्त हो सकती है वह फिर अपने दुष्ट संकल्पोंको पूरा करनेके लिए उनका इसी प्रकार उपयोग भी कर सकता है। अतः सुरक्षा परिषद्के प्रस्तावको स्वीकारकर इतने परिश्रम और बलिदानके बाद प्राप्त की हुई अपनी स्थितिको छोड़ देना और अपनी सेनाओंको पीछे हटा लेना राष्ट्रके लिए परम घातक भूल होगी।

इन सब परिस्थितियोंको लक्ष्यमें रखकर आज राष्ट्रने अपना अभिमत और दृढ़ निश्चय सबल एवं उच्चस्वरमें अभिव्यक्त कर दिया है।

लालबहादुर शास्त्रीने स्पष्ट शब्दोंमें समस्त संसारको बता दिया है कि हम शान्ति और सौहार्दके इच्छुक हैं। इसके लिए हमने प्रयत्न भी किये हैं और बलिदान भी। परन्तु राष्ट्रका यह दृढ़ निश्चय है कि राष्ट्रके लिए घातक किसी भी आक्रमणका पूरी शक्तिसे सामना किया जावेगा और उसको ध्वस्त कर दिया जावेगा।

आज राष्ट्र पुरुषने जयघोष किया है, राष्ट्रका प्रत्येक व्यक्ति विजयकी प्राप्तिके लिए सर्वस्व बलिदान करनेको उत्थत है और सदा रहेगा।

श्री धन्वन्तरि जयन्ती

धन्वन्तरि जयन्ती वैद्योंका पावन पर्व है। आयुर्वेद के प्रवर्तक, विकासक, वर्धक और रक्षक सभी ऋषियों और आचार्योंके श्री धन्वन्तरि प्रतीक हैं। वास्तवमें उनके नामसे हम उन सभी आचार्यों और महापुरुषोंका इस पावन पर्वपर स्मरण करते हैं, जिन्होंने कि मानव कल्याणकी सर्वोच्च पुण्य भावनासे प्रेरित होकर अपना जीवन इस कार्यके लिए समर्पित किया। अपनी प्रतिभा और शक्तिका सर्वोत्तम सार और नवनीत त्रस्त मानवको सन्तापोंसे मुक्त करनेके लिए कृपा पूर्वक प्रदान किया।

यह पर्व वैद्योंके लिए आयुर्वेदकी अभिवृद्धि, और उसके द्वारा वर्ष भरमें किए हुए लोक सेवा सम्बन्धी कार्योंका लेखा जोखा करनेका अवसर है। महर्षियोंने जो महान् निधि हमें सौंपी है उसमें हमने क्या योग दिया है और क्या खोया है। भविष्यमें क्या करना है और कैसे करना है। हम उस पुण्य कार्यको पूरी ईमानदारी, पूरे बल और उत्साहसे कर रहे हैं या नहीं। उसमें क्या त्रुटि है और क्या संशोधन हमें करने है।

इन सब बातोंको दृष्टिमें रखकर जब हम विचार करते हैं तो ज्ञात होता है कि हम जितना मार्ग अभी तक चल आए हैं वह शेष रहे मार्गकी तुलनामें नगण्य है, हमें अभी बहुत कुछ करना है। बहुत चलना है और चलते ही जाना है। विज्ञान अगम और अगाध है, अनन्त है। इस लिए इस मार्गका कहीं अन्त ही नहीं है। इस मार्गमें हम अपनी समस्त शक्ति, सद्भावना

उनकी अध्यासजन्य कुशलता का ।
ऐसी स्थितिमें वैद्यको शल्य ज्ञान प्राप्त करनेवा
प्रयत्न करना अनिवार्य हैं । आज वैद्य समाज यह
नारे लगाता है कि आयुर्वेदको राष्ट्रीय चिकित्सा बनाया
जावे । ठीक है, आयुर्वेद महान् विज्ञान है । परन्तु
आप विज्ञानको जब उसके सर्वाङ्गोंसे पूर्ण रूपमें प्रस्तुत
ही नहीं करते तो उसे राष्ट्रीय रूप देकर अधूरे राष्ट्रीय
चिकित्सा विज्ञानसे कार्य साधन करनेकी धृष्टता कीजिए ।
(शेष पृष्ठ ९५ में)

आयुर्वे
भाज ३
आतप
दूर्वाके
विषय

है, जी
जितने
वेदोंको
उनके
वैदिक
इसका
है। क

नुत्पा
कृतव

उपाङ्ग

पूथ ग

सन्देह

प्रशास्त्र
पर ३

अपने

आभ
कि ल

जा स
दि

निर्देश
बायु

अपनी



आयुर्वेदकी कुछ विशेषताएं

लेखिका—कुमारी सनोरमा

विदुषी लेखिकाने आयुर्वेदकी जो विशेषताएं यहां प्रदर्शित की हैं वे वास्तवमें वह तत्त्व हैं जिनके कारण आयुर्वेद आज इस बीसवीं सदीके तथाकथित प्रकाशमें भी अपनी आभाको न खोकर अधिक दीप्तिमान है; आज अनेक प्राचीन परम्पराओं और मान्यताओंकी जड़ोंके हिल जानेपर भी हृदयासे बद्ध मूल है; उद्येष्टके आपमें सूख जाने वाली, झुलस जाने वाली और फिर वर्षाके थोड़ेसे विन्दुओंको पाकर हरी हो जाने वाली दूर्वाके समान थोड़े ही साहाय्य और सद्भावनासे फिर पल्लवित होनेकी क्षमता रखता है। इन वैशिष्ट्योंके विषयमें अधिक प्रकाश डालनेके लिए धुरीण विद्वानोंकी लेखनीकी अपेक्षा है। सम्पादक

आयुर्वेद एक परम वैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति है, जीवन विज्ञान है, जो कि उतना ही प्राचीन है जितनी कि भारतीय सभ्यता और वेद। जो लोग वेदोंको ईश्वरका अनादि एवं नित्य ज्ञान मानते हैं उनके मतसे आयुर्वेद भी अनादि और नित्य ही है। वैदिक दृष्टिसे आयुर्वेदका प्रादुर्भाव वेदसे ही होता है। इसका प्रारम्भ प्रजाओंकी उत्पत्तिसे भी पूर्व ही हुआ है। कहा भी है—

“इह खल्वायुर्वेदो नाम यदुपाङ्गमथर्ववेदस्था-
नुपाद्यैव प्रजाः श्लोकशतसहस्रमध्यायसहस्रञ्च
कृतवान् स्वयम्भूः।” सुश्रुत। सूत्र स्थान। अध्याय १॥

“.....आयुर्वेद वह है, जो कि अथर्ववेदका उपाङ्ग है और जिसके एक लाख श्लोकों तथा एक सहस्र अध्यायोंकी रचना स्वयम्भूने प्रजाओंकी उत्पत्तिसे पूर्व ही की थी।”

जो भी हो इस आयुर्वेदकी अकल्पनीय प्राचीनतामें सन्देह नहीं है। इतने सुदीर्घकालमें इसका शाखा प्रशाखाओंमें अनन्त विस्तार हुआ। प्रत्यक्ष एवं अनुभव पर आधारित होनेसे सहस्रों विद्वानों और ऋषियोंने अपने अनुभव और उपलब्धियोंके आधारपर इसकी अभिवृद्धि की। ऐसी स्थितिमें यह तो सम्भव नहीं है कि उसकी सभी विशेषताओंका यहाँ दिग्दर्शन कराया जा सके। फिर भी वर्त्तमान स्थितिको देखते हुए कुछका निर्वेश किया जा सकता है, जिनके कारण कि आयुर्वेद इस समय भी दूसरी पद्धतियोंकी अपेक्षा अपनी श्रेष्ठता एवं अधिक प्रासंगिकता रखता है।

प्राचीन ऋषियों और मुनियोंके प्रत्येक कार्यका एक मुख्य लक्ष्य रहा है ‘स्वाधीनता’ या ‘आत्म निर्भरता’। जो कार्य दूसरोंके आधीन हों, जिनपर अपना वश न हो, उनको बन्धनका कारण समझा जाता रहा है।

“सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम्।”

“दूसरोंके वशमें रहने वाला सभी कुछ दुःखजनक है और अपने वशमें, अपने आधीन रहने वाला सभी कुछ सुखजनक है।”

इसी प्रवृत्तिके कारण आयुर्वेदके विकासमें भी आत्म निर्भरताका यह लक्ष्य स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। निदानके विषयको ही ले लीजिये। आयुर्वेद

शास्त्रमें निदान अथवा रोगके कारणों और लक्षणोंको जाननेके जो उपाय बताए गये हैं उनके द्वारा वैद्य स्वयं अपनी ज्ञानेन्द्रियोंकी सहायतासे रोगका निर्णय पूरी तरह कर सकता है। ऐसा निदान निर्दोष और सफल भी होता है। इस विशेषताका अनुभव अनेक अच्छे डाक्टरोंने भी किया है। डा. के. एस्. भास्कर एम्. ए., एम्. डी., बी. एस. सी., डी. पी. एच., डी. टी. एम्. एण्ड एच. जिन्होंने कि भारत सरकारके रिसर्च डिपार्टमेंटमें जन्मभर कार्य किया, ने लिखा है—

“The Ayurvedic theory and method of diagnosis sufficed in its day and will suffice to day if it is denuded of much of its verbiage originating from well meaning enthusiasts of this

Report of the Ayurvedic and Unani Systems' Reorganisation Committee, U. P., Vol. II page 206.

“आयुर्वेदीय निदानका सिद्धान्त और रीति अपने समयमें पर्याप्त रही है और यदि उसे इस शताब्दीके उत्साही जनोद्वारा प्रारम्भ किए हुए शब्दाढम्बरसे मुक्त कर दिया जावे तो आज भी वह पर्याप्त हो सकती है।”

इसके विपरीत आधुनिक पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञानमें यह सम्भव नहीं है। रोगका निर्णय चिकित्सक अपनी बुद्धि और ज्ञानेन्द्रियोंकी सहायतासे नहीं कर पाता। पैथोलॉजिकल लेबोरेटरी आज उचित निदानके लिए अनिवार्य और अपरिहार्य है। अनेक उपकरण और साधन उसके अभिन्न अङ्ग बन गए हैं। क्योंकि रोगोंको उत्पन्न करने वाले कीटाणु आंखोंसे देखे नहीं जा सकते। रक्त, मूत्र, कफ, मल आदिमें निकलने वाले पदार्थोंकी परीक्षा रासायनिक विधियोंके बिना और सूक्ष्म दर्शक आदिकी सहायताके बिना असम्भव है। बहुत बार भीतरके अङ्गोंको देखना भी आवश्यक होता है जो कि बिना X Ray आदिके हो नहीं सकता। रोगी बहुत सा समय और धन नष्ट करनेके अनन्तर भी प्रायः रोगका उचित एवं यथार्थ निदान करवानेमें असमर्थ रहता है। फिर उसकी ठीक ठीक चिकित्साकी सम्भावना ही कैसे की जा सकती है। इसका अनुभव भी इस युगके अनेक मूर्खन्य डाक्टरोंने भी किया है। श्री डा. के. सी. राजा ने, जबकि वे भारत सरकारकी हेल्थ सर्वे एण्ड डिवलपमेण्ट कमिटीके मन्त्री थे, कहा था—

“As you are all aware, to-day modern methods of diagnosis and treatment have become so costly that it is only the very rich people that can really get the benefit out of modern medicine. If you go to a physician very often he refers you to an X Ray specialist to make a report and get an X Ray photograph or he may refer you to a biochemist to get your blood tested out and

he might refer again to a pathologist to have a specimen taken and examined and to meet all these payments it is only a man who is very rich.....”

Report of the Ayurvedic and Unani systems' Reorganisation Committee, U. P., Vol. I.

“जैसा कि आपको ज्ञात ही है कि आजकल रोग निदान और चिकित्साकी आधुनिक विधियाँ इतनी अधिक महँगी हो गई हैं कि केवल बहुत अधिक धनवान् व्यक्ति ही आधुनिक चिकित्सा और औषधका लाभ उठा सकते हैं। यदि आप किसी चिकित्सकके पास जावें तो वह प्रायः आपको एकसरे विशेषज्ञके पास उससे रिपोर्ट लेने और एकसरे फोटोग्राफ लेनेके लिए भेज देगा। अथवा वह आपको किसी बायोकेमिस्टके पास जानेकी सलाह देगा कि आप रक्त परीक्षा कराके आइये। इसके बाद भी वह आपको पैथोलॉजिस्टके पास भेज सकता है कि वह स्पेसीमेन लेकर उसकी परीक्षा करें। इस सबके भारी व्ययको वही व्यक्ति उठा सकता है जो कि बहुत धनवान् है.....”

परन्तु इतनेपर भी प्रायः रोगका निदान पूर्ण नहीं हो पाता।

तो फिर आयुर्वेदीय निदान पद्धतिकी सरलताका आधार और कारण क्या है? स्पष्ट ही यह आधार त्रिदोषका सिद्धान्त है। वात, पित्त, कफ ही अविभक्त अवस्थामें शरीरके धारण करनेवाले होते हैं। इसीलिए उन्हें धातु भी कहा जाता है। विभक्त अवस्थामें शरीरमें रोग उत्पन्न करके विनाशक बनते हैं। इसलिए उन्हें दोष कहा जाता है। कहा है—

“विकृताविकृता देहं घ्नन्ति ते वर्चयन्ति च ॥”
अष्टाङ्गहृदय। सूत्रस्थान।

जब यह तीन दोष ही शरीरके रोग और विनाशके कारण बनते हैं तब स्वाभाविक ही यह बात जाननेकी आवश्यकता होजाती है कि वे कौन सी वेदनाएँ हैं जो इनसे सम्बद्ध हैं। उन वेदनाओंका विभक्त रूपसे ज्ञान होनेपर उनकी चिकित्साके मार्ग भी प्राप्त किये

जा सकते हैं। इसीलिए वात, पित्त और कफसे होने-
वाली वेदनाओं, कार्यों अथवा लक्षणोंका आयुर्वेद
शास्त्रमें सर्वाङ्गपूर्ण विश्लेषण किया गया है। शरीरमें
होनेवाली जितनी भी वेदनाएँ हैं उनका इतना सुन्दर
संग्रह कर दिया गया है कि उनके अतिरिक्त कोई वेदना
या लक्षण ऐसा नहीं बचता, जिसकी किसी रोगमें
उपलब्धि हो सके। जब सब वेदनाएँ वात पित्त कफसे
ही सम्बद्ध हैं, उनके वृद्धि, ह्रास और प्रकोपसे उनका
उद्भव है, तो निश्चय ही इन्हीं तीनों दोषोंके प्रतिकारके
आधारपर सभी वेदनाओंका प्रतिकार किया जा
सकता है। जिसने इन तीनों दोषोंके रहस्यों समझ
लिया, इनके अंशांशीभावसे होनेवाले लक्षणोंके
जाननेमें द्युत्पात्ति और चातुर्य प्राप्त कर लिया वह
रोगोंके निवारणके लिए भी सीधामार्ग प्राप्त कर
सकनेमें समर्थ होता है।

चरक संहिताके सूत्रस्थान, बीसवें अध्यायमें वातसे
होनेवाले-नखभेद, विपादिका, पादशूल आदिसे लेकर
अस्वप्न और अनवस्थितता तक अस्सी विकारोंकी
गणना की है। उनका कहना है कि वातके विकार तो
अपरिसङ्ख्येय हैं फिर भी उन्होंने 'आदिष्कृततम'
अत्यधिक रूपमें प्रस्फुटित विकारोंका व्याख्यान
किया है।

इन विकारोंको देखकर कोई भी वह सकता है
कि रोगीमें वात दोषकी वृद्धि है। परन्तु इन अस्सी
विकारोंपर भी निर्भर रहनेमें कठिनाईका अनुभव होता
है। इन अस्सी विकारोंको सदा स्मरण रखना एक
समस्या है। अतः इसको और भी सरल बनाकर
बताया गया है।

“सर्वेष्वपि खल्वेतेषु वातविकारेषूक्तेष्वन्येषु
चायुक्तेषु वायोरिदमात्मरूपमपरिणामि कर्मणश्च
स्वलक्षणं, यदुपलभ्य तदवयवं वा विमुक्तसन्देहा
वातविकारमेवाऽध्यवस्यन्ति कुशलाः। तद्यथा-रौच्यं,
लाघवं, वैशद्यं, शैत्यं, गतिरमूर्तत्वं चेति वायो-
रूपरूपाणि भवन्ति। एवं विधत्वाच्च कर्मणः
स्वालक्षणमिदमस्य भवति।”

“इन सभी अस्सी वात विकारोंमें और यहांपर
न केवल अथवा वातविकारोंमें भी वायुका यह

अपरिणामी अपना रूप होता है और विकृत वायुके
कर्मका अपना लक्षण होता है, जिसको या जिसके
अवयव मात्रको भी देखकर कुशल लोग यह निश्चय कर
लेते हैं कि अमुक विकार वातजन्य ही है। वे यह हैं—
रूचता, लाघव, विशदता, शीतलता, गति और
अमूर्तता।.....”

कितनी सरलता हो गई है। जहां इस प्रकारके
कर्म देखे समझ लिया कि वायु जी यहांपर अपना
ढंग जमाए बैठे हैं।

इसी प्रकार इसी अध्यायमें पित्तके विकारोंका
वर्णन करते हुए ओष, प्लोष और दाहसे प्रारम्भकर हरित,
हारिद्र नेत्र, मूत्र तथा मलके होने तक चालीस पित्तके
विकार बताए हैं। वे कहते हैं कि पित्त विकार भी
अगणित, अपरिसंख्येय हैं फिर भी यह 'आविष्कृततम'
विकार यहां बताए गये हैं।

इसको भी सरल करते हुए बताया गया है कि
जो यह चालीस पित्त विकार परिगणित किये हैं और
जो नहीं भी बताए हैं उनमें पित्तका यह अपने
अपरिणामी रूप और विकृत पित्तके कर्मका लक्षण
होता है। जिसे या जिसके अवयवको देखकर कुशल
लोग विमुक्तसन्देह होकर यह निश्चय कर लेते हैं यह
पित्त विकार ही है। वे यह हैं—उष्णता, तीक्ष्णता,
लघुता, अनतिस्नेह, शुक्ल और अरुणके अतिरिक्त वर्ण,
विस्त्र गन्ध तथा कटु और अम्लरस।

कफके भी वृप्ति, तन्द्रा, निद्राधिकतासे लेकर
'श्वेत मूत्र नेत्र वर्चस्व' तक बीस आविष्कृततम
विकारोंका दिग्दर्शन कराके इन सभी विकारोंमें
श्लेष्माके वे अपरिणामी आत्मरूप और कर्मके निज
लक्षण बताए हैं जिनको या जिनके अवयवको देखकर
बुद्धिमान लोग यह समझते हैं कि अमुक विकार
कफका ही है। वे यह हैं—स्नेह, शीतता, श्वेतता,
गौरव, माधुर्य और मृत्तनता।

हम देखते हैं कि यह सब कुछ अति सरल हो
जानेपर भी उसे और भी अधिक सरल बनानेमें
शास्त्रकारोंने संकोच नहीं किया है। वे कहते हैं कि—

“शरीरके उन उन अङ्गोंमें वातके प्रविष्ट होनेपर
संस, प्रस, ध्यास, मेषास, हर्ष, तर्ष, कम्प, वर्त्त,

चाल, तोद, व्यथा, चेष्टा आदि तथा खर, परुष, विशद, सुषिर, अरुणवर्ण, कपाय अविरस मुख, शोष, शूल, सुप्ति, संकुचन, स्तम्भन तथा खञ्जता आदि वायुके कर्म होते हैं। इनसे युक्त विकारोंको वायुका विकार ही समझना चाहिये।”

“शरीरके उन उन अवयवोंमें पित्तके प्रविष्ट होनेपर दाह, उष्णता, पाक, स्वेद, कृद, कोथ, कण्डू, साव तथा राग होते हैं। और तदनुसार ही गन्ध, वर्ण तथा रस हुआ करते हैं। उनसे युक्त विकारोंको पित्त विकार ही समझना चाहिये।”

तथा—“शरीरके उस उस अवयवमें कफके प्रविष्ट होनेपर श्लेष्मता, शीतता, कण्डू, स्थिरता, गौरव, स्नेह, स्तम्भ, सुप्ति, कृद, उपदेह, बन्ध, माधुर्य और चिरकारिता यह लक्षण होते हैं। इनकी विद्यमानतामें यह कफका ही विकार है ऐसा निश्चय समझना चाहिये।

चरक। सूत्रस्थान। अध्याय २०।

यद्यपि दोषोंके विवेचनके लिए कुछ सूक्ष्म विचारों की और भी आवश्यकता होती है फिर भी इतना ही समझ लेनेपर किसी भी रोगके मूलमें कौन सा दोष कार्य कर रहा है यह समझना कठिन नहीं होता।

यों कहिये कि रोगोंकी और विकारोंकी सीमा नहीं है। वे अगणित हैं। उनको पृथक् पृथक् ही विचार करनेसे, उनको सदा पृथक् ही देखकर उनको चिकित्सा करना तो वृत्तके पत्तोंकी पृथक् व्यवस्था करनेके समान होगा और एक कठिन तथा कभी बशमें न आने वाला कार्य होगा। इसलिए रोगोंके इस अपरिमित, अपरिसंख्येय विस्तारको मूलग्रहणके न्यायसे वात, पित्त तथा कफके मध्य विभाजित कर असीमको ससीम, अप्राज्ञको सुप्राज्ञ बनाकर समुद्रको घटमें भर दिया गया है। इसीको लोक भाषामें “भागरमें सागर” कहते हैं।

इसीलिए कहा गया है—

विकारनामाकुशलो न जिहीयात् कदाचन।
न हि सर्व विकाराणां नामतोऽस्ति ध्रुवा स्थितिः ॥

यदि कभी रोगका नाम तो ज़िहियात् कदाचन।

लज्जा या संकोच करनेकी आवश्यकता नहीं है। सब विकारोंके नाम भी निश्चित रूपमें नहीं पाए जाते हैं। चिकित्सा कार्य तो रुक सकता नहीं। क्योंकि दोषानुसार लक्षणोंको देखकर ही अभिनव प्रतीत होनेवाले रोगोंकी भी चिकित्सा वैद्य कर सकता है।

इस प्रकार हम स्पष्ट देखते हैं कि आयुर्वेदकी पद्धतिसे निदानके विषयमें वैद्य परमुखापेक्षी न हो कर सर्वथा आत्म निर्भर है, स्वतन्त्र है।

निदानके अनन्तर चिकित्साकी वारी आती है। एलोपैथिक औषधोंका निर्माण तो बिना सम्पूर्ण आधुनिक उपकरणों और यन्त्रोंके असम्भव ही है। अनेक प्रकारकी प्रयोग शालाएं भी इसके लिए अनिवार्य हैं। जहां भी औषधकी आवश्यकता हो छोटीसे छोटी औषध भी नगरोंसे या फार्मसियोंसे मंगानी होती है। ग्रामोंमें या घरमें तो कोई एलोपैथिक औषध न बनती है, न उपजती है। न उनसे ग्रामवासियोंका अपनेपनके साथ परिचय ही है। आयुर्वेदीय औषधमें यह बात नहीं है। बहुतसी औषधियां ग्रामोंके आस पास ही यहां तक कि घरमें ही उत्पन्न होती हैं। उनका अनेक प्रकारसे सरलता पूर्वक उपयोग किया जा सकता है। अनेक कल्पना विधि भी ऐसी हैं जो कि सर्वत्र सरलतासे व्यवहारमें ली जा सकती हैं। अनेक चूर्ण, काथ, अवलेह, वटी, तैल, घृत, गुग्गुलु लेप आदि विभिन्न प्रकारकी औषधोंका निर्माण ग्रामोंमें थोड़ी सी ही जानकारीसे किया जा सकता है। अपनी स्वतन्त्र निदान प्रणालीसे रोगका निश्चय करके इनका उचित उपयोग करनेके लिए वैद्य स्वतन्त्र है।

काय चिकित्सा पहिले मुख्य रूपसे काष्ठौषधि चिकित्सा ही थी। परवर्ती कालमें भारतीय रासायनिक चिकित्सकोंने रसचिकित्साका आविष्कार, विकास और विस्तार किया। पारदको रस या रस राज कहा जाता है। अश्रक आदि खनिज महारस कहलाते हैं। गन्धक, कासीस आदि उपरस हैं। इनमेंसे एक या अनेकका जिन योगोंमें प्रयोग होता है वे रस योग कहे जाते हैं। रस शास्त्र इतना विकसित और चमत्कार पूर्ण है कि उसे देखकर बड़े बड़े लोग भी हैरत में आ जाते हैं। आयुर्वेदमें ऐसे सैकड़ों

रस योग हैं जिनका रोग नाशके लिए सैकड़ों वर्षोंसे प्रयोग किया जा रहा है।

स्वयं पारद और उससे बने हुए सहस्रों योग अधि-काशमें योगवाही हैं। अर्थात् जैसे द्रव्यके साथ मिला कर उनका प्रयोग किया जाता है उस द्रव्यके गुणको कई गुणा बढ़ाकर वे वैसा ही कार्य करने वाले बन जाते हैं। इस प्रकार आयुर्वेदीय काष्ठौषध द्रव्य तथा अनेक योग अनुपान रूपसे काममें आजाते हैं। फल यह होता है कि एक रस अनुपान भेदसे अनेक रोगोंपर कार्यकरने वाला बन जाता है।

कई बार यह सुनाजाता है कि अमुक सन्यासी या वैद्यजी केवल एक प्रकारकी गोलियां या भस्म अपने पास रखते हैं। सहस्रों रोगी उनके पास आते हैं। वे उन्हीं गोलियों अथवा भस्मको उठाकर उनको दे देते हैं। लोग अच्छे होजाते हैं। इसका रहस्य रस और भस्मोंकी योगवाहितामें छिपा हुआ है।

आयुर्वेदके ग्रन्थोंमें अनेक रसोंको बीसियों रोगोंकी औषध बताया गया है। कई रस तो सब रोगोंको दूर करने वाले बताए गये हैं। लोग कहते हैं यह अति-शयोक्ति है। परन्तु उपर्युक्त स्थितिके प्रकाशमें यह कहना उचित नहीं प्रतीत होता है क्योंकि यह अनुभव और तर्कके विपरीत है।

सुश्रुत और चरकका मन्तव्य है कि जगत्में कोई पदार्थ ऐसा नहीं है जो कि औषधके रूपमें काम न आसकता हो। इसी सिद्धान्तको ध्यानमें रखकर भारतीय वैद्योंने सदा ही साधारण जनके आसपास रहने वाले पदार्थोंका औषधके रूपमें अधिकसे अधिक सम्भव रूपोंमें प्रयोग करनेकी चेष्टा की है। उसमें वे सफल भी हुए हैं। प्रतिदिन काममें आने वाले धनियां, कालीमिर्च, जीरा, सेंधातमक, जायफल, जाबित्रा, कालानमक, सोठ, हल्दी, पिप्पली, सज्जीखार, अदरक, तुलसी आदिका भी स्वतन्त्र तथा रसोंके अनुपानके रूपमें बिलकुल भिन्न रोगोंपर किस प्रकार विविध रूपसे सफल प्रयोग हो सकता है यह देखकर आश्चर्य होता है।

साधारण संजीवनी वटी, मृत्युंजय रस, अभ्रक

भस्म, रससिन्दूर आदि एक एक औषधके द्वारा रोगोंकी अवस्थानुसार अनुपान भेद करते हुए साधारण वैद्य भी कठिन रोगोंमें भी प्रतिदिन चमत्कार प्रदर्शित करते रहते हैं। ग्रामोंमें ऐसे अपठित वैद्य बहुतसे हैं। परन्तु जिन अपठित लोगोंने आयुर्वेदकी एक आध औषधका भी मर्म समझ लिया है और अपने ग्रामके आस पास होने वाली छोटी छोटी, प्रत्यक्षमें उपयोग हीन प्रतीत होने वाली वनस्पतियोंके उपयोगका ज्ञान अनुभवसे प्राप्त कर लिया है वे भी अवसर आनेपर उन्हीं छोटी मोटी वस्तुओंसे सहायहीन ग्रामीणजनोंकी अतर्कित सेवा करते रहते हैं।

इसका यह तात्पर्य नहीं कि थोड़ी सी औषधोंके प्रयोगको ही आयुर्वेद समझ लिया जावे। इसका तो केवल इतना ही अर्थ है कि आयुर्वेदिक चिकित्सामें परमुखापेक्षिता नहीं है। चिकित्साकी पूर्ण व्यवस्था न होनेपर भी, बड़ी बड़ी औषधोंके प्राप्त न होनेपर भी वैद्य हाथपर हाथ धर कर नहीं बैठ सकता। आयुर्वेदीय ज्ञानकी वहां किंकर्तव्य मूढताकी अवस्था नहीं आती। जहां आयुर्वेदीय औषध बिना मूल्यकी भी है वहां ऐसी औषधोंकी भी कमी नहीं है जिनमें सुबहुमूल्य रत्नों और खनिजोंका उपयोग होता है। जहां सरलतासे बनने वाली औषध हैं वहां सेन्द्रिय और निरिन्द्रिय द्रव्योंके सूक्ष्म संयोगसे परिमार्जित रासायनिक विधिसे बनने वाली महार्ह औषधोंकी भी कमी नहीं है।

सारांश यह है कि आयुर्वेदिक निदान और चिकित्सामें परवशता नहीं है। औषध सर्वत्र सुलभ हो सकती है। उनसे हमारा सांस्कारिक आत्मीय भाव है। प्रयोग सुकर और सरल है। ऐसी स्थितिमें आज नई, भ्रान्ति पूर्ण शिक्षाके प्रभाव आदि किसी कारणसे उसके सम्पर्कसे दूर होना अपनी एक अमूल्य निधिसे वञ्चित होनेके समान ही है। उससे अधिक से अधिक सम्पर्क बढ़ाना, ज्ञान प्राप्त करना, औषधोंसे लाभ लेना जहां स्वयंमें विशिष्ट लाभ हैं वहां साथ ही साथ इनसे हमारी इस अनुपम निधिकी रक्षा भी होती है।

आमवात

लेखक:—वैद्य प्रह्लादराय देराश्री

बी. ए., बी. आइ. एम. एस्. आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेदरत्न, साहित्यरत्न, गोल्ड मेडलिस्ट
प्रधान चिकित्सक, राजकीय प्रधान चिकित्सालय, अजमेर (राजस्थान)

विद्वान् लेखकने आमवातके सम्बन्धमें प्राचीन और अर्वाचीन दोनों ही दृष्टियोंसे प्रकाश डालनेका सुन्दर प्रयास किया है। चिकित्सा भी सुन्दर ढंगसे लिखी है। यह रोग विशेष कष्टदायक है। कुछ साध्य भी है। यदि अन्य विद्वान् भी इसके विषयमें अनुभवके प्रकाशमें कुछ लिखनेका प्रयास करेंगे तो हम उसका स्वागत करेंगे।

सम्पादक

आमवात एक तीव्र औपसर्गिक रोग है जिसमें सन्धियोंमें अत्यधिक पीड़ा एवं भ्रमणशील शोथ होता है। इस व्याधिका हृदयपर बड़ा तीव्र प्रभाव होता है। अतः हृदयान्तः कला शोथके कारण ज्वर, स्वेद बाहुल्य, हृत्कम्प एवं सन्धिपीड़ा इत्यादि लक्षण उत्पन्न होते हैं। तथा जिसके पुनरावर्तन होते रहनेसे शनैः-शनैः हृदयकी स्थिति अति क्षीण होजाती है।

रोगका निदान:—इसके उत्पादक कारणोंके सम्बन्धमें विद्वानोंमें ऐकमत्यका अभाव है। आमवातसे पीड़ित व्यक्तियोंकी गलतुरिडकाओं, लस ग्रन्थियों तथा रक्तमें (Streptococcus Hemolyticus) नामक गोलाणु पाये जाते हैं इसके विपरीत कुछ शास्त्रज्ञोंका यह विचार है कि उपरोक्त गोलाणु इसके वास्तविक कारण नहीं हैं। अपितु इनका उत्पादक कारण कोई विषाणु है। इसके अलावा आमवातकी उत्पत्तिके सहायक कारणोंमें जीवनीय 'सी' का अभाव यकृतका कार्य ठीक न चलना, नासा, गला, तुरिडकाकाशोथ, मसूढ़ों आदिका विकार भी इसकी उत्पत्तिमें सहायक होता है। इसके अतिरिक्त इस रोगकी उत्पत्ति कुलज प्रवृत्तिसे (Hereditary) भी होती है।

दूध मछली आदि विरुद्ध आहार और अजीर्ण होनेपर व्यायाम, मैथुन, जलमें तैरना आदि विरुद्ध विहार करनेवाले, मन्दाग्निवाले, परिश्रम न करनेवाले, स्निग्ध भोजनोपरान्त व्यायाम करनेवाले एवं अति मैथुन करनेवालोंका वायुसे प्रेरित हुआ आम श्लेष्म प्रतिष्ठानोंमें प्राप्त होता है। फिर यह आम पित्त स्थानमें न जानेके हेतुसे वायुद्वारा अति दूषित होकर धमनियोंके मार्गसे गति करता है। पुनः वात, पित्त और कफ तीनोंसे अति दूषित होकर रसवाहिनियोंके मार्गका अवरोध करता है। तब अति पिच्छिल आमसे मन्दाग्नि, हृद्गौरव आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। ये अति कुपित हुए दारुण आम एवं वायु सन्धियोंको जकड़ लेते हैं और आमवातकी उत्पत्ति करते हैं।

सम्प्राप्ति—आमवातकी उत्पत्तिमें मालागोलाणु (Streptococcus) अनूर्जा (Allergy), जीवनीय 'सी' का अभाव एवं विषाणु ये चारों तत्त्व प्रमुख भाग होते हैं। विशेष रूपसे इसमें मालागोलाणु प्रधान हैं। सप्ताह दो सप्ताह पूर्व गलतुरिडकाओंमें मालागोलाणुओंका जो उपसर्ग होता है उससे व्यक्तिकी संयोजक धातुओं (Connective Tissues) का प्रतिजन (Antigen) बनता है। और इस प्रतिजनसे

शरीरमें प्रतियोगी बनते हैं। ये प्रतियोगी संयोजक धातुओंमें प्रतिजनके साथ मिलते हैं और वहाँपर प्रतिक्रिया होती है, जिसके परिणाम स्वरूप इसकी स्थूल और सूक्ष्म शारीरिक बिकृतियाँ होती हैं।

विकृतियाँ—आमवात एक सर्वदैहिक उपसर्ग है। जिसमें शरीरकी संयोजक धातुमें, श्लेष्मिक और लसिका धातुमें तथा अधस्त्वक् धातुमें ग्रन्थिकायें उत्पन्न होकर, सन्धिशोथ, हृच्छोथ, परिहृच्छोथ, अन्तर्हृच्छोथ, फुफ्फुसावरण शोथ एवं लसिका ग्रन्थि शोथ आदि विकार उत्पन्न होते हैं।

रक्तकी जाँच—श्वेताणुओंकी संख्या १० से ३० हजार तक बढ़ जाती है। एवं रक्तकणोंका नाश होकर क्रमिक रक्तक्षय हो जाता है। सबसे महत्वका परिवर्तन रक्तकी अबसादन गति बढ़नेमें होता है।

लक्षण—रोगारम्भसे एक दो सप्ताह पूर्व गलेमें खराबी गल शुण्डिकाओंमें शोथ होता है। रोगका आक्रमण अकस्मात् होता है। शीत पूर्वक ज्वर चढ़ता है और शरीरकी सन्धियोंमें पीड़ा होती है प्रारम्भसे २४ घंटेके अन्दर रोगका स्वरूप प्रकट हो जाता है। ज्वर १०४° तक चढ़ जाता है, जिह्वा मैली, अति तृषा, नाड़ीकी गतिमें तेजी, अल्प मूत्र त्याग, दुर्गन्धित स्वेदका प्रचुर मात्रामें आना और सन्धियोंमें तीव्र वेदना आदि प्रमुख लक्षण हैं। अनेक सन्धियाँ पीड़ित होती हैं। इनमें भी विशेषतः बड़ी सन्धियाँ पीड़ित होती हैं। शोथ एक सन्धिसे दूसरी सन्धिमें चला जाता है। सन्धिस्थान शोथयुक्त, लाल, स्पर्श मात्रसे पीड़ा होती है और उष्ण प्रतीत होता है। सन्धियोंमें यदा कदा द्रव संप्रह भी होजाता है। किन्तु पूयोत्पत्ति कदापि नहीं होती। यदि उपद्रव न हो तो १० से १५ दिनमें रोगकी तीव्रता स्वयमेव कम होजाती है।

साध्यासाध्यत्व—यदि उपद्रव न हो तो आमवात स्वयं घातक रोग नहीं है। प्रथम आक्रमण कदापि घातक नहीं होता। किन्तु हृदयके उपद्रव मुख्यतया घातक होते हैं और आमवातसे एक बार पीड़ित हो जानेके उपरान्त रोगीके स्वास्थ्यका भविष्य उज्ज्वल नहीं होता। क्योंकि इसके आक्रमणसे हृदय विकृत हो जाता है। और अपथ्य सेवन तथा अन्य कारणोंसे रोगका पुनरावर्तन होते होते हृत्कपाटोंकी विकृति एवं अन्तर्हृच्छोथसे पीड़ित होनेसे रोगी कालका प्राप्ति बन जाता है।

चिकित्सा क्रम—इस रोगमें हृदयकी रक्षा करना अति आवश्यक है। अतः रोगीको पूर्ण विश्राम देना चाहिए तथा नरम बिस्तरपर गरम वस्त्र ओढ़ाकर सुलाना चाहिए। अधिक हिलने डुलनेसे मनाकर मल मूत्र त्यागकी व्यवस्था शय्यापर ही की जानी चाहिए। पीड़ित अंगको आराम मिले इसके लिए पीड़ित अंगको बालूकी थैली, तकिया, गद्दी, रुई इत्यादिसे सहारा देकर सुखासनसे रखना चाहिए।

पथ्यमें दूध, जौ का पानी, फलोंका रस, पंच-कोल वारि, मूलीका मूष और मुद्गा-यूष पिलावें। स्वेदद्वारा हुई जलीयांश की क्षतिकी पूर्तिके लिये उवाला हुआ खव काफी मात्रामें पिलाना चाहिये। चाय, कॉफी, मद्य और मांसका सेवन न करावें। मृदु-विरेचन अथवा स्नेह वस्ति देकर कोष्ठ शुद्धि करें।

मूत्रकी अम्लताको दूर करनेके लिये एवं मूत्र शुद्धिके लिये क्षारीय एवं मूत्रल वस्तुओंका प्रयोग करें। यवक्षार, कदलीक्षार, मूलीक्षार, शोरा आदि क्षारीय द्रव्य, गोक्षुरादि एवं तृण पंचमूल कषायके साथ दें।

औषधि चिकित्सा—इस रोगके लिये आम-वातारि रस बहुत लाभ दायक है। इसकी २-२ गोली प्रातः सायं त्रिफला कषायके साथ सेवन करावें। इस बटीके सेवनसे आमका पाचन होता है और कोष्ठ शुद्धि होकर आमवात शीघ्र दूर होता है।

इसके अतिरिक्त सिंहनाद गुग्गुलु, महावात विध्वंसन रस, स्वर्ण भूपति रस, आमवात प्रमथिनी, बटी आदि औषधियोंका प्रयोग यथा स्थिति दशमूल क्वाथ, शुण्ठी एवं एरण्ड स्नेहके अनुपानसे प्रयोग करना चाहिये।

रसोन भी इस रोगकी महौषधि है। इसे रसोन-पायस या पाक आदि किसी भी रूपमें लिया जा सकता है। रसोनकी बटी बनाकर सेवन करनेसे

इस रोगके जीर्ण स्वरूपमें उत्तम लाभ होता है।

इस रोगमें हृदय विकृत होता है। अतः हृदयकी रक्षा करना नितान्त आवश्यक है। हृदयकी शक्ति बढ़ानेकी दृष्टिसे समीर पत्रगरस, बृहद्वात-चिन्तामणि आदिके प्रयोगसे आमवातका शमन होनेके साथ ही साथ हृदयकी शक्ति भी कायम रहती है। इसके अतिरिक्त आवश्यक स्थितिमें जवाहर मोहरा, रससिन्दूर आदिकी १-१ रत्तीकी मात्रामें दें।

आधुनिक चिकित्सा—एलोपैथी चिकित्सा विज्ञानने सोडियम सेलिसिलेटको इस रोगकी सर्वोत्तम औषधि माना है इससे ज्वर, सन्धि शोथ एवं पीड़ा शीघ्र ही कम होकर रोगकी अवधि घट जाती है। इसके २० ग्रेनकी मात्रा रोगकी तीव्रतामें प्रत्येक दो घण्टे बाद देना चाहिये। दिन रातमें १८० ग्रेनकी मात्रा देना आवश्यक है। रोगकी तीव्रता घट जानेपर मात्रा घटाकर १२० ग्रेनकी मात्रा दिन भरमें करके १ माह तक जारी रखना चाहिए। रक्तकी क्षारीयताको कायम रखनेके लिए सोडियम सेलिसिलेटके साथ उससे दुगुनी मात्रामें सोडाबाइकार्बोमिलाकर दी जाती

है। सहायक औषधियोंके रूपमें जीवनीय 'सी' तथा 'के' का भी प्रयोग उचित मात्रामें करते रहनेसे चिकित्सामें अधिक सफलता मिलती है। अति वेदना की स्थितिमें Novalgin (नोवलजीन) की टिकिया देना भी लाभ प्रद है।

स्थानीय प्रयोग—पीड़ायुक्त अंगोंको सुखासनसे रखें, अधिक वेदनाकी स्थितिमें लिनिमेंट वेलाडोना, टिंचर ओपियम या विंटर ग्रीन तैल लगाकर रुईसे लपेटकर पट्टी बाँधकर रखें। शुंठी तथा अहिफेनका लेप भी वेदना शान्तिके लिए हितावह है।

पुनरावर्तन प्रतिबन्ध—आतवात प्रत्यावर्तन शील रोग है। अतः रोग मुक्तिके उपरान्त भी रोगीको १-२ माह तक आराम करना जरूरी है। भोजनमें पौष्टिक हलका आहार लेना चाहिए। गरम और खुशक वायु मण्डलमें निवास, गरम कपड़ोंका उपयोग, शीतसे रक्षा, कब्जको मिटाना, मुखकी सफाई, दाँतोंकी सफाई आदिपर विशेष ध्यान देना चाहिए। यदि दाँत गल शुण्डिका अथवा उण्डुक पुच्छ आदिमें विकार हो तो शस्त्र कर्मसे उन्हें निकलवा देना उत्तम है।

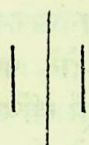
चतुर्भुज रस (विशेष)

यह रस पारद भस्म, सुवर्ण भस्म, मुक्ता पिष्टी आदि मूल्यवान् द्रव्योंको यथा विधि मिलाकर तैयार कराया जाता है। पारद भस्म भी पारदको १६ गुना गन्धक जारण करके बनायी हुई मिलायी जाती है। जिससे यह रस वृक्क पीड़ासह वातरोगमें भी निर्भय रूपसे दे सकते हैं।

इस रस का उपयोग वातसंस्थानकी विकृति से उत्पन्न सब प्रकार के वात रोगोंपर होता है। इसके अतिरिक्त वातप्रकोपज रोग, अपस्मार, ज्वर, कास, श्वास, राजयक्ष्मा, अग्निमांदा, शारीरिक शोष, हस्तकम्प आदि व्याधियों में भी हितावह है। विद्याध्ययन करने वालों और मानसिक परिश्रम अधिक करने वालोंको सेवन करानेपर मस्तिष्कको बल प्रदान करता है।

मूल्य—१ ग्राम रु. ८.६५, २ ग्राम रु. १७-१५।

वृद्धिरोग



लेखक—श्रीकृष्णगोपाल गुप्त

श्रीरामकृष्ण राजपूताना औषधालय
जुरहरा, भरतपुर (राजस्थान)



मार्गके रुकनेसे कुपित वायु शोथ और शूलको करता हुआ एक देशसे दूसरे देशमें विचरता हुआ जब वंक्षणसे वृषणोंमें पहुँचता है तब फलकोषको जाने वाली सिराओंको दबा कर फलकोषोंमें वृद्धिको उत्पन्न करता है। जैसा सुश्रुतमें भी लिखा है कि:—

“अथः प्रकुपितोऽन्यतमो हि दोषः फलकोश-
वाहिनीरभिप्रपद्य धमनीः फलकोषयोर्वृद्धिं जन-
यति, तां वृद्धिमित्याचक्षते”

अर्थात् वात, पित्त, कफमेंसे कोई एक दोष नीचेकी ओर (नाभिसे नीचे) कुपित होकर अण्डकोष वाहिनी धमनीमें पहुँचकर फलकोषोंमें वृद्धि उत्पन्न कर देता है।

यह वृद्धि रोग सात प्रकारका होता है यथा—वात जन्य, पित्त जन्य, कफ जन्य, रक्तजन्य, भेद जन्य, मूत्र जन्य व आन्त्र जन्य।

परन्तु मूत्र जन्य और आन्त्र जन्य वृद्धि भी वात-जन्य ही है। केवल कारणकी भिन्नतासे इनका अलग निर्देश किया है। जैसा कि सुश्रुतमें लिखा है—

“दोष दूष्य संसर्गादायतनानां च विशेषाच्च-
मित्ततश्चैषां व्याधीनां भेदाः”

इसी प्रकार भेदज कफज और रक्तज पित्तज है। केवल अधिष्ठात या दूष्य भेदसे इन्हें पृथक् मानते हैं।

पूर्वरूप—

मूत्राशयमें वेदना होना, कटिशूल, मुष्कमें वेदना, शिरनमें वेदना, वायुका अवरोध, एवं फलकोषमें सूजन, होती है।

लक्षण—

वात जन्य—वृद्धि वायुसे भरी वस्तिके समान बिना कारणके वेदना शील होती है।

पित्त वृद्धि—पके हुए गूलरके फलके समान, ज्वर, दाह एवं उष्णता युक्त, शीघ्र उठने एवं शीघ्र पकने वाली होती है।

कफ जन्य वृद्धि—कठिन अल्प वेदना युक्त, शीत स्पर्श, कण्डूमान होती है।

रक्तजन्य वृद्धि—फले स्फोटोंसे व्याप्त, पित्त जन्य वृद्धिके लक्षणोंके समान होती है।

भेद जन्य—मृदु स्निग्ध कण्डू युक्त, मन्द वेदना-शील, पक्व ताल फलके समान होती है।

मूत्र जन्य वृद्धि—जिस व्यक्तिमें मूत्र रोकनेकी आदत होती है उसे मूत्र वृद्धि रोग होता है। चलते समय यह वृद्धि जलसे भरी मशकके समान होती है। हिलती है। इसमें वेदना रहती है। यह वृद्धि कोमल होती है। रोगीको मूत्र त्यागमें कठिनाई होती है। तथा फलकोषोंके नीचे क्षुरियां पड़ती हैं।

आन्त्र वृद्धि—इसको आंत उतरना या आंत गिरना कहते हैं।

भारको उठानेसे, चलवान् पुरुषके साथ युद्ध करनेसे, घृत्से गिरने आदि अन्य इस प्रकारके परिश्रम जन्य कारणोंसे वायु अतिशय बढ़कर कुपित होकर स्थूल आन्त्रके एक इतर भागको दुहरा करके वंक्षण सन्धिमें नीचेकी ओर ले जाकर ग्रन्थि रूपसे स्थित होजाता है।

यह चिकित्सा न करनेपर कुछ समय पश्चात् फलकोषोंमें घुसकर मुष्क शोथको उत्पन्न करता है। इस अवस्थामें रोगीको आध्मात (फूली हुई) वस्तिके

तथा
रहनेमें
वेदना
टिकिया

खासनसे
छाडोना,
रुईसे
हेफेनका

त्यावर्तन
रोगीको
भोजनमें
और खुशक
ग, शीतसे
दाँतोंकी
यदि दाँत
विचार हो
है।

विधि
बनायी

रोगीपर
गिनमांश,
मानसिक

मानसिक

मानसिक

मानसिक

समान विस्तृत और दीर्घ होता है। दबानेपर आवाजके साथ ऊपर चढ़ जाता है। छोड़नेपर नीचे आकर फूल जाता है।

इस प्रकार हमने उपरोक्त वृद्धिके सातों प्रकारोंका अध्ययन आयुर्वेद मतसे किया। अब जरा इनके बारेमें पाश्चात्य मतको भी देख लेना उचित है।

पाश्चात्य या आधुनिक मत और वृद्धि रोग—

हमारे मतसे अधो भागमें कुपित हुआ दोष वृषण कोष वाहिनी धमनीमें प्राप्त होकर वृषण कोषोंको मोटा कर देता है। अंग्रेजीमें इसे स्क्रोटल स्वेल्निंग (Scrotal Swelling) कहते हैं। वातादि दोषोंसे उत्पन्न हुई वृद्धिको क्रानिक आरकाईटिस (Chronic orchitis), रक्तज वृद्धिको हीमेटोसील (Haematocoele), मेदज वृद्धिको वृषणागत श्लीपद (Elephantiasis of Scrotum), मूत्रज वृद्धिको हाइड्रोसील (Hydrocele) तथा आन्त्र वृद्धिको (Hernia) हार्निया कहते हैं।

(१) मूत्रवृद्धि (Hydrocele) :—

जैसाकि हमारे यहाँ माना जाता कि “मूत्रधारण-शीलरय, मूत्रवृद्धिर्भवति” इस प्रकारकी सम्प्राप्ति आधुनिक मत नहीं मानता। वे लोग मानते हैं कि वृषण कोषकी लसीका वाहिनियोंसे लसीका चूँचू कर इकट्ठी हो जाती है। इसी लसीकाके संचयके कारण कोष फूलता है। परन्तु अभी तक हाइड्रोसीलके कारणोंका ठीक ठीक पता नहीं चल सका है। पुराने वृषण प्रकोप (Chronic Orchitis) और फिरंग जन्य वृषण विकृतिके साथ मूत्रवृद्धि मिलती है।

इसका आकार बहुधा अण्डेके समान दीर्घवृत्तसे मिलता है। भीतरी जलकी राशिके अनुसार यह वृद्धि स्पर्शमें कठिन या मृदु प्रतीत होती है। टटोलनेसे पीछेकी ओर वृषण ग्रन्थि प्रतीत होती है। जलोदरके समान इसमें कम्पन परीक्षा मिलती है। जैसा कि सुश्रुतमें भी कहा है।

“सा गच्छतोऽम्बुपूर्णा दतिरिव क्षुब्धति”।

इस रोगकी एक खसि परीक्षा होती है। कि

वृद्धिके एक ओर बत्ती जलाकर रक्खी जावे तो दूसरी ओर कुछ हल्का सा प्रकाश दिखाई देगा तथा भीतरी वृषण ग्रन्थिका भी कुछ पता चल जायेगा। इस परीक्षाको ट्रान्सइल्यूमिनेशन (Trans illumination) कहते हैं। रोग पुराना होनेपर कोषकी भित्ति मोटी होनेसे यह दीप परीक्षा सफल नहीं होती। इसके कोई खास लक्षण नहीं होते परन्तु जब वृद्धि काफी होती है तब वृषण रज्जूमें खींचनेकी सी पीड़ा होती है। तथा कोषकी त्वचाके भीतर शिरनके चले जानेसे मूत्र वृषणकी त्वचाके ऊपरसे बहता है जिससे वहाँ कण्डू उत्पन्न होती है।

आन्त्र वृद्धि (Hernia) :—

हार्निया वास्तवमें शरीरके किसी अङ्गके अपने स्थानके छिद्रके बाहर निकल कर दूसरे स्थानमें पहुँच जानेको कहते हैं। इसप्रकार फुफ्फुस, मस्तिष्क तथा आन्त्रकी हार्निया हो सकती है। व्यवहारमें यह विकृति आन्त्रके सम्बन्धमें अधिक देखनेके कारण हार्निया शब्दसे आन्त्र वृद्धिका ही बोध अधिक होता है।

कारण—

आन्त्र वृद्धि होनेके कारणोंको सहज तथा जातोत्तर भेदसे दो भागोंमें बाँटा जा सकता है।

सहज कारण—

सहज कारणोंमें अण्ड ग्रन्थिका अधिक समयमें उदरसे वृषणमें उतरना, उदरसे वृषण तकका मार्ग बन्द न होना, उदर प्राचीरकी पेशियोंका दुर्बल होना तथा आन्त्र बन्धिनीकी लम्बाईकी अधिकता इत्यादि प्रधान होते हैं।

जातोत्तर—

जातोत्तर कारणोंमें आघात या शस्त्र कर्मके कारण उदर प्राचीरकी दुर्बलता, भारी बोझ उठाना, मला-वरोध, अछीला वृद्धि, मूत्र मार्ग संकोच, निरुद्धप्रकाश इत्यादिके कारण मल तथा मूत्र त्यागमें अधिक बलका प्रयोग करना, तथा पुरानी खाँसी इत्यादि प्रधान होते हैं। जैसा कि सुश्रुतमें भी लिखा है :—

भारहरणबलवद्विग्रहवृत्तप्रपतनादिभिराया-
सविशेषैर्वायुरभिप्रवृद्धः प्रकुपितश्च स्थूलान्त्रस्ये-
तरस्य चैकदेशं विगुणमादायाधो गत्वा वङ्क्षण
सन्धिमुपेत्य ग्रन्थिरूपेण स्थित्वाऽप्रतिक्रियमाणे
च कालान्तरेण फलकोशं प्रविश्य मुष्कशोफमापा-
दयति, आध्मातो वस्तिरिवाततः प्रदीर्घः सशोफो
भवति, सशब्दमवपीडितश्चोर्ध्वमुपैति, विमुक्तश्च
पुनराध्मायते तामन्त्रवृद्धिमसाध्यामित्याचक्षते” ।

सुश्रुत निदानस्थान । अध्याय १२ ।

अपने यहां कही हुई आन्त्रवृद्धिको पाश्चात्य-
मतमें वंक्षणीय आन्त्र वृद्धि (Inguinal Hernia)
है । क्योंकि उसमें आन्त्र वंक्षणीय छिद्र (Inguinal
Canal) में से होकर फलकोषमें उतरता है । यथाः—

“अन्त्रं द्विगुणमादाय जन्तोर्नयति वंक्षणम्”

भोजः

यदि आन्त्र बहिर्वङ्क्षणीय छिद्र तक आकर ग्रन्थिके
रूपमें स्थित होता है तो उसे अप्राप्त फल कोषवृद्धि
कहते हैं । यथाः—

“अप्राप्तफलकोषायां धातवृद्धिक्रमो हितः”

सुश्रुत । चिकित्सास्थान । अ० १९ । श्लोक १८ ।

आधुनिक परिभाषामें इसको अपूर्ण आन्त्रवृद्धि
न्यूबोनोसील (Incomplete Hernia or Bub-
onocoele) कहते हैं । यदि बहिर्वङ्क्षणीय छिद्रमें से
होकर अण्डग्रन्थिके ऊपर तक आन्त्र पहुँच जाय तो
उसको कोष प्राप्त वृद्धि कहते हैं । यथा—

“कोशप्राप्तां तु वर्जयेत्” सु० चि० अ० १९ श्लो. १९

आधुनिक परिभाषामें इसको पूर्ण आन्त्रवृद्धि
(Complete Hernia) कहते हैं ।

हार्नियाके बारेमें जाननेके लिये हमें यह सोचना
पड़ेगा कि हार्निया क्या है । इसकी रचना किस प्रकारकी
है । हार्नियाकी रचनाः—

हार्नियामें बाहरसे भीतरकी तरफ निम्न आवरण
मिलते हैं । १-त्वचा २-उपत्वचा ३-उदरच्छदा आदिमा
पेशीकी तन्तुसे बनी हुई फल, ४-संकोचकविणोपेशी

और कला ५-उदरान्त्रच्छदा कला, ६-मेदस्तर तथा
७-उदर कला । वृद्धिका कोष उदर कलासे ही बनता है ।

कोषके अंग—कोषमें निम्न अंग पाये जाते हैं ।
क्षुद्रान्त्रः—

अष्टांग हृदयमें इसका उल्लेख इस प्रकार है ।
यथाः—

“क्षुद्रान्त्रावयवं यद्वा स्वनिवेशादधो नयेत्” ।

इसके अलावा वसा, स्थूलान्त्र विशेष करके उण्डुक,
आन्त्रपुच्छ, बस्ति, वीजग्रन्थि तथा वीजवाहिनी भी
मिलती हैं । संक्षेपमें अग्न्याशयके अतिरिक्त उदर
गुहाके सभी अंग मिल सकते हैं ।

लक्षण—

पूर्ण वङ्क्षणीय आन्त्रवृद्धिका आकार अण्डके
समान दीर्घ वृत्त हो सकता है । दिन प्रतिदिन उसका
उत्सेध बढ़ता जाता है । जब रोगी खड़ा होकर
खाँसता है तो वृद्धिमें खाँसनेकी प्रेरणा होती है ।
तथा उत्सेध बढ़ जाता है । वृद्धिपर ताडन करनेसे
डिमडिम ध्वनि आती है । ऊपरकी ओर दबानेसे
गड़गड़ाहटके साथ आन्त्र उदरके भीतर चली जाती
है । और उत्सेध नष्ट हो जाता है । तथा दबाव
छोड़नेपर आन्त्र लौटकर फिर उत्सेध उत्पन्न करदेती
है । वागभटने भी लिखा है—

“उपेक्ष्यमाणस्य च मुष्कवृद्धि-
माध्मानरुक्स्तम्भवर्ती स वायुः ॥
(अष्टाङ्गसंग्रह)

प्रपीडितोऽन्तःस्वनवान्प्रयाति
प्रध्मापयजेति पुनश्च मुक्तः ।

वृद्धिके जीर्ण होनेपर अग्निमांश, मलावरोध तथा
उदरशूल इत्यादि लक्षण प्रकट होते हैं । कोषकी
दीवारमोटी होकर बाहरके आवरणोंसे संसक्त होती
है या भीतर आन्त्रके साथ जुड़ जाती है । अत एव
वृद्धि स्तम्भित हो जाती है । और ऊपरके दोनों लक्षण
कठिनातासे मिलते हैं ।

वृद्धिमें कोष न होकर केवल आन्त्र न होकर केवल

वसा होनेसे स्पर्शमें वह बहुत मृदु प्रतीत होती है तथा खोंसनेपर उसमें प्रेरणा बहुत कम तथा नहीं के बराबर होती है। ऊपरकी ओर दवानेसे बिना शब्द किये चली जाती है और छोड़ देनेसे शनैः शनैः उत्सेध उत्पन्न होता है। तथा अंगुलीताड़न परीक्षासे मन्द ध्वनि आती है। वसाजन्य तथा आन्त्रजन्य वृषण वृद्धिमें अण्डसे ऊपर टटोलनेसे अण्डरज्जु ठीक-ठीक प्रतीत नहीं होती। वंक्षणीय आन्त्रवृद्धि के अतिरिक्त इसके निम्न प्रकार भी होते हैं—

(१) और्वी आन्त्र वृद्धि (Femoral Hernia)—जिसके द्वारा और्वी धमनी तथा शिरा आती है उस और्व छिद्र (Femoral canal) से होकर आन्त्र ऊरु प्रदेशके ऊपरी भागमें आकर उत्सेध उत्पन्न करती है। यह आन्त्र वृद्धि स्त्रियोंमें अधिक हुआ करती है।

(२) नाभिकी आन्त्र वृद्धि:—इसमें नाभिके द्वारा आन्त्रावयव बाहर निकल आते हैं। और नाभि प्रदेशमें उत्सेध दिखाई देता है। नालच्छेदनके पश्चात् नाभिपाक होनेसे यदि नाभि दुर्बल हो गई हो तो शिशुओं और बालकोंमें यह रोग दिखाई देता है। जो युवावस्था तक स्वयं ठीक हो जाता है। अपने यहां चरकमें इसे आयाम व्यायाम तुण्डिता तथा सुश्रुतमें तुण्डि संक्षिका नामक विकारसे उल्लेख किया है। युवावस्थामें नाभिके बदले उदर सेवनीके विच्छिन्न होने से छिद्र उत्पन्न होकर उसके द्वारा आन्त्रावयव बाहर निकल आता है। इस प्रकारकी आन्त्र वृद्धि स्थूल स्त्रियोंमें अधिक दिखाई देती है।

वृषण वृद्धिके कारण:—वृषण वृद्धिके निम्न लिखित कारण होते हैं। यथा:—आन्त्रवृद्धि, मूत्रवृद्धि, रक्त वृद्धि, मेदो वृद्धि, सिरा वृद्धि, आण्डप्रकोप और अण्डके अबुर्द।

सिरा वृद्धि (Varicocele)—यह सिरा जन्य वृषण वृद्धि है। इसमें अण्ड रज्जुके साथ होने वाली सिराएँ फूल जाती हैं तथा मोटी हो जाती है। यह वृद्धि दाहिनी ओरकी अपेक्षा बाईं ओर तथा वृद्धावस्थाकी अपेक्षा युवावस्थामें अधिक होती है। युवावस्थामें हस्त मैथुनसे इसकी उत्पत्ति होती है। इसकी उत्पत्तिसे वीर्यपात भी अधिक होता है।

अबुर्दके साथ भी यह विकार बहुधा पाया जाता है।

लक्षण:—स्पर्शमें वृषणकोप एक थैलेकी भांति प्रतीत होता है। जिसमें केचुएँ से भरे होते हैं। खोंसनेपर शिराओंमें कुछ सरसराहट मालूम होती है। रोगीके लेट जानेपर शिराओंका रक्त लौट जानेके कारण उत्सेध आपसे नष्ट हो जाता है। रोगीके खड़े हो जानेपर रक्तके भरनेसे फिर उत्पन्न होता है। रोगीको हमेशा वृषणमें भार लटका हुआ मालूम देता है। वषा जन्य वृषण ग्रन्थिमें वृद्धि तथा सिरा जन्य वृद्धिमें यही अन्तर है कि रोगीके खड़े होनेके समय वह विवक्षणीय छिद्र अंगुलिसे दबाया जाय तो सिरा वृद्धिमें उत्सेध उत्पन्न होता है। परन्तु वषा जन्य वृषण वृद्धिमें ऐसा नहीं होता।

वृषण वृद्धिका रोगी सामने आनेपर प्रथम अण्ड रज्जुको भली भांति टटोलकर देखना चाहिये। यदि रज्जु ठीक प्रतीत होती हो तो केवल वृषणका ही विकार होगा अगर नहीं होती हो तो आन्त्रवृद्धि या वषा वृद्धि हो सकती है। उसके बाद यह विचार करना चाहिये कि वृद्धि घन गर्भ है या द्रवगर्भ है।

घन गर्भ वृद्धि तीन प्रकारकी होती है।

मेदोज:—मेदोज वृद्धिमें वृषणकी र्वचा बहुत मोटी तथा खुरदरी होती है। तथा श्लीपदके ज्वरादि लक्षणोंका इतिहास मिल सकता है।

(२) पुराना प्रकोप—पुराना प्रकोप फिरंग और राजयक्ष्मासे हो सकता है। फिरंगज प्रकोपमें केवल वृषण ग्रन्थि बढ़ती है पीड़ा कुछ भी नहीं होती। वृषणकी संवेदना जाती रहती है। तथा वृषण कठोर प्रतीत होता है।

राजयक्ष्मा जन्य प्रकोपमें वृषण ग्रन्थिके साथ वषा वृषण तथा रज्जु भी विकृत होकर गांठ युक्त बनती है। वृषणकी संवेदना नष्ट नहीं होती।

फिरंग तथा राजयक्ष्मा जन्य विकृति बहुधा दोनों वृषणोंमें हुआ करती है।

(३) अबुर्द जन्य विकृति—अबुर्द जन्य वृद्धि बहुधा एक अण्डमें प्रारम्भ होती है। धीरे-धीरे बढ़ती है। (शेष पृष्ठ ८६ पर देखें)

आयुर्वेदिक चिकित्सा में,

शिलाजतु का उपयोग

आयुर्वेदाचार्य डा० सत्यनारायण खरे ए०, एम० बी० एस०

C/o श्रीराम सेवक श्रीवास्तव, ककवारा म्हांसी (उ० प्र०)

शिलाजतु के शोधन, गुण, प्रयोग आदिका इस लेखमें वर्णन किया गया है। शिलाजतु आयुर्वेदकी एक प्रसिद्ध एवं विशेष गुणशाली औषध है। इसका उपयोग स्वतन्त्र तथा अनेक औषध योगोंमें मिश्रितकर विविध प्रकारसे किया गया है। इसके मिश्रणसे बननेवाले अनेक सुन्दर योग शास्त्रोंमें उपलब्ध हैं। परन्तु इस समय शिलाजतु के नामसे बड़ा घोटाला चलता है। धोखाधड़ी भी बहुत होनी है अतः इसके विषयमें उपयुक्त जानकारी प्राप्त करना उचित एवं आवश्यक ही है। आशा है यह लेख उक्त जानकारीमें सहायक होगा।

कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवनद्वारा प्रकाशित सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'रतसन्त्रसार व सिद्धप्रयोग संग्रह' प्रथम खण्ड के शोधन प्रकरणमें शिलाजतुपर अनेकशः अनुभवसिद्ध, अच्छा, व्यावहारिक प्रकाश डाला गया है। जिज्ञासु उसे भी देख सकते हैं।

सम्पादक

आजके वैज्ञानिक युगमें अनेक प्रकारके नवीन अन्वेषण हो रहे हैं नवीन व्याधियोंका प्रसार हो रहा है साथ ही अनेकों औषधियोंका निर्माण होता जा रहा है। जैसे ही व्यक्ति विभिन्न प्रकारकी नवीन औषधियों व आहार-विहारका सेवन कर रहा है वैसे ही उसके शरीरमें व्याधियोंकी संख्यामें वृद्धि हो रही है। अनेकों व्याधियाँ तो ऐसी हैं जो कि व्यक्तियोंको होती हैं परन्तु उन्हें उन व्याधियोंका पूर्ण ज्ञान नहीं होता और ज्ञान भी होता है तो गुप्त व्याधि होनेके कारण दूसरेको बताना अच्छा नहीं समझते। जब वह व्याधि चरम सीमा तक पहुँच जाती है तब अपनेको पृथ्वीपर भार रूप समझने लगते हैं।

आजके नवयुवकोंके स्वास्थ्यपर दृष्टि डाली जावे तो महान् दुःख होता है जो कि भारतके भावी कर्णधार हैं पूरी जिम्मेवारी जिनके कंधोंपर है परन्तु प्राचेष्ट कार्यको करनेमें व असमर्थता प्रकट करते हैं।

एक दो घण्टे भी शारीरिक परिश्रम नहीं कर सकते हैं। स्वस्थ व्यक्तिकी जो उंचाई, भार व शक्ति होना चाहिये वह भी नहीं है। अगर यात्राके लिये साइकिल व दिनमें अनेक बार सिगरेट व चाय नमिले तो बहुत ही कठिनाईका अनुभव करते हैं। शरीरको स्वस्थ परिश्रमी व सुदौल बनानेके लिये उत्तम पौष्टिक आहारकी आवश्यकता है। इसके स्थानपर आजके युवक चाय, विस्कुट व सिगरेटको अपना दैनिक भोजन बनाये हुये हैं। अगर किसी दिन अच्छी भूख लगी तो दिन भरमें ४-६ रोटियाँ खाली, जिनका वजन लगभग २०० ग्राम होगा।

अनुचित आहार-विहारसे धातुस्त्राव सम्बन्धी रोग अधिकांश व्यक्तियोंको हो रहा है। ऐसी स्थितिमें दीर्घकाल तक इस व्याधिसे पीड़ित रहनेपर अनुलोम क्षय व प्रतिलोम क्षय दोनों प्रारम्भ हो जाते हैं। एक दिन ऐसी आता है कि शरीरमें अस्थियाँ व

चर्म अवशिष्ट रह जाता है।

हम देखते हैं कि प्रायः व्यक्ति पहले कोष्ठबद्धतासे पीड़ित होता है। अन्ततः वह धातु सम्बन्धी विकारसे पीड़ित हो जाता है। वैसे ही आज कलके आहार विहार ऐसे हैं जो मानसिक उत्तेजनाद्वारा काम वासनाकी वृद्धि करते हैं और स्त्री-पुरुष दोनों ही इसका प्राप्त बन रहे हैं। परन्तु गुप्त व्याधि होनेके कारण इसकी चिकित्सा भी नहीं कराते हैं जिससे शरीर जीर्ण शीर्ण हो जाता है। अगर ऐसे रोगियोंका पता चलाना हो तो शहरों व बाजारोंमें वह स्थान देखिये जहाँ "जड़ी बूटी" बेचने वाले अपनी दवाओं का प्रचार करते हैं। उस स्थानपर ऐसे रोगी बड़े चावसे उनकी बातें सुनते हैं और अपना पैसा भी व्यर्थ नष्ट कर देते हैं।

अस्तु आज मैं ऐसी औषधिका उल्लेख कर रहा हूँ जिसका उचित पथ्य पालन पूर्वक सेवन करके प्रत्येक व्यक्ति अपने खोये हुये स्वास्थ्यकी रक्षा कर सकता और शरीरको स्वस्थ बना सकता है। धातु रोगोंकी सर्वोत्तम औषधि "शिलाजीत" है। इसको नियमित सेवन करनेसे शरीर स्वस्थ हो जाता है और शरीरकी सभी व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। इस द्रव्यकी परीक्षण विधिका भी उल्लेख किया जावेगा। शुद्ध व उत्तम शिलाजतुको ही उपयोगमें लाना चाहिये।

नाम—इसको शिलाजतु, शैलेय, शिलामय, शिला-स्वेद, अश्मज, गिरिज, अश्मोत्थ व गैरेय कहा जाता है।

परिचय—वैशाख ज्येष्ठकी तीव्र सूर्यकी किरणोंसे तप्त होकर जब पर्वतोंकी स्वर्ण आदि धातुओंसे जो मल पिघलकर बाहर आकर जमने लगता है उसे शिलाजतु कहते हैं। यह पिघला हुआ सार बाहर आकर सूखकर काला कोलतार-सा हो जाता है। यह चमकीला और भंगुर होजाता है। यह जलमें घुलकर तारके समान विलीन होने लगता है। अलकोहल (शराब), क्लोरोफार्म तथा ईथरमें नहीं घुलता है। रसायनिक प्रतिक्रियामें उदासीन रहता है।

शिलाजीतमें चूना और अभ्रककी मात्रा भी रहती है। इसे त्रिदोषनाशक माना गया है। यह प्रायः

सभी रोगोंमें लाभदायक सिद्ध हुआ है जैसाकि शास्त्रमें लिखा है—

न सोऽस्ति रोगो भुवि साध्य रूपो
शिलाजतु यन्न जयेत् प्रसह्य।

प्राप्ति स्थान—यह काश्मीर, गढ़वाल, अल्मोड़ा, भूटान, तिब्बत और गिलगित आदि पर्वतीय स्थानोंसे प्राप्त किया जाता है।

शिलाजीतके भेद—इसके चार भेद होते हैं—

१. स्वर्ण गर्भ २. रजतगर्भ ३. ताम्रगर्भ और ४. लोह गर्भ। इस प्रकार जिस धातुयुक्त शिलाओंसे प्राप्त होता है वैसा ही शिलाजीत जनसे पाया जाता है।

१. स्वर्ण गर्भशिलाजीतका रूप—यह शिशिर गुण, मधुर, तिक्त और कटु रस तथा कटु विपाकी और बाह्य दर्शनमें गुडहल पुष्पके समान वर्णका होता है।

२. रजत धातुयुक्त—यह शिशिर पाण्डुर वर्ण, तिक्त रस व मधुर पाकवाला होता है।

३. ताम्र धातुयुक्त—यह तिक्त रस, तीक्ष्ण, उष्ण गुण और बाह्य दर्शनमें नीलाभ वर्णका होता है।

४. लोह धातुयुक्त—यह तिक्त, क्षिब्ध लवण और कषाय रस, कटु विपाक, शीतल, गुरु तथा स्निग्ध गुण और बाह्य दर्शनमें काले वर्णका होता है।

सुवर्ण शिलाजीत वातपित्तनाशक, रजत श्लेष्म पित्तहर, ताम्र कफनाशक किन्तु लोह शिलाजीत त्रिदोष नाशक होता है।

शिलाजीतको शोधित करके औषधार्थ प्रयोगमें लाना चाहिये इसकी शोधन विधि इस प्रकारसे है—

ऋतु—जब हवा तेज न चल रही हो और आकाशमें बादल बिलकुल न हों, वैशाख और ज्येष्ठ मासमें इसका शोधन किया जाता है।

विधि—चार बड़े-बड़े लोहेके पात्र (कढ़ाही या पत्राक) लें। प्रत्येक पात्रमें शिलाजीत चूर्ण डालकर उसमें शिलाजीतसे दो गुना गरम जल

जीतसे आधा भाग त्रिफला कषाय मिलाकर तीन घण्टे तक धूपमें रख दें। इसके बाद धूपमें ही इसको अच्छी तरहसे मसलकर कपड़ेमें छान लें। अब छूने हुये काले रंगके शिलाजीत जलको उक्त चार पात्रोंमेंसे एक पात्रमें भरकर तेज धूपमें रख दें। तेज धूपके लगनेसे जलके ऊपर कोमल स्वच्छ तथा अति कृष्ण वर्णकी मलाई-सी लग जावेगी। इस मलाईके समान पदार्थको धीरेसे निकालकर दूसरे पात्रमें रखे हुये गरम जलमें डाल दें। जब इस पात्रमें भी उपरोक्त पात्रके समान काली मलाई-सी जम जाय तो इसको तीसरे पात्रके गरम जलमें डाल दें। इसी तरह तीसरे पात्रकी मलाई चौथे पात्रमें डाल दें। यह प्रयोग तब तक करना चाहिये जब तक कि काली सी मलाई आना बन्द न हो जावे जब शिलाजीत पूर्ण शुद्ध हो जावेगा तो स्वच्छ जल रह जावेगा। इसके बाद विशुद्ध शिलाजीतको एक स्वच्छ पात्रमें एकत्र कर लेना चाहिये।

शोधनमें विशेष सावधानियाँ—१. पात्रोंके जलको हिलाना नहीं चाहिये।

२. ऊपरकी मलाईको सावधानीसे निकालना चाहिये और तलमें पड़े बालूके कण नीचे ही रहना चाहिये।

३. पात्रके ऊपर धूल आदि न पड़ने पावे। इसके लिये पात्रके मुखपर स्वच्छ व बहुत पतला कपड़ा रख देना चाहिये।

शिलाजीतका द्वितीय शोधन प्रकार—यदि शिलाजीत शोधनमें त्रिफला कषायके स्थानपर गोमूत्र ताजा और साफ डालकर शुद्ध किया जावे अथवा भौंगरेका स्वच्छ साफ स्वरस डालकर धूपमें सुखाकर शिलाजीत शुद्ध किया जावे तो भी उत्तम है।

शुद्ध शिलाजीतकी परीक्षा—

“पाङ्गारसंस्था निर्धूमा पक्वा लिङ्गोपमा भवेत्।
आस्वादे कटुतिक्ता च शिलालाक्षा तु साऽमला ॥”

अर्थात् जिस शिलाजीतको जलते हुये कोयलोंके ऊपर रखनेसे धुआं न उठे किन्तु जलनेपर लिगाकार होजाय इसके साथ ही यदि उसे जिह्वामें रखें तो उसमें कटु और तिक्त स्वाद फैलता है तो उसे शुद्ध

शिलाजीत समझना चाहिये।

“सलिले या विनिक्षिता तन्तुप्रसवकारिणी।
आस्वादे कटुतिक्ता च शिलालाक्षा तु साऽमला ॥”

अथवा जिस शिलाजीतको थोड़ा सा लेकर जलमें डाला जाय यदि वह जलमें इधर-उधर तारसे होकर फैलने लगे और स्वादमें कड़ुवा हो तो उसे असली शिलाजीत समझना चाहिये।

शिलाजीतकी मात्रा—

“द्विगुज्ञातः समारभ्य वसुगुज्ञामितं परम्।
शिलामयं प्रयुञ्जीत बलकालाद्यपेक्षया ॥

अर्थात् दो रत्ती परिमाणसे लेकर ४ रत्ती तक रोगीका बल, काल आदिका ध्यान रखते हुये शिलाजीतकी मात्राका प्रयोग किया जाना चाहिये।

शिलाजीतके गुण—

“शिलाजतु मतं तिक्तं विपाके कटुकं तथा।
मूत्रलञ्च विशेषेण योगवाहि रसायनम् ॥

यह तिक्त रस वाला विपाकमें कटु, मूत्र लाने वाला, योगवाही और रसायन द्रव्य है।

शिलाजीतके सेवनसे मूत्रमें आने वाला ओजसाव (Albumin) बन्द हो जाता है। चेतनावाही नाड़ियोंकी दुर्बलता दूर हो जाती है। अधिक रक्तभारके कारण बढ़ी हुई धमनीक्रियाको नियमन करनेके लिये अर्थात् धमनियोंको संकुचितकर उनको बल देनेके लिये शिलाजीतके समान अन्य कोई उत्तम औषधि नहीं है।

अधिक रक्तदाहके कारण उत्पन्न होने वाले तीव्र शिरःशूलमें, जिसमें हृदयकम्पन, नेत्र पलकोंमें शोथ, जी मचलाना तथा अभिमांश हो, यह शीघ्र लाभ पहुँचाती है।

पित्ताशयमें जमे हुये कणरूपपित्तको शिलाजीत शीघ्र ही पतला करती और बाहर निकालती है। इससे पित्ताशय शुद्ध हो जाता है। पित्ताशय शोथ नष्ट हो जाता है। पित्ताशयको निकालनेके लिये

पित्ताशयमें जमे हुये कणरूपपित्तको शिलाजीत शीघ्र ही पतला करती और बाहर निकालती है।

इसके सेवनसे मधुमेह शान्त हो जाता है इससे उत्पन्न उपद्रव संन्यास (मूर्च्छा) रोग नष्ट होता है। इससे कामला व वमन रोग भी दूर हो जाते हैं। मानसिक दुर्बलता, भयंकर उन्माद, आक्षेप और अपस्मार व योषापस्मार आदि मानसिक व्याधियाँ इससे नष्ट हो जाती हैं।

शिलाजीतके सेवनसे श्वेद वाहिनियाँ विस्तृत हो जाती हैं और श्वेद अधिक निकलने लगता है। इसके सेवनसे हृदयकी वृद्धि भी कम हो जाती है अच्छी तरहसे निद्रा आने लगती है। वृत्तोंमें उत्तेजना उत्पन्न होती है और मूत्रकी मात्रामें वृद्धि हो जाती है। अतः शिलाजीत मूत्रल, पित्तनिःसारक, श्वेदल और प्रवृद्ध रक्त वेगहर है।

कामलाजन्य कण्डू (खुजली) में शिलाजीतको सेवन करनेसे शीघ्र लाभ मिलता है। शिलाजीत धमनी, माँसपेशियों और हृदय आदि यंत्रोंकी माँसपेशियोंमें स्थितिस्थापक गुण प्रदान करता है जिससे यह सभी अंग कभी विकृत नहीं होते हैं।

शिलाजीत सेवन करनेसे मूत्राशय शोथ तथा रक्त सन्ध्यके कारण होने वाले मूत्राशय साव अथवा अधिक मूत्र प्रवृत्ति नष्ट हो जाती है।

मूत्रमें एल्ब्यूमिन (ओज) अथवा शर्करा निकलती हो तो शिलाजीतके सेवनसे लाभ होता है।

उपरोक्त गुणोंको देखते हुये यह प्रतीत होता है कि यह सर्वोत्तम सर्वरोगहर औषधि है। इसको निम्न व्याधियोंमें इस प्रकार उपयोगमें लाना चाहिये—

शिलाजीतका आरामिक प्रयोग—

१. मूत्रकृच्छ्र (शुक्रावरोधके कारण) दो-रत्ती शुद्ध शिलाजीतको मधुके साथ सेवन करनेसे मूत्र-प्रवृत्ति होने लगती है।

२. अष्टीलिका व वातकुण्डलिका—इसमें शिलाजीतको दशमूल कषायमें खोंड मिलाकर सेवन करनेसे लाभ होता है।

३. मूत्राशयाश्मरी—शिलाजीतको वज्रपादिकायके

अनुपानसे सेवन करनेसे मूत्रके रुकने व पथरीमें लाभ होता है।

४. मूत्राघात—इसको अमृतादि काथके अनुपानसे सेवन करनेसे लाभ होता है।

५. मूत्र विकार—इसको गोक्षुर काथके साथ सेवन करनेसे सभी मूत्र विकार व मूत्रकृच्छ्र रोग नष्ट हो जाते हैं।

६. शुक्रक्षय—यदि वीर्यका क्षय हो चुका हो तो शिलाजीतको काकोल्यादि गणके द्रव्योंके साथ सेवन किया जावे तो वीर्यकी वृद्धि होती है।

७. राजयक्ष्मा—इस रोगमें शिलाजीतको लोह भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, घृत, शहद, हरीतकी चूर्ण, वायविडंग चूर्णमें मिलाकर सेवन करनेसे लाभ होता है।

८. प्रमेह—शिलाजीतको प्रातःकाल खोंड और दूधके साथ सेवन करनेसे प्रमेह जन्य विकार नष्ट होजाता है।

९. हृदयरोग—शिलाजीतको अर्जुनत्वक् काथके अनुपानसे दो माह तक निरन्तर सेवन करनेसे हृदय रोगमें लाभ होता है।

१०. ऊरुस्तम्भ—शिलाजीतमें शुद्ध गूलर, सोंठ, पिप्पली चूर्ण मिलाकर गोमूत्र अनुपानसे सेवन करने पर शीघ्र ही ऊरुस्तम्भ रोग शान्त होने लगता है।

११. रक्ताल्पता—यदि शरीरमें रक्तकी कमी हो तो शिलाजीतको लोह भस्म व स्वर्णमाक्षिक भस्मके साथ मिलाकर सेवन करना चाहिये।

१२. व्रण, आघात—शिलाजीतको कपूरके साथ शुष्क रूपमें पीसकर तत्काल होने वाले छुरी या चाकू आदिके घावमें भर देनेसे वह व्रण बिना पके ही भर जाता है।

१३. कुम्भ कामला—इसमें शिलाजीतको हरिद्रा चूर्णमें मिलाकर गोमूत्र अनुपानसे सेवन करानेपर आराम मिलता है।

१४. मसूरिकाज्वर, स्फोटज्वर—शिलाजीतमें लोहभस्म और स्वर्णभस्म मिलाकर रॉल द्रव काथसे

सात भावना देकर रखलें। अब इसमेंसे एक रत्तीकी मात्रामें कुछ दिन निरन्तर सेवन करनेसे उपरोक्त दोषोंमें लाभ होता है।

१५. प्रमेह—इसमें शिलाजीतको पिप्पली, पाषाण भेद, इलायची बीजके चूर्णके साथ मिलाकर चाबलोंके धोवनके साथ सेवन करनेसे लाभ होता है।

अगर सामान्यतः शिलाजीतका प्रयोग प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति करे तो वह कभी रोगग्रस्त नहीं होगा और दीर्घायु प्राप्त करेगा। प्रत्येक रोगीको आरोग्य प्राप्तिके लिये चाहे वह किसी व्याधिसे पीड़ित हो उसे शुद्ध शिलाजीतका प्रयोग वैद्यकी सम्मतिसे विधि

पूर्वक करना चाहिये। इससे शरीरस्थ अंग स्वतः स्वस्थान्तराको प्राप्त होकर रोगसे मुक्त हो जावेंगे।

स्वस्थ मनुष्य जब शिलाजीत सेवन करे तो पथ्यकी आवश्यकता नहीं है परन्तु जब कोई रोगी विशेष रूपसे इसे सेवन करे उस समय अपथ्य पदार्थोंको त्याग देना चाहिये। यह औषधि नवयुवक नवयुवतियोंके लिये भी विशेष उपयोगी है। आजके इस युगमें सर्भीको शिलाजीतका सेवन करना चाहिये जिससे कि प्रत्येक व्यक्तिकी शारीरिक व्याधियाँ नष्ट होकर वह स्वस्थ व सबल बनकर देश सेवामें संलग्न हो सके।

आजके डालडायुगमें जो अनेकानेक बीमारियाँ अकस्मात् पैदा हो जाती हैं, उन सभी को

कृष्ण-गोपाल की गम्भीर चुनौती

पाचन सुधा

उदर की ऊष्मा, तज्जनित उदरस्थ अवयवों की अव्यवस्थिततासे होने वाली समस्त

बीमारियाँ इसके सेवनसे भाग खड़ी होती हैं। जैसे—

★ ववासीर

★ यकृत-प्लीहावृद्धि

★ गुल्म

★ आमग्रहणी

★ अजीर्ण

★ आमातिसार

— आदि —

पेटमें गैस की उत्पत्ति होती है। उन सबों को 'सुधा' की तरह 'पाचन सुधा' दूर कर देती है।

परीक्षा प्रार्थनीय है।

वातरक्तकी सफल चिकित्सा

लेखक:—वैद्य सुरेश चन्द्र शर्मा "गौड़"

प्रधान चिकित्सक, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, मोहनगढ़
जि० जैसलमेर (राज०)

वातरक्त एक विशेष दुःखदायी तथा कष्ट साध्य रोग है। लेखकने जैसा अनुभव किया है लेखने लिखनेका प्रयत्न किया है। सामयिक प्रवाहके अनुसार एलोपैथिक औषधोंका प्रयोगकर उनके विषयमें भी अपना अनुभव लिखा है। परन्तु आयुर्वेदिक चिकित्सा इस रोगमें भी अपूर्ण नहीं है। उसमें भी अनेक उत्तम योग ऐसे हैं जिनका उपयोग तात्कालिक व्यथाकी शान्तिके निमित्त सफलता पूर्वक किया जाता है। अच्छा हो कि लेखक महोदय उनकी चिकित्सा सम्बन्धी सम्भावनाओंका भी परीक्षणकर उनका विवरण प्रस्तुत करें। निश्चय ही विकार और दुःखकी शान्तिके लिये सभी उपायोंका अवलम्बन उचित है। फिर भी आयुर्वेदके अनुयायियोंका कर्तव्य है कि वे अपनी औषधोंकी कार्य कारिताका प्रथम अनुभवकर तदनन्तर दूसरी ओर ध्यान दें। योग्य लेखककी ऊहापोह तथा नवीन अनुभवकी प्रवृत्ति सराहनीय है।

सम्पादक

प्रायः रोगके प्रारम्भमें कुछ चिकित्सक वातरक्त (Gout) गाऊटको केवल वातरोग एवं रक्तविकार मानकर लाक्षणिक चिकित्सा किया करते हैं। जब उपद्रव युक्त कष्ट साध्य वातरक्त ही गलित् कुष्ठका रूप ले लेता है तब रक्त शोधक अथवा कुछ रोगकी भांति चिकित्सा करते हैं। इस कारणसे प्रायः नवीन चिकित्सक ही नहीं अपितु पुरातन चिकित्सक भी धोखा खा जाते हैं और सफलता मिलती भी है तो तीरमें तुके वाली बात होती है। इसके लिये आयुर्वेदमें कहा भी है।

वायु प्रवृत्तो घृष्टेन रक्तेनाधारितः पथि।

क्रुद्धः संदूषयेद्रक्तं तज्ज्येयं वात शोणितम् ॥"

अर्थात् "रक्तगतवाते तु वात एव दुष्टो रक्तमदुष्टमेव गच्छतीति भेदः। स्पष्टमें बात यह है कि वातरक्तमें दुष्ट वायु रक्तको बिगाड़ता है, और रक्त गत वातमें वात ही दूषित होता है रक्त अदुष्ट रहता है।

कारण—आधुनिक पथ अष्ट सभ्यता, चाय, तमक, खटाई, मिर्च, चार, स्निग्ध, गर्म भोजन (तेलकी पूर्वा कचौड़ी) सदा सूखा मांस सेवन, विरुद्ध पदार्थ, खराब आसव अरिष्ट, सिरका, दिवा स्नान एवं शराब आदि पीकर तत्काल मैथुन अथवा ठण्डे पानीका सेवन इत्यादि कारणोंसे वातरक्त होता है।

लक्षण—वातरक्तमें पैरोंको छूनेमें कष्ट होता है। पैर सूख जाते हैं, तोड़-भेद पीड़ा होती है। स्पर्श ज्ञान नहीं रहता। पित्त रक्तसे ज्वरदस्त जलन होती है, और पैर रहते हैं, लालरंगकी सूजन हो जाती है, और मुलायम रहते हैं। श्लेष्म रक्तसे पैर सफेद हो जाते हैं, पसीना हर वक्त निकले या बिलकुल न निकले, सब अंग काले पड़ जायें, स्पर्श ज्ञान न रहे, वातमें किसी कारणसे शरीरमें क्षत हो जायें तो वहाँ बड़ी पीड़ा होती है। सब जोड़ ढीले हो जाते हैं। आलस्य शरीरमें कुंसियाँ निकल आने

अधिकतर
तोड़-भेद
सन्धियोंमें
हो जायें
चकसे नि
प्रकारके व
हैं। इस उ
वातरोगक
जिससे रोग
जानेपर भ

एवं द
द्विदोष,
लक्षणोंसे
होता है।
विवरण ले
आवश्यकत
अतः पूर्ण
यह रोग
कभी-कभी
और उचित
अथवा गति
जाता है।
लेता है।
आयुर्वेदि
इस रोग
हाथोंकी उ
रक्त, व
चिकित्सक
मनोव्यथा
शारिरीक
नहीं दिख
व्यापारिक
समझनेकी
पैसा और
नहीं करना
सुख भोगी
रहता है।

अधिकतर घुटना, पिंडली, जांच, कटि, कंधा, हाथ पैरमें तोड़, भेद और फरकन होती है। भारीपन, खुजली, सन्धियोंमें बार-बार पीड़ा और दाह हो, और शान्त हो लाया करे। शरीरकी कान्ति बिगड़ जाये और चकत्ते निकलें। यह सभी प्रारम्भिक लक्षण सभी प्रकारके वातरक्तमें इन्हीं पूर्व रूपों सहित प्रगट होते हैं। इस अवस्थामें ही चिकित्सक प्रधान लाक्षणिक वातरोगकी चिकित्सामें उष्ण औषधि प्रयुक्त करते हैं, जिससे रोग बढ़ता है। अथवा चिकित्सा न किये जानेपर भी मिथ्या आहार विहारसे रोग बढ़ता है।

एवं वाताधिक, रक्ताधिक, पित्ताधिक, कफाधिक, द्विदोष, त्रिदोष प्रधान दोषोंसे अलग-अलग लक्षणोंसे युक्त पूर्वोक्त पूर्वरूपसे रोगका प्रादुर्भाव होता है। यहां वातादिक दोषोंके पूर्ण लक्षणोंका विवरण लेख अधिक बढ़ जानेके कारण एवं अधिक आवश्यकता न समझते हुए नहीं किया जा रहा है, अतः पूर्ण विवरणके लिये अन्य आयुर्वेदिक ग्रन्थ देखें।

यह रोग अक्सर पैरोंसे प्रारम्भ होता है, किन्तु कभी-कभी हाथोंकी अंगुलियोंसे भी प्रारम्भ होता है, और उचित चिकित्सा न होनेपर मूषाविष, उपर्दशविष अथवा गलित् कुष्ठकी तरह बढ़कर सारे शरीरमें फैल जाता है और इसी तरह बहुत उग्ररूप धारण कर लेता है।

आयुर्वेदिक चिकित्सा:—

इस रोगका रोगी प्रारम्भिक दशामें पैरों अथवा हाथोंकी अंगुलियोंमें रक्त वैकारिक दशा दृष्ट या चम्बल, अथवा अन्य किसी चर्नविकारके लिये चिकित्सकके पास आता है और धीरे-धीरे अपनी मनोव्यथा भी कहता है, परन्तु रोगी रोगकी प्रारम्भिक दशामें ऊपरसे देखनेपर इतना अधिक रुग्ण नहीं दिखाई देता। चूंकि आजकलकी चिकित्सा व्यापारिक होनेके कारण चिकित्सक रोगीका रोग भी समझनेकी चेष्टा नहीं करता है, और रोगी भी इतना पैसा और समय भी मामूली रोग समझते हुए नष्ट नहीं करना चाहता। किन्तु आन्तरिक शारीरिक कष्ट सुख भोगी ही जानता है, फिर भी उपेक्षा करता ही रहता है। चूंकि रोगीका इतिहास मालूम करनेपर

विदित होगा कि उसको पूर्व दो वर्षोंसे खाना नहीं आता और क्षुधा नहीं लगती है। हृदयके उपर अम्लपित्तके रोगीकी भांति भार एवं जलन बनी रहती है, एवं हाथ पैर छूनेसे भी अपेक्षया उष्ण मालूम होंगे, व स्वयं रुग्ण भी हाथ पैरोंकी उष्णताको कहेगा।

ऐसी अवस्थामें चिकित्सक कोई मल्हर एवं मामूली रक्त शोधक औषधि दे देता है। इस प्रकार १-२ बार रोगी चिकित्सकके पास जाता है, किन्तु पर्याप्त लाभ न होता देखकर निराश होता है, अथवा किसी अन्य चिकित्सकके पास जाता है। ऐसी स्थितिमें चिकित्सकको चाहिये कि उसको रोगकी परिस्थिति समझाकर उसे पूर्व ही धैर्यपूर्वक दीर्घकालतक चिकित्सा करानेके लिये प्रेरित करें।

चिकित्सा:—(१) रोगकी प्रारम्भिक दशामें यदि रोगी बलवान् हो तो, प्रथम वमन, विरेचन, दोनों कर्म करावें। यदि दुर्बल हो तो अवस्थानुसार विरेचन करावें। तदुपरान्त पीपलकी बकलीके कायके साथ २ मा० शुद्ध गन्धक दिनमें ३ बार सेवन कराने एवं आक्रान्त स्थानपर दशांग लेप, शत धौत तबनीतमें लगानेसे १ या १३ मासमें रोगी पूर्ण स्वस्थ होजाता है।

(२) यदि रोगी काय आदि मज्जकटन चाहता हो, और शीघ्र लाभ चाहता हो तो हमदर्द (देहली) की यूनानी औषधि "साफी" के साथ बय मात्रानुसार शुद्ध गन्धकका सेवन करावें। अकेली "साफी" के दीर्घकाल तक सेवन करनेसे भी रोगी ठीक होजाता है।

(३) रोगकी अधिक गम्भीरताकी दशामें विशिष्ट चिकित्सा एवं सद्यः लाभ हेतु निम्न चिकित्सा करें।

(१) हरताल भरम ४ रत्ती (२) तालसिन्दूर ३ रत्ती (३) माणिक्य रस ५ रत्ती (४) शुद्ध गन्धक रसायन ४ मासा मिलितकी ३ मात्रा बनावें। एक-एक मात्रा बृहत् मंजिष्ठादि काय १ तोलाके साथ दिनमें ३ बार दें। भोजनोपरान्त सारिवासव एवं चविकासव १-१ तोला जलके साथ। लगानेके लिये दशांग लेप।

पथ्यापथ्य—पूर्वोक्त रोगके कारणोंका त्याग करें। काम न चलनेपर थोड़ा सैधानमक लें। मैथुनका स्थान करें। अक्रान्त स्थानपर ठण्डा पानी अथवा

साधारण मल्हर न लगावें। परबल, मूंगकी बाल, चावल, शुद्ध घी, गाय या बकरीका तुम्ह पथ्य है।

ऐलोपैथिक चिकित्सा—

जिस प्रकार पूर्व आयुर्वेदिक चिकित्सामें रोगीकी स्थितिका वर्णन किया है, यही स्थिति इस पैथीके चिकित्सकों एवं रोगियोंमें भी रहती है। कभी-कभी नवीन चिकित्सक इस रोगमें पैनिसिलिन या (Dycrysticin) डाइक्रिस्टीसिन् का प्रयोग कर देते हैं, जिससे रोगीकी दशा तत्काल बिगड़ जाती है। अतः इस रोगमें पैनिसिलिनका प्रयोग न करें। सल्फा ड्रग न दें। एवं पैनिसिलिन ओइन्टमेन्ट भी न लगावें। कुछ चिकित्सक "कैलसियम ग्लुकोनेट" रक्त शुद्धिके प्रलोभन अथवा उपदेश विष समझकर लगा देते हैं। परन्तु इस रोगमें "कैलसियम ग्लुकोनेट" का भी प्रयोग न करें।

चिकित्सा—चिकित्साके प्रारम्भमें ब्रुकलेक्स या अन्य ऐसी औषधकी उचित मात्रासे जुलाब दें। प्रारम्भिक रोगमें "मीरा डीरीयल" ४ (चार) कैप्सूल अथवा "प्रीसोबिन" (ग्लैक्सो) की ४ टेब्लेट दिनमें चार बार देनेसे रोग १५-२० दिनमें शान्त हो जाता है।

(२) किन्तु रोगकी गम्भीरताकी दशामें—मिलि-कोर्टिलिन टेब्लेट (सीबा) की चार टेब्लेट दिनमें चार घण्टे बाद पानीके साथ देनेसे ३-४ दिनमें रोग शान्त हो जाता है। पुनः रोगके ठीक होने तक 'डैल्टा-कार्टिलिन' ४ टेब्लेट प्रयुक्त करते रहें और रोगके कम होनेके साथ मात्रा भी कम करते रहें। इस प्रकारसे रोगीके लिये ६० से ९० टेब्लेट तक पर्याप्त होती है।

(३) रोगकी अन्तिम दशामें अर्थात् जब रोगीके सारे शरीरमें रोग फैल गया हो, रात्रिमें सो न सकता हो, आक्रान्त स्थान बहुत शोथ एवं साव युक्त होजानेपर निम्न विशिष्ट चिकित्सा करें—

(१) सुवाभाईसीन कैप्सूल। एक।

(२) वैटनेलीन टेब्लेट। एक।

दिनमें ४ चार बार पानीसे

अनिद्राकी दशामें फिनरगन टेब्लेट या लार जेकटील टेब्लेट १ या २ सोते समय दें। लगाने लिये रिकवर्सकी कैनाकौम्ब ओइन्टमेन्टका ३ बार प्रयोग करें। इसकी भी ट्यूब बाजारसे मिलती है। इस चिकित्सासे भी बहुत शीघ्र आराम होता है। ४-५ दिनमें रोगीका रोग शान्त हो जाता है। वास्तवमें इन औषधियोंका तत्काल लाभकी दृष्टिसे प्रयोग करना बहुत अच्छा है। यह चिकित्सा अनुभवके पश्चात् लिखी गई है। यथार्थतासे एक शब्द भी अधिक नहीं लिखा है।

किन्तु यह चिकित्सा जितना शीघ्र लाभ दिखाने वाली है, इतना रोग नष्ट करनेमें कली भूत नहीं पाई गई है। चूंकि इन औषधियोंसे शरीरमें पाचक एवं पोषक कोषाणु इतनी अधिक मात्रामें नष्ट हो जाते हैं कि रोगी पुनः कभी भी पनपने नहीं पाता। हमेशा दुर्बलता बनी रहनेके कारण रोगी अपना रोग निर्मूल नहीं समझता। या यों कहिये कि रोग निर्मूल होता भी नहीं है।

अतः रोगकी अत्यधिक गम्भीरताकी दशामें चिकित्सकोंको रोगीके तात्कालिक सुखार्थ और रोगकी दशामें कठनेके लिये शुरुमें ऐलोपैथिक औषधियोंका प्रयोग करें। किन्तु रोगके वेगकी शान्तिके पश्चात् आयुर्वेदिक चिकित्साकी शरण लेनी चाहिये ताकि रोग बिल्कुल निर्मूल हो सके। ऐसा करनेसे सोनेमें सुगन्ध प्राप्त होती है।

इसलिये ये दोनों चिकित्सा पद्धति मिलकर अपनी विशेषताओंके कारण इस रोगपर पूर्ण रूपसे विजय प्राप्त करनेमें सहायक हो सकती हैं।

दही और उसका उपयोग

श्रीमती सुमित्रा देवी अग्रवाल "विशारद"

दही और तक्रके विविध प्रकारके सुन्दर उपयोगोंका वर्णन आयुर्वेद शास्त्रोंमें है। स्वास्थ्य और रोग-निवारणकी दृष्टिसे तो इसका उपयोग भारतमें होता ही है। परन्तु हमारे रहन सहन भोजन आदिमें दूध, दही, मक्खन आदि भारतीय परम्परा और संस्कृतिके अविभाज्य अङ्ग बन गए हैं। दुर्भाग्यसे अब इनका स्थान चाय आदि अनेक हानिकार पदार्थ लेते जा रहे हैं। लेखिकाने दहीद्वारा निर्मित होने योग्य अनेक स्वादिष्ट और लाभदायक पदार्थोंका विवरण दिया है। उन्हें भी पाठक देखें और देशकी इस प्रमुख एवं विशेष खाद्य समस्याकी ओर भी विशेष ध्यान दें।

सम्पादक

दूधमें अम्ल रस दही पड़नेसे दूध विकृत होकर जम जाता है। दूधकी इसी अवस्थाको दही कहते हैं। खालिस दूधका दही अच्छा बनता है। पहिले अच्छा भैंसका दूध लेकर गरम करिये। इसके बाद मिट्टीकी पथरीमें दूध पलट दीजिए। जब दूध कुछ गर्म रहे तब उसमें खटाई, नींबूका रस या थोड़ी सी टाटरी डाल कर एक जगह रख दीजिए। चार घण्टेमें दही जम जायगा किन्तु अम्ल रस छोड़नेसे जो दही जमता है उसे दम्बल कहते हैं। इस दम्बलके द्वारा जो दूसरे दिन दही जमाया जायगा उसका नाम दही है। दही जमानेमें मुख्य जामन है। यह जैसा खट्टा, मीठा होगा दही भी उसी तरह खट्टा, मीठा जमेगा। इसलिए जहां तक बने जामन मीठे दहीका देना चाहिए। एक बात और भी ध्यानमें रखनी चाहिए कि जब दूधको गरम कर पथरीमें डालिए तब उसे ऐसी जगह रखें कि जहाँ वह जरा भी हिलेडुले नहीं। जामन देनेके बाद चार छह घण्टे तक उसे नहीं छूना चाहिए।

केशरिया दही

सामग्री—भैंसका दूध एक सेर, शक्कर एक छटाक, केशर दो माशे, गुलाबका इत्र दो बूंद।

विधि—पहिले दूधको कड़ाहीमें डाल कर आगपर चढ़ा दीजिए। जब दूध पक कर तीन पाव रह जाय तब उसमें शक्कर छोड़ दें। फिर थोड़ेसे दूधमें केशर घोट कर पके दूधमें छोड़ दीजिए। एक उबाल आ

जानेपर नीचे उतार लें। इसके बाद साफ पथरीको ऐसी जगह रखिए जहां हिलने डुलने न पाए। इसके बाद उसमें दूधको पलट दीजिए। जब दूध ठंडा होने लगे अर्थात् थोड़ा कुनकुना रहे तब अच्छा मीठा दहीका जामन देकर ऊपरसे चारों ओर गुलाब जलकी बूंद टपका दीजिए। सात-आठ घण्टे बाद दही जम जायगा। यह दही खानेमें अत्यन्त स्वादिष्ट होता है।

अमृत दही

सामग्री—अच्छा कच्चा दही एक सेर, अच्छा खालिस दूध आधा सेर, शक्कर एक पाव, छोटी इलायचीका चूरा आधा तोला, पके आमका रस आधा पाव, अदरकका रस एक तोला, केशर दो माशे।

विधि—पहले एक साफ नये पतले कपड़ेको साफ करके रख लें फिर एक पत्थरके बड़े बर्तनमें साफ कपड़ेको रखिए। उस कपड़ेको दो व्यक्ति किनारे किनारे पकड़ लें। अब उसके ऊपर दही डालिए, तत्पश्चात् इलायची, अदरक और केशरको महीन पीसकर उस दहीमें छोड़ दें। ऊपरसे चीनी मिला दूधको थोड़ा थोड़ा डालकर एक हाथसे मसल मसलकर छानते जाइए। इसी तरह सब दूध दहीके साथ छान लीजिए। बस अमृत दही तैयार होगया है।

दही आरारोटके लड्डू

सामग्री—दही आधा सेर, आरारोट एक छटाक, शक्कर एक पाव, कालीमिर्च, किशमिश, इलायची

तथा चिरौंजी अन्दाजसे ।

विधि—पहले दहीको एक साफ महीन कपड़ेमें बांधकर किसी चीजसे लटका दीजिए । जब दहीके भीतरका सभी पानी निकल जाए तब इसमें अरारोट मिलाकर खूब फेंटिए । फेंट जानेपर इसकी बूंदी छाँट लें । फिर शकरकी तीन तारकी चासनी बनाकर इसमें बूंदी, किसमिस, इलायची, कालीमिर्च तथा चिरौंजी डालकर कुछ देर बाद लड्डू बांध लीजिए । बस दही और अरारोटके स्वादिष्ट लड्डू तैयार हो गये हैं ।

दहीके कबाब

सामग्री—दही एक सेर, बेसन आधा सेर, धनियाँ, हरी मिर्च, नारियलका कस, नमक, तैल अन्दाजसे ।

विधि—पहले मक्खन वाले दहीको एक साफ कपड़ेमें बांधकर किसी चीजसे लटका दें । जब दहीका पानी निकल जाय तब उसे खूब मसल लीजिए । मसल जानेपर उपरोक्त मसाला मिलाकर टिकिया बना लीजिए । इसके बाद बेसनको कुछ गाढ़ा घोलकर उसमें नमक डाल दीजिए । इसके बाद कड़ाहीमें तैल डालकर आगपर चढ़ा दें । जब तेल गर्म हो जाए तब उन टिकियोंको बेसनमें डुबोकर तैलमें बादामी रंगसा तलकर निकाली लें । दहीके कबाब, चायके साथ खानेमें अत्यन्त स्वादिष्ट होते हैं ।

दही केक

सामग्री—दही आधा सेर, चावल आधा सेर, चूड़ा आधा सेर, शकर आधा सेर, नमक और घी अन्दाजसे ।

विधि—पहले दहीमें चावल और चूड़ा मिलाकर बारह घण्टेके लिए भिगो दें । फिर इसे सिलपर महीन पीसकर इसमें नमक और शकर मिला दीजिए । अब कोयलेके चूल्हेपर एक थाली रखिए उसमें घी लगाकर दहीके मिश्रणको फैला दें और ऊपरसे एक दूसरी थाली ढककर उसके ऊपर अंगारे रख दीजिए । आधे घंटेमें केक तैयार जाएगा । तब नीचे उतारकर काट लें । बस दही केक तैयार हो गया है । यह चटनीके साथ खानेमें अत्यन्त स्वादिष्ट होता है ।

ढोकली

सामग्री—दही एक सेर, चावलका आटा तीन सेर, नमक, मिर्च, हल्दी, जीरा, सूखा धनियाँ, हरा धनियाँ, हींग, गर्म मसाला, अदरक तथा इलायची दाने अन्दाजसे ।

विधि—पहले दहीको मथकर उसमें थोड़ा सा पानी डाल दें फिर चावलके आटेको लेकर उसमें उपरोक्त मसाला डालकर आटेको दहीके साथ कड़ा सान लीजिए । अब उसको मोटी और बड़ी रोटीकी तरह वेलकर चाकूसे शकरपारेकी तरह काट लीजिए अब सिगड़ीपर कलई दार बर्तनमें इतना पानी रखिए कि सब शकरपारे पानीमें डूब सके । जब पानीमें खोल आ जाए तब उसमें ढोकली डाल दीजिए । २०, ३० मिनट तक पक जानेके बाद नीचे उतारकर पानीसे अलग कर लें । ठंडी हो जानेपर ढोकलीको एक प्लेटमें रख लीजिए फिर उसमें अपनी इच्छानुसार नमक, मिर्च, हल्दी जीरा और गर्म मसाला डालकर खानेके काममें लाएं ।

दूसरी विधि

उपरोक्त विधिसे पहले ढोकलीको उबालकर पानी निकालकर उसमें अन्दाजसे नमक, हल्दी, जीरा, मिर्च, सूखा धनियाँ, हरा धनियाँ, गर्म मसाला तथा इलायची दाने पीसकर डाल दें । इसके बाद कड़ाहीमें हींग, जीरा और लौंग डालकर आगपर चढ़ा दें । जब बघार हो जाए तब ढोकलीको छाँक दीजिए और चमचेसे पांच मिनट चलाकर नीचे उतार लीजिए । अब आप नींबू निचोड़कर खानेके काममें लाएं ।

व्रज मक्खन

पहले अच्छा दही एक साथ कपड़ेमें बांधकर लटका दीजिए । जब दहीका सब पानी निकल जाए तब फिर उसको कसकर बांध दें । इसके बाद फिर दहीसे पानी निकलेगा । जब सब पानी निकल जाए तब दहीको परथरके बर्तनमें रखकर उसे फेंटिए । जब दही अच्छी तरह फेंट जाए तब उसमें अन्दाजसे मिश्री पीसकर छोड़कर खानेके काममें लाएं ।

स मा चा र स मी क्ष ण

श्री नारद

नारदजी सदासे ही भ्रमणप्रिय रहे हैं। वे कभी एक स्थानपर अधिक ठहरते नहीं देखे गये। परन्तु इस बार उन्हें ऐसा लगा कि भारतकी उत्तर पश्चिमी सीमापर जैसे देवासुर संग्रामकी पुनरावृत्ति हो रही हो। धर्म और अधर्मका तथा सत्य और असत्यका संघर्ष पुनः नवीनरूप धारण करके उपस्थित हुआ हो। उन्हें अपने उस समयका स्मरण हो आया जब कि वे सत्यकी विजय और असत्यकी पराजय देखनेके लिए उत्सुक होकर निरन्तर अनिमेष नेत्रोंसे देवासुर संग्रामको देखते रहते थे और संसारको अपनी तन्त्रीके तारोंकी झुनकार द्वारा प्रतिक्षण अभिनव समाचार देते रहते थे।

एक ओर धर्म निरपेक्ष होते हुए भी धर्मधुरीण भारतकी सेनाएं थी। दूसरी ओर दिन रात धर्म और मजहबका गीत गाने वाले परन्तु असत्य और अधर्मके दुराग्रहसे पूर्ण पाकिस्तानकी सेनाएं डटी थीं। नारदजी अपने लोभको संवरण न कर सके। तीन सप्ताहसे भी अधिक समय तक इसी क्षेत्रमें डटे रहे।

यहांपर उनके द्वारा भेजे गए कुछ समाचारोंका संग्रह विहगावलोकनार्थ दिया जा रहा है।

भारत पाकिस्तान युद्ध—

एक सितम्बर १९६५ से पाकिस्तानने छम्ब जौरियां क्षेत्रपर टैंकों, बख्तर बन्द गाड़ियों और सैनिकोंकी बहुत भारी सेना लेकर आक्रमण कर दिया और पूर्ण रीतिसे युद्ध प्रारम्भ कर दिया। संयुक्त राष्ट्र संघके महामन्त्री श्री ऊ. थान्त्के प्रयत्नसे दि० २३-९-६५ को प्रातःकाल ३-३० बजे सुरक्षा परिषद्के प्रस्तावके अनुसार युद्ध विराम होगया है।

पाकिस्तानने पहिले तो इस प्रस्तावके अनुसार युद्ध विराम स्वीकार नहीं किया। परन्तु अन्ततः दि० २२-९-६५ को १२.३० बजेके अनन्तर उसने भी धमकियों और घुड़कियोंके साथ बड़े नखरेसे उक्त

युद्ध विरामको स्वीकार कर लिया। तबसे कहनेको तो युद्ध विराम है, परन्तु पाकिस्तान अपने स्वभाववश कुछ न कुछ उछल कूद कर ही रहा है। अनेक स्थानोंपर पाकिस्तानी सेना ने घुस पैठ करनेके प्रयत्न किये हैं। कई स्थानोंपर गोलियां भी चली हैं। भारतके प्रधान मन्त्री श्री शास्त्रीजी ने इसे बेचैनीसे पूर्ण (Uneasy) युद्ध विराम कहा है।

युद्धकी कुछ विशेषताएं—

इस युद्धकी कुछ अपनी ही विशेषताएं रहीं हैं।

१. इसमें भारतकी लड़ाई करनेकी इच्छा न होकर केवल पाकिस्तानकी युद्ध करनेकी इच्छा थी। ५ अगस्त को उसने अपने सशस्त्र सैनिक कश्मीरमें तोड़ फोड़

एवं विध्वंसात्मक कार्य करने तथा वैध सरकारको समाप्त कर कश्मीरपर अधिकार करनेके लिए भेजे ।

२. पाकिस्तानने अमेरिकासे दानमें प्राप्त हुए शस्त्रास्त्रोंके बलपर यह युद्ध लड़ा । यों कहिये कि इतने समयसे इतनी बड़ी मात्रामें उसके पास रखे हुए यह अस्त्र और बारूदके भयङ्कर भण्डार उसके भीतर दीर्घकालसे एक कुलमुली उत्पन्न कर रहे थे ।

परन्तु भारतने यह युद्ध विवश होकर, अपने देशकी रक्षाके लिए, अपने पसीनेकी कमाईसे क्रय किये हुए तथा स्वयं अपने परिश्रम तथा धनके व्ययसे अपने देशमें अपने हाथोंसे उत्पादित साधनोंसे लड़ा ।

३. पाकिस्तानने इसे अपनी ओरसे युद्ध माना और युद्ध ही कहा । परन्तु भारत ने इसे पाकिस्तानके प्रति युद्धका नाम नहीं दिया ।

४. पाकिस्तानने इसे प्रारम्भसे ही धार्मिक युद्धकी संज्ञा दी । जिन लोगोंको कश्मीरमें घुस पैठ करनेके लिए भेजा गया उन्हें मुजाहिद कहा जाता है । मुजाहिदका मतलब ही है धर्मके लिए जहाद करने वाला । इसके बाद इसे उसने सदा ही खुलम-खुला ढङ्के की चोट इस्लामका युद्ध घोषित किया । उसका सदा ही यह प्रयत्न रहा कि भारतीय मुसलमान धर्मके नामपर भड़क उठें और विद्रोह कर दें । अधिक क्या ? कश्मीर पर उसका दावा ही धर्मके नाम पर है । मुसलमानोंकी अधिक संख्याके आधार पर है ।

परन्तु भारतने इसे कभी धार्मिक रूप नहीं दिया । क्योंकि भारत एक धर्म या मतके आग्रहसे रहित देश है । उसकी अपनी मूलभूत विशेषता ही यह है कि यहां विभिन्न धर्मोंके लोग समान अधिकारोंका उपभोग करते हैं । इसे अपना देश मानते हैं ।

५. पाकिस्तानकी ओरसे लड़ने वाले मुसलमान ही थे जब कि भारतकी ओरसे लड़ने वाले हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी आदि सभी मतावलम्बी थे जो कि भारतको अपना देश मानते हैं विभिन्न धर्मोंपर विश्वास रखने वाले लोगोंने एक होकर बड़ेसे बड़े बलिदान युद्ध भूमिमें दिये और उसके लिए देशद्वारा बड़ेसे बड़े सम्मानको प्राप्त किया ।

६. पाकिस्तानने युद्धके नियमोंका उल्लंघन कर अपनी नीच एवं दूषित वृत्तिका परिचय दिया । उसने भारतके नगरों, ग्रामों, अस्पतालों यहां तक पूजा-स्थानोंपर भी अन्धाधुन्ध बम गिराये और नागरिकों, बीमारों, घायलों, स्त्रियों, वृद्धों और बालकोंकी निर्मम हत्या की ।

इसके विपरीत भारतने कभी किसी आवादीपर एक गोली भी नहीं चलाई । केवल सैनिक स्थानों, अड्डों, हवाई अड्डों आदिपर ही आक्रमण किये । यहां तक कि लाहौरपर भी—जिसे कि जब चाहते तभी बरबाद किया जा सकता था—बम नहीं डाला । कराची, जहांसे कि हमारे यहां हवाई आक्रमण होते रहे, पर भी हमने केवल नागरिकोंको चोट पहुँचनेकी आशङ्काके कारण ही बम नहीं डाला ।

७. यह युद्ध एक फौजी तानाशाही और एक विशुद्ध प्रजातन्त्रात्मक देशके बीच था । भयङ्कर मतान्धतापर आधारित, मलिन ईर्ष्या और विद्वेषके और मानवके मतोंके पक्षपातसे रहित मानवके उच्च आदर्शोंके मध्य था ।

८. सामरिक दृष्टिसे भी कुछ महत्वपूर्ण घटनाएँ हुई हैं, जैसे कि कम शक्ति और गतिवाले विमानोंसे अधिक शक्ति वाले विमानोंकी बातकी बातमें घराशायी करना और पैटन आदि सुदृढ़ एवं अन्तर राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त टैंकोंका खिलौनोंके समान तोड़ दिया जाना ।

युद्धमें दोनों पक्षोंकी सैनिक हानि:—

विशेषज्ञ क्षेत्रोंमें अनुमान है कि इस युद्धमें पाकिस्तानी सेनाके दांत तोड़ दिये गए हैं । उसकी आक्रामक शक्तिको महत्वपूर्ण क्षति पहुँचाई जा चुकी है । ५ अगस्तसे १९ सितम्बर ६५ तक हुई हानिका विवरण एक सरकारी प्रवक्ताद्वारा निम्न प्रकारसे दिया गया है ।

नष्ट किये गए शत्रुके टैंक
किये गये क्षतिग्रस्त टैंक

युयुयान जो
युद्धमें मारे ग
इतने वाईस
बंदी बनाए
इतने १२

इसके बा
कीने गए पाकि

अनुसार ४७

तानी वायुयान

बखतर

अन्य साधन

बहुत बड़ी है

अन्य अनेक

शरतूस, बास

भारतीय शूर

होई अनुमान

कि वह बहुत

१९ सि

स्त प्रवक्त

नष्ट हुए टैंक

वायुयान

और गतिप्रा

५५ अक्रसर

युद्ध वि

के लगभग

नारद

युद्ध देखे हैं

आग्नेयास्त्रों

युद्ध भी अ

परन्तु इस

पराक्रम, इ

उसके सम

इतिहासके

ऐसे उदाह

साथ नहीं

वायुयान जो कि व्योमयुद्धमें नष्ट किए गए ७०
 युद्धमें मारे गए पाकिस्तानी सैनिक ३८४०
 (इनमें बाईस बड़े अफसर शामिल हैं)
 बंदी बनाए पाकिस्तानी सैनिक ४४९
 (इनमें १२ वारह अफसर भी सम्मिलित हैं)

इसके बादकी एक सूचनामें नष्ट किये गए तथा
 बर्से गए पाकिस्तानी टैंकोंकी संख्या सरकारी प्रवक्ताके
 अनुसार ४७१ है। वायु युद्धमें नष्ट किये गये पाकि-
 तानी वायुयानोंकी संख्या ७३ है।

बख्तर बन्द गाड़ियाँ और सैनिक यातायातके
 अन्य साधन जो नष्ट किये गए हैं उनकी संख्या भी
 बहुत बड़ी है। रिकौइल्लेस वायुयान विध्वंसक तथा
 अन्य अनेक प्रकारकी तोपें, मशीन गनें, राइफलें, बम,
 रातूस, बारूद आदि अनेक प्रकारकी युद्ध सामग्री जो
 भारतीय शूरवीरोंके हाथ लगी है उसका तो अभी
 कोई अनुमान नहीं है। इतना ही कहा जा सकता है
 कि वह बहुत बड़ी मात्रामें है।

१९ सितम्बर तक हुई भारतीय क्षतिका विवरण
 श्वेत प्रवक्ताने निम्न प्रकार दिया है।

नष्ट हुए टैंक १००
 वायुयान ३५
 और गतिप्राप्त करनेवाले सैनिक (इनमें
 ५५ अफसर भी सम्मिलित हैं) ११५७

युद्ध विरामके बाद नष्ट हुए टैंकोंकी संख्या १२५
 के लगभग ज्ञात हुई है।

नारदजीने सहस्रों वर्षोंकी अवधिमें अनेक भयङ्कर
 युद्ध देखे हैं। अन्तरिक्ष, पृथ्वी, तथा जलमें वायुयानों,
 आग्नेयास्त्रों, युद्ध पोतों और पनडुब्बियोंके रोम हर्षक
 युद्ध भी अत्यन्त निकटसे समालोचना पूर्वक देखे हैं।
 परन्तु इस युद्धमें भारतीय वीर सैनिकोंका जो अद्भुत
 पराक्रम, शौर्य, देश भक्ति और सर्वस्व त्याग देखा है,
 उसके समकक्ष उदाहरण देखनेके लिए अभी नारदजी
 इतिहासके पृष्ठ ही पलट रहे हैं। उन्हें विश्वास है कि
 ऐसे उदाहरण मिलेंगे तो परन्तु इस प्रकार एकत्र, एक
 साथ नहीं।

ब्रिटेनकी बन्दर चाल—

आपत्तिके समय मित्रों और शत्रुओंकी परीक्षा
 हुआ करती है। भारतपर पाकिस्तानद्वारा थोपे गए इस
 युद्धके समय भी भारतको अपने मित्रों और शत्रुओंको
 पहिचाननेका अवसर मिला है। कई देश तो साम्प्र-
 दायिक भावनाके वशीभूत होते दृष्टिगोचर हुए।
 प्रारम्भमें तुर्कस्तान (टर्की) और ईरान इसी चक्रमें
 रहे। परन्तु बादमें कुछ अधिक चतुर और चालाक
 लोगोंके इशारेपर उन्हें अपने इरादोंको रोकना पड़ा।
 चीनसे मित्रता होनेके कारण, मलेशियाके प्रश्नपर
 भारतसे रुष्ट होनेसे और साम्प्रदायिक अन्तः प्रेरणासे
 इन्डोनेशियाने बहुत हाथ पैर मारे। शस्त्रास्त्रों, विमानों
 और सैनिकोंकी सहायता देनेके दम भरे। परन्तु
 अन्य बुद्धिमान् देशोंकी सूझबूझके कारण तथा उनसे
 निराशाजनक उत्तर मिलनेसे बेचारा छूट पटा कर
 रह गया।

जोर्डन, जिसका भारतने सदा साथ दिया और
 समर्थन किया, वह सुरक्षा परिषद्में पाकिस्तानका
 प्रत्यक्ष समर्थक बना।

परन्तु सबसे अधिक कूटनीतिसे भरी बन्दर चालें
 तो ब्रिटेनद्वारा ही दिखाई गई हैं। पाकिस्तान ब्रिटेनकी
 कूटनीतिक दृष्टिगत सृष्टि है। चाहे जितना दिखावा
 किया जावे, ब्रिटेन चाहे कितना ही दम भरे कि उसने
 स्वेच्छासे भारतको स्वतन्त्रता समर्पित की है, परन्तु
 जिनको भगवान् ने दो आंखें दी हैं वे सभी इस बातको
 जानते हैं कि ब्रिटेनको विवश होकर भारतसे अपना
 विस्तर गोल करना पड़ा। साथ ही यह सोच कर
 कि भविष्यमें भी विषवृत्त पनपते रहें और भारत
 निष्कण्टक मार्गपर न चल सके वह चलते चलते
 पाकिस्तानकी सृष्टि करके गया है।

जब भी कोई बात विवादास्पद आती है वह
 पाकिस्तानका ही समर्थन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे
 करता है। इस बार तो उसने जब देखा कि पाकि-
 स्तान अपने 'नापाक इरादों' में असफल हो रहा है

एवं विध्वंसारम्भक कार्य करने तथा वैध सरकारको समाप्त कर कश्मीरपर अधिकार करनेके लिए भेजे।

२. पाकिस्तानने अमेरिकासे दानमें प्राप्त हुए शस्त्रास्त्रोंके बलपर यह युद्ध लड़ा। यों कहिये कि इतने समयसे इतनी बड़ी मात्रामें उसके पास रखे हुए यह अस्त्र और बारूदके भयङ्कर भण्डार उसके भीतर दीर्घकालसे एक कुलमुली उत्पन्न कर रहे थे।

परन्तु भारतने यह युद्ध विवश होकर, अपने देशकी रक्षाके लिए, अपने पसीनेकी कमाईसे क्रय किये हुए तथा स्वयं अपने परिश्रम तथा धनके व्ययसे अपने देशमें अपने हाथोंसे उत्पादित साधनोंसे लड़ा।

३. पाकिस्तानने इसे अपनी ओरसे युद्ध माना और युद्ध ही कहा। परन्तु भारत ने इसे पाकिस्तानके प्रति युद्धका नाम नहीं दिया।

४. पाकिस्तानने इसे प्रारम्भसे ही धार्मिक युद्ध संज्ञा दी। जिन लोगोंको कश्मीरमें घुस पैठ करनेके लिए भेजा गया उन्हें मुजाहिद कहा जाता है। मुजाहिदका मतलब ही है धर्मके लिए जहाद करने वाला। इसके बाद इसे उसने सदा ही खुलम-खुला ढंके की चोट इस्लामका युद्ध घोषित किया। उसका सदा ही यह प्रयत्न रहा कि भारतीय मुसलमान धर्मके नामपर भड़क उठें और विद्रोह कर दें। अधिक क्या? कश्मीर पर उसका दावा ही धर्मके नाम पर है। मुसलमानोंके अधिक संख्याके आधार पर है।

परन्तु भारतने इसे कभी धार्मिक रूप नहीं दिया। क्योंकि भारत एक धर्म या मतके आग्रहसे रहित देश है। उसकी अपनी मूलभूत विशेषता ही यह है कि यहां विभिन्न धर्मोंके लोग समान अधिकारोंका उपभोग करते हैं। इसे अपना देश मानते हैं।

५. पाकिस्तानकी ओरसे लड़ने वाले मुसलमान ही थे जब कि भारतकी ओरसे लड़ने वाले हिन्दी मुसलमान, ईसाई, पारसी आदि सभी मतावलम्बी लोग जो कि भारतको अपना देश मानते हैं विभिन्न धर्मोंके विश्वास रखने वाले लोगोंने एक होकर बड़ेसे बलिदान युद्ध भूमिमें दिये और उसके लिए देशद्रष्टा बड़ेसे बड़े सम्मानको प्राप्त किया।

शौर्य, साहस और चातुर्यकी अगणित घटनाओंसे पूर्ण है।

१२ सितम्बरके एक समाचारमें कहा गया था कि गन २४ घण्टोंमें भारतीय सेनाने शत्रु सेनाके ५२ टैंक सर्वथा नष्ट कर दिये और तीस टैंक जैसेके तैसे ठीक हालतमें शत्रुसे छीन लिए इस समाचारसे यह बात स्पष्ट होजाती है कि टैंकोंको नष्ट करनेमें जैसा कौशल भारतीय वीरोंने प्रदर्शित किया उससे भी अधिक शौर्य और चातुर्य उन्होंने टैंकोंको ठीक हालतमें छीनकर अपने आधीनकर लेनेमें प्रदर्शितकर शत्रुके हृदयमें उथल पुथल उत्पन्न कर दी।

ज्ञात हुआ है कि टैंकोंको नष्ट करनेवाले गोले भी भारतके ही बने हुए थे। यह सब कुछ तो हुआ ही है विश्वके समस्त सामग्री विशेषज्ञों, विशेषरूपसे अमेरिकाके विशेषज्ञोंको, इस सबका कारण समझनेकी जिज्ञासा हुई है। साथ ही ऐसा अनुभव किया जाता है सामरिक दृष्टिसे इन टैंकोंके निर्माण अथवा इनके स्थानपर दूसरे किसी अभेद्य टैंक आदिके निर्माणके विषयमें पुनर्निर्माण करनेकी आवश्यकता हो सकती है।

सैबर जेट और नेट—

इस युद्धके इन थोड़ेसे ही दिनोंमें प्रत्येक व्यक्तिके मुखपर सैबरजेट और नेट वायुयानोंकी चर्चा है। पाकिस्तानी वायु सेनाने इस युद्धमें सैबरजेट एफ ८६ का ही सर्वाधिक प्रयोग किया है। यह विमान १३०० मील प्रति घण्टाकी गतिसे उड़ सकता है। यह प्रथम श्रेणीका वम वर्षक विमान है। इसके अतिरिक्त इस सेनाके पास एफ-१०४, स्टार फाइटर नामके विमान भी हैं। इनकी गति १४५० मील प्रति घण्टा अर्थात् शब्दकी गतिसे लगभग दुगनी है। यह ९० हजार फीटकी ऊंचाई तक उड़ सकते हैं। यह सभी प्रकारकी आधुनिक आकाशमक हथियारोंसे युक्त हैं।

परन्तु भारतके पास इस प्रकारकी तीव्रगति और सामरिक यन्त्रोंसे युक्त विमान नहीं हैं। भारतके पास केवल मिग-१९ और नेट विमान हैं। कैन-बराकी चाल केवल ५५० मील प्रति घण्टा है। परन्तु

सैबर से १० हजार फुट ऊँचा उड़ सकता है। इस युद्धमें जिस विमानसे भारतीय वायुसेना ने विशेष कार्य लिया है और चमत्कार दिखाया है वह 'नैट' (Gnat) विमान है। बंगलौरमें आजकल हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमि. द्वारा इसका निर्माण होता है। यह संसारका सबसे हलका जेट विमान माना जाता है। इसका वेग ७०० मील प्रति घण्टा है और यह ४० हजार फीटकी ऊँचाई तक उड़ सकता है।

जब छम्ब जौरियाल युद्ध क्षेत्रमें पहिली बार श्री कीलरने नेट विमानद्वारा पीछा करके कौशल पूर्वक प्रथम सैबर जेटको धराशायी किया तब संसारके लोगोंने इसे विशेष आश्चर्यके साथ देखा। भारतीयोंने इसे गम्भीर सन्तोष एवं आत्म निर्भरताके गर्वके साथ देखा। नेटके द्वारा सैबर जेटका विध्वंस एक विशेष घटना थी। इसके बाद तो अनेक सैबर जेट पक्षच्छिन्न पक्षियोंकी भाँति धराशायी किये गए। यहाँ तक कि अभी तक सीखने वाले चालकोंने भी अपने हाथ साफ किये हैं।

हलवाड़ा (पंजाब) के एयर फ़ील्डके ऊपर हुए एक विमान युद्धमें दस मिनटके भीतर ही चार पाकिस्तानी सैबरजेट विमानोंको धराशायी कर दिया गया। इस युद्धमें एक विमान तो फ्लाइट लेफ्टनेण्ट डी. एन. गठौरने और दूसरा एक विमान फ्लाइट ऑफिसर बी. के. नेन (जो कि अभी तक आपरेशनल ट्रेनिंग ही प्राप्त कर रहे हैं) ने मार गिराया।

यह भी एक चमत्कार ही हुआ है कि पाकिस्तानी सेनाके स्टार फ़ाइटर और सैबर जेट जैसे दुर्धर्ष एवं तीव्र गतिशील विमान अल्प शक्ति वाले विमानोंद्वारा नष्ट कर दिये गये।

नारद जो कहते हैं कि निश्चय ही बड़ी तलवार हाथमें ले लेना ही विजय श्री देने वाला नहीं होता। वीरजन साधारण डण्डे या लाठीके द्वारा भी लम्बी तलवारको बेकार कर देते हैं।

ब्रिटेनकी बन्दर चाल—

आपत्तिके समय मित्रों और शत्रुओंकी परीक्षा हुआ करती है। भारतपर पाकिस्तानद्वारा थोपे गए इस युद्धके समय भी भारतको अपने मित्रों और शत्रुओंको पहिचाननेका अवसर मिला है। कई देश तो साम्प्रदायिक भावनाके वशीभूत होते दृष्टिगोचर हुए। प्रारम्भमें तुर्किस्तान (टर्की) और ईरान इसी चक्रमें रहे। परन्तु बादमें कुछ अधिक चतुर और चालाक लोगोंके इशारेपर उन्हें अपने इरादोंको रोकना पड़ा। चीनसे मित्रता होनेके कारण, मलेशियाके प्रश्नपर भारतसे रुष्ट होनेसे और साम्प्रदायिक अन्तः प्रेरणासे इन्डोनेशियाने बहुत हाथ पैर मारे। शस्त्रास्त्रों, विमानों और सैनिकोंकी सहायता देनेके दम भरे। परन्तु अन्य बुद्धिमान देशोंकी सूझबूझके कारण तथा उनसे निराशाजनक उत्तर मिलनेसे बेचारा छट पटा कर रह गया।

जोर्डन, जिसका भारतने सदा साथ दिया और समर्थन किया, वह सुरक्षा परिषद्में पाकिस्तानका प्रत्यक्ष समर्थक बना।

परन्तु सबसे अधिक कूटनीतिसे भरी बन्दर चालें तो ब्रिटेनद्वारा ही दिखाई गई हैं। पाकिस्तान ब्रिटेनकी कूटनीतिक घृणित सृष्टि है। चाहे जितना दिखावा किया जावे, ब्रिटेन चाहे कितना ही दम भरे कि उसने स्वेच्छासे भारतको स्वतन्त्रता समर्पित की है, परन्तु जिनको भगवान् ने दो आंखें दी हैं वे सभी इस बातको जानते हैं कि ब्रिटेनको विवश होकर भारतसे अपना बिस्तर गोल करना पड़ा। साथ ही यह सोच कर कि भविष्यमें भी विपवृत्त पनपते रहें और भारत निष्कण्टक मार्गपर न चल सके वह चलते चलते पाकिस्तानकी सृष्टि करके गया है।

जब भी कोई बात विवादास्पद आती है वह पाकिस्तानका ही समर्थन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे करता है। इस बार तो उसने जब देखा कि पाकिस्तान अपने 'नापाक इरादों' में असफल हो रहा है

और 'मियांजी की जूती मियांजी की ही चांद' वाली कहावत चरितार्थ होने जा रही है तो उससे चुप नहीं बैठ गया। इंग्लैण्डका बी. वी. सी. पहिले दिनसे ही इस प्रकारके समाचार, समाचार समीक्षाएं और समालोचनाएं प्रकाशित करता रहा है कि जिससे पाकिस्तानका समर्थन और भारतका विरोध होता है। वह दिखानेको तो दोनों देशोंका समान रीतिसे शुभाकाङ्क्षी बनता है परन्तु वास्तविक बात यह है कि उसे यह कभी सख्त नहीं है कि उसकी यह 'सुन्दर' रचना नष्ट हो जावे या उसे किसी प्रकारकी हानि हो और भारत शान्ति और सुखकी सांस ले सके।

ऊँचे पलड़ेको नीचा करना नीचे पलड़ेको हलका करना, बढते हुएको पकड़ कर पीछे खींचना और पिछड़े हुएको बलान् धक्का देकर आगे ठेलना राजनीतिका एक सर्वमान्य सिद्धान्त है। भारत और पाकिस्तानके विषयमें भी ब्रिटेनकी यही नीति है। आजतक वह अवसर तो आ ही नहीं पाया है कि पाकिस्तान बहुत आगे बढ़ गया हो और उसे पीछे खींचनेकी आवश्यकता ब्रिटेनको अनुभव हो। अभीतक तो यही स्थिति है कि भारत ही सब प्रकार अग्रणी है। अतः स्वाभाविक ही है ब्रिटेन भारत को ही पीछे खींचे और पाकिस्तानको थपथपाए।

वर्तमान संघर्षमें पाकिस्तानका तख्ता एक दम पलटा हुआ देखकर पहिले तो यहां तक बातें ढोली गईं कि ब्रिटेन भारतको चीनके विरुद्ध दी गई युद्ध सामग्रीको लौटानेकी मांग कर सकता है। परन्तु उसमें कुछ सार न देख कर भारतको व्यापारिक आधारपर भेजी जाने वाली सामग्री और कलपुर्जोंके देनेपर भी अवरोध लगा दिया गया।

कूटनीतिक रूपमें जो दृष्टित गति विधि, सुरक्षा परिषद् आदि स्थानोंपर उसकी ओरसे हुई है उसमेंसे कुछ बो सामने आई हैं और कुछ समय पाकर सामने आवेंगी। परन्तु इस बातमें अब सन्देह नहीं रहा है कि उसका 'वानर रूप' अब सबके सम्मुख प्रत्यक्ष होकर आगया है।

नारद जी का यह कहना है कि ब्रिटेन बेचारा कोई नवीन बात नहीं कर रहा है। उसने सदासे ही जो नीति अपनाई है, जिसके बलपर उसने संसारके अधिकांश भागपर शासन किया और जो नीति कूट राजनीतिका एक सर्व मान्य अङ्ग सदासे रही है वह उसका ही प्रेसपूर्वक अनुसरण कर रहा है। हां, गलती तो उन्हीं लोगोंकी है जो उसको इसनीतिके सफल प्रयोगमें 'साधु' और 'आदर्श वादी' समझ कर उसका विश्वास कर अपने आपको धोखेमें डालते हैं।

प्रेसिडेंट नासिरने ब्रिटेनको दोषी ठहराया-

संयुक्त अरब गणराज्यके राष्ट्रपति श्रीनासिरका कहना है कि पाकिस्तान और भारत, भारत तथा चीन और इथियोपिया तथा सुमालियाके संघर्षके लिए ब्रिटेन उत्तरदायी है।

वे कहते हैं कि भारत पाकिस्तानके युद्धका कारण उपनिवेशवाद है। जब ब्रिटेनने भारत छोड़ा तो कश्मीरकी समस्याको भी छोड़ दिया। यदि वह इस समस्याको पहिले ही सुलझा देता तो इस युद्धकी तौबत-न आती।

इसी प्रकार भारत और चीनके बीच उसने मैक मोहन लाइनकी समस्या अनिर्णीत छोड़ दी। इथियोपिया और सुमालियाके बीच भी सीमा विवाद उसने छोड़ दिया। परिणाम यह है कि आज इन सब स्थानोंपर संघर्ष चल रहे हैं।

नारदजीने एक इन्टरव्यूमें बताया है कि नासिर साहब बड़े भोले हैं। उन्हें जनरलके मस्तिष्कसे सोचना समाप्त कर देना चाहिये, कूटनीतिक विचार धारा कुछ और ही है। समझदार राजनीतिज्ञ बिलकुल वही करते हैं जो कि ब्रिटेनने उपर्युक्त देशोंमें किया है। उसने आपकी दृष्टिसे नहीं सोचा था उसने तो अपनी दृष्टिसे सोचा था कि उसे सदा ही अपनी पश्चात्त करनेका अवसर मिलता रहे। वह इनका शासन होकर भी निर्णायक तो बना रहे।

सेनाध्यक्षोंकी दृष्टिसे—

दोसौसे अधिक देशीय तथा विदेशी पत्रकारोंके समक्ष बोलते हुए यशस्वी स्थलसेनाध्यक्ष श्री जे. एन्. चौधरीने बताया कि इस २२ दिनके युद्धमें भारतका प्रधान लक्ष्य जहां तक हो सके, शत्रुकी युद्ध करनेकी क्षमताको नष्ट करना था।

“ऐसा कहना तो मेरे लिए अपराध होगा कि किसीको मैं विलकुल अक्षम बताऊं।” हाँ यह बात विलकुल ठीक है कि पाकिस्तानकी टैंक सेनाके बहुतसे टैंक नष्ट हो गए हैं। उन्होंने कहा कि पाकिस्तानकी इस बड़ी हानिको देखकर वह स्वयं चकित थे। क्योंकि वे इसे विश्वसनीय नहीं समझते थे इसलिए वे बार बार इसकी जांच कर रहे थे। उन्होंने सम्वाददाताओंसे कहा कि वे स्वयं उन क्षेत्रोंमें चले और अपनी आंखों यह सब देखें। वे देखें कि अड़तीस टैंक जो हमने छीने हैं वह भी अच्छे काम करने योग्य हैं।

वायु सेनाध्यक्ष श्री अर्जनसिंहने बताया भारतीय वायु सेना पाकिस्तानी सेनासे प्रधान रूपसे दो कारणोंसे उत्तम सिद्ध हुई है। प्रथम तो यह कि भारतीय वायु सेनाके विमान चालक पाकिस्तानियों की अपेक्षा अच्छे शिक्षित थे और द्वितीय यह कि ये वायु युद्ध २०००० फुटकी ऊंचाई तक ही लड़े गए।

भारतीय वायुसेनाने तीन प्रकारके विमानोंको काममें लिया था—नेट, हन्टर और मिस्टीयर्स। मिस्टीयर्सका प्रयोग पहिले इजरायलके युद्धमें किया जा चुका है। परन्तु नेट और हन्टरका प्रयोग प्रथम बार ही इस युद्धमें हुआ। इनमेंसे नेट विमान सेंवर जेट और स्टार फाइटर विमानके साथ युद्ध करनेमें बहुत उत्तम सिद्ध हुआ।

नारदजीने सूचना दी है कि श्री चौधरी और श्री अर्जनसिंह भारतीय सेनाओंके अध्यक्ष हैं। वे अपने सांस्कृतिक शिष्टाचार और स्वभावके कारण अपनी प्रशंसा तो कर सकते ही नहीं हैं। वास्तवमें सभी श्रेय तो इन बुद्धिमान अनुभवी सेनाध्यक्षों

और सुशिक्षित, अनुशासन पूर्ण एवं शूरवीर सैनिकोंको ही है।

युद्ध विरामके समय—

जिस समय युद्ध विराम हुआ था उस समय भारत करगिलमें तीन चौकियोंको अपने हस्तगत कर चुका था। उरी तथा पुञ्चके भागमें लगभग २०० वर्ग मीलका भूभाग हमारे हाथमें आ चुका था। टिथवाल क्षेत्रमें लगभग २० वर्ग मील, सियालकोट क्षेत्रमें १८० वर्ग मील, लाहौर क्षेत्रमें १४० वर्ग मील और राजस्थान सिन्ध क्षेत्रमें १५० वर्ग मीलका क्षेत्र भारतीय सेनाओंके आधीन हो चुका था।

पाकिस्तानके हाथमें उस समय छम्ब और जम्मू क्षेत्रमें १९० वर्ग मील, पंजाबमें २० वर्ग मील भूभाग और राजस्थानमें कुछ चौकियां थी।

सुरक्षा परिषद्का प्रस्ताव—

सुरक्षा परिषद्के विषयमें कोई कटु समालोचना करना कुछ अनुचित सा प्रतीत होता है। क्योंकि वह राष्ट्रसंघकी वरिष्ठ संस्था है। फिर भी यह कहना कुछ अनुपयुक्त नहीं होगा कि यह परिषद् कभी कभी तो ढोल बजाने, बम् फूटने और भयङ्कर विस्फोटोंसे भी नहीं जागती और कभी-कभी यह सामान्य खुसफुसाहट से चौकन्नी होकर उठ खड़ी होती है। देख लीजिये न, वियत् नामका संघर्ष किस प्रबलतासे चल रहा है। सैंकड़ों विमान एक साथ उड़कर सहस्रों और लाखों पौण्डके बमोंकी वर्षा एक साथ करते हैं परन्तु परिषद्की उस ओरकी आंख एक दम मिंची हुई है।

इधर कश्मीरमें परिषद्द्वारा निर्णीत युद्ध विराम रेखापर १८ वर्षोंसे निरन्तर कभी शान्ति नहीं रही। पाकिस्तान ‘सीज फायर’ के शब्दके अर्थ और भावना को ही निरन्तर गोलियों चलाकर ‘फायर’ का लक्ष्य बनाता रहा है। अभी अगस्तमें जब उसने कम से कम ५ सहस्र सशस्त्र, नियमित सैनिक ह्दयदेशमें कश्मीरमें भेजे तब भी सुरक्षा परिषद्की अपनी प्रतिज्ञात सुरक्षाक स्वप्न भी नहीं आया। जब पाकिस्तानने टैंकों, तोपों

और सैनिकोंके भारी दल बलसे छम्ब जौरियां क्षेत्रपर अन्तर्राष्ट्रीय सीमाका उल्लंघनकर परिषद्के सभी निर्णयों और चार्टर्स की धज्जी उड़ा दी उस समय भी परिषद्के मुखपर १४४ धारा लगी रही। परन्तु ज्यों ही भारतने आत्मरक्षाके लिए वागासे सीमा पारकर लाहौरकी ओर प्रस्थान किया कि परिषद्के वरिष्ठ सदस्योंकी नींद हराम होगई। परिणाम स्वरूप सद-भिलाषी महामन्त्री श्री ऊ. थान्तने प्रयत्न प्रारम्भ किया। भारतने उस प्रयत्नकी सद्भावनाका आदर करके परम सदिच्छासे विना शर्तके युद्ध विरामके लिये अपनी स्वीकृति तत्काल ही दे दी। परन्तु पाकिस्तानने इसमें टालमटोलका भाव प्रदर्शित किया और यह दिखानेका प्रयत्न किया कि जैसे यह युद्ध विराम उसके ऊपर थोपा जा रहा है। अन्ततः अवधि निकल जानेके बाद दबी हुई वाणीसे 'हाँ' शब्दका उच्चारण किया।

वह भी निष्कपट भावसे नहीं। उसमें भी छलकी भावना थी। यह युद्ध विरामकी घोषणा होनेके समय

(पृष्ठ ६८ का शेष—वृद्धि रोग)

रहती है। पीड़ायुक्त होती है तथा रज्जु भी शीघ्र विकृत हो जाती है और वंक्षणकी लसीका ग्रन्थियां फूलती हैं। वृषणकी स्थानिक परीक्षाके साथ साथ रोगीकी सार्वदेहिक परीक्षा तथा रोगकी अवधि आयु इत्यादिकी भी अच्छी तरहसे परीक्षा करनी चाहिये। द्रवगर्भ वृद्धि दो प्रकारकी होती है—

(१) मूत्रज—इसकी परीक्षाका वर्णन ऊपर किया जा चुका है।

(२) रक्तज—इसमें वृषणपर हुए आघातके बारेमें जानना चाहिये। इस प्रकार वृद्धि रोगको जानकर उसकी चिकित्सा करनी चाहिये।

आयुर्वेद मतानुसार चिकित्सा—

वृद्धि रोगमें अधिक भोजन, अधिक मार्ग चलना, उपवास करना, गुरु पदार्थोंका भोजन, मल मूत्रके वेगोंको रोकना, घोड़े इत्यादिकी सवारी, व्यायाम तथा मैथुन इन सबका परित्याग करना चाहिये।

से ही उसकी उछल कूदसे स्पष्ट दृष्टि गोचर हो रहा है। अनेक स्थानोंपर वास्तविक अधिकार सीमाका उल्लंघन कर संगठित घुसपैठ करनेके उसके प्रयत्न निरन्तर चल रहे हैं। कई स्थानोंपर वे कुछ भीतर घुस भी आए परन्तु भारतीय सेनाने उन्हें खदेड़ दिया। 'सीज फायर' हो जानेपर भी वे गोला बारूदको दनादन आग लगाए जा रहे हैं। युद्ध विरामका भी विराम करके प्रतिदिन सशस्त्र संघर्ष हो ही जाते हैं।

सुरक्षा परिषद्ने इस बार भी जो प्रस्ताव किया है—उसमें भारतकी चिरन्तन मांगकी उपेक्षा स्पष्ट दृष्टि गोचर होती है। उसने ५ अगस्तकी स्थितिपर लौट जानेका निर्णय करके प्रत्यक्ष ही भारतको हानि पहुँचानेका और कश्मीरके प्रश्नको सदा ही इसी प्रकार अनिश्चित रूपमें लटके रहने देनेका कार्य किया है।

दि० २६ सितम्बरको रामलीला मैदान, देहलीमें हुई एक सार्वजनिक सभामें भाषण देते हुए भारतके प्रधान मन्त्री श्री शास्त्रीजीने—इन सभी घटनाओं और विश्वके राजनैतिक समुदाय विशेष रूपसे ब्रिटेनकी गति

वात जन्य वृद्धिमें—जिस प्रकार मिल सके स्थिति विरेचनको पीना चाहिये। दूध तथा एरण्डको मिला कर पीनेसे वात जन्य वृद्धि नष्ट हो जाती है।

पित्तजन्य वृद्धि—जौंके द्वारा रक्त निकलवा देना चाहिये। चन्दन, मुलहठी, कमल, खस, तथा नीले कमलको दूधमें पीस कर लेप करना चाहिये।

कफजवृद्धि—सोंठ, मिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमलाके क्वाथको जवाखार तथा सैंधव नमक मिलाकर पीनेसे कफजन्यवृद्धि नष्ट हो जाती है।

रक्तजन्य वृद्धि—बार बार जोंकसे रक्त निकलवाना चाहिये।

मेदोजन्य वृद्धि—खेद करके सुरसादि गणकी औषधियोंका प्रलेप करना चाहिये।

मूत्रजन्य वृद्धि—सीवनके बगलमें नीचेकी ओरत शीहिमुख शस्त्रसे वेधन करना चाहिये।

विधियोंसे खिन्न होकर अपने स्वभावके विरुद्ध सभी बातोंको खरी और स्पष्ट आलोचना करते हुए भारतका निश्चय स्पष्ट शब्दोंमें घोषित कर दिया है। उन्होंने कहा है कि अब भारत किसी बातकी परवाह न करके निःसंकोच उन कार्योंको करेगा जिन्हें कि वह भारतकी सुरक्षा और मानरक्षाके लिये आवश्यक समझेगा।

लोक सभाका स्वर—

भारतीय लोक सभाके वर्षा कालीन सत्रके अन्तिम दिनके अधिवेशनमें पाकिस्तानके प्रति ब्रिटेनके पक्षपात पूर्ण सहानुभूतिकी तीव्र आलोचना की गई। अनेक सदस्योंने मांग की कि भारतको ब्रिटिश कॉमन वैलथसे अलग हो जाना चाहिये।

श्रीमती विजय लक्ष्मी पण्डित, आदि अनेक सदस्योंने भारतकी विदेश नीतिके विषयमें पुनर्विचार करनेपर बल दिया। वर्तमान संकटके समय ब्रिटेनके रुखको देखते हुये सदस्योंने यहां तक सुझाव दिया कि संयुक्त अरब गण राष्ट्रके समान भारतमें भी ब्रिटिश सम्पत्तिका राष्ट्रीयकरण कर देना चाहिये।

मलेशिया ने जो सहयोग पूर्ण गतिविधि इस संघर्षके विषयमें अपनाई और भारतके प्रति घनिष्ठ मैत्री भाव व्यक्त किया उसके प्रति सदस्योंने प्रशंसाका भाव व्यक्त किया। निश्चय ही मलेशियाके सभी कार्य इस बीचमें बहुत ही स्पष्ट और असन्दिग्ध रहे हैं। प्रधान मंत्री तुंकू अब्दुर्रहमानने जिस निर्भीकता और दृढ़ताके साथ भारतका समर्थन किया है उससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि पाकिस्तानका मजहबी नारा कितना थोथा है और भारतकी सम्प्रदायवादके पक्षपातसे रहित सब धर्मानुयायियोंके लिए समान अधिकारकी नीति कितनी श्रेष्ठ और उत्तम है।

नारदजी तो केवल यही कहना चाहते हैं कि भारतीय लोक सभा ४५ करोड़की आबादी वाले इस महान् राष्ट्रकी एक मात्र प्रतिनिधि संस्था है। उसका स्वर, उसका निर्णय भारतके प्रत्येक व्यक्तिका स्वर और निर्णय है। विश्वके सभी राष्ट्रों और विशेष कर अपने आपको बड़ा और उत्तरदायित्वपूर्ण समझने वाले राष्ट्रोंको उसकी भावनापर समय रहते ध्यान देकर अपनी कूटनीतिक चालोंको सुधारना चाहिये।

(पृष्ठ ८६ का शेष—वृद्धि रोग)

आन्त्रजन्म वृद्धि—रास्ता, मुलहठी, गुडूची, एरण्ड मूल, खिरंटी, अमलतास, गोखरू, परवल तथा अहूसेके द्वारा विधिपूर्वक बनाये हुए क्वाथको एरण्ड तैल मिलाकर पीनेसे आन्त्रवृद्धि नष्ट हो जाती है।

शुद्ध पारद, शुद्ध लोह भस्म, शुद्ध गन्धक, वंग भस्म, ताम्र भस्म, कांसेकी भस्म, तृतीया शुद्ध, शंख भस्म, कपर्द भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, हरड़, पहेड़ा, आंवला, चव्य, वायविडंग, विधारा, कचूर, पीपलामूल, पाठा, हाऊवेर, बच, इलायचीके बीज, देवदारु तथा पांचों लवण, इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण बनालें। फिर हरड़के क्वाथके साथ ४ रत्ती प्रतिदिन जलके साथ लेते रहनेसे असाध्य अण्डवृद्धि भी नष्ट हो जाती है।

इस प्रकार आयुर्वेद मतसे चिकित्सा की जा सकती है।

आधुनिक मतसे—

आधुनिक मतसे इस रोगकी एक मात्र चिकित्सा शल्य कर्म ही है। यह शल्य कर्म दो प्रकारका होता है। एक अण्डकोषसे तरल निकालना तथा दूसरा वेधसपत्र द्वारा छेदन।

इस तरह उपरोक्त प्रकारसे चिकित्सा करनी चाहिये वैसे इसके लिये शल्य कर्म उपयुक्त है क्योंकि यह आसान है और इससे परेशानी भी नहीं है। सुश्रुतमें इसी प्रकार चिकित्सा है।

चिकित्सा परामर्श

जैसा कि सूचित किया जा चुका है पत्र लिखने वालोंके नाम इस स्तम्भमें प्रकाशित नहीं किये जाते हैं। इसलिये किसी प्रकार के भी रोगसे पीडित व्यक्ति निःसङ्कोच होकर अपने रोगके विषयमें पूछताछ कर सकते हैं।

जो लोग शीघ्र ही उत्तर चाहते हैं, उन्हें समयपर डाक द्वारा भी उत्तर दिया जाता है। परन्तु ऐसी स्थितिमें उत्तरके लिये पते सहित टिकट लगा हुआ लिफाफा साथमें भेजना आवश्यक है। ऐसे पत्रोंके उत्तर डाक द्वारा दे देने पर भी उनमेंसे कुछको, जिनसे कि सर्व साधारणको, जिज्ञासुओंको और वैद्य बन्धुओंको विशेष जानकारी प्राप्त होने की सम्भावना हो, यहां भी प्रकाशित किया जाता है।

१. मानसिक दौर्बल्यसे ग्रस्त एक बन्धु व्यावरसे लिखते हैं—

“सम्पादकजी साहब, मैं ४, ५ दिन पहिले अमृतसरसे आया हूं। मुझे नींद नहीं आती है। आपको यह खबर ही है कि अमृतसरमें तो दिन रात चाहे जब तोपें गड़गड़ाने लग पड़ती हैं और आसमानमें हवाई जहाजोंकी घराहट होने लग पड़ती है। दुश्मन कभी भी आकर बम गोले डाल सकता है। पर साहब वहांके रहने वालोंके भी हौसले देखोजी। डर किस चिड़ियाका नाम है वे तो जैसे मौतसे लड़नेको फिरते हैं। दुश्मनके हवाई जहाज आनेपर तो वे उनके भागने और दूटनेका तमाशा देखने लग पड़ते हैं। पर साहब मुझे लिखते शरम आती है जी। इक मैं भी हूं जी। दो तीन दिन हवाई हमले देखने और चेतावनीके भौंपू सुननेसे ना जाने दिलमें क्या हो गया है जी। मुझे रातको नींद नहीं आती है। सचमुच मैं यह तो नहीं कह सकता हूं कि मैं डर गया हूं जी। मुझे यह डर तो बिल्कुल नहीं है कि मेरे घर वाले या मैं मर जाऊंगा। पर फिर भी ना जाने दिलमें कैसा असर है कि नींद नहीं आती है। आप महरबानी करके कुछ ऐसी दवा बताइये कि मुझे जल्द आराम आ जावे। मैं अमरितसर ही लौट जाना चाहता हूँ।”

परामर्श—भाई जी, निश्चय ही आप डरे हुए नहीं है। डर होना भी नहीं चाहिये। डरकी दवा तो आपने अपने पत्रमें ही लिख रखी है। अमृतसरके वीर निवासियोंके साहस, आत्म विश्वास और उत्साहको देखकर कौन व्यक्ति स्वयं उत्साहसे नहीं भर जाता।

फिर भी कुछ कोमल स्वभाव और दयालु तथा सहृदय व्यक्तियोंके हृदयपर ऐसा प्रभाव हो जाता है। कोई चिन्ताकी बात नहीं है। आप नीचे लिखे प्रकार से औषध ले लीजिये। हमें विश्वास है कि आप पूरी निश्चिन्ततासे अमृतसर जानेकी तैयारी कर सकेंगे।

१. ब्राह्मरसायन

मात्रा-१ तोला

प्रातः काल-७ बजे और रात्रिको सोनेसे पूर्व।

अनुपान-दूध

(रसायनको चाटकर ऊपर से दूध पीएं)

२. ब्राह्मीवटी-साधारण मात्रा-१ से २ रत्ती

(रसतन्त्रसार व अनुपान-जल या एक चम्मच सिद्ध प्रयोग संग्रह) दूध और थोड़ा सा मधु।

(ब्राह्मीवटी पीसकर लेनी चाहिये)

प्रातः ८-३० बजे। मध्याह्न

२ बजे और सायंक ६ बजे।

३. सारस्वतारिष्ट

मात्रा-१½ तोले

अर्थात् चायके छोटे चार चम्मचके बराबर।

अनुपान-समान भाग जल।

दोनों समय भोजनके आधा

घण्टा बाद लें।

हमें पूर्ण आशा है कि आप इन औषधोंको प्रारम्भ करते ही, पहिले दिन ही, सुखद निद्राका अनुभव करेंगे।

सदा स्मरण रखिये—सुख, दुःख, यश, अपयश, जीवन, मरण सब भगवान्‌के हाथमें हैं। उनकी इच्छासे ही सब कुछ होता है। और यह भी निश्चय जाने कि भगवान्‌की इच्छा सदा हमारे कल्याणके लिए ही होती है।

विशेष—यह उत्तर उक्त भाई जीको डाकद्वारा उसी समय भेज दिया गया था। आवश्यक होनेपर हम पत्रोंका उत्तर तत्काल डाकद्वारा भेज देते हैं। शीघ्र उत्तरकी इच्छा रखने वालोंको अपने पते सहित टिकट लगा हुआ लिफाफा साथमें भेजना चाहिये।

२. जानुशूलसे पीड़ित एक बन्धु मदाना कलां, मेरठसे पूछते हैं—

मान्यवर सम्पादकजी, आपका 'स्वास्थ्य' नामका मासिक पत्र दिल्लीमें एक भाई साहबके यहाँ देखनेको मिला। पत्र बहुत अच्छा लगा। मैं खुद बीमार रहता हूँ इसलिए आपका 'चिकित्सा परामर्श' सबसे पहिले और बड़े गौरके साथ देखा। तारीफ़के लायक पाया। बहुत साफ, बहुत अच्छा। कृपाकरके मुझे भी कुछ सलाह दीजिये। मेरी उमर इस वक्त ५३ वरसकी है। मैं तो तन्दुरुस्ती ठीक हूँ। पर मेरे दाहिने घुटनेमें करीब ५ माइसे दर्द रहता है। कभी कभी बहुत बढ़ जाता है। घुटनेके भीतरकी ओरके हिस्सेमें जहाँ दोनों घुटने एक दूसरेके सामने होते हैं वहाँ करीब ३ इंच लम्बाई और २ ठाई इंचकी चौड़ाईमें बड़ी जलन सी रहती है। इसकी वजहसे रातको नींद भी नहीं आती। मैं सोचता हूँ कि दवा तो खरीदनी पड़ेगी।

भूल भी लगती है पर बहुत अच्छी नहीं लगती। और कहीं दूसरी जगह दर्द अभी तो नहीं है। हाँ जांवके पीछेकी ओर कभी कभी दर्द हो जाया करता है।

आपके जवाबका इन्तजार है। महरबानी करें।”

परामर्श—बन्धुवर, यह पीड़ा वास्तवमें बहुत कष्टदायक है। अच्छे होनेमें समय भी लगता है। परन्तु यदि आप नीचे लिखी औषध लिखे अनुसार लेते रहेंगे तो आपको निश्चय ही लाभ होगा। जलन तो दो तीन दिनमें मिट जावेगी।

१. कैशोर गुग्गुलु

मात्रा १ माशा

अनुपान-उष्ण जल। दिनमें तीन बार। प्रातः ७ बजे मध्याह्न १ बजे और सायं ६ बजेके लगभग।

२. सारिवाद्यासव

मात्रा १½ तोल

अनुपान-समान भाग या दुगुना जल। दिनमें दो या तीन बार। प्रातः-जलपानके अनन्तर और मध्याह्न तथा सायंकाल भोजनके बाद।

३. एक सुशिक्षित एवं अपने क्षेत्रमें प्रसिद्ध डाक्टर साहब ने अनिद्रासे दुखी होकर लिखा है—

प्रिय वैद्यजी,

मैं एक डाक्टर हूँ। बहुत समयसे लगभग १३ वर्षसे मैं रोगसे पीड़ित हूँ। अपने सभी डाक्टर मित्रोंकी चिकित्सा करा चुका हूँ। परन्तु लाभ नहीं है। दशा बिगड़ती जा रही है। एक मित्रने मुझे सलाह दी है कि आपसे परामर्श करूं। संक्षेपमें मेरी स्थिति निम्न प्रकार है।

मुझे निद्रा बिलकुल नहीं आती है। दिनमें ३ या ४ टिकियां इकेनिल् की लेता हूँ। रात्रिको सोनेसे पूर्व १, २ या तीन टिकियां सोनेकी लेता हूँ। सब कहीं १३ दो पंश

निद्रा आती है। वह भी अच्छी नहीं। मेरी मानसिक स्थिति ऐसी हो गई है कि मुझे शान्ति नहीं है। प्रतिदिन यह सोचा करता हूँ कि जीवनका अन्त कर दिया जावे। उसका उपाय भी सोचता हूँ। परन्तु सौभाग्यसे मेरे एक मित्रके सान्त्वना देते रहनेसे उसे कार्य रूपमें परिणत करनेसे रुक जाता हूँ। साथ ही मुझे एक कष्ट और है। मुझे पुरानी पेचिश है। यह भी करीब ३, ४ वर्षसे है। दूध पी नहीं सकता। दस्त हो जाते हैं। दुर्बलता और रक्तकी कमी बहुत है। सवेरे ३, ४ बार शौच जाना पड़ता है। भूख तो लगती है। एक चिकित्सक होनेके सम्बन्धसे आप मेरी परेशानीका अनुमान कर सकते हैं। यदि आप कुछ उपाय इसके लिए कर सकते हों तो मुझे वह उपाय बताइये। चिकित्सक होनेके कारण मैं आपसे विशेष सहृदयतापूर्ण व्यवहार की आशा रखता हूँ।

(अंग्रेजी पत्रसे अनूदित)

परामर्श—प्रिय डाक्टर साहब, चिन्ता करनेकी कोई बात प्रतीत नहीं होती। आपको मूल रोग ग्रहणीका है। उसकी चिकित्सा ठीक प्रकार नहीं हुई है। उसके कारण स्मरण शक्ति और मानसिक शक्तिका हास होना स्वाभाविक है। उस स्थितिमें आपने जो कुछ अनिद्राका अनुभव किया उसके लिए आपने सुलभ और सुपरिचित शान्तिप्रद (Tranquilliser) और निद्राप्रद औषधोंका सेवन करना प्रारम्भ किया। हमारे विचारसे यह औषधें तात्कालिक निद्रा और शान्ति तो देती हैं परन्तु साथ ही रुक्षता और तनावको बढ़ाती हैं। जिससे वात वृद्धि होती रहती है। वातवृद्धि अनिद्राका प्रधान कारण है। इस प्रकार यह औषधें प्रत्यक्षमें तो आपको लाभप्रद प्रतीत होती हैं। परन्तु यह इस रोगको अधिक बढ़ाती जाती हैं। आपके साथ भी यही हो रहा है। हम तो इसीका परिणाम यह समझते हैं कि आप आत्मवातका विचार करते हैं। हमारा विश्वास है कि आयुर्वेदीय औषधोंसे आपको अवश्य ही लाभ होगा।

सबसे पूर्व आपको यह कार्य कर लेने चाहिये।

१. शान्तिप्रद (Tranquilliser) और निद्राप्रद औषधोंको एक दम बन्द कर दीजिये। कुछ साहसकी आवश्यकता है।

२. यदि चाय पीते हों तो उसे बन्द कर दें।

३. एकाकी न रहें।

४. दहीका सेवन प्रारम्भ कर दें।

औषधोंका उपयोग निम्न प्रकारसे करें।

१. बृहत्नायिका चूर्ण मात्रा—२ से ४ रत्ती
(भङ्गायुक्त) अनुपान—जल
दिनमें दो या तीन बार
प्रातः ७, मध्याह्न १ तथा
सायं ६ बजे।

२. ब्राह्मी वटी (साधारण)
(रसतन्त्रसार व सिद्ध मात्रा—१ से २ रत्ती
प्रयोग संप्रहोक्त) अनुपान—जल दिनमें तीन
बार प्रातः ९ मध्याह्नोत्तर ३
और सायं ८ बजे (भोजनसे
एक घण्टा पूर्व या १½
घण्टा बाद)

३. सारस्वतारिष्ट मात्रा—½ औंस
अनुपान—समान भाग या
दुगुना जल।
दोनों समय भोजनके बाद।

४. महाभृङ्गराज तैल सिरपर तालुपर बालोंको
हटाकर खूब अच्छे प्रकार
लगावें।

सोनेसे पूर्व पैरोंके तलु
में भी इसको मर्दन करावें।

अपथ्य—चना, मटरकी कोई भी वस्तु,
पदार्थ, बैंगन तथा आलू न खावें।

हल्का भोजन—दाल-चावल, खिचड़ी, बिना
चुपड़ी रोटी, तथा फलोंमें अनार, सेव तथा केला।

(यह परामर्श डाक्टरद्वारा भी भेजा जा चुका है)

४. एक महाशय देवरिया उत्तरप्रदेशसे अपने बालकके विषयमें पूछते हैं—

“श्रीमान् सम्पादकजी, नमस्ते। मैं भी एक परेशान आदमी हूँ। मुझे भी कुछ अच्छी सलाह दीजिये। मेरा एक बच्चा डेढ़ वर्षका है। बीमार रहता है। पेट बड़ गया है। लोग कहते हैं कि इसका लीवर बड़ गया है। वैद्योंको भी दिखाया है। पर कहीं भरोसा नहीं बैठता है। क्योंकि इससे पहिलेका बच्चा भी इसी तरहकी बीमारीमें जा चुका है। बच्चेको दस्त भी सरत होता है रोज टाइमसे भी नहीं होता है। पेशाब कभी साफ और कभी पीली करता है। कोई कोई तो कहते हैं कि यह बीमारी घुरी है। बच्चे बचते नहीं हैं। सुन सुनकर बड़ी हैरानी और दुःख होता है।”

परामर्श—बालकका रोग सचमुच कठिन है। यकृतकी इस प्रकारकी वृद्धि बालकोंके लिए विशेष कष्टदायक होती है। ऐसे रोगकी चिकित्सा तो अपने यहां किसी अच्छे वैद्यकी देख रेखमें कराना अधिक अच्छा है। फिर भी यदि आप निम्न औषधोंका सेवन बालकको नियमित रूपसे करावें और अपने यहां किन्हीं वैद्यजीसे समयानुसार बालकको दिखाकर सलाह लेते रहें तो लाभ होनेकी आशा रखनी चाहिये।

१. कुमार्यासव मात्रा—३० बूंदसे ६० बूंद तक
(शाङ्गधर संहिता) (आधा ड्रामसे १ ड्राम तक)
अनुपान—सम भाग जल
दिनमें दो या तीन बार।

२. बृहत् यकृदरि लोह मात्रा—१ से १ रत्ती तक
(भैषज्यरत्नावली)

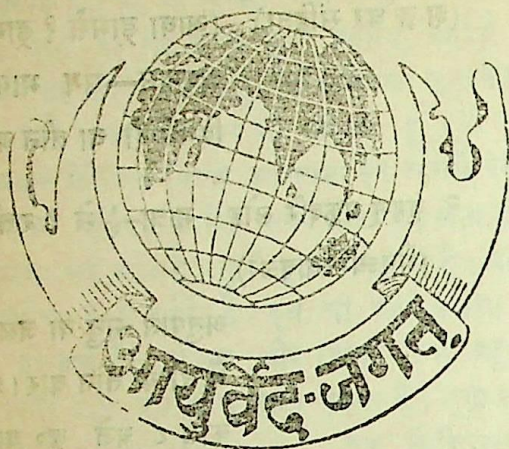
अनुपान—मधु या जल दिन में दो या तीन बार। प्रातः-काल ८ बजे बृ० यकृदरि लोह दें। दो ढाई घण्टे बाद कुमार्यासव। फिर २½ घण्टे बाद लोह। इस प्रकार २½, २½ घण्टे बाद बारी बारीसे दोनों औषध दें।

पथ्य—बकरीका दूध। अन्न बिल्कुल ही बन्द कर दें। बच्चा मानता नहीं है ऐसा सोचकर भी अन्न न दें।

सभी शास्त्रीय औषधोंके लिये
अपने यहांके हमारे स्थानीय एजेण्टसे पूछिये

— या —

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन, कालेड़ा-कृष्णगोपाल अजमेर
को लिखिये



अजमेर जिला आयुर्वेद सम्मेलनके निरचय—

दि० १९ सितम्बर रविवारको अजमेर जिला आयुर्वेद सम्मेलनका तत्कालिक एवं आवश्यक अधिवेशन श्री राम दयालु औषधालय, अजमेरमें भारत तथा पाकिस्तान संघर्षके विषयमें विचार करनेके लिए हुआ। उसमें विचार विमर्शके अनन्तर सर्व सम्मतिसे निम्न लिखित निर्णय किये गए—

१. पाकिस्तानके जन्मके समयसे भारत उसको अपना सहयोगी पड़ोसी मानकर उसके प्रति सदासे सद्भावना और सदिच्छा रखता आया है। अपने स्वार्थका बलिदान करके भी भारतने उसे सदा ही सन्तुष्ट और सुखी रखनेका प्रयत्न किया है। इसके विपरीत पाकिस्तान सदा ही भारतके प्रति ईर्ष्या और विद्वेषकी अग्निमें खय जलता रहा है और भारतको भी निश्चिन्त होकर बैठने नहीं दिया है। इस समय उसने जो अपने सशस्त्र नियमित सैनिक कश्मीरमें भेजकर भारतका घात करनेका प्रयत्न किया है और उसके बाद अन्तर्राष्ट्रीय सीमाकी अवज्ञा करके जो निर्लज्जता पूर्ण भयानक आक्रमण भारत पर किया है वैद्य समाज उसे अत्यन्त कुटिल एवं कायरता पूर्ण समझता है और उसकी तीव्र निन्दा करता है।

२. भारतके कर्णधारोंने राष्ट्रकी रक्षाके निमित्त जो बुद्धिमत्ता और साहससे पूर्ण सामयिक कदम कदम बढ़ाया है सम्मेलन उसका हार्दिक समर्थन करता है

और विश्वास दिलाता है कि वह तन मन तथा धनसे अपने कर्णधारोंके साथ ही भारतके निपुण एवं परम पराक्रमी सेनाध्यक्षोंके नेतृत्वमें अदम्य उत्साहों, राष्ट्रके सुपुत्र शूरवीर सैनिकोंने अपने अनुपम शौर्य एवं चातुर्यसे जिस आत्म बलिदानकी भावनाका प्रदर्शन किया है राष्ट्र उसके लिये उनका कृतज्ञ है। राष्ट्रको विश्वास है कि उनके सामने शत्रु सदा पराजित ही होगा।

३. सम्मेलनके सदस्य सभी वैद्य अपनी सेवाओंको राष्ट्रके लिये समर्पित करते हुए सरकारको सूचित करते हैं कि वह जब और जिसप्रकार चाहे उनकी सेवाओंका उपयोग ले सकती है। वे सदा उसके लिये तत्पर हैं। साथ ही यह भी निश्चय किया जाता है कि सम्प्रति वैद्यजनोंका जो भी विनम्र आर्थिक सहयोग सुरक्षा कार्य के लिये शीघ्रसे शीघ्र हो सके वह तत्काल सरकारको सौंप दिया जावे।

सप्तर्ङ्गीके विषयमें सूचना—

इधर कुछ समयसे 'सप्तर्ङ्गी' के विषयमें वैद्यरत्न, आयुर्वेद भार्ताण्ड श्री पं० शिवशर्माके अनुसन्धान कार्यका प्रकाशन आयुर्वेदीय पत्रोंमें हुआ है। उक्त औषधिके उपयोग तथा प्राप्ति आदिके सम्बन्धमें निम्न सूचना उन्होंने सहयोगी आयुर्वेद विकासको दी है।

'सप्तर्ङ्गी' की जड़के क्वाथका प्रयोग मधुमेहकी शांति के लिये किया जाता है। प्रायः २½ तोला मूलको जौ कूट करके ३ सेर (४० तोले) पानीमें उबालते हैं। ३ पाव (१० तोला) पानी शेष रहनेपर छानकर पिला देते हैं—इन्स्यूलिनकी भांति इसे भी कम या अधिक कर सकते हैं। कई रोगी एक तोला मूलके क्वाथसे ही स्वस्थ रहते हैं। एक रोगिनी रिकार्डपर है, जिसे १० तोला मूलका क्वाथ देना पड़ा था।

'सप्तर्ङ्गी' का वानस्पतिक नाम केसेरिया एस्क्युलेन्टा (Casearia Esculenta) है। इसका क्षुप २०-३० फुट ऊँचा होता है। यह कोंकण, दक्षिण महाराष्ट्र, उत्तर और दक्षिण कनारा, पूर्वीय समुद्रतट, आंध्र के सरकारी प्रदेशके दक्षिणमें तथा कर्नाटकमें पाया जाता है।

निम्नलिखित ग्रन्थोंमें इसकी अस्थत्प चर्चा है—

1. Flora of Bombay by T. Cook. 1958
2. Glossary of Indian Medicinal Plants by R.N. Chopra S.L. Nayar I. C Chopra
3. Indian Matreia Medica

Nadkarni 1954

महाराष्ट्र और कर्णाटक के पंसारियों से समरंगी मूल खुला मिल सकता है। मैं स्वयं निम्न लिखित पत्र से संगता हूँ:—

श्री जादवजी लल्लूभाई शाह
आयुर्वेदिक-यूनानी ड्रग स्टोर्स,
२४५, कालबा देवी रोड, बम्बई-२

आशा है सम्पूर्ण सूचना, जो आप और आपके पाठक चाहते थे, इस पत्र में आ गयी है। चित्र संग्रहाने का प्रयत्न करूंगा। मिला, तो भेजूंगा। उपर्युक्त सूचना प्रकाशित करते समय यह भी प्रकाशित कर दें कि समरंगी क्वाथ के साथ अन्य गंधुमेह नाशक औषधों वसंतकुसुमाकर, चन्द्रप्रभा, आरोग्यवर्द्धिनी, कुक्कुटाण्ड त्वक्भस्म का प्रयोग अधिक लाभदायक है।

(आयुर्वेद विकास से साभार)

बिरला आयुर्वेद कालेज में

पारद के विशिष्ट संस्कारों का श्रीगणेश

पिलानी (डाक से) रक्त कैंसर के आयुर्वेदीय चिकित्सक मेरठ के प्रसिद्ध वैद्य श्री चन्द्रप्रकाशजी ने आज यहाँ बिरला आयुर्वेद कालेज में पारद के विशिष्ट संस्कारों का श्रीगणेश करते हुए बताया कि आयुर्वेद में पारद को अमृत स्वरूप माना है, किन्तु उसका यह स्वरूप पारद के संस्कारों के बाद ही बनता है। शास्त्रों में वर्णित संस्कारों का प्रायोगिक रूप देने के लिए हमें श्रद्धा पूर्वक परिश्रम करना चाहिए।

इसके पूर्व आचार्य नित्यानन्दजी ने बताया कि कई वर्ष हुए वैद्यराज श्री रामरक्ष जी पाठक 'श्री लंका के आयुर्वेद निर्देशक' ने पारद के सामान्य संस्कारों का शुभारम्भ किया था। अब उसकी निर्विघ्न समाप्ति के बाद पारद के विशिष्ट संस्कारों का श्रीगणेश किया जा रहा है।

निखिल भारतीय वर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ
स्नातक संघ के अध्यक्ष श्रीगुलराज शर्मा मिश्र
का वक्तव्य

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ के स्नातकों को यह जानकारी हर्ष होगा कि निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के ४४ वें अधिवेशन में निखिल भारत-वर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ स्नातक संघ का निर्माण किया जा चुका है। आज भारत के कोने-कोने में व्याप्त विद्यापीठ के स्नातकों का महान् समूह है। आयुर्वेद की प्रतिष्ठा और यशोगरिमा के उज्ज्वल स्तम्भ केवल विद्यापीठ के स्नातक ही हैं। उनकी कीर्ति, प्रतिष्ठा और जनकल्याणकारी कार्यों से जनता के महान् सेवक तथा जीवन संरक्षक समझे जाते हैं।

सच्चे शक्ति: कलौ युगे कलियुग में संघ की ही प्रतिष्ठा है। जिनके पास संगठन का बल है वे अनुचित को उचित में बदल सकते हैं। शासन नत हो जाता है संघ की शक्त के समक्ष। विद्यापीठ के स्नातकों पर चौतर्फी प्रहार इसका प्रमाण है कि उनका कोई संगठन नहीं था। एक-एक तिनके का बल अत्यन्त होता है उसे कोई भी सहज में छिन्न-भिन्न कर देता है किन्तु उनकी एकत्रीकरण मतवाले हाथों के लिये भी हड़ बन्धन हो जाता है। इसी उद्देश्य को समझ रखकर निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ स्नातक संघ का निर्माण किया गया है।

यह संघ निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ के स्नातकों की महान् प्रतिष्ठा और यशोगरिमा ही नहीं अपितु उसमें चारचांद लगाने में सर्वथा सन्नद्ध रहेगा। अतः निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ के समस्त स्नातकों का सर्वप्रथम कर्तव्य है कि वे शीघ्रातिशीघ्र अपने इस संघ में सम्मिलित होकर अपने प्रचुरतम संगठन का स्वरूप निर्माण करें। यह संघ उनकी प्रतिष्ठा, यशोगरिमा और उज्ज्वल कीर्ति का प्रकाश-स्तम्भ सिद्ध होगा। किन्तु यह सब विद्यापीठ के स्नातकों के एकत्रीकरण पर अवलम्बित है। जितनी शीघ्रता हम इसमें करेंगे उतना ही लाभकर होगा। एक-एक दिन का विलम्ब हमारे उत्थान के लिये

बाधक बना हुआ है। अतः हमें अपने संगठनको सबल करनेके लिये शीघ्र ही एकमत होना चाहिये। प्रत्येक विद्यापीठके स्नातकका यह पुनीत कर्तव्य है कि वह इन पंक्तियोंको पढ़नेके पश्चात् तत्काल स्नातक संघका सदस्य बने, बादमें दूसरा कार्य करे। यह ध्यान रखें कि हम प्रत्येक सदस्यसे व्यक्तिगत प्रार्थना कर सकते थे किन्तु सभी स्नातकोंका पूर्ण पता तथा उनके स्थायी निवास हमें ज्ञात नहीं हैं अतः हम अपने स्नातक भाईयोंसे करबद्ध प्रार्थना करते हैं कि वे भी इस कार्यको अपना ही कर्तव्य समझकर क्षेत्रमें कूद पड़ें और स्वयं सदस्य बनें, इसके अतिरिक्त अपने परिचित जितने स्नातक हैं उनको जागृत करें। सदस्य बनायें और उनको भी इस कार्यको करनेकी प्रेरणा दें। यह कार्य हम सबका है और हम सबको मिलकर ही करना है। सबका संकट एक समान है। उसका प्रतिकार भी सबके मेल और संगठनसे ही सम्भव है, अलग-अलग प्रतिकारके अनेक प्रयत्न हो चुके हैं, किन्तु उनका फल सन्तोषप्रद नहीं रहा अतः यही एक मार्ग है जो सर्वथा अचूक और फलदायी है। सदस्यता चार भागोंमें विभाजित है—मान्य सदस्य ३) रु० वार्षिक, आजीवन ३१) रु० एक मुस्त, आश्रयदाता ५१) रु० एक मुस्त, संरक्षक १००) रु० या इससे अधिक एक मुस्त भेजें स्थायी कोषके लिये १) रु० प्रवेश शुल्कका प्रत्येकको अलग भेजना अनिवार्य है। प्रत्येक सदस्य पूरा पता, नाम और डिप्री अवश्य लिखें। सदस्यता और जानकारीके लिये निम्न पतेपर पत्र-व्यवहार करना चाहिये:—

कार्यालयमन्त्री, निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ स्नातक संघ, धन्वन्तरि मन्दिर, २५।६, शक्तिनगर, दिल्ली-७।

राजस्थानके वैद्य एवं हकीम नागरिक सेवाके लिये तैयार रहें—

इण्डियन मेडिसिन बोर्ड, राजस्थानके अध्यक्ष एवं प्रादेशिक भारत साधु समाजके मन्त्री श्री महन्त मुरली मनोहर शरणने राजस्थानके वैद्यों एवं हकीमोंसे एक

अपीलमें कहा है कि देशमें पाकिस्तानद्वारा उत्पन्न किये गये वर्तमान संकट कालमें उनका दायित्व बहुत बढ़ गया है। विशेषकर चिकित्सकोंका दायित्व सैनिकोंके दायित्वके पश्चात् बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आपने राजस्थानके लगभग पन्द्रह हजार चिकित्सकोंसे अपीलमें कहा कि वे जहां हैं अपने कर्तव्योंका पालन करें। खासकर समस्त चिकित्सक सैनिक परिवारोंकी देखभाल पूरी एतिहात व सावधानीसे करें। उनके परिवारोंमें चिकित्सार्थ जानेमें फीस न लें। इतना ही नहीं उनके लिये निःशुल्क औषधियोंका भी प्रबन्ध करें ताकि मोर्चोंपर लड़ रहे सैनिक अपने परिवारोंके लिये निश्चिन्त रह सकें। चिकित्सकोंका दायित्व केवल मात्र शारीरिक चिकित्सामें ही निहित नहीं है। उन्हें जनताका मानसिक होसला भी बढ़ाना है। जनतामें त्याग, बलिदान एवं सेवाकी वृत्तियोंका संचार करना है। इन कार्योंमें हमारे वैद्य एवं हकीम बन्धु निम्न प्रकार उपयोगी सिद्ध हो सकेंगे:—

१-संघ गोष्ठियोंका आयोजन करें—

अपने उद्देश्योंकी पूर्तिके लिये बोर्डके अध्यक्षने परामर्श दिया है कि वैद्य एवं हकीम गण अपने-अपने गावोंमें सांयकालीन गोष्ठियोंका आयोजन करें। जिसमें देशकी ताजा परिस्थितियोंका परिचय देते हुये जनताके मनोबल एवं अदृश्य साहसको उन्नत करनेका लक्ष्य रखें। स्वास्थ्य सम्बन्धी भौतिक उपायोंका भी ऐसी गोष्ठियोंमें परिवाचन हो।

२-राजस्थान सरकारको आश्वासन—

आपने राजस्थानके मुख्यमन्त्रीजीको यह आश्वासन दिया कि राजस्थानके पन्द्रह हजार वैद्य हकीम राष्ट्रीय रक्षाके लिये प्रत्येक बलिदानके लिये उत्सुक हैं। राज सरकार इन चिकित्सकोंको अपनी प्रत्येक सेवाके लिये उपलब्ध कर सकती है। आपने यह भी कहा है कि यदि युद्धके मोर्चोंपर शल्य कर्मकी प्रधानता के कारण डाक्टरोंको भेजा जाना आवश्यक हो तो नागरिक स्वास्थ्य सेवाओंका समस्त दायित्व राजस्थानका वैद्य समाज ग्रहण करनेको तैयार है।

इन्डियन् मेडिसिन् बोर्ड. उ. प्रदेशके धारा ५० के उम्मीदवारोंको सूचना

उ. प्र. के वे वैद्य हकीम जिन्होंने धारा ५० में पुराना नाम लिखानेके लिये १०) मनीआर्डरद्वारा रजिस्ट्रार उ. प्र. इन्डियन् मेडिसिन् बोर्ड लखनऊको दिनांक ३० जून सन् १९६४ से पूर्व भेज दिया है और उन्हें अब तक धारा ५० का फार्म नहीं मिला है। ऐसे वैद्य हकीम शीघ्र ही आयुका प्रमाण पत्र, चिकित्सा सम्बन्धी प्रमाण पत्र, चरित्र प्रमाण पत्र तथा मनी-आर्डर रसीद लेकर सम्पादक आयुर्वेद सन्देश, त्रिवेणी गंज (नौवस्ता) लखनऊसे मिलें जिससे उनके विषय में उचित कार्यवाही की जासके।

आयुर्वेद युनानी मण्डल, गंगानगर

आयुर्वेदिक एण्ड युनानी मण्डल जिला गङ्गानगर राजस्थानने अपनी ५-९-६५ की बैठकमें सर्व सम्मतिसे यह निर्णय किया कि आयुर्वेदका प्रसार-प्रचार करनेके हेतु पत्रिकाका प्रकाशन किया जाए। आशा है, पत्रिका आगामी मासमें प्रकाशित होने लगेगी।

(५६ पृष्ठ का शेष)

करना चाहेगा। निश्चय ही हमारी भावना बड़ी सुन्दर है, बहुत उच्च है। परन्तु उस भावना मात्रसे तो कार्य नहीं चलना है। सिद्धि तो भावना और विचारको क्रियात्मक रूप देनेसे ही होगी।

हमारी शिथिलता और इस अङ्गकी उपेक्षा तो इसी बातसे प्रत्यक्ष दृष्टि गोचर होती है कि प्रति वर्ष हम धन्वन्तरि जयन्तीके अवसरपर उन महापुरुषका स्मरण करते हैं। प्रतिवर्ष हम सदाकी ही भांति देखते हैं कि इस ओर हमने कोई प्रगति नहीं की है। यह 'मर्' जिस प्रकार रिक्त पड़ी हुई थी उसी प्रकार अब भी वैसीकी वैसी ही रिक्त पड़ी है। टोटा ही टोटा है।

हम अश्विनी कुमारोंका स्मरण करते हैं, परन्तु उनके वास्तविक रूपको भी समझनेका प्रयास नहीं करते हैं। समस्त वैदिक वाङ्मयमें और संस्कृत साहित्यमें अश्विनी कुमारोंका उल्लेख बहुत ही प्रचुर

इसी बैठकमें लोक सभामें प्रस्तुत होने वाले अखिल भारतीय आयुर्वेद चिकित्सा परिषद् सम्बन्धी बिलका जोरदार समर्थन किया।

जिला आयुर्वेद विज्ञान सम्मेलन धनवाद

धनवाद जिला आयुर्वेद विज्ञान सम्मेलन ईश्री-पुर, भागलपुरका वार्षिक अधिवेशन हुआ। उसमें अध्यक्षपदसे बोलते हुए कविराज विद्यानारायण जी शास्त्रीने बताया कि जिस प्रकारसे सरकार आयुर्वेदकी उपेक्षाकर रही है इससे चिकित्सा करवाने वाली जनता और वैद्योंके सामने संकट उपस्थित हो गया है, यदि यही अवस्था रही तो सम्मेलन सरकारके दृष्टि कोणको परिवर्तन करनेके लिए सम्मेलन प्रभावशाली कदम उठायेगा।

वार्षिक चुनावमें अगले वर्षके लिए प्रधान कविराज नवकिशोर सेन गुप्ता उपप्रधान कविराज सिद्धेश्वर गुप्ता तथा कोषाध्यक्ष कविराज तुलसी नारायण जी शुक्ल चुने गए।

है। कहीं एक वचनमें इसका प्रयोग दृष्टि गोचर नहीं होता। 'अश्विनी देवभिषजौ' दोनों अश्विनी कुमार देवोंके भिषक् थे। इसका रहस्य और वास्तविकता ही यह है कि आजकी ही भांति पूर्वकालमें भी कभी चिकित्सा विभाग एक मात्र कायचिकित्सा या शल्य चिकित्सा विद्के द्वारा ही पूर्ण नहीं समझा गया। कायविशेषज्ञ और शल्यविशेषज्ञ दोनोंको ही मिला कर चिकित्साका विभाग देवोंके राज्यमें पूर्ण माना जाता था। अश्विनी कुमारों और धन्वन्तरिके उत्तराधिकारियोंको अब अधिक समय तक इस अङ्गकी उपेक्षा करना उचित नहीं है।

हमें आशा है, भगवान् धन्वन्तरिकी पुण्य जयन्तीके अवसरपर सभी वैद्य इस प्रश्नपर विचार कर निश्चित भावी कार्यक्रमकी रचना करेंगे और शनैः शनैः इस लक्ष्यको प्राप्ति की ओर भी अपनार होंगे।

नीर-नीर

(साहित्य समालोचन)

श्री वैद्य ब्रह्मानन्द
त्रिपाठी

चिकित्सा रहस्य—

लेखक—आचार्य श्री पं. कृष्णप्रसाद त्रिवेदी,
प्रस्तावना लेखक—आचार्य श्री पं. राजेश्वरदत्त

शास्त्री

प्रकाशक—धन्वन्तरि कार्यालय,
विजयगढ, अलीगढ (उ. प्र.)

आकार—२०" X ३०" १६ पृष्ठीय। पृष्ठ संख्या ३६०
मूल्य—रु० ४.५०। सुन्दर जिल्द। आकर्षक रूप।

पुस्तककी विशेषता परम अनुभवी विद्यावृद्ध एवं वयोवृद्ध लेखकके नामसे ही प्रकाशित है। श्री वै० रा० पं० कृष्णप्रसाद त्रिवेदी आयुर्वेद संसारके माने हुए विद्वान् एवं अधिकारी सिद्ध हस्त लेखक हैं। प्रस्तावना लेखक श्री वै० रा० पं० राजेश्वरदत्त शास्त्री भी वैद्योंमें प्रतिभा, विद्या, अनुभव और चातुर्यके आधारपर परम देदीप्यमान रत्न एवं सिद्ध हस्त बहुसंख्यक वैद्योंके आचार्य हैं। प्रशंसित लेखकने इस पुस्तकको आत्म आनन्दकी लहरमें लिखा है। वे लिखते हैं—“जैसे-जैसे मुझे आन्तरिक स्फुरण होती गई, वैसे वैसे मौजसे मैंने लिखना प्रारम्भ कर दिया। वही इस पुस्तकके रूपमें आपके सम्मुख उपस्थित है।” निश्चय ही भगवद् भक्त महानुभाव ऐसी प्रसाद पूर्ण स्थितिमें जो लिखते हैं वह सुन्दर होता है।

पुस्तकमें ऋषिप्रणीत संहिता ग्रन्थोंका सार लेकर इस प्रथम भागमें चिकित्सकको सफलताके लिए चिकित्सासे पूर्व ही जिन बातोंको जानना आवश्यक है उनका साधिकार प्राञ्जल भाषामें वर्णन किया गया है। आयुर्वेदकी विशेषता केवल उसके सिद्धयोगों और चिकित्सा विधिमें ही नहीं है। अपितु उसकी मूलभूत वास्तविक विशेषता उन त्रिकाला-वाधित सिद्धान्तों और रहस्यों में निहित है जिन्हें

आयुर्वेदाचार्य ऋषियोंने चिकित्साके आधार रूपमें प्रस्तुत किया है। इसीलिए विद्वान् लेखकने इस प्रथम भागमें सरल और बोधगम्य रूपमें सोलह अध्यायोंमें रोगोत्पादक-दोषोंका स्वरूप, रोग, आयुर्वेदका अन्य पद्धतियोंसे भेदाभेद, आत्मा, मन, मनः शरीर सम्बन्ध, तीन उपस्तम्भ आदिका वर्णन करके चतुर्थ, पञ्चम तथा षष्ठ अध्यायमें प्रथम उपस्तम्भ भोजनके विषयमें विस्तारसे उत्तम प्रकाश डाला है। सप्तम अध्यायमें निद्रा, अष्टममें तृतीय उपस्तम्भ ब्रह्मचर्यका पूर्ण विवेचन किया है। एकादश अध्यायमें चिकित्सा सूत्रोंका विवेचन करते हुए विविध आवश्यक विषयोंपर प्रकाश डाला है। द्वादश, त्रयोदश, चतुर्दश, पंचदश और षोडश अध्याय उन सभी अनिवार्य विषयोंसे गुम्फित हैं, जिनके जाने बिना वैद्य वास्तवमें आयुर्वेदिक चिकित्सक, कहलानेका और बननेका अधिकारी नहीं होता।

विशेष क्या ? जो लोग संहिता ग्रन्थोंके पढ़नेमें असमर्थ हैं, परन्तु उनके द्वारा प्रदत्त ज्ञानको असन्दिग्ध रूपमें प्राप्त करना चाहते हैं उनके लिए तो यह पुस्तक विशेषरूपसे उपादेय है। श्री त्रिवेदी जी, तथा पुस्तक प्रकाशक विशेष धन्यवाद तथा बधाईके पात्र हैं।

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवनका

बाह्यरसायन

भ्रम, अनिद्रा तथा विस्मृतिको दूर करता है।

मेधा, बुद्धि और आयुष्यका वर्द्धक

उत्तम रसायन है।

अनुभवी चिकित्सक

रक्तभार वृद्धिको स्थायी रूपसे दूर भगानेके लिए

इसका प्रयोग कराते हैं।

बुद्धिजीवियों और श्रमिकों सभीके लिए

समानरूपसे हितकारी

कृष्ण-गोपाल अश्वगन्धारिष्ट

यह उत्तम रोगनाशक, बलप्रद एवं सुन्दर आयुर्वेदीय योग है।

वृद्धों और श्रान्त जनोंको नवस्फूर्ति तथा बल प्रदान करता है।

बालकोंके बल एवं मांसकी वृद्धि कर उन्हें सुपुष्ट एवं आनन्दी बनाता है।

युवकोंके उत्साह बल और तेजस्विताकी वृद्धि करता है।

साथ ही यह मूर्छा, भ्रम, तन्द्रा, अपस्मार और वातरोगोंका नाशक स्मृति शक्तिका वर्द्धक है।

महिलाओंके लिए अप्रतिम गुणकारी

— कृष्ण-गोपाल अशोकारिष्ट —

यह देशी एवं विदेशी चिकित्सकों और विशेषज्ञों द्वारा स्त्री रोगोंके निवारणके लिए सुबहु प्रशंसित 'अशोक' के आधारपर अनेक लाभकारी औषधियोंके योगसे बनी है।

इसलिये महिलाओंके रोगोंको नष्ट कर उन्हें स्वास्थ्य प्रदान करनेमें और उनके जीवनकी रक्षा करनेमें अनुपम हितकारी है।

सैंकड़ों वर्षोंसे वैद्यों द्वारा परीक्षित तथा अपने गुणोंके लिए सर्व साधारणमें

★ सबके लिए सदा सेवनीय ★

कृष्ण गोपाल का

उत्कृष्ट
शक्तिवर्धक
स्मृतिवर्धक
रसायन



च्यवनप्राश

(अष्टवर्गयुक्त)

च्यवनप्राश

क्षय, श्वास, कास तथा
सभी प्रकारकी दुर्बलता

पर

लाभदायक

सभी ऋतुओंमें सेवनीय

बलवर्धक रसायन

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवनमें
पूर्ण विशुद्ध आयुर्वेदिक विधिसे
निर्मित होता है।

ब्राह्मी आमला तैल

वैज्ञानिक आयुर्वेदिक विधान

के अनुसार

केशों और त्वचाको लाभकारी

मस्तिष्कको बल देने वाले

उपादानोंसे निर्मित

सर्वोत्तम केश तैल

आयुर्वेदिक बनावट

ब्राह्मी आमला तैल



केशोंकी काले, धने और मुलायम बनाता
है। बिनाश को नहीं तज्जा रखता है।

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन
कलकत्ता, कृष्ण गोपाल (अजमेर)



अङ्क ३]

कार्तिक शुक्ल, ८ विक्रम सं० २०२२

[नवम्बर १]

आततायिके दोषे
हन्तुर्भवति कथन ।
प्रकाशं वा ऽ प्रकाशं वा
मन्युस्तन्मन्युमुच्छति ॥
मनुरमुच्छति । अ० ८ ॥

“आततायीका वध करनेमें उसका वध करने वालेको कोई दोष नहीं होता । ऐसे आततायीका वध प्रत्यक्ष किया जावे अथवा अप्रत्यक्ष-नीति पूर्वक, सभी उचित है । यों समझिये कि क्रोधकी क्रोधसे लड़ाई होगई है । ”

हमारे राष्ट्रपर आततायी पड़ोसीने घृणित दुरभिसन्धिसे नीचतापूर्ण आक्रमण किया है । उसका पूर्ण बलसे उत्तर देना, प्रत्याक्रमण करना और उसका विनाश करना ही आज हमारा धर्म है ।

विद्वान् लेखकोंसे

१. मासिक 'स्वास्थ्य' में आयुर्विज्ञानसे सम्बद्ध अनुसन्धान, अन्वेषण, विशेष विचार, शास्त्रीय पर्यालोचन विषयक तथा सर्वहितकारी स्वास्थ्य सम्बन्धी लेख एवं सामग्री प्रकाशित की जाती है।
२. उत्तम उपादेय लेखोंपर शक्यनुसार पुरस्कारकी व्यवस्था भी की गई है।
३. जो लेख 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ भेजे जावें वे कागजके एक ओर स्पष्ट लिखे हुए होने चाहिये जिससे कि लेख शुद्ध रूपमें प्रकाशित हो सके।
४. लेखोंमें जो उद्धरण आदि दूसरे ग्रन्थों, अन्य लेखकोंके लेखों अथवा पुस्तक आदिसे लिखे जावें उनका निर्देश, लेखकोंके सदाचारके अनुसार, अवश्य करना चाहिये।
५. जो लेख 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ स्वीकृत और पुरस्कृत किए जाते हैं उनका प्रकाशन 'स्वास्थ्य' में प्रकाशित होनेसे पूर्व अन्यत्र न होना चाहिये। उनके अन्यत्र प्रकाशित करानेके लिए भी 'स्वास्थ्य' सम्पादकी स्वीकृति लेना उचित है।
६. जिन लेखोंके प्रकाशनमें हम असमर्थ हैं उन्हें शीघ्र ही लौटा देना हम अपना कर्तव्य समझते हैं। ऐसी स्थितिमें पोस्टेजके टिकट प्राप्त होनेपर दोनों ओर ही सुविधा रहती है।
७. 'स्वास्थ्य' का मुद्रण मासकी २५ ता० तक समाप्त हो जाता है। अतः लेख उस मासकी १० तारीख तक भेज देने चाहिये।

विशेष सूचना

भविष्यमें 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ लेख एवं सभी प्रकारकी समाचार आदि सामग्री सुविधार्थ निम्न लिखित पतेपर भेजनी चाहिये।

श्री वैद्य ब्रह्मानन्द त्रिपाठी,
प्रधान सम्पादक—'स्वास्थ्य'
आनन्द चिकित्सा मन्दन, केसरगंज,
अजमेर

पुस्तकोंपर रियायती योजना

एजेण्ट महानुभावोंको दीपावली उपहार योजनामें दिनांक १-११-६५ से ३०-११-६५ तकके आये हुये आर्डरोंपर पुस्तकें मंगाने पर निम्न कमीशन दिया जायगा ।

| | |
|----------------------------------|------------------|
| १—औषधगुणधर्म विवेचने | ५० प्रतिशत कमीशन |
| २—गांवांमें औषध रत्न (तीनों भाग) | ४० " " |
| ३—ज्वरविज्ञान | ४० " " |
| ४—नित्योपयोगी चूर्णसंग्रह | ४० " " |
| ५—नित्योपयोगी गुटिका संग्रह | ४० " " |
| ६—नित्योपयोगी क्वाथ संग्रह | ४० " " |
| ७—प्रतापकण्ठाभरण | ६० " " |
| ८—माधवनिदान (मूल मात्र) | ५० " " |
| ९—रसहृदयतंत्रम् | ५० " " |
| १०—रसशास्त्रप्रवेशिका | ५० " " |
| ११—रसोपनिषद् | ५० " " |
| १२—रसतत्त्वविवेचन | ५० " " |
| १३—सिद्धपराक्षापद्धति | ६० " " |

नोट—इनपर एजेण्ट कमीशन नहीं दिया जायगा ।

व्यवस्थापक—

कुण-गोपाल आयुर्वेद भवन

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन, कालेड़ा-कृष्णगोपाल

आवश्यक सूचना

समस्त प्रेमी ग्राहकों व एजेण्टोंको सूचित किया जाता है कि भवन सदैव अपने ग्राहकोंको सूचीपत्रमें वर्णित समस्त औषधियोंका निर्माण करके उनकी मांगको पूरी करनेको प्रयत्नशील रहता है किन्तु कुछ राजकीय नियमोंके कारण व शुद्ध वस्तुओंके उपलब्ध न होनेसे निम्न औषधियाँ अभी स्टॉकमें नहीं हैं। तैयार होते ही पत्रिकाद्वारा सेवामें सूचना भेज दी जायगी। निम्न पुस्तकें भी अभी स्टॉकमें नहीं हैं।

अतः प्रेमी ग्राहक व एजेण्ट आर्डर देते समय इस बातका ध्यान रखनेकी कृपा करें। आशा है कि इनका निर्माण शीघ्र ही हो सकेगा।

| क्रमाङ्क सूचीपत्र औषधिका नाम | सूचीपत्र क्रमाङ्क औषधिका नाम | सूचीपत्र क्रमाङ्क औषधिका नाम |
|---------------------------------|---------------------------------|----------------------------------|
| ५४. रौप्य भस्म × | १७३. वीर्य स्तम्भन वटी | ४७८. शक्तिवर्धक गुटिका |
| ५५. रौप्य भस्म (१०० पुटी) | (चन्द्रोदय कस्तूरी युक्त) × | ४८५. सर्पगन्धादि वटी |
| ६२. वंगभस्म × | १७४. वीर्य स्तम्भन वटी | ४८६. हिस्टोरिया नाशक वटी |
| ६१. रससिन्दूर पङ्गुण × | (सुवर्ण कस्तूरी युक्त) × | ४८१. हिङ्गुकर्पूर वटी (नं० २) × |
| ६२. रससिन्दूर | १८३. स्वर्ण मालिनी वसन्त | ४८७. आमलकी रसायन × |
| (अन्तर्धूम पङ्गुणजारित) | (विशेष चन्द्रोदय) | ५०३. तालीसादि चूर्ण (विजया) |
| १००. सुवर्णवंग | १८६. सूत शेखर रस (स्वर्ण) × | ५२५. लघुलाही चूर्ण |
| १२३. कामचूड़ामणि रस | १८७. सूचिका भरण रस | ५३०. लाही चूर्ण |
| १२४. कामचूड़ामणि रस (विशेष) | २३५. कनकसुन्दर रस | ५५६. खदिरारिष्ट |
| १३०. चन्द्रोदय वटी | २४१. बृ० कस्तूरी मैरव रस × | ५६०. खर्जूररसव |
| (सिद्ध मकरध्वज वटी) | २८२. त्रैलोक्यसंमोहन रस | ५७२. फलासव |
| १३६. जय मंगल रस | ३०२. पुनर्नवामण्डूर × | ५८४. अस्थिसंधानक अर्क |
| १४४. बृ० ब्राह्मी वटी | ३०३. पुष्पधन्वा रस | ५६५. रसोन रसायन |
| १४८. बृ० वातचिन्तामणि रस × | ३१६. भागोत्तर वटी × | ५६६. कुटजावलेह × |
| १५१. बृ० सुवर्णमालिनीवसन्त | ३५६. लक्ष्मीविलास (अभ्रक वि०) × | ६०२. खमीरे गावजवां (जवाहर) |
| (विशेष) | ३६०. लोकनाथ रस (विशेष) × | ६०६. ब्राह्म रसायन सुवर्ण(वि०) × |
| १५६. महाशक्ति रसायन | ३६४. स्मृतिसागर रस × | ६०६. साजून कुचिला × |
| १६५. योगेन्द्र रस (विशेष) | ४०४. ज्ञानोदय रस (नं० २) | ६१३. त्रिफला घृत × |
| १६६. लक्ष्मी विलास | ४०५. ज्ञानोदय रस (विशेष) | ६४१. श्रीगोपाल तैल |
| (सुवर्ण नारदीय) | ४२४. अतिसारहर वटी | ६८७. बाल रक्तक विन्दु |
| १६८. लक्ष्मी विलास (सुवर्ण) | ४२७. अशोहर वटी (नं० १) × | ६८८. रसोनादि अर्क |
| १६९. लक्ष्मी विलास (सुवर्ण वि०) | | ६८९. स्त्रीगर्दातक अर्क × |
| | | ६९३. कल्याण बालामृत |

पुस्तकें—(१) रसतन्त्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड (गुजराती भाषा)

(२) नेत्ररोग विज्ञान (३) संचिम औषध परिचय

नोट—जिन औषधियोंके सामने × का चिह्न है वह नवम्बरमें बन जायँगी और सुवर्णप्रधान औषधियाँ सुवर्ण भस्म वन जानेपर क्रमशः सुविधाजनक मात्रामें बनवायी जायँगी

व्यवस्थापक
कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन

हमें अपने सभी प्रेमीजनोंको यह सूचना देते हुए हर्ष है कि
जनवरी १९६६ का “स्वास्थ्य” का अंक

— अनुभवाङ्क —

के रूपमें प्रकाशित करनेका आयोजन किया गया है

इसमें विशेषरूपसे निम्न सामग्रीके प्रकाशनकी व्यवस्था की जा रही है ।

- १—विविध रोगोंके निदानके विषयमें सिद्ध हस्त वैद्योंके अनुभव ।
- २—चिकित्सा विषयमें अनुभव ।
- ३—किसी भी औषधके निर्माण और प्रयोगके विषयमें अनुभव ।
- ४—इन्द्रिय स्थान आदिमें वर्णित भिन्न रोगोंके अरिष्ट तथा स्वस्थ पुरुषोंमें अरिष्ट लक्षणोंपर अनुभव ।
- ५—किसी वनौषधि अथवा खनिज भस्म आदिके विषयमें विशेष अनुभव ।
- ६—तथा अन्य किसी भी आयुर्वेदीय विषयपर अनुभव ।

सारांश यह कि यह अङ्क उपर्युक्त विविध विषयोंमें अग्रणी, अनुभवी एवं विद्वान् वैद्यों और ऐसे विषयोंसे प्रेम एवं अभिरुचि रखने वाले महानुभावोंके लेखोंसे सुसज्जित होगा । विद्वान् लेखक बन्धुओंसे प्रार्थना है कि वे किसी भी रोग आदिके विषयपर पूरी ऊहापोह और स्पष्ट विवरणके साथ अपने दीर्घकालके उत्तम अनुभवको लिखकर आयुर्वेद जगत्को इस अङ्कके माध्यमसे अपनी अमूल्य देन देकर यशके भागी बनें ।

विशेष—इस अंकमें प्रकाशनीय लेख आवश्यक विवेचन सहित लिखकर सुविधार्थ ३० नवम्बर तक निम्न पतेपर भेज देना चाहिये । विशेष परिस्थितिमें ७ दिसम्बरसे अधिक विलम्ब न होना चाहिये ।

श्री वैद्य ब्रह्मानन्द त्रिपाठी,

प्रधान सम्पादक—‘स्वास्थ्य’

आनन्द चिकित्सा सदन, केसरगंज,

अजमेर (राजस्थान)

स्वास्थ्य

इस अंक में

*

—संचालक—

अध्यक्ष, ट्रस्टबोर्ड,
कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा-कृष्णगोपाल

*

प्रधान सम्पादक,

वैद्य पं० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी बी. ए.
आयुर्वेद शिरोमणि, आयुर्वेदाचार्य

*

स० सम्पादक

वैद्य पं० बद्रीनारायण शर्मा
आयुर्वेदाचार्य

*

प्रकाशक एवं मुद्रक

श्री राजकृष्ण माथुर

व्यवस्थापक-कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन

*

मुद्रणालय

कृष्णगोपाल मुद्रणालय

कालेड़ा-कृष्णगोपाल

१. मधुमान् क्षेत्रपति ९९
२. सम्पादकीय—आत्मग्लानिसे मुक्ति, पूर्ण स्वाधीनता १००
३. रसायनी विद्या—
कविराज श्री रत्नाकर शास्त्री, एम० ए० १०५
४. अमृत केवल कल्पना नहीं, एक ठोस वास्तविकता है—
आचार्य श्री प्रेमकिशोर मिश्र, B. I. M. S. ११३
५. मूत्राघात—
श्री कृष्ण गोपाल गुप्त ११६
६. विषूचिकाकी अनुभूत चिकित्सा—
वैद्य श्री सुरेश चन्द्र शर्मा, गौड़ १२२
७. आयुर्वेदकी उन्नतिका एक उपेक्षित मार्ग—
श्री रामचन्द्र शास्त्री १२५
८. शोथ—
वैद्यराज श्री परुलेकर १२७
९. समाचार समीक्षण—श्री नारद १२९
युद्ध विराम, ब्रिटेनकी दुरभिसन्धि,
राष्ट्रपतिकी विदेश यात्रा, सुरक्षा परिषद्,
धोतीसे धोका, राष्ट्रने अपनी प्रतिज्ञा को
दोहराया, कविका अन्तिम गीत, असममें-
अंग्रेजोंकी करतूत, इण्डोनेशियाने भी फल
चखा, इस हाथ दे उस हाथ ले, आई. यू.
डी. और यकृत शोथ, सैनिकोंके लिये शक्ति-
प्रद खाद्य, विमान निर्माणमें भारत शीघ्र
ही आत्म निर्भर होगा, लूप् फ़िर चमका,
हृदयके लिये नया बाल्व् १४०
१०. चिकित्सा परामर्श— १४३
११. आयुर्वेद जगत्

वर्ष १३



श्रीधन्वन्तरये नमः

स्वास्थ्य

(स्वास्थ्य, सुमति, सुख और शान्तिके मार्गका प्रदर्शक मासिक पत्र)

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः ।

यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

वर्ष १३. अङ्क ३]

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

[नवम्बर १९६५]

मधुमान् क्षेत्रपति

ओम् । मधुमतीरोषधीर्चाव आपो

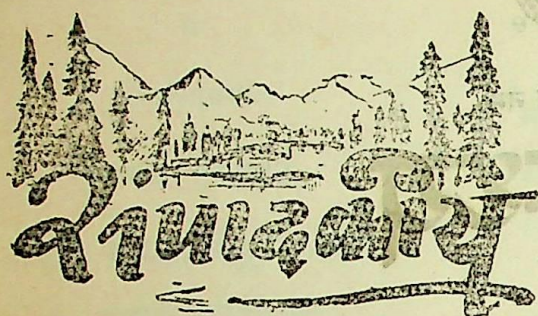
मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम् ।

क्षेत्रस्य पतिर्मधुमान्नो अस्त्व-

रिष्यन्तो अन्वेनं चरेम ॥

अथर्ववेद । काण्ड २० । सूक्त १४३ ॥ मन्त्र ८ ॥

| | |
|-----------------|--|
| नः | हमारे लिए |
| ओषधीः | ओषधियां |
| मधुमर्तः | रसोले परिपूर्ण तथा गुणवती हों । |
| द्यावः | सूर्य, चन्द्र तथा मन्त्र आदिसे युक्त ब्रुलोक तथा |
| आपः | जल एवं जलीयपदार्थ मधुमय हों । |
| अन्तरिक्षं | अन्तरिक्ष और उससे प्राप्त होने वाले पदार्थ |
| नः | हमारे लिए |
| मधुमत्भवतु | मधुमय हों । |
| नः | हमारा |
| क्षेत्रस्य पतिः | क्षेत्रोंका बालक कृषक वर्ग |
| मधुमान् अस्तु | मधुर अन्न आदि पदार्थोंसे सम्पन्न होकर हमारे लिए सुखदायी हो । |
| अरिष्यन्तः | हम परस्पर द्वेष और हिंसा भावसे मुक्त होकर |
| एतं अनुचरेम | सभी शुभ कार्योंमें सहयोगी एवं महायुक्त हों । |



आत्मग्लानिसे मुक्ति



हम आयुर्वेदके समर्थक इस बातकी आकांक्षा करते हैं कि आयुर्वेदको उसके अनुकूल प्रतिष्ठाका स्थान और पद प्राप्त होना चाहिये। यह बात उचित भी है। निश्चय ही आयुर्वेद जीवन विज्ञान है और अपरिवर्त्तनीय, स्थिर एवं समुज्ज्वल सिद्धान्तोंपर आधारित है। यह सरल, सुलभ, और अविपत्तिकर है। इसी देशमें उद्भूत, परिपोषित और परिवर्धित हुआ है। यह हमारा है, हमारे देशका है। हमारी संस्कृति, सभ्यता और वैज्ञानिक परम्पराका एक अङ्ग है।

वैद्य समाजका दावा है कि वह आयुर्वेदकी उन्नतिके लिए प्रयत्नशील है। जनता कहती है कि वह उसकी समर्थक है और सरकार कहती है कि वह आयुर्वेदको अधिकसे अधिक सहायता दे रही है और देनेकी योजना बना रही है। परन्तु कोई विशेष कल दृष्टिगोचर नहीं होता। आयुर्वेद जहाँ था वहाँ है। कोई प्रगति नहीं है। यदि प्रगतिके नामसे कुछ कहा जावे तो वह यही कि कुछ नये औषधालय खोल दिये गए हैं। कुछ नये पदोंकी सृष्टि की गई है या कुछ लोगोंके वेतनके स्तरको ऊँचा कर दिया गया है।

वास्तवमें आयुर्वेदकी स्थिति यह है कि इतिहासकी ढोकरें खाते खाते उसका जो

पहुँच सका है वह बहुत ही क्षीण और अल्प है। उसका अङ्ग भङ्ग हो चुका है। सहस्रों ग्रन्थ उसके नष्ट हो चुके हैं या नष्ट किये जा चुके हैं। परन्तु सबसे विशिष्ट बात तो यह है कि उसका शल्य एवं शालाक्यका भाग प्रयोगमें न आनेके कारण एक दम अपरिचित और नष्ट सा हो गया है। यही भाग है जिसके अभावमें आयुर्वेद अधूरा है। उसने जो आशुकारिताकी कमी सप्रभाती जाती है उसका कारण इन अङ्गोंका अभाव ही है। अनेक अंशोंमें आशुकारिता शल्य क्रियामें है। उसकी विद्यमानतामें समस्त एलोपैथिक चिकित्सा आशुकारी प्रतीत होती है। यद्यपि कुछ ऐसी औषधियाँ भी हैं जिनका प्रभाव चाहे जैसा भी हो तत्काल होता है। शल्य क्रियाके अभावके कारण ही आज जन-साधारणका विश्वास होगया है कि आयुर्वेदिक औषधियाँ देरमें प्रभाव करती हैं। चिकित्सा कराने वालोंसे इस सम्बन्धमें उद्गार और विचार सुननेका अवसर सभी वैद्योंको प्राप्त होता ही रहता है।

जब आयुर्वेदके समर्थकोंके समक्ष यह विचार आया तो उन्होंने उसकी पूर्तिके उपाय करना आवश्यक समझा। समयके प्रभावसे जिस विज्ञानका अध्ययन गुरुपरम्परा मात्रमें ही सीमित रह गया था उसके अध्ययनके लिए विद्यालयों और महाविद्यालयोंके खोलनेकी व्यवस्था की गई। पहिले ऐसे विद्यालय जनताकी ओरसे, जनताके प्रयत्नसे स्थापित किये गये, बादमें कुछ तत्कालीन सरकारकी ओर से भी। इनमें सरकारी मान्यताके आधारपर जो पाठ्य विषय नियत किया गया उसमें शल्य विज्ञानका भी समावेश हुआ। परन्तु शल्य विज्ञानकी अभिनव प्रकाशमें नवीन पद्धतिके आधारपर ही लेने का निश्चय किया गया नवीन चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञानका भी उसके साथ ही आयुर्वेदके पाठ्यक्रममें समावेश हुआ।

कालान्तरमें यह एक ऐसा पाठ्यक्रम हो गया कि आयुर्वेद और एलोपैथीका सम्मिश्रण सा होकर सामने आया। नवीनताको ग्रहण करनेके उरसाहमें इस नवीन विज्ञानको समझने योग्य आधारभूत शिक्षा मैट्रिक और इन्टरमीडियेट, विज्ञान सहित, उचित समझी गई। परिणाम यह हुआ कि जो छात्र इस

लक्ष्योंमें प्रविष्ट हुए उनमें नवीन विषयोंको समझनेकी योग्यता भी थी और आवश्यक उत्सुकता भी। परन्तु प्राचीन आयुर्वेदको ग्रहण करनेकी योग्यता भी नहीं थी और न ही विशेष उत्सुकता।

ऐसी स्थितिमें स्वाभाविक रूपसे उन्होंने नवीन विषयको ग्रहण करनेका प्रयत्न विशेष रूपसे किया। परन्तु वे इसमें दक्ष न हो सके क्योंकि उक्त विद्यालयों और महाविद्यालयोंमें इन विषयोंके अध्यापनको उतनी अच्छी सुविधा न थी जो कि उन दिनोंके मेडिकल कालेजोंमें थी। दूसरी ओर आयुर्वेदके प्रति उदासीनता पहिले ही से थी।

कारणानुरूप कार्य होता है। जैसी व्यवस्था थी, जैसा ढंग था उसके अनुसार ही फल यह हुआ कि ऐसे छात्र स्नातक होनेपर न आयुर्वेदमें कुशल हो सके और न जैसे चाहिये थेवैसे आधुनिक विषयोंमें ही दक्ष हो सके। हां, उनकी उत्सुकता नवीन विषयकी ओर विशेष थी, उसका चाकचक्य भी उनके लिए पर्याप्तसे अधिक था। इसलिए अध्ययनके बाद वे वसमें ही अपनेको विशेषज्ञ समझते और उसके आधारपर ही अपने आपको डाक्टर कहने और कहलानेमें गौरवका अनुभव करते थे।

इस सबका दोष हम किसीके भी सिरपर रख सकते हैं। इस बातके स्वीकार करनेमें हिचक नहीं होनी चाहिये कि तत्कालीन आयुर्वेद विशेषज्ञोंने इसका समर्थन ही नहीं किया था अपितु इसमें अप्रगतिता भी प्रदर्शित की थी। परन्तु आशापर तुषारपात तो तब हुआ जब कि इन स्नातकोंको शल्य क्रियाका अधिकार तथा अवसर देना उचित नहीं समझा गया। इससे उन स्नातकोंकी महत्त्वकांक्षा और आत्मसम्मान को तो भयङ्कर ठेस लगी ही, साथ ही शल्य चिकित्सा द्वारा होनेवाले आयुर्वेद सम्बन्धी लाभका मार्ग भी एक दम बन्द हो गया। क्योंकि शल्य चिकित्सा तो अधिकांशमें क्रियात्मक विज्ञान ही है। इसका अध्ययन किया जावे और क्रियात्मक अभ्यास न किया जावे तो उसका कोई लाभ सम्भव ही नहीं है।

ऐसी स्थितिमें उक्त विद्यालयोंमें किया गया शल्य-ज्ञानका प्रबन्ध उन विद्यालयोंके लिए एक अपावर्क

भार बनकर रह गया। विद्यार्थी पढ़ते भी थे परन्तु न दक्ष होते थे, न अधिकांगी बनते और न अपनी दक्षता को बढ़ानेका अवसर प्राप्त कर पाते थे। परिणाम स्वरूप इस स्थितिके प्रति विरोध भावनाका उद्भव हुआ। और यह दो रूपोंमें प्रकाशित हुई। जो छात्र थे उनमें तो यह भावना सामने आई कि जब उक्त विषय उन्हें पढ़ाया जाता है तो पूर्ण साधनोंके साथ उन्हें पढ़ाया जावे। साथ ही जब वे उसको पढ़ते हैं तो उन्हें डाक्टर भी समझा जावे और उनके विद्यालयोंको मेडिकल कालेज बनाया जावे। आयुर्वेदके समर्थक वैद्यों और साथी जनोंमें यह विद्रोह इस रूपमें प्रकाशित हुआ कि यह कम वैद्योंके निर्माणमें समर्थ नहीं है इसलिए अनुपयोगी एवं त्याज्य है। उन्होंने इस पाठ्यक्रमके प्रारम्भ और संचालनमें आयुर्वेदके विनाश करने की दुरभिसन्धि भी देखी।

परन्तु यह बात सर्व मान्य और सत्य है कि आयुर्वेद इस दिशामें जहां पांच दशाब्दी पूर्व था, वह अब भी वहीं खड़ा है। उससे उने कुछ लाभ नहीं हुआ है। नवीन युद्धोंने आयुर्वेदके समर्थकोंको अत्यन्त विस्मय रूपमें यह बता दिया है कि युद्धके समय वैद्य लोग इच्छा रहते हुए भी, स्वयं सेवा समर्पित करनेपर भी सेवाके योग्य नहीं हैं।

गत द्वितीय महायुद्धके समय भी उस समयकी सरकारने इस प्रकारके स्नातकोंको किसी युद्ध सेवाके योग्य नहीं माना और न उन्हें कहीं भी कार्यका अवसर दिया गया। शाश्वत उस समय ऐसे चिकित्सक उक्त सेवाओंमें जानेके लिए विशेष उत्सुक भी न हो। परन्तु आज स्थिति भिन्न है। वह युद्ध हमारे तत्कालीन शासकोंका था न कि हमारा। परन्तु चीतने जब सन् ६२ के अक्टूबरमें भारतकी उत्तरी, उत्तर पूर्वी सीमापर बर्बर आक्रमण किया तब समस्त देशमें उत्कट रोषकी लहर फैल गई। प्रत्येक व्यक्ति-वाचक, युवा और वृद्धमें उसका प्रतीकार करनेकी प्रबल भावना और इच्छा जागृत हो गई। वैद्योंमें भी इस प्रकारकी भावना थी। क्यों न होती? वैद्य तो स्वाधीनता संग्रामका एक अग्रणी अङ्ग रहता आया है। उस आक्रमणके समय अग्रणी सहज इच्छाके प्रेरित होकर वैद्य समाज

ने अपनी सेवाएं देशको अर्पित करनेका संकल्प किया। परन्तु प्रबल इच्छा होते हुए भी उसको उस समय यह कटु अनुभव हुआ कि वह युद्धके क्षेत्रमें चिकित्सा सम्बन्धी सेवाके योग्य ही नहीं है। सरकार उसे भेजे भी तो कहां भेजे और वह स्वयं जाय भी तो कहां जावे।

ऐसी स्थितिमें कुछ आयुर्वेदिक क्षेत्रोंसे सुझाव दिया गया कि वैद्योंको सामयिक रूपसे दो तीन मासमें कुछ आवश्यक एवं कामचलाऊ प्रशिक्षण देकर इस सेवाका सुअवसर दिया जावे और उनकी सेवाका जो भी सम्भव हो लाभ लिया जावे। परन्तु न तो ऐसे प्रशिक्षणकी कोई व्यवस्था होसकी और न इस प्रस्तावको कोई समर्थन एवं प्रोत्साहन दिया गया। चीनका आक्रमण समाप्त हुआ। देशने असीम श्रानि और असह्य अपमानके विषका घूंट भी पिया। धीरे धीरे बात आई गई सी हो गई।

अब आया १ सितम्बर ६५का दिन। पाकिस्तानने निर्लज्जतापूर्वक विशाल टैंक वाहिनी साथमें लेकर छत्र क्षेत्रमें अन्तर् राष्ट्रीय सीमाका उल्लंघन कर भारतपर आक्रमण किया। समस्त देश इसका समुचित उत्तर देनेके लिए अधीर हो उठा। वैद्योंके समाजमें भी फिर वही भावनाएं उठीं। उनका अन्तरात्मा उन्हें प्रेरणा दे रहा था कि वे भी देशकी रक्षाके लिए क्षेत्रमें कूद पड़ें। परन्तु उन्होंने बड़ी विवशता और निराशासे देखा कि पहिले युद्धोंके समय जो उनकी दयनीय स्थिति थी वह आज भी है। वह आज भी अपने आपको वहीं खड़ा हुआ पाते हैं जहां कि वे आजसे ५० वर्ष पूर्व थे, जहां वे सन् ४०में थे और जहां वे सन् ६२में थे। वे देखते हैं कि युद्ध क्षेत्रमें न वे सेवाके योग्य हैं और न उनकी सेवाकी आवश्यकता ही समझी जा रही है। आज भी उसी प्रकारसे आयुर्वेदीय क्षेत्रोंसे फिर वही प्रस्ताव २, ३ मासके सामयिक प्रशिक्षणका उठ रहा है। कैसी दयनीय स्थिति है। कैसी विडम्बना है। हे मां! तुम्हारा यह वैया पुत्र तुम्हारी मनचाही सेवा करनेमें कैसा असमर्थ है! वह अपनी व्यर्थतापर आज कितना लज्जित है! कितना दुःखी है! उसकी वेदना कितनी असीम है!

क्या आज भी वह समय नहीं आया है कि इस चिरलज्जा और विवशताको सदाके लिए दूर फेंक देनेका सच्चा और उचित प्रयत्न किया जावे। आज हमारे पास पूर्व प्रयत्नकी असफलताका अनुभव है। आज हम अपनी दुर्बलताओं, अभावों और उनके कारणोंको अधिक अच्छे प्रकार समझते हैं। उनका निराकरण करनेके लिए पहिलेसे अधिक समर्थ और सशक्त हैं। तिरस्कार और व्यर्थताका असह्य दंश हमें सब कुछ करनेके लिए प्रेरित कर रहा है। आओ, आज हम आयुर्वेदकी इस पराश्रयता, विवशता और असमर्थताको दूर करनेके लिए सर्वतो भावेन जुट जावें।

आज शल्य चिकित्सा विज्ञान बहुत आगे बढ़ गया है। जब लोग उसके विस्तार और विकासको देखते हैं तब सोचते हैं कि वैद्योंके लिए यह एक दम कैसे सम्भव होगा कि इसे आत्मसात् कर लें। इसीलिए भावनाएं उठती हैं और मनमें ही विलीन होजाती हैं। कुछ करनेकी इच्छा होती है परन्तु कार्यका भार देख कर शायद साहस नहीं होता। वास्तवमें है भी बात ठीक ही कि यह एकदम सम्भव नहीं है। परन्तु इसका उपाय किये बिना आत्म ग्लानिसे बचनेका कोई मार्ग भी नहीं है।

कौनसा ऐसा कार्य है जो इच्छा होनेपर लगन होनेपर न किया जा सके। हमारी समझमें इस कार्यको क्रमशः—सीढ़ी दर सीढ़ी—पूरा करनेका प्रयत्न करना उचित है। शल्य विज्ञानकी उचित शिक्षाके लिए भी आज चतुर्वर्षीय या पञ्चवर्षीय योजनाएँ बनानेकी आवश्यकता है। जिनमें कि यह ध्यान रखा जावे कि दो तीन या चार योजनाओंमें आयुर्वेद शल्य विज्ञानमें आत्म निर्भर हो जावे।

देशके सभी प्रदेशोंमें आयुर्वेदके विभाग किसी न किसी रूपमें स्थापित हैं। सभी प्रदेशोंमें शिक्षाकी भी व्यवस्था है ही। इसलिए अखिल भारतीय स्तरपर इस योजनाके निर्माणकी आवश्यकता है। अनेक प्रकारके विवादोंको सामने लानेका समय नहीं है। शल्य विज्ञानकी कमी निर्विवाद रूपसे है। उसे दूर करनेकी आवश्यकता भी निर्विवाद है। फिर उसकी आवश्यकता भी निर्विवाद है। यह उपाय बही

है कि इसे कुछ पञ्चवर्षीय या चतुर्वर्षीय योजनाओंमें पूर्ण किया जावे। इसमें यह देखना होगा कि छात्रोंको कितना ज्ञान कितने समयमें किस प्रकार दिया जा सकता है। उसको देनेके लिये अपेक्षित कितने साधनोंकी व्यवस्था कितने समयमें किस प्रकार की जा सकती है। यह एक बड़ा कार्य है और ऐसा कार्य है जिसको कि चाहते हुए भी आज तक नहीं किया जा सका है। यह भी स्पष्ट है कि प्रदेशीय और केन्द्रीय सरकारें जब तक इस ओर पूर्ण निश्चयके साथ कदम न बढ़ावें तब तक यह कार्य सम्भव नहीं है।

अतः हमारा सरकारोंसे आग्रह है कि यदि वे आयुर्वेदको सचमुच फलता फूलता और विकसित देखना चाहती हैं, यदि वे वैद्योंके विशाल समुदाय और शक्तिका उचित उपयोग करना चाहती हैं तो इस कार्यको हाथमें लेनेमें विलम्ब न करें। साथ ही हमारा सभी वैद्य बन्धुओंसे भी यह निवेदन है कि वे इसको एक विशेष लक्ष्य बनाकर सरकारको इस प्रकार कदम ठानेके लिए विवश और बाध्य करनेके लिए सभी सम्भव वैध उपायोंका अवलम्बन करके आयुर्वेदकी इस आत्मग्लानिको दूर करनेके महान् कार्यको सम्पन्न करनेके यशके भागी बनें और अपना मस्तक उंचा करके चल सकें।

पूर्ण स्वाधीनता

सन् १९२९ में रावीके तटपर राष्ट्रनिर्माता श्री जवाहर लाल नेहरूने पूर्ण स्वाधीनताकी प्राप्तिके लक्ष्य की घोषणाकी थी। उसके बाद भी लगभग अठारह वर्षों तक निरन्तर आन्दोलन और संघर्ष करते रहनेपर १५ अगस्त १९४७ में राष्ट्रने स्वतन्त्रताकी प्रथम किरणोंके स्वागतका सौभाग्य प्राप्त किया। चौदह और पन्द्रह अगस्तकी मध्यरात्रिमें १२ बजते ही शताब्दियोंसे पराधीन भारतने वह अविस्मरणीय परिवर्तन देखा। जो लोग एक क्षण पूर्वतक पददलित, पराजित तथा पराधीन थे उन्होंने देखा कि उनकी लौह शृंखलाएं टूटकर गिरपड़ी हैं। आत्मग्लानि और अवमानकी लज्जाजनक छाया दिव्य प्रकाशसे छिन्न भिन्न होगई है। राष्ट्री आँखोंमें आनन्दशुभ्रोंका प्रवाह था। हृदयमें था

अमृतपूर्व आनन्द और स्वाधीनताका आत्म गौरव।

राष्ट्रने जब पीछे फिर कर देखा तो दीर्घ कालीन स्वतन्त्रता संग्रामको त्याग और बलिदानोंकी अश्रुत पूर्व वीर गाथाओंसे ओतप्रोत प्रोज्वल इतिहासके रूपमें पाया। जब उसने सम्मुख वर्तमान और भविष्यकी ओर देखा तो सामने विशाल रचनात्मक कार्य अपने विविध रूपों और विविध क्षेत्रोंके साथ पड़ा हुआ पाया।

परन्तु सौभाग्यकी बात थी कि राष्ट्रको इस समय अपने प्रिय एवं परखे हुए नेता श्री जवाहरलालनेहरूका नेतृत्व प्राप्त हुआ। उनके नेतृत्वमें सद्योजात स्वतन्त्र शिशु राष्ट्रने दीर्घकालसे स्वतन्त्र बड़े राष्ट्रोंके मध्य भी सम्माननीय स्थान प्राप्त किया। अन्य परतन्त्रतासे पीड़ित राष्ट्रोंको स्वतन्त्र होनेमें अकल्पनीय योगदान दिया। सद्यः स्वतन्त्र हुए राष्ट्रोंको अपने प्रबल समर्थन तथा शक्तिके अनुसार साहाय्य देकर सबल बनाया। बड़े राष्ट्रोंने आश्चर्य और अन्तर्हित ईर्ष्याके साथ देखा कि एक नवोन्मिषित राष्ट्र बड़े राष्ट्रोंके संघर्ष स्थल कोरिया जैसे विषम स्थलोंपर शांति रक्षाके लिए अपने सैनिकोंको भेज रहा है। वहांपर भारतके सुनियन्त्रित, गम्भीर एवं विचारवान् सैनिकों और अफसरोंने जो सफलता अपनी निष्पक्षता, उभयपक्षकी हित भावना और कर्तव्य परायणतासे अपने कार्यमें प्राप्त की वह सभी राष्ट्रोंके लिए स्पृहाका विषय बन गई। परिणामस्वरूप लाओ, काँगो, गाजा और साइप्रसमें भी भारतका स्मरण किया गया और वहांपर जो सेवाएँ भारतीयोंने की हैं वे भारतकी प्रतिष्ठाकी साधक तो हैं ही, साथ ही विश्व इतिहासकी अश्रुतपूर्व प्रोज्वल घटनाएँ हैं, जो कि कभी भी भुलाई नहीं जा सकेंगी।

इतना सब होते हुए भी नेहरू जी वस्तुस्थितिको अच्छे प्रकार समझकर चल रहे थे। वे जानते थे कि इस यान्त्रिक युगमें औद्योगिक प्रगतिके बिना देश सदा ही पिछड़ा रहेगा। साथ ही वे यह भी जानते थे कि इसमें क्या विघ्न हैं। जिस चीनको आज हम शत्रुके रूपमें देख रहे हैं उसकी ओर से वे उस समय भी निश्चिन्त नहीं थे। इसलिए उन्होंने सोचा कि राष्ट्रका औद्योगिकरण जितना शीघ्र हो सके वही अच्छा

है। यही कारण था कि येन केन प्रकारेण विदेशों की सहायता लेकर, उनके सहयोगसे विभिन्न प्रकारके कारखाने स्थापित कर, बड़े बड़े ऋण लेकर उद्योगोंका प्रारम्भ कर वे इसी प्रयत्नमें रहे कि देश शीघ्रसे शीघ्र औद्योगिक दृष्टिसे आत्म निर्भर हो सके। उन्हें अच्छे प्रकार ज्ञात था कि जो आज छोटे छोटे करटक हैं वे समय पाकर बड़े विघ्न भी बन सकते हैं। ऐसी स्थितिमें औद्योगीकरण ही उन समस्याओं का सामना करनेका एक मात्र मार्ग है।

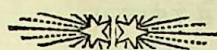
साथ ही वे खाद्यके विषयमें भी देशको आत्म निर्भर बनानेमें प्रयत्नशील थे। इसके लिए योजनाओं का निर्माण हुआ नवीन विभागोंकी रचना की गई। दृष्टिकोण यही था कि किसी भी प्रकार खाद्यके विषयमें परमुखापेक्षी न रहा जावे। परन्तु दुर्भाग्य, कि देशवासियोंने उनकी चेतावनीको न सुना। सामान्यतया सभी वर्गोंकी कर्तव्य निष्ठासे आंख बचानेकी प्रवृत्ति, असत्य आढम्बर और उद्देश्यके प्रति ईमानदारीकी कमी के कारण सभी प्रयत्न विफल हुए।

नेहरूजीकी सभी प्रकारसे यह प्रबल कामना थी कि भारत अपने इस आत्म निर्भरताके उद्योग कालमें किसी देशके साथ संघर्षमें न उलझे। उस संघर्षको बचानेके हेतु उन्होंने पड़ोसियोंकी सद्भावनाको उभारना, उनसे बन्धुत्व स्थापित करना, उचित सम्पर्क स्वरूप चीनकी यात्रा की। उस देशसे अपनी आत्मीयताका अधिकाधिक प्रकाश किया। वहांसे चाऊ एन् लाईको यहां बुलाया। मित्रताका वातावरण बढ़ानेका प्रयत्न किया। परन्तु कुटिल चीनने इस सबको ताकपर धर दिया। औद्योगीकरण पूर्ण नहीं हो पाया था। खाद्यकी आत्म निर्भरता भी नहीं हो पाई थी कि उसने इसीको सुअवसर मानकर आक्रमण कर दिया। उस समय हमारे आत्म निर्भरताके प्रयासको भारी धक्का लगा। परन्तु 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के आदर्शके अनुगमनसे शायद सैनिक और यौद्धिक प्रगतिकी ओर हमारा जैसा होना चाहिये था वैसा ध्यान नहीं था। चीनके इस आक्रमणसे औद्योगिक और खाद्य सम्बन्धी आत्म निर्भरता प्राप्त करनेसे पूर्व ही इस ओर भी ध्यान देना अनिवार्य हो गया।

इधर पाकिस्तानको बराबर कश्मीरकी रट लगी हुई थी। वहांपर सरकार बदलती रही। परन्तु प्रत्येक सरकारकी यह रट और धुन थी कि किसी प्रकार भी हो कश्मीर ले लिया जावे। विशेष रूपसे जब भी किसी सरकारको अपने पतनका समय समीप आता दृष्टिगोचर होता तो वह अवश्य ही कश्मीर लेनेका नारा बुलन्द करती थी। उसके बाद ही उसका पतन भी होता रहा। इस बातके लिए राष्ट्रीय और अन्तर राष्ट्रीय स्तरपर न जाने कितने षड्यन्त्र किये गए। पश्चिमी देशोंकी गोदमें प्यारा मुन्ना भी बनकर वह बैठा रहा कि शायद अब्बाजान अब आसमानसे चांद उतारकर उसके हाथमें दे दें। वह गोदमें बैठा चांदकी आसमें ललकता रहा, देर होती देखकर मचलता और मिलते न देखकर रूठता भी रहा। अब्बाजान उसपर प्यारका हाथ फेरते रहे, पुचकारते रहे और मनाते रहे। परन्तु चांद हाथ न आया। उसने इसी प्रलोभनसे समर्थकोंके कहनेसे नाटो और सिण्टोकी सैनिक सन्धियोंमें भी भाग लिया। अपने परमेश्वरोंके सम्मुख प्रकट किये बिना ही उनसे विविध शस्त्रास्त्रों और युद्ध सामग्री लेकर उसे चांदको पानेके लिए एकत्र करता रहा।

जब उसने इस सामग्रीको एकत्र कर लिया तो वह और भी बेचैन और बेताब हो उठा। अपने मालिकोंको आंख भी दिखाने लगा। उनकी उसने कुछ भी परवाह न की और मार्शल मियां अयूबके नेतृत्वमें अपने पूर्व प्रेमियोंके हृदयमें हलचल उत्पन्न करनेके लिए चीनके गलेमें अपना मुजपाश डाल ही दिया। एक दिल और एक जान होकर उनके षड्यन्त्र चलते रहे और अन्तमें उसने कच्छ में आक्रमण कर ही दिया। जैसे तैसे वहांपर युद्ध विराम और सभसौतेकी रूप रेखा तैयार हुई परन्तु उसका काम पूरा होनेसे पहिले ही उसने कश्मीरमें अपने नियमित सैनिकोंको छिपे रूपमें भेजकर युद्ध विराम रेखाका अस्तित्व ही समाप्त कर दिया। यही नहीं छम्बमें अन्तर राष्ट्रीय सीमाका उल्लंघन करके पूरा युद्ध भी ठान दिया। भारतके लिए उसका सामना और प्रत्याक्रमण करनेके अतिरिक्त दूसरा उपाय ही नहीं था। परिणामतः डटकर युद्ध (शेष पृष्ठ १३९ में)

रसायनी-विद्या



लेखक—कविराज श्री रत्नाकर शास्त्री, एम० ए०, आयुर्वेद शिरोमणि
प्रतिष्ठित र्नातक, इटावा (उत्तर प्रदेश)

इस लेखके सुयोग्य लेखक उच्चकोटिके विद्वान् हैं। उनकी लेखनीमें शक्ति है और प्रसाद भी। प्रस्तुत लेखमें 'रसायनी विद्या' की आधारभूमिकाके साथ ही साथ उसके ऐतिहासिक, सामाजिक प्रभावजन्य प्रवाह और विकासका योग्यताके साथ दिग्दर्शन कराया गया है। रस शास्त्र सम्बन्धी उपलब्ध साहित्यका समालोचन कर उसके वास्तविक रूप और उद्देश्यको संक्षेपमें इस लेखमें प्रस्तुत करनेका सुन्दर और स्तुत्य प्रयास किया गया है। आशा है यह सभीके लिए ज्ञानवर्धक सिद्ध होगा।

लेखका यह प्रस्तुत अंश पूरे लेखका पूर्वार्ध मात्र है। शेष भाग 'अन्धकारसे ज्योतिकी ओर' स्वास्थ्यके आगामी अंकमें प्रकाशित किया जावेगा।

—सम्पादक

भारतकी प्राचीन विद्यार्थे मन्त्र, तन्त्र और यन्त्रके द्वारा अभिव्यक्त की गई हैं। मन्त्र शक्तिमान्की व्याख्या करते हैं, तन्त्र शक्तिकी। और यन्त्र शक्ति और शक्तिमान् दोनोंकी। रसायनी विद्याके प्रतिपादक साहित्यको रस-तन्त्र इसीलिये कहते हैं कि उसमें चिकित्सा-विज्ञानकी ऐसी शक्तिका विवेचन है जो उस युगकी महान् खोज थी। मन्त्र पुरुषकी व्याख्या देते हैं और तन्त्र प्रकृतिकी। यन्त्र प्रकृति और पुरुषके योगसे चलने वाले सर्गकी। पुरुषके बिना प्रकृतिमें प्रकाश नहीं। प्रकृतिके बिना पुरुषमें प्रवृत्ति नहीं होती। दोनोंको एक दूसरेके योगमें जानना ही ज्ञान है। गुणोंके बिना गुणी नहीं जाना जाता। उपनिषदोंमें लिखा है—

त्वं त्वी त्वं पुमानसि, त्वं कुमार उत वा कुमारी।

(श्वेता श्वतर)

यह शक्ति और शक्तिमान्का अन्तर ही तो है। जो तत्त्वमें एक है।

हमें मन्त्र और तन्त्रका साहित्यिक विश्लेषण नहीं

करना है, प्रत्युत उसके वैज्ञानिक रूपका विचार ही यहां किया जायगा। धारासे स्रोतकी ओर जाने वाला विचार ज्ञान है और स्रोतसे धाराकी ओर पल्लवित होने वाले विचारको विज्ञान कहते हैं। इसलिये केन्द्रका विचार होनेके कारण ज्ञान संवृतिकी ओर चलता है, किन्तु प्रवाहकी ओर बढ़ने वाला विज्ञान विवृतिकी ओर प्रस्तुत करता है। रसायनी विद्याका भी एक विज्ञान है, जो केन्द्रसे प्रवाह तक उसका विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

ईसासे दो शताब्दी पूर्वसे लेकर दो शताब्दी पीछे तक भारतका दार्शनिक युग रहा है। रसायनी विद्याके बीज इसी युगमें अङ्कुरित हुए और उसके उपरान्त ईसाकी दसवीं शती तक पल्लवित होते रहे। इस पल्लवनमें एक विशाल साहित्य निर्मित होगया है, जो भारतीय आयुर्वेदकी मौलिक सम्पत्ति है। इस विज्ञानमें भी तत्कालीन विचारकोंने कितनी विचित्र शैलीसे अध्यात्म समाविष्ट कर दिया है, यह विश्वके किसी अन्य विज्ञानमें उपलब्ध नहीं होता। भारतीय

वैज्ञानिकोंका यह अटल विश्वास रहा है कि जिस विज्ञानका कोई अविनाशी स्रोत नहीं है, वह बरसाती नालेकी भांति उफन कर सूख जाता है। वह विज्ञान ही अमर है, जिसका स्रोत अमर है। इसलिये रसायनी विद्याके तन्त्र ग्रन्थोंमें अथवा आयुर्वेद ग्रन्थोंमें उसे ऐसे अविच्छिन्न उद्गमसे प्रफुटित किया गया है जो अजर और अमर हैं। इसीलिये रसायनी विद्याका उद्देश्य ही अजरता और अमरताकी प्राप्ति मान लिया गया है ॥ भगवान्की नवधा भक्तिकी ही भांति रसकी पञ्चधा पूजाका प्रतिपादन है × । तात्पर्य यह कि रसायनी-विद्या अपने युगका एक ऐसा आविष्कार था जिसने तत्कालीन चिकित्सकोंको चकित कर दिया ।

रसायनी विद्या क्या है ?

वर्तमान आयुर्वेदिक साहित्यके अनुशीलनसे यह ज्ञात होता है कि आयुर्वेदिक चिकित्सा क्रम दो प्रकार का है। पहिला क्रम अधिकांश वनस्पतियों या काष्ठादिक ओषधियोंका सहारा लेकर चलता है। दूसरा धातवीय खनिज पदार्थोंको लेकर चला है। पहिलेमें काथ, चूर्ण, अबलेह, आसव आदि हैं। दूसरेमें भस्म, एवं यौगिक रस, गुटिका, और कृपीपक्व आदि प्रयोगमें आते हैं। चिकित्सा शास्त्रियोंने पहिलीका नाम 'काष्ठौषधि चिकित्सा' और दूसरीका नाम 'रसायनी-विद्या' रक्खा है। हमें इस लेखमें पहिलीके बारेमें नहीं, किन्तु दूसरी शैलीके विषयमें कुछ विचार करना है।

अनेक लोगोंका विचार है कि आयुर्वेदमें मौलिक रूपसे रसायनी विद्या है ही नहीं। यूनानियोंसे सीख कर भारतीयोंने अपने आयुर्वेदिक साहित्यमें उसे जोड़ लिया है। भारतकी मौलिक चिकित्सा तो 'काष्ठौषधि-चिकित्सा' ही है। किन्तु बात ऐसी नहीं है। वास्तवमें रसायनी विद्या भारतीय चिकित्साका

मौलिक विभाग ही है। यूनानियोंसे उधार ली हुई चीज नहीं। चरक और सुश्रुत संहिताओंसे इस विप्रतिपत्तिका निराकरण हो जाता है।

चरक संहिताने आयुर्वेदिक चिकित्सा द्रव्यको तीन विभागोंमें विभाजित किया है—(१) जाङ्गम (२) औद्भिद (३) पार्थिव। जाङ्गम वे चिकित्सा द्रव्य हैं जो जङ्गम प्राणियोंसे उपलब्ध होते हैं—दूध, मांस, पित्त (कस्तूरी, गोरोचन) दांत, सींग, चरबी, मज्जा, तथा रक्त आदि। दूसरे औद्भिद, वे द्रव्य हैं जिन्हें हम काष्ठौषधिके नामसे लेते हैं—दशमूल, पञ्चकोल आदि। तीसरे पार्थिव वे द्रव्य हैं जो धातवीय या खनिज हैं। सोना, चांदी, लोहा, तांबा, मणियां, चूना, पत्थर, संखिया एवं ताल आदिके साथ तमक तथा कासीस, खर्पर आदि उपधातु इसी श्रेणीमें आते हैं ॥ इसलिये यह तो किसी प्रकार स्वीकार नहीं किया जासकता कि रसायनी विद्या आयुर्वेदमें मौलिक रूपमें नहीं है। व्याख्याकारोंके उद्धरणोंसे प्रतीत होता है कि पतञ्जलिका लोह शास्त्र स्वतन्त्र रूपसे केवल इसी विद्यापर लिखा गया था। दुर्भाग्यसे वह आज उपलब्ध नहीं। चरक और सुश्रुत संहिता भी तो ऐसा साहित्य है जो लुप्त हो होकर प्रति संस्कृत हुआ है। महर्षि चरक तो आधा ग्रन्थ लिखकर ही स्वर्गवासी हुवे वे क्या क्या लिखते यह कल्पना करना ही अशक्य है। + तो भी उन्होंने जो उपोद्घात लिखा उसमें रसायनी विद्याकी प्रस्तावना तो है ही।

हां, यह बात सत्य है कि आयुर्वेद किप्रारम्भिक युगमें केवल जाङ्गम और औद्भिद द्रव्योंका चिकित्सा प्रयोगी वैज्ञानिक विकास हुवा था। तीसरे प्रकारके पार्थिव द्रव्योंके बारेमें जो कि रसायनी विद्याके अन्तर्गत हैं, चरक, सुश्रुत एवं काश्यपके समय तक कोई महत्वपूर्ण वैज्ञानिक खोज नहीं हुई थी। धन्वन्तरि और काश्यप संहिताओंमें सोनेका प्रयोग है। किन्तु कच्चा सोना ही खानेका प्रयोग लिखा है।

* श्रेयः परं किमन्यत् शरीरमजरामरं विहायैकम् ।

॥ रसरत्न सं० १।५३ ॥

× भक्षणं स्पर्शनं दानं ध्यानञ्च परिपूजनम् ।

पञ्चधा रसपूजोक्ता महापातकनाशिनी ॥

* चरक सं०, सूत्र १।६७-७०

+ चरकोऽर्धकृते तन्त्रे ब्रह्मभृङ्गतो यतः । (वाग्भट)

ली हुई
से इस
विष्कृत नहीं हुवे थे ।

किन्तु रसायनी विद्याकी महत्वपूर्ण खोज सोना, चांदी अथवा लोहा, तांबा आदि पार्थिव द्रव्यों तक ही सीमित नहीं है । और न उनके जारण मारणमें ही वह रहस्य है जिसने चिकित्सामें क्रान्ति उत्पन्न की । इस सम्पूर्ण खोजमें क्रान्ति पैदा करने वाली एक वस्तु और है और वह 'रस' अथवा 'पारद' । हमारा विश्वास है कि चक्रकसे पूर्व आग्नेय पुनर्वसु, वश्यप तथा धन्वन्तरिके समय तक पारदकी खोज नहीं हुई थी । + इसी कारण उन ग्रन्थोंमें जहां अनेक खनिज पार्थिवोंका नामोल्लेख है, पारदका कोई उल्लेख नहीं मिलता । इस रसके आविष्कारने चिकित्सकोंके वैज्ञानिक क्षेत्रमें एक बड़ी क्रान्ति पैदा की । इसी कारण इस वैज्ञानिक आविष्कारको 'रसायनी-विद्या' एक अलग ही नाम मिल गया ।

इसमें सन्देह नहीं कि रसकी वैज्ञानिक खोजोंने चिकित्सकोंको एक बड़ी शक्ति दे दी है । रसके इन्हीं चमत्कारी गुणोंपर मुग्ध होकर रस शास्त्रियोंने उसकी बड़ी स्तुति की है ।

'उदरे संस्थिते सूते यस्योत्क्रामति जीवितम् ।
समुक्तो दुष्कृताद्द्व्योरात् प्रयाति परमं पदम् ॥'

पेटमें पारद पहुँच जाय, ऐसी स्थितिमें, जिसकी जीवत लीला समाप्त हो उसको निरसन्देह मोक्ष अथवा कल्याणकार होता है । इतना ही नहीं, किन्तु सर्वदर्शनसंग्रहकारने जहाँ अन्य दर्शन शास्त्रोंका उल्लेख किया है वहाँ एक 'रसेश्वर दर्शन' का भी प्रतिपादन है । इससे स्पष्ट है कि सर्वदर्शन-संग्रह (ईश्वरी ८ वीं शताब्दि) से पूर्व रसायनी विद्या जिन मण्डलोंमें एक बहुत महत्वकी वस्तु बन चुकी थी, वहाँ तक कि लोग रसपर न केवल वैज्ञानिक दृष्टिसे ही बल्कि बहुत कुछ विचार करने लगे थे ।

रसका दार्शनिक विवेचन—रसके वैज्ञानिक रहस्योंका उद्घाटन ईसाकी प्रथम शताब्दिमें आचार्य नागार्जुनने किया था । नागार्जुन स्वयं एक योग्य दार्शनिक भी थे । जिस प्रकार नागार्जुनके शून्यवादी दर्शनने दार्शनिक जगत्में क्रान्ति कर दी, वैसे ही चिकित्सा क्षेत्रमें रसके आविष्कार द्वारा रसायनी-विद्याकी पताका फहरा दी । नागार्जुन स्वयं नास्तिक किन्तु उनके आविष्कारोंमें आस्तिकतावादी दार्शनिक थे । समाजको अलौलिक और सर्वशक्तिमान्की भांकी दिखाई देने लगी । रसेश्वर दर्शन नास्तिकतावादी नहीं, वह आस्तिकताकी भित्तिपर खड़ा हुवा है । वह शक्तिमान्का नहीं, शक्तिका प्रतीक बनकर वैज्ञानिक क्षेत्रमें अवतीर्ण हुवा है । आखिर, शक्तिमान् शक्तिके सहारे ही तेजस्वी बना है, इसलिये शक्तिको ही क्यों न पूजा जाय ? शक्ति स्वयं स्त्रीका प्रतीक है और शक्तिमान् पुरुषका । यह स्त्री और पुरुषका संयोग ही सर्वशक्ति मान्के रूपमें सम्पूजित होता है ।

किसी पदार्थके अद्भुत गुणोंको देख कर उसे दार्शनिक महत्व देनेकी मनोवृत्ति भारतीयोंमें पुराने समयसे रही है । रसके बारेमें भी यही बात हुई । रसके चमत्कारी गुणोंको देखकर लोगोंने उसे दिव्यरूप देना प्रारंभ किया । वह सामान्य खनिज द्रव्य न रह कर आदिदेव महादेवका वीर्य बन गया ॥ उसके बारेमें अनेक आख्यायिकायें रची गईं । कहते हैं कि देवताओंको तारकासुरका बध करनेके लिये महेश्वरके पुत्रकी आवश्यकता थी, इस बीच अकस्मात् शिव और पार्वतीने समागम किया । नितान्त सम्भोग निवारणके लिये देवताओंको प्रयत्न करना पड़ा । इसके लिये देवोंने अग्निको भेजा ताकि वह कुछ उपाय करे । कबूतरका रूप धारण कर अग्नि वहाँ पहुँचा । शिवशंकरने उसे वस्तुतः पहिचान लिया । 'यह कबूतर नहीं प्रत्युत अग्नि है' । लज्जावश सुरत बन्द हो गया । उससे शम्भुका जो वीर्य प्रच्युत हुवा, वह उन्होंने गङ्गामें डाल दिया । क्योंकि जटाओंसे उतर कर निकटतम वही थी । गङ्गा शुक्रकी उग्रताको सहन न

(वाग्देव)

* विवृण्व्य वीते दृपदि प्राङ्मुखी लघुनाम्बुना ।
आमथ्य मधुसर्पिण्यां लेहयेत्कनकं शिखरम् ॥

+ काश्यपः, सूत्र, लेहाध्याय ।

कर सकी और उसने भी फेंक दिया। गङ्गासे फेंका गया वह भूमिपर गिरा। वेगसे गिरनेके कारण वह भूमिमें घँसा चला गया। गिरते समय वह पांच स्थलोंपर गिरा। इसलिये पांच रूपोंमें विभक्त हो गया। (१) रस (२) रसेन्द्र (३) सूत (४) पारद (५) मिश्रक। पहिला दो प्रकारका शुक्र देवों और नागोंने औषधि रूपसे सेवन किया तो वे अजर और अमर हो गये। ॥

मनुष्योंको न मिल जाय, इस ईर्ष्यासे देवों और नागोंने प्रथम दो (रस और रसेन्द्र) कूपोंको मिट्टी और पत्थरोंसे बन्द कर दिया। शेष तीन प्रकारका शुक्र आज भी मिलता है। यही पारद है। शुक्रके भूमिपर गिरनेसे उसके कुछ छींटे इधर उधर बिखर गये, यह अन्यान्य खनिज धातुओंके रूपमें परिवर्तित होकर मिलता है। इस अवस्थायें भी मनुष्योंने रसका सेवन किया तो वे भी देव तुल्य आयु और बल युक्त होने लगे। देवोंको डाह हुआ। उन्होंने इन्द्रसे कह कर शेष रसमें भी सात दोष (कञ्चुक) मिलवा दिये। इसी कारण सेवन करनेके लिये रसके अठारह संस्कार आवश्यक होगये। +

शम्भुका सारभूत होनेके कारण रस शम्भुके स्वरूपसे कम न रहा। शम्भु भगवान्का शक्ति तत्त्व तो यही था। इस कारण 'रसेश्वर दर्शन' लिखकर रस शास्त्रियोंने सिद्ध किया—'रसो वै सः' 'रसं ह्येवायं लब्ध्वाऽनन्दी भवति' आदि श्रुतियोंमें रस शब्दका अर्थ और कुछ नहीं एक मात्र पारद ही है। फलतः यह सिद्ध समझा गया कि रसके भक्षणसे क्या, दर्शनसे भी सारे सुकृत फल प्राप्त होते हैं। वह भगवद्दर्शन ही है।

"शताश्वमेधेन कृतेन पुण्यं,

गोकोटिभिः स्वर्णसहस्रदानात्।

नृणां भवेत्सूतक दर्शनेन,

यत्सर्वतीर्थेषु कृताभिषेकात्" ॥

* रस रत्न समुच्चय, अ० १

+ र० र० स०, ११-२४

"पपंटी पाटनी भेदी द्रावीमलकरी तथा

अन्धकारी तथा ध्वांसी विजोषी शकचुकी।

"सौ अश्वमेध, करोड़ गोदान, सहस्र स्वर्ण मुद्रादान, अथवा सब तीर्थोंके स्नानसे जो पुण्य बड़ी कठिनातासे होता है वह रसके दर्शन मात्रसे ही मिल जाता है।"

रसकी पूजा पांच प्रकारसे होती है—भक्षण, दर्शन, दान, ध्यान, और अर्चन करने से। यह शक्ति पूजा ही है। इसप्रकार रसका दार्शनिक विवेचन यद्यपि बहुत विस्तृत है, परन्तु संक्षेपमें इतना ही पर्याप्त होगा।

रसकी खोज और विस्तार—

बौद्ध कालमें जो अनेक परिवर्तन हुए उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण रसकी खोज है। अनेक विद्वानोंका आप्रह यह भी है कि चरक संहितामें कुछ चिकित्सा प्रकरणके अन्तर्गत 'रस' (पारद) का प्रयोग लिखा है। इस लिये चरकने पारदकी खोज की होगी ॥ यह तो स्पष्ट है कि वह आत्रेय पुनर्वसु और अग्निवेशकी खोज नहीं। चरक ही अग्निवेशतन्त्रके प्रति संमत्ता हैं। चरक चिकित्सा स्थानके १३ अध्याय लिखकर स्वर्ग वासी हुवे। इन तेरह अध्यायोंमें ७ वां अध्याय कुछ चिकित्साका चरकने ही स्वयं लिखा था। परन्तु चरकने द्रव्यका विवेचन करते समय जो त्रिविध विभाग किया उसमें पारद जैसे महत्त्वपूर्ण तत्त्वको नहीं लिखा। इसलिये यह सन्दिग्ध ही है कि चरकको पारदका आविष्कर्त्ता माना भी जाय या नहीं। और यदि चरक ही पारदके आविष्कर्त्ता होते तो उनका अनुयायी वाग्भट जैसा विद्वान् श्रद्धामे उनके प्रति इस महान् आविष्कारके लिये कृतज्ञता प्रस्तुत न करता। तब क्या चरकका 'रसं च निगृहीतम्' प्रक्षिप्त हो सकता है? अष्टाङ्ग हृदय और अष्टाङ्ग संप्रह जैसे विशाल साहित्यमें वाग्भटने चरकको रसका आविष्कर्त्ता नहीं लिखा।

इसके प्रतिकूल रसायनाचार्य एवं रस रत्न समुच्चयके लेखक वाग्भटने यह लिखा कि पारद और स्वर्णके आविष्कर्त्ता नागार्जुन थे। X नागार्जुन बौद्ध साध्यमिक वादके संस्थापक, धुरन्धर शून्वादी दार्शनिक, महान् राजनीतिज्ञ और आयुर्वेदके

* चरक, चि० ७/७०

X नागार्जुन ने सौंदर्य रसका बुझा। र० र० २११४४

प्रकाण्ड विद्वान् थे। उपाय हृदय' जैसा महान् आयुर्वेद ग्रन्थ नागार्जुनने आयुर्वेद पर लिखा था। वह आज उपलब्ध नहीं। नागार्जुनने ही दक्षिण भारतके पराक्रमका संकलन कर कनिष्क जैसे पराक्रमी शक सम्राट्को भारतसे सदाके लिये सम्राट् कर दिया था। तो भी उनकी वैज्ञानिक प्रतिभा रसायनी-विद्याके अद्भुत चमत्कार भारतीय चिकित्साको दे गई।

भारतमें सारी बौद्ध क्रान्तिको तीन विभागोंमें बांटा जा सकता है। पहिला ईसाके ६२६ वर्ष पूर्वसे ईसाके समय ६२६ वर्ष तक। दूसरा ईसा प्रथम शतीसे ६वीं शती तक, ६०० वर्ष। और तीसरा ६०१ ई. से १२०० ई० तक, ६०० वर्ष। पहिला समय आचार युग। दूसरा कला युग। और तीसरा काल जरा-युग कहा जा सकता है। नागार्जुन बौद्धोंकी क्रान्तिमें द्वितीय युगके प्रवर्तक थे। द्वितीय युगके ६०० वर्षोंपर नागार्जुनकी छाया है। वह भारतका सूर्य कहलाता था। यद्यपि ईसाकी ८ वीं शतीमें द्वितीय सिद्धनागार्जुन भी हुए। किन्तु वे गिरती हुई भारतकी एक सीढ़ी मात्र थे। सिद्धोंकी बौद्ध परम्परा बौद्ध अनुशासनकी जरावस्थाके अभियानसे अधिक और कुछ न था। इतिहासकारोंने इसे सिद्ध बाल नाम भी दिया है। किन्तु इन सिद्धोंसे बौद्ध धर्मका, कलाका कोई हित सिद्ध न हुआ।

पारदका आविष्कर्ता कोई रहा हो। इतिहासने उसका श्रेय नागार्जुनको ही दिया। बौद्धोंने भले ही राजनैतिक भूलों की हों, किन्तु पारदकी खोज और रसायनी-विद्याके विकासका श्रेय केवल बौद्धोंको है। यूनानने इस विद्यामें भारतको कुछ दिया नहीं है, परित्राजक बौद्धोंसे लिया ही है। फिर बौद्धोंके कला युगमें यूनानका पतन हो चला था। वह दूसरोंको कुछ देनेकी स्थितिमें ही न रह गया था। अब शक और हूणोंका जोर था। जिन्हें कला, साहित्य, और संगीतका नाम भी ज्ञात न था। वह परिज्ञान थोड़ा बहुत उन्हें भारतीयोंसे ही मिला।

बुद्ध भगवान्के बादके ५०० वर्ष बौद्ध-क्रान्तिका प्रथम युग था। उसमें बुद्ध भगवान्के आदेश जीवित थे। भारतके वातावरणमें बुद्धकी वाणी गूँज रही थी।

किन्तु प्रथम ईसावी शतीसे ६ वीं शती तकके बौद्ध अपनी अपनी वाणीमें बोलने लगे थे। माध्यमिक, योगाचार, सौत्रान्तिक और वैभाषिकोंने तर्ककी तीखी तलवारसे चरित्रकी सर्यादाओंको काटना प्रारंभ कर दिया था। तो भी वे कलाओंके उत्थानमें उदासीन न थे। राजनैतिक क्षेत्रमें अशोकके बाद बुद्ध धर्मका नाम मात्र शेष रह गया था। ईसासे १५० वर्ष पहिले बुद्ध शासन समाप्त हो ही गया। पुण्यमित्रका वैदिक शासन उग्र युगका शासन बन चुका था। तो भी वैज्ञानिक क्षेत्रमें कोई विरोध न था।

पुण्य मित्रद्वारा अशोकके प्रपौत्र बृहद्रथका वध बृहद्रथके वासनात्मक जीवनका परिणाम था। राष्ट्रको विजातीय तत्त्व विध्वस्त कर रहे थे, किन्तु वह सुग और सुन्दरीमें विभोर था। स्वयं बौद्ध भिक्षु तक इसी में प्रवृत्त थे। भिक्षु संघ अपने लास और विलासके लिये राजाको भी उसी पन्थका पथिक बनाये हुये थे। तर्कका वाग्जाल समाजको भुलावेमें डालने मात्रका एक साधन था। यद्यपि इस बीच बौद्ध विद्वान्के अनेकों ग्रन्थ लिखे गये। किन्तु यह ग्रन्थोंके लेखन ही थे। चरित्रोंपर लिखनेके नहीं।

इधर अश्वघोष, नागार्जुन, आर्यभट्ट, कुमार लब्ध, जैसे धुरन्धर विद्वान् दार्शनिक गुणधर्मोंको उलझाने और उलझानेमें व्यस्त थे, तो दूसरी ओर लासों, भिक्षु और भिक्षुणियां प्यारकी दुनियामें मुग़ा और मैथुनका विस्तार कर रहे थे। इन्हीं तर्कोंकी तार्किक सुरक्षाके लिये मन्त्रयान और वज्रयान जैसे सम्प्रदायोंका आविर्भाव हुआ। बौद्ध भिक्षु श्री राहुल सांस्कृत्यायन ने लिखा है:—

“इस प्रकार मन्त्र, हठयोग और मैथुन, ये तीनों तत्त्व बौद्ध धर्ममें प्रविष्ट हो गये। इसी बौद्ध धर्म को मन्त्रयान कहते हैं। इसको हम निम्न भागोंमें विभक्त कर सकते हैं—(१) मन्त्रयान (नरम) ४००-७०० ई० तक। (२) वज्रयान (गरम) ७००-१२०० ई० तक। मन्त्र, मन्त्र, हठयोग, और स्रो ये चार ही चीजें वज्रयानके मुख्य रूप हैं। (गङ्गा, पुरातत्वाङ्क)

‘गुह्य समाजतन्त्र’ और ‘प्रज्ञोपाय विनिश्चय सिद्धि’ आदि अनेक बौद्ध-सम्प्रदाय ग्रन्थोंमें जो साधनायें

छछी गई वे चरित्रकी किस स्थितिका निर्देश करती
यह भी देखिये—

नीलोत्पलदलाकारं रजकस्य महात्मनः ।
कन्यां तु साधयेन्नित्यं वज्रसत्त्वप्रयोगतः ॥
जनयित्रीं स्वसारं च स्वपुत्रीं भागिनेयिकात् ।
कामयन् तत्त्वयोगेन लघुसिद्धयेद्वि साधकः ॥
वेश्या रत्नं, सुरा रत्नं, रत्नं देवो मनोभवः ।
एतद्रत्नत्रयं वन्दे अन्यत् काचमणित्रयम् ॥

ईसाकी ७ वीं शतीसे लेकर १२ वीं शती तक ८४
सिद्धोंकी एक परम्परा रही है। बौद्ध धर्मकी इस
शाखामें इसी प्रकारकी सिद्धियोंकी साधना होती रही है।
कामदेवके इस प्रचण्ड शासन बालमें लोग ईश्वरकी
पूजा छोड़कर लिङ्गकी पूजा, और मातृ वन्दनासे पराङ्मुख
होकर योनिकी अर्चनामें तन्मय हो रहे थे। कहना
ही होगा, भारतमें आने वाले शकोंकी बाढ़ने इन
सिद्धोंका बड़ा साथ दिया और भोली भाली जनता
भी इनके चक्रमें चरित्रको चौपट करती रही।

केवल भारतमें ही नहीं, योरोपमें इससे भी अधिक
घटके हुवे सम्प्रदायोंने जन्म लिया है। फ्रांसमें 'सोडोम'
नामका एक बड़ा नगर था। वहाँके लोग किशोर
पुत्रोंके साथ अप्राकृतिक सम्बन्धको भी सभ्यताके
नामपर बहुत काल तक समर्थन करते रहे। समर्थन
ही नहीं, वे उसपर गर्व भी करने थे। और 'सोडोमी'
सभ्यताके समर्थक थे। किन्तु वह अप्राकृतिक अभियान
रलना कब तक संभव था?

भारतमें मन्त्रयान और वज्रयानकी परिस्थिति
मन्त्र थी। यहाँ लिङ्ग और योनिकी पूजाका प्रचार
था। और कुछ अंशोंमें आज तक 'शिव लिङ्ग' की
पूजामें देखा जा सकता है। इस अवस्थामें आवश्यक
ही था कि मनुष्य अपनी नश्वर मानव देहको सुदृढ़,
वस्थ और कामदेवका दरबार बनाये रखता। सुतरां
आवश्यक हुआ कि कोई ऐसे रासायनिक तत्त्व ढूँढ़े
गये जिनसे उक्त आवश्यकता की पूर्ति हो सके।
शरीरकी स्थिरताके बिना उक्त सिद्धियाँ और निष्ठायेँ
से निभ सकती थीं?

ईसाकी छठवीं शताब्दिसे लेकर १२वीं शताब्दि
तकके युगमें पूरे ६०० वर्ष तक भारतीय समाजपर
सिद्ध लोग छा गये थे। इन छः सौ वर्षोंमें जो साहित्य
बना उनमें भी सिद्धोंका बोलवाला है। 'सिद्धादेशः'
'सिद्धाश्रमम्' 'सिद्धवचनम्' का पदे पदे उल्लेख उनमें
आपको मिलेगा। भारतीय स्त्री समाजका बहुमत
सिद्धोंकी साधनामें तत्पर हुआ, और सिद्ध लोग स्त्री
की साधनामें वेसुध हुए।

नितान्त कामुकताके साधकोंने पारदका आश्रय
लेकर, बड़े परिश्रमसे उसके ऐसे ऐसे रासायनिक
प्रयोग तैयार कर डाले जिनका प्रेय चिकित्सा नहीं,
किन्तु स्तम्भन, बाजीकरण और उत्सेचन आदि ही
होता था। रस ग्रन्थोंमें आज भी हमें ऐसे योग
अधिकांश दिखाई देते हैं। इसी भावनासे पारद और
गन्धकको खनिज द्रव्य नहीं रक्खा, किन्तु पारदको
शम्भुका वीर्य और गन्धकको पार्वतीका रज बना
दिया ॥ पार्थिव श्रेणीके द्रव्योंमें जाड़म होनेका
आग्रह किया जाने लगा। और उसके पोषणमें 'रसेश्वर
दर्शन' लिखा जाने लगा। कितनी ही आख्यायिकायें
और कपोल कल्पनायें बनती चली गईं। यह 'हरगौरी
सृष्टि संयोग' केवल शरीरको दिव्य बनानेके लिये ही
किया गया—

“दिव्यातनुर्विधेया हरगौरी-सृष्टि-संयोगात्”

इस प्रकार यह एक निर्विवाद सत्य है कि पारदके
आविष्कारकी ओर सबसे पूर्व बौद्धोंका ही ध्यान
गया। धीरे-धीरे बौद्धोंके लिङ्गयान और वज्रयानकी
हवा दूमरे सम्प्रदायोंको भी लगी। फिर क्या था,
भैरवी तन्त्र, वाममार्ग, लोकायत, जैसे अनेक मार्ग
पैदा हुए। मन्त्र तन्त्रोंने समाजकी बुद्धिको मन्त्रबद्ध
कर डाला। कामुकता ही सिद्धाईके रूपमें पुजने लगी।
लिङ्ग और योनिकी मुक्ति सोपान कहकर पूजा
जाने लगी।

विधाय रस लिङ्गं यो भक्तियुक्तः समर्चयेत् ।
जगत्त्रितय लिङ्गानां पूजा फलमवाप्नुयात् ॥
(१० र ३० १)

‘भेयः परं किमभ्यत् शरीरमजरामरं विहायैकम्’

लिङ्गकोटि सहस्रस्य यत्फलं सम्यगर्चनात् ।
तत्फलं कोटिगुणितं रसलिङ्गार्चनाद्वयेत् ॥

(२० २० स०, अ० ६)

रसरत्न समुच्चयके छठवें अध्यायमें रसायनी विद्याके अध्ययनके लिये शिष्योपनयनका वर्णन मिलता है। वहां लिखा है कि रस-लिङ्गकी पूजा करके योनि-कुण्डमें हवन करे। और शिष्यको अघोर मन्त्र देकर खास प्रकारकी तरुणीके साथ (जिसे 'कालिनी शक्ति' कहा गया है) दीक्षित किया जाय। रस शिक्षाके लिये शिष्यको जिस गुप्त अघोर मन्त्रका उपदेश दिया जाता है, वह यह है—

“ओम् हां ह्रीं हूं अघोरतर प्रफुट प्रफुट प्रकट प्रकट कह कह शमय शमय जात जात दह दह पातय पातय ओम् ह्रीं हूं हूं अघोराय फट्”

शिष्यको आदेश किया जाता है कि वह रस सिद्धिके लिये इस मन्त्रको सुगुप्त रखे।

मन्त्र और रसकी कला जिन्हें प्राप्त होगई वे ही सिद्ध बन जाते थे। पहिले नागार्जुन (ई० प्रथमशती) को बोधि सत्त्व नागार्जुन कहा जाता है। किन्तु ईसाकी ७ से ८ वीं शताब्दिके बीच हुए द्वितीय नागार्जुन सिद्ध नागार्जुन थे। लोगोंका विश्वास था कि जो गुरु से अघोर मन्त्र नहीं लेता उसे रस सिद्धि नहीं हो सकती। इसमें सन्देह नहीं कि उस समय लोगोंको मन्त्र सिद्धि और रस सिद्धिमें भटकते भटकते कुछ न कुछ अलौकिक जादू टोने मिल ही जाते थे। वे उनका उपयोग करके साधारण स्त्री पुरुषोंको चकित कर देते थे और इस प्रकार उनकी श्रद्धाके भाजन बन जाते। बिना दीक्षा लिये यदि कोई व्यक्ति मन्त्र और रसके बारेमें कुछ जानना चाहे तो गुप्त रखा जाता था। सिद्धोंने जब देखा जनता उनके जादूओं और मन्त्रोंसे सुगुप्त हो चुकी है, स्त्री समाजके प्रति उनके भाव दूषित और कर्म दुराचारमय होते गये। क्योंकि श्रद्धाकी सब से सुगम शिकार स्त्री ही थी। सिद्ध शंकर के प्रतीक बने, और स्त्री मात्र दुर्गाकी प्रतीक। इस कल्पनामें अनाचारको अवसरही कहाँ मिल सकता था? अपने कुकृत्यको लोभमें कल्पना के द्वारा

सिद्धोंने उसे दार्शनिक रूप देकर धर्मका नाम पहिना दिया।

अन्तमें पारद उस भैरवीचक्रको स्थायी रखनेक प्रधान साधन ही बन गया, जिसके संरक्षणमें स्त्रीक वशीकार कैसे हो?, योनि विद्रावणका क्या उपाय है? सौ स्त्रियोंसे किस प्रकार रमण किया जाय वाजीकरण और स्तम्भनकी सिद्धि कैसे हो? इन सारी प्रश्नोंका हल रस सिद्धिद्वारा होता रहा है बहुत दिनकी कठिन सेवाके बाद सिद्धलोग शिष्यक एकाध गुटिका, वाजीकरण अथवा कुछ और जादू बताने देते थे। शिष्य उसे ही गुरुका प्रसाद मानकर अपनेक कृतकार्य समझते थे।

अनेक लोगोंका विचार है कि बज्रयान तथा लिङ्गयान जैसे सम्प्रदायोंके ग्रन्थोंमें जो शब्द आश्लील और नैतिकतासे गिरे हुए समझे जाते हैं, उनका अर्थ वह नहीं है जो साधारण लोग समझ लेते हैं, उदाहरणके लिये 'बालरण्डा' शब्द जिसके अर्थ बाध विधवा (व्यभिचारिणी) होता है, एक विशेष सिद्धि का नाम है। 'खेचरीमुद्रा' में जिह्वाको ऊर्ध्व तालुमें स्थापित कर भूख प्यासका नियन्त्रण करनेका 'गोमांस' भक्षण कहा गया है। 'कन्या सम्भोग' तथा इसी प्रकारके अन्यान्य नाम किन्हीं खास खास महत्त्वपूर्ण अर्थों को द्योतक हैं। होसकता है ऐसा हो, किन्तु अधिकांश सिद्ध प्रचारकोंने उस गुह्य अर्थको नहीं किन्तु प्रचलित अर्थको ही चरितार्थ किया है। वे गुड़ अवश्य खाते पर गुल-गुलोंसे परहेज करते थे। शास्त्रका यथा शाब्दिक संगोपन समाजकी ही नहीं, आत्मवञ्चन भी थी।

रसोपरसोंकी उत्पत्तिके बारेमें जो कल्पनाएं ग्रन्थोंमें मिलती हैं, वे हमारे उपर्युक्त कथनकी पुष्टि लिये पर्याप्त होंगी। रस सिद्धोंकी कल्पना है कि पारश्वमुका वीर्य है गन्धक पार्वतीका रज। हरिताल विष्णुका वीर्य है और मनः शिला लक्ष्मीका रज।

पारदः शिववीर्यं स्याद् गन्धकं पार्वती रजः ।
हरितालं हरेर्वीर्यं लक्ष्मीवीर्यं मनःशिला ॥

पारदः शिववीर्यं स्याद् गन्धकं पार्वती रजः ।
हरितालं हरेर्वीर्यं लक्ष्मीवीर्यं मनःशिला ॥

विकल्पनायें तत्कालीन रस-सिद्धोंके वैषयिक मनोभावोंके सिवा और क्या प्रस्तुत करती हैं? लिंगयान और वज्रयानकी कौन कहे 'सुरत सम्प्रदाय' भी इन्हींके अवान्तर भाई बन्धु ही रहे हैं। वे शक्तिकी साधनामें सुरतका साधन पारदको बनाये हुवे थे। अनेक स्थलोंपर ऐसे योग भी आये हैं जहां रसादि गुटिकाओं में स्त्रीकारज और पुरुषका वीर्य खानेके प्रयोगोंमें उल्लिखित है—

“...स्त्रियः पुंतां पुष्पं बीजन्तु योजयेत्”

२० २० स० १०/७५

सम्पूर्ण रसायनी विद्या एक प्रकारसे वाजीकरण तन्त्र ही बन गया था। परन्तु रसकी प्रारंभिक खोजमें नागार्जुनने ईसाकी प्रथम शताब्दिमें क्या तत्त्व हमारे सामने रक्खे, इसका लेखा तो काल कवलित ही हो गया। प्रथम शतीसे लेकर छठवीं शतीतक काम तो बहुत कुछ हुआ, परन्तु प्राणाचार्योंको उसपर बहुत श्रद्धा न हुई। सोना, लोहा, शिलाजतु, तुरथ, ताल, मनःशिला आदिके उल्लेखके बावजूद भी पारदका उल्लेख वागभट तक (५-६ वीं ई० शती) नहीं मिलता। इसका अर्थ यही है कि रसायनी सम्प्रदाय परम्परागत प्राणाचार्योंके साथ एक सूत्रमें नहीं गिना गया था। पारदकी खोज तो ईसाकी प्रथम शताब्दिसे चल ही रही थी। परन्तु एक ऐसी खोज थी, जिसपर प्राचीन प्रणालीको पूरा भरोसा न था। या “रस विद्या सदा गोप्या मातुर्गुह्यमिव ध्रुवम्” के अनुसार रस-सिद्ध लोग उन्हें अपने तत्त्व बतानेको तैय्यार न थे। वह उन लोगोंको विरासतमें मिली जिन्हें वाजीकरण, वशीकरण, और स्तम्भनसे अवकाश ही न था। स्वयं डूबे और विज्ञानको ले डूबे। खेद है कि प्रारंभिक ६ सौ वर्षोंका रसायनी विद्याका साहित्य हमारे सामने नहीं सा है।

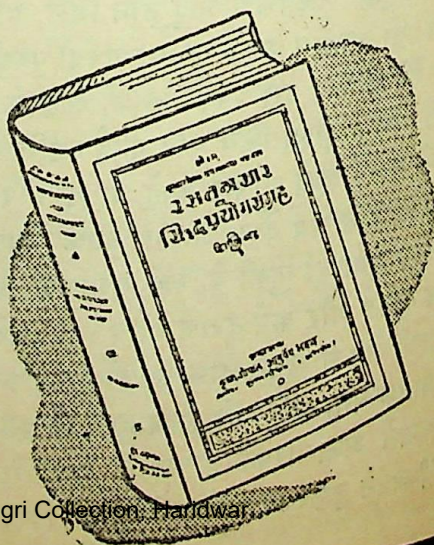
मिश्रके साथ भारतके सम्बन्ध पुराने हैं। प्रायः ईसासे १५०० वर्ष पूर्वसे भारत और मिश्रका आदान प्रदान था उस परिपाटीके अनुसार भारतकी ही भांति मिश्रमें भी लिङ्गपूजा होती रही है। परन्तु इस लिङ्गमें पारदको प्रविष्ट करने वाले भारतके सिद्ध ही प्रतीत होते हैं। इन सिद्धायतनोंमें ही पारदके करिश्मे होते

रहे हैं। इसलिये रसायनी-विद्याकी जवानी यहीं पत्नी। परन्तु परदेमें। सुपात्र उसके सौन्दर्य और शृङ्गारको कैसे देख पाते? वह गुह्य थी।

अश्वघोष, बोधिसत्त्व नागार्जुन, आर्यदेव, असङ्ग और वसुवन्धु (३६० ई० तक) जैसे आचार्यों ने भगवान् बुद्धके निर्मित कठोर नियमोंमें भिक्षु और भिक्षुणियोंके लिये पर्याप्त शिथिलता ही नहीं कर दी, प्रत्युत उनके मेल जोलके औचित्यका भी समर्थन दिया। इस मेल जोलने ही ‘देह लोह’ मयी सिद्धि की खोजमें भिक्षुणियोंको प्रवृत्त किया। पारद इस सिद्धिका साधन बनाया गया। शून्य वादी महायानियोंको तारा और अवलोकितेश्वरकी कल्पना तक पहुँचना पड़ा। प्रत्येक स्त्री शक्ति है, इसलिये वह तारा हुई। प्रत्येक पुरुष शक्तिमान् अवलोकितेश्वर (बोधिसत्त्व) है। इसलिये शक्ति और शक्तिमान्का मिलन ही आवश्यक है। वाम मार्गियोंने कहा—‘अहं भैरवस्त्वं भैरवी’। बात एक ही हुई। यह संगम ख्यायी बने, इसलिये पारद और गन्धकके प्रयोग दृढ़ जाने लगे। यह सिद्धि दृढ़ लेनेवाले ही सिद्ध हो गये।

स्त्री और पुरुषकी पृष्ठ भूमिमें साधारणीकरणकी कल्पना महान् थी। परन्तु उस तक पहुँचनेका मार्ग ही अनैतिक था, इसलिये वह विरस्थायी और सार्वजनीन न हो सका।

(सावशेष-आगामी अंकमें देखिये अन्वकारसे उद्योतिकी ओर)



अमृत केवल कल्पना नहीं, एक ठोस वास्तविकता है

ले० आचार्य प्रेमकिशोर मिश्र B. I. M. S., आयुर्वेदाचार्य
प्रधान चिकित्सक, म्यू० आ० औ० नगरा, अजमेर

विद्वान् लेखक ने आयुर्वेदके एक विशेष सिद्धान्तको चातुर्य पूर्वक बड़ी सरलता और रुचिरताके साथ अभिव्यक्ति देनेका सुन्दर प्रयास किया है। स्वस्थताके विषयमें आयुर्वेदकी क्या मान्यता है और क्यों है, इसको समझनेमें इस लेखद्वारा पाठकोंको सरलता होगी। छोटे छोटे विषय शास्त्रीय रूप देनेपर सामान्य, वैद्येतर पाठकोंको कुछ कठिन प्रतीत होते हैं। परन्तु अभिव्यक्ति पाठवसे वे सरल होजाते हैं।

—सम्पादक

‘स्वर्गीय श्री जयदयाल जी गोयन्दका की एक कहानी पढ़ी थी ‘समता ही अमृत, विषमता ही विष है’। यह कहानीका शीर्षक था। गोयन्दकाजी ने राजस्थानके एक अकाल पीड़ित बन्धु की आप बीतीका वर्णन किया है। उक्त अकाल पीड़ित बन्धु अपना गाँव छोड़ कर कलकत्ता पहुँचता है, वहाँ वह अपने स्वपामीण बड़े सेठसे भेंट करता है। औपचारिकताके पश्चात् सेठने गाँवके हाल चाल राजी खुशी पूछी। उक्त बन्धु ने सारी स्थिति समझाई, और उनकी फर्ममें काम देनेकी प्रार्थना की। सेठ ने विवशता बताकर क्षमा मांगी। बादमें सेठ उक्त बन्धुको अपने घर ले गए। घर पर अपनी पत्नीको सारी स्थिति समझा कर भोजन व्यवस्थाका आदेश दिया। सेठ की पत्नी भी एक ही काँड़या थी, उसको सारी बात व्यर्थ झुझंठ भरी और बेकार लगी। फिर भी पतिके आदेशको मानना तो पड़ा। पहले आगत बन्धुको भोजन परोसा गया फिर गृहपतिको भोजन परोसा गया। गृहपतिको भोजनमें कई प्रकारके व्यञ्जन मिश्रान्न आदि परोसे गए जब कि आगत बन्धुके भोजनमें यह विविधता नहीं थी। यही नहीं दोनोंके भोजनमें भोज्य वस्तुओंकी संख्यामें भी अन्तर था।

रातको सेठ सेठानी आरामदेह बिस्तरोंपर मसहरी लगाकर चैनसे सोये जब कि उक्त बन्धुको सोनेके लिए स्थान पैड़ी पर मिला, जहाँ खटमल मच्छरों आदिने पर्याप्त स्वागत किया। उस बन्धुकी सारी रात खटमलों मच्छरोंकी मेजबानीमें ही बीती। ऐसी स्थिति में क्या नींद आई होगी इसकी कल्पना स्वयं ही करें।

दूसरे दिन बाजारमें घूमते हुए उस अकाल पीड़ित बन्धुको अपने ही गाँवके एक अन्य व्यक्ति मिले। कुशलचैमके बाद एक दूसरेके हालचाल सुने। अकाल की बात सुनकर उस भिन्नको दुःख हुआ, और कहा कि मैं गरीब आदमी हूँ, छोटा काम है, पर आपको सामो-दार बना लूँगा। जितना काम उतना दाम का सीधा सिद्धान्त। रहनेके लिए भी स्वयंका घर अर्पित किया। तात्कालिक सहायताके लिए नकद रुपया भी दिया।

दोनों व्यक्ति घरपर आए। भोजन परोसा गया भेदभाव रहित, समान रूपका। सोनेके समय गृहपति व उनकी पत्नीने स्वयं कष्ट सह कर उक्त बन्धुके सोनेकी व्यवस्था की। पाठकोंने उक्त बन्धुके साथ दोनों व्यक्तियोंका व्यवहार समझ लिया होगा। धनी सेठके

नीरसकपटपूर्ण व्यवहारको श्री गोयन्दकाजीने विषकी संज्ञा दी है। दूसरी ओर सामान्य काम करने वाले ग्रामवासी मित्रके सरस, सरल, समतापूर्ण व्यवहारको अमृतकी संज्ञा दी है। श्रीयुत गोयन्दका जी की समता ही अमृत और विषमता ही विष है। यह बात मनमें चकर काट रही थी। मनके घोड़ेने, दौड़ लगाई। गोयन्दका जी की कहानीके शीर्षककी बातको मैंने आयुर्वेद विज्ञानके सिद्धान्तकी तराजूपर तौलना प्रारम्भ किया। कुछ समय विचार किया, निष्कर्ष निकाला, बिल्कुल सीधी सी बात है। शरीर दोष और धातु मलोंसे बना है। इस शरीरमें आत्मा स्थित है। दोष और धातुवैषम्य और उससे मन व आत्माको होने वाला कष्ट रोग है। इसलिए विषमता विष है। दोष धातुओंकी समानतासे मन आत्मा प्रसन्न रहते हैं, अतः समानता अमृत है।

आयुर्वेदमें स्वस्थ व्यक्तिके लक्षण निम्न प्रकार दिए हैं—

समदोषः समाग्निश्च समधातु-मल-क्रियः।

प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते ॥

जिसके दोष, वायुपित्त और कफ समान हों, रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र, ओज समान हो, अग्नि समान हो, मल मूत्रका रङ्ग मात्रा, उत्सर्ग गति, वेगकी संख्या समान हो मन आत्मा प्रसन्न हो वह व्यक्ति स्वस्थ है।

वायुकी समानता—समान श्वास प्रश्वासकी गति Normal rate of breathing, रक्तपरिभ्रमण की गति Normal rate of blood Pressure, मलमूत्रके वेगकी अनुभूति उत्सर्ग व संख्याकी समानता (Normalcy of the urges of urine and stool with prompt at hand discharge of the same in physiological colour & quantity) बोलने सुनने, सोचने, समझने, याद रखनेकी क्षमता, रश्मेन्द्रियका ठीक काम, शरीरके अङ्गोंका संचालन, बल, स्फूर्ति, उत्साह आदि सभी काम वायुकी समानतामें अन्तर्निहित हैं। वायुकी असमानतासे इन कार्योंमें असमानता आ जायेगी।

पित्तकी समानता—बालक, युवा, वृद्ध आदि आयु भेदके अनुसार शरीरकी आवश्यकताके साफिक उचित समयपर भूख लगना, खाया हुआ भोजन ठीकसे पचना, चेहरेकी रौनक, रक्त परिभ्रमणकी समान गति, रक्ताणुनिर्माण व उनकी संख्याकी समानता जलन रहित मलमूत्र त्याग, नेत्रोंकी ज्योति, सोचने समझने याद रखनेकी क्षमता, क्रोधका कम आना यह पित्तकी समानतामें निहित हैं।

पित्तके लक्षण—अम्ल, द्रव, उष्ण थोड़ा स्निग्ध यह पित्तके लक्षण हैं। शरीरमें इनकी समानता भी पित्तकी समानतामें निहित है।

कफकी समानता—शरीरकी लम्बाई तथा आयुके अनुसार समान भार, शरीरका मर्यादित गठन, स्फूर्ति, उत्साह, भरपूर नींद आना, अनालस्य, मृदु और क्रोध रहित स्वभाव, सोचना, समझना, याद रखना, मन और हृदयकी विशालता, उदारता, साहस, शरीरकी स्निग्धता आदि बातें कफकी समानतामें निहित हैं।

कफके लक्षण—स्निग्ध, गुरु, शीत, मृदु आदि कफके लक्षण हैं। शरीरमें इनकी समानता भी कफकी समानताकी होतक है।

अग्निकी समानता—अभ्यासानुकूल देश काल स्वभावके अनुसार ठीक समयपर भूख लगना, खाया हुआ खाना हजम होना। क्रोध, लोभ, शोक, मोह, भय, साहस आदि प्रवृत्तियोंका औचित्य, प्यास, भूख, नींदका ठीक समयपर आना आदिकी समानता अग्निमें निहित और आधारित है।

मलमूत्र क्रियाकी समानता—भोजनके चार-पांच घंटे बाद ठीक रंग व मात्रामें बिना जलन आना, बंधा हुआ वेगसे आना ये सारी बातें मलमूत्रकी समानतामें निहित हैं।

रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि मज्जाकी समानता—आहारका ठीक रस बनना, रससे रक्त और रक्तसे मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र आदिका हीनाधिक मात्रामें न बनना। यह धातु क्रियाकी समानता है।

इन्द्रियों व मन आत्माकी प्रसन्नता—वायु, पित्त,

कफ ही सारे शरीरको चलाते हैं। इनकेद्वारा ही सारे रस रक्तादि सप्तधातु शरीरमें बनती है और अनुपयोगी मल शरीरसे बाहर आते हैं। शरीर आत्माका निवास स्थान है। आत्मा मन व इन्द्रियोंके संयोगसे शरीरकी सारी कार्यवाहीको समझता है और अनुभव करता है। वायु, पित्त, कफकी विषमताका प्रभाव आत्मा और मनको दुःखकारक होता है। इन तीनोंकी समानता आत्मा और मनको सुख देती है। इसी प्रकार मनमें आर्या क्रोध, शोक, लोभ, मोह, शोककी भावनाएं वातादिक संतुलनको बिगाड़ती हैं शरीर मन आत्माके परस्पर अन्योन्याश्रित सम्बन्धोंकी समता व संतुलन विषमता (असंतुलन) तन्दुरुस्तीके लिए क्रमशः लाभप्रद और हानिकर है।

धातु का प्रयोजन—

“धातु साम्य क्रिया चोक्ता तन्त्रस्यास्य प्रयोजनम्”

शास्त्र वचनानुकूल धातु (वायु, पित्त, कफ, रस, रक्त, मेद, मांस) की समानताकी क्रिया है। यह आयुर्वेद शास्त्रका प्रयोजन है। इस प्रयोजनके लिए आयुर्वेदमें तीन प्रकारके द्रव्य हैं।

१. वायु, पित्त, कफको दूषित करने वाले
२. वायु, पित्त, कफ आदिकी शांत करने वाले
३. स्वस्थ व्यक्तिको स्वस्थ रखनेके लिए प्रयुक्त द्रव्य

इन द्रव्योंमें मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय आदि छै रस स्थित हैं। इन रसोंके कारण द्रव्योंमें रुक्ष, तिग्म, शीत, उष्ण, गुरु, लघु, सुश्रुतोक्त गुण तथा दीपन, पाचन, प्राही, संसन, शुक्ल, भेदन, छेदन, लेखन आदि गुण, ऋतुओं, सूर्य, पृथ्वी, चन्द्रमा, भूमि आदिकी गतिसे बनते हैं। इन द्रव्योंमें ही शीत उष्ण वीर्य स्थित है और मधुर, अम्ल कटु विपाक स्थित है।

जो औषधियाँ परस्पर विरोधी स्वभाव गुण वाले वायु, पित्त, कफको अपने रस (मधुरास्लादिक) वीर्य विपाक (मधुरादिक) से प्रशमन करती है, स्वस्थावस्थामें प्रयोग

करनेसे समताको स्थिर रखती है, विषमताका नाश करती है, अपने इन कामोंसे शरीर, आत्मा, मन, इन्द्रियोंके स्वास्थ्य तथा आयुको स्थिर रखती है, वे ही अमृत हैं। जैसे हरीतकी, लहसुन, गुडूची इन तीनोंमें वायु, पित्त, कफको एक साथ शमन करने, अग्नि साम्य स्थापित कर, रोग नाश करने और स्वस्थके स्वास्थ्यकी रक्षा करनेका गुण मौजूद है अतः यही अमृत है। इन औषधियोंकी उत्पत्ति इनके गुणोंके कारण पौराणिक गाथाओंसे जोड़ दी गई है। भगवान् धन्वन्तरि अपने साथ आयुर्वेद शास्त्रके शरीर और आत्माको स्वास्थ्यप्रद तथा रोग विनाशके ज्ञानरूपी अमृत कलशको ही लेकर समुद्रसे प्रकट हुए। अतः अमृत वास्तविक, ठोस, तथ्य है। कोरी काल्पनिक गल्प नहीं है।



कुमार कल्याण रस

बालकों को स्वस्थ और सबल बनाता है।

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन
कालेड़ा, कृष्ण गोपाल. (अजमेर)

— सूत्राघात — RETENTION OF URINE

लेखक—श्री कृष्णगोपाल गुप्त

श्रीराम कृष्ण राजपूताना औषधालय, जुरहरा, भरतपुर (राजस्थान)

योग्य लेखकने संक्षेपमें सूत्राघातके विषयमें प्राच्य एवं पाश्चात्य मतसे प्रकाश डाला है। साथ ही उसकी चिकित्साके विषयमें निर्देश दिये हैं। सुन्दर हैं। आयुर्वेदीय चिकित्साकी दृष्टिसे अधिक एवं विवरणात्मक प्रकाश डालनेसे ऐसे लेखोंकी उपयोगिता बहुत बढ़ सकती है। क्योंकि भारतीय जनताको उन औषधोंकी उपलब्धि सरलता पूर्वक हो सकती है। वह उनके लिए स्वाभाविक रूपसे अधिक उपयोगी भी हैं।

—सम्पादक

कभी कभी यह देखा जाता है कि रोगी मूत्र करना बन्द कर देता है जबकि मूत्राशयमें मूत्र भरा रहता है। अर्थात् रोगी मूत्र त्याग करनेमें असमर्थ होता है। मूत्राशयमें मूत्र भरता रहता है जिससे वह विस्तृत होकर अपने स्वभाविक आकारसे कहीं बढ़ जाता है। जब वह अधिक विस्तृत होता है तब भग सन्धानिकाके ऊपर उसकी सीमा देखी जाती है।

इसका कारण अष्टांग हृदयमें बताया है यथा—

“अधोमुखोऽपि बस्तिर्हि मूत्रवाहि सिरा मुखैः ।
पार्श्वेभ्यः पूर्यते सूक्ष्मैः स्पन्दमानैरनारतम् ॥
एतैरेव प्रविश्येन दोषाः कुर्वन्ति दिशतिम् ।
मूत्राघातान् प्रमेहांश्च कृच्छ्रान्मर्म समाश्रयान् ॥

॥ अष्टाङ्ग० निदान० ॥

अर्थात् वस्ति अधोमुख होनेपर भी मूत्र वाही सिरा मुखोंके द्वारा पार्श्वोंसे भर जाती है। इन्हीं मूत्र-स्रोतोंके मार्गसे दोष वस्ति में पहुँचकर वस्ति में

आश्रित एवं कष्ट साध्य बीस प्रकारके मूत्राघातों तथा बीस ही प्रमेहोंको उत्पन्न करते हैं।

चरक संहितामें मूत्रकृच्छ्र आठ तथा मूत्राघात तेरह प्रकारके बतलाये हैं। यथा—

‘स्युर्मूत्रकृच्छ्राणि नृणामिहाष्टौ ।’ चरक चि० २६।
त्रयोदशैते मूत्रस्य दोषास्तोल्लिङ्गतः शृणु ॥
च०, नि०, अ० १। २६

सुश्रुतमें बारह मूत्राघात तथा आठ मूत्रकृच्छ्र बतलाये हैं।

माधव निदानमें मूत्राघात तेरह प्रकारके बतलाये गये हैं। उनका वर्णन निम्न प्रकारसे हैं।

वातकुण्डलिका—रुक्षता अथवा वेग निग्रहसे कुपित हुआ वायु कुण्डलाकार होकर मूत्रके साथ मिल कर मूत्राशयमें दौड़ता है। उस समय तीव्र वेदना होती है तथा पीड़ा युक्त थोड़ा थोड़ा मूत्र उतरता है।

अष्टौ—वायु मूत्र तथा मलको अवरुद्ध

करके मूत्राशय
हुआ चल,
मलको रोक
उत्पन्न कर

वात व
करता है उ
मुखको बन्द
मूत्राशय या
जानना चा

मूत्रात
शीघ्र नहीं

मूत्र ज
उदरको अ
विधारण ज
आध्मानको
निम्न भाग

मूत्रोत
ही वस्ति
अथवा प्र
थीरे अथव
तब कुपित
कहते हैं।

मूत्रक
शयमें रहने
दाहको उत्

मूत्र
स्थिर छोटे
पीड़ा वाल

मूत्र
क्रिये ही
ऊपरको
मूत्र त्याग
समान नि

इसका
कि मैथुन

करके मूत्राशय तथा गुदामें आध्मानको उत्पन्न करता हुआ चल, उन्नत तथा तीव्र पीड़ा वाली, मूत्र तथा मलको रोकनेवाली अष्ठीला (पिण्डाकार ग्रन्थि) को उत्पन्न कर देता है।

वात वस्ति—जो मूर्ख मनुष्य वेगको धारण करता है उसके मूत्राशयमें रहने वाला वायु मूत्राशयके मुखको बन्द कर देता है तब मूत्र रुक जाता है। इससे मूत्राशय या कुक्षिमें पीड़ा होती है। इसे वात वस्ति जानना चाहिये। यह रोग कष्ट साध्य होता है।

मूत्रातीत—देर तक मूत्र रोककर रखनेसे मूत्र शीघ्र नहीं उतरता है इस रोगको मूत्रातीत कहते हैं।

मूत्र जठर—मूत्रके वेगको रोकनेसे अपानवायु उदरको अच्छी तरहसे भर देता है। तब मूत्र वेग विधारण जन्य उदावर्त नाभिके नीचे तीव्र वेदना युक्त आध्मानको उत्पन्न कर देता है। जिससे मूत्राशयका निम्न भाग अवरुद्ध हो जाता है।

मूत्रोत्संग—जब प्राणीको मूत्र प्रवृत्त होनेके बाद ही वस्ति नलिका अथवा लिंग मणिमें रुक जाने अथवा प्रवाहण करनेपर रक्त सहित पीड़ाके साथ धीरे धीरे अथवा बिना पीड़ाके ही मूत्र प्रवृत्ति होती है तब कुपित वायुसे उत्पन्न इस व्याधिको मूत्रोत्संग कहते हैं।

मूत्रक्षय—रूक्ष एवं थकित शरीर वालेके मूत्राशयमें रहने वाले पित्त तथा वायु, मूत्रक्षय, वेदना तथा दाहको उत्पन्न कर देते हैं।

मूत्र ग्रन्थि—मूत्राशयके भीतर सहसा गोल, स्थिर छोटे आँवलेके बराबर तथा अश्मर्रके समान पीड़ा वाली ग्रन्थि उत्पन्न हो जाती है।

मूत्र शुक्—मूत्रके वेग होनेपर बिना मूत्र त्याग किये ही स्त्री प्रसंग करनेसे स्थानच्युत वीर्यको वायु ऊपरको चढ़ा देता है। तब मूत्र त्याग करते समय मूत्र त्यागके पूर्व या पश्चात् राख मिश्रित जलके समान निकलता है। इसे मूत्र शुक् कहते हैं।

इसका कारण मेरे अभिप्रायसे तो यह हो सकता है कि मैथुनके समय प्रवृत्त हुए वीर्यका कुछ भाग नलिका

चिपका हुआ रह जाता है तथा मूत्र त्यागके समय वह उसके साथ बाहर आ सकता है।

उष्ण वात—अधिक व्यायाम करनेसे, माग चलनेसे तथा धूप सेवन करनेसे पित्त मूत्राशयमें जाकर वायु द्वारा आवृत होकर मूत्राशय, लिंग तथा गुदामें दाह उत्पन्न कर देता है। तब रोगी कष्टके साथ बार बार हल्दीके समान कुछ लाल अथवा रक्त मिश्रित मूत्र त्याग करता है।

मूत्र साद—यदि पित्त, कफ अथवा दोनों ही वायुद्वारा घन हो जायें तो रोगी कठिनाईसे पीला, लाल अथवा श्वेत वंशलोचन अथवा शंख चूर्णके समान वर्णका अथवा उक्त सम्पूर्ण वर्णका दाहयुक्त, अल्प मात्रामें तथा गाढ़ा मूत्र त्याग करता है।

विडू विघात—रूक्ष तथा दुर्बल मनुष्योंका वायु द्वारा ऊपर ले जाया गया मल जब मूत्र स्रोतमें चला जाता है तब मनुष्य कष्टके साथ मल मिश्रित अथवा मलकी गन्धसे युक्त मूत्र त्याग करता है।

वस्ति कुण्डल—शीघ्र मार्ग चलनेसे, अधिक श्रमसे, चोट लग जानेसे अथवा दवानेसे मूत्राशय अपने स्थानसे उठकर गर्भके समान मोटा हो जाता है। तब रोगी शूल, कम्पन तथा दाहसे पीड़ित होता है। और मूत्र बूंद बूंद करके टपकता है। दवानेसे मूत्रकी धार निकलती है। धार निकलते समय स्तम्भ तथा पीड़ा होती है। इस शूल और विषके समान तत्काल अथवा विलम्बसे अवश्य मार डालने वाले महा घोर व्याधिको वस्ति-कुण्डल कहते हैं।

इसप्रकार तरह मूत्राघातोंको साधारण तौरपर कारण और लक्षण सहित हमने जाना। आयुर्वेदके मतानुसार उपरोक्त तरह प्रकारके मूत्राघात होते हैं।

जानना यह भी आवश्यक है कि मूत्राघात और मूत्रकृच्छ्रमें क्या अन्तर है।

मूत्र कृच्छ्रमें मूत्र तो उतरता है परन्तु बड़े कष्टके साथ। मूत्राघातमें मूत्र उतरनेकी प्रवृत्ति ही हास हो जाती है अथवा दोनोंमें यह अन्तर है।

इस रोगके निम्न लिखित मुख्य कारण होते हैं।—

(१) मूत्राघात अर्थात् मूत्र मार्गसे किसी अवरोधकी उत्पत्ति। यह अवरोध कई स्थानोंपर उत्पन्न हो सकता है।

(अ) मूत्राशयकी प्रीवापर जहां मूत्र मार्ग प्रारम्भ होता है। यदि वहां अथवा मूत्राशयमें किसी दूसरे स्थानपर कोई अर्बुद उत्पन्न होता है तो मूत्रमार्ग रुक जाता है। यदि बस्तिमें उत्पन्न हुआ कोई अर्बुद मूत्रमार्गको बाहरकी ओर से दबाता है। अथवा मूत्राशयमें चोट लगनेसे रक्त प्रवाह होकर रक्त जम जाता है तो मूत्र मार्गके अवरोधसे मूत्र प्रवाह बन्द हो जाता है।

(आ) मूत्र मार्गके दूसरे भागमें जो पौरुष ग्रन्थिके द्वारा निकल कर आता है अवरोध उत्पन्न हो सकता है। ग्रन्थिकी वृद्धि, अर्बुद, विद्रधि, तथा अश्मरी मूत्रमार्गके इस भागको दबा कर मूत्र प्रवाहको रोक देते हैं। इसे अष्टीला जन्य मूत्राघात कहते हैं।

(इ) इसीप्रकार मूत्रमार्गके तीसरे कलाकृत भागमें विद्रधि तथा संकिरण के उत्पन्न होनेसे मूत्र प्रवाह रुक जाता है।

(ई) मूत्र मार्गमें किसी स्थानपर अश्मरीके अटकनेसे भी मूत्रका निकलना बन्द हो जाता है।

(उ) मूत्र मार्गके बहिर्छिद्रके भीतरकी ओर स्थित कठिन व्रणसे भी मूत्रावरोध उत्पन्न हो सकता है।

(२) नाडी सम्बन्धी विकारोंसे भी मूत्रावरोध उत्पन्न हो जाता है। जब किसी कारणसे मूत्र मार्गकी संकोचक पेशी, उत्तेजक और प्रसारक पेशी दुर्बल हो जाती है तो मूत्राशयका द्वार इतना संकुचित हो जाता है कि उससे मूत्र बाहर नहीं निकल सकता। यह दशा केवल मानसिक रोगों अथवा अवस्थाओंसे उत्पन्न होती है। जिनको अभ्यास नहीं है वह दूसरे व्यक्तिके सामने मूत्र त्याग नहीं कर सकते। जननेन्द्रियोंपरके शस्त्र कर्मों के पश्चात् प्रायः मूत्रावरोध उत्पन्न हो जाता है। नाडी मण्डलके कुछ रोगोंमें भी ऐसा ही होता है।

(३) मूत्रमार्गके शोथके कारण (जैसा पूयमेहमें होता है) मूत्र त्याग नहीं हो पाता।

(४) कभी कभी मूत्र त्यागकी इच्छा होती है परन्तु उसे दबाने और उसी दशामें कुछ समय तक बैठे रहनेसे भी मूत्र प्रवाह रुक जाता है। दफ्तरों या स्कूलोंमें जब मूत्र त्यागका अवसर नहीं मिलता और बहुत समय तक बैठे रहना पड़ता है तो ऐसी दशा उत्पन्न हो जाती है।

मुख्यतया मूत्रावरोध दो प्रकारसे उत्पन्न होता है—

(१) तरुण अवरोध—जो थोड़े ही समयमें अर्थात् तत्काल उत्पन्न हो जाता है। इसका कारण प्रायः शोथ होता है।

(२) जीर्ण अवरोध—जो धीरे धीरे उत्पन्न होता है। यह प्रायः संकिरण (Stricture) का फल होता है। पूयमेहमें उत्पन्न हुए मूत्र मार्गमें स्थित व्रणोंके मरनेसे वहांपर जो सौत्रिक धातु बनती है वह कुछ समयमें संकुचित हो जाती है। इससे मूत्र मार्गमें संकीर्णता उत्पन्न होकर मूत्रमार्गमें बाधा उत्पन्न कर देती है।

इस कारण रोगीसे पूछ लेना चाहिये कि मूत्रका निकलना अकस्मात् बन्द हुआ या धीरे-धीरे मूत्रकी धार क्रमशः पतली हुई अथवा मूत्र रुक रुक कर आने लगा। पौरुष ग्रन्थिकी वृद्धिमें रोगीको बार-बार मूत्र आता है। विशेषकर रात्रिके समय अधिक आता है। मूत्रके साथ पूयका आना मूत्र मार्गके शोथका सूचक है। यदि पूय पतला है व बहुत दिनोंसे आ रहा है तो जीर्ण शोथ समझना चाहिये।

कभी कभी मूत्र मार्गके द्वार पर रक्तकी कुछ बूंदें दिखाई देती हैं। ये प्रायः मूत्र मार्गमें किसी क्षतके हो जानेसे आती हैं। पौरुष ग्रन्थिसे भी रक्त आ सकता है। यदि अवरोध संकिरणके कारण है तो उसकी भी स्थिति जानना आवश्यक है।

मूत्राघात और आधुनिक मत—

(१) वातकुण्डलिका (Pneumaturia)—इस रोगमें मूत्र द्वारसे मूत्रके साथ आगे या पीछे अथवा

अन्य समयों पर वायु निकलती है। यह दो प्रकारका होता है। (१) स्वतन्त्र (२) विड्विधात जन्य। स्वतन्त्र प्रकारमें मूत्र मार्गमें आन्त्र दण्डाणुके उपसर्गसे मूत्रमें सड़न होनेसे होता है। यह अधिकतर मधुमेहके रोगियोंमें पाया जाता है।

विड्विधात जन्य प्रकारमें मूत्रके साथ मल और वायु दोनों ही निकलते हैं। अथवा यदि नाड़ी व्रण इतना संकीर्ण हो कि मल न आ सके तो केवल वायु आती है। दोनों प्रकारोंमें मूत्र रुक रुक कर एवं कष्ट सह हो सकता है। तथा स्वतन्त्र प्रकारमें वायुसे मूत्राशयमें आध्मान हो सकता है।

(२) अश्लीला (Distention of bladder due to retention of urine and faeces)—अनेक स्थानिक एवं सार्वदेहिक रोगोंमें मल मूत्रावरोध होकर रुद्ध एवं मूत्राशय अथवा दोनोंमें से एक अत्यधिक फूल जाते हैं। अर्बुदकी उत्पत्ति होनेपर भी उभार प्रकट होता है।

(३) वातवस्ति (Spasm of the urinary Sphincter) मूत्र रोकनेसे अथवा वातनाड़ी संस्थानके रोगोंसे मूत्र मार्गकी संकोचनी पेशीका स्तम्भ होकर पूर्ण मूत्रावरोध हो जाता है। मूत्राशय फूल जाता है। उसमें पीड़ा तथा स्तम्भिक आक्षेप होते हैं।

(४) मूत्रातीत* (Chronic Retention of urine). चिरकारी मूत्रावरोध सदैव अपूर्ण मूत्रावरोध हुआ करता है। इनके प्रधान कारण पौरुष ग्रन्थिकी वृद्धि, चिरकारी मूत्र नलिका प्रदाहके कारण उत्पन्न सांकीर्ण, नव वृद्धि (अर्बुद आदि) अथवा सुषुम्णाके रोगोंमें उत्पन्न मूत्राशय दीर्घत्व हैं। रोगीको बारम्बार मूत्र त्यागके लिये जाना पड़ता है। रात्रिमें भी कई बार उठना पड़ता है। मूत्र कुछ रुकावटके साथ उतरता है। पीड़ा प्रायः नहीं होती। बारम्बार मूत्र त्याग करनेपर भी मूत्राशयमें काफी मात्रामें मूत्र भरा रहता है।

(५) मूत्रजठर (Distention of the bladder) मूत्रके प्रवाहमें किसी भी कारणसे रुकावट होनेपर मूत्राशय फूल जाता है तथा उसमें पीड़ा

होती है।

(६) मूत्रोत्संग (Urethral obstruction in the Urinary Flow)—यह लगभग मूत्रातीतके समान है। किन्तु इसमें अवरोधका स्थान मूत्रनलिकामें ही रहता है। इसमें अपूर्ण तथा पूर्ण मूत्रावरोध होता है।

(७) मूत्रक्षय (Oliguria, Pathological Diminution of urine)—उष्ण वातावरणमें रहनेके कारण अधिक स्वेद निकलना, पानी कम पीना, वमन-अतिसारके द्वारा अत्यधिक जलीय धातुका क्षय, स्तब्धताका निपात, वृक्क प्रदाहकी तीव्र अवस्था आदि कारणोंसे मूत्रकी मात्रा घट जाती है। मूत्र गहरे वर्णका एवं गर्म उतरता है तथा उतरनेमें कुछ कष्ट हो सकता है।

(८) मूत्रग्रन्थि (New growth at the urethral Orifice)—मूत्र मार्गमें कई प्रकारके सौम्य एवं घातक अर्बुद पैदा होते हैं। यदि वे मूत्र नलिकाके मुखके पास या भीतर हों तो मूत्रावरोध होता है।

(९) मूत्र शुक्—

(१०) उष्णवात—इसके दो भेद हैं (१) मूत्रक्षय (२) रक्त मेह। व्यायाम, मार्ग गमन, सूर्य सन्ताप आदिकी अधिकतासे मूत्र कम, गाढ़ा एवं गर्म उतरता है। जिससे बहुत दाह होती है वह मूत्रक्षय (Oliguria) कहलाता है।

उपरोक्त कारणोंसे अथवा रक्त स्रावी रोगोंसे मूत्रमार्गमें रक्त स्राव होकर रक्त मेह होता है। जिसमें रक्त मिश्रित मूत्र बाहर आता है।

(११) मूत्र साद—मूत्रमें वसा, पूय, रक्त मिले होनेपर मूत्रमें गाढ़ापन तथा उन्हीं पदार्थोंके समान वर्ण उत्पन्न हो जाता है। इन्हीं पदार्थोंकी अत्यधिक मात्रा होनेपर मूत्र काफी गाढ़ा हो सकता है और उतरनेमें कष्ट हो सकता है।

(१२) विड्विधात—मूत्राशयान्त्रीय नाड़ी व्रणके द्वारा मूत्राशयका सम्बन्ध आन्त्रसे हो जानेपर मूत्रके साथ मल भी आने लगता है। इससे मूत्रावरोध और मूत्रकृच्छ्र हो सकता है। कभी कभी विषाके साथ अपान वायु भी आती है। और छिद्र अत्यन्त छोटा होनेपर केवल अपान वायु ही आती है।

* मूत्रातीत नाम जिस विशेष स्थितिके लिए दिया है उससे मूत्रमार्गका साम्य नहीं है। इसलिये इसको मूत्रातीत नहीं प्रतीत होता।

(१३) बस्ति कुण्डल—यह निश्चित रूपसे मूत्राशय और मूत्र नलिकाका वेष्टन है। इस रोगमें मूत्राशय अपने स्थानसे हटकर ढँठ जाता है। जिससे मूत्र संचय और मूत्र त्यागकी क्रियाएँ अवरुद्ध हो जाती हैं। ढँठे हुए भागका प्रदाह होता है। जिससे कफकी तथा बादकी दशाओंमें पूयकी उत्पत्ति होती है। यह दोनों दशायें असाध्य हैं। कई ग्रन्थोंमें स्त्रीके मूत्राशय का उलटकर बाहर आजाना और मूत्राशय च्युति जन्य वंक्षणगत वृद्धिका उल्लेख मिलता है। आधुनिक विद्वान् मूत्राघातके निम्न कारण मानते हैं।

- (१) मूत्र नलिकामें सांकर्य
- (२) पौरुष ग्रन्थिकी वृद्धि
- (३) अश्मरी
- (४) मूत्राशयका वृन्त युक्त अवर्तुद
- (५) गर्भाशय च्युति
- (६) अधरांग घात
- (७) हिस्टीरिया
- (८) उदर गुहा आदिकी पीड़ाओंके कारण मूत्रमार्गकी संकोचनी पेशीका स्तम्भ।

इस प्रकार इस रोगके होनेके वे लक्षण जो मैंने पूर्वमें बताये हैं समान ही हैं।

चिकित्सा:—

आयुर्वेदके मतसे चिकित्सा—१-पीड़ा युक्त मूत्राघातमें स्नेहन तथा स्वेदन किये हुये मनुष्यको स्नेह युक्त पदार्थसे विरेचन देकर उत्तर बस्ति देनी चाहिये।

नरकुल, कुश तथा खरेंटीके काथको मिश्री मिला कर पीनेसे मूत्राघात दूर हो जाता है।

चार तोले गोजिह्वाके जड़का क्वाथ बनाकर उसमें मधु तथा मिश्री मिला कर पीनेसे मूत्रावरोध नष्ट हो जाता है।

कपूरके चूर्णको बकरी अथवा भेड़के दूधमें पीस कर कपड़ेकी बत्तीपर लेप करके लिंगमें रखनेसे तीव्र मूत्रावरोध नष्ट हो जाता है।

खम्भार, पाषाणभेद, शतावरी, चित्रक, कुटकी,

तालमखाना, बच, छारछरीला तथा गोखरू इन सबको महीन पीस कर मदिराके साथ पीनेसे मूत्राघात नष्ट हो जाता है।

सयूर शिखाकी जड़को चावलके साथ पीनेसे तथा दुग्ध भोजन करनेसे हर प्रकारका मूत्रावरोध शीघ्र ही दूर हो जाता है।

मालुकाइन तथा सकोय और तैल कन्दके मूलको पीसकर मिश्री तथा जवाखार मिलाकर इसके रसके साथ पीनेसे बस्ति कुण्डल नष्ट हो जाता है।

पिसे हुए चन्दनको मिश्री मिलाकर चावलके धोवनके साथ पीनेसे उवाले हुए शीतल दुग्धके साथ भोजन करनेसे रक्त युक्त उष्णघात नष्ट हो जाता है।

आधुनिक मतसे चिकित्सा—आधुनिक मतके अनुसार, कारणके अनुसार चिकित्सा करनी चाहिये।

यदि मूत्र मार्गमें तरुण शोथ है तो जहाँ तक हो सके शस्त्रोंको बस्तिमें प्रविष्ट न करावें। शस्त्रोंद्वारा संक्रमणके मूत्र मार्गसे मूत्राशयमें पहुँचनेका डर होता है। रोगीको उष्ण जलसे स्नान और उष्ण जलसे भरे हुए टबमें कटि प्रदेश तक बिठा देना चाहिये।

अगर इस प्रकार मूत्र त्याग न हो तो बस्ति कर्म करना चाहिये। आधा या एक औंस उष्ण ग्लोसरीनको मूत्रमार्गद्वारा प्रविष्ट कराना चाहिये।

पौरुष ग्रन्थिसे वृद्धिके कारण हुए अवरोधमें साधारण तथा कैथीटर ही काममें लाया जाता है परन्तु इसमें साधारण कैथीटर काममें नहीं आता। क्योंकि ग्रन्थि वृद्धिके कारण मूत्र मार्ग टेढ़ा हो जाता है। उससे एक या दो स्थानोंपर मोड़ उत्पन्न होजाते हैं। उसकी लम्बाई भी अधिक हो जाती है। इस कारण ऐसी दशाओंमें प्रयोग करनेके लिये विशेष प्रकारके कैथीटर आते हैं। एक मोड़ वाला कैथीटर 'कूडे' (Coude) तथा दो मोड़ वाला कैथीटर बाई कूडे (Bicoude) कहलाता है। उनका प्रयोग करना चाहिये।

संकिरणसे उत्पन्न हुये मूत्रमार्गमें भी कैथीटरकी ही परीक्षासे चिकित्सा की जाती है। वंचोंमें कभी कभी अश्मरीके अटक जानेसे

मूत्राघात उत्पन्न हो जाता है। कभी कभी उनको केवल पेटके बल लिटा दिया जाता है। अथवा घुटनोंके बल आगेकी ओर झुका देनेसे भी मूत्रावरोध खुल जाता है।

कभी कभी अश्मरी मूत्राशयके अग्रिम भाग पर आकर रुक जाती है। यदि ऐसा हो तो अश्मरीको दशसे पकड़कर खींच लिया जाता है। यदि वह मूत्र मार्गके पीछेकी ओर स्थित हो तो धातुके कैथीटर या सकिरण शलाकासे उसको पीछेकी ओर मूत्राशयमें ठेल देना उचित होता है। जिससे मूत्र मार्ग खुलकर मूत्र बाहर आजावेगा।

इसके साथ ही निम्न योग देनेसे भी मूत्रावरोध शीघ्र दूर होकर मूत्र बाहर आने लगता है।

| | |
|----------------|-----------|
| टि० हायोसाइमस | २० मि० |
| यूरोट्रोपीन | १० ग्र० |
| पोटास साइट्रास | २० ग्र० |
| पोटास ऐसीटेट | २० ग्र० |
| स्पिरिट जूनीपर | १० मि० |
| एक्वा | कुल १ औंस |

ऐसी मात्रा २-२ घण्टेमें तीन चार बार दें।

यूरा (डावर) की दवा है। यह तीव्र प्रकारके तथा हर प्रकारके मूत्रावरोधमें कार्य करती है।

इस प्रकार उपरोक्त किसी भी क्रमसे चिकित्सा की जाती है।

हां, कैथीटरका प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि इस पर दबाव नहीं देना चाहिये।

मूत्रावरोध कोई असाध्य रोग नहीं है।

आजके डालडा युगमें जो अनेकानेक बीमारियाँ अकस्मात् पैदा हो जाती हैं, उन सभी को

कृष्ण-गोपाल की गम्भीर चुनौती

पाचन सुधा

उदर की ऊष्मा, तज्जनित उदरस्थ अवयवों की अव्यवस्थिततासे होने वाली समस्त

बीमारियाँ इसके सेवनसे भाग खड़ी होती हैं। जैसे—

★ ववासीर

★ यकृत-प्लीहावृद्धि

★ गुल्म

★ आमग्रहणी

★ अजीर्ण

★ आम्रातिसार

— आदि —

पेटमें गैस की उत्पत्ति होती है। उन सबों को 'सुधा' की तरह 'पाचन सुधा' दूर कर देती है।

परीक्षा प्रार्थनीय है।

विषूचिकाकी अनुभूत चिकित्सा

लेखक—वैद्य सुरेश चन्द्र शर्मा "गौड़"

प्रधान चिकित्सक, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय, मोहनगढ़
जिला-जैसलमेर (राजस्थान)

अनुभवी लेखकने अपने दैनिक अनुभवके आधारपर जो इस लेखमें लिखा है वह अवलोकनीय है। निश्चय ही लेखककी ऊहापोहकी वृत्ति श्लाघ्य है। ऐसी प्रवृत्तिसे नवीन क्षेत्रोंका उद्घाटन होता है और नवीन सत्योंका प्रकाश भी होता है। आशा है कि लेखक आयुर्वेदीय चिकित्सापर और भी विशेष ध्यान देकर अपने नवीन अनुभवोंको प्रकाशित करेंगे। —सम्पादक

एक समय था कि विषूचिका (हैजा) का नाम सुनकर भी लोग इतना डरते थे कि कभी-कभी कई व्यक्ति विषूचिकासे मरे व्यक्तिका हाल सुनकर भी तत्काल रोगी होकर मर जाते थे। ऐसा क्यों हुआ ? इसका कारण यह था कि महायुद्धमें बमोंके विस्फोट एवं इनके विस्फोटोंसे मृत प्राणियोंके अन्तिम संस्कारके अभावसे वायुमण्डलके दूषित हो जानेके कारण यह रोग जनपदोर्ध्वसके रूपमें फैला करता था। दूसरे उसी समयमें अनगिनत आत्महत्याएँ एवं अन्य हत्याएँ कुओंमें पड़कर भी बहुत होती थीं। इस कारणसे भी पेय जलके दूषित हो जानेके कारण ऐसा हुआ। तीसरे आजकलकी भांति उस समय जहाँतहाँ अच्छे चिकित्सक भी नहीं थे। इस कारणसे भी इस रोगने अपना नाम इतिहासमें अमर किया। किन्तु समय बदला प्राणी मात्रके लिये सुख सुविधाका ध्यान हुआ, विज्ञान बढ़ा। चिकित्साचार्योंने इस रोगपर विचार किया, और इस रोगका नाम और काम भी कम हुआ।

मुख्य कारण कीटाणु मानती है, जबकि आयुर्वेद इस रोगका मूल कारण अजीर्ण मानता है। ये दोनों बातें ही ठीक हैं। चूंकि आयुर्वेद भी कीटाणुवाद मानता है। किन्तु यहाँ यह शंका होती है कि जब यह रोग अजीर्णसे होता है, तब क्या एकदम हजारों हैजाके रोगियोंको अजीर्ण हो जाया करता है। वस्तुतः बात यह है कि यह रोग अजीर्णसे भी होता है, और कीटाणुओंसे भी। किन्तु विषूचिकामें अजीर्णका अनुबन्ध अवश्य रहता है, चाहे अजीर्ण कीटाणु जन्य ही क्यों न हो ! अथवा यों कहिये कि वह कीटाणु पहले अजीर्ण पैदा करता है, और उसी अजीर्णसे हैजाकी उत्पत्ति होती है।

इसका नाम विषूचिका क्यों पड़ा ? चूंकि इस रोगमें अजीर्णसे वायु बिगड़कर सुई चुभोने जैसी शरीरमें पीड़ा होती है, इससे इसका नाम विषूचिका पड़ा।

लक्षण—वेहोशी, कै, दस्त, प्यास, शरीर और पेटमें शूल, चक्कर, ऐंठन, जंभाई, दाह, चेहरा उतर जाना, शरीर काँप, हृदयमें पीड़ा हो, शिरमें दर्द हो।

आधुनिक चिकित्सा पद्धति (एलोपैथी) इस रोगका

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

एवं नींद न लगे वैचेनी रहे, शरीर कांपे, पेशाब न उतरे, बेहोशी रहे यह इस रोग की दूसरी स्टेज (अवस्था) है।

यदि इस रोगकी दशामें रोगीका पित्त एवं उदान वायु कमजोर होते हैं तो उस दशामें यह रोग अलसकका रूप ले लेता है और "विलम्बिका" इसी रोगका दूसरा रूप है। अलसकमें पेट खूब फूला रहता है, बेहोशी, रोगी गीड़ासे कराहे, रुका हुआ वायु पेटमें ऊपर हृदय कण्ठ तक जाकर दर्द करे, पाखाना, पेशाब, हवा एकदम बिल्कुल न हो, प्यास लगे और डकार आवे, इन लक्षणोंसे युक्त रोगीको अलसक जानना चाहिये। "अलसक" और "विलम्बिका" में केवल इतना अन्तर है कि "अलसक" में दर्द वगैरह लक्षण बड़ी तेजीसे होते हैं, और "विलम्बिका" में ये लक्षण उतनी तीव्रतासे नहीं होते हैं, किन्तु 'अलसक' से अधिक कष्टसाध्य है।

आयुर्वेदिक चिकित्सा

(१) विषूचिकाकी प्रारम्भिक दशासे लेकर अन्तिम दशा तक खुरासानी अजवायन ८ रत्तीसे १० रत्ती तक, उबालकर ठण्डा किये हुये पानीके साथ देनेसे रोगमें तत्काल लाभ होता है। अजवायन (पारसीक यवानिका) को तबेपर धीमी २ आंचमें भूनकर काममें लें।

(२) रोगकी गम्भीरताकी दशामें भुनी हुई पारसीक यवानिका ८ रत्ती, सूतशेखर रस ८ रत्ती, शीघ्र भस्म १ मासा, संजीवनी वटी ५ रत्ती मिलाकर हर एक घण्टेके पश्चात् प्याजके रस अथवा मधुसे दें।

(३) तृतीय अवस्थामें जब रोगीका शरीर बिल्कुल ठंडा पड़ गया हो, एवं बेहोशी अधिक हो गई हो तो, उक्त योगमें खुरासानी अजवायन एवं सूतशेखर रसकी आधी मात्रा कर दें एवं 'हेमगर्भ पोटली रस' १ रत्ती, (२) सुवर्ण साक्षिक भस्म ४ रत्तीकी मात्रा प्याज अथवा मधुके साथ और मिलाकर देनेसे रोगी ठीक हो जाता है।

ध्यान रहे खुरासानी अजवायनकी उपरोक्त मात्रा वयस्क रोगीकी मात्रा है। अतः बाल एवं वृद्धोंमें मात्रा विचारकर दें। पूर्वकी मात्रामें खुरासानी अजवायनकी

मात्रा ८ रत्ती ही रखें, किन्तु ज्योंही रोगीकी दशामें सुधार दीखे त्योंही मात्रा बिल्कुल कम कर दें। और यही बात हेमगर्भ पोटली रसकी है।

अलसक एवं विलम्बिकाकी चिकित्सामें रोगीको आककी डोडी पीसकर दे दें। इससे वमन होकर रोगमें शान्ति मिलेगी। बच्चों एवं वमन अयोग्य रोगियोंमें गरम पानीमें नमक मिलाकर यथोचित मात्रामें एनिमा देनेसे दस्त हो जायेंगे। कै और दस्तके बाद रोगीको तत्काल बाद दीपन-पाचन औषधि जैसे कव्याद रस, हिंमवष्टक चूर्ण, शिवाक्षार पाचन चूर्ण दें। ध्यान रहे कि 'अलसक' एवं विलम्बिकाकी दशामें कै, दस्त कराये बिना शूलघ्न औषध भूलकर भी न दें। किन्तु बादमें दीपन-पाचन औषधियोंके साथ अथवा केवल खुरासानी अजवायन अकेली देनेपर दर्द एवं ऐंठन शान्त होकर निद्रा आजाती है एवं दीपन-पाचन क्रिया स्वाभाविक रूपसे होनी शुरू हो जाती है।

नोट—यदि औषधि कै के साथ बाहर आजाये तो उसके १० मिनट बाद दूसरी मात्रा आधी मात्रामें दें। पीने एवं रोगीके व्यवहार हेतु उबालकर ठण्डा किया हुआ पानी काममें लें।

ऐलोपैथिक चिकित्सा

(१) इस रोगमें जितना श्रेय ऐलोपैथिकको है उतना अन्य किसी भी चिकित्सा पद्धतिको नहीं है। इस रोगकी प्रत्येक दशामें बहुत सफल चिकित्सा है। वह है पूर्ण वय रोगीको "कैलसियम ग्लुकोनेट" १० सी. सी० में ऐड्रेनालिन क्लोराईड '१ मि. लि.' देनेसे तत्काल ठीक हो जाता है। इसके लगनेके बाद १ उल्टी एवं एक आध दस्तसे अधिक नहीं होती है। यदि रोगीको अफारान हो और उल्टी-दस्त अभीष्ट न हो तो यही इन्जेक्शन बहुत धीरे-धीरे अर्थात् २० मिनटमें लगावें तो और भी अधिक लाभ होगा।

(२) यदि रोगीके शरीरका जलांशीय भाग बहुत निकल गया हो, अथवा रक्त वमन होकर बहुत दुर्बलता आ गई हो तो आवश्यकतानुसार ग्लुकोज-सैलाइन विथ कोरामिन भी देना आवश्यक है।

रक्त वमन आदि होकर कभी कभी रोगीकी दशा बहुत खराब होजानेपर चैन नहीं मिलता। इस दशामें ग्लुकोज एवं कोरासिन धीरे धीरे इन्जेक्शन से दें। श्वसन काठिन्यमें लौह फुफ्फुसोंसे श्वसन क्रिया करायें। एवं रोगीको गरमी देनेका प्रयत्न करें। बोतलोंमें गरम पानी भरकर सेक करनेसे गरमी आती है। इस प्रकार कुछ देर पश्चात् हाथ अथवा पैरकी कोई शिरा मिल जाने पर दथेच्छ मात्रामें ग्लुकोज सैलाईन विद कोरासिन दें। यदि इस बीचमें पूर्व 'कैलसियम ग्लुकोनेट' विद "एड्रेनालिन क्लोराईड" नहीं दिया गया है और वमन एवं दस्त चालू हो गये हैं तो सैलाईन रोककर उपरोक्त इन्जेक्शन दें। और यदि ज्यादा आवश्यकता समझें तो पुनः और सैलाईन दें।

बच्चोंमें नसद्वारा इन्जेक्शन देनेमें बहुत कठिनाई होती है ऐसी दशामें "कैलसियम ग्लुकोनेट एवं एड्रेनालिन क्लोराईड" आवश्यक मात्रामें पृथक् पृथक् दें। कभी कभी बच्चोंके "ग्रीष्मातिसार" को हैजा समझनेका भ्रम होजाता है। ऐसी दशामें यह इन्जेक्शन लाभ दायक नहीं है। बच्चोंकी विपूचिकामें "बडौत फार्मेस्युटिकलका" विपूचिकान्तक इन्जेक्शन अत्यन्त लाभदायक है। चूँकि यह इन्जेक्शन इन्ट्रामस्क्युलर किया जाता है। २-३ इन्जेक्शनोंसे पूर्ण लाभ हो जाता है।

(३) अलसक, और विलम्बिकाकी दशामें कैलसियम ग्लुकोनेट विद एड्रेनालिन क्लोराईडके देनेसे तत्काल वमन और दस्त होकर लाभ होता है। किन्तु 'अलसक' और 'विलम्बिका' की दशामें पहले नमक मिश्रित गरम पानीका एनिमा लगायें, ताकि दस्त हो जायें, यदि इससे दस्त न हो तो तत्काल उपरोक्त इन्जेक्शन लगा दें। निश्चय ही आराम होगा। किन्तु यह इन्जेक्शन अलग अलग अथवा मांसगत देनेसे कै और दस्त नहीं होंगे, जिससे बच्चोंको इस दशामें कोई लाभ नहीं होगा। अतः बच्चोंमें वमन और दस्तोंके लिये "कार्वेकाल" के इन्जेक्शनकी उचित मात्रासे यह कार्य सम्पन्न होजाता है।

अक्सर ऐसा होता है कि उपरोक्त सभी अवस्थाओंमें कै और दस्त बन्द हो जानेपर भी या दस्त और कै हो जानेपर भी उत्क्लेश, ऐंठन, एवं अनिद्रा आदि दोष स्वाभाविक तौरसे रह जाते हैं ऐसी दशामें 'लारजैक्टोल' 50 M. G. का प्रयोग करनेसे तत्काल लाभ होकर निद्रा आजाती है। प्यास लगनेपर पानीमें पौदीना एवं इलायची डालकर पकाये हुए पानीका औषध एवं प्यासमें थोड़ा मात्रामें प्रयोग करें। इस रोगमें पश्चात् चिकिरसा दीपन-पाचन करनी चाहिये।

चतुर्भुज रस (विशेष)

यह रस पारद भस्म, सुवर्ण भस्म, मुक्ता पिष्टी आदि मूल्यवान् द्रव्योंको यथा विधि मिलाकर तैयार कराया जाता है। पारद भस्म भी पारदको १६ गुना गन्धक जारण करके बनार्थी हुई मिलार्थी जाती है। जिससे यह रस वृक्ष पीड़ासह वातरोगमें भी निर्भय रूपसे दे सकते हैं।

इस रसका उपयोग वातसंस्थानकी विकृतिसे उत्पन्न सब प्रकारके वात रोगोंपर होता है। इसके अतिरिक्त वातप्रकोपज रोग, अपस्मार, ज्वर, कास, श्वास, राजयक्ष्मा, अग्निमांश, शारीरिक शोष, हस्तकम्प आदि व्याधियोंमें भी हितावह है। विद्याध्ययन करने वालों और मानसिक परिश्रम अधिक करने वालोंको सेवन करानेपर मस्तिष्कको बल प्रदान करता है।

मूल्य—१ ग्राम रु. ८.६५, २ ग्राम रु. १७-१५।

आयुर्वेदकी उन्नतिका एक उपेक्षित मार्ग

लेखक—रामचन्द्र आर्य मुसाफिर

श्री शास्त्रीजीने एक आवश्यक बातकी ओर आयुर्वेद प्रेमियोंका ध्यान आकृष्ट किया है। चरकमें तो कहा ही है—“कृत्स्नो हि लोको बुद्धिमतामाचार्यः” बुद्धिमान् जनोके लिए तो समस्त लोक आचार्य और शिक्षक है। दुर्भाग्यसे आयुर्वेदीय प्राचीन ग्रन्थोंका विलोप हो गया है। परम्परासे प्राप्त होनेवाले अनेक महत्वके विषयोंकी जानकारी आज हमारे पास नहीं रही है। जहां आयुर्वेदके अध्ययन, अध्यापन, अभ्यास तथा अनुसंधान आदि कार्योंमें विकासकी आवश्यकता है वहां अभी तक आयुर्वेदके अनेक अमूल्य प्रयोगोंका संग्रह जन साधारणमें कार्य करने वाले चतुर जनोसे किया जा सकता है। इस बातकी सर्वथा उपेक्षा नहीं की जा सकती।

सम्पादक

बौद्धोंके विनय-पिटकमें महावग्ग नामक एक मनुष्यका वृत्तान्त मिलता है जो इस प्रकार है कि एक दिन उसने तक्षशिलाके विश्व विद्यालयमें आयुर्वेद पढ़ते हुए अपने गुरुसे पूछा कि मुझे विद्यालयमें कितने दिन और रहना होगा? इसपर गुरुने उत्तर दिया कि तक्षशिलाके चारों ओर एक योजन अर्थात् चार-चार कोस तक औषधियोंके अतिरिक्त जितने भी वृक्ष पौधे मिलें; उन सबको एकत्रित कर लाओ। महावग्गने गुरुके इस आदेशके अनुसार निर्दिष्ट क्षेत्रके प्रत्येक पौधेकी परीक्षा की, किन्तु उसे एक भी वृक्ष पौधा उपलब्ध न हो सका।

उसने अपनी शोधका विवरण गुरुके समक्ष प्रस्तुत किया, जिससे गुरुको परम हर्ष हुआ और वे अपने शिष्य महावग्गसे बोले “तुम्हारी शिक्षा पूर्ण हो गई अब तुम घर जा सकते हो।”

विनय-पिटककी इस कहानीसे पता चलता है कि बौद्धकालमें आयुर्वेदकी शिक्षाके समय पुस्तकीय शिक्षाके अतिरिक्त व्यवहारिक शिक्षापर विशेष ध्यान दिया जाता था। जिनके प्रतिमान की हमें प्रायः अभी

ही है। आजके आयुर्वेद विद्यार्थी हरी, सूखी वनस्पतियों आदिके ज्ञानमें अपेक्षित क्षमता नहीं रखते हैं। आजकल मौखिक और प्रायोगिक परीक्षामें छात्रगण एक दूसरेके मुँह ताकते देखे जाते हैं। रोगी परीक्षाके विषयमें उनकी अकुशलता, रोगका ज्ञान करनेमें प्रायः बाधक रहती है। नाड़ी परीक्षा, मूत्र परीक्षा, मल परीक्षा, मुत्राकृति विज्ञान आदिको पूर्णतया जानने वाले वैद्योंका प्रायः अभाव-सा है। ऐसे वैद्य भी सुननेमें आए हैं कि रोगीको देखकर ही क्या रोग है कितने दिनोंसे है? क्यों रोग हुआ इत्यादिका पूर्ण ज्ञान रखते थे।

आवश्यकता है कि आज आयुर्वेदमें जो व्यक्ति उतरें वे अध्ययन विधिपूर्वक करें। और अपने ज्ञानसे रोगी एवं उसके संरक्षकोंको चकित कर दें।

आज भी ग्रामोंमें एक एक रोगके ऐसे विशेषज्ञ पाये जाते हैं कि जिन्होंने पुस्तकें तो नहीं पढ़ीं किन्तु रोग ज्ञान और उसकी चिकित्सामें निष्ठ हैं। रोगीको देखते ही कह देते हैं कि यह साध्य है या असाध्य। अथवा कह देते हैं कि आज प्राणी

भाईयोंके इस ज्ञानसे आयुर्वेद जगत् लाभ नहीं उठा रहा है। मेरी सम्मतिमें ऐसे लोग धूल भरे हीरे हैं जिनसे आयुर्वेदके उद्धारकी बड़ी सामग्री मिल सकती है। ग्रामीण भाई न केवल मनुष्योंके वरन् पशुओंके रोगोंकी चिकित्सा भी करनेमें कमाल करते हैं। ऐसे पशु चिकित्सकोंको यू० पी० प्रदेशमें गोताना नामसे पुकारते हैं। मुझे याद है कि एक बार मेरे छः मासके बालकको पसली चलने का रोग हो गया। यह रोग थोड़ी उपेक्षापर प्राणघातक हो जाता है। मेरा परिवार, माता पिता बड़े चिन्तित थे। गाँव वह भी शहरसे दूर डाक्टरोंका भी अभाव। बड़ी चिन्ता थी। बच्चा जीवन मृत्युके झूलेंमें था कि अचानक एक मुसलमान फकीर भीख मांगने आया। ग्रामोंमें पर्दा तो होता ही नहीं। जैसे ही उसने भिक्षाकी आवाज लगाई। घरवालोंने अनसुनी की। तीसरी आवाजपर मेरी माता कुछ भिन्ना देने गई। फकीर भौंप गया वृद्धा चिन्तित है। सहानुभूतिके स्वरमें बोला अम्मा आज उदास क्यों है? माताने सारा हाल कहा। बच्चेको फकीरने देखा घरमें ही लगी दवाई माताको देनेको कहा। माता थोड़ी भिन्नकी क्योंकि वह दवा जैसी प्रतीत न होती थी फकीरके अनेक सौगन्ध खाने और दैव इच्छापर थोड़ी तोड़कर दी। फकीर भिन्ना लेने गया एक घण्टेमें लौटनेका वादा कर गया। इस बीचमें बच्चेको एक (शौच) हुआ और बच्चा खतरेसे बाहर हो मुस्कराने लगा। माताके प्राणमें प्राण आये। फकीर वादके अनुसार आया, देखा बालक ठीक है। दूसरी बारकी दवासे स्वस्थ ही हो गया। यह दवा क्या थी मामूली पदार्थ है मैंने मेरी माता, पत्नीने सैकड़ों बच्चोंको इस सुप्तकी दवासे स्वस्थ किया है।

कहा जाता है कि बच्चा उत्पन्न होनेके समय जब नाल काटा जावे तो कुछ कस्तूरी उसमें डाल दी जावे और गाँठ लगा दी जावे ऐसे बच्चोंको स्वास याक्ष्मरोग कदापि न होगा। हमने अपने बच्चोंपर इसका प्रयोग किया है। चेचक निकलनेके मौसममें यदि बच्चोंको कुछ खास वनस्पतियाँ घोटकर दे दी जायें तो चेचक कदापि न निकलेगी। बहुतसे ग्रामीण भाई इस प्रयोग

को जानते हैं। आगरा निवासी डा० हरिशंकर जी शर्मा कविरत्न एक बावली नामकी घास देते हैं जो बवासीरमें दो चार बारके सेवनसे ही कमाल करती है।

मुरादाबाद जवाहर संस्कृत पाठशालाके अध्यापक स्वर्गीय पं० वैजनाथ जी शास्त्री होलीके दूसरे दिन जिसे धुरैण्डी कहते हैं एक पेय पदार्थ तय्यार करके अपने समस्त विद्यार्थियोंको पिलाते थे और कहते थे कि तुम्हें इस वर्षमें उदर सम्बन्धी रोग न होगा। इत्यादि

ग्रामीण अपठित जनताके पास आज भी बड़े उत्तमोत्तम प्रयोग हैं किन्तु एक बड़ी बुरी धारणा हम लोगोंमें चल रही है कि हम यदि किसी रोगके विषयमें सिद्ध प्रयोग जानते हैं तो मरते समय साथ ले जाते हैं किसीको बताते नहीं है। अतः मेरी प्रार्थना है और मेरा सुझाव है कि आयुर्वेदज्ञ लोग ग्रामीण जनतामें आयुर्वेद गोष्ठियाँ करें। उनसे प्रयोग मालूम करें। वे जो प्रयोग बतावें उनकी परीक्षा करें और सिद्ध होनेपर उन्हें प्रचारित किया जावे तो निश्चय ही आयुर्वेदकी महान् उन्नति हो सकती है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आजका युग परीक्षा युग है। प्रत्येक बातके वास्ते प्रमाणकी आवश्यकता है। अतः आयुर्वेदको भी परीक्षा युगमें उतरना पड़ रहा है। किन्तु इस विज्ञानकी परीक्षा यदि पुस्तकीय ही होगी तब यह विज्ञान कदापि उन्नति न कर सकेगा। केवल परीक्षा पास व्यक्ति सिवा रोगीके जीवनसे अपना अनुभव प्राप्त करनेके उसके लिये लाभकारी नहीं हैं। इसलिये मेरी प्रार्थना है आयुर्वेद शब्दका जो गहरा रहस्य है तदनुकूल ही रहस्यके ज्ञाता आयुर्वेदके स्नातक वैद्य समाज तय्यार करनेमें कृत प्रयत्न होवें।

विनय-पिटकका महावग्ग इसी प्रकारका वैद्य था उसने गुरुचरणोंमें बैठकर पूर्ण प्रायोगिक अभ्यास किया था इसीसे प्रसन्न हो गुरुने कहा था कि तुम्हारी शिक्षा पूर्ण होगई, अब तुम स्वतन्त्र काम कर सकते हो।

शोध

लेखक—वैद्यराज, श्रीपाद परूलेकर

और

वैद्या (सौ०) सुलोचना परूलेकर

लेखकोंने इस लेखमें शोधके विषयमें सामान्य रीतिसे निदान एवं चिकित्साकी रूप-रेखा प्रस्तुत की है। लेखक महाराष्ट्र वासी हैं अतः हिन्दी भाषामें लिखनेमें कुछ कठिनाता होना स्वाभाविक है। साथ ही अपने प्रदेशकी भाषाका पुट भी अनिवार्य ही है। सामान्य मात्रा आदिके परिवर्तन मात्रके साथ लेख अविकल रूपमें प्रकाशित किया जा रहा है। भाषाका यह रूप भी राष्ट्रकी विविधताके संयोगके कारण पाठकोंको सुन्दर ही प्रतीत होगा।

—सम्पादक

शोध आनेसे पहिले

तत्पूर्वरूपं द्रव्यः शिरायामोऽङ्गगौरवम् । (मा० नि०)

शरीरका दाह होता है। शरीरको जडत्व प्राप्त होता है। और बादमें शोध आता है। शोध आनेकी वजह नीचे जैसी समझना:—

प्रयः शोथा भवन्ति वातपित्तश्लेष्मनिमित्ताः, ते पुनर्द्विविधा निजागन्तुभेदेन । तत्रागन्तवश्छेदन-भेदनक्षानभञ्जनपिच्छनोत्पेषणप्रहारवधबन्धनवेष्टनयधनपीडनादिभिर्वा भल्लातकपुष्पफलरसात्म-गुत्तायकक्रिमिश्रकाहितयत्रलतागुल्मसंस्पर्शनैर्वा स्वेदनपरिसर्पणावमूत्रणैर्वा विषिणां सविषाविष-मण्डिदंष्ट्रादन्तविषाणनखनिपातैर्वा सागरविषवात-हिमदहनसंस्पर्शनैर्वा शोथाः समुपजायन्ते ।

(चरक सूत्र. अ. १८)

आगन्तु शोध

वात, पित्त, कफ इन तीन दोषोंसे तीन प्रकारका

शोध उत्पन्न होता है। उसके भी दो भेद होते हैं, उसका नाम है आगन्तु और निज । आगन्तु शोधमें काटने, फोड़ने, चिबने, हड्डी दबाने, क्षतपर किसीने कोई चीज फेंककर मारा, वैसी भावनाएं होती हैं। आगन्तु शोध की वजह ऐसी है। भिलावेके पुष्प, फल, रस, काँचकी फलीके शूक छोटे (रोयें) जिनके शरीरपर खुजली पैदा करनेवाली बालें रहती हैं, विष जन्य प्राणीके मल, मूत्र इत्यादि, विषाक्त वायु इनका स्पर्श या बर्फपर चलनेसे या अंगार लगनेसे जो शोध पैदा होता है उसको आगन्तु शोध बोलते हैं।

निज शोध

निज शोधके बारेमें अब सोचेंगे उसकी वजह निम्न होती है।

निजाः पुनः स्नेहस्वेदवमनविरेचनास्थापनानु-वासनशिरोविरेचनानामयथावत्प्रयोगात् मिथ्या-संसर्जनाद्वा लघ्वलसकविस्त्रुचिकाश्वासकासातिसा-रशोषपाण्डुरोगज्वरादिरप्रदरभगन्दराशौविकाराति-

कर्षणैर्वा कुष्ठकण्डूपिडकादिभिर्वा छर्दिक्षवथू-
द्गारशुकवातमूत्रपुरीषवेगविधारणैर्वा कर्मरोगो-
पवासातिकर्षितस्य वा सहसाऽतिगुर्वल्लवण-
पिष्टान्नफलशकरागदधिहरितकमद्यमन्दकविरूढन-
वशूकशमीधान्यानूपौदक पिशितोपयोगात् मृत्पङ्क-
लोष्टमक्षणांलवणातिभक्षणाद्वा गर्भसंपीडनादामगर्भप्र-
पतनात् प्रजातानां च मिथ्योपचारादुदीर्णदोषत्वाच्च
शोथाः प्रादुर्भवन्तीत्युक्तः सामान्यो हेतुः ॥४॥

(च. सू. उ. अ. १८)

स्नेहन, स्वेदन, वमन, विरेचन, आस्थापन, वस्ति,
शिरोविरेचन आदिक्रिया शास्त्रोक्त न होनेसे वांति,
जुलाव, विसूचिका, दमा, कास, अतिसार, प्यास, पांडु
रोग, ज्वर, उदररोग, प्रदर, भंगदर. अर्श वगैरे
विकारसे शरीर कृश होना और वांति, जंभाई, मल
मूत्रादिका वेग रोकनेसे वमन, विरेचन, नस्य
निरूह, अनुवास, वस्ति, इन पंचकर्मके बाद और
बहुत दिन नहीं खाया हुआ आदमी यदि पहिले ही वक्त
ज्यादा खाले या जब आहार लेनेसे, खट्टा या बहुत खानेसे
नमक बहुत खानेसे, गर्भ छोड़ना या छुटना, सगर्भा
स्त्रीके खुदके बारेमें विशेष ध्यान नहीं देनेसे, वातादि
दोष कुपित होकर शोथ उत्पन्न होता है।

सम्प्राप्ति-विमर्श

रक्तपित्त कफान् वायुर्दुष्टो दुष्टान् बहिः सिराः ।
नीत्वा रूद्धगतिस्तैर्हि कुर्यात्त्वङ्मांससंश्रयम् ॥
उत्सेधं संहतं शोफं तमाहुर्निचयादतः ॥ (अ. ह. नि.)

दोष प्रकोपके कारणोंसे, अभिघातसे, या विष
लग जानेसे, दुष्ट हुआ वायु, रक्त, पित्त और कफको
बाहरी सिराओंमें जाकर और उनसे अवरुद्ध होकर
त्वचा और मांसमें आश्रित होकर सबके सञ्चित होनेसे
उत्सेधयुक्त शोथको उत्पन्न कर देता है। इसीको दूसरे
शब्दोंमें चरक कहते हैं।

बाह्याः सिराः प्राप्य यदा कफासृक्
पित्तानि सन्द्रूषयतीह वायुः ।
तैर्वद्धमार्गः स तदा विसर्प-
न्नुत्सेधलिङ्गं श्वयथुः करोति ॥

शोथके नौ भेद

शोथके नौ प्रकार शास्त्रकारने कहे हैं। उनमेंसे
वातादि दोषसे तीन, दो दोषके संयोगसे तीन, अभिघातसे
एक और विषजन्य दोषसे एक। सब शोथोंमें चमड़ी
भागका ऊपर आना यह समानता होती है। इसलिये
शोथको एक जैसा समझते हैं। जिधर शोथ है उधरका
भाग शून्यवत् भासता है। क्षणमें दर्द होता है। क्षणमें
बंद होता है और दबानेसे दबता है। यह समान
धर्म सब शोथमें एक जैसा होनेसे शोथका सामान्य
लक्षण माना जाता है।

वात शोथ

वातसे जो शोथ उत्पन्न होता है उसे वात शोथ
कहते हैं।

चलस्तनुत्वक् परूषोऽहणोऽसितः

सुषुप्तिर्हर्षातिर्युतोऽनिमित्ततः ।

प्रशम्यति प्रोक्षमतिप्रपीडितो

दिवाबली च श्वयथुः समीरणात् ॥५॥ (मा. नि.)

वातसे जो शोथ उत्पन्न होता है वह चंचल रहता
है याने सरकने वाला होता है। त्वचा पतली और
खुरखुरा होती है। सोया हुआ सा सिहरनयुक्त और
वेदनायुक्त भी होता है। यह शोथ बिना कारण कम
भी होता है। दबानेसे ऊपर आता है। दिनमें ज्यादा
शोथ रहता है।

पित्त-शोथ

पित्तसे जो शोथ उत्पन्न होता है उसे पित्त शोथ
कहते हैं।

पित्तरक्तासिताभासः पित्तादाताम्रोमकृत् ।
शीघ्रोत्थान प्रशमनो मध्ये प्राग्जायते तनुः ॥६॥
सत्तुङ्गदाहज्वर स्वेददक्कलेदमदभ्रमः ।
शीताभिलाषी विड्भेदी गंधी स्पर्शासहो मृदुः ॥७॥
(वा. भ. नि.)

पित्तजन्य शोथ लाल होता है। थोड़ा काला-सा
भी लगता है। बाल भी लाल होते हैं। जल्दी बढ़ता
है। अच्छा भी जल्दी होता है। पहिले मध्यम भागमें
होता है। स्पर्श तकलाफ होती है। गंदगी आती है।

ठंडा पदार्थ लगानेसे समाधान होता है। इस शोथमें प्यास, दाह, ज्वर, पसीना, द्रव्य (आंखोंसे गरम भाप आता) क्लेश, मद, और चक्कर यह विकार होते हैं।

कफ-शोथ

कफसे जो शोथ उत्पन्न होता है उसे कफ शोथ कहते हैं।

कण्डूमान् पाण्डुरो मत्वकठिनः शीतलो गुरुः ।
स्निग्धः श्लक्ष्णः स्थिरः स्त्यानो निद्राच्छर्द्यग्निस्तादृक् ॥
आक्रान्तो नोन्नमेत् कृच्छ्रशमजन्मा निशाबलः ।
सर्वेनासृक् चिरात्पिच्छलां कुशशलादिविज्ञतः ॥
स्पर्शोष्णकाङ्क्षी च कफाद्..... ॥”

कफसे जो शोथ उत्पन्न होता है उसमें कण्डू होती है। खटा और बाल पांडुरवर्णके होते हैं। शोथ कठिन, शीतल, जड़, स्निग्ध, गुरु, स्थिर और घट्ट (मजबूत) होती है। उससे वांति, अग्निमांश आदि विकार उत्पन्न होते हैं। शोथको दबानेपर खड्डा पड़ता है। कफ शोथ उत्पन्न होते समय ही तकलीफ होती है। इसको काटनेसे रक्त नहीं आता। स्पर्शसे सुख होता है।

द्विदोषज या त्रिदोषजशोथ

ऊपरके दोनों दोष एक जगह मिलनेसे जो शोथ होता है उसे द्वंद्वज शोथ कहते हैं। और तीनों दोष मिलनेमें त्रिदोषारमक शोथ कहते हैं।

अभिघातज शोथ

आघातोंसे जो शोथ उत्पन्न होता है उसे अभिघातज शोथ कहते हैं। इसीका वर्णन पहिले आगन्तुज शोथमें हम दे चुके हैं। शस्त्रादिकोंसे जो आघात होता है उससे यह शोथ उत्पन्न होता है।

अभिघातेन शस्त्रादिच्छेदभेदक्षतादिभिः ।
हिमानिलोदध्यनिलैर्भल्लातकपिकच्छुजैः ॥
रसैः शूकैश्च संस्पर्शाच्छ्वयथुः स्याद्विसर्पवान् ।
भृशोष्मा लोहिताभासः प्रायशः पित्तलक्षणः ॥

(मा. नि. ११-१२)

पित्तजन्य शोथमें जो लक्षण होते हैं वे ही इसमें होते हैं।

विषज शोथ

विषमय पदार्थ लगनेसे जो शोथ उत्पन्न होता है। उसे विषजन्य शोथ कहते हैं।

विषजः सविषप्राणिपरिसर्पणमूत्रणात् ।

दंष्ट्रादन्तनखाघाताद्विषप्राणिनामपि ॥

(मा. नि. १३)

विषैले प्राणिके मल-मूत्रादिका स्पर्श होने या जो विषैले नहीं हैं उनके दांत, नखका आघात होनेसे विषजन्य शोथ उत्पन्न होता है। यह शोथ चंचल होता है। इसमें दाह होता है मानों जैसे अंगार पड़ता हो ऐसा लगता है।

शोथ स्थान

दोषाः श्वयथुमूर्ध्वं हि कुर्वन्त्यामाशयस्थिताः ॥१५॥

पक्वाशयस्था मध्ये तु वर्चः स्थानगतास्त्वधः ।

कृत्स्नदेहमनुप्राप्ताः कुर्युः सर्वसरं तथा ॥१६॥

(मा. नि.)

आमाशयमें दोष हो, तो शरीरके ऊर्ध्वभागमें शोथ उत्पन्न होता है। पक्वाशयमें दोष हो, तो शरीरके मध्यभागमें शोथ होता है। मलाशयमें दोष हो, तो शरीरके नीचेके भागमें शोथ होता है और सब जगह दोष हो, तो पूरे शरीरमें शोथ आता है।

चरकस्तु चिकित्सिते

शोथ निदानका वर्णन करनेके पश्चात् अब चिकित्साके विषयमें लिखते हैं। चिकित्साका विषय चरकका है। लिखा है कि—

निदाने माधवः श्रेष्ठः सूत्रस्थाने तु वाग्भटः ।

शरीरे सुश्रुतः प्रोक्तः चरकस्तु चिकित्सिते ॥

चरकमें कहा है :—

निदानदोषर्तुविपर्ययक्रमै-

रूपाचरेत्तं बलदोषकालवित् ।

चिकित्सा करते समय रोगी और रोगका बलाबल देखकर चिकित्सा करनी चाहिये। इस विषयमें निम्न बातोंपर विशेष लक्ष्य रखें।

अथामजं लङ्घनपाचनक्रमै-

विशोधनरूपणदोषमादितः ।

शिरोगतं शीर्षविरेचनैरधो-

विरेचनैरूर्ध्वमधस्तथोर्ध्वगम् ॥

उपाचरेत् स्नेहकृतं विरुक्षणैः

प्रकल्पयेत्स्नेहविधिं च रूक्षजे ।

वियद्बिट्केऽनिलजे निरूहणं

घृतं तु पित्तानिलजे सतिक्तकम् ॥

पयश्च मूच्छीरतिदाहतर्षिते

विशोधनीये तु समूत्रमिष्यते ।

कफोत्थितं क्षारकद्रूपसंयुतैः

समूत्रतक्रासवयुक्तिभिर्जयेत् ॥

(च. चि.)

आम दोष जनित शोथ हो तो प्रथम लह्वन पाचनादि चिकिरसा करनी चाहिये । दोष ज्यादा हो तो वमन विरेचनसे संशोधन करना चाहिये । मस्तक दोष हो, तो नस्य देना चाहिये । शरीरके ऊर्ध्वभागमें दोष हो, तो वमन और निम्न भागमें दोष हो, तो विरेचन या बस्ति, रोगीके बलाबल अनुसार देना चाहिये । अति स्निग्ध आहारसे हो तो रूक्ष; और अति रूक्ष आहारसे हो तो स्निग्ध चिकित्सा करना उचित है । मलारोध-युक्त वातघ्न शोथमें निरूह बस्ति देना और वात पित्तज शोथमें तिक्तघृत देना चाहिये । मूच्छी, वेचैनी, दाह, प्यास हो तो दूध देना चाहिये । यदि संशोधन देनेका हो, तो गोमूत्र मिलावें । कफ जन्य शोथमें चार तिक्त और उष्ण औषधियां मिलाकर तक्र, आसव, गोमूत्रका प्रयोग करें । क्षारके स्थानपर नमकको न लेवें शोथ रोगमें नमक त्याज्य है ।

शोथ रोगमें औषधोपचार

शोथमें सेवन करने योग्य आयुर्वेदमें अनेक औषधियाँ हैं उन सबका उल्लेख करना असम्भव है । किन्तु जो वंशपरम्परागत हमारे अनुभवमें आई हुई हैं उन औषधियोंका ही उल्लेख करते हैं । जो कि शास्त्र सम्मत भी हैं ।

(१) गोमूत्र—

गोमूत्रं कटु तिक्तोष्ण सत्तारं लेखनं सरम् ।

लघ्वग्नि दीपनं मेध्यं पित्तलं कफवातजित् ॥

गुल्मोदरानाह विकारेऽपि शोथोपशान्तिदाम् ॥

मूत्रप्रयोगसारेषु गव्यं सूत्रं प्रयोजयेत् ॥

(यो० र०)

प्रतिदिन १ या २ बार शोथघ्न औषधियोंके साथ गोमूत्र देनेसे वात, पित्त, कफका नाश होकर शोथ शमन होजाता है ।

(२) पुनर्नवा मण्डूर—(रसतन्त्रसारोक्त) २ से ४ रत्तीकी मात्रामें दिनमें २ बार गुड़के साथ दें । ऊपर मट्ठा अथवा जल पिलावें । अथवा निम्न क्वाथके साथ दें ।

(३) पुनर्नवादि क्वाथ—पुनर्नवा, हरड़, नीमकी अन्तरछाल, दाखुलदी, कुटकी, कड़वा परबल (पंचांग), गिलोय, सोंठ, इन ८ औषधियोंको सम-भाग लेकर जो कूट चूर्ण करें ।

इसमेंसे १ तोला लेकर १५ तोले जलमें डालकर उबालें । जब ८ तोले शेष रह जाय तब उतारकर छान कर लगभग १ या २ तोले गोमूत्र मिलाकर दिनमें २ या ३ बार पिलानेसे शोथ रोग नष्ट होजाता है । यह क्वाथ मूत्रल है ।

(४) पुनर्नवादि लेप—पुनर्नवा, सोंठ, सरसों, सुहिजनेकी छाल, देवदारु इन ५ औषधियोंको पानी के साथ शिलापर पीसकर लेप करनेसे शोथ शमन होता है ।

शोथ रोगमें अपथ्य—

ग्राम्यानूपं पिशितलवणं शुष्कशकं नवान्नं,
गौडं पिष्टं दधि तिलकृतं विज्जलं मद्यमश्लम् ।
धाना वल्लूरं समशनमथो गुर्वसात्म्यं विदाहि,
स्वप्नं चारात्रौ श्वयथुगदवान्वर्जयेन्मैथुनं च ॥

ग्राम्य तथा आनूप जीवांका मांस, लवण, सूखा शक, नया अन्न (जो १ वर्ष पुराना न हुआ हो), गुड़के भोज्य पदार्थ, पिष्ट (चावलके आटेसे बने द्रव्य), दही, तिलके भक्ष्यपदार्थ, स्निग्धपदार्थ, मद्य, अश्ल (खट्टे पदार्थ अचार आदि), भूने हुए जौ, चने, शुष्क मांस, विरुद्ध (पथ्य और अपथ्य को मिलाकर) भोजन, गुरुभोजन, विदाही भोजन, दिनमें सोना और मैथुन

जो
हैं अ
उन्नि
देख
पक
कार
अंश

गुह

भा
चल
हो ग
रहना
गति वि
तो यह
गोली च

गुह
पाकिस्ता
सश ही
भारतीय
विरुद्ध
सत्य अ

स सा चार स सी क्ष ण

श्री नारद

श्री नारदजीने इस सासमें विश्वका नवीन सर्वेक्षण किया है। उनकी मासिक विश्व यात्रामें जो कुछ उन्होंने देखा वह गतमासकी परिस्थितिमें बहुत ही भिन्न है। जो देश अभी तक पिछड़े रहे हैं अथवा उपनिवेशवादी देशोंके पाशमें जकड़े रहे हैं वे अब अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके अनन्तर उन्नतिकी ओर चरण बढ़ा रहे हैं, दौड़ रहे हैं। परन्तु उक्त उपनिवेशवादी देश उनको बढ़ते हुए देखकर खिन्नताका, निराशाका अनुभव करते हैं। वे इसे देख नहीं सकते। अतः बढ़ने वालोंका पैर पकड़कर उन्हें पीछे खींचनेका प्रयास कर रहे हैं। कूटनीतिक षड्यन्त्रोंकी रचना कर रहे हैं।

कुछ कटु सत्थोंका भी प्रकाश हुआ है। विश्व घटना चक्रके अभूत पूर्व गतिसे संचालित होनेके कारण नारदजीके सर्वेक्षणकी रिपोर्ट बहुत विस्तृत है। इसलिए लीजिये अब सर्वेक्षणके कुछ रोचक अंशोंको देखिये।

युद्ध विराम—

भारत पाकिस्तानका युद्ध, जो कि १ सितम्बरसे चल रहा था, का विराम दि० २२ सितम्बर ६५ को हो गया था। इसलिए नारदजी ने भी यहां ठहरे रहना उचित नहीं समझा। दूर दृष्टिसे ही युद्ध विरामकी गति विधिका समालोचन वे करते रहे हैं। कहनेको तो यह युद्ध विराम है। परन्तु एक दिनके लिए भी गोली चलना बन्द नहीं हुआ है।

युद्धके समय पाकिस्तानका शासनारूढ वर्ग पाकिस्तानी जनताको अन्धकारमें रखता रहा है। वह सदा ही यह प्रचार करता रहा है कि उसकी सेनाएं भारतीय भूमिपर घड़ाघड़ आगे बढ़ रही हैं और विस्तृत क्षेत्रोंपर अधिकार करती जा रही हैं। परन्तु सत्य अधिक समय तक छिपाया नहीं जा सकता।

सत्यके प्रकट होनेपर होने वाली दुर्दशासे बचनेके लिए उनका यह प्रयास रहा है कि युद्ध विरामके समय शीघ्रतासे घुस पैठ करके अधिक से अधिक भारतीय प्रदेश अपने अधिकारमें कर लिया जावे। इसलिए बाड़मेरसे लेकर करगिल तक सभी क्षेत्रोंमें उन्होंने अपनी तीव्र हलचल प्रारम्भ कर दी। कुछ स्थानोंपर उन्होंने सफलता भी प्राप्त की।

भारतीय लोग तो सदासे विश्वासी और धर्म-भीरु रहे हैं। अतः युद्ध विराम होनेपर इन्होंने उसे सच्चाईसे ग्रहण किया। बस उसी समय शत्रुने थोड़ा काम बना लिया। परन्तु भारतीयोंको वस्तु स्थितिका पता लगने ही उन्होंने शत्रुओंको इन नये स्थानोंसे खदेड़ना प्रारम्भ कर दिया। अब बहुत कम क्षेत्र ऐसा रह गया है जिसे खाली करना है।

युद्ध विराम क्या है? इसकी आड़में पाकिस्तानको

युद्ध करनेके लिए पुनः तैयारी करनेका अवसर मिला है। साथ ही विराम रेखाका उल्लंघन भी उसकी ओरसे प्रतिदिन बीसियों बार किया जाता है। परन्तु भारतीय वीरोंकी हुंकार सुनते ही पाकिस्तानी सैनिक सिरपर पैर रख कर भाग खड़े होते हैं।

ब्रिटेनकी दुरभिसन्धि—

किन्हीं लोगोंके लिए युद्ध विराम करवाना सदाशय और सद्भावनाका कार्य था। परन्तु ब्रिटेनने जब यह देख लिया कि युद्धसे तो उसके औरस पुत्र पाकिस्तानको ही हानि उठानी पड़ रही है तब उसने झटसे युद्ध विराम कराना उचित समझा। उसने अपनी चातुरीसे नयी चाल चली। जो कार्य यहां युद्धसे नहीं होसका उसको उसने सुरक्षा परिषद्में करानेका विचार किया और तदनुसार वह बराबर कार्य कर रहा है।

इस प्रकार युद्ध इस समय दो भागोंमें विभक्त होगया है। एक तो युद्ध विराम रेखापर जहांपर युद्धका नाम न होते हुए भी प्रतिदिन युद्ध चलता है और चौबीस घण्टे, प्रतिपल सजगता और सतर्कता रखनी पड़ती है। दूसरा है राजनैतिक क्षेत्र, जिसका केन्द्र है सुरक्षापरिषद् और विश्वराष्ट्र संघ। इस क्षेत्रका विस्तार है समस्त भूमण्डलमें और सभी देशोंमें।

युद्धसे पूर्व और युद्धके समय ब्रिटेनने अपनी करनीमें कोई कोर कसर नहीं छोड़ी। उसके समाचार पत्र, सम्वाद दाता, और बी० बी० सी० आदि सहस्र मुखसे, सहस्र छद्मोंसे भारत विरोधी प्रचारमें संलग्न रहे। उसने शस्त्रास्त्र और कलपुर्जोंका भारतके लिए निर्यात बन्द किया। दी हुई युद्ध सामग्रीको भी वापिस लेनेकी 'पेशकश' की। अब युद्ध विरामके बाद सुरक्षा परिषद्में वही पाकिस्तानका मार्गदर्शक है। योजनाओंको कार्य रूपमें परिणत करता है। इधर छोटेसे छोटे कार्यमें भी वह आगे है। उधर भारतको आने वाले मालको पाकिस्तान पहुँचानेमें उसका पूरा साहाय्य है। उसके जहाज भारतके बन्दरगाहोंसे

वचकर भागकर भी भारतका माल पाकिस्तान पहुँचानेसे नहीं चूकते।

तुर्किस्तान (टर्की) के माध्यमसे शस्त्रास्त्र और युद्ध सामग्री पाकिस्तानको भिजवानेमें भी उसका हाथ स्पष्ट देखा जा सकता है।

सारांश यह कि आगे बढ़ते हुए भारतको पीछे खींचकर रखनेमें पाकिस्तान उसका सबसे बड़ा हथियार है और ब्रिटेन इस समय उसका अधिकसे अधिक प्रयोग कर रहा है।

राष्ट्रपतिकी विदेश यात्रा—

युद्धके इस राजनैतिक क्षेत्रके खुलनेपर सबसे पहिला कार्य जो भारतके सामने आया वह यह है कि विश्वके समस्त राष्ट्रोंको वास्तविक स्थितिसे अवगत कराया जावे। साथ ही जहांसे भी राजनैतिक, साधन सम्बन्धी तथा अन्य प्रकारकी सहायता प्राप्त होसके उसको प्राप्त करनेका प्रयास किया जावे।

इसी बातको ध्यानमें रखकर अनेक मन्त्रियों और राजनीतिज्ञोंने इन दिनोंमें विश्वके विभिन्न राष्ट्रोंके नेताओंसे सम्पर्क स्थापित करनेके लिए विभिन्न देशोंके शीघ्रता पूर्वक दौरे किये हैं। यहां तक कि भारतके महा महिम राष्ट्रपति श्री राधाकृष्णन्को भी विदेश यात्रा करनी पड़ी।

उन्होंने यूगोस्लाविया, जेकोस्लोवाकिया, रूमानिया तथा इथियोपिया आदि देशोंका दौरा किया तथा अनेक राष्ट्रोंके प्रधान नेताओंसे सम्पर्क स्थापित किया। उनकी यह यात्रा अत्यन्त सफल रही है। जिन देशोंकी उन्होंने यात्रा की वहांसे भारतको सहयोग और सहाय-भूतिकी अधिकसे अधिक प्राप्ति हुई है तथा प्राप्त हो रही है।

प्रायः उन सभी देशोंमें संयुक्त विश्वप्रतिके रूपमें भारतके पक्षका स्पष्टरूपसे समर्थन करते हुए उसे न्याय पूर्ण बताया गया है।

यह स्पष्ट है कि संसारके प्रायः सभी

देश वास्तविकतासे परिचित होगए हैं। फिर भी ब्रिटेन जैसे कुछ देश अपने स्वार्थकी दृष्टिसे और स्वभाव सिद्ध दुर्जन वृत्तिसे असत् पक्षके समर्थनमें लगे हुए हैं।

सुरक्षा परिषद्—

सुरक्षापरिषद् वास्तवमें एक ऐसी संस्था है जो कि यदि पूर्ण निष्पक्षता और एक मात्र अपने नामसे प्रदर्शित होने वाले लक्ष्यको ध्यानमें रखकर कार्य करे तो संसारका महान् कल्याण हो सकता है। परन्तु ऐसा हो नहीं पाता। क्योंकि उसमें भी निहित स्वार्थ वाले तथाकथित बड़े एवं शक्ति शाली देशोंका प्रभुत्व है। वे राष्ट्र सदा ही अपने स्वार्थ और अपने वर्चस्वको बनाए रखनेकी दृष्टिसे अपनी कूट नीतिका जाल बिछाते रहते हैं।

वे सदा वहांपर विश्वके देशों और परिस्थितियोंकी तोल नाप अपने उद्देश्योंकी दृष्टिसे करते रहते हैं। कोई मामला सुरक्षा परिषद्में पहुँचना चाहिये। वस इनकी 'कारगुजारी' वहां बड़ी प्रचलतासे प्रारम्भ हो जाती है। यही नहीं यह इधर उधर करके उसी विषयको सुरक्षा परिषद्में पहुँचाते हैं और पहुँचने देते हैं जिनमें कि इन्हें अपनी ओर से उलटी सीधी पञ्चायत करनेकी इच्छा या आवश्यकता होती है।

अठारह वर्षसे कश्मीरका प्रश्न इस परिषद्के सामने पड़ा रहा। परन्तु इसने उसे न्यायकी तुलापर कभी नहीं रखा। इसके विपरीत इसको इतने दीर्घ काल तक लटकाए ही इसलिए रक्खा कि भारतकी लगाम चाहे जब इसके बहानेसे खींची जा सके और पाकिस्तान इसका दुरुपयोग कर भारतको परेशान करता रहे। जब भी कोई विवाद फिर उत्पन्न हो तो उसे पाकिस्तानके बराबर रखकर फिर नई पञ्चायत प्रारम्भ कर दी जावे।

इतना ही नहीं ऐसे गड़बड़ोंका प्रारम्भ भी इन्हीं देशोंमेंसे किसीके इशारेपर ही कराया जाता रहा है। वर्तमान युद्धके प्रारम्भमें ही नहीं अपितु संचालनमें भी ब्रिटेन जैसे देशका हाथ बताया जा रहा है।

आज जो कुछ सुरक्षा परिषद्में हो रहा है वह भी उसी नीतिके आधारपर हो रहा है। ब्रिटेन और अमरीका जब चाहते हैं तब पाकिस्तानके मुट्ठे महाशयको शिखण्डोंके समान आगे करके उसके अधिवेशन बुला लेते हैं। जो कुछ वहां रखना और करना चाहते हैं वह इन्हीं मियांजीके द्वारा वहां रखवाते हैं। भारत जैसे शान्ति प्रिय, शान्तिके प्रयत्नोंमें सर्वोत्तम भाग लेने वाले देशको इस परिषद् रूपी डुगडुगीके चलपर, बिना प्रत्यक्ष रूपमें सामने आए, बिना तलवार चलाए नए नए कांटोंमें उलझाते रहते हैं। उसकी प्रतिष्ठा, उसकी शक्ति और उसकी उन्नतिकी प्रगतिको कम करने और रोकनेका काम करते रहते हैं।

भारत इसे अनन्तकाल तक सहन नहीं कर सकता। इसीलिए अभी हाल ही में फिर उसी पुराने ढंगसे सुरक्षा परिषद् बुलाकर मियां मुट्ठे द्वारा फिर कश्मीरके आन्तरिक विषयको उसमें छेड़नेपर भारतके प्रतिनिधि मण्डलने अपने विदेश मन्त्री श्री सरदार स्वर्ण सिंहके नेतृत्वमें सुरक्षा परिषद्से उठकर उसका सामयिक बहिष्कार कर दिया है। इतिहासमें भारत द्वारा सुरक्षा परिषद्से वाक आउट करनेकी यह प्रथम घटना है। परन्तु बड़े महत्वकी है। यह भारत ही नहीं अपितु संसारके समस्त राष्ट्रोंकी सुरक्षा परिषद् और उसके षड्यन्त्रकारी राष्ट्रोंके प्रति प्रबल प्रतिक्रिया की प्रदर्शक है।

इन राष्ट्रोंको समझ लेना चाहिये कि यदि सुरक्षा परिषद् पक्षपातको छोड़कर न्यायसे कार्य नहीं कर सकेगी तो विश्वके राष्ट्र उसे क्षमा नहीं करेंगे। भारतका 'वाक आउट' विश्वके राष्ट्रोंके निश्चयका द्योतक है।

धोतीसे धोका—

सुरक्षा परिषद्के प्रति हमारे देशकी क्या धारणा है और उसका जो रूप अभी तक हमारे सामने आया है उससे हमारा अब कितना विश्वास सुरक्षा परिषद्के न्यायोचित कार्योंको करनेमें रह गया है यह बात प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री द्वारा और जवाबदमें उपहासमें कहे हुए शब्दोंसे बड़े अच्छे रूपमें व्यक्त

होती है। नागरिकोंकी सुरक्षा समितिमें बोलते हुए उन्होंने कहा—

“मैं तो मारील नहीं हूँ। इसलिए धोती पहिन्ता हूँ। यह भी एक कारण हो सकता है, जिससे कि पाकिस्तान भारतको दुर्बल समझता है।

हमारे सुरक्षा मन्त्री श्री चौहान भी धोती पहिन्ते हैं। धोती पहिन्ने वाले लोगोंने अपने देशकी रक्षा की है और लाहौर तक बढ़ भी गए हैं।

उन्होंने कहा कि पाकिस्तान ने यह भी गलत अनुमान किया कि भारतपर आक्रमण होनेकी दशामें धोती पहिन्ने वाला प्रधान मन्त्री सुरक्षा परिषद्की शरणमें भागेगा।”

निश्चय ही भारतके राजनीतिज्ञ इतने बुद्धि नहीं हैं कि राजनैतिक चालोंको समझ न सकें और भावी घटनाक्रमका अनुमान न लगा सकें।

राष्ट्रने अपनी प्रतिज्ञाको दोहराया—

२० अक्टूबरको राष्ट्रीय एकता दिवसपर भारतके इस विशाल राष्ट्रने अपनी स्वतन्त्रता और एकताको अक्षुण्ण बनाए रखनेकी प्रतिज्ञाको पुनः एक स्वरमें दोहराया है। देशके सभी स्थानोंपर विशाल सभाएं की गईं और सभी दलोंके, सभी धर्मोंके तथा सभी वर्गोंके लोगोंने बिना किसी भेद भावके एक कण्ठसे, एक स्वरसे अपने हृदय निश्चयको उद्घोषित किया।

हृदय निश्चयी एवं नीतिज्ञ रक्षामन्त्री श्री चौहानने देहली की एक विशाल सभामें कहा था—भारत तब तक शान्तिकी सांस नहीं ले सकेगा जब तक पाकिस्तान और चीन जैसे शत्रु विद्यमान रहेंगे। इनमेंसे चीन तो यह चाहता है कि वह विश्वपर एक-छत्र राज्य करे और दूसरा पाकिस्तान यह चाहता है कि वह भारतको पददलित करके उसके ऊपर शासन करे। हमें आज सजग होजाना चाहिये और उनकी कुरिस्त दुर्भिसन्धिके विरुद्ध मोर्चा लेनेकी तैयारी करनी चाहिये।

एक प्रकारसे, भारत

कि उसने भारतको संगठित होनेमें सहायता दी है। हम आज पहिलेसे अधिक बुद्धिमान् और सतर्क हो गए हैं तथा अब पुनः ठगारिमें नहीं आसकते हैं।

सुरक्षा मन्त्रीने पाकिस्तानको भी चीनके इरादोंसे सजग होनेके लिए कहा और बताया कि उसने भारतके साथ विश्वासघात किया तथा इन्डोनेशियाके साथ भी विश्वासघात कर चुका है और करता भी जा रहा है। निश्चय ही समय आवेगा जब पाकिस्तानके साथ भी वह धोखा करेगा।

कविका अन्तिम गीत—

“राष्ट्रीय एकता दिवसपर वीरवर मेजर आशाराम त्यागीके शौर्यकी गाथाका अपनी कवितामें गान करते हुए एक कवि भावुकताकी इतनी गहराईमें उतर गए कि उन्हें हृदयका दौरा होगया और बादमें वे अस्पतालमें जाकर स्वर्गवासी हो गये।

चालीस वर्षीय कवि श्री इकबालचन्द डिफेन्स कालोनीमें गवर्नमेन्ट हायर सेकन्डरी स्कूलके प्रिन्सिपल थे। वे सरोजिनी नायडूनगर देहलीमें, गवर्नमेन्ट हायर सेकन्डरी स्कूलमें राष्ट्रीय एकता दिवसपर अपनी कविताका पाठ कर रहे थे।”

नारद जी ऐसा अनुभव करते हैं कि उक्त कवि ही क्या राष्ट्रके ४५ करोड़ अधिवासियोंके हृदयमें इस युद्धसे एक प्रबल भावनामय युद्धसंगीतका दुर्धर्ष प्रवाह उत्पन्न होगया है। निश्चय ही राष्ट्र उसका सन्तुलित, सुव्यवस्थित उपयोग करके आततायियोंका दमन कर विजयी बनेगा।

असममें अंग्रेजोंकी करतूत—

“इसी मासमें असमके एक सरकारी प्रवक्ताने तीन ब्रिटिश चाय बागोंके मालिकोंकी गिरफ्तारीकी परिस्थितियोंपर प्रकाश डालते हुए बताया कि स्थितिका सतर्कता पूर्वक अध्ययन करनेसे स्पष्ट हो जाता है कि कमसे असममें रहने वाले अंग्रेजोंका एक वर्ग भारतके राष्ट्रीय हितोंके विरुद्ध जा रहा है।

प्रवक्त
और (पा
भी इनके
देते हैं।
तो स्थान
निकालक

यह
दलके पै
मार्शल अ
“पाकिस्

बता
छलीमपु
ब्रिटिश व
भेजा जा

हटि
को इस
स्वतन्त्रत

था। उस
दो

एक चाय
अंग्रेज
और उस
सम्पर्क

गान्तरोंव
कुछ

गान्तरों
स्वाय स्थि

प्रेसको नि

राज्य स
और उस

स्थितिको
सरकारी

बड़ा अन
तथा उस

इस
जोरहाट
कारियोंके

प्रवक्ताने कहा कि पाकिस्तान समर्थक भावनाओं और 'पाकिस्तान जिन्दावाद' आदि नारोंके अतिरिक्त भी इनके ऐसे कार्य हैं जो इनकी स्थितिको स्पष्ट कर देते हैं। गिरफ्तार किये गए तीन अंग्रेजोंमें से एकने तो स्थानीय प्राम रक्षा समितिके सदस्योंको रिवाल्वर निकालकर 'शूट' कर देनेकी धमकी भी दी थी।

यह बात तो रिकार्ड पर है कि एक व्यक्तिके रक्षा-दलके पेट्रोल रजिस्टरमें अपने नामके हस्ताक्षर "फोल्ड मार्शल अय्यूब खां" ही किये हैं। दूसरे ने लिखा है "पाकिस्तान चिरजीवी हो।"

बताया गया है कि एक वर्ष पूर्व मार्गरेटा, लखीमपुरसे असम रेलवे एण्ड ट्रेनिंग कम्पनी नामक ब्रिटिश कम्पनीके जनरल मैनेजरको इंग्लैण्ड वापिस भेजा जा चुका है।

हटियाली टी एस्टेट, शिवसागर, के अंग्रेज मैनेजर को इसलिए गिरफ्तार किया जा चुका है कि उसने स्वतन्त्रता दिवसपर राष्ट्रीय ध्वजाका अपमान किया था। उसके विरुद्ध अभियोग प्रारम्भ कर दिया गया है।

दो वर्ष पूर्व असमके जोरहाट सब डिवीजनके एक चाय उद्यानके प्लान्टरोंने लन्दनके एक दैनिक पत्रके अंग्रेज सस्वाददाताको गुप्त रूपसे अपने पास रखा और उसको भूमिगत नागा नेताओंसे नागालैण्डमें सम्पर्क स्थापित करनेमें सहायता दी। इन सन्दिग्ध प्लान्टरोंको देशसे बहिष्कृत कर दिया गया था।

कुछ समय पूर्व इसी वर्ष अपर असमके एक टी प्लान्टर्स एसोशियशनके एक अंग्रेज अधिकारीने असमकी खरा स्थितिके सम्बन्धमें एक अत्यन्त हानिकर वक्तव्य प्रेसको दिया था। जब वह छपकर प्रकाशित हुआ तो राज्य सरकारने उसको बहुत गम्भीर विषय माना और उसके विरोधमें एक सरकारी विज्ञप्ति वास्तविक स्थितिको बताते हुए प्रकाशित की गई। यदि यह सरकारी विज्ञप्ति ठीक समयपर प्रकाशित न होती तो बड़ा अनर्थ होता और राज्यमें घबराहट फैल जाती तथा उसके गम्भीर परिणाम होते।

इस प्रकारकी भी सूचनाएं प्राप्त हुई हैं कि जोरहाटकी प्लान्टर्स क्लबमें भारतीय सेनाके अधिकारियोंके साथ अशिष्टतासे व्यवहार किया जा रहा है।

नारदजीका कहना है कि वे अंग्रेज वास्तवमें सच्चे अंग्रेज नहीं हैं। सच्चा अंग्रेज तो वही है जो इतना पक्का हो कि अपने छल और दुरभिसन्धिका पता भी न लगने दे और अवसर पाते ही पीठमें छुरा भोंक दे तथा दोष किसी दूसरे पर डाल दे।

इन्डोनेशियाने भी फल चखा—

भारत पाकिस्तान युद्ध प्रारम्भ होनेसे पहिले पाकिस्तान और चीनकी तथा चीन और इन्डोनेशियाकी दूध पानी जैसी मित्रता दिखाई देती थी। पाकिस्तानने युद्ध प्रारम्भ किया, चीनने दबाव धमकियां दीं और इन्डोनेशियाने पाकिस्तानको युद्ध सामग्री देनेकी तत्परता प्रदर्शित की। परन्तु युद्ध समाप्त होते न होते इन्डोनेशियामें सुकर्णके विरोधमें विद्रोह उठ खड़ा हुआ। न जाने भगवानको क्या दया आ गई कि विद्रोह विफल हो गया और सुकर्णजी महाराज बच गये।

आज यह स्थिति है कि इन्डोनेशिया कम्युनिस्ट विरोधी हो गया है। कम्युनिस्टोंको गिरफ्तार किया जा रहा है, उनका वर्चस्व समाप्त किया जा रहा है। इसप्रकारके सभी प्रयत्न किये जा रहे हैं जिनसे कि वह देश कम्युनिस्टोंसे मुक्त हो सके। चीन और इन्डोनेशियाकी सरकारके परस्पर विरोध पत्र चल रहे हैं। दोनों मित्र आज ३६ के अङ्क बन रहे हैं।

यह बात प्रत्यक्षरूपसे सिद्ध हो चुकी है कि इन्डोनेशियाके इस आन्तरिक विद्रोहमें चीनका हाथ था। कितने व्यक्ति इस विद्रोहके उठनेमें और उसके दमन करनेमें मारे गए हैं, कितनी सम्पत्ति का विनाश हुआ है, कितने लोग बन्दी बनाए गए हैं इत्यादि बातोंका अभी बाहरवालोंको ठीक ठीक पता नहीं है।

राष्ट्रपति सुकर्ण और उनके साथी नेता इन्डोनेशिया की भावी परराष्ट्र नीतिके विषयमें कुछ भी निर्णय करनेमें असमर्थ हैं। इसलिए सुकर्णका प्रयत्न है कि चीनका पल्ला अभी न छोड़ा जावे। परन्तु राष्ट्रकी जनता चीनसे एक दम घृणा करने लगी है। कम्युनिस्ट विरोधी हो गई है। वहां कैसी लहर चल रही है इसका अनुमान इसी घटनासे लगाया जा सकता है कि सुकर्ण और उनके साथी अङ्ग्रेजोंके विरोधमें अन्तर-

राष्ट्रीय कान्फ्रेंसके सिलसिलेमें एक प्रदर्शन जनताने किया। परन्तु पेकिंग विरोधी भावना इतनी प्रबल थी कि पश्चिमी राष्ट्रोंके विरोधमें किया गया यह प्रदर्शन पेकिंग विरोधी प्रदर्शनमें बदल गया।

इस प्रकार इस समय इन्डोनेशियाका जहाज बीच धारमें ही अनिश्चित लक्ष्यकी ओर बढ़ रहा है। सुकर्ण भगवान् कहीं जा रहे हैं और उनकी सेनाके अधिकारी कहीं और। विचित्र दशा है। जहाज तो एक ही है परन्तु दोनोंके गन्तव्य स्थान पृथक् हैं। देखें किस किनारे लगे।

इस हाथ दे उस हाथ ले

ब्रिटेन दूसरे देशोंके मामलोंमें टांग अड़ाता फिरता है। कश्मीरमें मतदानके आधारपर निर्णय करनेके प्रश्नको वह किसी न किसी प्रकार सतजुगसे आज तक जीवित बनाए चला आ रहा है। परन्तु उसकी यह चाल तो—सौ सौ चूहे खाए चली विलैया हजको' की कहावतसे ही मिलती है।

रोडेशियामें गोरे अल्प संख्यक काले रोडेशियायी बहुसंख्यक लोगोंपर अपना अधिकार बनाए रखनेके लिए आकाश पातालके कुलावे मिला रहे हैं। ब्रिटेन बराबर गोरे लोगोंकी इस दुरभिसन्धिमें सहायता कर रहा है। रोडेशियाके गोरे लोगोंको अल्प संख्यक सरकारकी स्वतन्त्रता घोषित करनेका मन्त्र भी उसीका पढ़ाया हुआ दिखाई देता है।

दूसरी ओर भारत है जो कि अपनी स्वतन्त्रताके युद्धके समयसे ही संसारके सभी परतन्त्र राष्ट्रोंकी स्वतन्त्रता और बहुमतकी सरकारका पक्षपाती रहा है। स्वतन्त्रता होनेके बाद उसकी प्रेरणा और समर्थनसे अनेक देशोंने स्वतन्त्रता प्राप्त की है। इसलिए जब विश्व-राष्ट्र संघके समक्ष रोडेशियाका विषय उपस्थित हुआ तब भारतको उस देशके निवासी बहुसंख्यक जनोका पक्ष लेना स्वाभाविक ही था। उसने अपनी सदाकी नीतिके अनुसार यही पक्ष रखा कि उस देशके बहुसंख्यक मूल निवासियोंको ही उस देशकी सरकार बनानेका अधिकार होना चाहिये।

विश्व राष्ट्र संघके सभी देश एक ओर थे, एक मत थे। दूसरी ओर थे ब्रिटेन और पुर्तगाल। संघने ब्रिटेनको आदेश दिया कि यदि अल्प संख्यक गोरे स्वतन्त्रताकी घोषणा करें तो ब्रिटेनको सभी सम्भव उपाय उसको रोकनेके करने चाहिये।

अब ब्रिटेन प्रत्यक्षमें तो यह प्रयत्न कर रहा है कि रोडेशियाके प्रधानमन्त्री श्री इयानस्मिथसे मिलकर और दौड़ भाग करके वह विश्वराष्ट्र संघकी आज्ञा पालन करनेका प्रयत्न करता दिखाई दे। परन्तु भीतरकी भगवान् जाने कि यह पुराने घाघ क्या कर रहे हैं और कौनसा नया खेल न जाने कब सामने खड़ा कर दें।

परन्तु उन्होंने भारतको धक्का देनेके लिए जो सांठ गांठ सुरक्षा परिषद्में की उसका फल विश्वराष्ट्र संघमें उसको अकेला रखकर तत्काल दे दिया गया है।

आई. यू. डी. और यकृत शोथ—

“एक सरकारी प्रेस विज्ञप्तिमें देहलीमें कहा गया है कि यह सूचनाएँ कि आई. यू. डी. (Intra Uterine Device) के लगानेसे यकृत शोथ (Hepatitis) का प्रादुर्भाव होता है, एक भ्रान्त धारणा है।

विज्ञप्तिमें कहा गया है कि यह जन्म निरोधक उपकरण इन्डियन कौंसिल आफ मेडिकल् रिसर्च द्वारा स्वीकार किया गया है। दो वर्ष तक तीन सहस्र व्यक्तियोंका लूप लगानेके बाद अध्ययन किया गया है। परन्तु यकृत शोथका एक उदाहरण नहीं प्राप्त हुआ।

इस समय देशमें एक लाख पचास हजार स्त्रियाँ ऐसी हैं, जिन्होंने आई. यू. डी. लगवाए हैं। परन्तु इनमें से एक को भी यकृत शोथकी शिकायत नहीं हुई है।”

नारद जी की सम्मतिमें आई. यू. डी. का समर्थन तो अच्छा किया है। फिर भी अन्य कष्ट इस प्रकारके हैं जिनकी शिकायत नारद जी के पास बराबर आती रहती है। उन शिकायतोंमें रक्तस्राव और लूपके लगानेसे वेदना होना विशेष है।

सैनिकोंके लिए शक्तिप्रद खाद्य—

डिकेन्स फूड रिसर्च लेबोरेटरी, भैसूरने दूरस्थ सीमावर्ती, भिन्न वातावरण वाले दुर्गम क्षेत्रोंमें देश-रक्षाके निमित्त नियुक्त सैनिकोंके लिए उत्तम पोषक तत्वोंसे युक्त और साथ ही अपेक्षाकृत अल्पभार वाले खाद्य पदार्थोंका अनुसन्धान पूर्वक निर्माण किया है।

उक्त प्रयोगशाला (Laboratory) ने इन खाद्य पदार्थोंके निर्माणमें हिमालयके उच्च पर्वतीय स्थानों और राजस्थान जैसे मरु क्षेत्रोंमें कार्य करने वाले जवानोंकी विविध एवं भिन्न आवश्यकताओंका पूरा ध्यान रक्खा है।

इन खाद्योंके पोषक तत्वोंकी मात्रा ४ सहस्रसे ५ सहस्र कैलोरी तक है। प्रयोगशाला और कार्य क्षेत्रोंमें सम्यक परीक्षण करनेके अनन्तर यह ठीक तथा उपयोग योग्य प्रमाणित हुए हैं।

उदाहरणके लिए मरुप्रदेशमें कार्य करने वाले सैनिकोंका भोजन इस प्रकारका रखा गया है जो कि प्यासको न लगने दे। इस प्रकार रेगिस्तानके दूरस्थ देशोंमें जल पहुँचानेका भारी काम हलका होजाता है।

नौ हजार फुटसे अधिक ऊँचाईपर काम करने वाले जवानोंके लिए रम् से प्राप्त होने वाली १७५ कैलोरी सहित ५००४ कैलोरी पर्याप्त होती हैं। यह सन् १९६२ में चीनी आक्रमणके समय जवानोंको दिये जाने वाले खाद्यसे १५०० कैलोरी कम है। उस समय ऐसा इसलिए किया गया था कि यह समझा जाता था कि ऊँचे प्रदेशोंमें जवानोंको मैदानोंसे अधिक कैलोरीकी आवश्यकता होती है।

बारमें डिकेन्स इन्स्टीट्यूट आफ् फिजियोलॉजी एण्ड एलाइड साइन्सेज्, मद्रासमें किए गये परीक्षणोंसे ज्ञात हुआ है कि ५००० पाँच सहस्र कैलोरी पर्याप्तसे अधिक ही होती हैं।

नारदजीने सूचना दी है कि इस प्रकारके वैज्ञानिक अनुसन्धानोंसे युद्ध आदिमें कार्य करनेमें सुविधा तो होती ही है। साथ ही क्षमताकी पूर्णताकी ओर भी प्रगति होती है। पूर्वकालमें भी इस प्रकार विशेष आवश्यकताओंके अनुरूप शक्तिप्रद खाद्य पदार्थों

अन्वेषणका कार्य भी किया जाता था। प्राचीन 'बृहद् विमान शास्त्र' ❀ नामक ग्रन्थमें विमानोंद्वारा लोक लोकान्तर गमनका वर्णन मिलता है। साथ ही उक्त विमानोंमें यात्रा करने वाले तथा चालक जनकोंके लिए विशेष प्रकारसे निर्मित जीवन रक्षक तथा शक्तिप्रद खाद्य पदार्थोंका विवरण भी उक्त 'बृहद् विमान शास्त्र' में दिया गया है। आधुनिक कालमें उपलब्ध साधनोंसे इस ओर किये जाने वाले प्रयत्न निःसन्देह परम आवश्यक और प्रशंसनीय हैं।

विमान निर्माणमें भारत शीघ्र ही आत्म निर्भर होगा—

भारतके वायु सेनाध्यक्ष एयर मार्शल श्री अर्जुन सिंहने सम्वाददाताओंको हैदराबादमें बताया है कि भारतको सभी प्रकारके विमानोंका उत्पादन शीघ्र ही करना होगा। परन्तु साथ ही इस कार्यमें सन्तुलन बनाए रखनेकी आवश्यकता है। इसीके लिए प्रयत्न किया जा रहा है।

एक प्रश्नका उत्तर देते हुए उन्होंने बताया, उन्हें आशा है कि भारत अपनी आवश्यकताके विमान कुछ वर्षोंमें ही बना सकेगा। वायु सेनाकी आवश्यकताएं विविध और संश्लिष्ट हैं। उनको पूरा करनेके लिए विशेष प्रकारकी फौलाद और मिश्रधातुओं (Alloys) की भी आवश्यकता है जो कि वर्तमानमें भारतमें प्रस्तुत नहीं की जाती हैं। साथ ही उत्पादनके मूल्यपर भी ध्यान देना होगा।

उन्होंने कहा कि एक भारतीय विशेषज्ञ श्रीघाडगेने 'किरण' नामका एक विमान प्रस्तुत किया है और परीक्षणार्थ दे दिया है। आशा है कि वह सफल होगा।

लाइसेन्स द्वारा MIG-21 जैसे विमानोंका भारतमें

* यह पुस्तक प्राचीन अनुपलब्ध 'यन्त्र सर्वस्व' नामक ग्रन्थका 'वैज्ञानिक प्रकरण' है। प्रतिष्ठित विद्वान् श्री स्वामी ब्रह्ममुनि प्ररित्राजकने इस वैज्ञानिक प्रकरणकी बोधानन्दकृत प्राचीन वृत्ति सहित हिन्दी टीका की है। सावंदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द भवन, नई दिल्ली-१ ने इसका प्रकाशन किया है।

निर्माण करनेसे भारतीयोंको पर्याप्त क्रिया सम्बन्धी ज्ञानके अवसरों और ज्ञानकी प्राप्ति होगी।

वायुसेनाध्यक्षने यह भी कहा कि वायुसेना अपना ध्यान प्रशिक्षणकी ओर विशेषरूपसे केन्द्रित कर रही है जिससे कि सर्वोत्तम प्रशिक्षित व्यक्ति तैयार किये जा सकें। शिक्षाके विकास और अधिक कालेजोंकी स्थापनाके कारण शिक्षित नवयुवक अधिकाधिक संख्यामें वायुसेनामें प्रवेशके लिए आगे आ रहे हैं जिससे कि उत्तम व्यक्तियोंके चुननेका अवसर बढ़ रहा है। भारतीय विमान चालकों तथा अन्य लोगोंको कठिन प्रशिक्षण दिया जाता है।

जो लोग तपस्या पूर्वक योग्यताकी प्राप्तिके लिए प्रयत्नशील रहते हैं नारदजीका उनके लिए सदा ही आशीर्वाद और शुभ आकांक्षाएं रहती हैं।

लूप फिर चमका:—

समाचार है कि विभिन्न प्रदेशोंसे प्राप्त सूचनाएं [प्रदर्शित करती हैं कि जन्मनिरोधके लिए जो सामूहिक अभियान गत जुलाईमें प्रारम्भ किया गया था उसके सिलसिलेमें लूप-आई० यू० सी० डी० (Intra-uterine contraceptive device) स्त्रियोंमें बहुत प्रचलित हुआ है। तीन मासमें ही एक लाख लूप लगाये जा चुके हैं।

यह कार्य क्रम गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब और पश्चिमी बंगालमें बहुत प्रभावशाली रहा। दूसरे प्रदेशोंमें भी सन्तोषजनक प्रगति रही है।

आगामी अप्रैल मास तक दस लाख लूप लगा देनेकी आशा की जाती है। गुजरात और महाराष्ट्र ने अपने चलते फिरते दलोंद्वारा शिविरों (कैम्पों) का आयोजन किया था। सबसे बड़ा शिविर सिसूर, महाराष्ट्रमें आयोजित किया गया था, जहांपर कि दो दिनमें चार सौ लूप लगाए गये।

लूप जन्म निरोधके लिए अच्छा प्रभावशाली उपकरण सिद्ध हुआ है। इससे ९९% प्रतिशत गर्भोंका निरोध होता है। यह सस्ता भी है और मुख्य सात ऐसे प्रति लूप ही है।

लगभग ५ प्रतिशत स्त्रियोंमें यह स्वाभाविक रीतिसे बाहर निकलता पाया गया है। दूसरे ५ प्रतिशतमें रक्तस्राव हो जानेके कारण अथवा दर्द और वेचैनीके कारण लूपको निकालना भी पड़ा है। गन्दगीके संक्रमणकी कोई समस्या नहीं रही है। परन्तु सावधानी सहित स्वच्छता सम्बन्धी उपायोंका करना आवश्यक है।

लूपके प्रयोगसे कोई कैंसर जैसे परिवर्तन होनेके विषयमें भी कोई उदाहरण या साक्ष्य प्राप्त नहीं हुआ है।

यद्यपि लूप बहुत सफल और प्रभावकारी सिद्ध हुआ है फिर भी सरकार जन्म निरोधके दूसरे उपायोंको छोड़ देनेका कोई विचार नहीं रखती है। सरकार अनुभव करती है कि ऐसे लोग बहुत हैं जो कि लूप लगवानेकी इच्छा नहीं रखते हैं अथवा उसको लगवा ही नहीं सकते हैं।

इसलिए सरकार वन्ध्याकरणके आपरेशन और कौन्डमके प्रचारको चालू रखेगी।

नारदजीका विचार है कि सरकार एक प्रकारसे तो ठीक ही सोचती है। क्योंकि यदि एक ओर यौन भोग वृत्तिको बढ़ाने वाले चित्रों आदिके प्रदर्शन द्वारा बालकोंमें भी उत्पादनकी प्रवृत्तिका विकास किया जा रहा है तो दूसरी ओर उत्पादनको रोकनेके लिए नपुंसकीकरण और वन्ध्याकरणका कार्यक्रम चालू रहना ही चाहिये।

साथ ही नारद जीने एक बहुमूल्य सुझाव देनेकी भी कृपा की है। वे कहते हैं कि लूप आदिके प्रबल अभियानोंको सफलताका अनुमान वर्तमानमें केवल उनके लगा देनेकी संख्यासे ही किया जा रहा है। जितने अधिक लूप लगा दिये उतना ही अधिक अभियान सफल है। परन्तु यह वास्तविक सफलताका द्योतक नहीं है। इसका पीछेसे भी परिणाम देखने (Follow up) का प्रयत्न भी करना आवश्यक है। किन्हीं क्षेत्रोंको निर्धारित करके उनमें यह देखना आवश्यक है कि निश्चित अवधिमें सन्तानोत्पादनमें क्या कमी अथवा विशेषता हुई है। जिससे यह निश्चित हो सके कि इनका उपयोग वास्तवमें सन्तानोत्पादनके रोकनेके लिए ही किया गया, अन्य किसी उद्देश्यसे नहीं।

हृदयके लिए नया वाल्व—

जापानी समाचार एजेन्सी क्यो दो द्वारा ज्ञात हुआ है कि जापानी डाक्टर तोशिरो ओवादाने हृदय रोगकी चिकित्साके लिए एक बॉल वाल्व (Ball Valve) का आविष्कार किया है।

उक्त डाक्टर सपोरो मेडिकल कालेजमें प्रोफेसर हैं। उन्होंने जापानकी चेश्ट सर्जन्स सोसायटीकी बैठकमें बताया कि उन्होंने इस मनुष्य कृत वाल्वका हृदयके

रोगियोंपर सफलता पूर्वक प्रयोग किया है।

उन्होंने कहा कि १२० रोगियोंमें यह वाल्व गत तीन वर्षोंमें लगाया जा चुका है। यह कृत्रिम वाल्व प्लास्टिकसे बनाया गया है और इसमें एक छोटी गेंद होती हो।

डाक्टर ओवादाने यह भी कहा कि पहिले ७० रोगियोंमें इसके प्रयोगसे कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। परन्तु उसके बादसे इसके प्रयोगद्वारा रोगियोंकी मृत्यु संख्या घटकर केवल ५% प्रतिशत पर आ गई है।

पूर्ण स्वाधीनता—(पृष्ठ १०४ का शेष)

हुआ। भारतीय सेनाने अपने शौर्य और पराक्रमसे शत्रुकी गर्भी तो शान्त कर दी है। परन्तु ईर्या, द्वेष और बदलेकी जलन और भी बढ़ गई है।

इस युद्धसे कुछ सत्य हमारे सम्मुख अत्यन्त स्पष्ट रूपमें प्रकट हुए हैं। जो देश हमारे परम शुभचिन्तक बनते थे उनमेंसे कुछने आंखें बदलना और मुंह फेरना प्रारम्भ किया है। ब्रिटेनने शस्त्रास्त्रों और मशीनोंके कल पुर्जोंका भेजना बन्द किया और चीन-युद्धमें दिये हुए सैनिक सामानकी मांगकरनेका राग खड़ा। उधर अमेरिकाने गेंदोंपर शर्तें और पाचन्दियां लगानेकी व्यवस्था की। एक काठिन समस्या उपस्थित हुई है।

परन्तु हमें आज अपनी कमी और कर्तव्य कठोर रूपमें अत्यन्त स्पष्ट दिखाई दे रहा है। आज यह बात दिनके समान कटु सत्यके रूपमें उद्भासित हो गई है कि हमने जो स्वतन्त्रता सन् १९५० में प्राप्त की वह पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं थी उसको पूर्ण करनेके लिए हमें अभी बहुत प्रयत्न करना है। निश्चिन्त होकर एक मिनट भी बैठा नहीं जा सकता। जिधर देखो उधर ही बहुत कुछ करनेको शेष पड़ा है।

मशीनों तथा शस्त्रास्त्र आदि आधुनिक समर सामग्रीके निर्माणमें, विविध विमानोंके उत्पादनमें अभी तक हम पूर्णतया आत्म निर्भर नहीं हुए हैं। खाद्य उत्पादनका क्षेत्र तो वास्तवमें निराशा जनक है। इतनी योजनाएँ बनाई गईं और इतना प्रचार हुआ

परन्तु सब व्यर्थ रहा। आज देशको समझ लेना चाहिये कि दूसरे देशोंसे अन्न मांगनेकी वृत्ति कितनी हीन और कितनी लज्जाजनक है। लोग कैसे आंखें पलटते और मुंह फेरते हैं। कोई भी आत्माभिमानी देश इस भित्तावृत्तिको एक क्षणके लिए भी सहन नहीं कर सकता।

इसीलिए हमारे अत्यन्त निपुण एवं परम साहसी प्रधान मन्त्रीने स्पष्ट घोषणा कर दी है कि सभी विषयोंमें आत्म निर्भर हुए बिना हमारी स्वतन्त्रता अधूरी है। उन्होंने कर्तव्य कर्मको स्थूल रूपसे दो भागोंमें विभक्त कर दिया है। राष्ट्रको दृढ़ निश्चय कर लेना चाहिये कि वह अर्थके विषयमें अब पश्चिमी राष्ट्रोंका मुंह नहीं ताकेगा। इसलिए जैसे भी हो आर्थिक स्थिति दृढ़ बनानी ही पड़ेगी। इस दृष्टिसे 'स्वर्ण बौन्ड' विक्रयका कार्य प्रारम्भ किया गया है। योजना सुन्दर, सुरक्षित और असुविधाओंसे बिलकुल मुक्त है।

दूसरी है अन्नके विषयमें आत्म निर्भर होनेकी बात। वह भी कोई देश है जो कि अपने भोजनके लिए भी परमुखापेक्षा रहे। इसलिए शास्त्रीजी ने खेतोंमें पूरे परिश्रमसे कार्य करनेके लिए राष्ट्रका आह्वान बड़े ही मार्मिक शब्दोंमें किया है।

राष्ट्रको कटु अनुभवोंसे समझ लेना चाहिये कि पूर्ण रूपसे सभी क्षेत्रोंमें आत्म निर्भर होना ही पूर्ण स्वतन्त्रता है।

“न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः।”

चिकित्सा परामर्श

जो बन्धु अपने प्रश्नोंका ठीक समाधान चाहते हैं उन्हें रोगका पूरा विवरण लिखना चाहिये। सामने होने पर तो अनेक प्रश्नोंद्वारा रोगीका पूर्ण वृत्तान्त जाना जा सकता है। परन्तु दूरस्थ रोगीसे बिना पत्रव्यवहार यह सम्भव नहीं है। इसलिए पत्रमें सभी आवश्यक बातें आजानेसे परामर्श अधिक अच्छे प्रकार दिया जा सकेगा। किसी बातको छिपानेकी भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि प्रश्नकर्ताका नाम प्रकाशित नहीं किया जाता है।

१. एक बन्धुने पश्चात्तापके रूपमें लिखा है—

“श्री सम्पादकजी,

‘स्वास्थ्य’ मासिकमें गर्भ निरोध, नपुंसकीकरण और वन्ध्याकरणके बारेमें सरकारी प्रयत्नोंके समाचार देखे। साथ ही वन्ध्याकरणके आपरेशनके परिणामोंको भुगतने वाली महिलाको दी गई आपकी सलाहको भी पढ़ा। कुदरती मुझे भी अपने बारेमें पूछनेकी इच्छा हुई है। मैं भी नपुंसकीकरणके आपरेशनका शिकार हूँ। मेरे तीन बच्चे थे। आपरेशनके बाद एक मर गया है। आपरेशन कराये लगभग दो वर्ष हो चुके हैं। आपरेशन करानेके दो मास बाद मुझे ऐसा मालूम हुआ कि शक्तिमें कमी हुई है। धीमे धीमे जैसे पुरुष शक्ति घटती गई। अब हालत ऐसी है कि विषय सम्भोगकी इच्छा ही नहीं होती है। संकोचकी बात तो है। पर लिखे बिना भी काम नहीं बसता। घरका सुख जाता रहा है। परिवारमें वह प्रसन्नता अब दिखाई नहीं देती। पत्नी अब हंसकर बात करना ही जैसे भूल गई है। मैं तो पछताता हूँ कि उस समय मेरी कैसी बुद्धि हो गई कि यह आपरेशन करवा डाला। यही सोचता हूँ कि यह घर नरक बन गया है और जनम भर इस नरकको मुझे भोगना पड़ेगा। अगर कुछ उपाय हो सकता हो तो बताइये। बड़ी कृपा होगी।

परामर्श—बन्धुवर, वास्तवमें जिस रूपमें काम है

वैसा कष्ट भगवान् किसीको न दिखावे। यह आपरेशन विशेषज्ञोंकी सम्मतिमें कैसा भी हो हमतो इसको उचित नहीं समझते। ईश्वरीय नियमोंके अनुसार ‘काम’ की इच्छा शुक्रकी नियमित स्थितिसे सम्बन्ध रखती है। शुक्रकी उत्पत्ति और उचित उपयोगके साथ कामेच्छाका अभिन्न सम्बन्ध है। इस आपरेशनमें शुक्र वाहिनी नाड़ीको काटकर शुक्रके प्रवाहको सदाके लिए बन्द कर दिया जाता है। परिणाममें कामेच्छा और पुंस्त्व शक्तिका नष्ट होना स्वाभाविक है। बधिया किये हुए बछड़ेकी स्थितिको देखकर इस आपरेशनके परिणामोंको कल्पना कोई भी कर सकता है। बधिया बैलको ही देख लीजिये। वह मोटा ताजा भी हो सकता है। गाड़ी और बोझको भी घसीट सकता है। परन्तु उसकी काम शक्ति, वह तो नष्ट ही हो जाती है। सन्तानोत्पत्ति तो अलग, उसकी सम्भोग शक्ति ही सर्वदाके लिए समाप्त हो जाती है। दूसरी ओर सांडको देखिये। उसका आपरेशन नहीं होता इसलिये वह बधियासे बिलकुल भिन्न है।

पुरुष भी बछड़ेके समान ही है। वैसेक्टोमी (Vasectomy) का आपरेशन करा लेनेपर पुरुष भी बधिया हो जाता है। विशेषज्ञ लोग अपनी तर्क बुद्धिसे लोगोंको समझाते हैं और बुद्धिमान पढ़े लिखे लोग भी इस मुलावेमें आजाते हैं। वही वैसेक्टोमी (Vasectomy) बछड़ेको बधिया बना देती है वही

आपरेणन पुरुषको पुंस्त्वसे युक्त बना रहने देता है।

यह हमारी समझमें न आने वाली बात है।

आपके जैसी अन्य शिकायतें भी हमारे पास आई हैं। ऐसे अनेक परिवारोंको हम जानते हैं, जिनका सुखका संसार, प्रसन्न परिवार नरक बन गया है, उजड़ गया है। जहां सदा दिवाली रहती थी वहां अब सदा दीप विहीन, ज्योति विहीन अमावास्या का अखण्ड साम्राज्य हो गया है।

डाक्टरोंकी सम्मति है कि इस आपरेशनसे सम्भोग शक्तिका ह्रास नहीं होता है। इसके विपरीत इस शल्यक्रियाका प्रारम्भ तो अधिक शक्ति देनेके लिए हुआ था। हां, कुछ लोगोंमें शायद मानसिक कारणोंसे ऐसी स्थिति हो जाती है। सैकड़ोंमें कुछ केसे ऐसे हो जावें तो कौनसी बड़ी बात है।

अथर्ववेदमें नपुंसकीकरणकी ठीक यही विधि ऐसी की ऐसी उपलब्ध होती है। परन्तु वहां स्पष्ट शब्दोंमें इसे क्लीबता उत्पादक माना गया है।

अस्तु, जो कुछ भी हो, हमारी तो स्पष्ट सम्मति है कि Vasectomy का आपरेशन करानेसे पूर्व प्रत्येक व्यक्तिको यह सोचना चाहिये कि कहीं उसका नम्बर ही सैकड़ोंमेंसे कुछ केसोंमें न आ जावे। सन्तति निरोध ही करना है तो अन्य बहुतसे उपकरण प्रचलित हैं।

फिर भी आप निम्न लिखित औषधोंका सेवन कर सकते हैं। पहिले भी इनका प्रयोग किया जा चुका है। लाभप्रद हुई हैं।

१. त्रिवङ्ग भस्म
(२८ पुटी)

मात्रा १ रत्ती

अनुपान-मधु, प्रातःकाल
तथा सायं काल दोनों समय

२. च्यवनप्राश

मात्रा-१ तो. से २½ तो. तक
प्रातःसायं, २ बार प्रातः-
काल पहिले च्यवनप्राश लें
और दूध पीएं। उमके एक
घण्टे बाद त्रिवङ्ग भस्म लें।

३. अश्वगन्धारिष्ट

मात्रा-१ से २½ तो० तक
अनुपान, समभाग जल दोनों

समय भोजनोत्तर लेवें।

विशेष—इस विषयमें चिन्ता करना छोड़ दें। निश्चिन्त रहें। इसकी कल्पना और चिन्तासे भी नाड़ियोंपर प्रभाव होता है। डाक्टर लोग तो इस स्थितिको मानसिक स्थितिका ही परिणाम मानते हैं। प्रसन्न और मस्त रहिये। लाभ हो सकेगा।

२. एक चिकित्सक बन्धु मु. दानावाड़ा,
जिला-सुरेन्द्र नगर, गुजरातसे लिखते हैं—

“श्री वैद्यराज जी, सादर नमस्ते। ‘स्वास्थ्य’ पढ़ कर आपसे सलाह लेनेकी इच्छा हुई है। कृपया निम्न लिखित बातें सोचकर तुरन्त पत्र द्वारा उत्तर देनेका कष्ट करें।

नाम..... उम्र २७ साल..... वजन २२० पौण्ड लगभग, ऊंचाई ६३” शरीर अति स्थूल नहीं..... नाखून-श्वेत, रक्तहीन..... मूत्र श्वेत, मल साधारण आम युक्त सुबह, दोपहर दो वक्त। भोजन दो वक्त, उपहार नहीं, चाय तीन चार वक्त। व्यसन कुछ नहीं। एकान्त प्रिय।

मुख्य तकलीफ—रात्रिमें मूत्र प्रवृत्ति वारंवार, मूत्र-अल्प, निद्रामें गड़बड़, प्यास रात्रिके वक्त हृदयको धड़कन तेज। धड़कन सुननेमें आती है।

सारा दिन चीड़ चीड़ापन—शिरदर्द सामान्य विदग्ध्वाजीर्ण, सुस्ती-आलस्य। रक्त भार वृद्धि। चेहरा स्वेद्युक्त, चीकना।

पूर्व इतिहास-बचपनमें प्रतिश्याय वारंवार होता था। अब नहीं। पांच सालसे ज्वर नहीं। चार साल पहिले उदर शूल (Intestinal colic) हुआ था। हर सप्ताहमें एक रात्रिको उदरशूल उठता था। डाक्टर एंटेस्पैस्मोडिक मानते थे। (Antispasmodic) दवा से १० घण्टे बाद शान्त हो जाता था। बिना चिकित्सा शान्त हो गया। चार सालसे कभी भी उपद्रव नहीं है। तीन साल पहिले शादी हुई है। शादीके बाद तीन मास बाद एकाएक कमजोरी आ गई। इमोशनल टेन्स रहने लगा। वलड प्रेशर हाई था, १४० से २०० सिस्टोलिक था। दवा नहीं ली।

कुछ स्वाध्याय और मननसे चिन्ता ही आदत छूट

गई। अब उपर्युक्त स्थिति है।

होने
वहार
जा
किया

रेशन
इसको
नुसार
स्वस्थ
योगके
रेशनमें
सदाके
मेच्छा
विधिया
शनके
विधिया
भी हो
मा है।
ही हो
स्वभोग
दूसरी
होता

स्टोमी
पुरुष
ती तर्क
लिखे
स्टोमी
वही
मा है।

दो दिन पहिले बायोकेमीक दवा ली। रात्रि निद्रा अच्छी रही। आज काम करते हुए आँख सामे अंधेरा छा गया शिरदर्द शुरू हुआ। दो कन्या सन्तान हुई। हरेक सन्तान जन्म वक्त तन्दुरुस्त थी। मगर माताके स्तन्यके अभावमें अतिसार में एक एक मासमें मृत्यु हुई।"

परामर्श—आपने जिस बन्धुके विषयमें लिखा है उनके समस्त लक्षणोंको देखनेसे ज्ञात होता है कि सभी उपद्रवोंके मूलमें पाचन क्रियाकी अव्यवस्था है। पहिले तीव्र शूल प्रति सप्ताह हुआ करता था वह भी इसीका परिचायक है। अनेक बार हाई बन्ड प्रेशरका कारण पाचनकी विकृति और वातकी विषम स्थिति भी होती है। हमारा विचार है कि उक्त रोगीको निम्न प्रकार औषधिका प्रयोग कराइये। लाभ होनेकी पूरी आशा है।

१. महाशङ्ख वटी मात्रा २ रत्ती
(भैषज्यरत्नावली)
मधुर क्षार (सोडाबाईकार्ब) २ रत्ती
या स्वर्जिका चार १ मात्रा
ऐसी ३ मात्रा दिनमें ३ बार
शीतल जलसे चार चार घण्टे
बाद दें।

२. लोहासव मात्रा १ १/२ तोल (आधा औंस)
(शार्ङ्गधर) समान भाग जलसे दोनों
समय भोजनोत्तर दें।

३. ब्राह्मी वटी मात्रा १ रत्ती
(रसतन्त्रसार व अनुपान—शीतल जल, सोनेसे
सिद्धप्रयोगसंप्रद) पूर्व रात्रिमें।

कुछ समयके अनन्तर कुछ स्थिति ठीक होनेपर दूसरी व्यवस्था करना आवश्यक होगा। उसके लिए पुनः पत्र व्यवहार करें।

३. दानावाड़ासे उक्त वैद्यजी ने ही दूसरी रोगिणीके विषयमें पूछा है—

"नाम उम्र २० साल, वजन ११० पौण्ड, ऊँचाई ६२", देह मध्यम, प्रवाहिका दन्तवेष शोध, कभी कभी ज्वर, प्रतिश्याय होता है। आहार सामान्य, व्यसन कुछ नहीं। तबुज्ज्वर भी विषय है।

प्रथम गर्भकालमें चार मास बाद ज्वर ८, १० दिन रहा टायफॉयड लगता था। डाक्टरने मेलेरिया बताया। चिकित्सा कालमें जननेन्द्रियपर फोड़ा हुआ। प्रसव सुखरूप हुआ। लड़की थी। स्तन्य अल्प था। स्तनमें पीड़ा थी। २० दिनमें अतिसारमें आक्षेपक वातसे लड़कीकी मृत्यु हुई।

दूसरे वक्त सगर्भा अवस्था सम्पूर्ण स्वास्थ्य था। आहार विहार प्राकृत था। विटामीन्स लेती थी। प्रसव सुखरूप हुआ। लड़की तन्दुरुस्त थी। स्तन्य कम था। स्तन्याशयमें सामान्य पीड़ा थी। २४ दिन बाद एक दिन ज्वर रहा। स्तन्य बिलकुल बन्ध हुआ। लड़की बकरीके दूधपर रखी। पाँचवें मास अतिसारमें मृत्यु हुई।

मासिक डेढ़ मासमें अल्प होता है। ... सन्तति निरोधक साधनसे अब तक गर्भ नहीं रहने दिया।

कृपया दीर्घजीवी सन्तानके लिए और स्तन्यकी तकलीफके लिए उपाय बतावें—"

परामर्श—बन्धुवर, आप कृपया निम्न प्रकार चिकित्साकी व्यवस्था करें।

गर्भ न होनेकी दशामें—

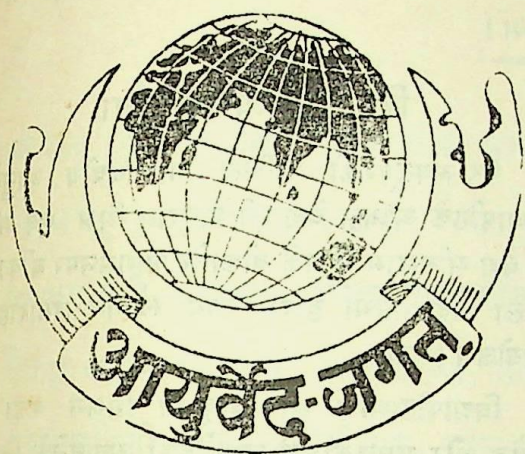
१. त्रिवङ्गभस्म मात्रा-१ रत्ती
(रसतन्त्र सारोक्त २८ पुटी) अनुपान-दूध प्रातः
सायं दो बार

२. जीरकाद्यरिष्ट मात्रा-१ १/२ तोला
अनुपान-समभाग जल।
दोनों समय भोजनोत्तर दें।

गर्भ होनेपर
३. गर्भपाल रस मात्रा-१ से २ रत्ती तक
अनुपान-मुनक्का जल
५, १० मुनक्का थोड़े जलमें
भिगो दें। बादमें उन्हें
मसलकर छानलें। फिर
औषध दें।

४. जीरकाद्यरिष्ट पूर्ववत्
त्रिवङ्गभस्म बन्द कर दें।
मञ्जनके लिए दशन संस्कार चूर्णका उपयोग करें।
आहार—सात्विक सुपाच्य दें। तली हुई चीजों

का खाना बन्द कर दें।



कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवनमें धन्वन्तरि जयन्ती

कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी शुक्रवार तदनुसार दिनांक २२-१०-६५ को प्रातःकाल मङ्गलमयी वेला में भवनके सभी कर्मचारियों ने बड़े हर्षोल्लासके साथ विश्व आयुर्वेद प्रवर्तक भगवान् धन्वन्तरिकी जयन्ती बड़ी धूम धामसे मनाई।

प्रारम्भमें श्री कल्याण महाप्रभुकी प्रार्थना सम्पन्न हुई। तदनन्तर सभी कर्मचारी धन्वन्तरि मन्दिरके प्राङ्गणमें एकत्र हुये संस्थाके नवव्यवस्थापक श्री राज कृष्ण जी माथुर साहबद्वारा भगवान्का षोडशोपचार विधिसे पूजन हुआ। आरतीके पश्चात् भवनके प्रधान वैद्य बट्टीनारायण शास्त्रीने भगवान् धन्वन्तरिकी अवतरण कथाका सविस्तर उल्लेख किया। उन्होंने बताया कि भगवान् धन्वन्तरिने न केवल औषध चिकित्साका ही उपदेश किया है बल्कि आयुर्वेदकी आठ अंगों वाली स्वास्थ्य-काय-बाल प्रसूति, विष तथा शल्यशालाक्यादि विविध चिकित्साओंका सांगोपांग उपदेश किया है। जैसे आज अनेक विषयोंके विभिन्न विशेषज्ञ डाक्टर उपलब्ध होते हैं। वैसे ही भारतमें सभ्य जगत के प्रारम्भ से ही विविध चिकित्साओंके विभिन्न विशेषज्ञ होते थे। उनका सर्वोच्च ग्रन्थ सुश्रुत उस गौरव गाथाका गान करते हुये विद्यमान है। किन्तु काल प्रभावसे भारतीय शल्य विज्ञान सजराका हास

हो गया। और अब केवल काय चिकित्सा मात्र शेष रह गई है। आपके प्रवचनके पश्चात् भवनके भू० पू० व्यवस्थापक श्री नोरतनमल जी जोशीने अपने कार्य-कालके कार्योंपर संक्षेपमें प्रकाश डाला। तत्पश्चात् नवीन व्यवस्थापक श्री राजकृष्ण जी माथुर ने जोशी जी द्वारा कृतकार्योंका आभार मानते हुये धन्यवाद समर्पण किया तथा सभी कर्मचारियोंसे आशा व्यक्त की कि वे सच्ची लगनसे संस्थाके सेवाकार्योंमें समुचित सहयोग प्रदान करेंगे।

अन्तमें भगवान् धन्वन्तरिके जय घोषके साथ सभा विसर्जन हुई। विधिवत् प्रसाद वितरणके बाद पूरे दिनका अवकाश रखा गया।

अजमेर जिला आयुर्वेद सम्मेलन अजमेर—

इस वर्ष भी सदाकी भांति सम्मेलनकी ओर श्री धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव श्रीरामदयालु औषधालय अजमेरमें श्री डा. अम्बालालजी शर्माकी अध्यक्षतामें समारोह पूर्वक मनाया गया। अनेक विद्वान् वैद्योंके भाषण हुए। वै० श्री शिवशर्मा द्विवेदीने आयुर्वेदीय पाठ्यक्रम पर, श्री वै० बालमुकुन्द शर्मा ने अनुसंधान पर, श्री गोपालकृष्ण शर्मा ने संगठन और प्रगतिपर, श्री वै० पद्मनाभ शर्मा ने बाल पक्षाघातके विषयमें, श्री वै० रुद्रदत्त शर्मा ने आधुनिक चिकित्सा पद्धति पर, श्री वै० हरिगोपाल दवे ने शीर्षद्रवके विषयमें और श्री वै० मुनिदेव उपाध्यायने रोगोंके विषयमें वैद्यों द्वारा सामूहिक विचार विमर्शके विषय प्रकाश डाला। मन्त्री श्री वै० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी ने शल्यचिकित्साकी कमीकी ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा उसे पूर्ण करनेका सुझाव रखा। श्री डा. अम्बालाल शर्मा ने दीर्घकालीन चिकित्सा सम्बन्धी अनुभवोंको प्रस्तुत किया।

आयुर्वेद विभाग, राजस्थान अजमेर—

आयुर्वेद विभाग राजस्थानकी ओरसे विभागके कार्यालयमें श्री धन्वन्तरि जयन्ती उत्सव विशेष उत्साहसे सम्पन्न हुआ। प्रारम्भमें विभागके संचालक

श्री वै० रा० प्रेमशङ्कर शर्मा के प्रस्तावपर श्री वै० ब्रह्मानन्द त्रिपाठीने अध्यक्षका आसन ग्रहण किया। श्री संचालक महोदयने आयुर्वेदके सेवा सम्बंधी कार्योंके विस्तार और सम्भावनाओंपर प्रकाश डालते हुए बताया कि इस युद्धके समयपर विभागकी ओरसे युद्ध क्षेत्रके समीप आयुर्वेदीय सेवा केन्द्र स्थापित किये गये। श्री कृष्णलाल शर्मा रजिस्ट्रारने धन्वन्तरि जयन्ती और वर्त्तमानयुद्धके विषयमें संस्कृत पद्य प्रस्तुत किये। श्री वैद्य मोहनलालजी ओझाके सुपुत्रने प्राचीर शल्य विज्ञानके विषयमें, वैद्य श्रीपद्मनाभ शर्माने आधुनिक शल्यविज्ञानपर प्रकाश डाला। वैद्य श्री शिवशर्मा द्विवेदीने आयुर्वेदके अध्ययनके लिये आधार भूत योग्यतानिश्चय करनेपर बल दिया।

अन्तमें सभापतिने शल्य चिकित्साको आत्मस्तु करनेके विषयमें क्रमशः योजना पूर्वक कार्य सम्पन्न करनेका सुझाव दिया। सर्वसम्मतिसे इस विषयपर एक प्रस्ताव भी पारित किया गया।

विद्यापीठके अध्यक्षका अजमेर आगमन

नि. भा. आयुर्वेद विद्यापीठके अध्यक्ष श्री वै. रा. बाबूराम मिश्र प्रधान मंत्री श्री वै० सीताराम मिश्रके साथ राजस्थानके दोरेके सिलसिलेमें अक्टूबरके मध्यमें अजमेर पधारे। उन्होंने स्थानीय अजय मेरु आयुर्वेद महा विद्यालयका निरीक्षण किया और आवश्यक सुझाव दिये। श्री रामदयालु औषधालयमें उनके सम्मानमें जिला आयुर्वेद सम्मेलनकी ओरसे सभाका आयोजन किया गया। अतिथियोंका स्वागत करते हुए श्री वै० ब्रह्मानन्द त्रिपाठीने कहा कि अध्यक्ष महोदयकी यह यात्रा बड़ी आशाजनक है। विद्यापीठको इससे निश्चय ही प्रोत्साहन प्राप्त होगा। सभामें अनेक सदस्योंद्वारा विद्यापीठकी पाठ विधि, शुद्ध आयुर्वेद और भावी कार्यक्रमके विषय अनेक सदस्योंने विचार व्यक्त करते हुए विविध प्रश्न भी प्रस्तुत किये। श्री कविराज बालमुकुन्द शर्माने विद्यापीठके स्थानीय केन्द्रके दीर्घ कालीन कार्य कलापका परिचय दिया। विद्यापीठ मन्त्री श्री वै० सीताराम शर्माने विविध प्रश्नों और समस्याओंका समाधान किया। विद्यापीठाध्यक्षने अपने भाषणमें विद्यापीठकी गति विधिपर विस्तृत प्रकाश

डालते शङ्काओंका समाधान किया और विद्यापीठके कार्यक्रमका दिग्दर्शन कराया अन्तमें सभापति श्री डा० अम्बालाल शर्माने अतिथियोंके प्रति आभार प्रकट किया।

विद्या पीठाध्यक्षका दौरा

१९ अक्टूबरको निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठके अध्यक्ष वैद्य श्री बाबूराम मिश्र एवं मंत्री श्री वैद्य सीताराम मिश्रके बीकानेर आगमनपर बीकानेर जिला वैद्य सभा द्वारा भव्य स्वागत समारोहका आयोजन किया।

विद्यापीठाध्यक्ष श्री बाबूराम मिश्रने कहा कि अंग्रेज और मुगलकालमें आयुर्वेदको उखाड़नेके जितने प्रयत्न किये गये, उनसे अधिक प्रयत्न स्वतंत्रता प्राप्तिके बाद वर्तमान सरकार कर रही है। देशमें मेडिकल कालेजोंकी संख्या ३० से बढ़ाकर ८० कर दी गयी है, किन्तु सरकारने स्वतंत्रता प्राप्तिके बाद अब तक एक भी साधन-सम्पन्न आयुर्वेद कालेज देशमें स्थापित नहीं किया है।

राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलनके मन्त्रीने अपने स्वागत भाषणमें विद्यापीठाध्यक्षको राजस्थानके वैद्योंकी परिस्थितिसे अवगत कराया।

विद्यापीठ मन्त्री एवं राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलनके अध्यक्ष श्री सीताराम मिश्रने राज्य सरकारको चेतावनी दी कि आयुर्वेद विभागीय अधिकारियोंके राजनैतिक उपयोगको बन्द नहीं किया गया तो आयुर्वेदके हितमें, प्रान्तमें, आयुर्वेद मंत्रालय व आयुर्वेद विभागकी स्थापना की कोई उपयोगिता सिद्ध नहीं हो सकेगी। श्री मिश्रने राज्य सरकारकी कटु आलोचना की कि वह आयुर्वेदको प्रोत्साहित करनेका दम अवश्य भरती है किन्तु अब तक राजस्थानमें एक भी नया आयुर्वेद कालेज स्वतंत्रताके बाद सरकारने स्थापित नहीं किया है। गैर सरकारी आयुर्वेद कालेजोंके साथमें भी "टुकड़ा डालने" की नीतिका बर्ताव कर रही है। उन्हें केवल नाम मात्रका अनुदान दे रही है।

समारोहकी अध्यक्षता सुप्रसिद्ध वैद्य श्री जय शंकर देव शंकरजी शर्माने की।

कुछ औषधियां

76186

- क्रव्याद रस—अजीर्ण, मलावरोध, आध्मान तथा क्षुधानाशकी दशामें उपयोगी ।
- पाचन सुधा—अग्निमान्द्य तथा उदर विकारनाशक स्वादिष्ट एवं रुचिवर्धक
- धनञ्जय वटी—पाचक, दीपक तथा रुचिवर्धक ।
- गैयहर वटी—उदावर्त्त, अग्निमान्द्य, उदरशूल, तथा अजीर्णका नाशक ।
- सुवर्णमालिनी वसंत—जीर्णज्वर, कास, मंदाग्नि तथा निर्बलताका नाशक ।
- नवजीवन रस—कृशता, हृदय दौर्बल्य व मंदाग्नि नाशक ।
- शिलाजत्वादि वटी—स्वप्नविकार, दौर्बल्य व मूत्ररोगनाशक ।
- वसंतकुसुमाकर रस—पौष्टिक, धातुवर्धक तथा मूत्ररोगोंमें उपयोगी ।
- चन्द्रोदय वटी—अंग प्रत्यंगोंको सुदृढ़ व शक्तिशाली बनानेमें उपयोगी ।
- भृङ्गराजासव—जीर्णमलावरोध, रक्ताल्पतानाशक, बलप्रद ।
- खमीरे गावजुवां—हृदय व मस्तिष्कको बलप्रद, शक्तिवर्धक ।
- बृ० वंगेश्वर रस—विविध मूत्रविकार, तथा अशक्तिका नाशक एवं बलप्रद ।
- ब्राह्मासव (विशेष)—अग्निप्रदीपक, पाचक, बलवर्धक स्वादिष्ट पेय ।
- ब्राह्मरसायन—स्मरण शक्तिवर्धक, अग्निप्रदीपक तथा बलवर्धक रसायन
- शंख वटी—विविध अजीर्ण, उदरशूल आदिमें लाभप्रद है ।

विशुद्ध एवं विश्वसनीय आयुर्वेदीय औषधियोंका प्रतिष्ठित स्थान—

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

मंगलमय दीपावलीके शुभ पर्वपर

आपको दीर्घायुष्य, बल एवं स्वास्थ्यलक्ष्मीकी शुभ कामनाओंके साथ

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन

आपका अभिनन्दन करता है

संस्थानका विशेषताएं:--

विशुद्ध शास्त्रोक्त, आयुर्वेदीय औषधियोंका विश्वसनीय स्थान है।

यहाँसे शतशोऽनुभूत चिकित्सोपयोगी ३१ ग्रन्थरत्न प्रकाशित हुये हैं।

यहाँके औषधालयमें रुग्ण जनताकी निःशुल्क चिकित्सा व पथ्य व्यवस्था की जाती है।

यह संस्थान वैद्य समाज व जनताका स्वास्थ्य पथ प्रदर्शक है।

यहाँकी औषधियां देश विदेशोंमें विश्वसनीय व प्रशंसा प्राप्त हैं।

औषधि निर्माणमें विशुद्धता व एकरूपतापर विशेष ध्यान दिया है।

देश विदेशोंमें हमारे १००० से अधिक विक्रीकेन्द्र हैं।

यहाँके औषधियोग गोपनीय व पेटेंट नहीं हैं। अतः

यहाँके एजेंट व ग्राहक बनकर स्वयं लाभ उठावें और संस्थाके सेवा कार्यमें योग प्रदान करें।

विशेष सूचना--अफीम, गांजा तथा भांग मिश्रित औषधियोंके आर्डरके साथ एजेंटों व ग्राहकोंको अपने लायसेंस नम्बर लिखकर भिजवाना आवश्यक है। अन्यथा, खेद है कि राजकीय नियमानुसार हम ऐसी औषधियां भिजवानेमें असमर्थ रहेंगे।

व्यवस्थापक

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन



अङ्क ४]

मार्गशीर्ष शुक्ल, ८ विक्रम सं० २०२२

[दिसम्बर १६]

“ज्ञानबुद्धिप्रदीपेन

यो नाऽऽविशति तत्त्ववित् ।

आतुरस्यान्तरात्मानं

न स रोगांश्चिकित्सति ॥”

चरक० । विमानस्थान । अ० ४ । श्लोक १९ ॥

“शास्त्र द्वारा विकसित बुद्धि रूपी प्रदीपके प्रकाशमें जो तत्त्वज्ञानी चिकित्सक रोगीकी अन्तरात्मामें प्रविष्ट हो जाता है वह रोगोंकी चिकित्सा नहीं करता । रोगीकी चिकित्सा करता है ।”

आयुर्वेद रोगीकी चिकित्सा करना बताता है । वह आधुनिक तथाकथित चिकित्सा-विज्ञानके समान केवल रोगकी ही चिकित्सा करना नहीं बताता ।

विद्वान् लेखकोंसे

१. मासिक 'स्वास्थ्य' में आयुर्विज्ञानसे सम्बद्ध अनुसन्धान, अन्वेषण, विशेष विचार, शास्त्रीय पर्यालोचन विषयक तथा सर्वहितकारी स्वास्थ्य सम्बन्धी लेख एवं सामग्री प्रकाशित की जाती है।
२. उत्तम उपादेय लेखोंपर शक्यनुसार पुरस्कारकी व्यवस्था भी की गई है।
३. जो लेख 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ भेजे जावें वे कागजके एक ओर स्पष्ट लिखे हुए होने चाहिये जिससे कि लेख शुद्ध रूपमें प्रकाशित हो सके।
४. लेखोंमें जो उद्धरण आदि दूसरे ग्रन्थों, अन्य लेखकोंके लेखों अथवा पुस्तक आदिसे लिये जावें उनका निर्देश, लेखकोंके सदाचारके अनुसार, अवश्य करना चाहिये।
५. जो लेख 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ स्वीकृत और पुरस्कृत किए जाते हैं उनका प्रकाशन 'स्वास्थ्य' में प्रकाशित होनेसे पूर्व अन्यत्र न होना चाहिये। उनके अन्यत्र प्रकाशित करानेके लिए भी 'स्वास्थ्य' सम्पादककी स्वीकृति लेना उचित है।
६. जिन लेखोंके प्रकाशनमें हम असमर्थ हैं उन्हें शीघ्र ही लौटा देना हम अपना कर्तव्य समझते हैं। ऐसी स्थितिमें पोस्टेजके टिकट प्राप्त होनेपर दोनों ओर ही सुविधा रहती है।
७. 'स्वास्थ्य' का मुद्रण मासकी २५ ता० तक समाप्त हो जाता है। अतः लेख उस मासकी १० तारीख तक भेज देने चाहिये।

विशेष सूचना

भविष्यमें 'स्वास्थ्य' में प्रकाशनार्थ लेख एवं सभी प्रकारकी समाचार आदि सामग्री सुविधार्थ निम्न लिखित पतेपर भेजनी चाहिये।

श्री वैद्य ब्रह्मानन्द त्रिपाठी,
प्रधान सम्पादक—'स्वास्थ्य'
आनन्द चिकित्सा सदन, केसरगंज,
अजमेर

स्वा

अनुभवाङ्कका प्रकाशन

फरवरी १९६६ में

स्थ

का

वि

शे

पां

क

पहिले हमने सूचना दी थी कि 'अनुभवाङ्क' का प्रकाशन जनवरीमें होगा ।

परन्तु

अब निश्चय किया गया है कि इसका प्रकाशन फरवरी ६६ में किया जावे ।

हमारी इच्छा है कि यह अङ्क अधिकसे अधिक उपयोगी सामग्रीसे परिपूर्ण हो । वैसे तो अङ्कके लिए पूरी सामग्री भी हमें प्राप्त हो चुकी है । परन्तु कुछ ऐसे प्रतिष्ठित विद्वान् एवं अनुभवी लेखक हैं जिन्होंने कि लेख भेजनेमें समय की कमी की शिकायत की है । हम समझते हैं कि उनके लेखोंका समावेश करके हम अङ्क को अधिक सुन्दर और उपयोगी बना सकेंगे । इसी लोभमें हमने यह एक मासका समय आगे बढ़ा दिया है । आशा है कि कृपालु लेखकों को अब समयकी शिकायत नहीं रहेगी और सार्वजनिक लाभके कार्यमें उनका अमूल्य सहयोग हमें प्राप्त हो सकेगा ।

साथ ही हमें आशा है कि 'स्वास्थ्य' के प्रेमी पाठक जन हमारी इस 'घृष्टता' के लिए हमें प्रसन्नतापूर्वक क्षमा करेंगे ।

इस अङ्कमें विशेषरूपसे निम्न सामग्रीके प्रकाशनकी व्यवस्था की जा रही है ।

१—विविध रोगोंके निदानके विषयमें सिद्धहस्त वैद्योंके अनुभव ।

२—चिकित्सा विषयमें अनुभव ।

३—किसी भी औषधके निर्माण और प्रयोगके विषयमें अनुभव ।

४—इन्द्रिय स्थान आदिमें वर्णित भिन्न रोगोंके अरिष्ट तथा स्वस्थ पुरुषोंमें अरिष्ट लक्षणोंपर अनुभव ।

५—किसी वनौषधि अथवा खनिज भस्म आदिके विषयमें विशेष अनुभव ।

६—तथा अन्य किसी भी आयुर्वेदीय विषयपर अनुभव ।

विशेष—इस अंकमें प्रकाशनीय लेख आवश्यक विवेचन सहित लिखकर सुविधार्थ २५ दिसम्बर तक निम्न पतेपर भेज देना चाहिये । विशेष परिस्थितिमें ३० दिसम्बरसे अधिक विलम्ब न होना चाहिये ।

श्री वैद्य ब्रह्मानन्द त्रिपाठी,

प्रधान सम्पादक—'स्वास्थ्य'

आनन्द चिकित्सा सदन, केसरगंज,

अजमेर (राजस्थान)

स्वास्थ्य

इस अंक में

*

—संचालक—

अध्यक्ष, ट्रस्टबोर्ड,

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेड़ा-कृष्णगोपाल

*

प्रधान सम्पादक,

वैद्य पं० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी बी. ए.

आयुर्वेद शिरोमणि, आयुर्वेदाचार्य

*

स० सम्पादक

वैद्य पं० बद्रीनारायण शर्मा

आयुर्वेदाचार्य

*

प्रकाशक एवं मुद्रक

श्री राजकृष्ण माथुर

व्यवस्थापक-कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन

*

मुद्रणालय

कृष्णगोपाल मुद्रणालय

कालेड़ा-कृष्णगोपाल

१. राष्ट्रके लिये तप

२. सम्पादकीय—१. असह्य वेदना और उसका
प्रतिकार २. विजय मन्त्र,

३. औषधियोंके विशेष गुण—

मूल गुजरातीसे अनूदित

४. रसायनी विद्या—

कविराज श्री रत्नाकर शास्त्री एम० ए०

५. तमाकू और उसका स्वास्थ्यपर प्रभाव—

श्री डा. निशिकान्त बी० ए०

६. इस संकट कालमें सरकार आयुर्वेदकी वैज्ञानिकता
एवं महत्ताको समझे—

श्री डा० विद्यासागर थापर एम. बी. बी. एस. १६७

७. टमाटर और उसका उपयोग—

श्रीमती सुमित्रा देवी अग्रवाल

८. अन्त्रपुच्छशोथ—

श्री वैद्य प्रह्लादराय देराश्री

९. आयुर्वेदमें आस्तिकवादका प्राधान्य जीवन रक्षाकी
दिशामें अन्य पद्धतियोंकी अपेक्षा एक विशिष्टता—

आचार्य श्री प्रेमकिशोर मिश्र

१०. चिकित्सा परामर्श—

११. समाचार समीक्षण—श्री नारद

बढ़ती हुई जन संख्याका भूत, जन्मनिरोध
के विषयमें फ्रांसका दृष्टि कोण, मानव
शरीरमें विना फटा प्रेनेड, ऋषिकेशकी ड्रग
फैक्टरीमें रिसर्च लेबोरेटरी, क्षुधाको
जीतने वाली बूटियां, कम्यूनिस्टोंके युद्ध
साधनोंमें सांप भी, ब्रिटेनने ही पाकको
बकसाया, फ्रैंक एन्थनी साहबका मत,
अफसरोंकी बढ़ती हुई जाति, नागालैण्डका
प्रश्न, लन्दनमें हिन्दी त्रैमासिक, दुर्भाग्यकी

बात

१२. आयुर्वेद जगत्



श्रीधन्वन्तरये नमः

स्वास्थ्य

(स्वास्थ्य, सुमति, सुख और शान्तिके मार्गका प्रदर्शक मासिक पत्र)

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः ।

यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥

वर्ष १३. अङ्क ४]

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

[दिसम्बर १९६५]

राष्ट्रके लिए तप

ओम् । भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विद-

स्तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे ।

ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं

तदस्मै देवा उपसंनमन्तु ॥

अथर्व । काण्ड १९ । सूक्त ४१ । मन्त्र १ ॥

भद्रमिच्छन्तः

स्वर्विदः

ऋषयः

अग्रे

तपः दीक्षाम्

उपनिषेदुः

ततः

राष्ट्रं बलं ओजश्च जातं

तत् देवाः

अस्मै

उपसंनमन्तु

देश, राष्ट्र और विश्व कल्याण चाहने वाले

ज्ञान और प्रकाशको प्राप्त करने वाले

दूरदर्शी विद्वान् पुरुष

प्रथम

तपस्या करते हैं तथा व्रत पालनकी दीक्षा लेकर

तदनुकूल प्रयत्न एकनिष्ठ रूपसे सर्वोत्तमना करते हैं ।

उस तपस्या तथा दीक्षासे

राष्ट्र, बल और ओज उत्पन्न होते, बढ़ते और विकसित होते हैं ।

अतः हे बुद्धिमान् देश भक्तो !

यदि आप राष्ट्र, बल और ओजके इच्छु हैं तो

व्रत लेकर, तपस्यापूर्वक, एक निष्ठ होकर सर्वोत्तम प्रयत्न करो ।



असह्य वेदना और उसका प्रतिकार



अनुभवका अनुसन्धानसे अविच्छिन्न सम्बन्ध है। किसी बातको जब तक अनुभवके आधारपर न जाना जावे तब तक उसकी प्रामाणिकता नहीं होती। यह अनुभव प्राप्त होता है परीक्षणसे, प्रयोगसे। इसीको आज कल एक्सपेरिमेंट (Experiment) कहा जाता है।

आयुर्वेदके लिए यह अनुसन्धान और अनुभवकी विशेष समस्या है। आज सभी ओर से इस बात की मांग हो रही है कि आयुर्वेदमें अनुसन्धानका कार्य होना ही चाहिये। लोग कहते हैं कि अनुसन्धान या रिसर्च (Research) न होनेसे आज सैकड़ों और सहस्रों वर्षोंसे आयुर्वेदमें कोई नवीन योग आदि का समावेश नहीं किया जा सका है। परन्तु हम कहते हैं कि नवीन ही क्यों? जो प्राचीन ज्ञान सहस्रों वर्षोंके अगणित एवं अकल्पनीय रूपसे विविधता सम्पन्न प्रयत्नोंद्वारा प्राप्त किया गया था वही हाथसे खिसकता जा रहा है।

आयुर्वेदीय उपलब्ध ग्रन्थों या शास्त्रोंमें जो विषय

प्रतिपादित किये गए हैं, जो योग आदि लिखे गए हैं वे उदात्त अनुभवपर आधारित हैं। परन्तु नवीन विज्ञानवादी उसे वैज्ञानिक कहनेमें हिचकता है और आयुर्वेदपर विश्वास रखने वाला व्यक्ति उन्हें आर्ष और प्रामाणिक मानते हुए भी 'शतशोऽनुभूत' योगों और प्रक्रियाओंकी खोजमें लगा हुआ है। क्या कारण है?

कारण यही है कि एक की तो यही मान्यता है कि पहिले लोग विज्ञानको समझते ही नहीं थे। आज जो वह जानता है और जाना जा रहा है वही वैज्ञानिक है और अन्य सभी अवैज्ञानिक। दूसरेसे उसका पुराना ज्ञान इतनी दूर पड़ गया है कि वह उसके रहस्यको पूर्णतया न समझकर स्वयं अपने देखे हुए या अन्य किसी समकालीन व्यक्तिद्वारा अनुभूत रूपमें देखे हुए विषय को ही अधिक स्पष्टता से देखनेमें समर्थ है।

ऐसी स्थितिमें प्राचीन आयुर्वेदका अधिकांश भाग आज पुनः परीक्षणकी स्थितिमें आ गया है ऐसा समझना चाहिये। नवीन विज्ञानवादी तो उसे अपनी कसौटीपर परखना चाहता है और उसपर जो भी बात खरी उतरे उसे ही वैज्ञानिक माननेको तैयार है अन्यथा वह आयुर्वेदको भी विज्ञान माननेको तैयार नहीं है। जो विज्ञान नहीं है या उसके विज्ञानसे अनुमोदित नहीं है उसका ग्रहण करना भी उचित नहीं है। परन्तु उसकी इच्छाके अनुसार आयुर्वेदीय योग आदिका परीक्षण सैकड़ों वर्षों तक भी सम्भव नहीं है। न सरकार इतने अनुसन्धान संस्थान खोल सकती है कि इस कार्यको शीघ्रसे शीघ्र सम्पन्न किया जा सके और न ही आधुनिक किसी प्रयोगशाला और अनुसन्धानशालाके लिए यह सम्भव है कि एक एक योग या द्रव्यका भी वह वर्षोंमें भी पूरा परीक्षण कर सके।

अभ्रक भस्मका ही उदाहरण ले लीजिये। सभी भस्मोंके समान यह भी सेन्द्रिय और निरिन्द्रिय द्रव्योंके वैज्ञानिक संयोगसे प्रस्तुत की जाती है। कुछ पुटोंके लगानेपर ही निश्चन्द्र हो जाती है और उपयोगके योग्य बन जाती है। परन्तु उसमें सहस्र पुटोंके देनेका भी विधान मिलता है। कहते हैं कि इस प्रकार पुटित करनेसे वह अधिकाधिक प्रभावशाली होती जाती है। इसमें तो कोई सन्देह ही नहीं है। परन्तु यह भी आजकल एक परीक्षणका विषय है। हम ऐसा मानते हैं कि यह सहस्र पुट वाली अभ्रक प्रत्येक पदपर कुछ

पुटोंके लगनेके बाद ही प्रत्येक बार नवीन गुण करने वाली बन जाती है।

मान लीजिये १० पुटके बाद वह निश्चन्द्र हो गई। अब उसके तीन भाग करके एक भागमें ७ पुट अर्कके रसकी भावना दे दीजिये। उसके दूसरे भागमें उसके यही सात पुट जीवनीय गणके द्रव्योंसे भावित करके दीजिये। तीसरे भागको वीरतर्वादि गणकी भावना देकर तैयार कीजिये। अब क्या कोई यह कह सकता है कि तीनों प्रकारकी भस्में जिनमें प्रत्येकमें १७ पुट लग चुके हैं एक ही प्रकारसे कार्य करेंगी। क्या उनका गुण और प्रभाव समान ही होगा। यदि नहीं तो उसके परीक्षण और अनुभवकी आवश्यकता है। इसी प्रकार इसी अभ्रकके पचासों भेद बन जावेंगे। पुटोंकी अधिकता और अल्प संख्यताके हिसाबसे भी उनमें भिन्नता होगी। परन्तु आधुनिक विज्ञानवादी उसे मानेगा नहीं। परीक्षण करेगा और उसके परीक्षण करोड़ों रुपये व्यय करनेपर भी युगोंमें पूरे होंगे नहीं। तब तक 'कन्या कुंवारी ही बैठी रहेगी'।

काष्ठौषधियोंके विषयमें भी बहुत देखना है। अश्व-गन्ध और वृद्धारकका चूर्ण वाजोकरण बताया है। यदि संयम रखा जावे तो वलीपलितका नाशक हो जाता है।

“अगत्वा प्रमदां भूयो वलीपलितवर्जितः।”

इसका ही दूसरा प्रयोग शतावरीके काथकी भावना देनेका है। तीसरा प्रयोग भृंगराजकी भावना देकर भी बन सकता है। चौथा प्रयोग शुण्ठीकी भावनासे भी बनाया जा सकता है। और भी कल्पनाविधि हो सकती हैं। परन्तु क्या इन सबका एक ही गुण होगा? यदि आप 'नहीं' भी कहें तो भी निःसंशय आप यह भी नहीं कह सकते कि “हां” एक ही गुण होगा। तब फिर कीजिये अनुभव और परीक्षण। परन्तु यह करे कौन। क्या अनुसन्धानशालाएं? जी हां, अनुसन्धान शालाएं ही। परन्तु सरकारी अनुसन्धान शालाओंमें यह सम्भव नहीं है। इसे केवल अधिकारी वैद्य ही कर सकता है। उसका चिकित्सालय ही अनुसन्धान शाला है।

ऐसे अधिकारी वैद्य भारतमें सहस्रों हैं, शायद

लाखों। परन्तु न तो उन्हें इसकी सुविधा दी जाती है, न कोई प्रोत्साहन और न ही कोई मार्गदर्शन। ऐसी स्थितिमें यह वैज्ञानिकोंकी सेना निष्क्रिय बैठी हुई है। उसके अस्त्र शस्त्रोंको, उसके बल पौरुषको, उसकी प्रतिभा और प्रयत्नोंको काठ खा रहा है। साथ ही उसे निरुत्साहित किया जा रहा है। उसके कार्यके साधन और जीविकाके साधनोंको भी छीना जा रहा है। भला ऐसी स्थितिमें उससे क्या आशा की जा सकती है। वह इतनेपर भी वैद्य हैं। वैद्योंकी सेना है। बस यह नाम मात्र ही पर्याप्त समझना चाहिये।

यदि सरकारसे कहा जाता है कि इनका अनुसन्धानमें उपयोग करो तो वह इसे अव्यवहार्य बताती है। कहती है, कहीं ऐसे भी अनुसन्धान होता है। फिर सुविधा और मार्गदर्शनका तो प्रश्न ही नहीं उठता। इसके विपरीत वैद्यकी शक्तिको क्षीण करनेके, उसके कार्य क्षेत्रको संकुचित करनेके प्रयत्न बराबर चल रहे हैं। उसकी लगाम बराबर कसती ही जा रही है। बच्चेने किसी महिलाको माता समझा। परन्तु यह नवेली माता उसे दूध तो पिलाती नहीं घूंनोंकी मार अवश्य देती है। यही हाल है सरकार माता और वैद्य शिशुका।

ऐसी स्थितिमें अपने बाल्यकालमें पढ़ा हुआ पाठ 'पहियेमें अपना कन्धा लगाओ' वाला स्मरण हो आता है। इस समस्त दीर्घकालीन कटुअनुभवसे असह्य वेदनाका अनुभव करके और उक्त पाठसे दिशा प्राप्त करके हमने—

‘स्वास्थ्य’ का आगामी विशेषाङ्क अनुभवाङ्कके रूपमें प्रकाशित करनेका निश्चय किया है।

इस अनुभवाङ्कके रूपमें हम कोई विशेषांक प्रकाशित करनेकी परम्परा मात्रका पालन करने नहीं जा रहे हैं। हम इसे भारतके समस्त स्वाभिमानी आत्म गौरवको अनुभव करनेवाले, आयुर्वेदके पूर्व महत्त्वकी प्राप्ति की तीव्र अभिलाष रखनेवाले, हृदयमें एक टीस, एक तड़पन अनुभव करनेवाले जागृत वैद्योंके सामूहिक अभ्युत्थानके लिए एक नम्र एवं

रचनात्मक प्रयासके श्रीगणेशका रूप देना चाहते हैं।

अनुभव परीक्षणोंद्वारा होता है। विविध रोग उनके विविध उपचार और अनेक औषध योग प्रति-दिन वैद्योंके सम्मुख आते रहते हैं। उनका जिज्ञासा-पूर्वक, कारण कार्य सम्बन्ध विचार और ऊहापोह सहित अध्ययन करते हुए प्रयोग करनेसे नवीन तथ्योंकी और अनुभवोंकी प्राप्ति होती है। ऐसी उपलब्धियाँ चिकित्सकोंके जीवनमें कम नहीं होती। परन्तु उनका विवरण नहीं रक्खा जाता। यदि बुद्धिमान्, विद्वान् एवं ज्ञानके विकासके समर्थक वैद्यजन अपनी उपलब्धियों, उनके साथ लगे हुए परीक्षणों एवं अनुभवोंका समुचित विवरण प्रस्तुत करनेकी परिपाटी डाल लें तो एक बहुत सुन्दर संग्रह बन सकता है। यदि देशके वैद्योंके संग्रहोंमेंसे अधिकसे अधिक सुन्दर एवं व्यवस्थित अनुभवोंको चुन लिया जावे और उनका प्रकाशन व्यवस्थित रूपसे किया जाया करे तो सभीको उससे लाभ मिल सकता है, उन अनुभवोंमें वृद्धि और परिष्कार हो सकता है और आयुर्वेदके कोशमें नई देन हो सकती है।

हम 'स्वास्थ्य' के अनुभवाङ्कमें तो अनुभूत विषयोंका प्रकाशन करेंगे ही। परन्तु हमारी इच्छा है कि उसके अनन्तर भी हम इस प्रकारके अनुभवों और परीक्षणोंको नियमित रूपसे 'स्वास्थ्य' में स्थान दें। आयुर्वेद और वैद्योंकी इस सेवाके कार्यमें यदि हम अपने आपको समर्पित कर सकेंगे तो हम कृतार्थताका अनुभव करेंगे।

परन्तु यह कार्य बहुत विशाल है, श्रम तथा व्यय साध्य है। साथ ही इस प्रवृत्तिसे प्रेम रखने वाले सभी वैद्योंके सहयोगकी सर्वाधिक अपेक्षा रखता है। हम अपने सभी वैद्य बन्धुओंको इस शुभ कार्यमें पूरा पूरा सहयोग देनेके लिए प्रेमपूर्वक, श्रद्धापूर्वक और अत्यन्त विनम्रतापूर्वक आमन्त्रित करते हैं। यदि हमें विज्ञ बन्धुओंका समुचित सहयोग मिला, जिसकी कि पूर्ण आशा एवं विश्वास है, तो हम इस प्रवृत्तिको भविष्यमें अधिक लाभदायक और सुन्दर रूप देनेका यथा शक्ति प्रयास करेंगे।

"तदस्मै देवा उपसन्तमन्तु"

"इसलिए हे विज्ञ बन्धुओ! आओ इस कार्यमें जुट जावें।"

विजय मन्त्र

भारत और पाकिस्तान युद्धके बाद क्या हुआ। उस समय तो भारतको पाकिस्तानसे ही प्रत्यक्ष संघर्ष करना पड़ा था। परन्तु २३ सितम्बरको युद्ध विराम होते ही इस युद्धने दूसरा रूप धारण कर लिया। अब यह युद्ध गोली बारूदका न होकर राजनैतिक दाब पेचोंके रूपमें प्रकट हुआ और इसका क्षेत्र सुरक्षा परिषद् तथा संसारके समस्त राष्ट्र बन गए।

वास्तवमें ब्रिटेन जैसे देशोंने देखा कि प्रत्यक्ष युद्धमें तो भारतको चित्त नहीं किया जासका है। अतः अब उसे युक्तिपूर्वक सुरक्षा परिषद्में ही गोल कर दिया जावे। फलतः उन्होंने पाकिस्तानको सामने करके अपनी कूटनीतिक गति विधियोंको वहां अच्छे प्रकार बढ़ा दिया। इसमें भी सन्देह नहीं कि इस कार्यमें अन्य निहित स्वार्थ वाले देशोंका भी राजनीतिक ढंगसे अप्रत्यक्ष सहयोग प्राप्त हुआ।

परन्तु भारत ने अपने सुदृढ़ निश्चयके आधारपर तथा अपने मित्रों रूस, मलेशिया, यूगोस्लाविया तथा मिश्र आदिके सहयोगसे उस कठिन राजनैतिक चालोंके क्षेत्रमें भी सफलता प्राप्त की है।

परन्तु इन दो प्रकारके युद्धोंमें कुछ बातें बहुत ही स्पष्ट रूपमें देश और विश्वके समक्ष उपस्थित हुई हैं। पहिली बात तो यह कि भारतको अपने वास्तविक मित्रों और शत्रुओं तथा उदासीन देशोंकी परीक्षाका अवसर मिल गया और अब वह इस विषयमें निश्चिन्त रूपसे अपना निश्चय कर सकता है।

द्वितीय बात यह कि भारतके जिस जनतन्त्रात्मक रूपके सम्बन्धमें अनेक बार सन्देह उठा करते थे और लोग यह सोचते थे कि ऐसे तन्त्रसे शीघ्रता और बलके साथ आवश्यक कदम नहीं उठाए जा सकते हैं उन सन्देहोंका निवारण होकर जनतन्त्रकी शक्तिका प्रत्यक्ष दर्शन देशवासियोंने किया है। भिन्न मतों, भिन्न दृष्टिकोणों और धर्मोंके द्वारा भी किस प्रकार जनसत्ता

बलवान
किस प्र
तूफानी
देख लि
यह
हुई तो
पत्त रख
प्रदर्शन
एक द
मुझे स
आगे न
सहस्र
कार्योंके
नहीं है
परिषद्
देखिये
दृष्टिको
क्या क
कार्य प्र
आधार
सम्मि
नहीं है
स
अथवा
अवसर
सहाय
यह र
और प्र
पड़नेप
है। अ
आदि
और प
दिखा
दे रह
सहाय
लिया
आधार
राजनै

बलवान् बनती है और उसके निश्चय तथा कार्योंमें किस प्रकार अकरुणनीय प्रबल शक्ति और अप्रतिहत तूफानी वेग उत्पन्न होता है, यह भी हमने प्रत्यक्ष देख लिया है।

यह बात भी देखनेमें आयी कि जब आवश्यकता हुई तो विदेशोंमें अपने दृष्टिकोणको समझाने, अपना पक्ष रखने और वहाँके नेताओं तथा जनताको सत्यका प्रदर्शन करनेके लिए भारतके तो अनेक राजनीतिज्ञ एक दम अनेक देशोंमें फैल गए परन्तु पाकिस्तानमेंसे भुट्टो साहबके सिवा एक व्यक्ति भी इस कार्यके लिए आगे न आसका। भारतमें देखिये तो एक कार्यके सहस्र हाथ हैं और वहाँ पाकिस्तानमें देखिये तो सहस्र कार्योंके लिए सचमुच एक हाथ और एक व्यक्ति भी नहीं है। जहाँ देखिये वहीं भुट्टो साहब। सुरक्षा परिषद्में देखिये तो भुट्टो, पाकिस्तानकी पार्लियामेन्टमें देखिये तो भुट्टो और कहीं किसी देशमें अपना दृष्टिकोण समझाना हो तो भुट्टो। बेचारे भुट्टो अब क्या करें। यह है तानाशाहीका परिणाम। क्योंकि कार्य प्रारम्भ करनेके समय तानाशाही निर्णय ही उसका आधार था, उसमें सभीकी सम्मति, सबका विचार सम्मिलित नहीं था इसलिए आज साथ भी किसीका नहीं है।

सबसे महत्व पूर्ण बात जो आज सामने आई है, अथवा यों कहिये कि देशको पुनः अनुभव करनेका अवसर मिला है वह यह है कि दूसरे देशोंकी सहायतापर निर्भर होकर नहीं रहा जा सकता। यह राजनैतिक दुनिया है। यहाँपर प्रत्येक विषय और प्रत्येक बातका राजनैतिक उपयोग आवश्यकता पड़नेपर भयंकर निर्लज्जताके साथ किया जा सकता है। आज ब्रिटेन जो भी थोड़ा बहुत अस्त्र शस्त्र मैशीन आदि हमें बेचता है, जिसके बदलेमें वह हमसे खरा और पर्याप्त मूल्य लेता है, उसके देनेमें भी कैसे नखरे दिखा रहा है और कितनी दूषित मनोवृत्तिका परिचय दे रहा है। अमेरिका जो अन्नकी सहायता—उसे सहायता ही कहा जाता है यद्यपि वह भी खरीदकर लिया जा रहा है—देता है, उसमें भी वह अपने मतलबके आधारपर शर्तें लगाना चाहता है और उससे अपने राजनैतिक स्वार्थोंकी पूर्ति करना चाहता है।

इससे यह बात बिलकुल स्पष्ट हो गई है कि जहाँ देश अपने रक्षा साधनों और अस्त्र शस्त्रके बिना नहीं रह सकता वहाँ वह अन्नके बिना भी नहीं रह सकता। न ही दूसरे देशोंसे अन्न प्राप्त कर जीवित रह सकता है। साथ ही दूसरे देशोंकी पूँजीपर भी अनन्त काल तक निर्भर नहीं रहा जा सकता।

ऐसे समय हमारे प्रधान मन्त्रीने बड़ी दूर दर्शिता और सूक्ष्म बूझसे काम लिया है। यह मानना ही पड़ेगा कि युद्धके समय उन्होंने जिस सर्वप्रिय नीतिमत्ता और अदम्य साहसका परिचय दिया था उसी प्रकार युद्धके बाद भी अपनी सूक्ष्म बुद्धि और दूर दर्शिताका परिचय दिया है। उन्होंने तीन कार्य प्रमुख रूपसे सामने रखे हैं। प्रथम तो यह कि युद्ध और शान्तिके समय काम आनेवाले शस्त्र और मैशीन आदिके निर्माणको शीघ्रताके साथ देशमें ही बनाया जावे। दूसरा यह कि दूसरे देशोंसे ऋण माँगनेके बजाय अपने देशमें ही निष्क्रिय पड़े हुए स्वर्णको एकत्र कर काममें लिया जावे। तीसरी बात यह कि खाद्य पदार्थोंमें आत्मनिर्भरता प्राप्त की जावे। उसके लिए अधिक उपजाओ और अधिकसे अधिक बचाओके दो लक्ष्य सामने रखे हैं।

इनमेंसे अस्त्र अस्त्र और यन्त्र आदिके निर्माणका विशेष सम्बन्ध उन कारखानोंमें काम करनेवाले लोगों तथा इन्जीनियर आदि विशेषज्ञोंसे है। दूसरे सुवर्ण बौद्ध खरीदनेका सम्बन्ध विशेष रूपसे उन लोगोंसे है जिनके पास कि कुछ सोना और धन इस प्रकारका है, जिसे कि राष्ट्रके उपयोगमें लाया जासके। अन्न उपजानेका विशेष सम्बन्ध कृषकों और खेतीके कार्य करने वालोंसे है। परन्तु एक कार्य ऐसा है जिससे कि राष्ट्रके प्रत्येक व्यक्तिका सीधा सम्बन्ध है और वह है समाह में एक समयका भोजन छोड़ना या एक समयके भोजन की बचत करना।

राष्ट्र पिता महात्मा गाँधीने भारतसे अंग्रेजोंको भगानेके लिए देशको चर्खा दिया था। उस समय अपने आपको बुद्धिमान् समझने वाले लोगोंने गाँधीजीकी उस बातका उपहास किया था। कहा था कि क्या चर्खा तोप है जो अंग्रेजोंको मार भगाएगा। परन्तु

गान्धी जी क्रान्तदर्शी थे। उन्होंने वह बात देखी थी जिसे कि अन्य प्रतिभावान् लोग उस समय नहीं देख सके थे। व्यापारिक वृत्ति वाले, व्यापारिक तन्त्र द्वारा हमको पराधीन रखने वाले अंग्रेजोंको भगानेके लिए अपनी आवश्यकताओंको स्वयं पूर्णकर उनके व्यापारको समाप्तकर भगानेका स्वप्न उन्होंने देखा था। चर्खा गृह उद्योगों, ग्रामोद्योगों आदिकी उन्नति और आत्म निर्भरताका प्रतीक था। उस चर्खेका ही प्रताप था कि देशने लंकाश्वरके कारखानोंके पहियोंको बन्द कर दिया और उसका ही यह प्रभाव है कि आज भारतका बना कपड़ा लंकाशायर और मैनेचेस्टरके देश इंग्लैण्ड को भेजा जा रहा है। वह आत्म निर्भरताका प्रतीक आज भी देशके लिए उतना ही महत्त्व पूर्ण और प्रेरणाप्रद है।

श्री शास्त्री जी ने जो सप्ताहमें एक समयके व्रतकी बात कही है उसके मूलमें भी कुछ ऐसी ही शक्ति एवं दूर दर्शिता छिपी है। जो दूसरोंका ऋणी नहीं बनना चाहता, परमुखापेक्षी नहीं रहना चाहता उसके लिए यह आवश्यक है कि अपनी आवश्यकताके लिए पर्याप्त उपार्जन स्वयं करे और साथ ही मितव्ययताके व्रतको दृढ़ताके साथ पकड़ ले। जो उपार्जन भी करता है परन्तु मित व्ययी नहीं है वह ऋणप्रस्त होता ही है। ऋणी होनेके पाप, अभिशाप और तापका उसे खेद पूर्वक, पश्चात्ताप पूर्वक विवश हो अनुभव करना ही पड़ता है।

देश स्वतन्त्रताके मदमें, स्वतन्त्रताके मूल्यका उचित अनुमान नहीं लगा सका। सब ओरसे निश्चिन्तता सी दृष्टिगोचर होने लगी। उधार लेकर उदरपूर्ति की जाने लगी और निश्चिन्तताकी, मस्तीकी बंशी बजने लगी। युद्धने उस निश्चिन्तताको ठोकर दी। उधार देनेवाले देशोंने आंखें और नखरे दिखाये। देशकी आंखें खुलीं। सबसे अधिक उत्तरदायित्व

पूर्ण कार्यको बहन करनेवाले शास्त्रीजीने इस बातका सबसे अधिक तीव्रतासे अनुभव किया है और वह मन्त्र सबके सामने रक्खा है, जिसके निरन्तर पाठसे, जपसे और व्यवहारसे देशका प्रत्येक व्यक्ति उस स्थितिका उतनी ही तीव्रतासे अनुभव कर सकेगा तथा उसके निवारणके लिए प्रयत्न शील हो सकेगा।

एक समयके व्रत रखनेसे बचत तो होगी ही। बिन्दु बिन्दुसे घट भरता है। यदि एक व्यक्तिके एक समय उपवाससे १२५ ग्राम भी अन्न बचे और देशमें पांच करोड़ व्यक्ति भी एक सप्ताहमें यह व्रत करें तो चार सप्ताहमें-प्रति व्यक्ति ५०० ग्रामके हिसाबसे- २,५०,००,००० दों करोड़ पचास लाख किलोग्राम अन्न बच सकता है। परन्तु बचतकी दृष्टिसे इस व्रतका वह महत्त्व नहीं है जो कि मानसिक और आध्यात्मिक दृष्टिसे है।

आज देशके हितोंके विषयमें जो सार्वजनीन सार्वत्रिक उदासीनता व्याप्त हो रही है, जो निश्चिन्तता सी सब ओर दिखाई दे रही है उसको दूर करनेके लिए और अधिकसे अधिक संवेदनाके साथ देशके हितके विषयमें विचार करने, अनुभव करने और देशके कार्यमें आवश्यक आत्मीयताका भाव जागृत करनेके लिए यह अमोघ मन्त्र है। यह मन्त्र अपनी समस्त शक्ति और प्रभावसे युक्त होकर सर्वार्थ साधक बन सके इसलिए श्री शास्त्रीजीने दूसरा प्रस्ताव किया है कि यह व्रत सप्ताहमें सर्वत्र एक ही दिन सोमवारको किया जावे। इस सामूहिक संवेदना, और संकल्पसे राष्ट्रको जो शक्ति और बल प्राप्त होगा उसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

राष्ट्रके प्रत्येक व्यक्तिको इसकी महत्ता समझनी है। यह राष्ट्रके अभ्युत्थानका मन्त्र है। अजेयताका मन्त्र है और है विश्वविजयका मन्त्र।

जय भारत

स्वास्थ्यमें विज्ञापन देकर लाभ उठावें

औषधियोंके विशेष गुण

मूल गुजरातीसे अनूदित

लोक विज्ञप्तिसे भयभीत अनुभवी एवं विद्वान् लेखक महोदय ने अपना नाम प्रकाशित करनेका निषेध किया है। हम भी उनके नामको प्रकाशित करनेकी अपनी इच्छाका दमनकर उनकी इच्छा और आज्ञाका पालन कर रहे हैं।

लेख वास्तवमें अत्यन्त उपयोगी है। आयुर्वेदीय योगोंके विषयमें आवश्यक ज्ञानके अभावमें उत्पन्न होने वाली प्रमुख शङ्काका समाधान इसमें किया गया है। यह बात सत्य ही है कि आज आयुर्वेदके विषयमें असंशय ज्ञानकी प्राप्ति और शास्त्रीय एवं प्रायोगिक रहस्योंके उद्घाटनका प्रयत्न तो कम ही दृष्टिगोचर होता है। परिणाम स्वरूप आयुर्वेदीय विषयोंका यथार्थ मूल्याङ्कन तो हो नहीं पाता प्रत्युत व्यर्थके सारहीन आक्षेपों और शङ्काओंका उद्भव होता है। लेखक महोदयने बड़ी सरल भाषामें स्वाभाविकताके साथ शङ्काका समाधान किया है। आशा है कि जिज्ञासुओंको इससे उचित दिशा प्राप्त होगी।

—सम्पादक

कुछ मास पूर्व एक सज्जन वैद्यराजने औषधियोंके विशेष गुण प्रतिपादित करने वाली फलश्रुतिमें शङ्का प्रदर्शक प्रश्न किया था। इस प्रकारकी शङ्का और भी अनेक वैद्यों और विद्यार्थियोंको होती ही होगी। वे लोग ऐसी फलश्रुतिपर पूर्ण एवं उचित विचार किये बिना ही उसे अतिशयोक्ति पूर्ण रोचक गुणोंका वर्णन मान लेते हैं। यहांपर इस प्रश्नका समाधान मैं अपनी बुद्धिके अनुसार करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। इसलिये पहिले तो कुछ औषधोंके शास्त्रोक्त गुण प्रदर्शित किए जा रहे हैं। उसके अनन्तर समाधान करनेका प्रयत्न किया जावेगा।

१. शिलाजतुके विषयमें महर्षि आत्रेयने कहा है—

“न सोऽस्ति रोगो भुवि साध्यरूपः
शिलाद्वयं यन्न जयेत् प्रसह्य ॥”

संसारमें साध्य रूप वाला ऐसा कोई रोग नहीं है जिसमें विधिपूर्वक पथ्य पालन सहित शिलाजतुका

प्रयोग किया जावे और वह दूर न हो। अर्थात् इसके द्वारा सभी रोगोंका शमन होता है।

२. वंग भस्मके विषयमें शास्त्रमें लिखा है।

“वङ्गं भक्षयतो नरस्य न भवेत्
स्वप्नेऽपि शुक्रक्षयः ॥”

×

×

“सिंहो यथा हस्तिगणं निहन्ति
तथैव वङ्गोऽखिलमेदुर्गम् ॥”

शास्त्रोक्त मर्यादा जानकर स्त्री समागम करते हुए पथ्यपालन और योग्य अनुपान सहित वंगभस्मका सेवन करनेसे शुक्रस्थान और शुक्रकी निर्वलता उत्पन्न करने वाले सभी कारणोंका नाश होजाता है और स्वप्नमें भी शुक्र क्षय नहीं होता।

३. नागभस्मकी फलश्रुति शास्त्रमें बतायी है :—

“नागस्तु नागशततुल्यबलं ददाति
व्याधिं विनाशयति जीवनमातनोति ॥”

“नाग भस्मके सेवनसे युवावस्था वालोंको सौ हाथियोंका बल प्राप्त होता है। रोग दूर होजाते हैं और आयुष्यकी वृद्धि होती है।”

४. ‘सुवर्णभूपति’ रसके सेवनका फल बताया है कि—

‘सर्वरोगविनाशाय सर्वेषां स्वर्णभूपतिः ॥’

“समस्त प्रकारके रोगोंको नष्ट करनेके लिए अन्य औषधोंसे स्वर्णभूपति रस श्रेष्ठ है।”

इस प्रकारके वर्णन अनेक औषधोंके गुणोंके सम्बन्धमें देखनेको मिलते हैं। परन्तु ऐसे गुण वर्तमानमें तो प्रत्यक्ष रूपमें देखे ही नहीं जाते हैं। संसारके सभी देशोंमें मधुमेह, कर्करफोट (कैंसर), विचार शक्तिका क्षय, (मानसिक उदासीनत्व-मेलन्कोलिया, Melancholia), नपुंसकता, गलतृकुष्ठ आदि रोग असाध्य माने गए हैं। इनके ऊपर कोई भी आयुर्वेदिक औषध लाभ नहीं पहुँचा सकती है। परन्तु इनको भी नष्ट करनेका फल बताने वाले वर्णनोंको क्या माना जावे? इस प्रकारकी शङ्का प्रकट की गई है।

इस प्रश्नका उत्तर प्राप्त करनेके लिए भूतकालके मनुष्योंके शरीरबल, शरीरगठन, वर्णाश्रम मर्यादा, मानसिक शक्ति, वातावरण तथा उस समय द्रव्योंकी शक्तिपर विचार करना उचित है। सामान्यतः इन सभी शक्तियोंका ह्रास हुआ है।

श्री कृष्ण भगवान्ने जब अपने परमधामके लिये प्रस्थान किया तब उनकी आयुष्य १२५ वर्षकी थी। उन्होंने कौरव पाण्डवोंके युद्धसे ३६ वर्षके अनन्तर शरीर परित्याग किया था। इसलिए युद्धके समय उनकी वयस् ८९ नवासी वर्षकी थी। अर्जुन उनसे दो वर्ष छोटे थे। इसलिये युद्धके समय वे ८७ सत्तासी वर्षके थे। भीमसेन श्रीकृष्णसे २ वर्ष बड़े थे अतः उनकी अवस्था उस समय ६१ इक्यानवे वर्षकी थी। उस समय यह सभी युवा माने जाते थे। परन्तु अब तो इतनी अवस्था वाले बहुत वृद्ध माने जाते हैं। अधिकांशको तो इतनी आयुष्यकी प्राप्ति ही नहीं होती है।

प्राचीन युगमें एरोप्लेन, रेल, मोटर, रेडियो आदि साधन नहीं थे। एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जानेके लिए आजके जैसी सड़कें भी नहीं बनी हुई थीं। उस समय राजा, धनिक और सुखी पुरुष घोड़ेपर चलते थे। घोड़ा गाड़ियों या बैल गाड़ियोंमें यात्रा करते थे। अवसर पड़ जाता तो यह लोग पैदल ही सौ, सौ मीलकी भी यात्रा कर लेते थे। उनके शरीर सुगठित तथा दृढ़ होते थे। रोग तो बहुत कम स्थानोंपर बहुत कम मनुष्योंको हुआ करते थे। सामान्य रूपसे अधिक संख्यामें लोग आजीवन नीरोग रहते थे।

मनुष्योंकी वस्ती प्राचीन युगमें बहुत कम थी। पशुओंकी संख्या शायद आजकी अपेक्षा सौगुनी अधिक थी। बड़े बड़े जंगल थे। वर्तमानमें जिस प्रकार लोग परमाणु बमोंके परीक्षणोंद्वारा विश्वके वायु मण्डलको दूषित कर रहे हैं उस प्रकार भूतकालमें कोई भी ऐसे राक्षसी एवं सृष्टि विनाशक कार्य नहीं करता था। इसके विपरीत लोग विश्वकल्याणकी भावनासे सुगन्धित एवं वायु शोधक सामग्रियोंद्वारा यज्ञ याग आदिका अनुष्ठान करते रहते थे। इसलिए वायु मण्डल शुद्ध रहता था। वनस्पति, अन्न और औषध द्रव्य सभी वीर्यवान् उत्पन्न होते थे। मनुष्योंकी रोग निरोधक शक्ति अच्छी और प्रबल थी। इस कारणसे पथ्य पालन सहित औषधोंका सेवन करनेसे बहुतसे जटिल बन जाने वाले रोगोंका भी नाश करनेमें लोग समर्थ होते थे।

शास्त्रोक्त वर्णाश्रमकी मर्यादाका आग्रह पूर्वक पालन किया जाता था। ब्रह्मचर्याश्रममें रहने वाले चाहे राजा और धनिकोंके बालक होते तो भी उन्हें बहुत ही परिश्रम अन्य सब ब्रह्मचारियोंके समान ही करना पड़ता था। भूमिपर कठोर बिछौना बिछाकर सोते थे। ओढ़नेके लिए भी वस्त्र अधिक नहीं होते थे। प्रातः काल ब्राह्ममुहूर्तमें ही उठकर शीत ऋतुमें भी जलशयमें अथवा शीतल जलसे स्नान करना पड़ता था। इस प्रकार तपश्चर्या और व्रत पालन पूर्वक इसी आश्रममें सभी बालकोंको मन और शरीरको बलवान् एवं स्वस्थ बनानेकी ओर पूरा पूरा ध्यान सतर्कतासे

प्राणायाम, जप-ध्यान आदि करते रहनेसे जीवनी शक्ति (परओज, विद्युत् और इसके आश्रय रहने वाली वाइटेलिटी) सबल बन जाती थी। इसी कारण सभी लोगोंकी नैसर्गिक रोग निरोधक शक्ति (Natural Immunity) अपना कार्य शीघ्र ही पूरा पूरा कर सकती थी। इस लिए कदाचिन् कोई विकार हो भी जाता था तो शीघ्र ही वह दूर भी हो जाता था। जीवनी शक्ति प्रबल होनेसे संकल्पके अनुसार औषधसे लाभ भी लिया जा सकता है और दूसरोंको भी लाभ पहुँचाया जा सकता है। मन्त्र वैद्यकी संकल्प शक्ति सबल होनेसे उसे यश मिलता रहता है।

आयुर्वेदमें रोग निरोधक शक्तिको बलवान् बना कर रोगको दूर करनेका प्रयत्न किया जाता है। परन्तु एलोपैथिकमें जिससे रोगके ऊपर ही परिणाम हो ऐसी चिकित्सा की जाती है। इस कारण आम विष आदि रोगके मूल कारण शरीरमें बने रह जाते हैं। उससे रोग निरोधक शक्ति शिथिल हो जाती है या नष्ट ही होजाती है। इस कारणसे यह अर्वाचीन अप्राकृतिक चिकित्सा आयुर्वेदके प्राचीन आचार्योंके विचारके अनुसार मन और शरीरको बहुत हानि एवं धक्का पहुँचाने वाली है।

मद्य, गांजा, अफीम, सिगरेट, बीड़ी, गरम गरम चाय, काफी आदिके व्यसनसे अथवा बारम्बार तले हुए पदार्थ, गर्मममाला, तेज मिर्चे और अति खट्टे पदार्थोंके खाने रहनेसे शरीरके आन्तरिक यन्त्रोंकी संरक्षक श्लैष्मिक कला (म्यूकस मेम्ब्रेन) की पोषक कफके उत्पन्न करनेकी शक्ति नष्ट होती जाती है। शुद्ध रक्तको वहन करने वाली धमनियां (Arteries) की दीवालें कठोर हो जाती हैं। जिसे कि आर्टीरियो-स्क्लेरोसिस (Arteriosclerosis) कहते हैं। बादमें यन्त्र अपना कार्य करनेमें शनैः शनैः अशक्त होकर निर्जीव बन जाते हैं। ऐसी स्थितिमें एलोपैथिक तीव्रतम औषध चाहे उच्च जना भले ही दे परन्तु विचारवान् मनुष्य उसे उचित नहीं मान सकता। बिना किसी परवाहके स्वच्छन्द होकर शरीरकी रोगनिरोधक शक्ति और यांत्रिक शक्तिका दिवाला निकालते रहने और जीवित हो औषधोंके बलपर चलानेका मार्ग

अन्तमें एक न एक दिन तो एलोपैथी वालोंको छोड़ना ही होगा। अब चिकित्सा विशेषज्ञ विद्वानोंका ध्यान इस ओर होता जा रहा है।

पृथक् पृथक् औषधोंका क्षेत्र भी पृथक् पृथक् ही है। कोई औषध कफघ्न, कोई पित्तघ्न, कोई वातघ्न है, और कोई औषध द्वन्द्वज रोगोंपर कार्य करने वाली होती है। इसके बाद भी कुछ औषध तीव्रावस्था (एक्यूट स्टेज) में काम करने वाली होती हैं तो कुछ मंदगतिसे आगे बढ़ने वाली जीर्णावस्था (क्रानिक स्टेज) में हितकर होती हैं। इस प्रकार औषधोंकी मर्यादा समझकर, दोषके बलाबलको देखकर, अधिकारी रोगीके ऊपर उचित पथ्य पालन सहित औषधका उपयोग किया जावे तो निश्चय ही शास्त्रोक्त लाभ पूरा मिलता है।

प्राचीन आचार्योंके कथनका दुरुपयोग नहीं करना चाहिये। उसका मन्तव्य ठीक रूपमें ही ग्रहण करना उचित है। किसी धनिकने पचास ब्राह्मणोंको भोजनके लिए निमन्त्रित किया हो और फिर भोजन प्रस्तुत होने पर कहे कि सभी ब्राह्मणोंको पट्टोंपर बैठा दो, तो उसका अर्थ यह तो नहीं किया जा सकता कि नगरके सभी ब्राह्मणोंको भोजन करनेके लिए पट्टोंपर बैठा दिया जावे। इसी रीतिसे ग्रन्थकारके अभिप्रायको समझकर तात्पर्यार्थ निश्चित करना चाहिये।

चिकित्सा करनेके लिए रोगोंको सामान्यतः दो समूहोंमें रक्खा जा सकता है।

(१) संस्थान अथवा यन्त्रोंके कार्यमें अन्तराय (विघ्न) उत्पन्न करने वाले जहर, क्रिमि, कीटाणु, अश्मरी, सिकता, कफ, आमप्रकोप आदि द्वारा शरीरके यन्त्रोंके कार्य विपरीत होने लगते हैं, और उससे ज्वर, कास, शिरःपीड़ा, अपचन, अतिसार, विषूचिका, वमन, गोण कुष्ठ (त्वचारोग), प्रमेह, दाह आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं, इस प्रकारके रोगोंपर औषधियोंका उपयोग सफल होता है।

(२) शस्त्रादिसे आघात, शस्त्रचिकित्सा, विद्युत्का धक्का लग जाना, ऊँचे स्थानसे गिर जाना, बाह्य तीक्ष्ण विषका प्रयोग, मद्य आदिका जोर्ण व्यसन, ब्रह्मचर्यके

अधिकतम भङ्गद्वारा प्राप्त होनेवाला ओजःक्षय, फिरङ्ग, सुजाक, अन्तर्विद्रधि आदि दुष्ट रोगोंसे पीड़ित स्त्रीके साथ अथवा इसी प्रकारके रोगोंसे पीड़ित पुरुषके साथ सहवास करनेके पीछे स्वच्छन्द व्यवहार आदि कारणोंसे जीवनी शक्ति, रोग निरोधक शक्ति और यांत्रिक अङ्ग यकृत, वृक्, मूत्राशय, आमाशय आदिका जीवनक्षय होनेके पश्चात् उपद्रवोंके दमन करनेके लिए उपचार करते रहना पड़ता है। ऐसे रोगोंका नाश कदापि नहीं हो सकता है। ऐसे रोगोंपर आयुर्वेदिक दिव्य औषधियोंका उपयोग असर करने वाला नहीं हो सकेगा।

भूतकालमें विशाल जङ्गल थे। इस कारणसे वर्षा भी अधिक होती थी। परिणाम स्वरूप काष्ठादि औषध द्रव्य, अन्न, घास-चारा आदि सभी वस्तुएं विशेष वीर्यवान् उत्पन्न होती थीं। इनसे मारणकी जानेवाली भस्मोंमें प्राण शक्तिका प्रमाण भी अधिक ही होता था। भस्मोंके जितने ही अधिक पुट दिये जाते हैं उनसे भस्ममें प्राणशक्तिका संग्रह अधिक होता जाता है। वैसे ही वैसे गुण प्रभाव भी प्रदर्शन करनेमें वह अधिक समर्थ होती है। अभ्रक और लोहको सहस्रपुटी बनाया जा सकता है। नाग, वज्र, रौप्य, सुवर्णकी शतपुटी भस्म की जा सकती है। इससे अधिक पुट लगायें तो इन भस्मोंमें और अधिक विद्युत्संग्रह नहीं हो सकता।

अभ्रकभस्म सहस्रपुटी, शतपुटी, या उससे कम पुट वाली सभी प्रकारकी भस्म रोगके शमनके लिये तो प्रायः समान गुण दर्शा सकती है, परन्तु जीवन शक्तिके बढ़ाकर आयुष्यको बढ़ानेके लिये अधिक पुट वाली भस्म ही अधिक हितकर गिनी जाती है।

स्वर्णवंगके निर्माणमें पारद संयोग किया जाता है इसमें पारद अधिक धारण कराया जासके और पारद अधिक प्रभावशाली हो तो उसकी प्राभाविक शक्तिको ग्रहण करनेके कारणसे स्वर्णवंग अधिक गुण दर्शा सकती है।

शिलाजतुकी परीक्षाके दो चिह्न आचार्योंने कहे हैं। वे सच्चे शिलाजतुमें देखनेमें नहीं आते हैं। कृत्रिम शिलाजतुमें वे दिखाये जासकें तो उसे सच्चा शिलाजतु

कहा नहीं जा सकता। ऐसी स्थितिमें भूतकालके शिलाजतु जितना लाभ वर्त्तमानके शिलाजतुसे मिलनेकी आशा रखना अनुचित ही गिना जावेगा।

प्राचीन कालमें बनाये हुए लोहस्तम्भ आज भी देखनेमें आ रहे हैं। उनके ऊपर वर्षाके जलका, शीतका और उष्णताका कोई भी प्रभाव नहीं हुआ है और न उनके ऊपर काठ (जङ्ग) ही चढा है। भूतकालमें लोहेकी ऐसी कड़ाहियोंमें दूध गर्म किया जाता था कि दूध उनमें उफान आनेपर भी बाहर नहीं निकलता था। उसमें हींग डालनेपर हिंगुकी गन्ध नष्ट होजाती थी, नीमका कलक उसमें रखनेसे तिक्तता चली जाती थी। इस जातिका लोहा वर्त्तमानमें मिलता नहीं है तो फिर उसकी भस्मके प्राचीन आचार्योंके द्वारा कहे हुए गुण किस रीतिसे मिल सकते हैं।

शिलाजतुका उपयोग पचन संस्थानकी विकृतिसे उत्पन्न होने वाले रोगोंपर होता है और वह वातसंस्थान तथा श्वसन संस्थानपर परम्परागत लाभ पहुँचा सकता है। ऐसी स्थितिमें इसे इन संस्थानोंके सब रोगोंकी मुख्य औषध नहीं कहा जा सकता।

वंगभस्मका उपयोग आम प्रकोपसे होने वाले सभी प्रकारके प्रमेहों, वीर्यस्थान और वीर्यविकारोंपर हो सकता है। वे रोग यदि अति जीर्णवस्थामें हों, अन्य यन्त्रोंकी विकृति तथा दूसरे संस्थानोंके रोगोंमें साथ हों तो वंगभस्मका शास्त्रोक्त पूरा लाभ मिल नहीं सकता है।

नाग भस्म शिथिल अवयवोंका आकुञ्चन करता है उसका मनःशिला और वासाकी भावना देकर मारण किया जावे तो श्वसन संस्थान, मांस संस्थान और पचन संस्थानपर विशेष लाभ पहुँचाता है। शरीरको यथावत् बलवान और स्फूर्तिवान् बनाता है। फिर भी वातसंस्थान, मूत्रसंस्थान और प्रजनन संस्थान आदिके रोगोंकी मुख्य औषधके रूपमें नागभस्मका उपयोग नहीं हो सकता है।

स्वर्णभूपतिके निर्माणमें कुङ्कुम भस्म और बच्छ नागका सम्मिलन कज्जलीके साथ कराया जाता है। फिर उसमें लोहासंयोजन भस्मके भी लिये गये हैं।

इस लिये यकृतपर अधिक लाभ पहुँचानेके साथ ही पचन संस्थानके रोगोंको भी दूर करता है फिर भी यकृत विद्रधि, मधुमेह, आन्त्रोंमें होनेवाले १०-१५ फुट लम्बे कृमि (टेपवर्म), आसाशय क्षत आदिपर यदि इस भस्मका उपयोग किया जावे तो योग्य असर नहीं कर सकती। संयोगज गुणोंके द्वारा कफ और आमविषसे उत्पन्न होने वाले सन्निपातों, आन्त्रज्वर (संग्रहणी), सेन्द्रिय विष जनित वातरोग (केन्द्रस्थान चक्र और उपचक्रोंका जिनमें विनाश नहीं हुआ हो), उरुस्तंभ, गलत्कुष्ठ आदि रोगोंपर योग्य अनुपानके साथ नागभस्मका उपयोग किया जावे तो ठीक ठीक प्रभाव दिखाती है।

आज अष्टवर्ग, ब्राह्मी, सोम, रसक (खर्पर), औषधोपयोगी वैक्रान्त और रसक्रियामें प्रयुक्त होनेवाले विक्रान्त आदि अनेक औषध द्रव्योंकी गुणवत्ताके विषयमें संशय रहता है। भूतकालमें वनस्पतियोंको मन्त्र तन्त्रद्वारा निमन्त्रण देकर लाया जाता था इन सभी विधियोंका वर्त्तमानमें लोप होगया है।

मन्त्रशास्त्री औषधि, भस्म, जल, अन्न आदिमेंसे किसी वस्तुको मन्त्रित करके देते थे परन्तु यह प्रकार अब देखनेमें नहीं आता।

संक्षेपमें यह कहा जा सकता है कि भूतकालमें द्रव्य श्रेष्ठ थे और सारणविधिमें जो रहस्य होते थे वे शिष्यों और पुत्रोंको-यदि वे निष्कामसेवा परायण जीवन वाले और विश्वसनीय होते थे तो-परम्परागत प्राप्त होते थे।

इस परम्पराके विच्छिन्न होजानेके साथ ही साथ वे विधिरहस्य भी लुप्त होते जा रहे हैं। मन्त्र शास्त्रियोंका स्थान कुछ हिप्नोटिज्म वालोंसे लेलिया है। परन्तु वे लोग स्वार्थी बन जानेके कारण समाजको विशेष लाभ नहीं पहुँचा सकते हैं। वास्तवमें औषधोंकी फलश्रुतिके अनुसार विविध औषध शास्त्रोंमें लिखे हुए रोगोंपर कार्य करने वाले होते हैं, परन्तु उस लाभकी प्राप्तिके लिये उस योगके निर्माणकी विशेषता और तदनुसार रोगकी विशेष स्थिति देखना नितान्त आवश्यक है।

पूर्णचन्द्रोदय रस (सिद्ध मकरध्वज)

इस पूर्ण चन्द्रोदयमें शास्त्र विधिसे संस्कारित तथा गन्धक जाड़ित पारद उप-योगमें लिया गया है। इस चन्द्रोदयके सेवनसे वात और कफ प्रकृति वालोंको शास्त्रकथित पूरा-पूरा लाभ मिलता है। यह चन्द्रोदय उत्तम हृदय पौष्टिक, वाजी-कर, विषघ्न, कीटाणुनाशक और रसायन (वृद्धावस्थाकी निर्बलताको दूरकर पुनः युवावस्थाके समान शक्तिप्रद) है। शारीरिक निर्बलता, मानसिक निर्बलता, शक्ति-क्षीणता, श्वास, कास, क्षय, अपस्मार, विषविकार, जीर्णज्वर, पाण्डु आदि जीर्ण रोगोंसे पीड़ितोंके लिए अमृतके समान उपकारक है।

मूल्य—१ ग्राम—रु० १०.१५।

रसायनी-विद्या

लेखक—कविराज श्री रत्नाकर शास्त्री

एम. ए. आयुर्वेद शिरोमणि, प्रतिष्ठित स्नातक, इटावा (उत्तर प्रदेश)

इस लेखका पूर्वार्ध गत नवम्बर ६५ के अङ्कमें प्रकाशित हो चुका है। पाठकोंने देखा कि इस विद्याका प्रवाह तात्कालिक परिस्थितियों और मानव स्वभावके कारण किस प्रकार अनैतिक धारामें परिवर्तित हो गया। लेखके इस भागमें विद्वान् लेखक ने अपनी परिष्कृत शैलीद्वारा यह प्रतिपादित किया है कि इस विद्याका मानवके वास्तविक लाभके लिए उपयोग करनेका प्रयत्न किस प्रकार प्रारम्भ हुआ और उसमें क्या प्रगति हुई।

—सम्पादक

ग्रन्थकारसे ज्योतिकी ओर

सिद्धोंकी परम्परा चौरासी संवत्शतक पहुँच गई। और लगभग १२वीं ई० शताब्दिमें उनका अन्त हो गया। महायानके प्रारम्भिक छः सौ वर्षोंमें (ई० पहली शताब्दिसे ६वीं शताब्दि तक) ही उसमें कुछ कुछ विकृति हो उठी थी। हुवेनसांग ने लिखा है कि वह जब भारत आया तब उत्तर पश्चिम प्रदेश, गंधार, और इर्द गिर्दके प्रदेशोंमें बौद्ध विहार थे। किन्तु जब वह भारतसे वापस होकर चीन लौटा तब वे विहार व्यभिचारके अड्डे बन गये थे। हुवेनसांग ७ वीं शताब्दिमें आया और प्रायः सात वर्ष भारतमें रहकर लौट गया। सात वर्षमें जो मीनार गिर पड़ा, उसकी दीवारें पहिलेसे ही कमजोर थीं। इसी समयके लगभग सिद्धोंका आविर्भाव हुआ था। इसमें सन्देह नहीं कि सिद्धोंने रसायनी-विद्यामें अनेकों प्रयोग, चाहे जिस उद्देश्यसे सही, कमालके खोज लिये। वे अनेक प्रयोग ऐसे भी पा गये जो आनुषङ्गिक थे। कुछ बनाते थे, कुछ बन गया किन्तु वे अन्य रोगियोंके हितमें काम आये।

अब स्वयं महायान सम्प्रदायमें ही विद्रोह बढ़

चुका था। यहां तक कि उनमें ऐसे लोग भी हुए जो 'बौद्ध' शब्दकी सीमामें बद्ध भी नहीं रहना चाहते थे। भेद तो प्रारंभसे ही था। भगवान् गौतमने अपने लिये 'बुद्ध' शब्द चुना, और इन लोगोंने 'सिद्ध'। बुद्ध आध्यात्मिक विकासके शिखरका नाम है, तो सिद्ध भौतिक साधनाके शिखर तक पहुँचता है। पर हैं दोनों शिखर। सिद्धि कामनाओंका फल है। और 'बोध' त्यागका।

सिद्धोंके बज्रयान और लिङ्गयानमें ही ऐसे भी लोग थे जो उन्हें समूल नष्ट करनेपर तुले थे। सिद्धोंके अनैतिक अत्याचारोंसे लोग ऊब गये थे। सिद्धोंकी परम्परामें अन्तिम सिद्ध मत्स्येन्द्रनाथ थे। उनके शिष्य गोरखनाथ ही सिद्ध सम्प्रदायके समूल नष्ट कर देनेमें सदा प्रयत्नशील रहे। उन्होंने लिङ्गयान और बज्रयानकी जनताके समक्ष पोल खोल दी। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन ही इन सिद्धोंकी धूर्तताका विध्वंस करनेमें लगा दिया।

फल यह हुआ कि लोगोंमें सिद्धाईकी प्रतिष्ठा समाप्त

आधारपर समझनेकी कोशिश की। यद्यपि अपनेको आस्तिक कहने वालोंमें भी 'भैरवी सम्प्रदाय' 'शाक्त सम्प्रदाय' जैसे अखाड़े थे, परन्तु उनके दिन बीत गये। ईसाकी नवीं शताब्दिमें ही रसायनी विद्यापर कुछ स्वरथ साहित्यका सृजन भी हुवा। भगवद्गोविन्दपाद का 'रसहृदयतन्त्र' उनमेंसे एक है। विशुद्ध वैज्ञानिक अनुसन्धानोंके आधारपर रसायनी विद्याका मुख उज्ज्वल होने लगा।

अब रसायनी-विद्याकी काया पलटी। लोगोंमें नैतिकता बढ़ी और परलोकका भय पैदा होगया। पहिले रसायनी-विद्या खाओ, पियो और मौज करोका साधन थी, किन्तु अब वह मोक्ष और धर्मका साधन बनाई जाने लगी। भौतिक सिद्धिको आध्यात्मिक भावनाने ग्रहण कर लिया। रसहृदयतन्त्र जैसे ग्रन्थ तैयार हुवे। वैज्ञानिक अनुसन्धानोंने रसायनी विद्याका मुख उज्ज्वल करना प्रारंभ किया। आस्तिक वैज्ञानिकों ने लिखा—

बालः षोडशवर्षो विषयरसास्वादलम्पटः परतः ।
जातविवेको वृद्धो मर्त्यः कथमाप्नुयान्मुक्तिम् ?
अस्मिन्नेव शरीरे येषां परमात्मनो न सम्भेदः ।
देहत्यागादूर्ध्वं तेषां तद्ब्रह्म दूरतरम् ॥
तस्माज्जीवन्मुक्तिं समीहमानेन योगिना प्रथमम् ।
दिव्या तनुर्विधेया हरगौरीसृष्टिसंयोगात् ॥
रस हृदयतन्त्र ।

भारतीय विद्वानोंकी एक शैली रही है—वे भौतिक तत्वोंका परिज्ञान अभौतिक आत्म ज्ञानके लिये मानते रहे हैं। सम्पूर्ण दर्शन शास्त्री इसी मार्गसे अग्रसर हुए हैं। पारदको वही गरिमा प्रदान कर दी गई।

“प्रत्यक्षेण प्रमाणेन यो न जानाति सूतकम् ।
अदृष्टविग्रहं देवं कथं ज्ञास्यति चिन्मयम् ?”

ईसाकी दसवीं शताब्दिसे बहुत पूर्व रस शास्त्रियोंको यह ज्ञात था कि पारदमें अन्य सब धातुओंका विलय हो सकता है। यह ठीक वैसे ही है जैसे ब्रह्ममें सब जीवोंका विलय हो जाता है।

“परमात्मनीव सततं लयो भवति यत्र सर्वसत्वानाम्”
रसहृदयतन्त्रके लेखक भगवद् गोविन्दपाद

सुप्रसिद्ध आचार्य शङ्करके गुरु थे। इनका समय प्रायः ईसाकी नवीं शताब्दि माना जाता है। रसेन्द्रचिन्तामणि रसरत्नाकर, रसेन्द्रसार संप्रह, रसेश्वरदर्शन, पातञ्जल लोह शास्त्र, आदि कितने ही ग्रन्थ रसायनी-विद्यापर लिखे गये हैं। इनमें पातञ्जललोह शास्त्रको छोड़कर शेष ईसाकी ८वीं शताब्दीके बादसे ही लिखे गये हैं। किन्तु पातञ्जलका लोह शास्त्र यह सिद्ध करनेके लिये पर्याप्त है कि रसायनी-विद्यापर भारतके वैज्ञानिक ईसाकी द्वितीय शताब्दिके पूर्वसे विचार करते रहे हैं। चूंकि पातञ्जल-लोह-शास्त्र अब उपलब्ध नहीं है, इसलिये यह कहना कठिन है कि उस समय रसायनी विद्यामें पारदका क्या स्थान था।

यह पतञ्जलि कौन थे ? यह प्रश्न भी बड़े महत्व का है। बहुतेरे विद्वानोंका यही विचार है कि महा भाष्यके रचयिता पतञ्जलि ही लोह शास्त्रके रचयिता भी रहे होंगे। शिवदासने चरक और पतञ्जलिके उद्धरण भिन्न भिन्न नामोंसे ही उद्धृत किये हैं, इस लिये यह निश्चय नहीं कहा जा सकता कि यह पतञ्जलि कौन हैं। चरक संहिता रचयिताका व्यक्तिगत नाम कहीं मिलता ही नहीं। व्याख्याकारोंकी परम्परामें उन्हें पतञ्जलि कहा जाता है। परन्तु चरक कश्मीर निवासी और पतञ्जलि गोन्दीय। फिर वे एक कैसे हुए ? यह संभव है कि लोह शास्त्रके लेखक महाभाष्यकार पतञ्जलि रहे हों। यदि ऐसा है तो पतञ्जलिका लोह शास्त्र ईसासे २०० वर्ष पूर्व रचा गया था।

वह ऐसा युग था जब रसायनी विद्या वैज्ञानिक वातावरणमें पनप रही थी। जीवन साधनाके लिये लोग प्राचीन वैदिक परिवारिक अनुसर यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधिके मार्गका अवलम्बन करते थे। यह त्यागका मार्ग था। लोग आश्रमोंमें पारिवारिक सीमायें बनाकर रहते थे। अपरिग्रही होनेके लिये उन्होंने सारी स्त्रियोंको बहिन, भाभी, माता, बुआ, जैसे सम्बन्धोंसे सीमित रखा। केवल एक पत्नी तक ही पुरुषको स्वतन्त्रता मिल सकी। बौद्धोंके विहार आश्रमोंकी भांति संयुक्त और सीमित न थे। एक भिक्षु और

दूसरी भिक्षुणी। इस सामान्य पृष्ठ भूमि पर 'जौन सा रिश्ता चाहो स्थापित करलो' यह मानकर ही बौद्ध आगे बढ़ा।

वैदिक मन्त्रोंकी भावनापर जो परम्परा चल रही थी, लोगोंने उसे दाहिने हाथकी मुट्ठीमें बन्द कर लिया, और बायें हाथसे एक दूसरा प्रयोग सामने प्रस्तुत किया। इसीलिये पहिला वैदिक मार्ग दक्षिण मार्ग रहा, और दूसरा सम्प्रदाय अपनेको वाम मार्ग कह कर आगे आया। पहिले दक्षिण पन्थी मन्त्रका अवलम्बन करते थे। दूसरे वाम पन्थियोने 'तन्त्र' की सृष्टि की, क्यों कि वह 'असम्बन्धमें सम्बन्ध' (तन्त्रणा) स्थापित करता था। मन्त्रका मनन पूर्वक प्रयोग होता है। इसलिये मन्त्रकी छाप मनपर अवश्य है। तन्त्र शरीर के भौतिक व्यवहारके बाद मनपर कोई छाप नहीं डालना चाहता। वह उसे निर्लेप रखकर प्रवृत्त होता है। पानीमें रहकर भी सूखा, आगमें पड़कर भी ठंडा। इसीलिये दक्षिण पन्थी जहां प्रत्येक साधनाको मनके वशीकारसे प्रारम्भ करते हैं, वाम पन्थी मनको अछूता रखकर शरीर तक ही समाप्त कर देते हैं।

"देह लोह मर्यां सिद्धिं सूते सूत स्वतः स्मृतः।"

"दिव्या तनुर्विधेया....."

आदि सारे आप्रह देहपर ही समाप्त होते हैं। इसीलिये वहां सारे वाम मार्गी पुरुष शिव हैं, और सारी वाम मार्गी स्त्रियां गौरी। इस रिश्तेका आधार एक ही मान लिया—

"पारदः शिव वीर्यं स्याद् गन्धकम् पार्वती रजः।"

मन्त्रको छोड़नेसे 'मनन' और मनका सम्बन्ध समाप्त होजाय, यही वाम मार्गीका आप्रह है। सांख्यने भी माना था—

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।

अहंकारविमूढात्मा कर्त्ताहमिति मन्यते ॥

मनका अहंकार मिट जाय तो 'निर्लेप' स्थिति स्वयं आजाय। परन्तु वे प्रकृतिका यह सहज सिद्धान्त भूल गये आत्मा, इन्द्रिय और मन तीनों मिलकर भोक्ता हैं।—

"आत्मेन्द्रिय मनो युक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः।"

अकेली इन्द्रियाँ भोग कब कर सकीं? वे चोरी

करनेके लिये मन और आत्माको फंसाये रहती हैं। दण्ड मिलेगा तो तीनोंको। अन्यथा तीनों वरी। तीनों वरी तो भोग कहां? पारद और गन्धकके भगड़ेमें कौन पड़े?

इसके प्रतिकूल तन्त्र शास्त्रका कहना यह है कि शरीरके कर्मका मन और आत्मापर संस्कार बनेगा, तभी भोगका मार्ग बनेगा। भोग मार्ग बनेगा तो पुनर्जन्म होगा। परन्तु इस विषय व्यासक्तिको समाप्त करनेका एक ही मार्ग है, भोक्ताको चाहिये वह एक ही भावना रखे 'भोक्ता मैं' शिव हूँ और भोग्य 'स्त्री' गौरी। यह वासना मन में रहे, तो पुनर्जन्मका अर्थ होगा शिव और गौरीमें दोनोंका विलय, यही मुक्ति है और यही अभीष्ट पुरुषार्थ।

मैं पीछे लिख आया हूँ, तर्क तो बहुत हुआ, किन्तु चरित्रमें जीवनकी मर्यादायें दृढ़ती चली गईं। बुद्धकी 'सम्यक् सम्बुद्धि' अपने और परायेके सामञ्जस्यमें एकाग्र हुई थी, तान्त्रिक लोगोंने अपने और परायेका सामञ्जस्य ही सिद्ध करनेके लिये बुद्ध का आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग छोड़कर लिङ्ग और योनिके सामञ्जस्यको ग्रहण किया और इसे स्थायी बनानेकी चिन्तामें वह पारद और गन्धकका आविष्कार करता रहा।

भगवान् बुद्धके संवमें गिनी चुनी दवायें ही अनुमोदित थीं। विनय विटकमें उनका विस्तृत उल्लेख है। ॥ उनमें पारद और गन्धकका कहीं नाम नहीं है। भगवान् बुद्धके समय भिक्षु भिक्षुणीकी चिकित्सा नहीं कर सकता था। वह उसके अभ्यङ्ग नहीं लगा सकता था। वह उसके वस्त्र नहीं धो सकता था, वह उसका दिया भोजन नहीं ले सकता था, और वह उसे छू भी नहीं सकता था, फिर मुद्रा और मैथुनकी कल्पना ही कैसे होती?

तो भी तान्त्रिक अपनेको बुद्धधर्मका प्रसव कहता आया है। बुद्धकी सम्यक् सम्बुद्धिको वह 'वज्रसत्त्व' कहने लगा। क्योंकि वज्र सब धातुओंके कवचको तोड़ देता है, स्वयं किसीसे टूटता नहीं। इसी वज्रसत्त्वकी साधनासे उसने अपने

* भेषज स्कन्ध देखो।

सम्प्रदायका नाम 'बज्रयान' रख लिया। सच बात यह है कि महायानने भगवान् बुद्धके उन कठोर नियमोंका खुल्लम खुल्ला निराकरण करके समूचे उत्तर पश्चिम भारत, अफगानिस्तान, पूर्वी ईरान, तिब्बत, और मंगोलिया तक बुद्धके नामपर वाम मार्ग या बज्रयानकी बीमारी फैला दी और इस बीमारीमें ही महायान भर गया। किन्तु बज्रयान जहां जहां तक गया इस रसायनी विद्याके जादूको अपने साथ ले गया। मिश्रसे लेकर मंगोलिया तक एक ही रोगका प्रसार था। और उसकी एक ही दवा थी—“हरगौरीसृष्टिसंयोगात्”।

ईसाके २०० वर्ष पूर्वसे आविष्कृत होकर ईसाकी तीसरी शती तक न्यूनाधिक वैज्ञानिक आधारपर बड़ी मन्थर गतिसे पारदपर जो कुछ अनुसन्धान हुए वे आज उपलब्ध ही नहीं। पतञ्जलिके लोहशास्त्रके अतिरिक्त और ग्रन्थ भी तो थे, पर कौन जाने उनमें क्या था? तीसरी शतीके उपरान्त महायान प्रवाहमें था। बज्रयान शैशवमें। धीरे धीरे महायानका बुढ़ापा आया और बज्रयानका यौवन। अब ईसाकी सातवीं, आठवीं शताब्दि थी। बज्रयानके सिद्धोंने वासनाकी सिद्धिके लिये इस दिशामें पारद गन्धकपर बड़े-बड़े आविष्कार तो किये किन्तु वे 'गुह्य' थे। इसलिये उनसे विरासतमें कुछ मिलनेकी आशा ही व्यर्थ है।

ईसाकी बारहवीं शताब्दिमें 'रस रत्न समुच्चय' के लेखक आचार्य वाग्भटने रससिद्धोंकी एक नामावली दी है—(१) व्यालाचार्य (२) चन्द्रसेन (३) सुबुद्धि (४) नरवाहन (५) नागार्जुन (६) रत्नघोष (७) सुगानंद (८) यशोधन (९) इन्द्रधूम (१०) माण्डव्य (११) चर्पटी (१२) शूरसेन (१३) आगम (१४) नागबुद्धि (१५) खण्ड (१६) कापालिक (१७) कामारि (१८) तान्त्रिक (१९) शम्भु (२०) लङ्का (२१) लम्पट (२२) शारद (२३) बाणासुर (२४) गोविन्द मुनि (२५) कपिल (२६) बलि। सिद्ध सम्प्रदायकी मान्यता यह है कि पारदके सेवनसे यह सब सिद्ध अमर हो गये हैं, और आज तक अपनी प्रेमिकाओंसे भोग परायण हैं। ❀

इस प्रकार बौद्धोंमें महायानियोंने तथा वैदिकोंमें शैवोंने पारदमें न जाने कितनी अलौकिक शक्तियां सिद्ध कर डालीं। इन सिद्धोंमें स्त्री और पुरुष दोनों ही थे।

नित्यनाथ सिद्धका लिखा हुआ रस-रत्नाकर ऐसे ही उपोद्घातसे प्रारंभ हुआ है। पारदकी तीन विशेष अवस्थायें वर्णन की गई हैं (१) बद्ध, (२) मूर्च्छित, (३) मृत। पारदकी यह तीन सिद्धियां अपूर्व हैं। पारदको बद्ध कर लेनेपर आकाश गामिता सिद्ध होती है। मूर्च्छित कर लेनेपर रोगोंपर विजय, और मृत कर लेनेपर बुढ़ापा और मृत्युपर भी विजय पाई जा सकती है।

प्राचीन कालसे आयुर्वेद शास्त्रमें जरा, व्याधिको निवारण करने वाले प्रयोगोंकी एक परम्परा है। इस उद्देश्यको सिद्ध करने वाली औषधियां 'रसायन' कही जाती हैं—“यज्जरा-व्याधि-विध्वंसि भेषजं तद्रसायनम्”। अथवा स्वस्थ पुरुषको भी जिन प्रयोगोंसे ओज प्राप्त हो वह 'रसायन' है—“स्वस्थस्यौजस्करो यत्तु तदुच्यते तद्रसायनम्”। चरकके इस सिद्धान्तके अनुसार पारद 'रसायन' तो हुआ ही, किन्तु उसमें इससे भी बढ़कर शक्तियां प्राप्त हुईं।

बद्ध होनेपर पारदसे आकाशमें उड़नेकी शक्ति प्राप्त होती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि रसके प्रयोग खानेसे मनुष्य आकाशमें उड़ने लगता है। अथवा उसके पंख लगजाते हैं जिनसे वह पक्षियोंकी भांति उड़ सके। प्रत्युत प्राचीन भारतीयोंने विमान निर्माण कलामें पारदको ही उड़नेकी शक्तिके कारण प्रयोग किया था। पारदको कितनी भी युक्तिसे बन्द करके ऊष्मा दी जाय, वह उड़ जाता है। इसलिये उन लोगोंने उसकी उड़नशीलतासे विमान बनाये। राजा भोजके लिये 'समराङ्गण सूत्रधार' ग्रन्थमें पारदकी इस शक्तिका वर्णन है कि प्राचीन भारतीय विमानोंको उड़नशील बनानेके लिये पारदको इस प्रकार बद्ध करते थे कि वह उड़ने लगता था। इसी लिये भारतीयोंके अधिकारमें स्थित पारदकी खानोंपर अधिकार पानेके लिये विदेशियोंने भीषण युद्ध किये। शत्रु उसपर अधिकार न कर सकें, भारतीयोंने वे पत्थरोंसे सदाके लिए बन्द

कर दिये X । भारतीय विमान विद्या लुप्त हो गई ।

भारतीयोंने गुलाबी, भूरा, पीला और सफेद चार प्रकारके पारद-प्राप्त किये थे । गुलाबी पारद निर्दोष होता था, सबसे अधिक रसायन गुण उसमें ही थे । भूरा भी निर्दोष होता था, किन्तु गुलाबीसे कुछ न्यून । शेष पीला और सफेद पारद सदोष होते हैं, इन्हें शुद्ध करके काममें लाया जाना चाहिये । तदर्थ अठारह संस्कार रस-ग्रन्थोंमें लिखे गये हैं ।

पारदको बद्ध करनेके लिये उसे निर्दोष होना आवश्यक है । यह कला भारतीय वैज्ञानिक प्रागैतिहासिक कालसे भली प्रकार जानते थे । रामायण-कालमें विमान विद्या थी ही । वह आर्योंके आदि कालमें भी अवश्य थी । देवता विमानोंपर यात्रा करते थे, यह प्रत्येक ऐतिहासिक पुराणकल्पमें वर्णन है । पारदके सम्बन्धमें विशुद्ध वैज्ञानिक परम्परा ईसाकी छठवीं शताब्दि तक चली । बोधि सत्त्व नागार्जुनने भी विशुद्ध वैज्ञानिक दृष्टिसे पारदका चिकित्सा क्षेत्रमें प्रयोग किया । परन्तु बौद्ध महायानमें ज्यों-ज्यों सिद्धोंका समावेश हुआ, पारद विज्ञानसे धर्म और अध्यात्मका प्रतीक बनाया गया ।

यद्यपि इस ६ सौ ईस्वीसे ग्यारह सौ ईस्वी पर्यन्त पांच-६ सौ वर्षमें पारदपर अनुसन्धान तो हुए, परन्तु वे वैज्ञानिक प्रकाशमें नहीं, साम्प्रदायिक अन्धेरेमें हुए । और हुए भी गुह्य । इस गुह्य भावनाका फल यह हुआ कि इस युगमें पारदपर साहित्यका सृजन नहीं हो सका । यदि हुआ तो वह तत्कालीन विद्रोह था ।

हमने पीछे चौबीस सिद्धोंकी सूची दी है । वह कम है । सिद्धोंके गुरु चौगसी हुए उनमें कुल अट्ठाईस ऐसे हैं जिन्होंने जगद्गुरुसे प्रेरित होकर रसायनी विद्यापर साहित्य लिखा । रस रत्नाकरकी भूमिकामें ९४ रस ग्रन्थोंके नाम लिखे हैं । इनमें सिद्ध लेखक

X देवेनागेश्वर तो कृपे पूरितौ मृद्धिरश्मभिः ।

२० २० स० १।७० ।

÷ 'व्याधितानां हितार्थाय प्रोक्तं नागार्जुनेन यत्' ।

बहुत कम हैं, इतर विद्वान् ही अधिक । इस बातपर भी बल दिया गया है कि पांच ग्रन्थ स्वयं महादेव शिवशंकरके निर्माण किये हुए हैं—

१. रस मञ्जल २. महा रसायन विधि,
२. रसेन्द्र संहिता ४. रुद्रतन्त्र,
५. रसार्णव,

इसी प्रसङ्गमें ४२ रस प्रयोग ऐसे भी दिये गये हैं जिन्हें स्वयं शिवजीने आविष्कार किया था । आख्यायिकाओंके तथ्यमें जाना व्यर्थ होगा । बात तो इतनी है कि रसायनी विद्याके प्रयोगसंकलित करनेकी ओर विद्वानोंका ध्यान गया । मन्त्र, तन्त्र, जादू, टोनापरसे विश्वास उठने लगा ।

भारतके इतिहासमें ईसाकी प्रथम शताब्दि से ८ वीं शताब्दि तक हिन्दू काल, तथा ८ वीं से १६ वीं तक मुस्लिम काल गिना जाता है । १६ वींके उपरान्त अर्वाचीन युग चला । मुस्लिम कालमें वैज्ञानिक दृष्टिसे आयुर्वेदमें साहित्यिक विकास नहीं हुआ । कुछ संकलन, व्याख्यायें लिखी गई । उनके सहारे प्राचीन तत्व जीवित रह गये, यही बहुत है । रसायनी विद्या पर बदलते हुए दृष्टिकोणको प्रस्तुत करने वाले भगवद् गोविन्द पाद इसी युगमें (१०० ई०) हुए । उनके 'रस हृदय तन्त्र' देखनेसे ज्ञात होता है कि उन्होंने रस-शास्त्रियोंका दृष्टिकोण सही करनेका बड़ा प्रयास किया । लिङ्ग-यानका प्रभाव कम होने लगा । जहां रस-भोक्ताओंके लिङ्ग और योनि की पूजा होती थी, अब स्वयं रसका लैङ्गिक प्रतीक बनाकर पूजनेकी परिपाटी चली । शिव, लिङ्गकी वह प्रतिमा अभी तक पुज रही है पर इस पूजासे चिपटे हुए लोग अब सिद्ध और सन्त, योगिनी और कालिनी शक्तिके प्रतीक नहीं रहे । रसायनी विद्या उनके जालसे निकल आई ।

पुनः रसके अठारह संस्कार वैज्ञानिक दृष्टिसे देखे जाने लगे । वे अठारह संस्कार ये हैं—

- (१) स्वेदन (२) मर्दन (३) मूर्च्छन (४) उत्थापन
- (५) पातन (६) रोधन (७) नियामन (८) सन्दीपन

(९) अभ्रप्रास (१०) संचारण (११) गर्भदुति (१२) वाह्यदुति (१३) जारण (१४) प्रास (१५) सारण (१६) संकामण (१७) रञ्जन (१८) वेध ।

पारदके सहयोगसे अन्यान्य धातु, उपधातुओंके सैकड़ों प्रयोग ऐसे भी बने जो आश्चर्यजनक हैं । उन लोगोंने स्वर्णके पांच भेद लिखे हैं । चार प्रकारका खनिज, और पांचवी प्रकारका पारदके वेधसे तैयार होने वाला स्वर्ण भी उन्हें प्राप्त था । आठ महारस, आठ उपरस, आठ मणियां, और नौ धातु सभी में पारदका मिश्रण हो सकता है । सारे धातु पारदमें घुलनशील हैं, उनका यह निश्चय था X । इसीलिये उसे 'रस' कहा गया । पारदकी यह योगवाहिता ही उसका गौरव है ।

पारदमें सात आवरण और आठ भूमि दोष हैं । उनकी शुद्धिके लिये उपर्युक्त १८ संस्कार नियत किये गये । बिना संस्कारोंके रस ओषधिके लिये उपयुक्त नहीं । सूक्ष्मित पारद सर्व रोग नाशक है, बद्ध पारद मुक्तिदाता, और भस्म हुआ पारद अमरता प्रदान करता है । चिकित्सा क्षेत्रमें पारदकी विशेषता यह हुई कि काष्ठौषधियां बड़ी बड़ी मात्रामें सेवन करनी पड़ती थीं, किन्तु पारद बहुत अल्पमात्रामें ही प्रचुर लाभ देने लगा । इसमें अरुचिका प्रश्न नहीं । तथा शीघ्र ही रोग निवारणकी शक्ति होनेसे पारद काष्ठौषधियोंसे अधिक बड़ा चढ़ा माना गया । वाग्भटने लिखा है कि रस-बन्ध सबसे कठिन है । किन्तु इस कलामें नन्दी, नागार्जुन, ब्रह्म ज्योति तथा सोमदेव यह चार सिद्ध परम प्रवीण हुए । वाग्भटने लग-

* रसेन्द्रवेध-सञ्जातं स्वर्णं पञ्चविधमन्तम् ।

२० २० स० ५ । २

X रसनात्सर्वधातूनां रस इत्यभिधीयते ।

२० २० स० १ । ७६

÷ २० २० स० ६-६३

मूर्ध्नि हारति रुजं बन्धनमनुभूय मुक्तिदो भवति ।

अमरीकतेति हि मृतः कोऽन्यः करुणाकरः सूतात् ॥

२० २० स० १।३३

भग ४५ या ५० अन्य रसाचार्योंके नाम भी दिये हैं । इनमें स्त्री, पुरुष, शूद्र, ब्राह्मण, भिक्षुक और राजा तक सम्मिलित हैं । सिद्ध परम्परामें वर्णव्यवस्था, अथवा लौकिक लिङ्ग भेदको स्थान नहीं रहा । वंश अथवा कुल परम्पराको उसमें कोई महत्व नहीं था ।

सैकड़ों लोग रस सिद्धिसे स्वर्ण निर्माणकी टोहमें सिद्धोंके चले बने । उनसे रस विद्याका कोई भला होने वाला कब था ? तो भी भारतमें लोहे, ताँवेको सोना बनानेका व्यवसाय सिद्धोंने नहीं किया । या तो यह सिद्धि अधूरी रही अथवा वह स्वर्ण प्राकृतिक स्वर्णसे इतना अधिक मंहगा पड़ा कि पारदीय स्वर्णसे कोई लाभ न था । भर्तृहरिके युगमें भी ऐसे लोग थे । उन्होंने लिखा है "उत्खातं निधिशङ्कया क्षिति तलं, धमाता गिरेर्धातवः" । कुछ लोग भर्तृहरिको सम्राट् विक्रमादित्यका भाई मानते हैं । तब यह कला भारतमें २०२२ वर्ष पूर्व थी । कुछका कहना है कि वे ईसाकी सप्तमशतीमें हुए । जो भी हो । बात पुरानी है ।

कितने ग्रन्थ लुप्त हो गये, इसको कौन कह सकेगा ? किन्तु संस्मरण कहते हैं कि वे बड़ी संख्यामें थे, और आज हमें अपने प्रमादके प्रायश्चित्तके लिये बार बार उद्धोध दे रहे हैं । आयुर्वेदके प्राचीन आचार्यों ने अपने महान् अध्यवसाय और अथाह ज्ञानसे अर्जित जो सम्पत्ति छोड़ी वह हमारे लिये आज भी गर्वकी वस्तु है । परन्तु यह गर्व तब तक मिथ्या गर्व है जब तक हम भी उस विद्याके विकासके लिये अजस्र अध्यवसाय नहीं करते ।

विज्ञापन चार्जज मासिक एक समय

| | पूरापृष्ठ | आधापृष्ठ | चौथाईपृष्ठ |
|-------------|-----------|----------|------------|
| कवरपेज चौथा | १२५-०० | ७५-०० | ... |
| " दूसरा | १००-०० | ६०-०० | ... |
| " तीसरा | ९०-०० | ५०-०० | ... |
| सामान्यपेज | ६०-०० | ३५-०० | २०-०० |

लगातार १२ मास तक छपानेपर १२½% तथा ६ मास छपानेपर १०% कमीशन दिया जायगा । विज्ञापन मेटरके साथ कुल रकम अग्रिम भेजना आवश्यक है ।

तमाकू और उसका स्वास्थ्यपर प्रभाव

लेखक—आयुर्वेदाचार्य श्री डा. निशिकान्त बी. ए.

ए. एल्. आई. एम्. (मद्रास), वैद्य वाचस्पति, प्रोफेसर, ई. एन्. टी. एण्ड आष्यालमालौजी,
श्रीमस्तनाथ आयुर्वेदिक कालेज, अस्थल बोहर (रोहतक)

विद्वान् लेखकने आधुनिक विश्वके छोटेसे प्रतीत होने वाले परन्तु अत्यन्त भयङ्कर व्यसनपर प्रकाश डाला है और उससे बचनेके उपायोंका प्रदर्शन किया है। तमाकूके नागपाशसे बचना इस समय बड़ा ही दुःसाध्य प्रतीत होता है। आज तो सिगरेटके बड़े-बड़े व्यापारी इसे राष्ट्रीय उद्योगके रूपमें आगे बढ़ानेका प्रयत्न कर रहे हैं। अपरिमित धनराशि व्यय करके धूम्रपानका प्रचार निःसङ्कोच बड़े ठाठ और गर्वके साथ किया जाता है। फिर भी बुद्धिमान् शुभैषी जनोके लोक कल्याणके यह वचन और लेख कभी न कभी अपना प्रभाव दिखायेंगे ही ऐसी आशा है।

—सम्पादक

कई सौ वर्ष पहले मध्य अमरीकाकी जनता एक विशेष यंत्रका प्रयोग करती थी, जिसके द्वारा वहाँके लोग एक वनस्पतिको जला कर उसके धूम्रको नासारन्ध्रों द्वारा पान करते थे। तमाकू वस्तुतः इसी यंत्रका नाम था। धीरे-धीरे इस यंत्रका प्रचार कम हो गया और इस यंत्रका नाम अब उस वनस्पतिको दे दिया गया जिसका प्रयोग धूम्रपानके लिए किया जाता था। आजकल भी इसे "Tobacco" तमाकू, तम्बाकू, तमाक आदि नामोंसे पुकारते हैं। वनस्पति शास्त्रवेत्ता इसे निकोटियाना टोबेकम् कहते हैं।

मध्य अमरीकासे इस वनस्पतिका प्रचार धीरे-धीरे विश्वमें चारों ओर हुआ। मुसलमानोंके शासन कालमें इसका भारतमें आगमन हुआ। भारतमें इसका प्रचार धीरे-धीरे बढ़ने लगा और आज यह पञ्जाब, उत्तर प्रदेश, बंगाल, मद्रास और द्रावणकोरमें पर्याप्त मात्रामें पैदा होता है।

भारतके भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें, भिन्न-भिन्न परिस्थितियोंमें इसका प्रयोग, बीड़ी, सिगरेट, सिगार, हुका

और चिलमके रूपमें धूम्रपानके लिए, अकेला अथवा चूनेके साथ मिलाकर तथा पानमें खानेके लिए तथा सूक्ष्म चूर्णके रूपमें नस्यके लिए किया जाता है। कहीं-कहीं इसके साथ चरस, गांजा इत्यादि अन्य मादक द्रव्योंको मिलाकर धूम्ररूपमें पिया जाता है।

दुःखकी बात है कि इसका प्रचार उत्तरोत्तर बढ़ी तेजीसे बढ़ रहा है। आजसे कुछ ही वर्ष पूर्व इसका प्रचार केवल कुछ युवकों और बूढ़ों तक ही सीमित था, परन्तु आज तथा-कथित सभ्य स्त्री समाज तथा बच्चोंमें भी इसका प्रचार बढ़ रहा है।

मानव शरीरपर तमाकू कितना हानिकारक प्रभाव रखता है इस ओर जनताका बहुत कम ध्यान जाता है। निःसंदेह इसके प्रयोगके पश्चात् शीघ्र ही शरीरमें कुछ उत्साह और स्फूर्तिका सञ्चार सा प्रतीत होने लगता है, परन्तु इस क्षणिक उत्साह और स्फूर्तिके पश्चात् शरीरमें आलस्य और अवसाद प्रकट होने लगते हैं। इस अवसाद और आलस्यको दूर करनेके लिए प्रयत्नको फिरसे इसके प्रयोगकी लालसा होती

है। इस प्रकारका एक दूषित चक्र सा बन जाता है। धीरे-धीरे मनुष्य इसके जंगलमें ऐसा फंस जाता है कि वह आजीवन इसका दास बन जाता है। एक बार इसके आधीन हो जानेपर इससे छुटकारा पाना कठिन ही नहीं अपितु असम्भव सा ही हो जाता है। ऐसे मनुष्यको इसके प्रयोगसे तुरन्त शान्ति और संतोष मिल जानेसे, इसके अवगुणोंकी ओर उसका ध्यान ही नहीं जाता और न ही उसे किसी प्रकारसे इसके अवगुणोंमें विश्वास ही होता है।

हजारों चिकित्सा शास्त्रियों तथा विज्ञान वेत्ताओंने तमाकूको स्वास्थ्यके लिए बड़ा हानिकारक सिद्ध किया है, उन लोगोंने इसमेंसे कम से कम १९ विषैले वा मादक द्रव्योंको पृथक् किया है, जिनमें निकोटीन मुख्य है इसके अतिरिक्त परसिक एसिड, कार्बन मानाकसाईड, पिरिडीन फरफ्यूरल आदि अन्य भी कई विषैले पदार्थ कुछ न कुछ मात्रामें इसमें पाए जाते हैं।

ये सब विष तमाकू प्रयोग करने वाले व्यक्तिके रक्तमें सञ्चित होते रहते हैं और निरन्तर इसका अधिक प्रयोग करनेसे इन विषोंकी इतनी मात्रा रक्तमें सञ्चित हो जाती है कि यदि ऐसे मनुष्यके शरीरपर स्वस्थ जलौका लगाई जावे, तो रक्त पान करनेके पश्चात् उसके शरीरमें ऐंठन आरम्भ हो जाती है और वह गिर कर मर जाती है।

शरीरके भिन्न-भिन्न अंगोंपर तमाकूका प्रभाव—

मस्तिष्क और वातसंस्थान—तमाकूके चिरप्रयोगसे वातसंस्थानको पर्याप्त हानि पहुँचती है, जिससे मनुष्यके हाथ, पांव तथा अन्य शरीर अवयवोंमें कम्पन ऐंठन आदि प्रारम्भ हो जाते हैं। कई लोगोंमें तो यह कम्पन यहां तक बढ़ जाता है कि वे अपने व्यवसायको छोड़नेके लिए बाध्य हो जाते हैं। कई अच्छे-अच्छे ख्याति प्राप्त सर्जन, घड़ी साज हाथ कांपनेके कारण अपना कार्य नहीं कर पाते।

मानसिक एकाग्रता और चिन्तन शक्तिपर भी इससे बुरा प्रभाव पड़ता है। एक लेखककी विचार शक्ति तथा भाव अभिव्यक्ति तब तक ठीक नहीं हो पाती जब तक वह अपने वात तन्तुओंको सिगरेटके

धूम्रसे उत्तेजित न कर ले। यहां तक कि कई लेखक वकील इत्यादि तो सिगरेटके बिना एक पंक्ति भी नहीं लिख सकते।

हृदय और रक्तवाहक संस्थान—इस संस्थानपर भी तमाकूका बड़ा बुरा प्रभाव देखनेमें आता है। इसके निरन्तर प्रयोगसे हृदयकी शक्तिका ह्रास और गतिमें विषमता होने लगती है। रक्तवाहिनियोंमें संकोच हो जाता है और उनमें कठोरता आ जाती है। किसी-किसी व्यक्तिमें नाड़ीकी गति तीव्र हो जाती है और धड़कन तथा हृद्प्रह सा प्रतीत होने लगता है। रक्तभार बढ़ जाता है तथा रक्तमें शर्कराकी मात्रा बढ़ जाती है।

दृष्टिपर प्रभाव—तमाकूके चिरप्रयोगसे दृष्टि नाड़ीको हानि पहुँचती है। जिससे मनुष्यको दृष्टि मांझता हो जाती है। दृष्टिनाड़ीकी भांति कर्ण नाड़ीमें भी विकृति आजाती है और कम सुनने लगता है।

गले और मुखकी श्लैष्मिक कलापर भी तमाकूके चिरप्रयोगसे जीर्ण प्रदाहके लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। जिससे कास, श्वास तथा अन्य श्वास सम्बन्धी रोग पैदा हो जाते हैं। जहां तमाकू खाने अथवा मुंहमें रखनेसे मुंहमें कैंसर हो सकता है, वहां अत्यधिक सिगरेट आदिसे फुफ्फुसमें कैंसर उत्पन्न हो सकता है।

स्त्रियोंको तमाकूसे हानि—तमाकूका अधिक प्रयोग करने वाली स्त्रियोंमें प्रायः गर्भाशय सम्बन्धी रोग उत्पन्न हो जाते हैं, जिससे उनमें गर्भस्राव, वन्ध्यत्व आदि रोग विशेष देखनेमें आते हैं। ऐसी माताओंकी सन्तान भी प्रायः मानसिक और शारीरिक दृष्टिसे दुर्बल होती है।

बच्चोंको हानि—तमाकूका प्रयोग बच्चेके मानसिक वा शारीरिक विकासमें बाधा डालता है और ऐसे बच्चे बड़े होकर प्रायः आचार-विचारसे हीन और समाजमें पिछड़ेते रह जाते हैं।

सिगरेट, हुक्का आदिका प्रयोग करने वाले लोग प्रायः इस बातका कम ही ध्यान देते हैं कि उनके इस धूम्रसे वह पास बैठे हुए किसी अन्य व्यक्तिको कष्ट तो नहीं दे रहे। सिनेमा हाल, रेलमें, बसमें जहां भी

देखिये ये लोग अपने सिगरेटके धूँसे सारा वातावरण दूषित कर देते हैं, यहां तक कि एक सिगरेट न पीने वालेके लिए वहां बैठना कठिन हो जाता है। तमाकू पीने वाले लोग जन स्वास्थ्यके नियमोंपर भी ध्यान नहीं देते। एक तमाकू खाने वाला व्यक्ति स्थान-स्थानपर थूकता है नस्य प्रयोग करने वाला जहां कहीं छींकने लगता है और सिगरेट पीने वाला जहां कहीं भी अपने मुँह अथवा नाकसे धूँआ निकालता रहता है, जिससे ये लोग संक्रमण प्रसारमें एक बड़ा भाग लेते हैं। देहातमें, सब एक साथ बैठ कर, एक ही हुक्रे से बारी-बारी तमाकू पीते हैं। यह भी एक बहुत हानिकर प्रथा है।

यह सब जानते हुए भी हम दूसरोंको इससे रोक नहीं सकते, क्योंकि प्रायः सभी बड़े बड़े अधिकारी, वकील, डाक्टर, वैद्य, प्रचारक, उपदेशक इस व्यसनमें फंसे हुए हैं। जब तक हम स्वयं इस घृणित वस्तुको न छोड़ें हम किसीको इससे कैसे रोक सकते हैं। हमारा परम कर्तव्य है कि यदि हमें यह व्यसन हो तो पहले आप इसे छोड़ें और फिर दूसरोंको भी इससे यथा सम्भव बचानेका यत्न करें। राज्यकी ओरसे तथा

जनताकी ओरसे भी इस ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये। कमसे कम छोटी आयुके बच्चोंको तो इस व्यसनसे बचाना हमारा राष्ट्रीय धर्म हो जाता है। तमाकू मुँहमें घुसा हुआ हमारा महान शत्रु है अतः इसे छोड़नेमें ही हमारा श्रेय है।

तमाकू छोड़नेके कुछ सरल उपाय—

सबसे बड़ा और प्रमुख उपाय तो यह है कि इसे दृढ़ प्रतिज्ञा होकर एकबार छोड़ दो, फिर इच्छा होनेपर भी इसकी ओर प्रवृत्त न हो। चाहे हमारे मन और शरीरपर कुछ भी प्रभाव हो। अपनेको तमाकू पीने वालोंकी संगतिसे बचाएं और जहां तक हो सके इसके धूँसे बचें। रोटी खानेके पश्चात् दोनों समय २-४ प्रतिशत सिल्वर नाइट्रेटके विलयनसे गरारे करें। इससे मुँहमें कुछ तुरासा स्वाद बन जाएगा और धूम्र पानकी इच्छा कम होगी। यदि फिर भी धूम्रपानकी इच्छा हो तो थोड़ा सा चिरायता या कटुकी चूर्ण मुँहमें डाल लें। इससे मुँह कड़वा हो जाएगा और तमाकू की ओर प्रवृत्ति नहीं रहेगी। अपनेको सदा कार्य व्यस्त रखें और अपना आहार विहार सुधारें। इस प्रकारसे आप इस व्यसनसे छुटकारा पा सकते हैं।

कृष्ण-गोपालकी गैसहर वटी

आजकल अनेक मनुष्योंके पेटमें मन्दाग्नि, अजीर्ण तथा आंतोंमें सड़ान होनेसे गैस (वायु) बना करली है, जिससे पेटका फूलना, उदरशूल, खट्टी या बादीकी डकारें आना तथा घबराहट आदि अनेक लक्षण उत्पन्न होते हैं। इस रोगका उपचार न करनेसे आगे चलकर आंतमें घातक रोग उत्पन्न होते देखे गये हैं। भवनने अपने ३० वर्षके अनेक रोगियोंपर अनुभवसे जनहितार्थ इन गोलीयोंका निर्माण किया है।

जब भी पेटमें गैस उत्पन्न हो १ या २ गोली जलानुपानसे ले लेनेपर तुरन्त अपानवायु खुलकर पूर्ण शान्ति प्राप्त होती है। भोजनोत्तर दोनों समय वटी ले लेनेसे अन्नपाचन सुखपूर्वक होता है, शौच साफ हो जाता है तथा यकृतके विकार दूर होकर स्वास्थ्यवृद्धि होती है।

मूल्य—१० ग्राम, ०-१०।५ ग्राम, ०-५५।

इस संकट कालमें सरकार आयुर्वेदकी वैज्ञानिकता एवं महत्ताको समझे

लेखक—श्री कविराज डा० विद्यासागर थापर एम्. बी. बी. एस.

वैद्यवाचस्पति, आयुर्वेदाचार्य, धन्वन्तरि (जी. आई. एम्. एस्.)

आचार्य—श्रीमस्तनाथ आयुर्वेद महाविद्यालय, अस्थल-बोहर, रोहतक

प्राच्य एवं पाश्चात्य चिकित्साओंके ज्ञाता एवं अनुभवी लेखक ने आयुर्वेद विशेषताओं और उसकी कार्यकारिताको प्रत्यक्ष देखकर सरकारका ध्यान आयुर्वेदको उसके योग्य स्थान प्रदान करनेकी ओर उचित रूपसे ही आकृष्ट किया है। हमें आशा है कि सम्बद्ध तन्त्र इस ओर समय रहते ध्यान देकर लोक कल्याणका साधन करनेसे न चूकेगा।

—सम्पादक



हो जाएगी।

आजसे लगभग चालिस वर्ष पूर्व जब मैं करीबन २० वर्षका था उन दिनोंमें सुना करता था कि बंगालमें एम० बी० बी० एस० डाक्टर जब तक अपने नामके साथ कविराज शब्द नहीं लिखते थे उनकी प्रैक्टिस नहीं चला करती थी। उस समय बंगालमें अनेक कविराजोंकी फीस ६४) रुपये हुआ करती थी। उस समय हम गुलाम अवश्य थे परन्तु सम्भवतः एलोपैथीके इतने गुलाम नहीं हुए थे जितने कि आज स्वतंत्रता प्राप्तिके १८ वर्ष पश्चात् हम देख रहे हैं। हमारी अपनी सरकारकी मानसिक निर्बलताके कारण यह दासता नित्य प्रति बढ़ती ही जा रही है।

हम अपनी सरकारसे पूछते हैं कि कौनसा ऐसा रोग है अथवा किस प्रकारके रोगीको आयुर्वेदिक चिकित्सा द्वारा स्वस्थ नहीं किया जा सकता। आयुर्वेदिक चिकित्सकको यदि भिन्न भिन्न प्रकारके १०० रोगों उतने प्रकारके दे दिये जायँ और तुलनात्मक चिकित्सा फल देखा जाय तो सरकार विस्मित

सरकारके लिए यह बात कोई नवीन नहीं है कि एलोपैथिक हस्पतालोंसे परित्यक्त अनेक रोगी वैज्ञानिक दृष्टिसे आयुर्वेदिक औषधियोंसे पूर्ण स्वस्थ हुए हैं। हम ऐसे दृष्टान्त बता सकते हैं कि जहां बाहु अथवा टांगको काटने (Amputation) का निश्चय किया गया था परन्तु आयुर्वेदिक चिकित्सा ने उसे बचा लिया। आन्त्रके एक भागको काटकर निकालनेके उदरके बृहत् शस्त्र कर्म (Abdominal Major Operation) का निश्चय हुआ था परन्तु आयुर्वेदिक चिकित्सासे बच गया था। पूर्य एवं अनेक कृमियोंसे भरे हुए घाव (Wound) जिनकी चिकित्साके लिए जवाब मिला चुका था वे सब आयुर्वेदिक चिकित्सासे पूर्ण स्वस्थ हो गये। यही नहीं मैं एक आठ वर्षके ऐसे बालकको भी जानता हूँ जिसको दृष्टि नाड़ी क्षय (Optic Nerve Atrophy) कहकर त्याग दिया गया था परन्तु आयुर्वेदिक औषधियोंकी दवासे उसे

प्रकाश मिल गया ।

अपने ३५ वर्षके अनुभवसे मैं यह दृढ़ता पूर्वक कह सकता हूँ कि वास्तवमें आयुर्वेदिक चिकित्सासे प्रायः हर प्रकारका रोगी सफलता पूर्वक स्वस्थ होता रहा है और स्वस्थ हो रहा है । हमारे विचारमें यदि इस संकट कालमें समस्त भारत वर्षमें केवल मात्र ऐश्वर्य शाली एवं अधिक वैज्ञानिक आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धतिको प्रत्येक रोगीके लिये तथा प्रत्येक अवस्थामें प्रयुक्त किया जाय तो हम निश्चयसे कह सकते हैं कि हमारे देशमें रोगियोंकी संख्या बहुत कम हो जाएगी और अनेक घातक रोगोंकी उत्पत्ति एवं वृद्धि जो एलोपैथिक औषधियोंसे (विशेष करके रक्तमें बारम्बार इन्जेक्शनोंसे) हो रही है उनसे बचाव हो जाएगा । यही नहीं मितव्ययताकी दृष्टिसे भी हम अपने देशकी अधिक सेवा कर सकेंगे ।

हमारा अनुभव यह बताता है कि आयुर्वेदके मौलिक सिद्धान्त वास्तवमें अधिक वैज्ञानिक हैं । इसीलिए आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धतिद्वारा हमको सफलता केवल मात्र रोगकी निवृत्तिमें ही नहीं मिलती परन्तु साथमें रोगीका बल भी कायम रहता है । यही आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धतिकी महत्ता है जो कि किसी भी अन्य चिकित्सा पद्धतिमें नहीं है । इसमें कारण यह है कि आयुर्वेदका लक्ष्य स्पष्ट रूपसे द्विविध होता है एक रोग चिकित्सा और दूसरा शक्ति परिरक्षण । इस संकटकालमें हमारे सैनिक जवानोंको निरसंदेह इन दोनोंकी अत्यन्त आवश्यकता है । जब भी हमारे जवान किसी रोगके कारण अथवा किसी दुर्घटनाके कारण कष्टमें अथवा संकटमें हों तो ऐसी अवस्थामें चिकित्साके साथ-साथ उनको निरन्तर शक्ति संरक्षण की भी विशेष आवश्यकता प्रतीत होती है । इसलिए इस संकट कालमें यह अति आवश्यक है और वास्तवमें हमारे देशके सैनिक जवानोंकी एवं जनताकी भलाई भी इसीमें है कि हमारी सरकार न केवल प्रत्येक असेनिक हस्पताल (Civil Hospital)में परन्तु सैनिक हस्पतालों (Army Hospitals) में भी तुरन्त बिना किसी विलम्बके आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति अपनावे और केवल मात्र आयुर्वेदिक औषधियोंका ही प्रयोग

प्रयोग किया करे ताकि हमारे सैनिक जवानोंको भी आयुर्वेदिक औषधियोंका वास्तविक लाभ मिल सके । यही नहीं ? यदि हम एलोपैथिक औषधियोंका प्रयोग भी आयुर्वेदके मौलिक सिद्धान्तोंको दृष्टिमें रखते हुए करें तो जिन हानि, क्षति एवं संकटका कारण प्रायः एलोपैथिक औषधियां बना करती हैं उनसे भी बचाव हो सकता है । इसलिए यह अति आवश्यक है कि इस संकटकाल में हमारी सरकार आयुर्वेदकी वैज्ञानिकता एवं महत्ताको समझे ताकि जितनी हानि, क्षति एवं आपत्ति-जनक प्रभाव इन एलोपैथिक औषधियोंद्वारा हमारे सैनिक जवानों एवं जनताको हो रहा है उससे बचाव हो सके ।

हमें दुःख है कि सङ्कट कालमें भी हमारी सरकार आयुर्वेदकी वैज्ञानिकता एवं महत्ताको क्यों नहीं समझ रही है ? कब तक हमें एलोपैथिकका गुलाम बनाना चाहती है ? सरकार एलोपैथिक हस्पतालों एवं कालिजोंके स्थानमें अनेक आयुर्वेदिक हस्पतालों एवं कालिज क्यों नहीं खोल रही ? आयुर्वेदिक हस्पतालोंके सब प्रबन्ध एलोपैथिक हस्पतालोंके सदृश क्यों नहीं कर रही है ? आयुर्वेदिक कालिजोंमें सब साधन एवं सामग्री एलोपैथिक कालिजोंके अनुसार क्यों नहीं हो रहे ? आयुर्वेदिक संस्थाओंके सम्बन्ध युनिवर्सिटीयोंसे क्यों नहीं किये जा रहे । सरकार आयुर्वेदिक कालिजोंके प्रोफेसर्सका वेतन स्तर मेडिकल कालिजोंके प्रोफेसर्स की भान्ति क्यों नहीं कर रही ? ये सब प्रश्न हम सरकारसे पूछना चाहते हैं । यही नहीं जब हमारी सरकारने आयुर्वेदिक कालिजोंमें नवीन प्रवेश योग्यता मैट्रिकके स्थानमें हायर सैकण्डरी कर दी है और ५ वर्षके कोर्सके स्थानमें साठे पांच वर्षका कर दिया है तो क्या कारण है कि आयुर्वेदिक स्नातकोंका वेतन स्तर एम० बी० बी० एस० के वेतन स्तरके समान नहीं किया गया । इतने लम्बे कोर्सके पश्चात् भी आयुर्वेदिक स्नातकोंको एलोपैथिक स्नातकोंकी भांति भिन्न भिन्न अनेक विभागोंमें क्यों नहीं लिया जा रहा ? यह सब समझमें नहीं पड़ रहा कि इस सङ्कट कालमें भी आयुर्वेदके लिए एवं आयुर्वेदके स्नातकोंके लिए सरकार द्वारा इस प्रकार सौतेली माताका व्यवहार

मैं जिस संस्थासे सम्बन्धित हूँ वह संस्था हरियाना प्रान्तमें रोहतकके समीप देहातमें है। इस संस्थाकी अनेक विशाल बिल्डिंगें श्री १०८ योगिराज महन्त श्रेयोनाथ जी महाराजने अपने मठमें से २० लाख रुपयेसे भी अधिक व्यय करके बनवाई हैं। इस संस्थाके अनेक विभाग हैं। कालेज, होस्टल, हस्पताल (नेत्र हस्पताल सहित), प्रोफेसर निवास स्थान, फार्मसी इत्यादि। प्रत्येक विभाग विशेषकर कालिज तथा होस्टल विस्तृत एवं सुन्दर है। संस्थाका अपना ह्यूबवैल है। मध्यमें विद्यार्थियोंके खेलनेके लिए मैदान भी अति विस्तृत है। आज तक प्रति वर्ष हजारों रुपये श्री महन्त जी महाराजने अपने मठमेंसे व्यय करके अपनी अपार कृपा एवं महत्ताका दृष्टान्त जनताके सम्मुख रखा है। इस प्रकार वे संस्थाका पालन पोषण कर रहे हैं। शेष धन विद्यार्थियोंकी फीससे प्राप्त होता है परन्तु सरकारकी ओरसे इतनी बड़ी संस्थाके लिए केवल २४०० रुपये वार्षिक ही मिल रहे हैं। यह केवल अन्याय ही नहीं अपितु स्पष्ट रूपसे अनर्थ भी है।

इस समय इस संस्थामें लगभग १७५ विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। क्या सरकारका कर्तव्य नहीं कि इतनी बड़ी संस्थाके लिए कमसे कम दो लाख रुपये वार्षिक तो अवश्य देवें ताकि उत्तम स्टाफ (प्रोफेसर) तथा उत्तम साधन एवं सामग्रीका प्रबन्ध हो सके और साथमें इतने विद्यार्थियोंके लिए कमसे कम एक सौ पचास १५० बैडका एक विशाल हस्पताल जो सब प्रकारसे पूर्ण हो। जिसमें काय (Medicine) शल्य (Surgery) शालाक्य (E. N. T.) प्रसूति (Midwifery Gynaecology) एवं पंच कर्म विभाग पृथक्-पृथक् हों, जहां प्रत्येक रोगीके लिए निःशुल्क भोजनका प्रबन्ध हो और जहाँ अनेक गम्भीर रोगियोंके लिए उत्तम औषधि मिल सकती हो ऐसा प्रबन्ध तो अवश्य कर देवें। सरकार कमसे कम हरियाना प्रान्त एवं देहातका ही ध्यान करे जहां सरकार कुछ अधिक व्यय करनेका निश्चय कर चुकी है। आखिर एक दानी महात्मा अपने मठमेंसे कितना दान कर सकता है। सरकार जहां अनेक एलोपैथिक हस्पतालोंके लिए इतना धन निःशुल्क व्यय कर रही

है वहाँ आयुर्वेदिक हस्पतालोंके लिए सार्थक व्यय क्यों नहीं करती? आयुर्वेद जो सब चिकित्सा पद्धतियोंकी माता है, जो वास्तवमें अधिक वैज्ञानिक एवं महान् है, जो रोगोंको मूलसे नष्ट करनेके कारण हमारे देशके सैनिक जवानों एवं जनताके लिए अधिक लाभदायक है ऐसी उत्तम चिकित्सा पद्धतिका इस प्रकारसे निरादर करना कितनी भारी भूल है।

हमें अति दुःखसे कहना पड़ रहा है कि हमारी सरकारने आयुर्वेदको अब तक वह स्थान नहीं दिया जो इसे मिलना चाहिए था। सरकारने इसे दूसरोंके हाथमें देकर अनुचित कार्य किया है जो देश द्रोहसे कम नहीं है। इसलिए जो धन आयुर्वेदके लिए निर्धारित था उसका भी दुरुपयोग हो रहा है। क्यों कि जो धन बड़े बड़े आयुर्वेदिक हस्पतालों एवं कालिजोंके लिए प्रयुक्त होना चाहिए था, जिससे सैनिक जवानों एवं जनताको विशेष लाभ होता, वह रिसर्चका नाम देकर एलोपैथीके लाभके लिए प्रयुक्त हो रहा है। जब तक आयुर्वेदके बड़े-बड़े अनेक हस्पताल तथा अनेक कालिज नहीं खोले जाएंगे, उनमें सब प्रकारका पूर्ण प्रबन्ध नहीं किया जायगा, तब तक आयुर्वेदके रिसर्चका प्रश्न ही नहीं उठता। आयुर्वेदिक दृष्टिसे रिसर्च एलोपैथिक रिसर्चसे सर्वथा भिन्न है। वह आयुर्वेदके मौलिक सिद्धान्तोंके आधारपर उनपर पूर्णरूपसे विचार करके ही हो सकेगी। आयुर्वेदिक योगोंपर पृथक् मात्राके अनुसार ही होगी। एलोपैथिक औषधियोंकी प्रकृति एवं दोषोंके अनुसार ही होगी। इस प्रकार हम नवीन कई बातें आयुर्वेदके कोशको बढ़ानेके लिए सुगमतासे ले सकेंगे जिससे निःसंदेह सैनिक जवानों एवं जनताको अधिक लाभ हो सकेगा। आयुर्वेदिक रिसर्चमें एलोपैथिक रिसर्चसे व्यय भी बहुत कम होगा और सार्थकता भी अधिक होगी। इसलिए अब सरकारका यह कर्तव्य हो जाता है कि वह इस संकट कालमें शीघ्र अति शीघ्र आयुर्वेदकी वैज्ञानिकता एवं महत्ताको समझे और आयुर्वेदको जो आज स्वतन्त्रता प्राप्तिके अठारह (१८) वर्षके पश्चात् भी अभी तक दासताकी जबजबीमें बन्धा पड़ा है उसे तुरन्त मुक्त कर देवे। इसमें अब देरी कदापि नहीं होनी चाहिए अन्यथा हमारे देशकी जनता एवं सैनिक

जवान इस उत्तम आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धतिके वास्तविक लाभसे वञ्चित रहेंगे।

अन्तमें पुनः हम सरकारको स्पष्ट कहने की आवश्यकता समझते हैं कि वास्तवमें आयुर्वेदको परतंत्र करके सरकारने अनुचित कार्य किया है। जो देश द्रोह से कम नहीं है क्योंकि इस प्रकार हमारे देशके सैनिक जवानोंको एवं जनताको अत्यन्त हानि पहुँचाई जा रही है। परतन्त्र होनेके कारण आयुर्वेदके साहित्यकी उन्नति ही नहीं हो सकी। इसी कारण आयुर्वेद सैनिक जवानों एवं जनताको पूर्ण रूपसे लाभ नहीं पहुँचा सका। अब समय आ गया है जब कि जनता एवं सैनिक जवान स्वयमेव आयुर्वेदकी वैज्ञानिकता एवं महत्ताको समझने लगे हैं। अब सरकारको आयुर्वेदका पृथक् डाइरेक्टरेट एवं मन्त्रित्व देना ही पड़ेगा। तभी आयुर्वेद अपने वास्तविक रूपको जनताके सम्मुख उपस्थित कर सकेगा, तभी सैनिक जवान भी

आयुर्वेदसे पूर्ण लाभ उठा सकेंगे, तभी आयुर्वेदके साहित्यकी उन्नति हो सकेगी, तभी आयुर्वेद सूर्यकी भान्ति चमकेगा और उसकी किरणें समस्त भारत-वर्षमें ही नहीं अपितु पूर्वकी भान्ति दूर दूरके अनेक देशों तक भी पहुँच सकेंगी। इसलिए हम बारम्बार सरकारसे निवेदन करते हैं कि वह इस संकट कालमें तुरन्त आयुर्वेदकी वैज्ञानिकता एवं महत्ताको समझे और आयुर्वेदको स्वतन्त्र करनेमें अब तनिक भी देर न करे और आयुर्वेदके लिए अब शीघ्र ही पृथक् डाइरेक्टरेट एवं मन्त्रित्व देवे तथा आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धतिके विस्तारके लिए अनेक आयुर्वेदिक कालिजों एवं हस्पतालोंमें उचित विशेष अधिक धनका प्रबन्ध करे ताकि एलोपैथिक जो नित्य प्रति जनता एवं सैनिक जवानोंके लिए हानि, क्षति एवं संकटका कारण बन रही है उससे शीघ्र ही बचाव हो सके।

जयहिन्द ! जय आयुर्वेद !

— मुक्ता प्रधान द्रव्योंसे निर्मित —

मुक्तापञ्चामृत रस

इक्षुरस, गोदुग्ध, विदारी, शतावरी आदि ताजी वनस्पतियों की ४० भावनाओं और पुटों द्वारा निर्मित किया गया है। यह रस जीर्णज्वरके लिये अद्भुत लाभ करता है तथा अनुपान भेदसे अनेक रोगोंको नष्ट करता है। कास, श्वास, शोष, रक्तपित्त एवं हस्तपादादिके दाहका शमन करता है। रस, रक्त, मांस, अस्थि, शुक्र और ओजकी क्षीणताको दूर कर शरीरके बल, वर्ण और उत्साहको बढ़ाता है। मस्तिष्क, हृदय और फेफड़ोंको बलप्रद तथा अत्यन्त शान्तिदायक है।

मात्रा—१ से २ रत्ती, पिप्पली चूर्ण १ से २ रत्ती व मधुके साथ दिनमें दो या तीन बार।

अनुपान—दुग्ध।

मूल्य—१० ग्राम ३५-००, ५ ग्राम १७-६५, २ ग्राम ७-१५, १ ग्राम ३-६५।

टमाटर और उसका उपयोग

लेखिका—श्रीमती सुमित्रादेवी अग्रवाल “विशारद”

योग्य लेखिकाने अपने इस लेख द्वारा जहां टमाटरका उचित उपयोग प्रदर्शित किया है वहां साथ ही साथ उसके रुचिकर एवं लाभदायक निर्माणोंके प्रकाशन द्वारा स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए स्वादिष्ट एवं रसपूर्ण मार्ग भी बतलाया है। आशा है पाठकोंको यह रुचिकर होगा ही। —सम्पादक

गरीबोंके लिए टमाटर ही एक ऐसा साग है जो संतरा और नींबूकी कमीको पूरा कर सकता है। टमाटर कच्चा तथा पका दोनों रूपोंमें खाया जाता है। किन्तु कच्चा टमाटर अधिक गुणकारी होता है। टमाटर में विटामिन “सी” प्रचुर मात्रामें पाया जाता है और यही विटामिन “सी” नींबू और संतरामें भी होता है। जो लोग संतरा और नींबूका सेवन नहीं कर सकते उन्हें टमाटरकी ऋतुमें विटामिन “सी” प्राप्त करनेके लिये टमाटरका उपयोग अनेक रूपोंमें करना चाहिए।

जाड़ेकी ऋतुमें बाजारमें लाल लाल टमाटरोंकी बहार देखते ही बनती है। इस ऋतुमें पाई जाने वाली सस्ते तथा सर्व सुलभ शाकोंमें टमाटर भी एक ऐसा शाक और फल दोनों है जो प्रत्येक बाजारमें आसानीसे प्राप्त हो सकता है। टमाटर सस्ता होता है इसलिए गरीब भी टमाटरका सेवन करके लाभ उठा सकते हैं। जाड़ेके दिनोंमें टमाटरका सेवन प्रत्येक व्यक्तिको अपने निर्यके भोजनमें अवश्य ही करना चाहिये।

टमाटर एक ऐसा लाभदायक फल है जिसके सेवनसे शरीरके अनेक विकार दूर हो जाते हैं। टमाटरका स्वाद खट्टापन लिए हुए मीठा होता है। कच्चे टमाटरका प्रयोग तरकारी बनाकर किया जाता है। पका टमाटर खानेमें मीठा तथा गुणकारी होता है। पके टमाटरोंसे ‘अचार’

अनेक स्वादिष्ट व्यंजन बनाए जाते हैं। टमाटरको साफ पानीमें धोकर पतले पतले टुकड़े काटकर सुखा कर भी रखा जा सकता है।

उबलते हुए पानीमें टमाटरको एकमिनटके लिए डालकर शीघ्र ही ठण्डे पानीमें डाल देनेसे गूदेका छिलका उतारनेमें सरलता होती है। टमाटरको छील कर भी सुखाया जा सकता है। पके हुए लाल लाल टमाटरोंको काटकर उसमें पिसा हुआ नमक, काली मिर्च मिलाकर भोजनके बाद सेवन करनेसे शरीरमें स्फूर्ति, बल, तेज एवं उत्साहकी वृद्धि होती है। सभी ऋतुओंमें बिना किसी भयके आप टमाटरका प्रयोग इच्छानुसार कर सकती हैं। टमाटर दस्तावर, वीर्य वर्द्धक और अग्निदीपक होता है। बच्चोंके सूखा रोगमें लाल लाल टमाटरका रस पिलानेसे सूखा रोग धीरे धीरे दूर होने लगता है। टमाटर नेत्रोंको भी लाभ पहुँचाता है और पेटकी बीमारियोंको दूर करनेमें तो वैद्य और डाक्टरकी तरह सहायक सिद्ध होता है। बेरी बेरी, स्कर्वी, रक्तविकार, गठिया, ऊपरस, ज्वर, चर्मरोग, दुर्बलता, एवं आँखकी बीमारीको दूर करता है। टमाटरको गुणोंकी खान और घरका वैद्य ही समझिये।

टमाटरके गुणों और उपयोगिताको देखते हुए

बनाकर टमाटरका उपयोग विविध रूपोंमें कर सकती हैं। टमाटरसे कुछ व्यंजन निम्न रीतिसे बनाए जाते हैं:-

टमाटरकी चटनी

टमाटर एक सेर, सिरका एक पाव, कतरी हुई अदरक दो पाव, शकर एक छटांक, किशमिश एक पाव, कतरे बादाम दो पाव, पिसी हुई लालमिर्च दो छटांक, नमक आधी छटांक, इमलीका रस एक सेर लेकर उपरोक्त सभी वस्तुएँ अपने पास रखें।

पहिले पके हुए टमाटरोंके दो दो टुकड़े कर लीजिए। तत्पश्चात् टमाटरोंको उबालनेके लिए आगपर चढ़ा दीजिए। जब टमाटर उबल जाय तब एक साफ पतले कपड़ेमें छानिये। जब रस खूब गाढ़ा हो जाय तब उपरोक्त सेवा एक साथ ही सब रसमें मिला दीजिए। अब किसी शीशीमें भरकर रख लीजिए। प्रत्येक दिन वर्तनको हिलाती जाइए। बस टमाटरकी चटनी तैयार हो गई है। एक बारकी बनाई हुई चटनी महीने भर काम देगी। यह चटनी खानेमें बहुत ही स्वादिष्ट और खटमिठ्ठी होती है।

टमाटरका अचार

टमाटर दो सेर, शकर ढाई पाव, अदरक दो छटांक, सूखीमिर्च आधी छटांक, राई एक छटांक, हल्दी एक तोला, सौंफ एक तोला, कलौंजी एक तोला, हरीमिर्च दो छटांक, लहसुन एक छटांक, सरसोंका तेल दो छटांक, दस नींबूका रस, उपरोक्त सभी वस्तुओंको लेकर अपने पास रख लीजिए।

पहिले टमाटरको पानीमें अच्छी तरह साफ करके छोटे-छोटे टुकड़े काट लीजिए और चूल्हेपर पकनेके लिए चढ़ा दीजिए। उसमें शकर, अदरक, सूखीमिर्च, पीसकर छोड़ दीजिए। थोड़ी देर बाद सिरकाको भी छोड़ दें। जब पकते पकते छूनेसे चिपकने लगे तब नीचे उतार लीजिए। लहसुन, हरीमिर्च, हल्दी और राईको पीसकर नींबूके रसमें मिलाकर रख लें। नमक तैल भी मिला दें और दस पन्द्रह मिनट तक रखा रहने दीजिए। जो टमाटर पका हुआ रखा है उसमें यह सभी मिश्रण मिला दें और सौंफको मिलाकर शीशीमें भर कर रख दीजिये। यह अचार

खानेमें स्वादिष्ट एवं जायकेदार होता है।

टमाटरका हलुआ

लाल टमाटर आधा सेर, वेसन एक पाव, हरी धनियाँ, हरीमिर्च, जीरा, नमक, हल्दी, घी और- हींग अन्दाजसे लेकर रखें। पहिले टमाटरको पानीमें अच्छी तरह साफ करके खूब महीन महीन काट लीजिए। अब कड़ाहीमें घी हींग, जीराका छौंक देकर टमाटर डाल दें। अब अपनी इच्छानुसार नमक, मिर्च, हल्दी और हरीधनियाँ कतरकर डाल दीजिए। जब टमाटर अच्छी तरह गल जाय तब उसमें वेसन डालकर अच्छी तरह चमचेसे चला दें। जब पकते पकते पानी बिलकुल सोख जाय तब नीचे उतार लीजिए। बस टमाटरका हलुआ तैयार हो गया है।

टमाटरके चावल

टमाटर आधा सेर, चावल आधा सेर, घी आधा पाव, आठ बड़ी इलायची, लौंग एक दर्जन, काजू दो तोला, किशमिश दो तोला, नारियलका दूध दो प्याला, आधा दर्जन हरी मिर्च, नमक और धनियाँ अन्दाजसे लेकर उपरोक्त सभी वस्तुएँ अपने पास रख लें।

पहिले टमाटरोंको उबालकर छील लीजिए फिर उसमें एक सेर पानी डाल दीजिए। जब बीज नीचे बैठ जाय तब ऊपरका रस उतार लीजिए। फिर उसमें नारियलका दूध और नमक मिला दीजिए। पतीलीमें घी डालकर बड़ी इलायची, लौंग, काजू, किशमिश, चावल भून लीजिए। थोड़ा भूननेके बाद वह रस डाल दीजिए। जब गल जाय तब नीचे उतार कर खानेके काममें लाएं।

टमाटरका पराठा

टमाटर एक पाव, आटा, घी, नमक अन्दाजसे लेकर रख लें। पहिले टमाटरको हाथसे मसलकर उसका रस निकाल लीजिए। अब आटेमें घी का मोयन देकर नमक, रस तथा पानीके साथ सान लीजिए। इसके बाद सादे तिकोने पराठे की तरह बेलकर तवेमें घीके सहारे दोनों तरफ बादामी रङ्गसा सेक लीजिए। बस टमाटरका पराठा तैयार हो गया है।

आन्त्रपुच्छ शोथ

APPENDICITIS

लेखक—श्री वैद्य प्रह्लादराय देराश्री

B. A., B. I. M. S.

आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेद रत्न, साहित्यरत्न
प्रधान चिकित्सक, प्रधान चिकित्सालय, अजमेर।



कारण—आंतोंमें स्थित पूयजनक जीवाणुओंके संक्रमणसे ही यह रोग होता है, इनमें भी B coli नामक जीवाणु प्रधान होते हैं। दूसरे क्रममें स्ट्रेप्टो-कौक्सी तथा स्टेफिलोकौक्सी भी आते हैं। इनके अतिरिक्त कभी कभी आन्त्रिकज्वरका जीवाणु, रोहिणीके जीवाणु एवं क्षय कीट भी आन्त्र पुच्छ शोथके कारण बन जाते हैं। इन मुख्य कारणोंके अतिरिक्त इस रोगके कई सहायक कारण भी हैं। जो निम्न लिखित कहे जा सकते हैं।

आधुनिक सभ्यता—आधुनिक सभ्यताके बढ़ते हुए प्रसारके कारण खान पानकी शुद्धता एवं नियमितता समाप्त प्राय होती जा रही है। अतः आंतोंमें संक्रमण अधिक आसानीसे हो जाता है। यह रोग २० से ३० तीस वर्षकी आयुके व्यक्तियोंमें सबसे अधिक होता है। वैसे तो कई बालक भी इससे पीड़ित हो जाते हैं बालकोंमें तीव्र प्रकार एवं युवकोंमें जीर्ण प्रकार अधिक हुआ करता है।

शाकाहारियोंकी अपेक्षा मांसाहारियोंमें यह रोग अधिक होता है। इसका कारण यह है कि मांसमें जो रसा होता है वह Calciam के साथ मिलकर आन्त्र-

पुच्छमें मलाशमरी उत्पन्न कर देती है। भोजनमें सेल्यु-लोज वाले पदार्थोंकी कमीसे मलाशमरीका आधिक्य होकर वह भी इस रोगकी उत्पत्तिमें सहायक होता है। यान्त्रिक चक्कीका पिसा हुआ आटा खानेसे भी यह रोग उत्पन्न हो सकता है क्योंकि इसके साथ पत्थरके सूक्ष्म कण भी पेटमें जाते रहते हैं। इसके अलावा एनामेल पालिशके वर्तनोंमें भोजन करना, अच्छी तरह भोजनको न चबाना और अति शीघ्रतासे भोजन करना आदि भी इसकी उत्पत्तिमें सहायता करते हैं।

आन्त्रपुच्छ एक ऐसा अवयव है जिसमें संक्रमण अतिशीघ्र प्रभाव करता है क्योंकि इस अंगको रक्त बहुत ही कम मिल पाता है। अतः उपसर्ग प्रतिकार क्षमता इसकी कम रहती है। नारियोंमें बीजाधार धमनी (Ovarian artery) के कारण आन्त्र पुच्छको रक्त कुछ अधिक मात्रासे मिल जाता है अतः स्त्रियोंमें पुरुषोंकी अपेक्षा यह रोग कम होता है।

इस अवयवके निर्माणमें श्लेष्मकलान्तर्गत लसिका का आधिक्य होनेसे इसमें उपसर्ग अति शीघ्र होता है। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक रूपसे ही आन्त्रपुच्छके निर्माणमें कुछ विकृतियाँ होती हैं। आन्त्रपुच्छकी औसत लम्बाई प्रायः ३-४ इंच होती है किन्तु कभी कभी यह ११-१२ इंच तक लम्बा होता है जिससे उसमें बल पड़ने अथवा टेढ़ा होनेकी अधिक सम्भावनायें होती हैं। इसके अतिरिक्त फलोंके बीजोंसे या मलाशमरीके कारण अथवा आन्त्रकृमिके द्वारा आन्त्र पुच्छका मार्ग बन्द होकर शोथ उत्पन्न होजाता है।

मलाशमरी—आन्त्र पुच्छके भीतर प्रविष्ट मलके सूख जानेसे मलाशमरी बन जाती है। यह आर्धसे एक इंच लम्बी दृढाकृति होती है इसके मध्य कोई कंकड़ या बीज होता है। प्रायः ५ से १०% के आन्त्रपुच्छमें मलाशमरी रहती है। तीव्र आन्त्र पुच्छ शोथके ६० प्रति-शत रोगियोंके आन्त्रपुच्छमें मलाशमरी पाई जाती है।

उपरोक्त कारणोंके अतिरिक्त अभिघात, पीड़न और दक्षिण वंशजोत्तरिक प्रदेशमें अधिक शीत पहुँचना तेज व्यायाम, दस्तके समय अधिक काँखना आदि कारण भी आन्त्रपुच्छ शोथकी उत्पत्तिमें सहायक होते हैं।

सम्प्राप्ति—इस रोगमें आन्त्रपुच्छमें संक्रमण उपस्थित होनेपर यह अंग निर्वल होकर उसकी प्रतीकार क्षमता शून्य शून्य घटती जाती है और जीवाणु आक्रमण करके उसे आक्रान्त कर लेते हैं। इस अंगमें लसिका धातुकी जो अधिकता होती है वह उपसर्ग फैलनेमें सहायक होती है।

उण्डुक पुच्छमें ये कीटाणु पहुँचनेके उपरान्त प्रारम्भमें कुछ शोथ उत्पन्न कर देते हैं जिससे आन्त्र पुच्छ कुछ फूला हुआ और लाल रंगका होता है। यदि संक्रमण इससे आगे न बढ़ा तो धीरे धीरे रोपण होकर विकारप्रशम हो जाता है। किन्तु प्रायः इसके पुनरावर्तन होते रहते हैं और प्रत्येक आक्रमणके उपरान्त अन्तु शोथ बढ़ता जाता है। फलस्वरूप उसका द्वार बन्द होकर मलाशमरी बनती है, पूय इकट्ठा होता और आसपासके अंग प्रत्यंगोंमें फैल जाता है।

प्रायः उण्डुकपुच्छमें पूय एकत्र होकर विद्रधी सी बन जाती है। यदि संक्रमण अति उग्र हो और प्रतीकार क्षमता क्षीण हो तो कोथ (Gangrene) उत्पन्न हो जाती है। उसके फट जाने या सच्छिद्र होजानेपर पूय उदरावरणमें निकलकर उदरावरण शोथ (Peritonitis) उत्पन्न कर देता है जो घातकरूप ले सकता है।

लक्षण—उदरपीड़ा रोगका सबसे प्रथम लक्षण है प्रायः गरिष्ठ या असाधारण भोजनके पश्चात् या मध्यरात्रिमें तीव्र उदरपीड़ा आरम्भ होती है। पहले पीड़ा नाभिके चारों ओर रहती है परन्तु एक दो दिनमें वह दक्षिण वक्षणीय प्रदेशमें सीमित होजाती है। जब पीड़ा तीव्र होती है तब वमन होती है और रोगी अवसन्न सा होता है।

इस रोगके आक्रमणके साथ, विशेषकर कोथ और अवरोधक प्रकारमें, 100° से 102° तक ज्वर रहता है। परन्तु अधिक ताप रोगकी गम्भीरताका प्रतीक नहीं है ज्वरमें पहले सरदी प्रायः नहीं लगती है। किन्तु शीतपूर्वक ज्वरोत्पत्ति हो तो यह अन्तः विद्रधि या कोथ उत्पन्न होनेकी सूचना देती है। नाड़ी तेज होती है और अवरोधक प्रकारमें सच्छिद्र होनेकी स्थितिमें अधिक तेज होती है।

जिह्वा मैली होती है, जी मिचलता है, उल्टी होती है। दूसरे दिन वमन बन्द होजानेपर भी जी मिचलाना जारी रहता है बार-बार मूत्र त्यागकी इच्छा होती है और वृहदन्त्रमें क्षोभ उत्पन्न होकर प्रवाहिनी भी उत्पन्न हो जाती है। मूत्रकी मात्रा कम होकर उसमें एल्ब्यूमीन भी उपस्थित होती है।

अन्य पहचान—रोगी दाहिनी टाँग सिकोड़कर पीठके बल लेटा रहता है। श्वास लेते समय पेटकी अपेक्षा छाती अधिक हिलती है। दक्षिण वक्षणकूट और नाभिको जोड़ने वाली रेखापर वक्षणकूटसे डेढ़ दो इंच दूरीपर स्याक बर्नीके बिन्दुपर स्पर्शनसे सबसे अधिक पीड़ा होती है और वहाँकी त्वचाको दो उँगलियोंके बीचमें पकड़नेसे सूजनका पता लग जाता है।

बोनाका चिह्न—रोगीको एक मेजके किनारे इस प्रकार लिटाया जावे कि उसकी दोनों टाँगें नीचेकी ओर लटकती रहे यदि रोगी अन्त्रपुच्छ शोथसे पीड़ित होगा तो दक्षिण वक्षणोत्तरिक प्रदेशमें पीड़ा होगी।

रोबर्सिंगका चिह्न—रोगीको पीठके बल लिटाकर यदि वाम वक्षणोत्तरिक प्रदेशमें इस प्रकार दबाव लगाया जाय कि उसकी दिशा नाभिकी ओर हो। यदि रोगी अन्त्रपुच्छ शोथसे पीड़ित होगा तो उसको आन्त्रपुच्छके स्थानपर पीड़ा होगी।

रोगक्रम—प्रथम आक्रमण और सौम्य प्रकारमें पीड़ा ३ दिनके पश्चात् कम होते होते एक सप्ताहमें ठीक होजाती है किन्तु अनेक रोगियोंमें जरा-सा कारण मिलते ही बार बार आक्रमण होते रहते हैं।

जिन रोगियोंके आन्त्रपुच्छमें व्रण उत्पन्न होजाते हैं उनमें लक्षण कम न होकर बढ़ते जाते हैं और तापमान उच्च होता जाता है। आन्त्रपुच्छके अन्तमें शोथ एवं गांठ सी प्रतीत होती है। काफी स्वेद होता है। रोगी अतिदुर्बल और क्षीण हो जाता है। उदरकला शोथ एवं विद्रधिकी अवस्था अत्यन्त खतरनाक होती है। यदि तत्काल शस्त्रकर्म न किया जावे तो यह विद्रधि उदरमुहामें विकसित होकर मृत्युका कारण बन सकती है।

बन स
उद
रूप धा
शून्य शून्य
तापक्रम
विषमय

रन
हो जात
हजारसे
बहुत अ

चि
शस्त्रकर्म
कर्म जि
है। विल
बढ़ सक

रो
चिकिर
शूल
चाहिए

उसमें र
वाले स
२-२
निवारण
घण्टेके

(Mor
वपयोगी
आ
होकर
निम्न

आ
प्रवालप
काथके

बन सकती है।

उदरकलमें सार्वत्रिक शोथ होकर यह घातक रूप धारण कर लेता है। प्रथम तीव्रज्वर और पश्चात् शनैःशनै रोगीकी शक्ति क्षीण होती जाती है एवं तापक्रम घटते-घटते सामान्यसे नीचे चला जाता है। एवं विषमयता एवं हृदयकी क्षीणतासे मृत्यु हो जाती है।

रक्त परीक्षण—रक्तमें श्वेताणुओंकी अतिवृद्धि हो जाती है यूयोत्पत्ति न होनेपर तो यह संख्या २० हजारसे कम ही रहती है किन्तु पूय उत्पन्न होजानेपर बहुत अधिक बढ़ जाती है।

चिकित्सा—इस रोगकी एक मात्र चिकित्सा शस्त्रकर्म है। रोगका निश्चय होजानेके उपरान्त शस्त्र कर्म जितना जल्दी किया जा सके उतना ही उत्तम है। विलम्ब होनेपर अन्य उपद्रव होनेसे कष्ट साध्यता बढ़ सकती है एवं घातक रूप भी बन सकता है।

रोगके सामान्य आक्रमणकी स्थितिमें निम्नलिखित चिकित्सा लाभकारी होती है।

शूलके स्थानपर गरम पानीकी थैलीका सेक करना चाहिए। अथवा गरम पानीमें तारपीनका तैल डालकर उसमें रोयेंदार तोलिया भिगो भिगो निचोड़ कर दर्द वाले स्थानपर रखना चाहिए। शूलवज्रिणी वटी २-२ गोली उष्ण जलके साथ देनी चाहिए। शूल निवारणके लिए (Spasminodon) की १-१ गोली ४-४ घण्टेके पश्चात् दी जा सकती है। वेदना असह्य होनेपर (Morphia Atropine) का सूचीवेध करना भी उपयोगी होता है।

आन्त्र पुच्छ शोथ जीर्ण हो जाने व तीव्र वेग न होकर उस स्थानपर शूल बने रहनेकी स्थिति होनेपर निम्न लिखित चिकित्सा लाभकारी पाई गई है।

आरोग्यवर्धिनी २ रत्ती, पुनर्नवा मंडूर २ रत्ती, प्रवालपंचामृत २ रत्ती, शुण्ठी चूर्ण ४ रत्ती, पुनर्नवादि कायके अनुपानसे प्रातः सायं दी जावे।

भोजनोत्तर हिंघृष्टक चूर्ण ३-३ माशा अथवा हिंघादि वटी २-२ गोली उष्ण जलसे दी जावे।

भोजनके १ घण्टे पश्चात् कुमार्यासव एवं पुनर्नवासव प्रातःसायं दिया जावे।

पथ्यापथ्य—तीव्र वेगकी स्थितिमें केवल तरल आहार यथा दुग्ध, चाय, तक्र अथवा फल रस पर ही रोगीको रखा जावे। शूलका वेग कम होजानेपर ही शनैः शनैः नियमित आहार पर लाया जावे। जीर्ण व्याधि होजानेपर भी भोजन हलका सादा और सुपाच्य होना चाहिए और तली हुई वस्तुयें, गरिष्ठ भोजन तथा तीक्ष्ण आहार विहारका रोगीसे त्याग करवाना चाहिए।



आयुर्वेदमें आस्तिकवादका प्राधान्य जीवन रक्षाकी दिशामें अन्य पद्धतियोंकी अपेक्षा एक विशिष्टता

लेखक—आचार्य प्रेमकिशोर मिश्र B. I. M. S.

प्रधान चिकित्सक म्यू० आयुर्वेदिक औषधालय, नगरा, अजमेर

योग्य लेखकने आयुर्वेदकी अन्यत्र अनुपलब्ध विशेषताके विषयमें प्रकाश डाला है। वास्तवमें प्राचीन ऋषियों और महर्षियोंके सभी कार्योंका सूत्रपात आस्तिकत्वके आधारपर ही होता था। उनका यही वैशिष्ट्य उन्हें जीवनके सर्वोत्तम लक्ष्यको निश्चित करनेमें सफल बना सका था। निश्चय ही यह आस्तिकवाद रोगपाशसे मुक्त होनेमें ही सहायक नहीं है, अपितु जीवनके उस लक्ष्यकी प्राप्तिभी एकमात्र साधन है।

—सम्पादक

यह एक सर्वमान्य आम बात है कि मनुष्य मृत्युपर विजय नहीं प्राप्त कर सका है। मृत्यु कब किस ओरसे किस बहाने मनुष्यपर हमला बोल देगी यह उसे विदित नहीं है। आत्मा, इन्द्रिय, मन, शरीरके संयोगका वियोग होकर जीवनका विराम होना मृत्यु है। सभी चिकित्सा पद्धतियों व उसके समझा-सियोंको अपने प्रतिदिनके व्यावसायिक व्यवहारमें अपने रोगियोंकी जीवन रक्षाके प्रयत्नोंमें लगे रहनेपर मृत्युसे वास्ता पड़ता है। उस अवसरपर सभी चिकित्सक अपने ज्ञान तथा प्रयत्नोंकी सीमाको जान लेते हैं। मृत्युके प्राप्तिमें जारहे रोगीके पारिवारिक जनों व इष्ट मित्रोंसे परमात्मापर भरोसा रखनेका आश्वासन देते हैं। प्रार्थना आदि करनेका परामर्श देते हैं।

चिकित्सकोंका यह भी प्रयत्न होता है कि रोगीकी मृत्यु भी शान्ति पूर्वक हो। मृत्युके बाद भी मृत व्यक्तिकी आत्माको शान्ति और सद्गति प्राप्त हो, यही सभी सम्बन्धित व्यक्तियोंकी कामना होती है। यह सारी प्रक्रिया व्यष्टि तथा समष्टिकी ईश्वरकी आस्थाकी ओर संकेत करती है। कुछ विचारशील लोग इससे

भिन्न विचार भी रखते हैं।

देह, आत्मा, मन, इन्द्रियोंके ज्ञानसे समझमें न आने वाली, सभी जीवोंके जीवनको चलाने वाली, अदृश्य नियामक शक्ति तथा इस संसारके अलावा अन्य संसारके अस्तित्वमें विश्वास रखना आस्तिकता है।

संस्कृतकी अस् भुवि धातुके लट् लकारके प्रथम पुरुषके एक वचनमें अस्तिसे आस्तिक शब्द बनता है। आस्तिकता एक विश्वास है। यह विश्वास हृदय तथा मनसे सम्बन्ध रखता है। मनकी अपेक्षा इस विश्वासका सम्बन्ध हृदयसे अधिक है। मन प्रत्येक वस्तुको तर्क व प्रमाणकी कसौटीपर कसता है। ईश्वर के अस्तित्वको तर्क और प्रमाणसे सिद्ध करना कठिन काम है। ईश्वर पूरी तरह भरोसेकी चीज है। भरोसा हृदयसे होता है।

इस सम्बन्धमें एक रोचक प्रसंग याद आया है। मैं उसका जिक्र करना भी ठीक समझता हूँ। बादशाह में उसका जिक्र करना भी ठीक समझता हूँ। बादशाह अकबरने अपने मंत्री बीरबलसे प्रश्न किया। बीरबल ? "खुश क्या है" बीरबलने उत्तर दिया। जहाँ पनाह ? "यकीन खुश है" बादशाहने प्रमाण माँगा। प्रमाण देतेके लिये बीरबलने मोड़लत माँगी जो उन्हें प्राप्त

हुई। इधर बीरबलने अपने सहयोगियोंद्वारा एक स्थानपर फूल, अगर आदिसे पूजा प्रारम्भ करा दी। पूजा करनेवालोंकी निष्ठा और विश्वाससे सिद्धि प्राप्त हुई। श्रुत परम्परा और अनुकरण वृत्तिसे उस स्थान पर अच्छा खासा मेला होने लगा, और वह स्थान प्रसिद्ध हो गया। कुछ समय बाद बीरबल अकबरको उस स्थानपर लेगये और वहाँका वैभव दिखाया, बादमें बादशाहको पता चला कि उस स्थानपर पर्देके पीछे कुछ पुरानी बेकार चीजें रखी थीं। बीरबलने कहा हूजूर! आपको प्रमाण मिला या नहीं कि यकीन खुदा है। इस घटनाको मैंने "विश्वास ही आस्तिकता है" इस उक्तिके समर्थनमें तथा पोषणके रूपमें उद्धृत किया है।

आयुर्वेद पूरी तरह आस्तिकतासे ओतप्रोत है। आयुर्वेदके अवतरण क्रममें ब्रह्मा, देव वैद्य अश्विनी कुमार, इन्द्र आदिसे आयुर्वेद-ज्ञान-प्राप्तिका उल्लेख है। (चरक सूत्र स्थान, सुश्रुत सूत्र स्थान) शारीर प्रकरणमें सुश्रुतके सर्वमूल चिन्ता शरीरमें शरीरके २४ घटकोंके वर्णन प्रसंगमें अव्यक्त महान् अहंकार तन्मात्रा आदिकी दुरुह दार्शनिक जटिलताओंके माध्यमसे आस्तिकताका वर्णन किया गया है। आयुर्वेदके द्रव्यगुण वर्णन प्रसंगमें हरीतकी, लहसुन, गुड़ची आदिकी अमृतसे उत्पत्तिको क्रमशः इन्द्रके अमृतपान, गरुड़के अमृत हरण, श्रीरामचन्द्रके वानरोंको इन्द्र द्वारा पुनः जीवदान आदिकी पौगणिक गाथाओंके माध्यमसे, इन औषधियोंके त्रिदोष शामक गुणोंके प्रति निष्ठा तथा विश्वास उत्पन्न करनेके लिये आस्तिकताका माध्यम अपनाया गया है।

(भाव प्रकाश हरीतक्यादि और गुड़च्यादि वर्ग हरीतकी, लहसुन, और गुड़ची उत्पत्ति प्रसंग)

इसी प्रकार आयुर्वेदीय रोग विज्ञानमें दत्त यज्ञ-विध्वंस तथा शिवके प्रकोपसे ज्वर, रक्तपित्त, प्रमेह, अपस्मार, कुष्ठ, उन्माद आदि रोगोंकी उत्पत्तिको आस्तिकतासे सम्बन्धित किया है।

(चरक निदान, अपस्मार निदान प्रकरण)

चरक सूत्र स्थान अध्याय ११ में प्रमाण वर्णन प्रसंगमें नास्तिकताका खंडन कर परलोकका अस्तित्व, आत्मा परमात्माकी गूढ़ बातोंको अत्यन्त रोचक शैलीमें समझाया गया है।

प्रसूतितंत्र तथा कौमारभृत्यमें भी आस्तिकताके रोचक प्रसंग प्राप्त होते हैं। प्रसूताको सूतिहागारमें प्रवेश करनेके पूर्व स्वस्तिवाचन, गौ-ब्राह्मण, देव-दर्शनका विधान निर्देश है।

कौमारभृत्यमें गर्भाधान, पुंसवन, जातकम, नामकरण, प्रथम स्तन्यपान, कर्णवेध आदिके पूर्व स्वस्तिवाचनका निर्देश किया गया है। कुछ रोगसे मरने वाला रोगी अन्य जन्ममें भी कुछ रोगी ही होता है। इससे पुनर्जन्म और अन्य लोक आदिकी आस्तिक विचार धाराका समावेश आयुर्वेदमें होता है। आयुर्वेदके कायचिकित्सा प्रकरणमें सभी प्रकारके ज्वरोंको दूर करनेके लिये शिवपूजन तथा विष्णु सहस्रनामपाठका उल्लेख चक्र-दत्तके ज्वराधिकारमें आया है। आयुर्वेद पद्धतिके अनुसार समस्त रोगोंकी उत्पत्ति वायु, पित्त, कफकी असमानतासे होती है। ये असमान वायु, पित्त, कफ; रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र आदिको दूषित करते हैं। इस प्रकार रोगोत्पत्ति होती है। इन सभीके प्रकोप तथा विकृतिका कारण वायु है। वायुद्वारा समस्त शरीरकी गति होती है, शरीरस्थितगति ही वायु है चिन्तन मस्तिष्ककी गति है। चिन्तासे मस्तिष्ककी गति वृद्धि होती है। शरीरमें एक स्थानकी गति वृद्धि (वायु) अन्य स्थानकी गति वृद्धि (वायु वृद्धि) का कारण होती है। ईश्वरमें अविश्वास, नास्तिकता, संशय, संदेह, भय आदिसे शरीरमें वायु वृद्धि होकर रोगोत्पत्ति होती है।

विश्वास, आस्तिकता, धैर्य आदिसे चिन्ता मुक्त रहनेसे मस्तिष्क शान्त और सुव्यवस्थित रहता है। विश्वास, धैर्य, आस्तिकतासे शरीरमें श्लेष्म वृद्धि होती है। श्लेष्मा भारी और स्निग्ध होनेसे वायुके रुद्ध, सूक्ष्म, लघु आदि गुणोंको दवाना है। हानि, लाभ, भलाई, बुराईको ईश्वरके हाथमें छोड़ देनेसे शान्ति और धैर्य प्राप्त होता है। शान्ति और धैर्य रोगोत्पत्ति रोकने और जीवन रक्षामें सहायक है।

आयुर्वेद विज्ञानकी सभी शाखाओंमें आस्तिक-वादका प्राधान्य जीवन रक्षाकी दिशामें अन्य चिकित्सा पद्धतियोंकी अपेक्षा इसकी विशिष्टता है।

चिकित्सा परामर्श

विज्ञ पाठकोंने पत्रों द्वारा सूचित किया है कि "स्वास्थ्य" के चिकित्सा-परामर्श-स्तम्भ द्वारा तीन कार्य विशेषरूपसे सिद्ध हो रहे हैं। प्रथम यह कि गम्भीर रोगोंसे ग्रस्त बन्धुओंको विना किसी भेद भाव के, विना किसी व्यापारिक स्वार्थ सिद्धिकी भावनाके अच्छेसे अच्छा परामर्श प्राप्त होता है। द्वितीय यह कि इसमें प्रसङ्गोपात्त विवेचनद्वारा पाठकों, वैद्यों और जिज्ञासुओंको अभिनव जानकारी और दिशा मिलती है। तृतीय यह कि आधुनिक विज्ञानसे अनुमोदित परन्तु सम्यक् विचारसे रहित अभियानोंके अन्तरालमें छिपी कमियों और दोषात्मकताका परिचय प्राप्त होता है।

निश्चय ही गुणग्राही सहृदय बन्धुजन अपनी सत् सम्मतियोंके लिए विशेष धन्यवादके अधिकारी हैं। हमें आशा है कि उनका सहयोग बना रहेगा तो हम और भी अधिक सुन्दर एवं उपयोगी सामग्री उनकी सेवामें प्रस्तुत कर सकेंगे।

—सम्पादक

१. एक सुयोग्य एवं अपने रोगियोंके हित-चिन्तक दयालु वैद्यराजजीने अलोवाल, तहसील नाभा, जिला पटियालासे लिखा है।

"मान्यवर श्री सम्पादक जी, सादर प्रणाम।

आगे निवेदन है कि मेरे पास एक रोगी आया। उसने सन्तति निग्रहका आपरेशन कराया है। एक वर्षसे ज्यादा बीत गया है। आपरेशनके कुछ महीनों बाद उसको शुष्क अर्श हो गई और तमाम वदनमें खुजलाहट हो गई। दवाइयां बर्तनेपर खुजलाहट और अर्श तो ठीक हो गई हैं। लेकिन अब अण्डकोशोंमें तीव्र कण्डू तथा असह्य वेदना होती है जो हृदयको धड़का देती है। इसके साथ साथ उसे वीर्य रोग-स्वप्न दोष-वीर्य जाना तथा वीर्य अत्यन्त पतला पड़ गया है और कामशक्ति बिल्कुल नष्ट हो गई है। शरीर अत्यन्त दुर्बल तथा आलस्य युक्त हो गया है। मानो उसका सुखमय जीवन नरक धाम बन गया है। कब्ज रहती है, भूख कम है।

मैं "स्वास्थ्य" मासिक तथा आयुर्वेदका प्रेमी होनेके नाते आपसे आप्रहपूर्वक निवेदन करता हूँ कि ऐसी उत्कृष्ट एवं सस्ती औषधि बतानेकी कृपा करें जिससे उसके अण्डकोशकी कण्डू वेदना तथा शारीरिक कमजोरी और वीर्य सम्बन्धी रोग दूर होकर शरीर स्वस्थ तथा नीरोग हो ताकि उसका जीवन सुखसे बीत सके।"

परामर्श—बन्धुवर, यह एक विचारणीय उदाहरण है, नपुंसकीकरण आपरेशन आजकल सामूहिकरूपसे किये जाते हैं। सैकड़ों लोगोंके आपरेशन एक एक कैम्पमें कुछ ही दिनों या एक दो सप्ताहमें कर दिये जाते हैं। बस फिर कैम्प वाले डाक्टर बन्धु और अनुचर अपना डेरा डण्डा उठाकर अपने केन्द्र स्थानपर या आगे किसी अन्य कैम्पके लिए चले जाते हैं। आपरेशन करानेके बाद उन निरीह व्यक्तियोंका क्या हुआ इसका लेखा जोखा नहीं मिलता। अनुमान ऐसा है कि सैकड़ोंमेंसे किसीने कोई शिकायत की और उसे गम्भीर समझा गया तो उसको नोट किया जाता है। बादमें उन्हींके आधारपर अङ्क प्रस्तुत किये जाते हैं कि इनमें कितने केसोंमें कुछ शिकायत प्राप्त

हुई है। सभी अभियानोंमें यही दशा हुई है। हमने बी. सी. जी. के अभियानके बाद ग्रामोंमें सैकड़ों व्यक्तियोंको महिनो ब्रणोंसे पीडित देखा है। उनकी कभी किसीने कोई साज सम्हाल नहीं की।

इसलिए ऐसे आपरेशनोंके विषयमें तथ्य तो इस प्रकारके केसोंसे ही विदित होते हैं। आपके इस केसमें यह तो निःसन्देह रूपसे नहीं कहा जा सकता कि अर्श और कण्डू इसी आपरेशनके कारण हुई थी। वृषण कण्डूका सम्बन्ध इससे जोड़ा जा सकता है। नपुंसकता आदिका सम्बन्ध तो स्पष्ट ही इस आपरेशन से है। हमारा अनुमान है कि जो शुक्र निकलते रहनेकी बात है वह वास्तवमें शुक्र तो नहीं होना चाहिये। पौरुष ग्रन्थि (Prostate gland) का स्राव हो सकता है। स्वप्नदोषमें भी ऐसा ही सम्भनना चाहिये। यह केस अभी तक हमारे सामने आए उदाहरणोंसे कुछ विशेषता रखता है। नीचे अनुभव और औषधोंके बुद्धिगम्य विवेचनके आधारपर सलाह दी जा रही है। कृपया प्रयोग करावें और आगे आवश्यकता होनेपर पुनः पूछनेका कष्ट करें। साथ ही हमारी सम्मति है कि ऐसे रोगियोंका पूरा इतिवृत्त एवं चिकित्सा विवरण रखना चाहिये।”

१. गन्धक रसायन
(रसतन्त्रसार व
सिद्ध प्रयोग संग्रह)

मात्रा—दो से चार रत्ती
अनुपात—शीतल जल
दिनमें तीन बार प्रातः,
मध्याह्न तथा सायंकाल

२- त्रिवङ्ग भस्म
(२८ पुटी)

मात्रा १ रत्ती
अश्वगन्ध, विधारा और
मिश्री समस्त समभागके
चूर्णके साथ दूधसे दोनों
समय दिलावें।

३- सारस्वतारिष्ट

मात्रा १ १/४ तो० समान जलसे
भोजनोत्तर दोनों समय

वृषण कच्छके लिए निम्न प्रकार तैल सिद्ध कर लें।
सरसोंका तेल १ पाव लें। अहिफेन ३ माशा,
सिन्दूर असली ६ माशा, कपूर ३ माशा, अफीमको
थोड़ेसे पानीसे घोटकर तेलमें मिला दें। फिर पकावें

जब पानी जल जावे तब तेलको और भी गर्म करें।
जब उसमेंसे धूआँ उठने लगे तब उसमें सिन्दूर डाल
दें और किसी चीजसे चलाते रहें। जब सिन्दूर काला
पड़ जावे और जोरसे धूआँ उठने लगे तब उतार लें।
कपूरके टुकड़े करके उसमें डाल दें। ढक्कनसे अच्छे
प्रकार ढक दें। ठण्डा होनेपर किसी शीशीमें भर दें।
दिनमें दो समय वृषणोंपर इसे वैसलीनकी तरह
लगावें। मुलतानी मिट्टी या बेसनसे धोवें। साबुन
न लगावें।

आधुनिक चिकित्सकोंके मतसे ऐसी स्थिति
मानसिक विचारोंके कारण (Psychologically)
भी होती है। अतः उन्हें इस दृष्टिसे भी सदुपदेश
सद्विचार तथा प्रोत्साहन आपके तथा मित्रोंके द्वारा
प्राप्त होता रहे तो अच्छा होगा।

२. उपर्युक्त वैद्यराजजी ने ही वन्ध्याकरण
आपरेशनकी शिकार एक अन्य रोगियों
के विषयमें पूछा है—

“एक स्त्री मेरी रिश्तेदारीमें है। उमर २८ वर्षके
करीब। शरीर दुर्बल है। एक वर्ष पहिले उसे लड़का
पैदा हुआ था। तभी उसके घर वाले ने उसका सन्तति
निग्रहका आपरेशन करवा दिया। आपरेशनके टाइममें
भी सख्त बीमार रही। लेकिन अब तो दिन प्रति दिन
दुबली ही होती जा रही है। जबसे आपरेशन कराया
है दो दफा मासिक धर्म आया है। मासिक कष्टसे
होता है। रक्त ज्यादा गाढ़ा और गाढ़े लाल रंगका
दुर्गन्धित आता है। स्वभाव चिड़चिड़ा, भूख कम,
आलस्य, थोड़ा सा काम करनेपर थक जाना, सीढ़ियां
चढ़नेपर दम फूलना आदि लक्षण हो रहे हैं। शरीरमें
दर्द बना रहता है। विशेष कटि प्रदेशमें। शहरकी
रहने वाली है।

यह रोग आपरेशन वाली कई औरतोंको मैंने
देखा है। अतः मैं आपसे यह परामर्श चाहता हूँ कि
आप कृपापूर्वक कोई ऐसी औषधि बताएं जो प्रत्येककी
प्रकृतिके अनुकूल हो और उपरोक्त सभी उपद्रवोंको
नष्टकर शरीरको सबल बनाए। आपकी महती कृपा

होगी। आप कृपापूर्वक दिसम्बरके अङ्कमें अपना परामर्श अवश्य प्रकाशित करना।”

परामर्श—बन्धुवर, अभी तक हम पुरुषों और स्त्रियोंके सन्तति निरोधके लिए होने वाले आपरेशनोंको देखकर इस परिणामपर पहुँचे हैं कि यह एक अप्राकृतिक प्रक्रिया है। शरीर यन्त्रोंकी प्राकृतिक अवस्थामें नैसर्गिक रूपसे जो कार्य शरीर और मनको स्वस्थ बनाए रखनेके लिए होते हैं उनमें इन आपरेशनोंसे व्यतिक्रम हो जाता है। उसके ही यह परिणाम होते हैं। इस रोगिणीके लिए आप निम्न प्रकारसे व्यवस्था कर सकते हैं।

१. कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म मात्रा दो से चार रत्ती।
अनुपान—दूध प्रातः सायं दो बार।

२. सारस्वतारिष्ट मात्रा $1\frac{1}{2}$ तोला
अनुपान—समभाग जल।
दिनमें दो बार भोजनोत्तर।

विशेष—यदि उन्हें बार बार प्रतिश्याय न होता हो और कास न रहता हो तो आप प्रातःकाल तं० १ की औषध एक घूंट दूधसे दिलवाकर साथमें ब्राह्मरसायन १ तोला और दिलवावें। इसी प्रकार सायंकाल भी। सारस्वतारिष्ट जहाँ रजो दोषोंको दूर करता है वहाँ वह मानसिक सन्तुलनमें भी सहायक होता है। यदि रक्त बहुत अधिक जाता है तो सारस्वतारिष्टके स्थानपर अशोकारिष्ट और पुष्पानुग चूर्णकी आवश्यकतानुसार योजना भिन्न समयोंपर की जा सकती है।

३ एक पितृ भक्त महाशय जीने विजय नगर से पूछा है—

श्रीमान् सम्पादक जी, नमस्कार।

‘स्वास्थ्य’ में जो आप परामर्श देते हैं वह सचमुच बहुत ही अच्छा होता है। कृपाकरके मेरे पिता जी के लिये भी कुछ सलाह दीजिये। वे डायबिटीजसे बहुत अक्सरे बीमार हैं। डाक्टरों इलाज बहुत हुआ है। पहिले बहुत अच्छे दिखते थे। सन्दुर्बली ठीक थी।

लेकिन डायबिटीजने उनको तोड़ दिया है। दुबले हो गये हैं। उनके कई फोड़े हो चुके हैं। बड़ी परेशानीके बाद ठीक हुए थे। एक फोड़ा उनके चूड़पर दाहिनी ओर कुछ नाचेको है। वह बहुत दिनोंसे ठीक ही नहीं होता है। पहिले तो बहुत गहरा था। पर अब बहुत भर गया है। फिर भी जो हिस्सा ऊपरसे अभी तक नहीं भरा है वह बहुत दिनोंसे ऐसा ही हैं, बन्द ही नहीं होता है, थोड़ा थोड़ा मवाद भी आता है। पर बहुत ही कम। डाक्टरी इलाज बराबर चालू है। उनको आज कल शकर नहीं निकलती है। डाक्टर साहबसे पूछा तो बताते हैं कि ठीक हो जावेगा। मवाद गहराई में से नहीं आता है। मैं घबड़ाता हूँ। टाइम बहुत हो गया है। कुछ दवा बताइये। अच्छा हो जिससे इस फोड़ेसे छुट्टी तो मिले।.....”

परामर्श—प्रिय महोदय, मधुमेहके परिणाम स्वरूप ही आपके पिताजीको ये फोड़े (पिड़िकाएँ) होती रही हैं। उसी मूल कारणसे उनका यह व्रण भी अभी तक नहीं भर रहा है। यह अच्छा ही लक्षण है कि उनको इस समय शकर नहीं आ रही है। आप निम्न प्रकार चिकित्सा कर सकते हैं। परन्तु पहिले यह देख लेना और निश्चय कर लेना बिल्कुल आवश्यक है कि यह पूय (मवाद) फोड़ेमें कहीं दूर गहराईसे तो नहीं आता है। यदि नहीं तो निम्न चिकित्सा करें—

१. वसन्त कुसुमाकररस मात्रा—१ रत्ती
अनुपान—विल्वके पत्रों का रस।

विल्वके पत्रोंको सिलपर पीसें। साथ ४ कालीमिर्च भी डाल दें। थोड़ा पानीका छींटा भी दें। बादमें मलहमके कपड़ेमें रखकर निचोड़ लें। रस १ तोलाके लगभग होना चाहिये। यदि स्वाद बहुत दुगलगे तो थोड़ा सेंधानमक मिला लें।

प्रातः सायं दोनों समय लेवें

२. व्रणपर निम्नप्रकार लेप करें।

चिकनी मिट्टी स्वच्छ स्थानकी या पीली चिकनी मिट्टी २ या ढाई सेर ले लें। फिर उसे कुटवा लें। साफ चलनीसे छान लें। एक कोरी हांडीमें सेर आधा सेर मिट्टी भिगो दें। ढककर रखें। मलहम तैयार है। इस मिट्टीमेंसे इतनी मिट्टी ले लें कि उससे व्रणके ऊपर एक अंगुल मोटी मिट्टी अच्छी तरह रखी जा सके। रख कर पट्टी बांध दें। चार घण्टे बाद पट्टी खोलें। पहिली पट्टीको हटा दें। फिर पहिलेके समान पट्टी चढा दें। इस प्रकार दिनमें चार बार पट्टी बदलें। व्रण एक दम साफ हो जावेगा। प्रतिदिन इसी प्रकार करें। ३ या ४ दिनमें व्रण भर जावेगा। त्वचापर खिंचाव और तड़कन होगी। उस समय उसपर गायका शुद्ध घी लगावें। यदि इस घीको कांसेके बरतनमें दस बार धोलिया जावे तो और अच्छा रहेगा।

विशेष—यदि पूय (मवाद) व्रणमें गहराईसे आता है तो उसकी सूचना दें और पता लिखा लिफाफा भेजकर उत्तर मंगालें। शक्करका उपयोग बराबर बन्द ही रखें।

अर्शसे पीड़ित एक बन्धुने बालोतरा, मारवाड़से लिखा है—

“श्रीमान् सम्पादकजी साहब,.....मुझे बहुत वर्षोंसे बवासीरकी बीमारी है। खून बहुत जाता था। तकलीफ भी बहुत थी। बहुत इलाज कराये देशी और विलायती सभी। पर आराम नहीं आया शरकर डाक्टरोंकी सलाहसे जोधपुरमें आपरेशन

कराया। करीब दो साल तक तो ठीक रहा। परन्तु अब तीन चार महीनेसे फिर बवासीर चालू हो गई है खून अब भी जाता है। चीस भी होती है। तबियत बहुत घबड़ाती है। गुदामें जलन सी रहती है। सोचता हूँ कि इस पाजी बीमारीसे कभी छूटूंगा भी कि नहीं। मेरी उम्र इस वक्त ४६ वर्षकी है। कब्ज सदा ही रहता है। भूख भी अच्छी नहीं लगती है। कमजोरी बढ़ती जाती है। कृपा करके कोई अच्छी दवा बताइये जिससे कुछ तसल्ली तो मिले।

परामर्श—बन्धुवर, अर्शरोगका मूलकारण तो मन्दाग्नि ही है। आयुर्वेदमें तो कहा है—

“अर्शोऽतिसारग्रहणीविकाराः।

प्रायेण चाप्योऽन्यनिदानभूताः।

सन्नेऽनले सन्ति न सन्ति दीप्ते

रक्षेदतस्तेषु विशेषतोऽग्निम् ॥”

“अर्श, अतिसार और ग्रहणीरोग प्रायः परस्पर एक दूसरेके कारण बनते हैं। अग्निके मन्द होनेपर ही ये रोग होते हैं। यदि अग्नि दीप्त हो तो ये रोग भी नहीं होते। इसलिए इन रोगोंमें विशेषरूपसे अग्निकी रक्षा करनी चाहिये।”

इस दृष्टिसे आप अपने लिए औषधकी निम्न प्रकार व्यवस्था करें तो ठीक होगा।

१. काङ्कायन गुटिका, (भल्लातक योग)—

(योग रत्नाकर) मात्रा चार से आठ रत्ती।

अनुपान—तक दिनमें दो

या तीन बार प्रातः, मध्याह्न

तथा सायं सूर्यास्तसे पूर्व।

यदि सूर्यास्तके अनन्तर लें

तो जलसे लें।

२. द्राक्षासव

मात्रा १११ तोला।

(शकरका योग)

अनुपान जल

दोनों समय भोजनोत्तर लेना

विशेष—उष्ण गुण वाले, पित्तकारक तथा तले हुए खाद्य पदार्थों को छोड़ दें। लाभ तो शीघ्र ही प्रतीत होगा। परन्तु इन्हें दीर्घकाल तक नियमसे लेते रहनेकी आवश्यकता है। संयमसे रहना बहुत लाभदायक होगा।

स मा चा र स मी च रा

श्री नारद

नारदजीने इस बार तो बड़ा लम्बा समाचार पत्र-पत्र नहीं पोथा-प्रकाशनार्थ लिख भेजा है। वे शायद यह भूल गए कि "स्वास्थ्य" मासिक पत्रमें थोड़ासा स्थान समाचारोंके लिए रहता है। परन्तु क्या कहें ? वे देवकृपि हैं। समाचार एजेन्सियोंके आदि पुरुष। आकाशवाणीके प्राग इतिहास कालीन जन्म दाता। उनके भेजे समाचारोंकी उपेक्षा करना तो जैसे समाचार जगत्को आंखसे ओझलकर देना ही है। अतः अपने स्थानावकाशके अनुसार कुछ संक्षिप्त संकेत यहां दिये जा रहे हैं।

बढ़ती हुई जन संख्याका भूत—

केन्द्रीय खाद्य मन्त्री श्री सुब्रह्मण्यम् ने बंगलौरमें साउथ् जोन यङ्ग वर्ल्ड मोबिलाइजेशन कान्फ्रेंसके उद्घाटनके अवसरपर बोलते हुए परिहासमें कहा कि भारतवर्ष प्रतिवर्ष एक आस्ट्रेलियाको जन्म दे देता है। भारतकी जनसंख्याकी वार्षिक वृद्धि एक करोड़ दस लाखके लगभग होती है, जो कि आस्ट्रेलियाकी पूरी जनसंख्याके बराबर है।

उन्होंने कहा कि एक ओर तो भारतकी जनसंख्याका यह बढ़ता हुआ अनुपात तब और भी अधिक हो जाता है जब कि बढ़े हुए चिकित्सा विज्ञानके द्वारा मृत्युसंख्या दूसरी ओर कम होती जा रही है।

नारदजीका विचार है कि खाद्य मन्त्री महोदयको इतना अधिक चिन्तित होनेकी आवश्यकता नहीं है। समस्याका समाधान बड़ा सरल है। केवल प्रयत्नकी दिशामें परिवर्तनकी आवश्यकता है। आज प्रगतिशील विज्ञानका उपयोग एक ओर तो जो उत्पन्न नहीं हुए

हैं उनको उत्पन्न होनेसे रोकनेमें फेमिली प्लानिंग (Family Planning)के नामसे किया जा रहा है तो दूसरी ओर जो मरनेके लिए तैयार बैठे हैं और शायद प्राकृतिक रूपसे सुखद मृत्युका आलिङ्गन करनेके लिए उत्सुक हैं, उनको इस प्रगतिशील विज्ञानद्वारा मरनेसे रोका जा रहा है। क्या उलटा मार्ग है। दोनों ओरसे प्रकृतिके विरुद्ध विद्रोह करनेसे क्या लाभ है। भाई-जो मरना चाहते हैं, उन्हें मरने दो। जो आना चाहते हैं, उन्हें आने दो। समस्याका भी हल हो जावेगा और पुरानी सड़ी हुई पीढ़ीका स्थान नई सुन्दर सृष्टि लेगी।

जन्म निरोधके विषयमें फ्रान्सका दृष्टिकोण—

जन्म निरोधके समर्थकों और जिज्ञासु पुरुषोंको यह जानकर आश्चर्य होगा कि भोगवादी रसिक नगरी पेरिसके देश फ्रान्समें जन्म निरोधपर अब भी कठिन पाबन्दी है और उसे अवैध (Illegal) माना गया है। इसके लिए वहां कोई प्रचार नहीं किया जा सकता। ऐसा करनेके लिए बड़े साहसकी आवश्यकता

है। वहाँकी पार्लियामेंटमें अभी एक सदस्यने सन्तति-निग्रहके महत्वको बताते हुए कहा कि आज कल बड़े से बड़े धार्मिक अधिकारी भी इस विषयपर विचारकर रहे हैं।

स्पष्ट ही सरकारी क्षेत्रोंमें भी इस विषयमें मतभेद है। इस वर्षमें ही कुछ समय पूर्व सेक्रेटरी आफ् स्टेट फार यूथ एण्ड हेल्थ—श्री मौरिस् हरजोगने खुल्लम खुला जन्म निरोधकी विशेषताओंको शिशु जन्मके प्राकृतिक ढंगके विषयमें होनेवाली कान्फ्रेंसमें प्रकट किया था।

साथ ही यह भी देखनेमें आया है कि एक महिला डाक्टर जो कि चिकित्सा कार्य करनेवाली कैथोलिक महिला हैं, उनका एक जन्म निरोध सम्बन्धी कार्यक्रम, जिसपर कि एक डोमिनिकन् फ्रायरद्वारा की गई टिप्पणी भी थी—अकस्मात् ही टेलिविजनके अधिकारियों द्वारा रोक दिया गया। इस कार्यक्रमको प्रारम्भ करनेकी आज्ञा प्रातः दस बजे ही दे दी गई थी परन्तु कुछ समय बाद ज्ञात हुआ कि बिना कुछ कारण बताए हुए ही इसको अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर दिया गया था।

फ्रान्समें गर्भपातकी संख्या बढ़ रही है और इस समय वहाँ ५ लाखसे १० लाख वार्षिक तककी संख्या है। परन्तु वर्तमान शासनमें गर्भपातका कार्य प्रतिदिन कठिन होता जाता है। साथ ही सरकार जन्म निरोध और गर्भपातके प्रचारको रोकनेके लिए १९२० के पुराने कानूनको उपयोगमें ले रही है। इसका परिणाम यही हो सकता है कि मकानोंकी समस्या और भी बढ़ जावे, जो कि वर्तमानमें ही असह्य हो रही है।

नारदजीकी सम्मति है कि यह समाचार ऐसी एजेन्सीद्वारा प्रचारित किया गया प्रतीत होता है जो कि फ्रान्सके जन्म निरोध विरोधी रुखसे असन्तुष्ट है। इसीलिए जहाँ फ्रान्सकी जन्म निरोध विरोधी नीति इस समाचारद्वारा स्पष्ट रूपमें प्रकट होती है वहाँ साथ ही यह प्रकट होता है कि सम्वाददाता उस नीतिके तथाकथित दुष्परिणामोंको और वहाँपर कभी-कभी जन्म निरोधके समर्थनमें प्रकट होने वाले

विचारोंको अच्छा रंग देकर प्रकाशित कर रहा है। जन्म निरोधके विषयमें निष्पक्ष विचार करनेके लिए प्रयुक्त होनेवाले महानुभावोंको यह ध्यानमें रखना चाहिये कि फ्रान्स जैसे देश भी इसके विरोधी हो सकते हैं।

मानव शरीरमें बिना फटा ग्रेनेड—

सैगोनका एक समाचार है कि मीकॉग डेस्टाके एक ५२ वर्षीय कृषक न्गुयेन वान चिनकी पीठमें एक बिना फटा हुआ ग्रेनेड छः दिन तक गड़ा रहा। बादमें उसका आपरेशन करके उसे निकाला गया।

एक दक्षिणी वीटनामी सैनिकने बहुत पाससे चिनके ऊपर बन्दूकसे फायर किया। बहुत पास होनेके कारण ग्रेनेड फूट नहीं सका, जैसाका तैसा चिनके शरीरमें घुस गया।

यह मृत्युका छोटा सा दूत एम्-७६ चिनके वृक्क और त्वचाके बीचमें पृष्ठकी ओर गड़ा रहा। यह एम्-७९ ग्रेनेड राइफलके बड़े 'स्लग' (Slug) के से आकारका होता है। डाक्टरोंने कानथोके अस्पतालमें चिनका X Ray किया परन्तु उसके उस उठाव, शोथका निदान करनेमें असमर्थ रहे।

जब दो दिन बाद यह बात निश्चित होगई कि उसके शरीरमें एक जीवित ग्रेनेड (बम्) है तब उसे अन्य रोगियोंसे पृथक् बालूके बोरोकी दीवालके पीछे रखा गया। नर्सों उसके पास जानेसे डरती थीं कि कहीं वह बम् फूट न जावे। कोई अन्य व्यक्ति भी अनेक दिनों तक उसके पास नहीं गए।

जब चिनका आपरेशन किया गया तब शल्य चिकित्सक जनरल डा० जेम्स हम्फ्रेज और उनके सहायक डा० कर्नेल् डेनियल् कैम्पबेलने बालूके थैलोंकी दीवालके पीछे खड़े होकर काम किया था। इस कार्यमें उनकी सहायता लन्दनके डा० एन्थनी ग्राहम ब्राउन्ने की। यह एक ३४ वर्षीय नागरिक डाक्टर हैं और सैगोन्में चिकित्सा कार्य करते हैं।

इस शल्य कार्यके लिए अमेरिकन डाक्टरोंने डेड

मीटर लम्बी छड़ोंमें शल्य शस्त्रों (औजारों) को लगा कर काम किया था। उन्होंने कुछ अपनेद्वारा बनाई हुई चिमटियों (Forceps) का भी उपयोग किया था।

डाक्टर हम्फ्रेज ने आपरेशनकी सफलताकी घोषणा करते हुए बताया कि अब किसीको भी चिनके पास जानेमें कोई भय नहीं है।

तीनों उपर्युक्त डाक्टरोंने इस आपरेशनके लिए अपने आपको स्वयं सेवकोंके रूपमें प्रस्तुत किया था।

नारदजी इस घटनापर यही टिप्पणी करना पर्याप्त समझते हैं कि—“युद्ध मनुष्यके ‘खुराफाती-दिमाग’ की देन है और शल्यचिकित्सा सम्बन्धी अनेक नवीन आविष्कार युद्धकी देन हैं।”

ऋषिकेशकी ड्रग्स फैक्टरीमें रिसर्च लेबोरेटरी—

देहरादूनका समाचार है कि स्व० श्री जवाहर लाल नेहरूके जन्म दिन दि० १४-११-६५ को जिस एन्टीबायोटिक् फैक्टरीका ऋषिकेशमें उद्घाटन हुआ है उसमें अनुसन्धानका कार्य भी किया जावेगा। वहांपर कुछ जीवनरक्षक औषधोंके निर्माणमें काम आने वाले द्रव्योंके स्थानपर काम आने योग्य द्रव्योंकी प्राप्तिके निमित्त परीक्षण किये जावेंगे। इससे विदेशी विनिमय मुद्राकी बचत भी हो सकेगी।

इन्डियन् ड्रग्स एण्ड फार्मैस्युटिकल्स लिमिटेडके प्रधान श्री आर० आर० बहलने कहा कि यह संस्था औषध निर्माण प्रक्रियाकी उन्नतिके विषयमें विशेष भाग ले सकेगी। आधुनिक औषध निर्माणमें सहायक प्रयोगशाला (Laboratory) की भी स्थापना इसके साथ ही की जा रही है।

उन्होंने यह भी कहा कि यह कारखाना केवल निर्माणके लिए ही नहीं स्थापित किया जा रहा है। अपितु यह बृहत् परिमाणमें औषधनिर्माण और अनुसन्धानके मध्य एक उपयोगी कड़ीका काम भी करेगा। यहांपर उत्पादनकी सभी प्रक्रियाओंका परीक्षण होगा। कार्यकर्त्ताओंको पूर्ण प्रशिक्षण दिया जावेगा, कच्चे द्रव्योंका परीक्षण होगा, विविध

श्रेणियोंके एन्टीबायोटिक्सका निर्माण होगा और उनका कार्यकारिताका परीक्षण किया जावेगा।

आगामी वर्षमें कारखानेमें काम प्रारम्भ हो जावेगा और तीन वर्षोंमें यह पूर्ण उत्पादन कार्य करने लगेगा। रूसके सहयोगसे स्थापित २२ करोड़के इस कारखानेके सहायक विविध उद्योग भी चालू किये जा रहे हैं।”

हसरत भरी निगाहसे हम देख रहे हैं।

वे प्यार किसी और पै हैं आज लुटाते।

वो दिन भी होगा जब कि वे हम पै भी मुँहों।
जब हमको मयस्सर अरे, मुसकान व होगी।

लुधाको जीतने वाली बूटियां—

नैमिषारण्यका समाचार है कि वहाँ एक आश्रम वासी साधकोंको ऐसी जड़ी-बूटियां खोजे मिल गयी हैं जिन्हें एक बार थोड़ा सा खा लेनेके बाद एक सप्ताह, एक पखवारा तथा एक मास तक भोजनकी आवश्यकता नहीं पड़ती, शरीरको तनिक भी अशक्तिका अनुभव नहीं होता और कुछसे तो सामान्य पौष्टिक भोजनसे अधिक शक्ति शरीर और मेधा को प्राप्त होती है।

आश्रममें राजप्रपाल श्री विश्वनाथ दासके आगमनसे पूर्व प्रवचनमें उक्त सूचना देते हुए स्वामी नारदा-दन्दने कहा कि सरकारको अमरिकासे अन्न आयात हठ-पूर्वक बन्द कर देना चाहिए।

स्मरण रहे कि रामायण, पुराणों तथा आयुर्वेदमें ऐसी अनेक औषधोंका विवरण है—“जाते लगे त क्षुधा पिपासा।” सुबाहू वधके उपरान्त विश्वामित्रने रामको भी ऐसी जड़ी बूटियां दी थी।

नैमिषारण्यमें प्राप्त जड़ी-बूटियोंका नाम वहाँ के साधकोंने बला, अतिबला, महाबला आदि रख लिया है। इनका सफल आयुर्वेदिक परीक्षण हो चुका है और कई साधक अपने शरीरोंपर इनका प्रयोग कर चुके हैं तथा कर रहे हैं।

आश्रमके साधकोंसे पूछनेपर पता चला कि वे जड़ी बूटियां कहीं भी खोज सकती हैं पर सात्विक मिट्टी

और वातावरण, जल आदि चाहिए जो आश्रमसे पूछ कर ले जाना चाहे ले जा सकता है। प्रयोग विधि भी सब को बतायी जा सकती है।”

क्योंकि श्री स्वामी नारदानन्दजी नारदजीके नाम राशि हैं इसलिए यह तो कहना ही चाहिये कि उनका कथन ठीक ही है। फिर भी नारदजीकी सस्मति है कि देशवासियोंको ऐसी जड़ी बूटियोंके सहारे प्रयत्न हीन और निष्क्रिय होकर अधिक अन्न उपजानेसे उदासीन नहीं हो जाना चाहिये। जड़ी बूटियोंका स्थान अलग है और अन्नका अलग।

“अन्नं वै प्राणिनां प्राणाः”

अतः खोज करना तो उचित है और उसका प्रयोग करनेके लिए भी बहुतसे स्थल हैं। परन्तु अन्नका काम अन्नसे ही चलेगा। आज राष्ट्रको अपनी आवश्यकताके लिए पर्याप्त अन्नका उत्पादन करनेके अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही नहीं है।

कम्यूनिस्टोंके युद्ध साधनोंमें सांप भी—

“सैगोन्का एक समाचार है कि वीट कौंग् छापामार सैनिक इस समय अमेरिकन और वीट नामकी सेनाके विरुद्ध सर्पोंको भी घातक उपकरणके रूपमें काममें ले रहे हैं।

कम्यूनिस्ट समर्थक सैनिकोंने वहां एक सुरङ्गमें छतसे बहुतसे सांप लटका रखे थे। एक अमेरिकन सिपाही उस सुरङ्गमें भूमिपर वीटकौंग लोगोंके द्वारा फैलाए जाने वाले जालोंसे बचनेके लिए सतर्कतासे नीचेकी ओर देखता हुआ प्रविष्ट हुआ। परन्तु ऊपरसे लटके हुए सांपोंने उसपर आक्रमणकर दिया और उसके सारे मुखमण्डलपर उसे काट लिया।

ठीक ही है। वास्तवमें आजकल मूर्ख तो वही है जो शत्रुको परास्त करनेमें धर्म, अधर्म और उचित अनुचितका विचार करता है।

ब्रिटेनने ही पाकको उकसाया—

“१५ नवम्बरको लोक सभामें हुई बहसमें बोलते

हुए श्री प्रैंक एन्थनीने ब्रिटेनपर यह आरोप लगाया कि पाकिस्तानको भारतपर आक्रमण करनेके लिए सीधे ही उसने प्रोत्साहित किया था। तथा उन्होंने कहा कि इस भारत पाकिस्तान युद्धके समय ब्रिटेनकी गति विधिका कोई समाधान नहीं हो सकता और वह एक दम निन्दाके योग्य है।

इसमें सन्देह नहीं है कि ब्रिटिश अधिकारियोंके मस्तिष्क अब भी दो राष्ट्रोंके सिद्धान्तसे भरे हुए हैं और वे अभी भी उस मध्यकालीन विचारधारासे बुरी तरह चिपटे हुए हैं, जब कि ब्रिटेन अपने समाजमें उसे दीर्घकाल पहिने ही छोड़ चुका है। अपनी उन्नति और ऐश्वर्यके सत्त्वको खो चुकनेपर अब ब्रिटेन उस गए बीते ऐश्वर्यसे चिपके रहनेका प्रयत्न कर रहा है।

फिर भी भारतको ब्रिटेनसे कितना ही असन्तोष क्यों न हो इस समय कामन वेल्थको छोड़नेका कोई भी निश्चय अपरिपक्व और अराजनैतिक होगा।—

एन्थनी साहबने कहा कि भारतको कश्मीरमें जनमत संग्रहके लिए कहनेमें ब्रिटेन शैतानके वकीलका कार्य करता रहा है। उसने भारतको छोड़नेसे पूर्व इस आत्म निर्णयका सिद्धान्त पख्तूनोंपर कभी लागू न ही किया। नही उसने कभी पाकिस्तानसे कहा कि वह अपने यहां अल्पसंख्यकोंके लिए इस सिद्धान्तको लागू करे।

पाकिस्तानमें एंग्लो इन्डियन् लोगोंके साथ न केवल कठोर व्यवहार ही किया गया है, अपितु उन्हें बड़े पैमानेपर वहांसे निकाल भी दिया गया है। उनके नेताने अभी हाल ही में—शायद हृदय दूट जानेके कारण—इङ्ग्लैण्डमें अपेक्षाकृत कम अवस्थामें प्राण त्याग किया है।

उन्होंने अमेरिकाकी सहायताके विषयमें राजनैतिक सौदा नीतिकी निन्दा की और कहा कि यह

बड़ी खेद जनक बात है कि संसारका सबसे धनी जनसत्तात्मक राज्य संसारके सबसे बड़े जनतन्त्रका विनाश करनेके लिए प्रतिक्रियावादी सैनिक तानाशाहीके देश पाकिस्तानको सैनिक सहायता दे रहा है।"

समाचार 'निगद व्याख्यात' है। उसकी व्याख्या और टिप्पणी उसके शब्दोंसे ही स्वयं स्पष्ट है।

फ्रैंक एन्थनी साहबका मत—

आकाश युद्धमें अपनी शूरवीरता एवं रण कौशलके निमित्त प्रशंसनीय राष्ट्रीय सम्मान प्राप्त करने वाले चार एंग्लो इन्डियन युवक अफसरों—विंग्कसान्डर गुड्मैन-महावीर चक्र, स्कैडन लीडर ट्रेवर कीलर, वीर चक्र, स्कैडन लीडर डेजिल् कीलर वीरचक्र तथा फ्लाइट लेफ्टिनेन्ट एल्फ्रेडकुक् वीरचक्र—के सम्मानमें अखिल भारतीय एंग्लो इन्डियन एसोसियेशनके वार्षिक उत्सवमें बोलते हुए श्री फ्रैंक एन्थनीने कहा—

"भारतके ऊपर पाकिस्तानका आक्रमण भारतकी राष्ट्रीयताके ढाँचेको टूट बनानेमें जितना अधिक सफल हुआ है उतना और कोई नहीं हुआ है। इस आक्रमणके प्रतिरोधमें प्रत्येक वर्ग और जाति कन्धेसे कन्धा भिड़ाकर लड़ी है। यदि हम लड़ाईको कुछ दिन और चलने देते तो—मेरी सम्मतिमें—पाकिस्तान पहिले तो स्याल कोटमें पस्त होता और उसके बाद तो सार्वत्रिक रूपसे धराशायी हो जाता। यह पराजय फिर लाहौरसे प्रारम्भ होती।

बहुतसे उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा कि एंग्लो इन्डियन् लोगोंने देशके लिए अपने आकारके अनुपातसे बहुत अधिक योगदान किया है। इसका कारण यह है कि ब्रिटिश लोगोंने, जो एंग्लो इन्डियन लोगोंके अधिक समीप समझे जाते थे, एंग्लो इन्डियन् लोगोंको जो नहीं दिया वह सभी उन्हें भारतीय नेताओंसे प्राप्त हुआ है।"

नारदजी देखते हैं कि एन्थनी साहबके कथनमें सत्य है जो कि उनके हृदयकी गहराईसे निकला है। वास्तवमें इस युद्धसे देशमें अमूलपूर्ण प्रतिक्रिया

हुए हैं। साथ ही वह आत्म विश्वास भी जागृत हुआ है जो कि इधर शताब्दियोंसे देखनेमें नहीं आया है। तीसरी बात जनतन्त्रके लिए आधार भूत है और वह यह कि प्रत्येक वर्ग और व्यक्तिके लिए समान अधिकार और समान सुविधाएँ। देश इस दिशामें कहां तक सफल हुआ है यह बात एन्थनी साहबके शब्दोंसे स्पष्टतम रूपमें प्रकट होती है।

अफसरोंकी बढ़ती हुई जाति—

"ज्ञात हुआ है कि केन्द्रीय सरकार केन्द्रीय सेक्रेटारियोंसे अन्डर सेक्रेटारियों तक उच्च अधिकारियों पर प्रतिवर्ष एक करोड़ चौदत्तर लाख रुपये व्यय करती है।

वित्तमन्त्री श्री टी. टी. कृष्णमाचारीकी ओरसे एक प्रश्नके उत्तरमें लोकसभाके समक्ष प्रस्तुत किये हुए एक उत्तरमें कहा गया है कि १ अक्टूबर १९६५ को केन्द्रमें ४८ सचिव और विशेष सचिव थे जबकि १ नवम्बर १९४७ को केवल ग्यारह ही थे।

केन्द्रीय उच्च अधिकारियोंकी अन्य श्रेणियोंमें भी इसी प्रकार वृद्धि हुई है। १ नवम्बर १९४७ को केवल १० एडीशनल सेक्रेटरी थे। परन्तु १ अक्टूबर १९६५ को २० थे। १ नवम्बर ४७ को ३४ ज्वायन्ट सेक्रेटरी, ७० डिपुटी सेक्रेटरी और १६७ अण्डर सेक्रेटरी थे। परन्तु १ अक्टूबर १९६५ को इनकी संख्या बढ़कर क्रमशः ११५ ज्वायन्ट सेक्रेटरी, २३५ डिपुटी सेक्रेटरी और ४२६ अण्डर सेक्रेटरी होगई है।

विवरणके अनुसार इनमें एकस् आफिशियो अधिकारी सम्मिलित नहीं है।"

हां, नारदजी भी इस बातको बड़ी सतर्कतासे देख रहे हैं। इस ऊँचे स्तरपर ही नहीं नीचेके स्तरपर भी कारगुजारोंकी संख्या कई गुनी बढ़ी है। परन्तु काम अब भी नहीं सिमट रहा है। जहां देखिये वहीं फायलों के अम्बार लगे हुए हैं और कर्तव्य परायण सरकारी कर्मचारी निश्चिन्ततासे अपनी अपनीमें मस्त हैं।

और कुछ हो य

न हो इस जमातके बढ़नेसे वर्ग हीन समाज रचनाके उद्देश्यमें प्रशंसनीय सहायता प्राप्त हो रही है। विभिन्न वर्गों और जातियोंके इस देशमें इन वर्गों और जातियोंका बड़ी ही शीघ्रतासे लोप होता जा रहा है। श्रमिक, धनिक, पूँजीपति, कृषक आदि वर्गोंका प्रभाव कम होकर अब सरकारी कर्मचारी और साधारण प्रजा (जनता) यह दो वर्ग ही प्रमुख रह जाते प्रतीत होते हैं। इनका सम्बन्ध भी भक्षक और भक्ष्यका सा बड़ा ही सुन्दर बनता जा रहा है। अधिकांश सरकारी कर्मचारियोंका वेतन उनके कार्यका पारिश्रमिक नहीं रहा है। उनका वास्तविक पारिश्रमिक तो वही प्रतीत होता है जो कि किसी प्रजाजनका कार्य सिद्ध करनेके निमित्त वे अपने परिश्रमके प्रतिदानमें उस उस व्यक्तिसे प्राप्त करते हैं। यह दृष्टि कोण इतना प्रबल हो गया है कि बिना प्रतिग्रहके सरकारी फायलोंका पत्ता (पन्ना) भी नहीं हिलता। जो लोग इस परिश्रमकी कमाईको रिश्वत या घूसका नाम देते हैं उनकी अल्प बुद्धिपर नारदजी को तरस आता है।

नागालैण्डका प्रश्न—

ज्ञात हुआ है कि नागालैण्डके संघर्ष विरामका समय दो मास और बढ़ा दिया गया है। यह तो स्पष्ट ही दिखाई देता है कि भारत सरकार इस प्रश्नको कटु नहीं बनाना चाहती और उसके सभी प्रयत्न इसी दिशामें हो रहे हैं कि यह प्रश्न पारस्परिक विचार विमर्शसे सुलभ जावे और नागा लोग सदाकी भांति भारतके अभिन्न अङ्गके रूपमें शान्ति और सुखसे रह सकें।

समाचार पत्रोंसे समाचार मिले हैं कि अब श्री ए. जेड् फिजोको इंग्लैण्डसे इस वार्त्तालापमें सहयोगके लिए बुलाया गया है। नागा लोगोंका इसके लिए विशेष आग्रह है। अममक मुख्य मन्त्री श्री बी. पी. चालीहा ने कहा है—“मुझे इसमें कोई कारण प्रतीत नहीं होता कि श्री फिजो भारतमें क्यों न आवें और लोगोंसे सीधी बात क्यों न करें? इसलिए उन्होंने श्री फिजोको भारत आनेके और शान्ति वार्त्तालापमें सम्मिलित होनेके लिए व्यक्तिगत रूपसे एक तार दिया

है। श्री फिजोको यह स्पष्ट कह दिया गया है कि भारतीय संविधानके अन्तर्गत ही बात होगी। नागा लोग इस समय शान्ति स्थापनके पक्षमें विशेष रूपसे हैं इसीलिये वे संघर्ष विरामकी अवधि बढ़ानेके भी पक्षमें हैं।”

नारदजी इस प्रश्नके सूक्ष्म निरीक्षणके बाद बोले कि यह बात तो ठीक ही है कि समस्याओंका समाधान पारस्परिक विचार विनिमयसे शान्ति पूर्वक किया जावे। परन्तु भय है कि इस उद्देश्यसे किए भारत सरकारके प्रयत्न ‘बिल्लीको मलाई’ को सुरक्षा सौंपनेके समान ही कहीं सिद्ध न हों। कहीं स्काट साहब उसकी नजरमें चढ़ते हैं तो कहीं फिजो साहब।

लन्दनमें हिन्दी त्रैमासिक—

इंग्लैण्डमें हिन्दी भाषाका प्रथम पत्र त्रैमासिक-रूपमें प्रकाशित होगा। नारदजीके द्वितीय सप्ताहमें उसके प्रथम अङ्क का प्रकाशन हुआ है।

यह प्रवासिनी नामकी त्रैमासिक पत्रिका श्री जवाहर लाल नेहरूको जन्म जयन्तीके दिन १४ नवम्बरको रविवारके दिन प्रकाशमें आई। ब्रिटेनकी हिन्दी प्रचार परिषद् इसका प्रकाशन करती है।

क्योंकि ब्रिटेनमें हिन्दीके मुद्रणकी सुविधाएं नहीं हैं इसलिए हिन्दी प्रचार परिषद्ने ‘प्रवासिनी’ की प्रतियां ‘रोटाप्रिन्ट’ (Rotaprint) से निकालनेकी व्यवस्था की है। इसमें पाण्डुलिपि हाथसे करके फोटोग्राफिक प्रक्रियासे प्रतियां प्रस्तुतकी जाती हैं।”

प्रयास तो स्तुत्य है। हिन्दीके प्रचारसे हिन्दीका कल्याण नहीं होना है अपितु उन लोगोंका कल्याण होगा जो उसको सीखेंगे और उसके माध्यमसे एक उपेक्षित परन्तु दर्शनीय सृष्टिका दर्शन प्राप्त कर सकेंगे।

दुर्भाग्यकी बात—

यह देशके दुर्भाग्यकी बात है कि काशी हिन्दू विश्व विद्यालयके नामका विवाद पूर्ण विषय इस

समय उठाया गया है।

राज्यसभाने एक बिल स्वीकार किया है जिसमें विश्वविद्यालयका नाम बदलकर 'मदन मोहन मालवीय काशी विश्व विद्यालय' नाम रखनेका निश्चय किया गया है।

समाचार मिले हैं कि देशके अन्य विश्व विद्यालयोंमें भी इससे क्षोभ उत्पन्न हो गया है। उक्त विश्वविद्यालयमें तो हड़ताल ही हो गई है। छात्रोंने विश्व विद्यालयके क्षेत्रको अपने आधीन कर रक्खा है।

दूसरे विश्व विद्यालयोंके छात्र भी इनका समर्थनकर रहे हैं। देशके अनेक विचारकोंने इसे अनुचित ही बताया है— श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्यने 'स्वराज्य' पत्रमें इसपर मार्मिक टिप्पणी दी है।

'मैं आशा करता हूँ कि केवल इस कारणसे कि हम चाहते हैं, अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटीके नामसे मुस्लिम शब्द हटा दिया जावे, हिन्दू विश्व विद्यालयके नाममेंसे 'हिन्दू' शब्द नहीं हटाया जावेगा। हम चाहते हैं कि नामोंको वैसा ही रहने दें जिससे कि संस्थाका इतिहास ज्ञात होना रहे। हमें तो वास्तविकतापर ध्यान देना चाहिये। हम मद्रास

क्रिश्चियन कालेजसे अपने नाममेंसे 'क्रिश्चियन्' शब्द हटा देनेको नहीं कह सकते और न ही जैन और वैष्णव संस्थाओंसे इन शब्दोंको निकालनेको कह सकते हैं। हमारे राजनैतिक नेताओंसे भी नहीं कहा जा सकता कि धर्म निरपेक्षताको दिखानेके लिए वे अपने हिन्दू नाम बदल दें।'

नारदजीको हिन्दू मुस्लिम शब्दोंसे कोई लगाव या पक्षपात नहीं है। कुछ भी नाम रखा जा सकता है परन्तु वे यह अनुभव करते हैं कि रोगके गलत निदानके आधारपर चिकित्सा ऊटपटांग की जा रही है। रोगवर्धक आहार तो 'अ' रोगी ने किया है, उससे उसका शारीर तन्त्र और आत्मा दुखी है। परन्तु वैद्यजी महाराज शरीर शोधनके लिए वमन और विरेचन पहिले रोगीके हितैषियोंको कराने जा रहे हैं। फिर रोगीसे कहना चाहते हैं कि देखो कैसा सरल उपाय है लो तुम भी विरेचन ओपध ले लो। वैद्यजी महाराज ! आपने बेचारे पड़ोसीके हाथ पैरोंका सत तो पहिले ही निकाल दिया। अब इसका क्या भरोसा है कि आपका उद्दण्ड रोगी अब भी विरेचनकी बात सामने आते ही हाथ पांव नहीं फैला देगा।

छुपते छुपते—समाचार मिला है कि विश्वविद्यालयमें विद्यार्थियोंकी हड़ताल समाप्त होगई है।

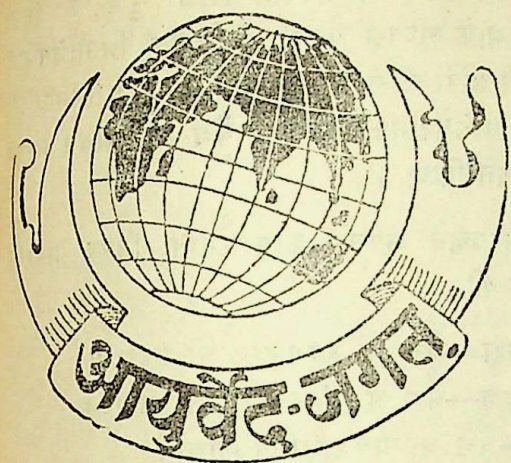
सभी शास्त्रीय औषधोंके लिये

अपने यहांके हमारे स्थानीय एजेण्टसे पूछिये

— या —

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन, कालेड़ा-कृष्णगोपाल अजमेर

को लिखिये



उसके सिद्धान्तोंकी ओर आकृष्ट हो रहे हैं। उन्होंने आयुर्वेदीय चिकित्सासे लाभ प्राप्त करने वाले आधुनिक चिकित्सासे असाध्य रोगियोंके उदाहरण भी प्रस्तुत किये। उन्होंने कहा कि स्वराज्यके बादसे जैसा चाहिये था वैसा प्रोत्साहन आयुर्वेदको प्राप्त नहीं हुआ है। रिसचके नामसे आयुर्वेदको दी जाने वाली नाम मात्रकी धन राशि भी एलोपैथिक चिकित्साके विस्तारमें विविध बहानोंसे काममें ली जाती है। प्रदेश सरकारों और केन्द्रीय सरकारको आयुर्वेदकी सेवा सम्भावनाओंको पूर्ण रीतिसे समझकर उसके प्रसारके लिए उचित योग देना चाहिये।

श्री मथुरादास माथुरने अपने भाषणमें बताया कि सौभाग्यसे राजस्थानमें आयुर्वेदका समर्थन करने वाली सरकार ही बनती रही है। इच्छित प्रगति न होनेके कारणोंको ज्ञातकर उन्हें दूर करना चाहिये। आयुर्वेदकी उन्नतिमें वास्तविक योग तो वैद्यों और जनताद्वारा ही प्राप्त हो सकता है। यहां भी संस्कृत आयुर्वेद विश्वविद्यालयकी योजना है। परन्तु बजटकी कमी आदि अनेक बाधाएं इस कार्यमें हैं। फिर भी आशा है कि यदि पूरा उद्योग किया गया और भगवान् की दया हुई तो सरकार इस कार्यमें अग्रसर हो सकेगी उन्होंने श्रीशर्माजीद्वारा किए गए आयुर्वेदकी सेवा सम्बन्धी महत्व पूर्ण कार्योंके लिए उनका अभिनन्दन किया।

प्रदेश वैद्य सम्मेलनाध्यक्ष श्री वै. सीताराम मिश्र-द्वारा आभार प्रदर्शनके अनन्तर सभा विसर्जित हुई।

नि. भा. आयुर्वेद विद्यापीठ—

विद्यापीठ द्वारा सूचना प्राप्त हुई है कि सन् १९६६-६७ के सत्रमें विद्यापीठका नवीन पाठ्यक्रम प्रारम्भ कर दिया जावेगा। उसके बाद नवीन विद्यार्थियोंको उसी पाठ्यक्रमके अनुसार सम्बद्ध विद्यालयों और विद्यापीठीय परीक्षाओंमें प्रवेश प्राप्त हो सकेगा।

जो लोग अभी तक पुराने पाठ्यक्रमके अनुसार अध्ययन कर रहे हैं और परीक्षाओंमें सम्मिलित हो रहे हैं उनके लिए आगे भी समुचित व्यवस्था कर दी

वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा जयपुरमें—

दिनाङ्क ७ नवम्बर ६५ को राष्ट्रपतिके अवैतनिक चिकित्सक, केन्द्रीय सरकारके आयुर्वेदीय परामर्शदाता तथा अखिल भारतीय आयुर्वेद महा सम्मेलनके अध्यक्ष वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्माका आगमन जयपुरमें हुआ। प्रातः काल प्रदेश वैद्य सम्मेलनके सदस्योंने एरोडूमपर उनका स्वागत किया। मध्याह्नमें २ बजे स्थानीय हिन्दू होटलके सुसज्जित हालमें उनके सम्मानमें प्रदेश वैद्य सम्मेलनकी ओरसे अल्पाहार तथा सभाका आयोजन किया गया।

आयोजनकी अध्यक्षता राजस्थानके सहकारिता तथा स्वास्थ्य मन्त्री श्री मथुरादास माथुरने की। सभामें श्री रामकिशोर व्यास और राज्यके शिक्षा सचिव भी उपस्थित थे। प्रारम्भमें प्रदेश वैद्य सम्मेलनके अध्यक्ष श्री वै. रा. सीताराम मिश्रने मुख्य अतिथि श्री पं० शिवशर्माका तथा प्रदेशसे एकत्र सभी वैद्य बन्धुओं और उपस्थित महानुभावोंका स्वागत किया और शिखतजीको माल्य अर्पण किया। प्रदेशके अन्य स्थानोंसे आए हुए अनेक प्रतिनिधियोंने श्री शिव शर्माका स्वागत करते हुए उन्हें मालाएं पहिनाईं।

श्री शर्माजीने अपने भाषणमें बताया कि विदेशोंमें आयुर्वेदकी प्रतिष्ठा किस प्रकार बढ़ रही है और लोग

गई है। उनके पठनमें बाधा नहीं आयेगी। जो नवीन छात्र इस वर्ष ६६ की मार्च मासीय परीक्षाओंमें पुराने पाठ्यक्रमके अनुसार प्रविष्ट होंगे और उत्तीर्ण होंगे उनको भी आगे अपना पाठ्यक्रम चालू रखनेकी सुविधा प्राप्त हो सकेगी। अन्यथा यह सुविधा प्राप्त नहीं होगी।

छात्रों और विद्यालयोंको इस सूचनापर ध्यान देना चाहिये।

श्रीनागार्जुन आयुर्वेद विद्यापीठ धन्वन्तरि जयन्ती-महोत्सव

श्रीनागार्जुन आयुर्वेदविद्यापीठके तत्त्वावधानमें दिनांक २२ अक्टूबर १९६५ शुक्रवारको सायंकाल ६ बजे आयुर्वेद अकादमी-कार्यालय मुरलीधरबाग, हैदराबाद (आ. प्र.) में संस्थाके अध्यक्ष स्वामी श्री हंसानन्दजी सरस्वतीकी अध्यक्षतामें बड़े समारोहके साथ "धन्वन्तरि जयन्ती-महोत्सव" मनाया गया।

इस अवसरपर नगरके प्रतिष्ठित नागरिक, विद्वान् वैद्य तथा छात्र-छात्राएं उपस्थित थीं। सर्व प्रथम आयुर्वेदमहोपाध्याय श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी, भिषगाचार्यने शास्त्रीय विधिसे आरोग्यके अधिष्ठातृ-देवता भगवान् धन्वन्तरिकी अर्चना की। अनन्तर कविराज श्रीपुरुषोत्तमदेवजी आयुर्वेदालंकार, श्री पं० ऋभुदेवजी शर्मा, आयुर्वेदरत्न तथा वैद्यराज श्री पं० गंगाविष्णुजी शर्मा आयुर्वेदाचार्यने आयुर्वेदकी महनीयतापर गम्भीर प्रकाश डाला। मुंशी श्री रामकुमार लालजीने "स्वास्थ्य" विषयपर कविता पढ़कर जनताका मनोरंजन किया। श्रीअध्यक्ष महोदयने भगवान् धन्वन्तरिके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। आचार्य श्री पं० गयाप्रसादशास्त्रीने समागत सज्जनोंको धन्यवाद दिया तथा आचार्य श्री पं० ऋभुदेवजी शर्माने शान्तिपाठ किया। प्रसाद वितरणके अनन्तर समारोह निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

उदयपुर जिला वैद्य सभाका निर्वाचन

दिनांक ३१-१०-६५ को आचार्य श्री हीरा लालजी

अध्यक्षतामें जिला वैद्य सभा उदयपुरका अधिवेशन सम्पन्न हुआ। इसमें कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किये गए। वैद्य श्री गणपत लाल पुंडरीक जिला वैद्य सभाके अध्यक्ष पदपर निर्विरोध निर्वाचित हुए, एवं श्री हीरा लाल जी आचार्य प्रदेश प्रतिनिधि चुने गये। अधिवेशनका संयोजन वैद्य श्री माधव प्रसाद आचार्यने किया।

अध्यक्षने अपनी कार्यसमिति निम्न प्रकारसे घोषित की।

उपाध्यक्ष—वैद्य श्री उदयलाल जी महात्मा

उपाध्यक्ष—वैद्य श्री भंवर लाल जी महात्मा

मंत्री—वैद्य श्री माधव प्रसाद आचार्य

सं० मंत्री—वैद्य श्रीसुखदेव प्रसाद भिषगाचार्य

प्रचार मंत्री—वैद्य श्री शारदा प्रसाद जो द्विवेदी

अर्थ मंत्री—वैद्य श्री भंवर लाल जैन

सदस्य—महन्त श्री मुरली मनोहर शरणजी शास्त्री

„ वैद्य श्री भवानी शंकर जी

„ वैद्य श्री टेकचन्द जी पालिवाल

„ वैद्य श्री बापु भाई

„ वैद्य श्री छगन लाल जी पालीवाल

„ वैद्य श्री रूप लाल जी महात्मा

„ वैद्य श्री सम्पत लाल जी महात्मा

„ वैद्य श्री अम्बा लाल जी महात्मा

„ वैद्य श्री चन्द्र प्रकाश जी

जिला वैद्य सभा जोधपुर

श्रीमान् बाबूराम जी मिश्र

नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ दिल्लीके अध्यक्ष का जोधपुर जिला वैद्य सभा द्वारा भव्य स्वागत।

दिनांक १७-१०-६५को प्रातः ९ बजे जोधपुर जिला वैद्य सभाके प्रधान कार्यालय त्रिपोलिया बाजारमें नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठके अध्यक्ष महोदय श्रीवै. रा. बाबूरामजी मिश्रका पुष्पहारसे स्वागत किया गया और आपके साथ पधारे राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलनके अध्यक्ष श्रीमान् सीतारामजी मिश्र व श्री तिलकरामजी शर्मा भी पुष्पाहारसे

सम्मान किया गया। जिलेके प्रधान मन्त्री राज वैद्य सत्यदेव शर्माने सभी सदस्य महानुभावोंका हार्दिक स्वागत व अभिनन्दन किया। यह विद्यापीठके प्रथम बार अध्यक्षजीका जिला वैद्य सभामें आनेका अवसर था। विशाल वैद्य समूहने पुष्पहारोंसे उन्हें लाद दिया। तत्पश्चात् मन्त्रीने राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलनके अध्यक्ष महोदयका हार्दिक अभिनन्दन करते हुये उनके प्रति संगठनकी श्रद्धा व्यक्त की और विद्यापीठाध्यक्षसे जिला वैद्योंका परिचय कराया।

प्रदेशाध्यक्ष श्री सीताराम मिश्रने बताया कि सम्मेलन 'अ' श्रेणीके वैद्योंको डाक्टरोंके समान ही अधिकार प्राप्त करानेका प्रयास कर रहा है।

श्रीमान् बाबूलाल जी मिश्र अध्यक्ष नि० भा० विद्यापीठ दिल्लीने अपने भाषणमें अप्रेजोंसे लेकर अभी तक का आयुर्वेदका इतिहास बताया और भारतके स्वास्थ्य मंत्राकी देशी चिकित्सा पद्धतिके साथ पक्षपात पूर्ण नीतिकी कटु आलोचना की। इन्होंने व्यक्त किया कि गत पञ्च वर्षीय योजनामें भारत सरकारने ३ अरब रुपयेकी धन राशि स्वास्थ्यके लिये स्वीकृत की थी। जिसमें देशी चिकित्सा पद्धतिके लिये आठ करोड़ कुछ

लाख रुपये थे। लेकिन इस पंच वर्षीय योजनाके ग्यारह अरब रुपये स्वास्थ्यके लिये स्वीकृत किए गए हैं। और उसमें देशी पद्धतिके लिये आठ करोड़ रुपये रक्खे गये हैं। योजनामें इस बार कुछ लाख रुपये भी उड़ा दिये हैं। इस राशिके हिसाबसे भी ३२ करोड़के करीब धन राशि होती है। लेकिन श्रीमती सुशीला नैयर चूंकि एलोपैथिक डाक्टर हैं शायद इसलिये देशी चिकित्सा पद्धतिसे ऐसा व्यवहार कर रही हैं।

विशेष—श्री धन्वन्तरि जयन्तीके समाचार जिला वैद्य सभा, सीकर। नवादा अनुमण्डली वैद्य सम्मेलन ओड़ो, गया। श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन कार्यालय, नागपुर। राजकीय औषधालय, रामगढ़, मसूदा। श्रीपरशुरामपुरिया आयुर्वेदिक कालेज, सीकर (राज.) राजकीय औषधालय, शाहपुरा तथा वैद्य सभा किशनगढ़से भी प्राप्त हुए हैं। उन्हें स्थानाभावसे प्रकाशित करनेमें हम असमर्थ हैं। क्षमा चाहते हैं। कुछ अन्य समाचार भी हैं जिनकी अस्पष्ट कार्वन काफी होनेसे प्रकाशित नहीं किया जा रहा है। सम्पादक

कैंसरनाशक वटी

क्षयसे भी भयंकर, कुष्ठसे भीषण, संसारके अधिक रोगियोंमें व्यापकरूपसे विद्यमान कैंसर (कर्कटार्बुद) नामक घोर व्याधिसे मुक्ति पानेके लिये भवनने अनुभव के बाद हीरा (पुरुषसंज्ञक) भस्म तथा स्वर्णभस्मके साथ अति प्रभावशाली अन्य दवाओंका मिश्रण बनाकर ये वटियां बनाई हैं।

इस मारक रोगके लिये यह औषधि उत्तम लाभकारी सिद्ध हुई है। कैंसरकी प्रथम व द्वितीय अवस्थामें विशेष लाभ करती है।

मात्रा—१ या २ गोली; घृत, शहदके साथ अथवा केवल दूध या जलके साथ।

मूल्य—२ ग्रामकी शीशीका ६-१५ न. पै.। पैकिंग, पोस्टेज पृथक्।

आवश्यक सूचना

समस्त प्रेमी ग्राहकों व एजेण्टोंको सूचित किया जाता है कि भवन सदैव अपने ग्राहकोंको सूचीपत्रमें वर्णित समस्त औषधियोंका निर्माण करके उनकी मांगको पूरी करनेको प्रयत्नशील रहता है। किन्तु कुछ राजकीय नियमोंके कारण व शुद्ध वस्तुओंके उपलब्ध न होनेसे निम्न औषधियाँ अभी स्टॉकमें नहीं हैं। तैयार होते ही पत्रिकाद्वारा सेवामें सूचना भेज दी जायगी। निम्न पुस्तकें भी अभी स्टॉकमें नहीं हैं।

अतः प्रेमी ग्राहक व एजेण्ट आर्डर देते समय इस बातका ध्यान रखनेकी कृपा करें। आशा है कि इनका निर्माण शीघ्र ही हो सकेगा।

| क्रमाङ्क सूचीपत्र, औषधिका नाम | सूचीपत्र क्रमाङ्क, औषधिका नाम | सूचीपत्र क्रमाङ्क, औषधिका नाम |
|---|---|-------------------------------|
| ५५. रौप्य भस्म (१०० पुटी) | १६८. लक्ष्मी विलास (सुवर्ण) | ४८५. सर्पगन्धादि वटी |
| ६१. रससिन्दूर षड्गुण X | १६९. लक्ष्मी विलास (सुवर्ण वि०) | ४८६. हिस्टीरिया नाशक वटी |
| ६२. रससिन्दूर (अन्तर्धूम षड्गुणजारित) | १७३. वीर्य स्तम्भन वटी (चन्द्रोदय कस्तूरी युक्त) | ४९१. हिङ्गुकर्पूर वटी (नं० २) |
| १००. सुवर्णवंग | १७४. वीर्य स्तम्भन वटी (सुवर्ण कस्तूरी युक्त) | ४९७. आमलकी रसायन |
| १२३. कामचूड़ामणि रस | १८३. स्वर्ण मालिनी वसन्त (विशेष चन्द्रोदय) | ५०३. तालीसादि चूर्ण (विजया) |
| १२४. कामचूड़ामणि रस (विशेष) | १८७. सूचिका भरण रस | ५२५. लघुलाही चूर्ण |
| १३०. चन्द्रोदय वटी (सिद्ध मकरध्वज वटी) | २३५. कनकसुन्दर रस | ५३०. लाही चूर्ण |
| १३६. जय मंगल रस | २४१. वृ० कस्तूरी भैरव रस | ५६०. खर्जूरसव |
| १४४. वृ० ब्राह्मी वटी | २६५. प्रहणीवज्रकपाट रस | ५८४. अस्थिसंधानक अर्क |
| १५१. वृ० सुवर्णमालिनीवसंत (विशेष) | २८२. त्रैलोक्यसंमोहन रस | ५९५. रसोन रसायन |
| १५६. महाशक्ति रसायन | ३०३. पुष्पधन्वा रस | ५९६. कुटजावलेह |
| १६५. योगेन्द्र रस (विशेष) | ४०४. ज्ञानोदय रस (नं० २) | ६०२. खमीरे गावजवां (जवाहर) |
| १६६. लक्ष्मी विलास (सुवर्ण नारदीय) | ४०५. ज्ञानोदय रस (विशेष) | ६०६. माजून कुचिला |
| | ४७८. शक्तिवर्धक गुटिका | ६८७. बाल रक्तक बिन्दु |
| | | ६८८. रसोनादि अर्क |
| | | ६९२. स्त्रीगदांतक अर्क |
| | | ६९३. कल्याण बालामृत |

पुस्तकें—(१) रसतन्त्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड (गुजराती भाषा)

(२) नेत्ररोग विज्ञान (३) संचित औषध परिचय

नोट—जिन औषधियोंके सामने X का चिह्न है वे दिसम्बरमें बन जायँगी और सुवर्णप्रधान औषधियाँ सुवर्ण भस्म बन जानेपर क्रमशः सुविधाजनक मात्रामें बनवायी जायँगी। व्यवस्थापक

वर्तमान ऋतुमें उपयोगी

कुछ औषधियां

क्रव्याद रस—अजीर्ण, मलावरोध, आध्मान तथा क्षुधानाशकी दशामें उपयोगी ।

पाचन सुधा—अग्निमान्द्य तथा उदर विकारनाशक स्वादिष्ट एवं रुचिवर्धक

धनञ्जय वटी—पाचक, दीपक तथा रुचिवर्धक ।

गैमहर वटी—उदावर्त, अग्निमान्द्य, उदरशूल, तथा अजीर्णका नाशक ।

सुवर्णमालिनी वसंत—जीर्णज्वर, कास, मंदाग्नि तथा निर्बलताका नाशक ।

नवजीवन रस—कृशता, हृदय दौर्बल्य व मंदाग्नि नाशक ।

शिलाजत्वादि वटी—स्वप्नविकार, दौर्बल्य व मूत्ररोगनाशक ।

वसंतकुसुमाकर रस—पौष्टिक, धातुवर्धक तथा मूत्ररोगोंमें उपयोगी ।

चन्द्रोदय वटी—अंग प्रत्यंगोंको सुदृढ़ व शक्तिशाली बनानेमें उपयोगी ।

भृङ्गराजासव—जीर्णमलावरोध, रक्ताल्पतानाशक, बलप्रद ।

समीरे गावजुवां—हृदय व मस्तिष्कको बलप्रद, शक्तिवर्धक ।

वृ० वंगेश्वर रस—विविध मूत्रविकार, तथा अशक्तिका नाशक एवं बलप्रद ।

प्राज्ञासव (विशेष)—अग्निप्रदीपक, पाचक, बलवर्धक स्वादिष्ट पेय ।

ब्राह्मरसायन—स्मरण शक्तिवर्धक, अग्निप्रदीपक तथा बलवर्धक रसायन

शंख वटी—विविध अजीर्ण, उदरशूल आदिमें लाभप्रद है ।

विशुद्ध एवं विश्वसनीय आयुर्वेदीय औषधियोंका प्रतिष्ठित स्थान—

कृष्ण गोपाल आयुर्वेद भवन

कालेडा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

आपकी दीर्घायुष्य, बल एवं स्वास्थ्यकी शुभ कामनाओंके साथ

आपकी सेवामें सदा तत्पर

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन



संस्थानकी विशेषताएं:—

विशुद्ध शास्त्रोक्त, आयुर्वेदीय औषधियोंका विश्वसनीय स्थान है।

यहाँसे सुन्दर एवं चिकित्सोपयोगी ३१ ग्रन्थरत्न प्रकाशित हुये हैं।

यहाँके औषधालयमें रुग्ण-जनताकी निःशुल्क चिकित्सा व पथ्य-व्यवस्था की जाती है।

यह संस्थान वैद्य समाज व जनताका स्वास्थ्य-पथ प्रदर्शक है।

यहाँकी औषधियां देश-विदेशोंमें विश्वसनीय व प्रशंसा प्राप्त हैं।

यहाँ औषधि निर्माणमें विशुद्धता एवं एकरूपतापर विशेष ध्यान दिया जाता है।

देश विदेशोंमें हमारे १००० से अधिक विक्रीकेन्द्र हैं।

यहाँके औषधियोग गोपनीय व पेटेंट नहीं हैं। अतः

यहाँके एजेण्ट व ग्राहक बनकर स्वयं लाभ उठावें और संस्थाके सेवा कार्यमें योग प्रदान करें

विशेष सूचना—अफीम, गांजा तथा भांग-मिश्रित औषधियोंके आर्डरके साथ एजेण्टों व ग्राहकोंको अपने लायसेंस नम्बर लिखकर भिजवाना आवश्यक है। अन्यथा, खेद है कि राजकीय नियमानुसार हम ऐसी औषधियां भिजवानेमें असमर्थ रहेंगे।

व्यवस्थापक

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन



